जातक के भी मुख्य चार भेद हैं (१) भृगुसंहितानुसार (
जैमिनिसूत्रानुसार (३) लघुपाराशरी के अनुसार (४) बृहज्जातक आ
के अनुसार ॥

आजकल बहुत से लोग फलित ज्योतिष के सच्चे होने पर सन्
प्रकट करते हैं। इस विषय में ऊहापोह करने की कोई आवश्यकता न
है। जो लोग ऐसा सन्देह प्रकट करते हैं वे अपना जन्मपत्र अच्छे ज्योति
को विचार के निमित्त दें अथवा अपने आप पुस्तकों को देखकर फल मिलावे
यदि फल ठीक मिलें तो फलित शास्त्र सच्चा है। परन्तु यह बात याद र
कि जन्मपत्र में इष्ट काल ठीक होना चाहिये। यदि इष्ट काल ठीक न
और फल न मिलें तो फलित का दोष नहीं है ॥

बहुत जन्मपत्र इस प्रकार से बनते हैं कि ज्योतिषी पूछता है f
बालक का जन्म किस समय हुआ था। उत्तर मिलता है कि रोटी खाने
समय। अब समझ लीजिये कि इष्ट काल कैसे ठीक होगा और फल कै
ठीक होंगे। कभी कभी दो घंटे तक लग्न नहीं बदलता है परन्तु कभी पां
मिनट् में भी बदल जाता है। अतः प्रथम आवश्यकता यह है कि इष्टका
बहुत ठीक होना चाहिये ॥

ज्योतिषी लोग जन्मपत्री के अन्त में यह श्लोक लिख देते हैं:—
"न मया धारितः शङ्कुर्न मया धारिता घटी। परोपदिष्टवेलायां लिख्य
जन्मपत्रिका" अर्थात् मैं 'बालक के जन्म समय उपस्थित नहीं था। घड़
आदि मैंने उस समय नहीं देखी। जो समय मुझे बतलाया गया उसके अनु
सार जन्मपत्री मैंने लिखी है।" ज्योतिषी जी उत्तरदायित्व से इस प्रका
बच गये। बालक उस समय अज्ञान होता है। माता प्रसव वेदना में ग्रस
होती है। पिता कभी कभी परदेश में होता है। ग्रामों में घडी घण्टा भ
नहीं होता है। परिणाम यह होता है कि बहुत ही कम जन्मपत्रिया होतं
हैं जिनमें इष्टकाल ठीक हो। इष्टकाल ठीक न हो तो फल ठीक नह
मिलते, फल ठीक न मिले तो ज्योतिष पर दोष लगाया जाता है ॥

ग्रहों की गति में भी कुछ भेद होगया है। जैसे आज कल सायनांश २१ है। इसका अर्थ यह है कि सङ्क्रान्ति से २१ दिन पहिले सूर्य अग्रिम राशि पर चला जाता है। परन्तु जन्मपत्रियों में सूर्यसङ्क्रान्ति होने तक वह उसी राशि में दिखलाया जाता है। अङ्गरेजी ज्योतिषी लोग अग्रिम राशि में दिखला कर उसका फल बतलाते हैं। हमारे यहां अग्रिम राशि पर दिखलाने से यह दोष उपस्थित होगा कि पञ्चाङ्ग में नक्षत्र के चरण आदि में बड़ा अन्तर पड जावेगा। इस कारण से भी फलों में भेद होना सम्भव है। भास्कराचार्य के समान किसी आचार्य का जन्म हो तभी यह जीर्णोद्धार हो सकता है अन्यथा कठिन विषय है॥

बहुधा दो एक छोटी किताबों को पढ़ कर लोग ज्योतिषी बन बैठते हैं। भला उनके फलादेश कैसे ठीक हो सकते हैं। प्रत्युत उनके कारण ज्योतिष में बट्टा लगता है। ज्योतिष शास्त्र बहुत बड़ा है। इसके चार लाख श्लोक हैं। सब मिलाकर चार महाभारतों के बराबर है। इसको भली भांति पढ़ने के निमित्त बहुत समय आवश्यक है॥

गुणग्राहक लोग भी कम रह गये हैं। इससे ज्योतिष शास्त्र के पढ़ने वालों का उत्साह भी कम होता जाता है। अतः वे पूर्णतया इस शास्त्र के अध्ययन से सफलता प्राप्त नहीं कर सकते। इसीसे उनके बताए हुए फल ठीक न मिलने से लोगों का विश्वास इस शास्त्र की ओर कम हो जाने से वे इस विषय में बहुत ही अल्प व्यय करना चाहते हैं। उधर पारितोषिक कम होने से ज्योतिषी का भी उत्साह कम होता जाता है। अत एव इस बात की आवश्यकता है कि लोग अपनी उदारता का परिचय देवें और ज्योतिषी अपनी विद्या का परिचय देवें। इससे दोनों का श्रेय है। यथा सम्भव श्रद्धा तथा विश्वास पूर्वक ज्योतिषी को सन्तुष्ट करने की शैली प्रच-लित हो जावे तो विचारशील तथा शुद्धगणित वाला ज्योतिषी भी मिल

सकता है। यह सामान्य बात है कि हलके दामों में हलकी चीज मिलती है और भारी दामों में भारी ॥

गणित में एक अङ्क की भूल होने से फल में बड़ा अन्तर पड जाता है। अमुक स्थान में अमुक ग्रह है उसका यह फल है कह देना सामान्य बात है। परन्तु सूक्ष्म विचार में ग्रह का बलाबल निकालना पडता है। यही कठिन विषय है। जैसे ही वैद्यक शास्त्र मे भिन्न भिन्न अनुपानों से औषधि का गुण बदल जाता है ऐसे ही ज्योतिष में भी दृष्टि, स्थान, सम्बन्ध आदि से ग्रहों का फल बदल जाता है। यथार्थ फल इसी रीति से निकलता है॥

मद्रास के प्रसिद्ध ज्योतिषी बाबू सूर्यनारायण गै एक ग्रहसाम्य करने की अथवा एक मुहूर्त निश्चय करने की अथवा सन्तान आदि एक भाव का विचार करने की फीस एक सौ रुपया लेते हैं। देखने में यह अधिक जान पडती है परन्तु जो महाशय बी० ए० पास करके सब कामों को छोड़ दे अपना जीवन केवल ज्योतिष की आजीविका से व्यतीत करें, अन्वेषण करके कई नई बातों को निकालें और सूक्ष्म विचार करके परिणाम बतलावें उनके लिये यह फीस अधिक नहीं है। जो सौ रुपया फीस लेगा तो कुछ सूक्ष्म विचार भी अवश्य करेगा। हमारे देश में पाच मिनट् में ग्रह साम्य होना है। पाच मिनट् में नाडीवेध षड्वर्ग के विचार के अतिरिक्त और कोई सूक्ष्म विचार नहीं हो सकता है। वस्तुतः अच्छे प्रकार से विचार किया जावे तो सूक्ष्म विचार करने में बहुत समय लग जाता है॥

विवाह करने में लोग बहुत व्यय कर डालते हैं। परन्तु विवाह केवल उत्सव मनाना नहीं है। यह बड़ा उत्तरदायित्व का विषय है क्योंकि इसी पर स्त्री पुरुषों के समस्त जीवन का भार निर्भर है। यदि अच्छा जोड़ा मिल गया तो यही संसार स्वर्ग तुल्य है अन्यथा यहीं नरक का वास है। भावी सन्तान के सुख दुःख का निर्णय भी इसी विवाह के अधीन है। इतने महान्

विषय का विचार पाच मिनट् मे न होना चाहिये। थोड़ा भी दोष रह जाने पर वर कन्या का जीवन आपद्ग्रस्त तथा आनन्दरहित हो जावेगा। यदि ज्योतिषी अच्छी रीति से मन लगाकर विचार करे तो बहुत सी भावी बातों को पहिले जान सकता है। जब विवाह मे इतना व्यय होता है तो ग्रह साम्य अथवा मुहूर्त के विचार में उस व्यय का एक अंश ज्योतिषी को सन्तुष्ट करने में लग जावे तो उसे व्यर्थ न समझना चाहिये॥

यह भी सुनने में आता है कि बहुधा लोग जन्मपत्री बदल कर ग्रहसाम्य ठीक ठीक बना देते है। यदि यह बात ठीक हो तो बड़ा भारी पाप है। या तो ज्योतिष शास्त्र माना ही न जावे, गन्धर्व विवाह की रीति प्रचलित हो। यदि इस शास्त्र पर विश्वास हो तो जन्मपत्री बदलने से हानि के अतिरिक्त लाभ कुछ नहीं है। बहुत सी बाल विधवा होने के कारणों मे से एक कारण यह भी हो तो आश्चर्य नहीं॥

इस शास्त्र के अनुसार यह आवश्यक नहीं है कि द्रव्यपात्र की कन्या का विवाह द्रव्यपात्र के पुत्र के साथ अथवा दरिद्री की कन्या का विवाह दरिद्री के पुत्र के साथ हो। यदि वर अथवा कन्या के ग्रह बलवान् होवेंगे तो दारिद्र्य दूर होकर घर में लक्ष्मी का निवास हो जावेगा। यदि ग्रह बलहीन होवेंगे तो पूर्वसञ्चित सम्पत्ति का भी नाश हो जावेगा। वर कन्या के गुण दोष विवाह प्रकरण मे दिये गये है। साम्य का अर्थ केवल ग्रह साम्य नहीं है, परन्तु सापिण्ड्य गोत्र शुद्धि, उत्तम कुल, अवस्था, विद्या, शीलस्वभाव, आरोग्य, वृत्ति, इत्यादि का भी विचार है॥

नाड़ीवेध आदि बातें कपोल कल्पित नहीं हैं, परन्तु सबका मूल तत्त्व विज्ञान शास्त्र है। बाबू सूर्य नारायण जी लिखते हैं कि जैसे ही वात, पित्त, कफ की तीन नाड़ियां होती हैं इसी आधार पर यह भी है। एक नाड़ी में वर कन्या के नक्षत्र के होने से वेध होता है। साराश यह है कि यदि दोनों वात प्रकृति अथवा कफ प्रकृति वाले होंगे तो सासारिक व्यवहार न

चलेगा। एवं षट्काष्टक का अभिप्राय है। छठा स्थान रोग का है, अष्टम स्थान मृत्यु का है। यदि एक के चन्द्रमा से दूसरे का चन्द्रमा छठा अथवा आठवां हो तो उसका फल रोग अथवा मृत्यु है, अतः वर्जित है। इसी प्रकार गण आदि का भी अभिप्राय है॥

इसदेश में यह प्रथा प्रचलित है कि मङ्गली कन्या का विवाह केवल मङ्गली लड़के के साथ होता है। "लग्नेव्ययेचपाताले" इत्यादिश्लोक के आधार पर यह प्रथा प्रचलित हुई ऐसा अनुमान होता है। परन्तु "भौम-तुल्यो यदा भौमः पापो वा तादृशो भवेत्" इत्यादि श्लोक पूर्वोक्त श्लोक का अपवाद है। यह बात विचार योग्य है कि अपवाद उत्सर्ग से बलवान् हो सकता है अथवा नहीं॥

यदि ज्योतिष शास्त्र पढ़ने में किसी का चित्त लग जावे, अच्छा गुरु पढ़ाने वाला मिल जावे, अच्छी अच्छी पुस्तकें पढ़ने को मिल जावें, अन्वेषणशीलता हो तो ज्योतिष शास्त्र अत्यन्त चित्तरञ्जक विषय है। इसमें जितनी बातें हैं उन सब का मूलतत्त्व है। केवल मननशीलता होनी चाहिये। जैसे कि द्वादश भाव हैं। उनका कुछ अभिप्राय है। केवल कल्पना नहीं है। अष्टम स्थान अशुभ माना गया है। दृष्टि किसी स्थान में होती है किसी में नहीं होती, किसी में पूर्ण दृष्टि होती है। किसी स्थान में ग्रह उच्च का होता है कहीं नीच का होता है। ग्रहों के घर माने गये हैं। यह सब बातें बिना मूल कारण के नहीं हैं। यदि इन सब बातों का यहां पर विचार किया जावे तो ग्रन्थ में विस्तार अधिक हो जावेगा। इसलिये पाठक गण से क्षमा मांगता हूं॥

विज्ञानशास्त्र से यह बात सिद्ध है कि समुद्र में ज्वार भाटा होने का कारण चन्द्रमा है। ऐसे ही सूर्य का प्रभाव पौधों तथा वृक्षों पर पड़ता है। जैसे ही निर्जीव पदार्थों पर ग्रहों का प्रभाव पड़ता है ऐसे ही सजीव पदा-र्थों पर भी पड़ता है। यह सारा संसार मध्याकर्षण शक्ति पर स्थित

है। सूर्य इस सौरजगत् का केन्द्र है। इसी के चारों ओर सब ग्रहगण घूमते हैं और एक के पिण्ड का प्रभाव दूसरे के पिण्ड पर परस्पर पड़ता है। यदि सूर्य न होता तो प्रकाश, उष्णता तथा ग्रहगति का अभाव होता। वनस्पति वर्ग तथा प्राणीमात्र का जीवित रहना असम्भव हो जाता। प्रातः काल तथा सायंकाल को सूर्य की किरणें तिर्छी पडती हैं, मध्याह्न में सीधी पडती हैं, रात में नहीं पड़ती हैं। इस रीति से जिस बालक का जन्म प्रातः काल तथा सायकाल को होगा उसके स्वभाव आदि में उस बालक के स्वभाव आदि से भेद होगा जिसका जन्म मध्याह्न अथवा रात्रि में हो। ऐसे ही ग्रीष्म ऋतु में (वृष मिथुन के सूर्य में) सूर्य की किरणें सीधी पडती हैं परन्तु हेमन्त ऋतु में (वृश्चिक धन के सूर्य में) सूर्य की किरणें तिर्छी पडती हैं। इसलिये जो बालक वृष अथवा मिथुन राशि के सूर्य में उत्पन्न होगा उसका स्वभाव आदि उस बालक से भिन्न होगा जो वृश्चिक तथा धन राशि के सूर्य में उत्पन्न हो॥

कालपुरुष के अङ्ग विभाग में सूर्य आत्मा अर्थात् जीवात्मा है जन्म के समय पूर्व दिशा में जिस राशि का उदय हो उसे लग्न कहते हैं। यह लग्न इस बात को बतलाता है कि पृथ्वी उस समय कहां पर है। "लग्नमात्मा मनःसोमः" लग्न आत्मा अर्थात् शरीर को बतलाता है और चन्द्रमा चित्त को बतलाता है। जिसका लग्न अपने स्वामी अथवा शुभ ग्रह से दृष्ट अथवा युक्त हो वह मनुष्य दीर्घायु तथा नीरोग होता है। पर पाप ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होने से मनुष्य रोगी होता है। एवं चन्द्रमा से चित्त का विचार होता है। सूर्य से आत्मा का विचार होता है। इसी प्रकार और ग्रहों का भी प्रभाव पड़ता है और उनसे पृथक् पृथक् बातों का विचार किया जाता है। परन्तु मुख्य पदार्थ आत्मा, शरीर और मन हैं। इस लिये सब बातों में सूर्य, लग्न तथा चन्द्रमा का प्राधान्य दिया जाता है॥

यमलों (जुड़वां बच्चा, दोहरा जोड़ा भाई) के जन्म में कभी कभी

केवल पाच मिनट् का अन्तर होता है। परन्तु उन दोनों के शील स्वभाव, तथा भाग्य समान नहीं होते हैं। एक साथ उनकी मृत्यु भी नहीं होती है। इसका कारण यही है कि पांच मिनट् में ग्रहों का फल बदल जाता है। किसी मनुष्य की कुण्डली दूसरे की कुण्डली के साथ नहीं मिलती है। मान लो कि दो बालकों का जन्म एक ही समय हुआ है यदि वे पृथक् पृथक् देशों में हों तो देशान्तरों में भेद होने से लग्न में भेद हो जावेगा। मान लो कि वे दोनों एक ही स्थान पर उतपन्न हुए हैं तो प्रथमतः लग्न में भेद होगा। नहीं तो होरा, द्रेष्काण सप्तांश, नवांश, द्वादशांश, षष्ट्यंश में तब भी भेद अवश्य हो जावेगा। षष्ट्यंश २ मिनट् का होता है। इसी कारण एक की कुंडली तथा शील स्वभाव भाग्य आदि दूसरे के साथ नहीं मिलते हैं॥

फलित ज्योतिष को लोग झूठा कहते जाते हैं, परन्तु उसके बिना काम किसी का नहीं चलता है। न मानने वाले लोग भी गुप्त रीति से बच्चो की जन्मपत्रिया ज्योतिषी से बनवा कर अपने पास रखते हैं, प्रश्न करवाते हैं, तथा यात्रा आदि का मुहूर्त पूछते हैं। बहुत से अन्य धर्मावलम्बी लोग भी ज्योतिष को मानते है और उस पर विश्वास करते हैं। जो ज्योतिष को सच्चा न मानें तो ज्योतिष के लाभ से वेही वञ्चित रहेंगे, किसी को हानि इससे न होगी।

"यस्य नास्ति खलु जन्मपत्रिका या शुभाशुभफलप्रदायिनी।
अन्धकं भवति तस्य जीवितं दीपहीनमिव मन्दिरं निशि॥"

अर्थात् "शुभ तथा अशुभ फल को बतलाने वाली जन्मपत्री जिस मनुष्य की नहीं बनी है उसका जीवन अन्धे के समान है अथवा ऐसा है जैसे किसी के घर में रात को दीया न जला हो"। ज्योतिष शास्त्र की जड गहरी है। उसको जड से उखाडना असम्भव प्रतीत होता है। प्रत्युत वह और नई जडों को फैलाता जाता है। जब तक सूर्यादि ग्रह तथा मेषादि

राशियां आकाश में रहेंगी तब तक ज्योतिष का भी भूलोक से उठना असम्भव प्रतीत होता है ऐसा कहना कोई अतिशयोक्ति न होगी ॥

ज्योतिष का प्रचार दिन दिन बढ़ता जाता है। विलायत में ऐलन-लियो साहब ने एक फलित ज्योतिष का कार्यालय खोला है। उसमें अमेरिका, आफ्रिका, यूरप, जापान आदि देशों के निवासियों की जन्मपत्रिया बनती हैं। बहुत सी फलित ज्योतिष की पुस्तकें वहां से छपके प्रकाशित हो चुकी हैं। जेडकील साहब का पञ्चाङ्ग प्रतिवर्ष प्रकाशित होता है। रैफेल साहब ने भी कुछ ग्रन्थ लिखे हैं। यूरेनस और नेप्चून ग्रहों के फल भी उन लोगों ने निकाले हैं। वे लोग बहुत सी चमत्कार की सूक्ष्म बातें बतलाते हैं। वे लोग बहुत सी नई बातों को खोजकर ढूंढ निकालते है। हमारे देश में पुरानी बातों का लोप होता जाता है, नई बातों को कोई नहीं निकालता है। यदि अच्छे पढे लिखे लोगों की इस ओर प्रवृत्ति हो और उनको यथोचित वृत्ति मिले जिससे उनकी आजीविका का निर्वाह हो जावे तो नई बातों का खोज होना सम्भव है। ऐसा होने से लोगों को भी लाभ होगा फलित भी कलङ्कित न होगा ॥

अंग्रेज़ी ज्योतिषी लोग दृष्टि को 'ऐस्पेक्ट" कहते हैं। वे लोग फल इस प्रकार से निकालते है कि कौन ग्रह किस ग्रह से कितने अंशों की दूरी पर है। वे लोग वर्षफल का विचार भी दूसरी रीति से करते हैं। मुहूर्त अथवा प्रश्न के विषय में अभी उन्होंने उन्नति नहीं की है॥

भूत तथा वर्तमान सबको विदित होता है। परन्तु भविष्य जानने की सब लोग इच्छा करते हैं। भविष्य जानने के केवल दो उपाय हैं। एक तो योगमार्ग दूसरा ज्योतिष। योगमार्ग अति कठिन है। लाखों मनुष्यों में कठिनता से एकाध महात्मा होगा जिसका दर्शन मिलना भी दुर्लभ है। ज्योतिष सबके लिये सुलभ है। बड़े बड़े महर्षि लोग दयाभाव से परोपकार के निमित्त बहुत से ग्रन्थ फलित ज्योतिष के लिख गये हैं। उनमें

दिव्य दृष्टि थी। उनके बनाये हुए ग्रन्थों को झूठा कहना अति साहस का काम होगा॥

बहुत से लोग यह भी कहा करते हैं कि भविष्य जानना कोई अच्छी बात नहीं हैं। इससे लाभ नहीं किन्तु हानि है। कारण यह बतलाते हैं कि इसके जानने से वे उत्साहहीन तथा चिन्तायुक्त हो जाते हैं। इसका उत्तर यह है कि यदि किसी मनुष्य को असाध्य रोग हो जावे तो कोई भी अच्छा डाक्टर यह नहीं कहेगा कि इसको असाध्य रोग नहीं है। हां सहसा रोगी के सम्मुख यह नहीं कहेगा कि इसकी मृत्यु हो जावेगी जिससे कि वह हतोत्साह हो जावे। इसी प्रकार जन्मपत्री देखकर यदि कोई ज्योतिषी कहे कि तुम्हें अशुभ दशा आने वाली है तो उसका क्या अपराध है। जो लोग इतने कातर हों कि ज्योतिषी के कहने पर हताश होकर खाना पीना भी छोड़दे उनके लिये यही विशेष होगा कि वे अपनी जन्मपत्री किसी को न दिखलावें। संसार में जन्म लेकर भला बुरा सब भुगतना पड़ेगा॥

ज्योतिष पर एक आक्रमण यह भी होता है कि इससे लोग दैव परायण तथा मूढ़ विश्वास वाले हो जाते हैं। ऐसा कहना केवल भ्रान्ति है। इस पुस्तक के संज्ञाध्याय में "दैव पौरुष विवाद" नामक एक प्रकरण है उसको देखने से यह सिद्ध हो जावेगा कि ज्योतिष यह नहीं कहता है कि पुरुषार्थ को छोडदो केवल दैव के भरोसे बैठे रहो। परन्तु वह इस बात को बतलाता है कि अमुक अनुकूल समय में पुरुषार्थ करने से शीघ्र सफलता प्राप्त होगी।

"अर्थार्जने सहाय पुरुषाणामापदर्णवे पोतः।
यात्रासमये मन्त्री जातकमपहाय नास्त्यपरः॥"

अर्थात् "जातक को छोड कर और कोई अधिक मित्र मनुष्य का नहीं है। क्योंकि द्रव्योपार्जन करने में यह सहायता देता है, आपत्तिरूपी समुद्र में पोत अर्थात् जहाज का काम देता है और यात्रा समय में अच्छी सम्मति देता है॥"

हम लोग पूर्व जन्म को मानते हैं। ज्योतिष इस बात को बतलाता कि हमने पूर्वजन्म में शुभाशुभ कर्म जो कुछ किये हों उनका फल इस जन्म में कब और कैसा मिलेगा।

"यदुपचित मन्यजन्मनि शुभाशुभ तस्य कर्मण· पक्तिम्।
व्यञ्जयति शास्त्रमेनत्तमसि द्रव्याणि दीप इव॥"

अर्थात् "मनुष्यों ने पूर्वजन्म में जो शुभाशुभ कर्म सञ्चित किये हों उनके फल का पाक कब होगा इस बात को यह शास्त्र ऐसा बतला देता है जैसा कि दीप अन्धेरे में पदार्थों को दिखला देता है॥"

इस बात को जानने से मनुष्य दैवपरायण नहीं होता है। परन्तु जानने पर उपाय करने से शिथिलमूल कर्मों का अशुभ फल नष्ट हो जाता है। पूर्व जन्म में अशुभ कर्म करने से इस जन्म में दुःख मिला है इसलिये इस जन्म में ऐसे अच्छे कर्म करने चाहियें जिनसे अगले जन्म में दुःख न मिले इस प्रकार का कुछ ज्ञान मनुष्य को प्राप्त होता है और वह दुष्कर्मों से बचता है। इतना लाभ जब ज्योतिष से होता है तो उस पर दोषारोपण करना बुद्धिमत्ता नहीं है॥

जो लोग थोडी बहुत विदेशी भाषा को पढ़ कर कुतर्क द्वारा महर्षि प्रणीत प्राचीन फलित ज्योतिष के ग्रन्थों पर आक्रमण अथवा दोषारोपण करने को तत्पर होते हैं उनके प्रति सविनय यह उत्तर है कि ज्ञानरूपी समुद्र अथाह और अपार है। अभी वे इस समुद्र के किनारे से मील अथवा दो मील भी आगे नहीं बढ़ सके हैं। उनको अभी यह कहने का अधिकार नहीं है कि समुद्र गहरा नहीं है अथवा उसमें ह्वेल आदि जलजन्तु नहीं हैं अथवा उनकी दृष्टि समुद्र पार पहुंच गई है। वे जितना जितना आगे बढ़ते जावेंगे उतना ही ज्ञानरूपी समुद्र अपार और अथाह विदित होने लगेगा और उन्हें अपनी मूर्खता को स्वीकार करना पड़ेगा। भर्तृहरि ने कहा है कि—

"यदा किञ्चिज्ज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धः समभवं
स्तदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदवलिप्तं मम मनः ।
यदा किञ्चित्किञ्चिद्बुधजनसकाशादवगतं
तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः ॥

अर्थात् "जब मुझको थोड़ा सा ज्ञान था तब मैं हाथी के समान मद से अन्धा हो गया था और मेरे चित्त में इतना अभिमान होगया था कि मैं अपने को सर्वज्ञ समझता था । परन्तु जब पण्डितों के समीप रहने से कुछ कुछ ज्ञान प्राप्त हुआ तो मुझे विदित हुआ कि मैं मूर्ख हूं और ज्वर के समान मद जो मुझ पर चढ़ा हुआ था वह दूर हो गया" ।

शेक्सपियर कवि ने भी कहा है कि—

"There are more things in heaven and earth Horatio,
Than are dreamt of in your philosophy"

अर्थात् "भूलोक तथा स्वर्ग लोक में बहुत से ऐसे विषय हैं कि जिनके प्रति तुम्हारे विज्ञान शास्त्र को स्वप्न भी नहीं हुआ है" ।

आध्यात्मिक विषयों को जो केवल ज्ञानद्वारा सूक्ष्मदृष्टि से प्राप्य हैं भौतिक पदार्थों से उपमा दे कर सिद्ध अथवा असिद्ध करने का उद्योग मिथ्याभ्रान्ति का मूल कारण है । जो मनुष्य संस्कृत न जानता हो उसे संस्कृत पर दोषारोपण करने का अधिकार नहीं है । ऐसे ही जब तक कोई मनुष्य ज्योतिष के चार लाख श्लोकों को पढ़ कर पूर्वापर विचार पूर्वक फल न मिला ले तब तक उसे यह कहने का अधिकार नहीं है कि फलित ज्योतिष झूठा है ॥

फलित ज्योतिष को झूठा ठहराने के अर्थ निम्नलिखित कथा प्रचलित है । एक ज्योतिषी किसी राजा के पास गया और उसने राजा से कहा कि अमुक दिन आपकी आयु समाप्त हो जावेगी । इस बात को सुन कर राजा चिन्ताग्रस्त हो गया । जब राजा के मन्त्री का राजा की चिन्ता

का कारण विदित हुआ तो उसने उस ज्योतिषी को राजा के सम्मुख बुला कर पूछा कि आपकी आयु कितनी है। उसने कहा कि अभी इतने वर्ष शेष है। मन्त्री ने शीघ्र अपना खड्ग निकालकर ज्योतिषी का सिर धड़ से अलगकर दिया और राजा से कहा कि अब इसकी बात कहां तक सच है देख लीजिये। राजा की चिन्ता उस दिन से दूर होगई। लोग इससे सिद्ध करते हैं कि फलित ज्योतिष झूठा है। परन्तु पहिला प्रश्न यह होता है कि यह कथा कहां तक ऐतिहासिक है। दूसरा प्रश्न यह है कि वह ज्योतिषी जी कितना ज्योतिष पढे थे। यदि इस बात से यह सिद्ध हो कि जब चाहो आदमी की आयु शस्त्रद्वारा समाप्त हो सकती है तो "नाकाले म्रियते जन्तुः" इस शास्त्र पर बट्टा लगेगा॥

आज कल हम लोगों मे एक दोष यह होगया है कि हम अपने यहा की भली बुरी वस्तुओं को नहीं पहिचानते हैं। यदि अभी कोई आधुनिक विज्ञान वेत्ता कहदे कि फलित शास्त्र सच्चा है तो हम भी उसे सत्य कहने लगेंगे। जब अन्यदेशीय शकुन्तला नाटक की प्रशंसा करें तब हम शकुन्तला नाटक पढ़ें। जब वे कहें कि श्रीमद्भगवद्गीता अपूर्व ग्रन्थ है तब इस की ओर हम लोगों की प्रवृत्ति हो। अन्यथा हम अपने यहा के रत्नों को नहीं पहिचानते हैं॥

आजकल के ज्योतिषियों में एक दोष यह है कि वे भले फलों को बतला देते हैं परन्तु बुरे फल नहीं बतलाते हैं। कारण कदाचित् यह कि वे पूछने वाले को अप्रसन्न नहीं करना चाहते। मेरी अल्प बुद्धि से यह हो बात ठीक नहीं है। अच्छा बुरा जो कुछ फल हो यथार्थ बतला देना चाहिये। एक नीति यह भी है कि "सत्यंब्रूयात्प्रियंब्रूयान्नब्रूयात्सत्यमप्रियम्। प्रियं च नानृतं ब्रूयादित्युवाच बृहस्पतिः"। अर्थात् "सत्य तथा प्रिय वचन कहना चाहिये परन्तु अप्रियसत्य तथा प्रिय असत्य भी न हो"। यह बात इस प्रकार समझ में आ सकती है कि जैसे कोई रोग ग्रस्त हो तो उसके सम्मुख

ऐसी बात न कहनी चाहिये जिससे कि वह हताश हो जावे। बात को बचा कर इस प्रकार कहना चाहिये जिसमें सत्य हो परन्तु अप्रिय न हो तथा प्रिय असत्य भी न हो। कोई धूर्त लोग रुपया पैसा खींचने के लिये कह देते हैं कि अमुक ग्रह की बडी अशुभ दशा आई है। यह भी अनुचित है॥

ज्योतिषी कैसा होना चाहिये यह विषय इस पुस्तक के सप्ताध्याय में "दैवज्ञ प्रशंसा" "दैवज्ञदोषाः" नामक प्रकरणों में देखना चाहिये॥

कई कुप्रथाएं हमारे देश में प्रचलित हैं जिनको दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये।

(१) प्रश्न विषय में मूक प्रश्न अति कठिन है। इसको बतलाने में ज्योतिषी को अति कष्ट होता है। यदि लोग केवल इतना कहें कि हमारा प्रश्न अमुक विषय में है इसका परिणाम क्या होगा तो ज्योतिषी का आधे से अधिक परिश्रम बच जावे। परन्तु लोग कहते हैं कि प्रश्न करो इसका अर्थ यह है कि पहिली बात ज्योतिषी को यह बतलानी चाहिये कि प्रश्नकर्ता के मन में क्या है। जब यह बात ठीक निकल आवे तब परिणाम का विचार हो। पैसा ज्योतिषी जी को एक नहीं मिलता है विना मूल्य काम होता है जानना चाहते हैं कि ज्योतिषी जी हमारे मन की बात बतलावें। क्यों ज्योतिषी जी इतना परिश्रम करें क्यों फल ठीक हो॥

(२) कभी कभी ऐसा देखने में आया है कि यदि कोई ज्योतिषी किसी गांव अथवा नगर में कार्यवशात् चला जावे तो गांव वाले अथवा सब मुहल्ले के लोग दौड़कर केवल अपनी नहीं किन्तु सारे कुटुम्ब की कुंडलियां उसके सम्मुख रख देते हैं। सारांश यह है कि एक घण्टे के भीतर उसे सौ पचास कुंडलिया देखनी पड़ती हैं। प्रश्न भी ऐसे होते हैं कि अमुक की आयु कितनी है। एक मिनट एक कुंडली को देखने के लिये मिल सकता है। अब समझ लीजिये कि एक मिनट् में आयु का क्या विचार होगा॥

(३) ज्योतिषी लोग आपस में एक दूसरे से राग द्वेष रखते हैं। सदा एक दूसरे के छिद्रान्वेषण में तत्पर रहते हैं। भूल चूक संसार में सब से होती है। यदि कोई ज्योतिषी कहीं पर दूसरे की भूल पकडले तो अपनी प्रतिष्ठा स्थापित करने का तथा दूसरे की मानहानि का अवसर उसे मिल जाता है। यहां तक कि वाच्यावाच्य मुखसे निकाल बैठता है। यह सब बातें सौजन्य के विरुद्ध हैं। शीघ्रता से काम करने में अशुद्धता का हो जाना सम्भव है। इसलिये पूर्वापर विचार करके धैर्य के साथ काम करना चाहिये जिससे कि अशुद्धि न हो और दूसरे को दोषारोपण करने का अवसर न मिले। छिद्रान्वेषण के पचासों उदाहरण हैं॥

(४) कई लोग ज्योतिषियों की परीक्षा लेने का प्रयत्न करते हैं। एक मुहूर्त के विषय में दस ज्योतिषियों की सम्मति लेते हैं। कभी कभी मतभेद होना सम्भव है। तब दोनों को लडा कर शास्त्रार्थ कराना चाहते हैं और यह सार निकालना चाहते हैं कि कौन अधिक पण्डित है। परन्तु यह सब बातें विना मूल्य होती हैं पैसा एक भी नहीं देना पडता। यदि दसो ज्योतिषियों को फीस देनी पडती तो सम्भव है कि इस शास्त्रार्थ का अवसर न मिलता॥

(५) कई लोग ज्योतिष शास्त्र की अथवा ज्योतिषी की हंसी उडाने को अथवा दोनों को झूठा ठहराने को कुटिल स्वभाव से प्रश्न करते हैं। शास्त्र में लिखा है कि ऐसे मनुष्य के प्रश्न का विचार न करना चाहिये। परन्तु श्रद्धा भक्ति पूर्वक प्रश्न करने वाले मनुष्य के प्रश्न का उत्तर विचार करके अवश्य देना चाहिये। प्रश्न कर्ता कुटिल स्वभाव से अथवा सरल स्वभाव है इस बात का विचार प्रश्नाध्याय में है।

"क्षुद्र पाखण्ड धूर्तेषु श्रद्धाहीनोपहासके।
ज्ञानं न तथ्यतामेति यदि शम्भुः स्वयं वदेत॥
भक्तार्तदीनवदने दैवज्ञो न दिशेद्यदि।
विफलं भवति ज्ञानं तस्मात्तेभ्यः सदा वदेत॥

ऋजुरयमन्टजुर्वा मष्टा पूर्वं परीक्ष्य लग्नवशात् ।
गणकेन फलं वाच्यं दैव तच्चित्तग स्फुरति ॥"

(६) कभी कभी ज्योतिषी को कठिन परीक्षा उत्तीर्ण करनी पड़ती है। कई लोग किसी मरे हुए मनुष्य की जन्मपत्री लाकर नये ज्योतिषी के साम्हने विचारार्थ रख देते हैं। इसमें उनका कुटिल भाव है। यदि ज्योतिषी सीधा साधा हो कुण्डली के फल कहने लगे तो उसकी हंसी उड़ाते हैं। जीवित जन्मपत्री जानने की रीति शास्त्र में लिखी है। परन्तु इन बातों से क्या लाभ है। कभी कभी लोग केवल कुंडली साम्हने रख कर पूछते हैं कि यह पुत्र की है अथवा कन्या की। इसको जानने की भी रीति है। परन्तु यह भी कुटिलभाव है। अधिक लाभ इससे नहीं। सुना है कि किसी रियासत में घोड़ी का बच्चा हुआ था। ज्योतिषी जी दूसरे स्थान में रहते थे। उनको पत्र भेजा गया कि अमुक समय में जन्म हुआ है। कुंडली बना कर भेजो। ज्योतिषी जी ने लिखा कि इस लग्न में मनुष्य का जन्म नहीं हो सकता है। तब ज्योतिषी जी को पारितोषिक भेजा गया। वृहज्जातक आदि ग्रन्थों में इस बात को जानने की भी रीति लिखी है। पुराने समय में राजा लोग सच्चे झूठे ज्योतिषी की परीक्षा ऐसे प्रश्न करके लेते थे। यदि ज्योतिषी परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया तो पीढ़ियों तक खाने की परिपाटी भी स्थापित हो जाती थी। साम्प्रत में पारितोषिक इतना मिलता नहीं। प्रश्न लोग ऐसे कर बैठते हैं तो यह नासमझी है। यदि ज्योतिषी को यह शङ्का हो जावे कि आप उसकी परीक्षा लेकर उसको झूठा बनाना चाहते हैं और उसकी मानहानि कुटिलभाव से करना चाहते हैं तो याद रखिये कि जो कुछ फल वह सरल स्वभाव से आप को बतलाता आप उससे भी वञ्चित रहेंगे॥

(७) ज्योतिष शास्त्र बहुत बड़ा है। सारा शास्त्र कंठस्थ किसी को नहीं रह सकता है। बहुधा लोग मार्ग में चलते समय ऐसे कठिन विषय पूछ डालते हैं कि जिनका उत्तर बिना पुस्तक देखे यथार्थ नहीं

दिया जा सकता है। यदि उसी समय उत्तर न दिया जावे तो प्रश्नकर्ता समझते हैं कि ज्योतिषी जी को कुछ नहीं आता है ज्योतिषी जी समझते हैं कि यदि पुस्तक देख कर उत्तर देने को कहें तो मानहानि होगी। उलटा सीधा जो बन पड़ा वे उत्तर दे देते हैं चाहे ठीक हो या न हो। प्रश्नकर्ता को चाहिये कि ऐसे प्रश्नों के विचार के निमित्त पर्याप्त समय दे। पुस्तक देख कर विचार कर के उत्तर मिलेगा कहने में ज्योतिषी को भी मानहानि का विचार न होना चाहिये। बड़े बड़े जज, बारिस्टर, तथा वकील लोग कानून की पुस्तकों को बारम्बार गूढ़ विषयों पर देखते रहते हैं। क्या उससे उनकी मान हानि होती है?

(८) आजीविका के निमित्त ज्योतिष सीखने वाले नये छात्रों को चाहिये कि जब तक उन्हें व्याकरण का बोध अच्छे प्रकार से न हो जावे तब तक ज्योतिष सीखने का दुराग्रह न करें। व्याकरणज्ञ ज्योतिषियों को चाहिये कि आरम्भ में शिष्य की परीक्षा व्याकरण में ले लें यदि वे समझें कि उसे बोध है तब ज्योतिष सिखलाना आरम्भ करें अन्यथा नहीं। ऐसा करने से सम्भव है कि ज्योतिषियों का व्याकरण हीन होने का कलङ्क कुछ वर्षों में मिट जावे॥

हमारे देश में एक दुष्प्रथा यह है कि सब बातों को लोग गुप्त रखते हैं। किसी को बतलाते नहीं हैं। इसका परिणाम यह होता है कि विद्या का लोप होता जाता है। ज्योतिष के आरम्भ करने में एक स्थान पर मैंने पढ़ा था कि "त्रिभिरस्तंगतैर्जडः"। अस्तगतग्रह किसको कहते हैं यह प्रश्न मैंने कई ज्योतिषियों से किया। किसी ने कहा कि अस्त नाम सप्तम स्थान का है। किसी ने कहा कि जब तक सिद्धान्त के अनुसार गणित न किया जाय तब तक इस बात का ज्ञान नहीं हो सकता है। यथायोग्य उत्तर किसी ने नहीं दिया। तृप्ति नहीं हुई। एक दिन सोचते सोचते रघुवंश का तीसरा सर्ग याद आया—"ग्रहैस्ततः पञ्चभिरुच्चसंश्रयै-रसूर्यगैः सूचितभाग्यसम्पदम्" इस श्लोक की टीका देखने से विदित

हुआ कि सूर्य के साथ जो ग्रह है वह अस्तंगत है। तब सन्देह निवृत्त हुआ। नये विद्यार्थी को ऐसी कठिनताएं होती हैं॥

एक बात यह अद्भुत देखने में आई है कि कुछ ज्योतिषी जिनकी आजीविका ज्योतिष पर निर्भर है अथवा जो सिद्धान्तवेत्ता की पदवी को प्राप्त हो गये हैं कभी कभी स्वयं फलित ज्योतिष को ठगविद्या कह बैठते हैं। कारण यह विदित होता है कि विना पूर्वापर विचार किये हुए वे शीघ्रता से फल कह देते हैं जिससे उन्हें कभी कभी झूठा बनना पड़ता है। सम्भव है कि अपना कलङ्क मिटाने के लिये वे शास्त्र ही पर कलङ्क लगा देते हैं। अथवा यह कारण हो सकता है कि लोग विना पारितोषिक दिए इनको बहुत कष्ट देते हैं ऐसा कहने से कदाचित् इनका पिण्ड छूट जावे। अथवा "यस्य बुद्धेः परंगतः" होने से वे केवल फलित को नहीं किन्तु सारे जगत् को मिथ्या समझने लगते हैं॥

प्राचीन ग्रन्थ जो आचार्य प्रणीत हैं उनमें कहीं एक मात्रा का भी भेद नहीं पाया जाता है। ऐसा ज्ञात होता है कि कुछ काल से लोगों ने यह समझा कि ज्योतिष तथा व्याकरण का परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है। अतः केवल ज्योतिष पढ़ने गये और व्याकरण की उपेक्षा करदी। परिणाम यह हुआ कि ऐसे ज्योतिषियों के हाथ पड़ने से ज्योतिष दूषित होगया। ऐसे व्याकरण हीन ज्योतिषियों ने बहुत सी बातें छन्दोबद्ध करदीं जो साम्प्रत में प्रायः ज्योतिष के अन्तर्गत हो गई हैं और उनके बनाये हुए श्लोक ज्योतिषी लोगों में प्रचलित हो गये हैं अथवा अच्छे श्लोकों का पाठ बिगाड़ कर भ्रष्ट कर दिया है। ऐसे श्लोकों से काम ठीक निकलता है परन्तु श्लोकों का पाठ भ्रष्ट है। व्याकरण जानने वाले को अपने मुख से ऐसा भ्रष्ट श्लोक कहने में लज्जा आती है। सुनने से उसका हृदय विदीर्ण होता है। प्रत्युत सकल ज्योतिष शास्त्र के विषय में उसके अंतःकरण में अश्रद्धा अथवा घृणा उत्पन्न हो जाती है। ऐसे श्लोकों का पाठ शुद्ध करना प्रायः असम्भव है। या तो छन्दोभङ्ग हो जावेगा या सारा श्लोक नया

बदलना पड़ेगा। दिशाशूल के विषय में निम्नलिखित श्लोक कई स्थानों में प्रचलित हैः—

"शनिसोमे भवेत्पूर्वे रविशुक्रे च पश्चिमे।
उत्तरे बुधभौमे च दक्षिणे च बृहस्पतिः" ॥

कालराहु के विषय में प्रचलित श्लोक इस प्रकार से हैः—

"अर्कोत्तरे वायुदिशाञ्च सोमे भौमे प्रतीच्यां बुधनैरृते च।
याम्ये गुरौ वह्निदिशांच शुक्रे मन्दे च पूर्वे प्रवदन्ति कालम् ॥"

द्विजन्मा योग के विषय में निम्नलिखित श्लोक प्रचलित हैः—

"वर्षं लग्नं जन्म लग्नं एकोऽपे यदि चेद्भवेत्।
द्विजन्माख्य मिदं योगं कष्टंच मृत्युना भयम्" ॥

भाग्योदय के विषय में प्रचलित श्लोक का पाठ इस प्रकार से हैः—

"द्वाविंशद्रविणा च वर्षकथितं चन्द्रे चतुर्विंशति
अष्टाविंशति भूमिनन्दनमिता दन्ताबुधाविम्मिता।
जीवे षोडश पञ्चविंशति भृगुर्षट् त्रिंशशौरिर्वलं
ज्ञेयं भाग्यवशा भवन्ति उदयं ज्ञेयंच भाग्योदयम् ॥"

बचपन से ऐसा ही पाठ सुनने से कभी कभी सज्ञ भी अज्ञ बनकर ऐसा ही पाठ कह बैठते हैं। श्लोकों से काम ठीक निकलता है। परन्तु उनको शुद्ध करना कठिन समस्या है ॥

काशिनाथ भट्टाचार्य कृत 'लग्न जातक' नाम का एक छोटा सा ग्रन्थ ७० श्लोक का है। यह ग्रन्थ सम्वत १९५७ में "नौलखाह इस—लाम" आगरा में पत्थर के छापे में छपा है। पुस्तक मिलने का पता यह है "लाला वंशीधर कन्हैया लाल बुकसेलर फुलैरट बाजार आगरा"। इस ग्रन्थ में से १८ श्लोकों को उदाहरणार्थ मैं यहां पर अक्षरशः उद्धृत करता हूं। इनको पढ़ने से विदित होगा कि कोई पंक्ति ऐसा नहीं है जिसमें अशुद्धि न हो। केवल यही श्लोक नहीं परन्तु सारा ग्रन्थ ऐसा ही है। ग्रन्थ

कर्ता ऐसी अशुद्धि करेंगे कहना सम्भव नहीं है। ऐसा हो सकता है कि यह श्लोक कई ग्रन्थों से एकत्रित किये गये और पहिले से प्रचलित थे। लोगों की श्रद्धा बढ़ाने को काशिनाथ जी का नाम रख दिया गया हो। व्याकरण हीन ज्योतिषियों के हाथ पडने से पाठ भ्रष्ट होते होते यहां तक दुर्दशा हो गई। ऐसा ही अशुद्ध पाठ छप गया, ऐसा ही अशुद्ध पाठ लोग याद करने लगे और ऐसे श्लोकों को प्रमाण दे कर कह डालते हैं। यह सब व्याकरण की उपेक्षा का फल है। उदाहरणार्थ श्लोक—

"शब्दे मेषे वृषे सिंहे मकरे च तथा तुले।
अर्ध शब्द घटे कन्या शेषा शब्द विवर्जयं॥
मीने मेषे द्वयो भार्या चत्वारि वृष कुम्भयो।
तुलाच सप्त कन्याना वाण च धन कर्कयोः॥
अन्य लग्ने भवे त्रीणि सूतिकायां विधातये॥
पापैश्च विधवा नारी क्रूरः ग्रह कुमारिका॥
सौम्य ग्रह सुहागा च सूतिकाया विधीयते॥
द्वादशे चन्द्र भौमस्य वामनेत्र विनश्यति।
द्वादशे रवि राहुश्च दक्षिणे चक्षु नाशयेत्॥
लग्ने शुक्रे बुधे यस्य यस्य केन्द्र वृहस्पति।
दशमेगारयकोस्य सजातो कुलदीपकः॥
आदौ जाता रविं हन्ति पश्चाद्भौम शनिश्चरौ।
राहुणामभयो हन्ता केत सर्वे विचारयेत्॥
त्रिभिरुच्च भवेद्राज्यं त्रिभिस्वस्थनि मंत्रिणं।
त्रिभिनीच भवेद्दास्यं त्रिभिरस्त भवेत्सठः॥
नीचस्थतो जन्मनि जो ग्रहस्या तत्रस्य नाशोप्य बहु धनार्थ
भवे त्रिकोण। अथकेन्द्रवर्ती राजा तदो भूपति चक्रवर्ती॥
मेषे सूर्ये वृषे चन्द्रे मकरे भौमाङ्गनाबुधे।

कर्के गुरु अंतु शुक्र उभतुले शनैश्चरे ॥
दश सूर्यत्रये चन्द्रे अष्ट विंशति भौमकः ।
पञ्चादश बुधो उभ पंच अंशो वृहस्पति ॥
पचाविंशति शुक्रोच विंशअंशो शनिश्चरः ॥
आदित्यनवमेतात माता चन्द्र चतुर्थके ।
भौमेच तृतीये भ्राता बुधे तृतीये च मातुले ॥
गुरु पञ्चमतो पुत्र शुक्र सप्तमे चाङ्गना ।
शनिरष्टम गोवत्स शुभाशुभ मुदाहृता" ॥

पुनरपि उदाहरणार्थं मूल श्लोक—'मेषेचसिंहे धनुपीन्द्रभागे तथोक्ष कन्यामकरेषु याम्याम्। द्वन्द्वे तुलाया घटभे प्रतीच्यां तथोत्तरे कर्क झषालिगोऽञ्जः" ॥

प्रचलित तथा भ्रष्ट पाठः— 'मेषेच सिंहे धनपूर्वभागे वृषे च कन्या मकरेच याम्ये। मिथुने तुले कुम्भच पश्चिमायां कर्कट वृश्चिक मीन तथोत्तरम्याम्'' ॥

श्लोक की यह दुर्दशा है। तिस पर भी उच्चारण की ऐसी दुष्प्रथा प्रचलित है कि वैयाकरणों को छोड कर सब सामान्य "ष" का उच्चारण 'ख' करते हैं, 'य' का उच्चारण 'ज' करते हैं, 'ब' 'व' में तो कोई भेद ही नहीं है। प्रतिज्ञा सूत्र के अनुसार केवल शुक्ल यजुर्वेद में कहीं कहीं 'ष' का उच्चारण 'ख और 'य का उच्चारण 'ज' होता है। इसके नियम बने हैं। सर्वत्र ऐसा उच्चारण शुक्ल यजुर्वेद में भी नहीं होता है। शुक्ल यजुर्वेद के अन्यत्र ऐसा उच्चारण करने का नियम कहीं भी नहीं है।

सामान्य व्याकरण हीन ज्योतिषी पूर्वोक्त श्लोक का उच्चारण इस प्रकार से करते हैं:—"मेखेच सिंह धन पूर्वभागे वृखेच कन्या मकरेच जाम्ये। मिथुने तुले कुम्भ च पश्चिमायां कर्कट बिच्छू मीन तथोत्तराया्म्' ॥

ऐसे पचासों श्लोक प्रचलित हैं। लिखने में भी पूर्वोक्त व्याकरण

हीन ज्योतिषी "यस्यैषा जन्म पत्रिका" के स्थान में "जस्यैखा जन्म पत्रिका" लिख डालते हैं। "लिख्यते जन्म पत्रिका" के स्थान में "लिष्यते जन्म पत्रिका" लिख देते हैं। जन्मपत्रियां सचित्र रङ्गीन कई हाथ लम्बी बनी रहती हैं। बहुधा व्याकरण हीन ज्योतिषियों की बनाई हुई होती हैं। उनको पढ़ते से हँसी आये बिना नहीं रहा जाता है। इस विषय में पचासो जन्मपत्रियों को पाठक गण देख सकते हैं।

एक जन्मपत्री क आरम्भ में मङ्गलाचरण के श्लोक इस प्रकार से लिखे हैं—

"गणेश मादौश्च नमस्करोमि विरचिनारायण शंकरेभ्यः।
ईन्द्रादयो देव गणश्चसर्वे पाया लिखे निर्मल पत्रिका सूः॥
कल्याणानि दिवा भारतेः सुललितां काति कलानानिधि
लक्ष्मीाध्मातनयो बुधश्च बुधतां जीवशचीरंजीव्यतां।
साम्राज्य भृगुजोकंजो विजयतां राहु बहुकपंता
केतुर्यच्छतुतस्य वानछितमियं पत्रा यदीयोत्तमा॥

दूसरी जन्मपत्री के मध्य में ज्योतिषी जी ने अपनी सम्मति इस प्रकार लिखी है "शनिचन्द्रकेतवो म्व म्व दशान्तरे जाप्यौ'। यह दिग्दर्शन मात्र है॥

एक जन्मपत्री की पीठ पर किसी ज्योतिषी का लिखा हुआ इस प्रकार से है "कर्कार्क २२ पेट उपरि आराम क्रमः"। सूय संक्रान्ति से सूर्य के भुक्त अंशों को कूर्माचलीय भाषा में "पैट" कहते हैं। ज्योतिषी जी ने पैट शब्द से यहां पर संस्कृत शब्द बनाया है। आराम शब्द को बेमारी से अच्छे होने के अर्थ में काम लाये हैं। परन्तु संस्कृत में आराम शब्द का अर्थ उपवन है॥

प्रायः जन्मपत्रियों में कई ज्योतिषी जातक का कुलवर्णन इस प्रकार से करते हैं:—"श्रीधर्मावतारधर्ममूर्ति' गोब्राह्मण परिपालक लाला हरदयाल तस्यात्मज लाला शङ्करदयाल तस्यात्मज लाला प्रभुदयाल तस्य धर्मपत्नी पुत्ररत्नं प्रासूत'।

अब इसमें व्याकरण का अनुसरण कहां तक किया गया है आप समझ लीजिये ॥

इस विषय में बहुत लिखना आवश्यक नहीं है। कभी कभी दो एक ज्योतिषी ग्रामों में अथवा छोटे छोटे नगरों में ऐसे निकल आते हैं जो केवल शीघ्रबोध पढ़ कर जन्मकुण्डली उलटी सीधी बना लेते हैं, यात्रा आदि मुहूर्त ठहरा लेते हैं, बोलने में उनके धारा प्रवाह छूटते हैं, दूसरे पंडित के अभाव में उनकी प्रतिष्ठा बड़ा अच्छी होती है। "निरस्तपादपेदेशे एरण्डोऽपिद्रुमायते'। परन्तु सच पूछिये तो वे व्याकरण के विषय में निरक्षर भट्टाचार्य्य होते हैं। कभी कभी एकाध को "श्रीगणेशायनमः" लिखना भी नहीं आता है। यदि आप विश्वास करें तो एक जन्म कुंडली के आरम्भ में 'श्रीगनेसाय-नमः" लिखा हुआ मैंने अपनी आखों से देखा था ॥

उदाहरणार्थ दो चार बातें यहां पर रख दी गई हैं। यह सब व्याकरण की उपेक्षा का फल है। इन्हीं कारणों से किसी कवि ने निम्न लिखित श्लोक में ज्योतिषियों की हंसी उड़ाई है:—'वैयाकरणकिरातादपशब्दमृगाः क्वयान्तुसंत्रस्ताः। ज्योतिर्नट विट गायक भिषगाननगह्वराणि यदि नस्युः"॥ अर्थात् "व्याकरण जानने वाले किरातरूपी मनुष्य से डर हुए अपशब्दरूपी मृग ज्योतिषी, नट, विट, गायक तथा वैद्यों का मुखरूपी गुफाओं में छिपने को जाते हैं"। दस ज्योतिषी व्याकरण न जानने वाले हों, पर जानने वाला भी हो तो अकेला वह क्या कर सकता है। सब अपयश के भागी हो जाते हैं। पूर्वोक्त उदाहरणों में "न तथा बाधते स्कन्धो यथा बाधति बाधते" पूर्णतया चरितार्थ होता है॥

कई लोग अशुद्ध रचनाओं के समर्थन में कहा करते हैं कि "ज्योतिषे तन्त्रादेच वैद्यके शाकुने तथा। अर्थमात्रं तु गृह्णीयान्नापशब्दं विचारयेत्॥' अर्थात् "ज्योतिष शास्त्र, तन्त्र शास्त्र, वैद्य शास्त्र तथा शकुन विचार में केवल अर्थमात्र का विचार करना चाहिये अपशब्दों का विचार नहीं करना चाहिये"। परन्तु जो ज्योतिष शास्त्र वेद के छः अङ्गों में से प्रधान अङ्ग अर्थात्

नेत्र है, जिसके प्रवर्तक अङ्गिरा, गर्ग आदि महर्षि थे, जिसके विषय में कहा गया है कि "अप्रत्यक्षाणि शास्त्राणि विवाद स्तेषु केवलम्। प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ" अर्थात् "शास्त्रों में केवल विवाद होता है वे प्रत्यक्ष नहीं दिखलाई देते हैं। परन्तु ज्योतिषशास्त्र प्रत्यक्ष है क्योंकि उसमें सूर्य तथा चन्द्रमा साक्षी हैं" उसमें अशुद्धि का दोषारोपण होना अत्यन्त शोचनीय है। यदि अर्थमात्र का विचार होता तो सबसे पहिले महर्षि प्रणीत ग्रन्थों में अशुद्धि पाई जाती क्योंकि वे जो लिख देते आर्ष प्रयोग हो जाता। उसको अशुद्ध कहने का साहस किसी को न होता। परन्तु महर्षि प्रणीत ग्रन्थों में व्याकरण शास्त्र का उल्लङ्घन नहीं है। तदनन्तर सूर्य सिद्धान्त, बृहज्जातक, मुहूर्तचिन्तामणि आदि प्राचीन तथा आधुनिक ग्रन्थों में भी व्याकरण का अनुसरण किया गया है। ज्योतिष की यह दुर्दशा सौ या दो सौ वर्ष से हुई ऐसा अनुमान होता है। यद्यपि पूर्वोक्त श्लोक को हम आप्तवचन मान लें तथापि "शनि चन्द्र केतवो स्वस्वदशान्तरे जाप्यौ" तथा "कर्कार्कं २२ पैट उपरि आरामक्रम" इत्यादि को अशुद्ध कहना ही पड़ेगा। कई स्थानो पर पाठ शुद्ध करने में मुझे कठिनता हुई है। जहा तक सम्भव था शुद्ध पाठ रख दिया गया है। तथापि सम्भव है कि कहीं पर त्रुटि रह गई हो, कारण यह है कि ग्रन्थ में बहुत विस्तार हो गया है॥

बहुत से ज्योतिषी जन्मपत्र में सीधी बातें लिखना छोड़कर टेढ़ी बातें लिख कर अपना पाण्डित्य दिखलाते हैं। जैसे एक जन्मपत्री में इस प्रकार लिखा है। "कार्तिकमासे" के स्थान पर "बाहुलमासे"। "कृष्णपक्षे" के स्थानपर "देवकीनन्दनपक्षे"। "तृतीयाया तिथौ" लिखना छोड़कर 'दक्ष प्रजापतिसुतातिथौ"। "चन्द्रवासरे" लिखना छोड़कर "द्विजराज वासरे"। "कृत्तिका नक्षत्रे" के बदले "धनञ्जयर्क्षे", इत्यादि लेख हैं। यहा पर साहित्य दर्पण का उदाहरण याद आता है। "जल" लिखना छोड़कर कवि ने

"क्षीरोदजा वसति जन्म भुव: प्रसन्नाः" लिखा था। यह काव्य का दोष है नकि गुण। इसका परिणाम यह होता है कि यदि मनुष्य स्वयं पंडित न हो तो वह अपनी जन्मपत्री देखकर यह नहीं जान सकता है कि उसकी जन्म-तिथि, जन्मवार अथवा जन्मनक्षत्र क्या हैं। उसे ज्योतिषी के शरण जाना पड़ेगा॥

बहुत ज्योतिषी अपना पाण्डित्य दिखलाने के निमित्त जन्मपत्री के आदि में सम्वत् शाके आदि को श्लोकबद्ध कर लिखते हैं। इसका भी परिणाम यही होता है कि जन्म का सम्वत् आदि निकालना कठिन पड़ जाता है। श्लोकों का पाठ भी भ्रष्ट होता है। उदाहरणार्थं श्लोक यह है—
"श्रीरण्याखंडल विक्रमार्क नृपते तिथ्र्यंद्राधैनन्देहुते यातान्देशरभृष्टसोमरथ यच्छालिध्वनारव्येशके। अब्देविश्वावसा तरायण मिते मासे घटस्थे शुभे पक्षे षष्ठितिथौ पुराण घटिकाविशोतराद्धेपलाः॥" अब इन भ्रष्ट श्लोकों से जन्म का सम्वत् अथवा शाके क्या निकल सकता है॥

एक प्रश्न यह उपस्थित होता है कि ग्रहों के जपदानादिक से अरिष्ट निवारण हो सकता है अथवा नहीं। बहुत लोग कहा करते हैं कि अवश्य भावी बात नहीं टल सकती है अतः जपदानादिक व्यर्थ हैं। इसका उत्तर यह है कि कर्म दो प्रकार के होते हैं, एक तो शिथिलमूल, दूसरे दृढ़मूल। शिथिलमूल कर्म जप दान पूजनादिक से निवारण हो सकते हैं परन्तु दृढ़मूल कर्मों में कुछ नहीं चल सकता है। जब तक हमें यह विदित न हो जावे कि दृढ़मूल कर्म हैं तब तक शिथिल मूल समझ कर जपा-दिक करने पड़ेंगे। यह विषय इस पुस्तक के संज्ञाध्याय में अच्छे प्रकार से समझाया गया है। जिन लोगों को ज्योतिष के सच्चे होने में अथवा जपदानादिक में सन्देह हो वे कृपया निम्नलिखित पुस्तकों को देखें। इन पुस्तकों में पूर्वोक्त विषय उत्तम रीति से समझाये गए हैं:—चार् सूर्य नारायणरो बी. ए., एम आर-ए-एस मद्रास कृत (१) इन्ट्रोडक्शन टु दि स्टडी ऑफ एस्ट्रोलोजी इन दि लाइट् ऑफ फिजिकल साइन्स (२) एस्ट्रोलोजिकल मिरर॥

ग्रहों का सम्बन्ध रत्न, धातु तथा औषधियों से भी है। अमुक ग्रह की अशुभ सूचक दशा में अमुक रत्न, धातु तथा औषधि के धारण करने से उसका दुष्परिणाम शान्त हो जाता है। जब जन्म अथवा गोचर में शनि दुष्ट स्थान में स्थित हो तो लोहे की अंगूठी अथवा कड़ा पहिनाया जाता है। कारण यह है कि लोहे के साथ तथा अंगूठी के साथ शनैश्चर का विशेष सम्बन्ध है। शनैश्चर के तारे में रिङ्ग अर्थात् अंगूठी के समान कोई गोल पदार्थ दूरदर्शक यन्त्र के द्वारा दिखलाई देता है। यह बात साइन्स विद्या के द्वारा अब विदित हुई है। पूर्वकाल में ऐसे यन्त्र नहीं थे। लोगों ने शनैश्चर की अशुभ सूचक दशा की शान्ति के निमित्त रिङ्ग अर्थात् अंगूठी अथवा कड़ा पहिनना कैसे निकाला। यह बात विचित्र है तथा विमर्श के योग्य है। यदि पूर्वाचार्यों की दिव्य दृष्टि न होती तो ऐसा संयोग होना असम्भव था॥

जो मनुष्य भगवद्भक्त हैं, सच्चे मन से प्रेमपूर्वक पूजा, पाठ, जप होम आदि नित्य करते हैं उनको ग्रह कम पीडित करते हैं। जातक शास्त्र इस बात को बतलाता है कि पूर्वजन्म के शुभाशुभ कर्मों का पाक इस जन्म में अमुक समय में होगा। भगवद्भक्ति करने से अशुभ कर्मों का क्षय होता जाता है। यही कारण है कि भगवद्भक्ति करने से अरिष्ट परिहार हो जाता है॥

वैद्य सर्वत्र सर्वदा सुलभ नहीं होता है। इस कारण लोग आकस्मिक सम्भव के निमित्त पाचन, चूर्ण आदि दस पांच आवश्यक औषधियों को विभवानुसार अपने पास रक्खे रहते हैं। अजीर्ण में लङ्घन करना इत्यादि वैद्यक की साधारण बातों को सब कोई जानते हैं। इसी प्रकार थोड़ा बहुत ज्योतिष सब लोगों को जानना चहिये। ज्योतिष के बिना हिन्दू मात्र का काम नहीं चल सकता है। ज्योतिषी भी सर्वत्र सर्वदा सुलभ नहीं होता है। कम से कम पञ्चाङ्ग देखना, चन्द्र शुद्धि, दिशा

शूल इत्यादि सामान्य बातें सब को जाननी चाहियें। कई वर्ष हुए एक बाबू साहब मेरे पास आकर कहने लगे कि हमने सुना है कि अमुक दिन ग्रहण लगने वाला है क्या यह बात ठीक है। मैंने उत्तर दिया कि हां ठीक है सूर्य ग्रहण होगा। तब पूछने लगे कि क्या पौर्णमासी उसी दिन होगी। इससे विदित हुआ कि उनको कृष्ण तथा शुक्ल पक्ष का भी विवेक न था। इतना भी ज्ञान नहीं था कि सूर्य ग्रहण अमावास्या को होता है अथवा पौर्णमासी को। अब आप समझ लीजिये कि साधारण लोगों में कितनी अनभिज्ञता है। इतना उपहासास्पद भी नहीं होना चाहिये॥

आजकल जो नूतन विद्यार्थी फलित ज्योतिष को सीखते हैं उनको कम से कम तीन पुस्तकें पढ़नी पड़ती हैं अर्थात् बृहज्जातक, नील कण्ठी तथा मुहूर्त चिन्तामणि। क्योंकि इतने से कम में काम नहीं चल सकता है। कोई कोई केवल शीघ्रबोध को पढ़ के भी ज्योतिषी बन बैठते हैं। इस पुस्तक में पूर्वोक्त पुस्तकों से भी कई ज्ञातव्य विषय अधिक रक्खे गये हैं। यथा—सिद्धान्त, संहिता, ज्योतिष शास्त्र प्रकरण, कालमान, बालावस्था, प्रकीर्णक, द्वियहादियोग, लग्न बनाना ज्योतिष, योग विशेष, कोटचक्र, सुदर्शनचक्र, ग्रहसाम्य आदि। जहां तक सम्भव था जटिल विषय सुगम कर दिये गये हैं। इसी लिये इस पुस्तक का नाम सुगम ज्योतिष रक्खा गया है॥

ज्योतिष न जानने वाले लोग भी इस पुस्तक को देख कर अपनी जन्मपत्री के फल मिला सकते हैं। यदि उनको ज्योतिष सीखने की अभिलाषा हो तो बिना गुरु की सहायता थोड़े काल में बहुत कुछ जान सकते हैं। ज्योतिषी लोगों को भी इस पुस्तक से सहायता मिल सकती है क्योंकि पचासों विषय ऐसे होते हैं जो कंठस्थ नहीं रह सकते हैं और उनके ढूंढ़ने में कठिनता होती है॥

नूतन विद्यार्थी को गूढ़ अथवा जटिल विषयों पर बिना किसी सानु-

सब ज्योतिषी की सहायता के प्रवृत्त न होना चाहिये। जन्मपत्री आदि बनाने का काम अथवा कठिन स्थलों पर सूक्ष्म विचार करने का काम बहुदृष्ट ज्योतिषी के ऊपर छोड देना चाहिये॥

मैंने अपनी सुगमता के निमित्त कई ग्रन्थों से छांट कर एक पुस्तक बनाई थी। मेरा अभिप्राय यह था कि एक ही पुस्तक से सब काम निकल जावें, कई पुस्तकों को बारम्बार न देखना पडे। परन्तु यह पुस्तक यथाक्रम नहीं बनी थी। केवल अपने सुबीते के लिये थी। इस पुस्तक को छपवाने के विषय में मेरा कोई उद्देश नहीं था। इसी लिये मैं यह न लिखता गया कि कौन श्लोक किस ग्रन्थ का है। अब इस बात को लिखना प्राय: असम्भव है। कारण वशात् अवकाश बहुत कम मिलता वशात् है तथा यथोचित स्वास्थ्य न होने से अधिक परिश्रम भी नहीं हो सकता है। परन्तु दो एक सज्जनों ने इस पुस्तक के छपवाने के लिये मुझे विवश किया। अतः आदि में मैंने विषयों को यथाक्रम रख कर छापे के लिये एक प्रति मूल मात्र निर्माण की। तदन्तर पूर्वोक्त सज्जनों की सम्मति हुई कि संस्कृत जानने वाले लोग बहुत कम होते हैं अत हिन्दी भाषा में इसका अनुवाद होना अत्यावश्यक है अन्यथा सर्वसाधारण को इससे लाभ न पहुंचेगा। अपना स्वास्थ्य इतने परिश्रम करने के योग्य न देख कर एक लेखक को वेतन दे कर नियुक्त किया। यथा कथञ्चित् पुस्तक को पूरा किया। परन्तु जिन सज्जनों ने उत्तेजित किया था तथा छपवाने में सहायता देने का वचन दिया था दैवात् उनसे सहायता न मिल सकी।

"प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचै·
प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः
प्रारभ्य चोत्तमजना न परित्यजन्ति॥"

अर्थात् "नीच मनुष्य किसी कार्य का आरम्भ विघ्न के भय से नहीं करते हैं। मध्यम कक्षा के मनुष्य आरम्भ किये हुए कार्य को विघ्न से हार कर छोड़ देते हैं। परन्तु उत्तम कक्षा के मनुष्य बारम्बार विघ्नों से पीड़ित होने पर भी आरम्भ किये हुए कार्य को नहीं छोड़ते हैं"। जब इस काम में हाथ डाल दिया था तो इसको पूरा करना अवश्य था। केवल परमात्मा की सहायता से इस पुस्तक को छपवाकर पाठकगण के सम्मुख उपस्थित करता हूं। साम्प्रत में कागज का मूल्य चतुर्गुण से भी अधिक बढ़ गया है तथा छपाई आदि का मूल्य भी बढ़ गया है। इनकारणों से पुस्तक अल्प मूल्य में नहीं छप सकी॥

इस पुस्तक के बनाने में जिन पुस्तकों से सहायता ली गई है उनकी नामावली इस भूमिका के अनन्तर छपी है। इन पुस्तकों का मैं अति कृतज्ञ हूं और इनके लिये धन्यवाद प्रकाश करता हूं। श्रीमान् पण्डित मोहनलाल नेहरू वकील साहब ने इस पुस्तक को लोजोर्नल प्रेस में कृपा-पूर्वक छपवादिया इसलिये मैं उनको धन्यवाद देता हूं। कभी कभी इस पुस्तक के प्रूफ पढ़ने में पण्डित रेखाधर उप्रेतीजी क्लार्क सेक्रेटरियट यू. पी. से भी मुझको सहायता मिली जिनके लिये मैं कृतज्ञता प्रकाश करता हूं॥

इस पुस्तक के छपने पर ज्योतिषी लोगों को अप्रसन्न नहीं होना चाहिये। उन्हें यह न समझना चाहिये कि इससे बहुत सी गुप्त बातें प्रकाशित हो जावेंगी अथवा उनकी आजीविका तथा प्रतिष्ठा में बाधा पड़ेगी। जिन पुस्तकों से इस पुस्तक का संग्रह किया गया है वे सभी प्राय: छपी हुई हैं। अब गुप्त क्या रहा। दूसरी बात यह है कि केवल पुस्तकों को पढ़ने से कोई मनुष्य वकील, ज्योतिषी अथवा वैद्य नहीं बन सकता है। इन उपयोगिताओं

के निमित्त विवेकशक्ति, पूर्वापर विचार, अभ्यास, अनुभव, प्रयोग तथा असामान्य बुद्धि की अवश्यकता है। आशा है कि ज्योतिषियों का प्रतिष्ठा में कोई बाधा न पड़ेगी प्रत्युत लोग उनकी अधिक प्रतिष्ठा करेंगे। ज्योतिष की ओर लोगों की रुचि जितनी बढ़ती जावेगी सच्चे ज्योतिषियों का उतना ही अधिक आदर होगा॥

इस पुस्तक का क्रम अधोलिखित है —

अध्याय संख्या	अध्याय नाम	अध्यायान्तर्गत प्रकरण संख्या	प्रकरणान्तर्गत विषय संख्या
१	संज्ञाध्याय	१६	२४८
२	जातकाध्याय	१७	२६०
३	दशाध्याय	८	५८
४	वर्षफलाध्याय	६	५४
५	संस्काराध्याय	५	१५०
६	मुहूर्ताध्याय	३	७७
७	प्रश्नाध्याय	३	४७
८	संहिताध्याय	१	१४
८		६५	९०८

इस पुस्तक में ज्योतिष के मुख्य विषय प्रायः सब ही आगये हैं। आदि में सौर जगत् आदि के चक्र भी रख दिये हैं। संक्षिप्त रीति से सिद्धान्त प्रकरण भी रख दिया है। यह विषय अंग्रेज़ी ज्योतिष से संग्रह किये हैं। वस्तुतः अंग्रेजी तथा संस्कृत सिद्धान्त में स्वल्प भेद है। संस्कृत के मूल श्लोक मोटे अक्षरों में छपे हैं। हिन्दी भाषा का अनुवाद छोटे अक्षरों में छपा है। नक्षत्र स्वरूप चक्र में दो तीन नक्षत्रों का यथार्थ आकार छपने में नहीं आया है। यदि पुस्तक के द्वितीय संस्करण का अवसर मिला तो आशा है कि यह त्रुटि दूर कर दी जावेगी॥

इस पुस्तक के संज्ञाध्याय में उन सब विषयों का संग्रह किया गया है जिन्हें जानने की नूतन विद्यार्थी को आवश्यकता होती है। यह सब विषय १६ प्रकरणों में रख दिये गये हैं जिससे कि ढूंढ़ने में सुगमता हो। प्राचीन ग्रन्थों में यह विषय पृथक् पृथक् स्थलों में बिखरे हुए हैं। अतः ढूंढ़ने में कठिनता होती है। जातकाध्याय में बहुत से ऐसे विषयों का संग्रह किया गया है जो बृहज्जातक आदि ग्रन्थों में नहीं हैं। बहुत सी सूक्ष्म बातें विचारार्थ एकत्रित की गई हैं। दशाध्याय पृथक् कर दिया गया है। इसमें बहुत से चक्र सुगमतार्थ रख दिये गये हैं। फल विशेष जानने की रीति कई ग्रन्थों से एकत्रित करके रख दी गई है। ग्रहों के जप दान आदि विषय भी इसी अध्याय में रख दिये गये हैं। वर्ष फलाध्याय में वर्ष तथा मुन्था निकालने की कई रीतियां रख दी गई हैं। षोडशयोग भी सुगम रीति से समझाये गये हैं। ताजिक में राजयोग भी रख दिये गये हैं। यज्ञोपवीत विवाह आदि संस्कारों का एक अध्याय पृथक् कर दिया गया है और उसमें प्रायः सभी उपयोगी विषय एकत्रित कर दिये गये हैं। ग्रह साम्य आदि विषय भी अच्छी रीति से समझाये गये हैं। शेष मुहूर्तों का एक अध्याय पृथक् है। गृह प्रवेश तथा यात्रा प्रकरण भी इसी अध्याय में हैं। प्रश्नाध्याय में प्रायः वह सब प्रश्न हैं जिनका प्रतिदिन काम पड़ता है। संहिताध्याय सूक्ष्म प्रकार से

के निमित्त विवेकशक्ति, पूर्वापर विचार, अभ्यास, अनुभव, प्रयोग तथा असामान्य बुद्धि की अवश्यकता है। आशा है कि ज्योतिषियों की प्रतिष्ठा में कोई बाधा न पड़ेगी प्रत्युत लोग इनकी अधिक प्रतिष्ठा करेंगे। ज्योतिष की ओर लोगों की रुचि जितनी बढ़ती जावेगी उतने ज्योतिषियों का उतना ही अधिक आदर होगा॥

इस पुस्तक का क्रम अधोलिखित है:—

अध्याय संख्या	अध्याय नाम	अध्यायान्तर्गत प्रकरण संख्या	प्रकरणान्तर्गत विषय संख्या
१	संज्ञाध्याय	१६	२४८
२	जातकाध्याय	१७	२६२
३	दशाध्याय	८	५८
४	वर्षफलाध्याय	६	५३
५	संस्काराध्याय	५	१५०
६	मुहूर्ताध्याय	३	७७
७	प्रश्नाध्याय	३	२७
८	संहिताध्याय	१	१४
८		६५	९०८

इस पुस्तक में ज्योतिष के मुख्य विषय प्रायः सब ही आगये हैं। आदि में सौर जगत् आदि के चक्र भी रख दिये हैं। संक्षिप्त रीति से सिद्धान्त प्रकरण भी रख दिया है। यह विषय अंग्रेज़ी ज्योतिष से संग्रह किये हैं। वस्तुतः अंग्रेज़ी तथा संस्कृत सिद्धान्त में स्वल्प भेद है। संस्कृत के मूल श्लोक मोटे अक्षरों में छपे हैं। हिन्दी भाषा का अनुवाद छोटे अक्षरों म छपा है। नक्षत्र स्वरूप चक्र में दो तीन नक्षत्रों का यथार्थ आकार छपने में नहीं आया है। यदि पुस्तक के द्वितीय संस्करण का अवसर मिला तो आशा है कि यह त्रुटि दूर कर दिई जावेगी॥

इस पुस्तक के संज्ञाध्याय में उन सब विषयों का संग्रह किया गया है जिन्हें जानने की नूतन विद्यार्थी को अवश्यकता होती है। यह सब विषय १६ प्रकरणों में रख दिये गये हैं जिससे कि ढूंढ़ने में सुगमता हो। प्राचीन ग्रन्थों में यह विषय पृथक् पृथक् स्थलों में बिखरे हुए हैं। अतः ढूंढ़ने में कठिनता होती है। जातकाध्याय में बहुत से ऐसे विषयों का संग्रह किया गया है जो बृहज्जातक आदि ग्रन्थों में नहीं हैं। बहुत सी सूक्ष्म बातें विचारार्थ एकत्रित की गई हैं। दशाध्याय पृथक् कर दिया गया है। इसमें बहुत से चक्र सुगमतार्थं रख दिये गये हैं। फल विशेष जानने की रीति कई ग्रन्थों से एकत्रित करके रख दी गई है। ग्रहों के जप दान आदि विषय भी इसी अध्याय में रख दिये गये हैं। वर्ष फलाध्याय में वर्ष तथा मुन्था निकालने की कई रीतियां रख दी गई हैं। षोडशयोग भी सुगम रीति से समझाये गये हैं। ताजिक में राजयोग भी रख दिये गये हैं। व्रतबन्ध विवाह आदि संस्कारों का एक अध्याय पृथक् कर दिया गया है और उसमें प्रायः सभी उपयोगी विषय एकत्रित कर दिये गये हैं। ग्रह साम्य आदि विषय भी अच्छी रीति से समझाये गये हैं। शेष मुहूर्तों का एक अध्याय पृथक् है। गृह प्रवेश तथा यात्रा प्रकरण भी इसी अध्याय में हैं। प्रश्नाध्याय में प्रायः वह सब प्रश्न हैं जिनका प्रतिदिन काम पड़ता है। संहिताध्याय सूक्ष्म प्रकार से

अन्त में रख दिया गया है। इसका दिग्दर्शन मात्र है जिससे कि ज्योतिष की परिभाषा "सिद्धान्त संहिताहोग रूपं स्कन्धत्रयात्मकम्" पूरी हो जावे ॥

कई कठिन विषय जिनके जानने में नवीन विद्यार्थी को अति परिश्रम होता है अथवा जिनका काम बहुत कम पडता है जान बूझ कर छोड़ दिये गये हैं। यथा जातक मे निर्याण तथा नष्ट जन्मपत्री। यह विषय अति कठिन हैं। एक दो पृष्ठों में सारांश देने से काम नही चलता है। विस्तार पूर्वक लिखने से ग्रन्थ बढ़ता है। नूतन विद्यार्थी के लिये नैराश्यजनक है और इनसे काम भी बहुत कम पडता है। सानुभव ज्योतिषी के अतिरिक्त दूसरे आदमी को इन विषयों में हाथ भी न डालना चाहिये। इसलिये सर्वतः छोड दिये गये हैं। ताजिक में हीनांश पात्यांश दशा तथा सहम कृत्स्नशः छोड दिये गये हैं। इनका प्रयोग बहुत ही कम किया जाता है। मुहूर्त विषय में राज्याभिषेक, अग्न्याधान, मुद्रा ढालने का मुहूर्त, इत्यादि विषय जो आज कल बहुत कम काम में आते हैं छोड दिये गये हैं। निखात द्रव्य का विषय भी छोड दिया गया है क्योंकि इसका यथार्थ विचार अति कठिन है और संक्षेप से काम भी नहीं चलता है। फलित में जातक मुख्य है अतः वह विस्तार पूर्वक लिखा गया है। यह ग्रन्थ बिलकुल नये ढङ्ग पर बनाया गया है। इससे नये विद्यार्थी को बडी सुगमता होगी। केवल इस ग्रन्थ को पास रखने से अथवा इसको पढ़ने से ज्योतिष का साधारण काम बहुत अच्छे प्रकार से चल सकता है। यह ग्रन्थ प्रायः पचास ग्रन्थों का सार है। जहां कहीं न्यूनाधिक्य के कारण से त्रुटि रह गई हो तो सज्जन लोग कृपा पूर्वक क्षमा करें ॥

ज्योतिष शास्त्र बहुत बड़ा है। प्राचीन तथा आधुनिक ग्रन्थकारों ने अनेक अद्भुत ग्रन्थ इस वेदाङ्ग पर लिख डाले हैं। बहुत सी पुस्तकें छप चुकी हैं। सिद्धान्त संहिता, जातक, ताजिक, मुहूर्त तथा प्रश्न के विषयों में एक एक विषय पर पचासों पुस्तकें एक से एक उत्तम बनी हैं। परन्तु वे पुस्तकें सबको सुलभ नहीं हैं। कई पुस्तकें केवल संस्कृत में हैं। कई पुस्तकें

अब तक नहीं छपी हैं। इसलिये सर्व साधारण को उनसे लाभ नहीं पहुंच सकता है। ऐसी पुस्तक कोई नहीं है जिसमें पूर्वोक्त सब विषय यथाक्रम एकत्र मिल जावें तथा हिन्दी भाषा में अनुवाद हो और अन्त में अकारादि क्रम से अनुक्रमणिका भी हो जिससे विषय ढूंढ़ने मे सुगमता हो। यही विशेषता इस पुस्तक मे है। मैंने कोई नई रचना नहीं की है। यदि नई रचना भी होती तो उसको प्रमाण कोई न मानता। मेरा परिश्रम संग्रह करके यथोचित स्थान पर रख कर अनुवाद करने का है। यदि इससे लोगों को कुछ लाभ पहुंचे तो अपना परिश्रम सफल समझूं। नूतन विद्यार्थी यह कदापि न समझें कि इस पुस्तक को पढ़ने से वे ज्योतिशास्त्र में पारङ्गत हो गये। किन्तु उनके उत्साह बढ़ाने के लिये यह ग्रन्थ ज्योतिष का प्रथम सोपान है॥

यह विषय निर्विवाद है कि ताजिक शास्त्र में उन्नति यवनों ने की। इसीलिये यवनाचार्य का नाम ज्योतिष शास्त्र के प्रवर्तकों में हो तो कोई आश्चर्य नहीं ऐसा अनुमान होता है कि प्राचीन भारतवासी वर्षफल दूसरी रीति से बनाते थे और षोडशयोग आदि उन्हें विदित नहीं थे। यह कथा प्रचलित है कि नीलकण्ठ ने यवन देश में जाकर ताजिक सीखा था परन्तु म्लेच्छ धर्मावलम्बन नहीं किया था। भारतवर्ष में लौट कर "ताजिक नीलकण्ठी" नामक ग्रन्थ लिखा। ताजिक में जो इक्कवाल आदि योग हैं वे सब फारसी के शब्द हैं। मूल शब्द इक़बाल आदि हैं। यह बात प्रशंसनीय है जो कि उन्होंने शब्दों की चोरी नहीं की अर्थात् उनके बदले संस्कृत के शब्द बनाकर ग्रन्थ में नहीं रक्खे। परन्तु मूल शब्द रख दिये। इससे विदित होता है कि प्राचीन भारतवासी गुण ग्राहक तथा सत्यप्रिय थे। नील कण्ठ बहुत प्राचीन काल के आचार्य नहीं हैं॥

जिस किसी दिन ग्रहण लगे उससे १८ वर्ष ११ दिन ७ घंटा ४३ मिनट् के उपरान्त वही ग्रहण फिर लगेगा। कारण यह है कि ग्रहण तभी लगता है जब सूर्य चन्द्रमा तथा पृथिवी एक सरल रेखा पर होते हैं। इतने

दिनों के उपरान्त चन्द्रमा पुनः पूर्वोक्त स्थान पर आजाता है और वैसा ही ग्रहण लौटकर फिर देखने में आता है। यदि १८ वर्षों के ग्रहणों की एक जन्त्री बनाई जावे तो वह भूत अथवा भविष्य कई शताब्दियों के निमित्त पर्याप्त होगी। इस लिये नूतन विद्यार्थी को इस विषय में अधिक परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं है॥

यह सौर जगत् सर्वदा एकत्र स्थिर नहीं रहता है किन्तु भ्रमण करता रहता है तथा स्थान बदलता रहता है। कई शताब्दियों मे जाकर कुछ भेद विदित होता है। आजकल नक्शों में जैसे ही ग्रीनविच मध्य स्थान माना जाता है ऐसे ही जब वसन्त ऋतु में रातदिन बराबर होने से विषुव काल होता है तब एक दिन ऐसा होता है जिसको आकाश का ग्रीनविच कल्पना कर लीजिये। ज्योतिषी लोग बहुत पुराने समय से इस बात को मानते आये हैं। आजकल यह मेष से माना जाता है तथा चैत्र से संवत्सर बदलता है। मत्स्य पुराण के अनुसार किसी युग में आश्विन से नूतन वर्ष का प्रारम्भ होता था। कई विद्वान् लोग यह भी अनुमान करते हैं कि किसी युग में पौष से संवत्सर बदलता था। कारण यह बतलाते हैं कि उससे पहिले महीने का नाम आग्रहायण है जिसका अर्थ यह हो सकता है कि नूतन वर्ष प्रवेश होने से पहिला महीना। श्री भगवान् ने भी गीता में मार्गशीर्ष महीने को अपनी विभूतियों में बतलाया है। सन् ५७० ईसवी में अश्विनी नक्षत्र तथा मेष राशि में विषुव हुआ था। एक नक्षत्र से दूसरे नक्षत्र में जाने में ९६० वर्ष लगते हैं। इस कारण सन् १५३० ईसवी में रेवती नक्षत्र में विषुव हुआ सन् २४३० ईसवी में उत्तरा भाद्रपदा में होगा। इस विषय का दिग्दर्शन यहां पर इस कारण से किया गया है कि फलित ज्योतिष के फलों में भी इससे अन्तर पड़ना सम्भव है॥

मेरे दो एक मित्रों ने यह भी सम्मति प्रकट की थी कि "स्वप्न फल",

"सामुद्रिक," "पल्ली पतन फल" आदि विषय भी इस पुस्तक के अन्तर्गत होने चाहियें क्योंकि यह भी ज्योतिषके अङ्ग हैं। इस विषयमें विज्ञप्ति पूर्वक मेरा उत्तर यह है कि मैं अपनी अल्प बुद्धि से फलित ज्योतिष उसको समझता हूं जो सिद्धान्त के आधार पर बना है अर्थात् जिसका फल नक्षत्र राशि तथा ग्रहों पर निर्भर है। यदि यह परिभाषा ठीक हो तो पूर्वोक्त विषय फलित ज्योतिष के अङ्ग नहीं हो सकते हैं इसलिये छोड़ दिये गये हैं और उनके सत्य अथवा असत्य होने के विषय में विचार करने की अव-श्यकता भी यहां पर नहीं है। जिन लोगों को इन विषयों पर विश्वास हो तथा इनका फल देखना चाहें तो कृपापूर्वक अन्यत्र देखें। कई पुस्तकें इन विषयों पर विद्यमान हैं॥

कटरा इलाहाबाद
मिति मार्गशीर्ष कृष्ण पञ्चमी गुरौ संवत् १६७६
तारीख़ ६ नवम्बर सन् १६२२ ई० } देवीदत्त जोशी

संग्रह प्रमाणग्रन्थाः

(१) सिद्धान्त विषये ।

सिद्धान्त शिरोमणिः । भास्कराचार्य विरचितः ।
हिन्दू ऐस्ट्रोनौमी—मध्य प्रदशस्थ सिविलियनविरचिता ।
जेडूकील विरचित पञ्चाङ्गम् ।
ऐस्ट्रोनौमी—टेटूसविरचिता ।
दि ग्लोब्स—मोलिनो विरचितम् ।
दि सेलेस्चियल् ग्लोब्स ।
भूलोक परिचयः—रुद्रनारायण विरचितः ।
मैन्युएल औफ जौग्रफी—क्रिस्चियन लिटरेचर सोसाइटी फौर-
इंडिया लंदन विरचिता ।
दि वर्ल्ड इन औटलाइन—मैकेञ्जी टाइडमैन विरचितम् ।

(२) जातक विषये ।

बृहत्पाराशर होरा शास्त्रम् ।
बृहज्जातकम—वराहमिहिराचार्य विरचितम् ।
जातक तत्त्वम्—महादेवनिर्मितम् ।
जातकालङ्कारः—गणेश दैवज्ञनिर्मितः ।
पद्य पञ्चाशिका—गदाधर विरचिता ।
लघुपाराशरी ।
जातक संग्रहः । लक्ष्मण दास नौनिधिराम सगृहीतः ।
ज्योतिष श्याम सग्रहः । श्यामलाल दैवज्ञ संगृहीतः ।
कुण्डली कल्पतरु—जागेश्वर विरचितः ।
सर्वार्थ चिन्ता मणिः—वेंकटेश विरचितः ।

जातकाभरणम्—ढुण्ढिराज विरचितम्।
लग्न चन्द्रिका—काशिनाथ विरचिता।
यवन जातकम्—यवनाचार्य विरचितम्।
स्त्री जातकम्—वृद्धयवन विरचितम्।
खान खनाना ज्योतिषम्।
ज्योतिश्चन्द्रार्कः। रुद्रमणि दैवज्ञ विरचितः।
बालबोध ज्योतिषम्।
पुरुष जातकम्।
स्त्री जातकम्।
होरा रत्नम्।
ऐलन लियो विरचित ग्रन्थाः।
रैफेल विरचितः फलित ग्रन्थः।
ऐस्ट्रोलौजिकल सेल्फ इन्स्ट्रक्टर—मद्रासे मुद्रितः।
ऐस्ट्रोलोजिकल मैगैजीन—बाबू सूर्य नारायण राव प्रकाशिता।
ज्योतिषकल्प द्रुमः। गंगाधर विरचितः।
रणधीर ज्योतिषम्—काश्मीरे मुद्रितम्।
हस्त लिखित पुस्तकानि, पञ्चाङ्गादयश्च।
सङ्केतनिधि—रामदयालु शर्म रचितः काश्यां मुद्रितः।
ज्योतिषतत्त्व सुधार्णवः—श्यामसुन्दर लाल सम्पादितः।

(३) मुहूर्त विषये।

मुहूर्त चिन्तामणिः—रामदैवज्ञ विरचितः।
शीघ्रबोध। काशिनाथ विरचितः।
दैवज्ञ रञ्जनम्—रामदीन कृतम्।
रत्न माला।

धर्म सिन्धुः—काशिनाथ भट्टाचार्य कृतः ।

बृहज्ज्योतिषसारः—काश्यां चन्द्र प्रभाकरयन्त्रालये मुद्रितः ।

वेधविचारः

(४) ताजिक विषये ।

ताजिक नीलकण्ठी—नीलकंठ दैवज्ञ विरचिता ।

ताजिकसारः । हरिहर भट्ट विरचितः ।

हायनरत्नम्—बलभद्र विरचितम् ।

(५) प्रश्न विषये ।

षट्पञ्चाशिका—पृथुयशो निर्मिता ।

प्रश्नवैष्णवम्—सिद्ध नारायण दास निर्मितम् ।

प्रश्न शिरोमणिः । रुद्रमणि विरचितः ।

दैवज्ञवल्लभा—वराहमिहिर निर्मिता ॥

(६) संहिता विषये ।

नारद संहितादयः ।

——

सुगमज्योतिषस्य सूचीपत्रम्

[१] संज्ञाध्यायस्य

[२] जातकाध्यायस्य

विषयनाम	पृ०
भाववृद्धि भावहानि योगा	२२७
त्रिकेश दुष्ट फलम्	२२६
भावफले भावराशिचिन्त्यम	२३०
प्रत्यक्षफलदा ग्रहा	,,
राशि बलम्	२३१
स्थान बलम.	,,
सम्यक् फलदा ग्रहा.	२३१
चन्द्र बलम.	,,
बलशालिना भावाः	२३२
सूर्यादिसप्तस्थाग्रहाः पूर्ण फलदाः	,,
उत्तरोत्तर प्रबल स्थानानि	
सुख दुःखदा भावेशाः	,,
लग्नात्त्रिकेषु शुभग्रहाः शुभाः	,,
लग्नेशस्य धनेशादिभि. सम्बन्धः	२३४
द्वादश योगा.	२३६
केन्द्रत्रिकोणपतिसम्बन्धः	२३७
धर्मकर्माधिपयोः सम्बन्धः	,,
सुखेशमानभावयोः सम्बन्धः	,,
चतुर्विधसम्बन्ध.	,,
फलविरोधे किं कर्तव्यम्.	२३८
जन्मेशो लग्नेशोऽपिचेच्छुभः	,,
भावलग्नयोर्विशेषविचार.	,,
नाताडीना विचार.	२३९
दृष्टि निर्णय	२४०
भाग्योदय वर्षाणि	,,
कस्मिन्वयसि सुखम्	२४१
लज्जितावस्थाफलानि	२४२

(६) भाव विशेष विचार प्रकरणम्

विषयनाम	पृ०
तनु भाव विचारः	२४४
धन भावः	२४७
भ्रातृ भावः	२४९
पञ्चम भावः	२५०
विद्या विचारः	२५७
पंचमस्थ ग्रह फलानि	,,
बुद्धिः (देवसेवा च)	२५८
सन्तानावरोधकर्तॄणां ग्रहाणामुपायः	२५८
पितृभ्रात्रादिनाशयोगाः	२६०
मातृ पितृ रिष्ट योगाः	२६१
दारहा योगाः	२६२
भाग्य भाव.	२६४
लाभ विचारः	२६७

(७) उच्चादि फल प्रकरणम्

विषयनाम	पृ०
जन्म लग्न फलम्.	२६८
लग्नादित्रय फलम्.	२६९

(३) दशाध्यायस्य

(१) दशानयन प्रकरणम्

(२) दशा फल प्रकरणम्

(३) अष्टक वर्ग प्रकरणम्

(४) वर्षफलाध्यायस्य

(५) संस्काराध्यायस्य

(६) मुहूर्ताध्यायस्य

(७) प्रश्नाध्यायस्य

---

(८) संहिताध्यायस्य

अशुद्धिपत्रम्

सूचना—स्वरों की मात्रा, रेफ अथवा रकार आदि अक्षर जो छपने में टूट गये हैं, इस अशुद्धिपत्र में नहीं रक्खे गये हैं। पाठकगण कृपया शुद्ध करके पढ़े ॥

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्	
६	१५	आवश्यकता	अवश्यकता	भूमिका
१७	१६	यह कि	यह हो कि	भूमिका
,,	२०	यह हो बात	यह बात	भूमिका
१६	११	मुहुर्त	मुहूर्त	भूमिका
२२	७	शीघ्नता	शीघ्रता	भूमिका
२६	५	पढ़ते	पढ़ने	भूमिका
२७	५	आदि मुहूर्त	आदि के मुहूर्त	भूमिका
३०	६	लीगों	लोगों	भूमिका
३२	१०	मिलता वशात्	मिलता	भूमिका
४१	१	संग्रह	संग्रहे	भूमिका
चक्र क		आवश्यकता	अवश्यकता	
६	१२	कन्स्टिलेशन ३ प्रकार के हैं अर्थात् नक्षत्रव्यूह	कन्स्टिलेशन अर्थात् नक्षत्र व्यूह ३ प्रकार के हैं	
१८	४	४,१३,०००	४,१२,०००	
,,	६	४१,२०,००,००,०००	४,३२,००,००,०००	
१६	१५	,,	,,	
३२	१	पक्षरन्ध्राह्या	पक्षरन्ध्राह्वया	

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
३४	११	ज्येष्ट	ज्येष्ठ
४२	१०	द्विघ्ने	द्विघ्ने
४३	२०	आसमान	आकाश
४५	६	Aquilas	Aquilae
,,	११	Aquaru	Aquarii
५६	५	मित्राम्तारा:	मित्रे तारा:
.	१०	तृतीता	तृतीया
५६	१७	रेवतीं	रेवता
६१	१६	चाद	उपरान्त
६४	२	नराव	निन्दित
६६	६	द्विनिघ्ना	द्विनिघ्ना
७४	१५	पुरायकाल	पुण्यकाल
७६	२	मया	मघा
,,	१८	जावे	पड़े
७७	२१	मत्	शुभ
७८	१२	गुन	गुरु
,,	२६	हद्द	हद्द
१०३	२३	मीन	धन
१०८	७	भृगो	भृगो:
,,	८	रायु	आयु
,	,,	विपत्सन्तप्रदाता	विपत्सम्पत्प्रदाता
११२	१८	तद्वद्दुष्ट	तद्वद्दुष्ट
,,	२१	घर	घर
११३	२२	(पाप:)	(पाप:)

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
११३	२५	पड	पड
११६	१०	स्थान	स्थान
,,	१६	दूवि	द्वि
		(पृष्ठाङ्क) २२२	(पृष्ठाङ्क) १२२
१२२	१२	नीचस्थानानि । - ।	नीचस्थानानि । तुला ।
,,	१३	नीचाशीः	नीचांशाः
१२३	१६	स्यानं	स्थान
१२४	१७	प्रभाव	प्रभाव
१२६	६	चिन्ह	चिह्न
,,	८	वेचना या खरीदना	क्रयविक्रय
१३०	११	वारहवे	वारहवें
१३८	१३	दूवि	द्वि
१४१	१२	३४	२४ (सर्वत्र ३४ स्थाने २४ अंकं कृत्वा गणितं शोध्यम्)
१५५	१७	लर्थात्	अर्थात्
१५७	१	मिथुम	मिथुन
१५८	४	वर्णी	वर्णं
१५६	६	लिचार	विचार
,,	१४	त्रिशाश	त्रिंशांश
१६३	६	गहिः	अहिः
,,	७	अणेशः	गणेशः
१६५	१५	ग्रगोत्तम	वर्गोत्तम
१७१	१७	गुण	गुणन
१७५	१	लग्त	लग्न

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
१७८	१८	नक्त्त्र	नक्षत्र
,,	१६	परन्तु	परन्तु
१७६	२५	मतम	मतम्
१६३	७	एक का मृत्यु होता है	एक की मृत्यु होती है
२०४	१५	रिष्टम्	रिष्टम्
२०६	६	चन्द्रभा	चन्द्रमा
२१४	१०	लग्न	लग्न
२१५	१८	चतुरस्त्र	चतुरस्र
२१६	२१	मारकावष्टमेश्वरौ	मारकावष्टमेश्वरः
२३२	१०	स्त्री और पत्नी (ग्रह)	स्त्री ग्रह
२३४	२	र्भागव	भार्गव
२३६	१४	शुक्र	शुक्र
२४३	२० :	मनुष्प	मनुष्य
२५०	२२	त्तदार्नी	त्तदार्नी
२५१	२२	द्विनीया	द्वितीया
२५३	१३	वृश्चिक	वृश्चिक
२६१	१८	व्यय	व्यय
२६३	११	सप्तमेश	सप्तमेश
२६४	६	विरक्त	विरक्त
२६५	५	वदे	वदे
२७०	१५	विद्वा	विद्वा
२७१	४	ममुष्य	मनुष्य
२७२	१५	वैर	वैर
२७५	५	संम्पन्नो	सम्पन्नो

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
२७७	२३	नव	नव
२७८	१६	व्यय	व्यय
२७६	७	मनुष्म	मनुष्य
,,	,,	पञ्चम	पञ्चम
२८१	३	सप्तम	सप्तम
,,	७	रुप	रूप
२८१	१०	खराब	दुष्ट
२८२	१०	संग्रहम्ः	संग्रहम् ।
२८४	६	पुत्र	पुत्र
,,	१३	परिपूर्ण	परिपूर्णं
२८६	१६	मन्त्री	मन्त्री
३११	३	मर्त्य	मर्त्यः
,,	६	घूत	द्यूत
३१८	५	शत्रु	शत्रु
३३१	६	कमखर्च	अल्पव्यय
३३६	८	चतुरस्र	चतुरस्र
३४२	२४	पाप	पाप
३४७	६	मनुष्यय	मनुष्य
३५१	१६	मनुप्य	मनुष्य
,,	२४	,,	,,
,,	१६	ठेहों	वैठेहों
३५२	२४	खर्च	व्यय
३५६	२१	मनुप्य	मनुष्य
,,	२५	सदैय	सदैव

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
३६०	२२	स्वेष्ठ	श्रेष्ठ
३६२	१४	प्यागा	प्यारा
३६३	४	मूर्ये	सूर्ये
३६४	१६	पर्यन्त	पन्तर्यं
३६६ द्वितीय कुण्डली १ सू			१
,, अंतिमपंक्तिः		२३	२४
३८१	५	सिवा	(मुद्रा) सिक्का
३८४	१४	मङ्गल हो	मङ्गल न हो
३८६	२	(मं.)	(च.)
३६१	२	महस्त्रं	महस्त्र
३६२	८	दृष्टि	दृष्टि
३६३	४-६	अंग	नवांश
३६६	३	ददि	यदि
३६७	२२	वोशि	वेशि
३६८	३	मिहनत	परिश्रम
,,	५-१०	नजर	दृष्टि
४००	१४	शृगाटक	श्टगाटक
,,	१६	सप्तम	सप्तम
४०३	२०	शुभ शतकाः	शम शतकाः (?)
४०४	२	हिसाः	हिंसाः
४०५	१६	तया	तथा
४०७	१७	चे	वे
४१२	८	लग्नेशः	लग्नेशो
,,	१३	अन्त्ये	अन्त्ये

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
४१२	१७	भन्दे	मन्दे
४१४	८	शुका	शुक्रा
४१५	१८	व्यभिचारी	व्यभिचारी
,,	२१	व्यय	व्यय
४१६	११	गोधनेम्	गोधनम्
,,	१५	जातंः	जातं
४१७	२२	रव्या	रव्या
४१९	११	वृहस्पति	बृहस्पति
४२१	१२	व्यसनी	व्यसनी
,,	१३	व्यय	व्यय
४२२	१२	मनुप्य	मनुष्य
४२४	२	होतां है	होता है
४२७	७	वाद	वाद
४३६	९	पाञ्चाले	पाञ्चाले
४४३	२	मारे व्याकुल रहता है शरीर में	व्याकुल रहता है सारे शरीर में
४४७	१२	ऐश्वर्यं	ऐश्वर्य
४४८	१०	लहुत	वहुत
,,	१२	स्वराव	अशुभ
४५३	२२	स्थान बैठे	स्थान में बैठे
४५५	८	माथयोवेरंदक्	नाथयोर्वैरदक्
४६१	१	जो	यदि
४६७	१५	ज्ञा	ज्ञा
४७५	१	गोचरंज्ञेयं फल	गोचरेज्ञेयं फल

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
४८०	४	कहलासा	कहलाता है
५०५	१३	ति ।	तिथौ
५१०	७	—	पञ्चाल्पो हीनवीर्यः स्या दधिको मध्यउच्यते। दशाधिको वली प्रोक्तः पञ्चवर्गीवलादिदम् ॥
"	२१	--	पाच से कम बल वाला ग्रह हीन वली होता है। पाच मे अधिक परन्तु १० से न्यून हो तो मध्य वली होता है। यदि १० से अधिक हो तो वली कहलाता है।
५२८	५	प्राप्त	प्राप्ते
५३०	११	करता है	कराता है
५३३	२२	पर्यन्त	पर्यन्त
५३५	११	फले	वले
५४०	२१	किफायत मे चलना पडना है	मित व्यय करना पडता है
५४२	२३	मिष्टान	मिष्टान्न
५४३	१	सुन्दरता तथा सुख मिलते हैं	सुन्दरता मे सुख मिलना है
५५८	१०	वाक्पति गज्य इन्दु	वाक्पति वस्वरे वक्रौः
५७१	८	माननाश	सन्मान का नाश

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
५७३	६	किला	दुर्ग (किला)
५७६	३-८- १२-१६-२०	॰	॰
५८७	१०	तिर्थ	तिर्य॰
,,	१७	शाङ्कुम्	शाङ्कम्
५९६	४	तैयार	तत्पर
५९७	१५	व्यया	व्यया
,,	२४	सर्वं	सर्वं
६०१	२२	वाद	उपरान्त
६०२	३	दोषों	दोषों के
६०६	२	कर्म॰	कर्म॰
६१९	२४	धनिष्टा	धनिष्ठा
६२१	६	वर्जित	वर्जित
६२३	३	विद्धत्त वर्ज्यम्	विद्धर्त्तं वर्ज्यम्
६२७	२२	होता	होता है
६३२	२०	भ	श्र
६३५	१	धनाब्य	धनाढ्य
६३८	६	षाप	पाप
६४८	१६	षढ	षड्
६४८	२२	स्वम	स्वम्
६५१	१	विशेषत	विशेषतः
६५२	६	श्रन्त्य नाडी तथा	तथा श्रन्त्य नाडी
६५४	१५	शिरोमणिम्	शिरोमणिम् (?)

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
६६७	४	बु. ७ रा ६ पूर्णं चं. २२ गु. ५	बु. ७ रा. ६ पूर्णं च २२ . ५
,,	२१	पिछले	पिछले
६७४	३	प्रम्रज्या	प्रव्रज्या
,,	५	करती है	कराती है
६८०	५	तिधि	तिथि
६८३	२	वृध्रि	वृध्रिं
६८६	१४	जीव पितृकः	जीवत्पितृकः
६९०	६	वर्तन	पात्र
६९१	६	रुपया जमा करना	द्रव्य संचय (रुपया जमा करना)
,,	२०	परन्तु	परन्तु
६९१	२२	रुपया जमा करना कर्ज देना	द्रव्यप्रयोग, ऋणदान (रुपया जमा करना कर्ज देना)
६९२	७	हजामत	क्षौर (हजामत)
६९३	२५	व्रत वन्ध	व्रतबन्ध
७००	२	पेंग्र	पेंच
७१४	१०	शामिल	सम्मिलित (शामिल)
७१५	१-२	,,	,,
७२४	३	रद्द होना	वमन (रद्द होना)
७२८	१५	प्रश्न कर्ता	प्रश्न कर्ता का
७३३	१४	बहिस	वादानुवाद (बहिस)

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
७३८	५	मध्वे	मध्ये
७४१	१७	घु घरेलू, हों	घुघरेलू हों,
७४२	४	सिलाई कसीदा	सिलाई
७४३	६	कन्का	कन्या
,,	१३	आमदनी और खर्च का हिसाब	आय व्यय का लेख(आमदनी और खर्च का हिसाब)
,,	१७	कद	आकार
७४६	५	ग्रहों	ग्रह हों
७५१	१०	विघ्र	विघ्न
,,	१७	यातुर्वि	यातुविं
,,	२०	ग्रंहे	ग्रंहे
७५२	११	वस्र	वस्त्र
७५४	२३	दृंष्टे	दृंष्टे
७५६	६	विघ्र	विघ्न
,,	१४	ग्रह	ग्रह
७६१	१८	त्वरित'	त्वरितं
७६२	१५	व्यत्तीत	व्यतीत
७६४	२१	मुलाकात	भेंट
७६६	१४	रास्ते	मार्ग
७६७	३	सौम्येः	सौम्यैः
,,	५	प्रतापं	प्रतीपं
७६८	६	दृष्ठ	दृष्ट
,,	१८	हो	हों

पृष्ठम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
७६८	२२	अथया	अथवा
७७२	१५	पर्यन्त	पर्यन्त
७७४	२२	ग्रह	ग्रह
७७७	२५	शात	शात
७७८	२८	भोजन	भोजन को
७७६	२३	स्त्रीपुंसयो	स्त्रीपुंसयो (?)
७८७	२१	दिव्या	दिव्या
७८६	१५	ककुप्प	ककुप्प
,,	१६	त्रातो	त्राता
७६२	१६	रगको	रंगके

चक्राणि

क

सौर जगच्चक्रम्
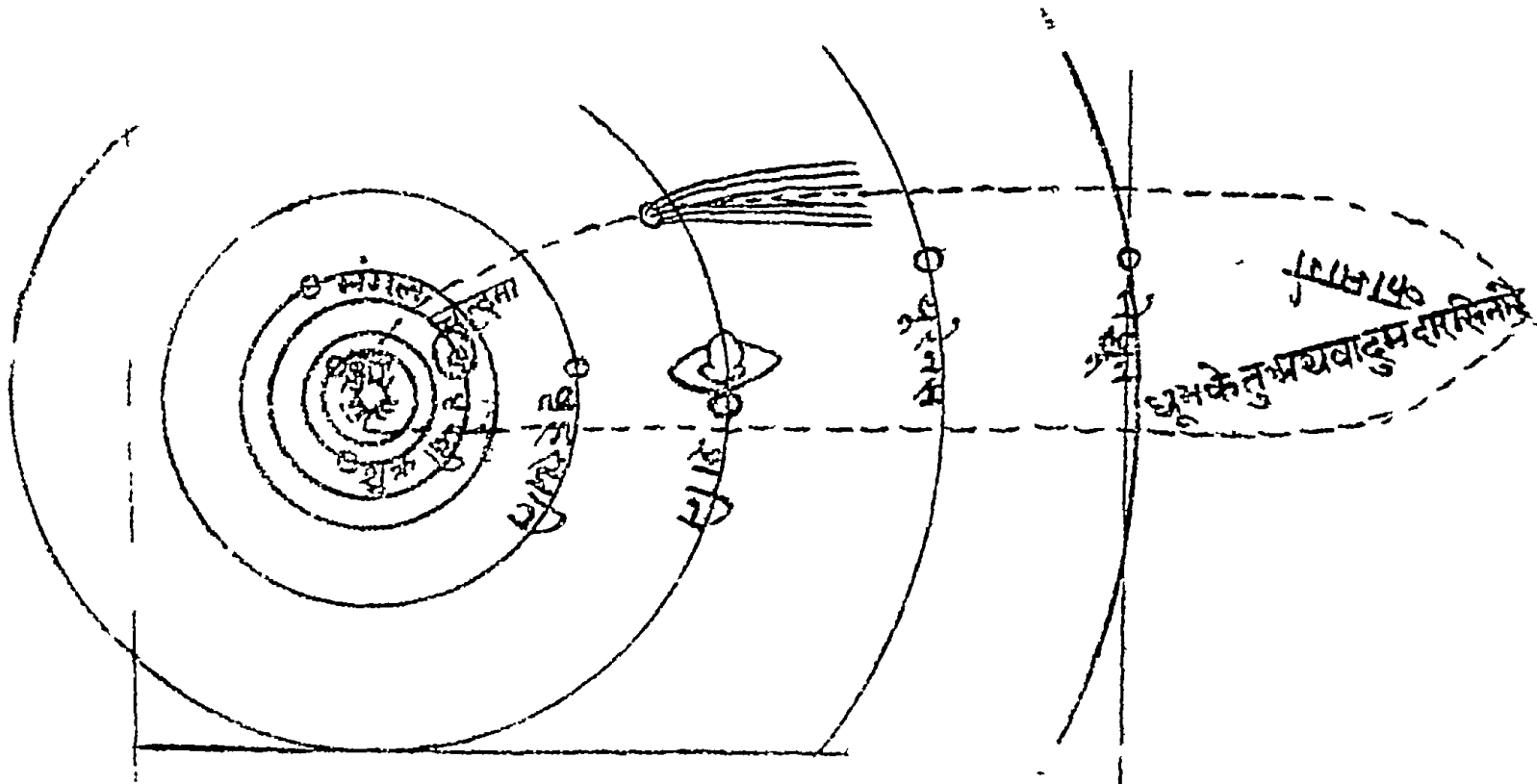
खगोल का नक़शा पैमाने पर नहीं आ सकता है। यदि हम एक ऐसा वृत्त बना वें जिस का व्यास एक इंच हो और उस को सूर्य मानें तो पृथ्वी के वृत्त का व्यास एक इंच के सवें भाग से भी कम होगा और सूर्य के वृत्त से नौ फुट दूरी पर पृथ्वी दिखलानी पडेगी। नेपून २५० फुट दूरी पर दिखलाना पडेगा। यदि हम सब से अधिक समीप के तारे को उस नक़्शे पर पैमाने के अनुसार दिखलाना चाहें तो हम को ४५० मील लम्बे काग़ज़ के तख़्ते की आवश्यकता होगी

यह भी सायंकाल और प्रातःकाल में दिखलाई देता है । यह अपनी धूरी पर २३$\frac{1}{3}$ घटों में घूमता है और सूर्य के चारों ओर एक परिक्रमा प्राय. २२५ दिनों में करता है । इसका व्यास ७,७१३ मील है । यह सूर्य से ६,८६,२३,००० मील दूरा पर है ।

पृथ्वी—

ब्रह्माण्ड मध्यपरिधिर्व्योमकक्षाभिधीयते ।
तन्मध्ये भ्रमणं भानां तदधोऽधःक्रमादथ ॥
मन्दामरेज्यभूपुत्र शुक्रसूर्येन्दुजेन्दवः ।
परिभ्रमन्त्यधोधः स्थाः सिद्धा विद्याधराघनाः ॥
मध्ये समन्तादण्डस्य भूगोलोव्योम्नि तिष्ठति ।
विभ्राणः परमां शक्तिं ब्रह्मणो धारणात्मिकाम् ॥

(सूर्य सिद्धान्त-अध्याय १२-श्लो० ३०-३१-३२)

प्राचीन काल मे कुछ लोग पृथ्वी को स्थिर मानते थे । आज कल साइन्स विद्या से सब सभ्य समाज में यह सिद्ध हो चुका है कि पृथ्वी एक घूमने वाला ग्रह है । पृथ्वी स्थिर है ऐसा कहना इस समय में केवल हास्यास्पद होगा । हमें यह विवाद करने की आवश्यकता नहीं है कि कौन सा मत ठीक है । क्योंकि दोनों मतों से फल एक ही मिलता है । यदि हम कहें कि पृथ्वी २४ घन्टों में एक परिक्रमा पूरी करती है या कहे कि सूर्य २४ घन्टों में एक परिक्रमा पूरी करता है तो दोनों मतों से हमारे ज्योतिष के फल में अन्तर न होगा । इसलिये यहा पर विवाद करने की आवश्यकता नहीं है । परन्तु आर्यभट जो सन् ईसवी से ४०० वर्ष पहिले हुए थे उन्होंने यह सिद्ध कर दिया था कि पृथ्वी घूमती है । सूर्यसिद्धान्त में लिखा है कि पृथ्वी निराधार है । कालिदास ने अपने रघुवंश में लिखा है कि—

"जानामि सीता मनघेति किन्तु
लोकापवादोबलवान्मतोमे ।
छाया हि भूमेः शशिनो मलत्वे
नारोपिता शुद्धिमतः प्रजाभिः" ॥

इन वार्तों से सिद्ध है कि हिन्दू लोग पृथ्वी को निराधार मानते थे। पृथ्वी घूमती है इस बात को भी जानते थे । चन्द्रमा अथवा पृथ्वी की छाया पडने से ग्रहण होते हैं यह भी जानते थे। हां पुराणों के मत से इन विषयों में भेद है। परन्तु पुराणों में बहुत सी बातें रूपकालङ्कार में कही गई हैं उनका यथार्थ तत्त्व समझना साधारण मनुष्यों का काम नहीं है।

पृथ्वी एक गोल ग्रह है, जिसका विषुवद् रेखा पर व्यास ७,९२६ मील है। परिधि विषुवद् रेखा पर २४,९०० मील है। अपनी धुरी पर २३ घन्टा, ५६$\frac{1}{5}$ मिनटों में प्रतिदिन घूमता है। सूर्य के चारों ओर एक पूरी परिक्रमा ३६५ दिन, ६ घन्टा, ९ मिनट्, ९ सेकन्डों में करती है । सूर्य से इसकी दूरी ९,३०,००,००० मील है। आधा भाग जो सूर्य की ओर रहता है उसमें दिन और दूसरे आधे भाग में रात होती है। ऋतुओं का परिवर्तन भी इसी के घूमने के कारण होता है। दिन रात के छोटे बडे होने का कारण भी यही है। क्योंकि पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है इसी कारण सब ग्रह आदि पश्चिम को जाते हुए मालूम पडते हैं। सूर्य से पृथ्वी तक प्रकाश आने में ८ मिनट् लग जाते हैं।

चन्द्रमा—

अपनी धुरी पर २७$\frac{1}{3}$ दिनों में घूमता है, और प्रायः इतने ही दिनों में वह पृथ्वी के चारों ओर एक परिक्रमा पूरी करता है । पृथ्वी से छोटा है। इसका व्यास २,१६३ मील है। पृथ्वी से २,३८,००० मील

दूर है। यह पृथ्वी के चारों ओर पश्चिम से पूर्व को घूमता है । जितने समय में पृथ्वी अपनी धूरी पर एक पूरी परिक्रमा करती है चन्द्रमा $\frac{1}{२७}$ घूमता है इसीलिये चन्द्रमा का उदय $\frac{1}{२७}$ × २४ अर्थात् ५४ मिनट् प्रतिदिन देरी में होता है। चान्द्रमास २९$\frac{1}{2}$ दिन का होता है । चान्द्रदिन (अर्थात् चन्द्रोदय से चन्द्रोदय पर्यन्त) २४ घन्टा, ५४ मिनट् का होता है। हमारी पृथ्वी से सूर्य तथा चन्द्रमा के विम्ब समान दिखलाई देते हैं। परन्तु सूर्य वहुत वड़ा है और पृथ्वी से वहुत दूर है। उसकी तुलना में चन्द्रमा वहुत ही छोटा है और पृथ्वी के वहुत समीप है। दूर के पदार्थ सदा छोटे दिखलाई देते हैं परन्तु समीप के पदार्थ वड़े दिखलाई देते हैं। दोनों विम्बों के समान दिखलाई देने का यही कारण है।

मंगल—

यह ग्रह वहुत वातों मे पृथ्वी के समान है इसी कारण इसको "मङ्गलोभूमिपुत्रश्च" कहा हो ऐसा सम्भव है। यह अपनी धूरी पर २४ घन्टा, ३७ मिनट् २२ सेकन्डों में घूमता है। सूर्य के चारों ओर ६८७ दिनों में अथवा प्राय २ वर्षो मे एक परिक्रमा पूरी करता है। यह गहिरे लाल रङ्ग का है। इसका व्यास ४,१०० मील है। सूर्य से १४,५१,८६,००० मील दूरी पर है।

वृहस्पति—

यह सव ग्रहों से वडा है। शुक्र का छोड कर शेष सव ग्रहों से तेज़ है। इसका व्यास ८७,३८० मील है और पृथ्वी के व्यास से ग्यारह गुना वडा है। यह अपनी धूरी पर प्राय: दस घंटो मे घूमता है और सूर्य के चारों ओर एक परिक्रमा करने में इसको ४,३३२$\frac{1}{2}$ दिन अथवा प्रायः १२ वर्ष लगते हैं। इसके चारों ओर चार चन्द्रमा घूमते हैं जिनको सैटेलाइट् अर्थात् उपग्रह कहते हैं और वे प्राय इतने ही वड़े हैं जितना कि हमारा चन्द्रमा है। इसके चारों ओर अगूठी सी है। यह सूर्य से ४९,५७,५१,००० मील दूरी पर है।

शनैश्चर—

यूरेनस और नेप्च्यून को छोड कर सब ग्रहों से अधिक दूरी पर है। बहुत तेज चमक नहीं है। इसके चारों ओर चौडी और गोल अगूठिया जैसी हैं। इसके दस चन्द्रमा अर्थात् सैटेलाइट् हैं। यह अपनी धुरी पर १०½ घंटों में घूमता है और इसको सूर्य के चारों ओर एक परिक्रमा करने में प्राय १०,७५६⅙ दिन अर्थात् २९½ वर्ष लगते हैं। इसका व्यास ७४,६३२ मील है, सूर्य से ८८,६०,००,००० मील दूर है।

सूचना।

फलित ज्योतिष में सूर्य का ग्रह माना है। पृथ्वी को ग्रह नहीं माना है। परन्तु लग्न पृथ्वीको बतलाता है। च० म० बु० ब० शु० श० इन सब को ग्रह माना है। इनके अतिरिक्त राहु, केतु दो ग्रह ये माने गये हैं। यूरेनस तथा नेप्च्यून का फल पाश्चात्य ज्योतिषी बतलाते हैं परन्तु हमारे शास्त्रों में इन ग्रहों का फल नहीं लिखा है।

यूरेनस अथवा हर्शल—

नेप्च्यून को छोड कर सब से अधिक दूरी पर है। सूर्य के चारों ओर एक परिक्रमा करने में इसको ३०,६८७ दिन अथवा ८३⅘ वर्ष लगते हैं। इसके साथ छ चन्द्रमा हैं। यह पृथ्वी से चौगुना बडा है। सूर्य अपने अक्ष पर पश्चिम से पूर्व की ओर घूमता है। इसी प्रकार सब ग्रह पश्चिम से पूर्व की ओर सूर्य की परिक्रमा करते हैं। परन्तु यूरेनस और नेपच्यून की चाल राहु केतु के समान उलटी है। यह सूर्य से १,७८,२०,००,००० मील दूर है। इसका व्यास ३२,००० मील है।

नेप्च्यून—

६०,१८१ दिनों में अथवा १६४ वर्षों में सूर्य के चारों ओर एक परिक्रमा पूरी करता है। सूर्य से २,७९,१०,००,०००, मील दूर है।

सूचना—

मंगल और बृहस्पति के परिभ्रमण मार्ग के बीच में चार छोटे

ग्रह हैं जो विना दूरबीन की सहायता के नहीं देखे जा सकते हैं। उनके नाम वेस्टा, जूनो, सीरीस और पैलास हैं। छोटे होने के कारण इनका अधिक वर्णन नहीं किया गया है। फलित मे इनका फल भी नही लिखा है।

राहु केतु—

सू० च० म० बु० बृ० शु० श० रा० के० नवग्रह कहलाते हैं। सूर्य से शनैश्चर पर्यन्त सब ग्रह आकाश पर देखने में आते हैं। परन्तु राहु केतु के तारे देखने में नही आते हैं। कोई कहते है कि धूमकेतु अथवा पूंछवाले तारे जो कभी कभी दिखलाई देते हैं वही केतु के तारे है। राहु केतु दोनों ग्रहों को छायाग्रह भी कहते हैं। इसका अर्थ यातो यह हो सकता है कि ये मुख्य ग्रह नही हैं छाया मात्र है। या यह हो सकता है कि सूर्य चन्द्र ग्रहण मं जो छाया पडती है पुराणों की कथा के अनुसार राहु केतु वैर साधन करते है। कोई कहते हैं कि चन्द्रमा जब पृथ्वी के मार्ग को दक्षिण से उत्तर को जाने में पार करता है उसी का नाम राहु है और इसका उलटा केतु है अर्थात् राहु केतु उन स्थानों का नाम है जहां पर कि चन्द्र-मार्ग पृथ्वीमार्ग को काटता है। यह उलटे चलते हैं। प्राय. १६ वर्ष इनको एक परिक्रमा मे लगते हैं। विवाहवृन्दावन नामक ग्रन्थ यह सिद्ध करता है कि राहु भी ग्रह है। यूरेनस तथा नेपृच्यूत की उलटी चाल राहु तथा केतु की चाल से मिलती है।

तारे—

तारे तीन प्रकार के हैं:—

(१) स्थिर।

(२) घूमने वाले।

(३) धूमकेतु अथवा पूंछवाले तारे।

स्थिर तारे—

स्थिर तारे इस लिये कहलाते है कि वे घूमते नहीं है और पृथ्वी से और एक दूसरे से सदा एक ही दूरी पर रहते हैं। जो कुछ कि वे चलते

हुए मालूम पड़ते हैं इसका कारण केवल पृथ्वी का अपनी धुरी पर घूमना है। सम्भव है कि हमारे सौर जगत् के समान वे भी और ग्रहों के केन्द्र हैं या और अधिक दूर के भुवनों को प्रकाश करने वाले सूर्य हैं।

उत्तर ध्रुव को पहिचानने से हम रात को सदा यह बतला सकते हैं कि उत्तर दिशा किस ओर है।

स्थिर तारे हमारे ग्रहों से अधिक चमकीले होते हैं जिससे यह सिद्ध होता है कि वे स्वय अपनी कान्ति से चमकते हैं। परन्तु ग्रह सदा अपना स्थान बदलते रहते हैं और सूर्य के प्रकाश से चमकते हैं।

स्थिर तारे इतनी दूरी पर हैं कि जो तारा हमारी पृथ्वी से सब से अधिक निकट है उसकी दूरी ७६ ००,००,०० ०० ०००, छिहत्तर खरब मील है।

स्थिर तारों की ६ कक्षा हैं। जो सब से बड़े हैं प्रथम कक्षा के कहलाते हैं। जो सब से छोटे हैं वे छठी कक्षा के हैं। जो तारे बिना दूरबीन की सहायता के नेत्रमात्र से नहीं दिखलाई देते वे दूरबीनी तारे कहलाते हैं।

बिना दूरबीन की सहायता के छ सहस्र तारे दिखलाई देते हैं। पचास सहस्र तारों के स्थान नियत हो चुके हैं। सन् १७६२ ई० में आकाश गङ्गा में ५१ मिनट में २४,८० ००० तारे गिने गये थे। लालेन्ड साहब के मत के अनुसार आकाश में सात करोड़ पचास हजार से कम तारे नहीं हैं।

नक्षत्रव्यूह -

कन्स्टिलेशन अर्थात नक्षत्रव्यूह उसे कहते हैं जो आकाश में एक ही स्थान पर बहुत से तारे एकत्रित हों और जिनके पहचानने के लिये किसी पशु आदि का नाम दिया गया हो। जैसे—अश्विनी मेष, वृष, इत्यादि।

कन्स्टिलेशन् ३ प्रकार के हैं—

अर्थात् नक्षत्रव्यूह

	नवीन	प्राचीन ।
(१) जोडिएकल अर्थात् राशिचक्र	१२	१२
(२) उत्तरी	३८	२१
(३) दक्षिणी	४७	१२

कुल ९७ = ३४५० तारे ।

उत्तरायण दक्षिणायन की राशिया

मेष, वृष मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या = वसन्त, ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतु की राशियां हैं। तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुम्भ, मीन = शरद्, हेमन्त, तथा शिशिर ऋतु की राशियां हैं। अथवा मकर से छ राशियां उत्तरायण की हैं, कर्क से छ राशियां दक्षिणायन की हैं ॥

(२) ज्योतिष प्रकरणम्

ज्योतिष शास्त्र प्रवर्तकाः—

ब्रह्माऽचार्योवसिष्ठोऽत्रिर्मनुःपौलस्त्यरोमशौ ।
मरीचिरङ्गिराव्यासो नारदःशौनकोभृगुः ॥
च्यवनो यवनो गर्गः कश्यपश्च पराशरः ।
अष्टादशैते गम्भीरा ज्योतिः शास्त्रप्रवर्तकाः ॥

(अर्थ)

(१) ब्रह्मा अर्थात् ब्रह्मगुप्त, जिनका बनाया हुआ ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त है (२) आचार्य अर्थात् भास्कराचार्य जिनका बनाया हुआ सूर्य सिद्धान्त है (३) वसिष्ठ (४) अत्रि (५) मनु (६) पौलस्त्य (७) रोमश (८) मरीचि (९) अङ्गिरा (१०) व्यास (११) नारद (१२) शौनक (१३) भृगु (१४) च्यवन (१५) यवन (१६)गर्ग (१७) कश्यप (१८) पराशर— यह अठारह बडे भारी आचार्य है जिन्होंने ज्योतिष शास्त्र चलाया

हैं। वसिष्ठसिद्धान्त, अत्रिसिद्धान्त इत्यादि सिद्धान्त ग्रन्थ इनके बनाये हुए हैं।

प्रसिद्धा ज्योतिषाचार्याः—

गर्ग, पराशर, भास्कराचार्य, ब्रह्मगुप्त, आर्यभट, वराहमिहिर (जो विक्रमादित्य राजा की सभा में नवरत्नों में थे), यवनाचार्य, भृगु (जिनका बनाया हुआ भृगुसंहिता नामक ग्रन्थ बड़ा आदरणीय है) यह पुराने आचार्य हैं। आधुनिक आचार्यों में रामदैवज्ञ, नीलकण्ठ, काशिनाथ आदि हैं।

ज्योतिःशास्त्रस्य वेदाङ्गत्वम्—

शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दएवच।
ज्योतिषञ्च षडङ्गानि कथितानि मनीषिभिः॥
वेदचक्षुः किलेदं ज्योतिषं मुख्यता चाङ्गमध्यस्य तेनोच्यते।

(अर्थ)

शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त छन्द, ज्योतिष यह वेद के छः अङ्ग हैं। यह ज्योतिषशास्त्र वेद का नेत्ररूप अङ्ग है इस कारण और अङ्गों में से यह प्रधान है।

ज्योतिःशास्त्रप्रशंसा—

अप्रत्यक्षाणि शास्त्राणि विवादस्तेषु केवलम्।
प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ॥

(अर्थ)

शास्त्रों में केवल विवाद होता है, प्रत्यक्ष नहीं दिखलाई देते हैं। परन्तु ज्योतिष शास्त्र प्रत्यक्ष है क्योंकि इसमें सूर्य और चन्द्रमा साक्षी हैं।

ज्योतिःशास्त्रसंख्या—

लक्षं व्याकरणं प्रोक्तं चतुर्लक्षं तु ज्योतिषम्।

(अर्थ)

व्याकरण की संख्या एक लाख है और ज्योतिष की संख्या चार लाख है अर्थात् इसमे अनुष्टुप् छन्द के चार लाख श्लोक हैं।

ज्योतिः शास्त्रस्य द्वे शाखे—

ज्योतिष शास्त्र की दो शाखाए हैं —

(१) गणित अथवा सिद्धान्त जिसको अंग्रेजी मे 'ऐस्ट्रोनौमी' कहते हैं।

(२) फलित अर्थात् फलादेश जिसको अंग्रेजी में 'ऐस्ट्रोलौजी' और फारसी में नजूम कहते हैं।

तिस्रः शाखाः—

ज्योतिष शास्त्र की तीन शाखाए यह हैं —

(१) औदयिकी अर्थात् जो सूर्योदय से सूर्योदय तक एक दिन मानते हैं।

(२) माध्यन्दिनी अर्थात् जो दोपहर अथवा मध्याह्न से मध्याह्न तक एक दिन मानते हैं।

(३) अर्धरात्रप्रधाना अर्थात् जो अर्धरात्र से अर्धरात्र तक एक दिन मानते हैं।

त्रिस्कन्धात्मकं ज्योतिः शास्त्रम्—

सिद्धान्तसंहिताहोरारूपंस्कन्धत्रयात्मकम्।
ज्योतिःशास्त्रं विनैतन्न श्रौतस्मार्तञ्च सिद्ध्यति॥

(अर्थ)

ज्योतिषशास्त्र के तीन स्कन्ध अर्थात् शाखाए हैं। (१) सिद्धान्त अर्थात् भूगोल खगोल वर्णन, गणित, ग्रहों की गति आदि, (२) संहिता, जैसे भृगु-संहिता, वाराही संहिता आदि, (३) होरा अथवा जातक अर्थात् जन्मपत्री

आदि का फल। विना ज्योतिष के यज्ञ आदि वैदिक कर्म तथा विवाहादि स्मार्त कर्म सिद्ध नहीं हो सकते हैं।

पुनश्च ज्योतिष भेदाः—

ज्योतिष के भेद यह हैं :—

(१) सिद्धान्त (२) संहिता (३) होरा (४) ताजिक अथवा वर्ष फल (५) प्रश्न (६) मुहूर्त (७) संवत्सर के फल का विचार, (८) भूकम्प, इन्द्रधनुष उत्पातादिफल यह शाखाएं हैं।

जातकस्यापि भेदा —

जातक के भी यह भेद हैं —

(१) जैमिनि सूत्र के अनुसार।

(२) केरल के अनुसार।

(३) लघुपाराशरी के अनुसार।

(४) भृगुसंहिता के अनुसार।

(५) बृहज्जातक आदि ग्रन्थों के अनुसार। सामान्यतः यही पक्ष लिया जाता है और इस ग्रन्थ में भी यही पक्ष लिया गया है।

दैवज्ञप्रशंसा—

त्रिस्कन्धज्ञोदर्शनीयः श्रौतस्मार्तक्रियापरः।
निर्दाम्भिकः सत्यवादी दैवज्ञोदैववित्स्थिरः॥
जानाति प्रगाढ्यास्त्रिसिद्धान्तं प्रसिद्धमिव मनो निषिक्तमिव हृदये।
शास्त्रं यस्य सभगणं नादेशा निष्फलास्तस्य॥

(अर्थ)

जो ज्योतिषी पूर्वोक्त तीनों स्कन्धों के जानने वाला हो, श्रौत और स्मार्त क्रिया में तत्पर हो, पाखण्डी न हो सत्यवादी हो, स्थिरप्रकृति का हो, वह दैव का ज्ञान रखता है और दर्शन के योग्य है। तारागणसहित सम्पूर्ण ज्योतिष शास्त्र जिस ज्योतिषी को ऐसा याद है मानो कि उसकी दृष्टि सारे जगत

में फैली है, मानो कि उसकी बुद्धि मे सब चित्र खीचा हुआ है और उसके चित्त में सब भीगा हुआ है, ऐसे ज्योतिषी के फलादेश कभी निष्फल नहीं होते हैं।

दैवज्ञदोषाः—

तिथ्युत्पत्तिं न जानन्ति ग्रहाणां नैव साधनम्।
परवाक्येन वर्त्तन्ते ते वै नक्षत्रसूचकाः॥
अविदित्वैव यः शास्त्रं दैवज्ञत्वं प्रपद्यते।
सपंक्तिदूषकः पापो ज्ञेयो नक्षत्रसूचकः॥
नक्षत्रसूची खलु पापरूपो हेयः सदा सर्वसुधर्मकृत्ये॥
ज्योतिषं गारुडं चैव धर्मशास्त्रं तथैव च।
बिना शास्त्रेण यो ब्रूयात्तमाहुर्ब्रह्मघातिनम्॥

(अर्थ)

जो लोग तिथि की उत्पत्ति को नहीं जानते, ग्रहों का साधन नहीं जानते, और दूसरे के कहने पर चलते हैं उनको नक्षत्रसूची कहते है। जो मनुष्य विना शास्त्र जाने ही ज्योतिषी वन बैठता है वह पंक्ति को दूषित करने वाला पापी है और उसको नक्षत्रसूची कहते हैं। नक्षत्रसूची को देखने से पाप होता है और वह सब धर्मकार्यों मे वर्जित है। जो मनुष्य ज्योतिषशास्त्र, गरुडविद्या और धर्म शास्त्र का शास्त्र के प्रमाण के विना कहे उसको ब्रह्महत्या का पाप लगता है।

जातकप्रशंसा-दैवपौरुषविवादश्च—

"अर्थार्जनेसहायं पुरुषाणामापदर्णवे पोतः।
यात्रासमये मंत्री जातकमपहाय नास्त्यपरः॥
यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाशुभं तस्य कर्मणः पक्तिम्।
व्यंजयति शास्त्रमेतत्तमसि द्रव्याणि दीपइव॥"

यस्य जन्मकुण्डलीतोऽरिष्टं यस्मिन्काले उपलभ्यते तदा तस्य जप-पुरश्चरणादिना निराकर्तव्यं तेन शुभम् । यदा तु शुभफलमुपलभ्यते तदार्थयात्राराज्याभिषेकादिकं विधेयमिति तात्पर्यम् । ननु प्राचीनसद-सत्कर्मविपाकरूपस्यावश्यं भावित्वादेतज्ज्ञानफलं व्यर्थं तथाच दैवस्य बलत्वेन पुरुषकारो निरर्थक इति ।

"फलेद्यदि प्राक्तनमेव तत्किं
कृष्याद्युपायेषु परः प्रयत्नः ।
श्रुतिः स्मृतिश्चापि नृणां निषेध
विध्यात्मके कर्मणि किं निषण्णा ॥

नदैवमपि पुरुषकारेण विना न घटत इति पुरुषार्थकस्य मुख्यत्वम् ।

"दैवे पुरुषकारे च कर्मसिद्धिर्व्यवस्थिता ।
तत्रदैवमभिव्यक्तं पौरुषं पौर्वदैहिकम् ॥
यथाह्येकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत् ।
एवं पुरुषकारेण विना दैवं न सिद्ध्यति ॥
दैव मात्मकृतं विद्यात्कर्म यत्पूर्वदैहिकम् ।
स्मृतः पुरुषकारस्तु क्रियते यदिहापरम् ॥"

तस्मात्प्रयत्नाभावे दैवमपि नास्तीत्यत सिद्धं प्रयत्नम् । तस्य मुख्य-त्वम् । तथाच ।

"अवश्यंभाविभावानां प्रतीकारो भवेद्यदि ।
तदा दुःखैर्न बाध्येरन्नलरामयुधिष्ठिराः ॥"

कर्मणां वैचित्र्यम् । कानिचिद् दृढमूलानि कानिचिच्छिथिलमूलानि । तत्र दृढमूलानि स्थिराख्यानि । अदृढमूलान्युत्पातसञ्ज्ञानि । एवं यत्र जन्मपत्रशकुन प्रश्नादिभिर्दशाफलपाकक्रमेण सन्तानविद्याभावोनिर्णीत स्तत्र ग्रहाणां शान्त्यादिरूपेण पूर्णप्रयत्नेनापि सन्तानादिप्रतिबन्धकीभूतं

एक अधिमास होता है और १४१ वर्ष के उपरान्त एक क्षयमास होता है। जिस वर्ष में क्षयमास होता है उस वर्ष दो अधिमास होते हैं। शुक्लपक्ष पितरों का दिन होता है, और कृष्णपक्ष पितरों की रात होती है। उत्तरायण देवताओं का दिन होता है, और दक्षिणायन देवताओं की रात होती है। हम लोगों का जो एक महीना होता है वह पितरों का एक अहोरात्र होता है। हम लोगों का जो १ वर्ष होता है देवताओं का वह एक अहोरात्र होता है॥

सत्ययुग मान	=	१७,२८,०००	वर्ष,
त्रेतायुग मान	=	१२,६६,०००	वर्ष,
द्वापरयुग मान	=	८,६४,०००	वर्ष,
कलियुग मान	=	४,३२,०००	वर्ष,
चारों युगों का जोड़	=	४३,२0,000	वर्ष,

इस प्रकार एक हज़ार युग होने से ब्रह्मा का एक दिन होता है और उसकी रात भी उतनी ही होती है॥

ब्रह्मा का दिन अथवा कल्पः— = ४३,२0,00,00 000 वर्ष

७0 युगों का एक मन्वन्तर होता है। आज कल सातवा मन्वन्तर है उसका नाम वैवस्वत है। अट्ठाईसवा कलियुग है। उसका प्रथम चरण है। ब्रह्मा का दूसरा पहर है। श्वेतवाराह कल्प है। सन् ईस्वी से ३१०२ वर्ष पहिले कलियुग की उत्पत्ति हुई। उस दिन सूर्य, चन्द्रमा और सब ग्रह एक ही राशि में थे, और सूर्य सिद्धान्त के मत से ७,१४,४0,३६,७२,१६२ अहर्गण है॥

काल भेदाः

तत्र कालः षड्विधः। वत्सरः, अयनं, ऋतुः, मासः, पक्षः, दिवस इति। वत्सरः पञ्चधा। चान्द्रः, सौर, सावनो नाक्षत्रो वार्हस्पत्य इति। शुक्लप्रतिपदादिदर्शान्तैश्चैत्रादिसंज्ञैर्द्वादश-

भिर्मासैश्चतु पञ्चाशदधिकशतत्रयदिनैः, सति मलमासे त्रयोदशभिर्मासैश्चान्द्रो वत्सरः । चान्द्रस्यैवप्रभवोविभवः शुक्लइत्यादयः षष्टिसंज्ञाः। मेषादिषु द्वादशराशिषु रविभुक्तेषु पञ्चषष्ट्यधिकशतत्रयदिनैः सौरो वत्सरः सम्पद्यते । षष्ट्युत्तरशतत्रयदिनैः सावनः । वक्ष्यमाणैर्द्वादशभिर्नाक्षत्रमासैर्नाक्षत्रो वत्सरः । सच चतुर्विंशत्यधिकशतत्रयदिनैः स्यात् । मेषाद्यन्यतमराशौ बृहस्पतिना भुक्ते बार्हस्पत्यः । सच एकषष्ट्यधिकशतत्रयसार्द्धद्वयदिनैर्भवति । कर्मादौसङ्कल्पे चान्द्रवत्सरएव स्मर्तव्यो नान्यः । अयनं द्विविधं दक्षिण मुत्तरंच । सूर्यस्य कर्कसङ्क्रान्तिमारभ्य षड्राशिभोगेन दक्षिणम् । मकरसंक्रान्ति मारभ्य राशिषट्क भोगेनोत्तरायणम् । ऋतुर्द्विविधः सौरश्चान्द्रश्च । मीनारम्भो मेषारम्भोवा । सूर्यस्य राशिद्वय भोगात्मको वसन्तादिषट्संज्ञकः सौरः ऋतुः । चैत्रमारभ्य मासद्वयात्मको वसन्तादिषट्संज्ञकश्चान्द्रः। मलमासे तु किञ्चिदून नवतिसंख्यैर्दिनैश्चान्द्रऋतुः । श्रौतस्मार्तादौ चान्द्रर्तुस्मरणं प्रशस्तम् । मासश्चतुर्धा चान्द्रः सावनो नाक्षत्र इति । शुक्लपक्षप्रतिपदादिरमान्तः कृष्णप्रतिपदादि पूर्णिमान्तो वा चान्द्रो मासः । तत्रापिशुक्लादिर्मुख्यः । कृष्णादिर्विन्ध्योत्तर एव ग्राह्यः । अयमेव चैत्रादिसंज्ञकः कर्मादौ स्मर्तव्यः । केचिन्मीनराशिमारभ्य सौराणां चैत्रादिसंज्ञामाहुः । अर्कसंक्रान्ति मारभ्योत्तरसंक्रान्त्यवधि सौरो मासः । त्रिंशद्दिनैः सावनः । चन्द्रस्याश्विन्यादि सप्तविंशतिनक्षत्रभोगेन नाक्षत्रो मासः । प्रतिपदादि पौर्णिमान्तः शुक्लपक्षः । प्रतिपदादि दर्शान्तः कृष्णपक्षः । दिवसः षष्टिघटिकात्मकः ॥

(अर्थ)

काल छः प्रकार का होता है :—

(१) वर्ष (२) अयन (३) ऋतु (४) मास, (५) पक्ष (६) दिवस ॥

(१) वर्ष ५ प्रकार का होता है :—

चान्द्र, सौर, सावन, नाक्षत्र और बार्हस्पत्य। शुक्र पक्ष की प्रतिपदा से लेकर अमावास्या पर्य्यन्त, चैत्र आदि बारह महीनों से ३५४ दिन का चान्द्रवत्सर होता है और मलमास होने पर १३ महीनों का होता है। प्रभव आदि ६० सम्वत्सर इसी चान्द्रवत्सर के भेद हैं। मेष आदि १२ राशियों मे सूर्य्य के भोग होने से ३६५ दिन का सौर वत्सर होता है। ३६० दिन का सावन वत्सर होता है। १२ नाक्षत्र मासो का अर्थात् ३२४ दिनों का नाक्षत्र वर्ष होता है। (नाक्षत्र मास का वर्णन यहीं पर आगे चलके किया जावेगा)। मेष आदि एक एक राशि में बृहस्पति का भोग होने से बार्हस्पत्य वर्ष होता है उसमें ३६१ दिन होते हैं। कर्म आदि में सङ्कल्प करने के समय चान्द्र वत्सर का ही स्मरण करना चाहिये और किसी का नहीं॥

(२) अयन दो प्रकार का होता है:—दक्षिणायन और उत्तरायण। कर्क सङ्क्राति से लेकर जब सूर्य्य ६ राशियों का भोग करता है उसे दक्षिणायन कहते हैं, मकर सङ्क्रान्ति से लेकर ६ राशियों के भोग को उत्तरायण कहते हैं।

(३) ऋतु दो प्रकार की होती है, सौर और चान्द्र। सौर ऋतु का आरम्भ मीन से या मेष से होता है। सूर्य्य के दो राशियो के भोग करने से वसन्त आदि नाम की ६ ऋतु होती हैं। चैत्र से आरम्भ करके दो दो महीनों के वसन्त आदि नाम की ६ चान्द्र ऋतु होती हैं परन्तु मलमास पड जाने पर प्राय ९० दिन की चान्द्र ऋतु होती है। श्रौत स्मार्त आदि कर्मों में इसी चान्द्र ऋतु का स्मरण करना चाहिये।

(४) मास ४ प्रकार का होता है—चान्द्र, सौर, सावन, और नाक्षत्र। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से अमावस्या पर्य्यन्त अथवा कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से पूर्णिमा पर्य्यन्त चान्द्रमास होता है। इन दोनों में से शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ होनेवाला चान्द्रमास मुख्य पक्ष है। कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ होने वाला चान्द्रमास विन्ध्याचल के दक्षिण में ग्रहण किया जाता है। पूजा आदि कर्मों में इसी चान्द्रमास का स्मरण करना चाहिये। किन्हीं आचार्यों का मत है कि मीन राशि से आरम्भ करके चैत्र आदि सौर मास का ग्रहण करना चाहिये। पहिली सूर्य्य संक्रान्ति से दूसरी सूर्य संक्रान्ति पर्यन्त सौर मास होता है। ३० दिन का सावन मास होता है। अश्विनी आदि २७ नक्षत्रों में जब चन्द्रमा भोग करता है उसको नाक्षत्र मास कहते हैं।

(५) प्रतिपदा से पौर्णमासी पर्य्यन्त शुक्ल पक्ष होता है तथा प्रतिपदा से अमावास्या पर्यन्त कृष्णपक्ष होता है।

(६) ६० घड़ियों का एक दिन होता है।

(९) संवत्सरायनर्तुमासपक्षप्रकरणम्

शकाद्यानयनम्

विक्रमादित्यशाकस्य पंचत्रिंशाधिकेशते।
शोधितेजायतेशाकश्चैत्रशुक्लादितःक्रमात्॥
सप्तपंचाग्निकुभिर्युक्तः स्याद्विक्रमस्यहि।
रेवाया उत्तरे तीरे संवन्नाम्नातिविश्रुतः॥

(अर्थ)

विक्रम सम्वत् में १३५ घटा देने से शाके बन जाता है और उसका चैत्र महीने की शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ होता है अथवा शाके

में १३५ जोड देने से विक्रम का सम्वत् बन जाता है और रेवानदी के उत्तर में यह प्रसिद्ध है।

शाके	+	७८	=	सन् ईस्वी,
सम्वत्	–	५७	=	सन् ईस्वी,
सन् ईस्वी	+	५७	=	सम्वत्,
सन् ईस्वी	–	७८	=	शाके,
सन् ईस्वी	–	५८३	=	सन् हिजरी,
सन् हिजरी	–	१०	=	सन् फसली,
सन् फसली	–	१	=	वङ्गला सन्,

षष्ठिसंवत्सरनामानि

प्रभवो विभवः शुक्लः प्रमोदोऽथ प्रजापतिः ।
अङ्गिराः श्रीमुखो भावो युवा धाता तथैवच ॥
ईश्वरो बहुधान्यश्च प्रमाथी विक्रमो वृषः ।
चित्रभानुः सुभानुश्च तारणः पार्थिवोऽव्ययः ॥
सर्वजित्सर्वधारीच विरोधी विकृतिः खरः ।
नन्दनो विजयश्चैव जयो मन्मथ दुर्मुखौ ॥
हेमलम्बी विलम्बी च विकारी शार्वरी प्लवः ।
शुभकृच्छोभनः क्रोधी विश्वावसु पराभवौ ॥
प्लवङ्गः कीलकः सौम्यः साधारणो विरोधकृत् ।
परिधावी प्रमादी च आनन्दो राक्षसो नलः ॥
पिङ्गलः कालयुक्तश्च सिद्धार्थी रौद्र दुर्मती ।
दुन्दुभी रुधिरोद्गारी रक्ताक्षः क्रोधनः क्षयः ॥

(अर्थ)

६० सम्वत्सरों के नाम यह हैं.—

प्रभव, विभव, शुक्ल, प्रमोद, प्रजापति, अंगिरा, श्रीमुख, भाव, युवा, धाता, ईश्वर, बहुधान्य, प्रमाथी, विक्रम, वृष, चित्रभानु, सुभानु, तारण, पार्थिव, अव्यय, सर्वजित, सर्वधारी, विरोधी, विकृति, खर, नन्दन, विजय, जय, मन्मथ, दुर्मुख, हेमलम्बी, विलम्बी, विकारी, शार्वरी, प्लव, शुभकृत्, शोभन, क्रोधी, विश्वावसु, पराभव, प्लवङ्ग, कीलक, सौम्य, साधारण, विरोधकृत्, परिधावी, प्रमादी, आनन्द, राक्षस, नल, पिङ्गल, कालयुक्त, सिद्धार्थी, रौद्र, दुर्मति, दुन्दुभि, रुधिरोद्गारी, रक्ताक्ष, क्रोधन, क्षय ॥

अयने

मकराद्राशिषट्केऽर्के प्रोक्तं चैवोत्तरायणम् ।
षट्सु कर्कादितो ज्ञेयं दक्षिणं ह्ययनं रवेः ॥
गृहप्रवेशत्रिदशप्रतिष्ठा विवाहचौलव्रतबंधदीक्षाः ।
सौम्यायने कर्म शुभं विधेयं यद्गर्हितं तत्खलु दक्षिणेच ॥

(अर्थ)

मकर सक्रान्ति से ६ राशियों मे जब सूर्य रहता है उसको उत्तरायण कहते हैं और कर्क से ६ राशियों मे जब सूर्य रहता है उसको दक्षिणायन कहते हैं। गृहप्रवेश देवताओं के मन्दिर की प्रतिष्ठा, विवाह, चूडाकर्म, व्रतबन्ध, दीक्षा आदि शुभ कर्म उत्तरायण में करने चाहियें। निन्दित काम दक्षिणायन में होते हैं।

ऋतवः

चैत्रादिद्विद्विमासाभ्यां वसन्ताद्यृतवश्च षट् ।

अथवा

मीनमेषगते सूर्ये वसन्तः परिकीर्तितः ।
वृषभे मिथुने ग्रीष्मो वर्षा कर्कटसिंहयोः ॥
कन्यायां च तुलायां च शरदृतुरुदाहृतः ।
हेमन्तो वृश्चिकद्वन्द्वे शिशिरो मृगकुम्भयोः ॥

(अर्थ)

चैत आदि दो महीनों की एक ऋतु होती है । इस प्रकार से वसन्त आदि ६ ऋतु होती है । अथवा मीन मेष का जब सूर्य होता है उसको वसन्त ऋतु कहते हैं, वृष मिथुन के सूर्य होने से ग्रीष्म ऋतु होती है, कर्क सिंह के होने से वर्षा ऋतु होती है, कन्या तुला के होने से शरद् ऋतु होती है, वृश्चिक धन के होने से हेमन्त ऋतु होती है, मकर कुम्भ के होने से शिशिर ऋतु होती है ॥

मासा

मासश्चैत्रोऽथ वैशाखो ज्येष्ठ आषाढसंज्ञकः ।
ततस्तु श्रावणो भाद्रपदोऽथाश्विनसंज्ञकः ॥
कार्तिको मार्गशीर्षश्च पौषो माघोऽथ फाल्गुनः ॥

(अर्थ)

बारह महीनों के नाम यह हैं:—चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ, फाल्गुन ॥

चान्द्रादिमासभेदाः—

मासो दर्शावधि श्चान्द्रः सौरः संक्रमणाद्रवेः ।
त्रिंशद्दिनः सावनको नाक्षत्रोविधुसंभ्रमात् ॥
चान्द्रस्तु द्विविधो मासो दर्शान्तः पूर्णिमान्तिकः ॥
विवाहादौ स्मृतः सौरो यज्ञादौ सावनः स्मृतः ।
वार्षिके पितृकार्येच मासश्चान्द्रोऽभिधीयते ॥

(अर्थ)

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से लेकर अमावास्या पर्यन्त चान्द्रमास होता है। सूर्य की एक संक्रान्ति से दूसरी संक्रान्ति पर्यन्त सौर मास होता है। ३० दिन का सावन मास होता है। चन्द्रमा के घूमने से नाक्षत्रमास होता है। चान्द्रमास दो प्रकार का होता है एक तो अमावास्यान्त दूसरा पूर्णिमान्त। विवाह आदि कर्मों में सौरमास लिया जाता है। यज्ञ आदि कर्मों में सावन मास लिया जाता है। वार्षिक कर्मों में तथा पितृकार्यों में चान्द्रमास लिया जाता है॥

अधिमासः

द्वात्रिंशद्भिर्गतैर्मासैर्दिनैः षोडशभिस्तथा।
घटिकानां चतुष्केण पतत्यधिकमासकः॥

(अर्थ)

३२ महीने १६ दिन और ४ घड़ी बीत जाने पर अधिमास होता है। सूर्यसिद्धान्त के अनुसार ३३ . ५३५१ चान्द्रमासों में ३२·५३४३ सौरमास होते हैं। इस कारण सौर मासों को चान्द्रमास बनाने के लिये ३२ सौर मासों के उपरान्त अथवा २ वरस ८ महीनों के उपरान्त अधिमास पड़ेगा॥

क्षयमासः—

असंक्रान्ति मासोऽधिमासः स्फुटंस्याद्
द्विसंक्रान्ति मासः क्षयाख्यः कदाचित्॥
क्षयः कार्तिकादित्रये नान्यतः स्या
त्तदावर्ष मध्येऽधिमासद्वयं स्यात्॥

(अर्थ)

जिस चान्द्र महीने में संक्रान्ति नहीं होती है उसको अधिमास कहते

हैं। जिस चान्द्रमास में दो सक्रान्तियां होती हैं उसको क्षयमास कहते हैं। और वह कभी कभी होता है। क्षय मास केवल कार्तिक आदि ३ महीनों में पड़ता है और महीनों में नहीं। जिस साल क्षयमास होता है उस साल एक वर्ष के भीतर दो अधिमास होते हैं।

मासानां चैत्रादिसंज्ञाकरणे हेतुः

पुष्ययुक्ता पौर्णमासी पौषी मासे तु यत्र सा।
नाम्ना स पौषो माघाद्याश्चैवमेकादशापरे॥

(अर्थ)

जिस महीने में पौर्णमासी के दिन पुष्य नक्षत्र होता है उस महीने का नाम पौष है। इसी प्रकार और महीनों को भी जानना चाहिये। जैसे चित्रा नक्षत्र जिस महीने की पूर्णमासी के दिन हो उस महीने का नाम चैत्र है।

पक्षौ

पूर्वापरं मासदलं हि पक्षौ।
पूर्वापरौ तौ सितनीलसंज्ञौ॥
पूर्वश्च दैवश्च परश्च पित्र्यः॥

(अर्थ)

एक महीने में दो पक्ष होते हैं उनको शुक्ल और कृष्ण पक्ष कहते हैं। शुक्ल पक्ष देवताओं का है, कृष्ण पक्ष पितरों का।

मासचक्रम्

मासाः	चैत्र	वै	ज्ये	आषा	श्रा.	भा.	आश्वि	का	मार्ग.	पौ.	माघ	फा.
शून्यतिथि (उभयपक्षकी)	८-९	१२			२-३	१-२	१०११		७-८	४-५		
शू.ति. (कृ. प.)			१४	६				५			५	
शू.ति. (शु. प.)			१३	७				१४			६	३ ४
शून्यनक्षत्र	अश्वि रो.	चि. स्वा.	उपा. पुष्य	पूफा. ध.	उपा. श्र.	शत.रे.	पूभा.	म. कृ	वि. चि.	आ. अश्वि. ह.	श्र. मू.	भ. ज्ये.
शून्यराशि	कु.	मी.	वृष	मि	मे.	कन्या	वृश्चि	तु.	ध.	कर्क	म.	सि.
मन्वादितिथि	शुक्ल ३-१५	...	शु. १४	शु. १० १५	कृ. ३० ८	शु. ३	शु. ९	शु. १५-१२	शु. ७	शु. ११		शु. १५
युगादितिथि		शु. ३ त्रेता या.				कृ. १३ द्वापरस्य		शु. ९ कृतयुगस्य			कृ. ३० कलेः	

(५) तिथिप्रकरणम्

तिथयः

प्रतिपच्च द्वितीयाच तृतीया तदनन्तरम् ।
चतुर्थी पंचमी षष्ठी सप्तमी चाष्टमी तथा ॥
नवमी दशमी चैवै कादशी द्वादशी तथा ।
त्रयोदशी ततो ज्ञेया ततः प्रोक्ता चतुर्दशी ॥
पूर्णिमा शुक्लपक्षेऽन्त्या कृष्णपक्षेऽत्वमा स्मृता ॥

(अर्थ)

तिथियों के नाम—प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पचमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, शुक्लपक्ष में पौर्णमासी, तथा कृष्णपक्ष में अमावास्या ॥

तिथिज्ञानोपायः

मासभाच्चान्द्रभंयावद्गणयेत्तावदेवतु ।
यावन्ति गणनाद्भानि तावन्त्यस्तिथयः क्रमात् ॥

(अर्थ)

मासनक्षत्र से चन्द्रनक्षत्र तक गिनती करने से जो सख्या आवे उसे तिथि कहते हैं। सूर्य से चन्द्रमा के १२ अश दूर होने का नाम एक तिथि है ॥

तिथीशाः

तिथीशावह्निकौ गौरी गणेशोऽहिगुर्हीरविः ।
शिवोदुर्गान्तको विश्वे हरिः कामः शिवः शशी ॥
अमायाः पितरः स्मृताः ॥

(अर्थ)

तिथियों के स्वामी—प्रतिपदा का अग्नि, द्वितीया का ब्रह्मा, तृतीया की गौरी, चतुर्थी का गणेश, पञ्चमी का शेषनाग, षष्ठी का कार्तिकेय, सप्तमी का सूर्य, अष्टमी का शिव, नवमी की दुर्गा, दशमी का काल, एकादशी के विश्वेदेवा, द्वादशी का विष्णु, त्रयोदशी का काम, चतुर्दशी का शिव, पौर्णमासी का चन्द्रमा, अमावास्या के पितर ॥

अवमतिथिः

तारीख, गते तथा वार २४ घंटे के होते हैं। परन्तु तिथि सदा २४ घंटे की नहीं होती है। तिथि में वृद्धि और क्षय होते हैं। कभी कभी एक तिथि दो दिन हो जाती है कभी एक तिथि का लोप हो जाता है जिसे अवम तिथि कहते हैं यही दशा नक्षत्र और विष्कम्भादि योगों की भी है। इसका कारण यह है कि तारीख आदि सौरमान से होते हैं जिसमें २४ घंटे का दिन होता है परन्तु तिथि आदि चान्द्रमान से होते हैं। चान्द्रदिन २४ घंटा, ५४ मिनट् का होता है। सौर दिन और चान्द्रदिन में ५४ मिनट् अथवा प्राय २$\frac{1}{4}$ घडी का अन्तर होता है। चान्द्रमास २६$\frac{1}{2}$ दिन का होता है और चान्द्रवर्ष ३५४ दिन का होता है। यही कारण है कि तिथि, नक्षत्र योग घटबढ़ जाते हैं ॥

तिथीनां नन्दा दिसंज्ञाः (सिद्धान्तियश्च)—

नन्दाच भद्राच जयाच रिक्ता
पूर्णेतितिथ्योऽशुभमध्यशस्ताः ।
सितेऽसितेशस्तसमाधमाः स्युः
सितज्ञभौमार्क गुरौच सिद्धाः ॥
सिद्धा तिथिर्हन्ति समस्त दोषान् ॥

(अर्थ)

संज्ञा	तिथि			सिद्धा
नन्दा	१	६	११	शुक्रवार
भद्रा	२	७	१२	बुधवार
जया	३	८	१३	मगलवार
रिक्ता	४	६	१४	सूर्यवार
पूर्णा	५	१०	१५	बृहस्पतिवार
शुक्ल पक्ष में	अशुभ	मध्य	शुभ	(फल) सिद्धा तिथि सब दोषों का नाश करती है।
कृष्ण पक्ष में	शुभ	सम	अधम	

अधमास्तिथयः

नन्दा भद्रा नन्दिकाख्या जयाच
रिक्ता भद्रा पूर्णसंज्ञाऽधमार्कात् ।

(अर्थ)

रविवार को नन्दा तिथि, चन्द्र वार को भद्रा तिथि, मंगलवार को नन्दा तिथि, बुधवार को जया तिथि, बृहस्पतिवार को रिक्ता तिथि, शुक्रवार को भद्रा तिथि, शनिवार को पूर्णा तिथि अधम तिथि कहलाती हैं ॥

पक्षरन्ध्रास्तिथयः

चतुर्दशी चतुर्थीच अष्टमी नवमी तथा।
षष्ठीचद्वादशीचैव पक्षरंध्राह्वयाइमाः ॥

फलम्

विवाहे विधवा नारी व्रात्यःस्याच्चोपनायने ।
सीमन्ते गर्भनाशः स्यात्प्राशनेमरणं ध्रुवम् ॥
किमत्र बहुनोक्तेन कृतं कर्म विनश्यति ॥

अर्थ

चतुर्दशी, चतुर्थी, अष्टमी, नवमी, षष्ठी और द्वादशी इन तिथियों को पक्ष रन्ध्र तिथियां कहते हैं। इन तिथियों में विवाह करने से स्त्री विधवा हो जाती है, उपनयन करने से बटु व्रात्य अर्थात् संस्कार हीन हो जाता है। सीमन्त करने से गर्भ का नाश होता है, अन्नप्राशन करने से मरण होता है, बहुत कहने की आवश्यकता नहीं जो कुछ कर्म किया जाता है उसका नाश होता है॥

वर्ज्यघट्यः

एतासु वसुनन्देन्द्रतत्त्वदिक्शरसम्मिताः ।
त्याज्याः स्युरादिमा नाड्यः क्रमाच्छेषास्तु शोभनाः ॥

(अर्थ)

चतुर्थी को ८, षष्ठी को ९, अष्टमी को १४, नवमी को २५, द्वादशी को १०, चतुर्दशी को ५ घड़िया आदि की छोड़ देनी चाहिये। शेष शुभ हैं॥

दग्धास्तिथयः

चापान्त्यगे गोघटगे पतङ्गे कर्काजगे स्त्रीमिथुनस्थितेच ।
सिंहालिगे नक्रघटे समाः स्युस्तिथ्योद्वितीयाप्रमुखाश्च दग्धाः॥

(अर्थ)

दग्धातिथि

तिथि	२	४	६	८	१०	१२
राशि	९ १२	२ ११	४ १	६ ३	५ ८	१० ७

दग्धविषहुताशनयोगाः—

सूर्येशपञ्चाग्निरसाष्टनन्दा वेदाङ्गसप्ताश्विगजाङ्कशैलाः।
सूर्याङ्गसप्तोरगगोदिगीशा दग्धाविषाख्याश्च हुताशनाश्च॥

(अर्थ)

रविवार को द्वादशी, सोमवार को एकादशी, भौम को पञ्चमी, बुध को तृतीया, वृहस्पति को षष्ठी, शुक्र को अष्टमी और शनि को नवमी ये दग्ध योग होते है।

रविवार को चतुर्थी, सोमवार को षष्ठी, मङ्गल को सप्तमी, बुध को द्वितीया, वृहस्पति को अष्टमी, शुक्र को नवमी, और शनि को सप्तमी ये विषयोग होते हैं।

रविवार को द्वादशी, सोमवार को षष्ठी, मङ्गल को सप्तमी, बुध को अष्टमी, वृहस्पति को नवमी, शुक्र को दशमी और शनैश्चर को एकादशी ये हुताशन योग हैं॥

इन योगों का फल नाम सदृश है और शुभ कार्यों में वर्जित हैं॥

मासशून्यास्तिथयः—

भाद्रे चन्द्रदृशौ नभस्यनलने त्रे माधवे द्वादशी
पौषे वेदशरा इषे दशशिवा मार्गेऽद्रिनागा मधौ ।
गोऽष्टौ चोभयपक्षगाश्च तिथयः शून्या बुधैः कीर्तिता
ऊर्जाषाढतपस्यशुक्रतपसां कृष्णे शराङ्गाब्धयः ॥

(अर्थ)

भाद्रपद में प्रतिपदा और द्वितीया, श्रावण में तृतीया और द्वितीया, वैशाख में द्वादशी, पौष में चतुर्थी पञ्चमी, आश्विन में दशमी एकादशी, मार्गशीर्ष में सप्तमी अष्टमी, चैत्र में नवमी अष्टमी, ये तिथियां इन मासों के दोनों पक्षों की शून्य तिथियां कहलाती हैं । कार्तिक कृष्ण में पञ्चमी, आषाढ कृष्ण में षष्ठी, फाल्गुन कृष्ण में चतुर्थी, ज्येष्ठ कृष्ण में चतुर्दशी, माघ कृष्ण में पञ्चमी, कार्तिक शुक्ल में चतुर्दशी, आषाढ शुक्ल में सप्तमी, फाल्गुन शुक्ल में तृतीया, ज्येष्ठ शुक्ल में त्रयोदशी और माघ शुक्ल में षष्ठी, ये शून्य तिथियां हैं ॥

तिथिचक्रम्

तिथयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	३०
तिथीशाः	अग्नि	ब्रह्मा	गौरी	गणेश	शेष	स्कन्द	रवि	शिव	दुर्गा	काल	विश्वे	हरि	काम	शिव	चन्द्र	पितर
नन्दादि सज्ञा.	नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा	न	भ	ज	रि	पू	न	भ	ज	रि	पू.	
निन्दित नक्षत्र योग	उषा	अनु	उत्तरा त्रय	...	मघा	रो	ह. मू.	पूभा	कृ		रो	अ	चि. स्वा			
शून्य लग्न	तु. म		सि. म.		मि क.		ध. कर्क		कर्क सिंह		ध. मी.	...	वृष मी			
पक्षरन्ध्रतिथि (उभय पक्ष)				४		६		८	९			१२		१४		
आवश्यके वर्ज्यघट्य				८		९		१५	२५			१०		५		
दग्ध तिथि सूर्यराशि वशात्		ध मी.		वृष कु		मे. कर्क		मि. कन्या		सिं वृश्चि.		तु म.				
सव शुभ कार्यो में वर्जित योग					हस्त रवि-वार	मृग. चन्द्र	आ-श्लि म०	अनु बुध	पुष्य गु.	रे. शु.	रो. श.					

(६) वार प्रकरणम्

वाराः

आदित्यश्चन्द्रमा भौमो बुधश्चाथ बृहस्पतिः ।
शुक्रः शनैश्चरश्चैव वाराः सप्त प्रकीर्तिताः ॥

(अर्थ)

वारों के नाम—रविवार, चन्द्रवार, मङ्गल बुध बृहस्पति शुक्र, और शनैश्चर ॥

वारेशा—

शिवो दुर्गा गुहो विष्णुर्ब्रह्मेन्द्रः काल संज्ञकः ।
सूर्यादीनां क्रमादेते स्वामिनः परिकीर्तिताः ॥

(अर्थ)

वार के स्वामी—शिव, दुर्गा, कार्तिकेय, विष्णु, ब्रह्मा, इन्द्र और काल, ये क्रम से रविवार आदि वारों के स्वामी हैं ॥

वाराणां सौम्यक्रूरविवेक—

गुरुश्चन्द्रो बुधः शुक्रः शुभावाराः शुभेस्मृताः ।
क्रूरास्तु क्रूरकृत्ये स्युः सदा भौमार्कसूर्यजाः ॥

(अर्थ)

बृहस्पति, चन्द्र, बुध, और शुक्र ये शुभ वार शुभ कर्मों में काम आते हैं । मङ्गल, रविवार, और शनिवार, ये क्रूर वार हैं और क्रूर कार्यों में काम आते हैं ॥

वाराणां स्थिरादिसंज्ञा—

स्थिरः सूर्यश्चरश्चन्द्रो भौमश्चोग्रोबुधः समः ।
लघुर्जीवोमृदुः शुक्रः शनिस्तीक्ष्णः समीरितः ॥

(अर्थ)

रविवार स्थिर है, चन्द्र वार चर है, भौम वार उग्र है, बुध वार सम है, बृहस्पति वार लघु है शुक्र वार मृदु है और शनिवार तीक्ष्ण है ॥

वारप्रवृत्तिः—

दिनमानं च राज्यर्द्धं बाणेन्दुना (१५) समन्वितम् ।
दिनप्रवृत्तिर्विज्ञेया गर्गलल्लादिभाषितम् ॥

(अर्थ)

दिनमान में और रात्रि के अर्धमान मे १५ जोड देने से वार प्रवृत्ति होती है यह गर्ग और लल्ल आदि आचार्य्यों का वचन है ।

काल होरा—

गता नाड्यो द्विगुणिताः पंचभिश्च विभाजिताः ।
शेषंत्याज्यं युतश्चैक सप्ततष्टे प्रशंसितम् ।
कालहोरेति विख्याता सौम्ये सौम्यफलप्रदा ॥
सूर्यः शुक्रो बुधश्चन्द्रो मन्दजीव कुजाः क्रमात् ।
यो वारो यत्र दिवसे तदादि गणये त्क्रमात् ॥
गुरुर्विवाहे गमने च शुक्रो बोधे सौम्यः सर्व कार्येषु चन्द्रः ।
कुजश्च युद्धे धन संग्रहे शनिर्न पेक्षणे सूर्य इतीह होराः ॥
वारात्षष्ठस्य षष्ठस्य होरा सार्द्धद्वि नाडिका ॥
वारे प्रोक्तं कालहोरासु तस्य
धिष्ण्ये प्रोक्तं स्वामितिथ्यंशकेस्य ।
कुर्याद्दिक्शूलादि चिन्त्यं क्षणेषु
नैवोल्लंघ्यः परिघश्चापिदण्डः ॥

(अर्थ)

जो वार हो पहिली होरा उसी की होती है ।
२॥ घड़ी अथवा एक घंटे की एक होरा होती है ।
रात दिन में २४ होरा होती हैं ।
छठा छठा वार गिनना चाहिये ।

सूर्योदय से गत नाडियों को दूना करो, इसमें ५ का भाग दो, शेष को छोड़ दो, फिर ७ का भाग दो, जो लब्धि आवे उसको कालहोरा कहते हैं, यदि सौम्यवार की होरा आवे तो सौम्य फल देने वाली होती है। सूर्य शुक्र, बुध, चन्द्र, शनि, बृहस्पति और मङ्गल इस क्रम से काल होरा होती है जिस दिन जो वार हो उस दिन उसी वार की पहिली होरा होती है।

विवाह के समय बृहस्पति का विचार करना चाहिये, यात्रा के समय शुक्र का, दीक्षा अथवा विद्यारम्भ के समय बुध का, सब कार्यों में चन्द्रमा का, युद्ध में मङ्गल का धन संग्रह करने में शनैश्चर का, और राजदर्शन करने में सूर्य का विचार करना चाहिये।

वार से छठे, छठे की होरा होती है और हर एक की होरा २॥, २॥ घड़ी रहती है।

जिस वार में जो कर्म करने को कहा गया है उस वार की होरा में वह कर्म करना चाहिये और जिस नक्षत्र में जो कर्म करने को कहा गया है उसी के स्वामी के नवांश में वह कर्म करना चाहिये और दिशा शूल आदि का भी विचार इन कर्मों में करना चाहिये, परिघदण्ड जिसका वर्णन मुहूर्त प्रकरण में किया जावेगा कभी उल्लङ्घन नहीं करना चाहिये।

रात दिन में २४ होरा होती हैं। होरा का अर्थ यहां पर प्रभाव अथवा सामर्थ्य है॥

कालहोरा चक्रम्

घटा	घडी							
१	२-३०	सू	चं	म	बु	बृ	शु	श
२	५-०	शु	श	सू	च	म	बु	बृ
३	७-३०	बु	बृ	शु	श	सू	चं	म
४	१०-०	च	म	बु	बृ	शु	श	सू
५	१२-३०	श	सू	चं	मं	बु	बृ	शु
६	१५ ०	बृ	शु	श	सू	चं	म	बु
७	१७-३०	म	बु	बृ	शु	श	सू	च
८	२०-०	सू	च	म	बु	बृ	शु	श
९	२२-३०	शु	श	सू	च	म	बु	बृ
१०	२५-०	बु	बृ	शु	श	सू	चं	मं
११	२७-३०	च	म	बु	बृ	शु	श	सू
१२	३०-०	श	सू	च	म	बु	बृ	शु
१३	३२-३०	बृ	शु	श	सू	च	म	बु
१४	३५-०	म	बु	बृ	शु	श	सू	च
१५	३७-३०	सू	च	म	बु	बृ	शु	श
१६	४०-०	शु	श	सू	च	म	बु	बृ
१७	४२-३०	बु	बृ	शु	श	सू	च	म
१८	४५-०	च	म	बु	बृ	शु	श	सू
१९	४७-३०	श	सू	चं	मं	बु	बृ	शु
२०	५०-०	बृ	शु	श	सू	चं	म	बु
२१	५२-३०	मं	बु	बृ	शु	श	सू	च
२२	५५-०	सू	चं	मं	बु	बृ	शु	श
२३	५७-३०	शु	श	सू	च	मं	बु	बृ
२४	६०	बु	बृ	शु	श	सू	च	म

वारवेला

कृत मुनियम शर मङ्गल रामतु पुभास्करादियामार्द्धे ।
प्रभवतिहि वारवेला न शुभा शुभकार्यकरणाय ॥ १ ॥
रविः कविः कुजो राहु गुरुश्चन्द्रः शनि बुधः ।
एतेषां राहु वेलायां वारवेलाः प्रकीर्तिताः ॥ २ ॥

(अर्थ)

दिनमें चार पहर होते हैं। प्राय. ८ घड़ी का एक पहर होता है। एक पहर के आधे को यामार्द्ध कहते हैं। यह प्राय ४ घड़ी का होता है। दिन मान के घटने बढ़ने से इनमें भी अन्तर पड़ेगा। दिन के आठ भाग करने चाहियें अर्थात् दिन मे आठ यामार्द्ध होंगे। रवि वार को चतुर्थ, सोमवार को सप्तम, मगल को दूसरा, बुध को पाचवा, बृहस्पति को आठवां, शुक्र को तीसरा, शनि को छठा यामार्द्ध वारवेला होती है। इस में कोई शुभ काम नहीं करना चाहिये। प्रत्येक वार में पूर्वोक्त वेला राहु की होती है अत वर्जित है॥

———

वारवेला

(द्विारात्रावष्टमांशोवेला)

(अर्थ)

दिन रात का चौघडिया—(नाम सदृश फल) ॥ च = चर । ला = लाभ । अ = अमृत । का = काल । शु = शुभ । रो = रोग । उ = उद्वेग ॥

रवौ		चन्द्रे		भौमे		बुधे		गुरौ		शुक्रे		शनौ	
दि	रा	दि	रा	दि	रा	दि	रा	दि	रा	दि	रा	दि	रा
उ	च	अ	का	रो	उ	ला	अ	शु	रो	च	ला	का	शु
च	ला	का	शु	उ	च	अ	का	रो	उ	ला	अ	शु	रो
ला	अ	शु	रो	च	ला	का	शु	उ	च	अ	का	रो	उ
अ	का	गो	उ	ला	अ	शु	गो	च	ला	का	शु	उ	च
का	शु	उ	च	अ	का	गो	उ	ला	अ	शु	रो	च	ला
शु	रो	च	ला	का	शु	उ	च	अ	का	रो	उ	ला	अ
रो	उ	ला	अ	शु	रो	च	ला	का	शु	उ	च	अ	का
उ	च	अ	का	रो	उ	ला	अ	शु	गो	च	ला	का	शु

कालवेला

कालस्यवेला रवितः शराक्षि कालानलागाम्बुधयो गजेन्दू ।
दिने निशायामृतुवेदनेत्र नगेषु रामा विधुदन्तिनोच ॥

(अर्थ)

पूर्वोक्त वार वेला के समान दिनके ८ यामार्द्ध होते हैं। रविवार को पञ्चम, सोमवार को द्वितीय, मंगलको षष्ट, वुधको तृतीय, बृहस्पति को सप्तम, शुक्र को चतुर्थ, शनि को प्रथम तथा अष्टम मामार्द्ध कालवेला होती हैं। यह सब कालवेला दिन की हैं। रात्रि में रविवार को षष्ट, सोमवार को चतुर्थ, मगल को द्वितीय, वुध को सप्तम, बृहस्पति को पञ्चम, शुक्र को तृतीय, शनि को प्रथम तथा अष्टम यामार्ध काल रात्रि होती है॥

फलम्

यात्रायां मरणं काले वैधव्यं पाणिपीडने ।
व्रते ब्रह्मवध प्रोक्तः सर्वकर्मसु तं त्यजेत् ॥

(अर्थ)

काल वेला में यात्रा करने से मृत्यु होती है । विवाह करने मे स्त्री विधवा होती है । व्रतबन्ध करने से ब्रह्महत्या का पाप होता है । इस लिये काल वेला सब कामों मे वर्जित करनी चाहिये ॥

कुलिकादयः

कुलिक. कालवेलाच्च यमघण्टश्चकण्टकः ।
वाराद् द्विघ्नेकमान्मन्दे बुधेजीवेकुजेक्षण. ॥

(अर्थ)

वर्तमान वार से शनि पर्यन्त गिन कर दूना करने से जो अङ्क आवे उस दिन वही मुहूर्त कुलिक होता है । एवं बुध तक गिन कर दूना करने से काल वेला होती है । बृहस्पति तक गिन कर दूना करने से यमघट मुहूर्त होता है । मङ्गल तक गिन कर दूना करने से कण्टक मुहूर्त होता है । यह सब शुभ कार्यों में वर्जित हैं । दिन में १५ मुहूर्त होते हैं ।

	रवि	चन्द्र	मङ्गल	बुध	बृह	शुक्र	शनि
कुलिक	१४	१२	१०	८	६	४	२
कालवेला	८	६	४	२	१४	१२	१०
यमघट	१०	८	६	४	२	१४	१२
कंटक	६	४	२	१४	१२	१०	८
अर्धयाम	७	६	३	६	१५	५	१

(७) नक्षत्र प्रकरणम्

नक्षत्राणि—

अश्विनी भरणी चैव कृत्तिका रोहिणी मृगः ।
आर्द्रा पुनर्वसुः पुष्य स्ततोऽश्लेषा मघाततः ॥
पूर्वा फाल्गुनिका तस्मा दुत्तराफाल्गुनिका ततः ।
हस्तश्चित्रा ततः स्वाती विशाखा तदनन्तरम् ॥
अनुराधा ततो ज्येष्ठा ततो मूलं निगद्यते ।
पूर्वाषाढोत्तराषाढा अभिजिच्छ्रवण स्ततः ॥
धनिष्ठा शततारारव्यं पूर्वाभाद्रपदा ततः ।
उत्तराभाद्रपदा चैव रेवत्येतानि भानिच ॥

(अर्थ)

नक्षत्रो के नाम ये हैं—अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, अश्लेषा, मघा, पूर्वफल्गुनी, उत्तर फल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा, उत्तरभाद्रपदा, रेवती ।

कहीं कहीं अभिजित् का भी ग्रहण होता है। अभिजित् मिलाकर २८ नक्षत्र हो जाते हैं नहीं तो २७ ही नक्षत्र मुख्य गिने जाते है। किन्हीं आचार्यों का मत है कि उत्तराषाढ़ा और श्रवण के बीच में अभिजित् नक्षत्र होता है।

(आसमान में अभिजित् नक्षत्र के तारे दिखलाई देते हैं जैसा कि इस पुस्तक के प्रारम्भ में नक्षत्रों का चित्र देखने से विदित होगा । अभिजित् एक मुहूर्त का भी नाम है जो ठीक मध्याह्न में होता है जिसका वर्णन पृथक् किया जावेगा) ।

नक्षत्रेशाः

नासत्यान्तक वह्नि धातृ शशभृद्रुद्रादितीज्योरगा
ऋक्षेशाः पितरो भगोऽर्यम रवित्वष्ट्राशुगाश्चक्रमात् ।
शक्राग्नी खलु मित्र इन्द्र निऋर्ति क्षीराणिविश्वे विधि
गोविन्दोवसवोऽम्बुपाजचरणाहिर्बुध्न्यपूषाभिधा ॥

(अर्थ)

जब चन्द्रमा सूर्य से १३ $\frac{1}{3}$ अंश दूरी पर हो तो एक नक्षत्र होता है ।

नक्षत्र	स्वामी	नक्षत्र	स्वामी
अश्विनी	अश्विनी कुमार	स्वाती	वायु
भरणी	काल	विशाखा	शक्राग्नी
कृत्तिका	अग्नि	अनुराधा	मित्र
रोहिणी	ब्रह्मा	ज्येष्ठा	इन्द्र
मृगशिर	चन्द्रमा	मूल	निऋर्ति (राक्षस)
आर्द्रा	रुद्र	पूर्वाषाढा	जल
पुनर्वसु	अदिति	उत्तराषाढा	विश्वेदेवा
पुष्य	बृहस्पति	अभिजित्	ब्रह्मा
अश्लेषा	सर्प	श्रवण	विष्णु
मघा	पितर	धनिष्ठा	वसु
पूर्वा फल्गुनी	भग	शतभिषा	वरुण
उत्तरा फल्गुनी	अर्य्यमा	पूर्वा भाद्रपदा	अजैकपाद
हस्त	सूर्य	उत्तराभाद्रपदा	अहिर्बुध्न्य
चित्रा	त्वष्टा (विश्वकर्मा)	रेवती	पूषा

नक्षत्रनामानि (अङ्गल भाषायाम्)

अ	Arietes	स्वा	Arcturus (Bootes)
भ	Musca	वि	Libra
कृ	Pleiades	अनु	Scorpionis
रो	Aldebaran	ज्ये	Antares (Hydra's-head)
मृ	Orionis 1 (Orion)	मू	Scorpionis (Hercules)
आ	„ 2	पू षा	Sagittarii d
पुन	Geminorum	उ षा.	„ 1
पु	Cancri d	श्र.	Aquilas (eagle)
अश्ले	„ a	ध	Delphinus
म	Regulas	श	Aquarii
पू. फ.	Donis d	पू	Pegasi
उ फ.	„ 1	उ	Adromanac
ह.	Carvias s	रे	Piscum
चि.	Spica	अभिजित्	Lyrae

नक्षत्राणां ध्रुवादि संज्ञाः ।

कस्मिन्नक्षत्रे किं कार्यं च ।

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्चध्रुवंस्थिरम् ।
तत्रस्थिरंबीजगेह शान्त्या रामादि सिद्ध्यति ॥
स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चरचलम् ।
तस्मिन्गजादिकारोहो वाटिकागमनादिकम् ॥
पूर्वात्रयंयाम्यमघे उग्रंक्रूरं कुजस्तथा ।
तस्मिन् घाताग्नि शाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति ॥
विशाखाग्नेयभेसौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम् ।
तत्राग्निकार्यं मिश्रंचवृषोत्सर्गादिसिद्ध्यति ॥
हस्ताश्विपुष्याभिजितः क्षिप्रं लघुगुरुस्तथा ।
तस्मिन्पण्यरतिज्ञान भूषाशिल्पकलादिकम् ॥
मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्षं मृदुमैत्रंभृगुस्तथा ।
तत्रगीताम्बरक्रीड़ा मित्रकार्यं विभूषणम् ॥
मूलेन्द्रार्द्राहिभं सौरिस्तीक्ष्णंदारुण संज्ञकम् ।
तत्राभिचारघातोग्र भेदाःपशुदमादिकम् ॥

(अर्थ)

उत्तराफल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी नक्षत्र, और रविवार, इनका नाम ध्रुव और स्थिर है। इन नक्षत्रों में और इस वार में स्थिर कर्म सिद्ध होते हैं, जैसे बीज बोना, मकान बनाना, वाटिका लगाना और शान्ति कर्म आदि ॥

स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्र और चन्द्रवार की संज्ञा चर और चल है, इनमें हाथी आदि की सवारी करना, उद्यान आदि में जाना शुभ होता है ॥

पूर्वा फल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपदा, भरणी, मघा नक्षत्रों का और मङ्गल वार का नाम उग्र अथवा क्रूर हैं। इनमें मारण, आग लगाना, विष देना, शस्त्र आदि कर्म सिद्ध होते हैं॥

विशाखा, कृत्तिका नक्षत्र और बुधवार का नाम मिश्र और साधारण है। इनमे अग्निकार्य्य, मिश्र कर्म, और वृषोत्सर्ग आदि कर्म्म सिद्ध होते हैं॥

हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित् नक्षत्र और बृहस्पति वार की सञ्ज्ञा क्षिप्र अथवा लघु है। इनमें दूकान का काम, स्त्री पुरुष की मैत्री, ज्ञान, आभूषण, शिल्प कर्म आदि सिद्ध होते हैं॥

मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा नक्षत्र और शुक्रवार की सञ्ज्ञा मृदु अथवा मैत्र है। इनमें गीत गाना, वस्त्र पहिनना, क्रीडा करना, मित्र का कार्य्य, और आभूषण के कर्म सिद्ध होते हैं॥

मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, अश्लेषा नक्षत्र और शनिवार की संज्ञा तीक्ष्ण अथवा दारुण है। इनमें अभिचार (जादू), घात, उग्र कर्म्म, और पशुओं का दमन इत्यादि कर्म सिद्ध होंते हैं॥

नक्षत्राणामधोमुखादि सञ्ज्ञाः

मूलाहिमिश्रोग्रमधोमुखंभवे
दूर्ध्वास्यमार्द्रेज्यहरित्रय ध्रुवम्।
तिर्यङ्मुखं मैत्रकरानिलादिति
ज्येष्ठाश्विभानीदृशकृत्यमेषुसत्॥

अर्थ

मूल, अश्लेषा, मिश्र, और उग्रनक्षत्रों की अधोमुख (नीच मुख) सञ्ज्ञा है। आर्द्रा, पुष्य, श्रवण धनिष्ठा, शतभिषा, नक्षत्रों की ऊर्ध्वास्य (ऊपर को मुख) सञ्ज्ञा है। अनुराधा, हस्त, स्वाती, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, अश्विनी, नक्षत्रों की तिर्यङ्मुख (तिरछा मुख) सञ्ज्ञा है। इन नक्षत्रों

में ऐसा ही काम भी करना चाहिये, जैसे यदि कुआ खोदना है तो अधोमुख नक्षत्रों में आरम्भ करना चाहिये ॥

नक्षत्राणामन्धादिसंज्ञाः

अन्धाक्षश्चिपटाक्षश्च काणाक्षोदिव्यलोचनः ।
गणयेद्रोहिणीपूर्वं सप्तवारमनुक्रमात् ॥

(अर्थ)

रोहिणी नक्षत्र से यथाक्रम सात आवृत्ति नक्षत्रों की करने से अन्धलोचन, मन्दलोचन, काणलोचन और सुलोचन संज्ञा होती हैं। चक्र में समझ लेना चाहिये (इनका विचार प्रश्नाध्याय में चोरी हुई वस्तु के बतलाने में काम आवेगा) ॥

रो.	पु	उफा	वि	पूषा	ध	रे	अधलोचन
मृ	अश्ले.	ह	अनु	उषा	शत	अ	मन्दलोचन
आ	म	चि	ज्ये	अभि	पूभा	भर	काणलोचन
पुन.	पूफा	स्वा	मू	श्र	उभा	कृ	सुलोचन

द्विपुष्करत्रिपुष्कर योगौ—

भद्रा तिथौ रविज भूतनयार्कवारे
द्वीशार्यमाजचरणादितिवह्नि वैश्वे ।
त्रैपुष्करो भवति मृत्यु विनाश वृद्धौ
त्रैगुण्यदो द्विगुणकृद्वसुतक्षचान्द्रे ॥

(अर्थ)

भद्रा तिथि (द्वितीया, सप्तमी, और द्वादशी) शनैश्चर, मङ्गल, और रविवार, विशाखा, उत्तरा फल्गुनी, पूर्वाभाद्रपदा, पुनर्वसु, कृत्तिका और उत्तराषाढा नक्षत्र, इन तीनों के आपस में मिलने से त्रिपुष्कर योग होता है, वह मृत्यु विनाश और वृद्धि में तिगुना फल देता है। (जैसे यदि त्रिपुष्कर योग में कोई वस्तु खोई जाय तो उसका फल यह है कि तीन वस्तु खोई जांय)। भद्रा तिथि, शनि, भौम, और रविवार

तथा धनिष्ठा, चित्रा, और मृगशिर नक्षत्र के योग से द्विपुष्कर योग होता है इसका फल दो गुना होता है ॥

पञ्चके वर्ज्याणि—

वासवोत्तर दलादि पञ्चके —
याम्यदिग्गमनं गृहगोपनम् ।
प्रेतदाहतृणकाष्ठसंचयं
शय्यकावितरणं च वर्जयेत् ॥

(अर्थ)

धनिष्ठा नक्षत्र का उत्तरार्ध, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा और रेवती इन नक्षत्रों को पञ्चक कहते हैं। दक्षिण दिशा की यात्रा, घर का छावना, प्रेतदाह, घास लकडी का इकट्ठा करना और खाट का बुनवाना, ये कर्म पञ्चकों में वर्जित हैं ॥

पञ्चकादिफलम् —

पञ्चके पञ्च गुणितं त्रिगुणंच त्रिपुष्करे ।
यमले द्विगुणं सर्वं हानीष्टव्याधिकं भवेत् ॥

पञ्चकों मे हानि, लाभ और व्याधि पचगुना होता है, त्रिपुष्कर में तेगुना, द्विपुष्कर में दोगुना होता है ॥

अभिजित्प्रशंसा—

शङ्कु मूले यदा छाया मध्याह्ने च प्रजायते ।
तदाचाभिजिदाख्याता घटिकैका स्मृता बुधैः ।
जातोऽभिजिति राजास्याद् व्यापारे सिद्धिरुत्तमा ॥

(अर्थ)

जब मध्याह्न में शङ्कु के मूल में छाया आ जाती है तब एक घडी का अभिजित मूहूर्त होता है, अभिजित मूहूर्त में उत्पन्न होने से राजयोग होता है और उस मूहूर्त में व्यापार करने से बडी सिद्धि होती है ॥

दग्धनक्षत्राणि—

याम्यं त्वाष्ट्रं वैश्वदेवं धनिष्ठा
र्यम्णं ज्येष्ठान्त्यं रवेर्दग्धभंस्यात् ॥

(अर्थ)

रविवार को भरणी, सोमवार को चित्रा, मङ्गलवार को उत्तराषाढ़ा, बुधवार को धनिष्ठा, बृहस्पतिवार को उत्तराफल्गुनी, शुक्रवार को ज्येष्ठा, और शनिवार को रेवती नक्षत्र होने से दग्धनक्षत्र हो जाते हैं ॥

शून्य नक्षत्राणि

कदास्रभे त्वाष्ट्रवायू विश्वेज्यौ भगवासवौ।
विश्वश्रुती पाशिपौष्णे अजपाद्याग्निपित्र्यभे ॥
चित्राद्वीशौ शिवाश्व्यर्काः श्रुति मूले यमेन्द्रभे।
चैत्रादिमासे शून्याख्या स्तारावित्तविनाशदाः ॥

(अर्थ)

चैत्र मे रोहिणी और अश्विनी, वैशाख में चित्रा और स्वाती, ज्येष्ठ मे उत्तराषाढा और पुष्य, आषाढ मे पूर्वाफल्गुनी और धनिष्ठा, श्रावण मे उत्तराषाढा और श्रवण, भाद्रपद मे शतभिषा और रेवती, आश्विन में पूर्वाभाद्रपदा, कार्तिक में कृत्तिका और मघा, मार्गशीर्ष में चित्रा विशाखा, पौष में आर्द्रा अश्विनी और हस्त, माघ में श्रवण और मूल, फाल्गुन में भरणी और ज्येष्ठा, शून्य नक्षत्र हैं, इनमें कार्य्य करने से धन का नाश होता है ॥

अन्तरङ्ग बहिरङ्गनक्षत्राणि

सूर्यभादुडुगणं पुनः पुनर्गण्यतामिति चतुष्टयं त्रयम्।
अन्तरंग बहिरंगसंज्ञकं तत्र कर्म विदधीत तादृशम् ॥

(अर्थ)

सूर्य के नक्षत्र से ४ और ३ इस प्रकार गिनने से अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग नक्षत्र होते हैं और उन में वैसा ही कर्म भी करना चाहिये। जैसे पशुओं को अन्तरङ्ग नक्षत्रों मे लाना चाहिये और बहिरङ्ग नक्षत्रों में बाहर भेजना चाहिये ॥

नक्षत्र राशि विभागः

सप्तविंशतिभैर्ज्योतिश्चक्रं स्तिमितवायुगम् ।
तदर्कांशोभवेद्राशिर्नवर्क्षचरणाङ्कितः ॥
अश्विनी भरणी कृत्तिका पादोमेषः ।
कृत्तिकाया स्त्रयः पादा रोहिणी मृगशिरोऽर्द्धं वृषः ।
मृगशिरोऽर्धमार्द्रा पुनर्वसुपादत्रयं मिथुनम् ।
पुनर्वसुपाद एक पुष्याश्लेषान्तंकर्कः ।
मघा पूर्वफल्गुन्युत्तरफल्गुनी पाद. सिंहः ।
उत्तरफल्गुन्या स्त्रयः पादा हस्त चित्रार्धं कन्या ।
चित्रार्धं स्वाति विशाखा पादत्रयं तुला ।
विशाखापाद एकोऽनुराधाज्येष्ठान्तं वृश्चिक· ।
मूल पूर्वाषाढोत्तराषाढा पादो धन्वी ।
उत्तराषाढाया स्त्रय· पादा·श्रवण धनिष्ठार्धं मकर ।
धनिष्ठार्धं शतभिषा पूर्वभद्रपदा पादत्रयं कुम्भः ।
पूर्वभद्रपदा पाद एक उत्तरभद्रपदा रेवत्यन्तं मीन· ।

(अर्थ)

(एक नक्षत्र के चार चरण होते हैं। अर्थात् एक नक्षत्र चार भागों में बांटा जाता है। इस रीति से २७ नक्षत्रों के २७×४=१०८ भाग हुए। २७ नक्षत्रों की मिलकर १२ राशिया होती हैं। इसलिये ९ चरणों की एक राशि हुई।)

अश्विनी, भरणी, कृत्तिका के एक चरण तक मेष राशि होती है।

कृत्तिका के तीन चरण रोहिणी पूरा और मृगशिर के दो चरण तक वृषराशि होती है।

मृगशिर के दो चरण आर्द्रा नक्षत्र पूरा और पुनर्वसु के तीन चरण तक मिथुन राशि होती है।

पुनर्वसु का एक चरण पुष्य और अश्लेषा के अन्त तक कर्क राशि होती है।

मघा पूर्वफल्गुनी और उत्तर फल्गुनी के एक चरण तक सिंह राशि होती है।

उत्तर फल्गुनी के तीन चरण हस्त पूरा और चित्रा के दो चरण तक कन्या राशि होती है।

चित्रा के दो चरण स्वाती और विशाखा के तीन चरण तक तुला राशि होती है।

विशाखा का एक चरण अनुराधा और ज्येष्ठा के अन्त तक वृश्चिक राशि होती है।

मूल पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा के एक चरण तक धन राशि होती है।

उत्तराषाढ़ा के तीन चरण श्रवण और धनिष्ठा के दो चरण तक मकर राशि होती है।

धनिष्ठा के दो चरण शतभिषा और पूर्वभद्रपदा के तीन चरण तक कुम्भराशि होती है।

पूर्वभद्रपदा का एक चरण उत्तरभद्रपदा और रेवती के अन्त तक मीन राशि होती है॥

नक्षत्र चार.—

पुनर्वसुर्मृगश्चार्द्रा ज्येष्ठा मैत्रं कर स्तथा।
पूर्वाषाढोत्तराषाढे मूलं दक्षिण चारिण॥
कृत्तिका रोहिणी पुष्य श्चित्राश्लेषाचरेवती।
शतं धनिष्ठा श्रवणो नव मध्यम चारिण॥
अश्विनी भरणी स्वाती विशाखा फल्गुनीद्वयम्।
मघा भाद्रपदायुग्मं नव चोत्तर चारिणः॥

(अर्थ)

पुनर्वसु, मृगशिर, आर्द्रा, ज्येष्ठा, अनुराधा, हस्त, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा और मूल इन नक्षत्रों के तारे आकाश में दक्षिण दिशा की ओर दिखलाई देते हैं।

कृत्तिका, रोहिणी, पुष्य, चित्रा, अश्लेषा, रेवती, शतभिषा, धनिष्ठा, और श्रवण ये नौ नक्षत्र आकाश के मध्य में दिखलाई देते हैं।

अश्विनी, भरणी, स्वाती, विशाखा, पूर्वफल्गुनी, उत्तरफल्गुनी, मघा, पूर्वभद्रपदा, और उत्तरभद्रपदा ये नौ नक्षत्र उत्तर में दिखलाई देते हैं॥

गण्डान्तः—

चतुर्घटी मूल मघाश्विनाद्यै
गण्डान्त मन्तेच फणीन्द्रपौष्णे॥

(अर्थ)

मूल, मघा और अश्विनी नक्षत्र की आदि की दो घडी तथा अश्लेषा, ज्येष्ठा और रेवती के अन्त की दो घडी सब मिलाकर चार घडी का गण्डान्त होता है॥

अश्विन्यादि नक्षत्र ताराणां संख्या

त्रित्र्यंग पंचाग्नि कुवेद वह्नयः
शरेषु नेत्राश्वि शरेन्दु भूकृताः।
वेदाग्नि रुद्राश्वि यमाग्निवह्नयो
ऽब्धयः शत द्विद्वि रदा भतारकाः॥

(अर्थ)

अश्विनी के ३, भरणी के ३, कृत्तिका के ६, रोहिणी के ५, मृगशिर के ३, आर्द्रा का १, पुनर्वसु के ४, पुष्य के ३, अश्लेषा के ५, मघा के ५, पूर्वफल्गुनी के २, उत्तरफल्गुनी के २, हस्त के ५, चित्रा का १, स्वाती का १, विशाखा के ४, अनुराधा के ४, ज्येष्ठा के ३, मूल के ११, पूर्वाषाढ़ा के २, उत्तराषाढा के २, अभिजित के ३, श्रवण के ३, धनिष्ठा

के ५, शतभिषा के १००, पूर्वाभाद्रपदा के २, उत्तरभाद्रपदा के २, रेवती के ३२, यह नक्षत्रों के तारों की संख्या है ॥

नक्षत्राणां रूपाणि

अश्व्यादि रूपं तुरगास्ययोनी
क्षुरोऽनपणास्य मणि गृहंच ।
पृषत्कचक्रे भवनं च मञ्चः
शय्या करो मौक्तिक विद्रु मंच ॥
तोरणं चलिनिभंच कुण्डलं
सिंह पुच्छ गज दन्त मञ्चकाः ।
त्र्यस्त्रिचत्रिचरणाभमर्दलौ
वृत्तमञ्च यमलाभमर्दलाः ॥

(अर्थ)

अश्विनी नक्षत्र का स्वरूप घोड़े के मुख के समान है, भरणी का योनि के समान, कृत्तिका का छुरे के समान, रोहिणी का शकट (गाड़ी) के समान, मृगशिर का हरिण के मुख के समान, आर्द्रा का मणि के समान, पुनर्वसु का गृह के समान, पुष्य का बाण के समान, अश्लेषा का चक्र के समान, मघा का भवन के समान, पूर्वफल्गुनी का मञ्च (चारपाई) के समान, उत्तराफल्गुनी का शय्या के समान, हस्त का हाथ के समान, चित्रा का मोती के समान, स्वाती का विद्रुम (मूंगा) के समान, विशाखा का तोरण (फाटक) के समान, अनुराधा का बलि (भात की बलि) के समान, ज्येष्ठा का कुण्डल के समान, मूल का सिंह पुच्छ के समान, पूर्वाषाढ़ा का हाथीदांत के समान, उत्तराषाढ़ा का मञ्च के समान, अभिजित का त्रिकोण के समान, श्रवण का वामन रूप तीन चरणों के समान, धनिष्ठा का मृदङ्ग के समान, शतभिषा का वृत्त के समान, पूर्व भद्रपदा का मञ्च के समान, उत्तरभद्रपदा का यमल (जुड़े हुए दो बालकों) के समान और रेवती का मृदङ्ग के समान, स्वरूप जानना चाहिये ॥

विषघट्यः

(१) नक्षत्र विष घट्यः		(२) वार-विष घट्यः	(३) तिथि-विष घट्यः
अ. ५०.	अनु. १०	सू. २०	१-१५
भ. २४	ज्ये १४	च. २	२-५
कृ. ३०	मू. ५६	म. १२	३-८
रो. ४०	पूषा. २४	बु १०	४-७
मृ १४	उषा २०	बृ. ७	५-७
आ. २१	श्र. १०	शु ५	६-११
पुन. ३०	ध. १०	श २५	७-४
पु. २०	श. १८		८-८
अश्ले ३२	पूभा. १६		९ ७
म. ३०	उभा. २४		१०-१०
पूफा. २०	रे ३०		११-३
उफा १८			१२-१३
ह. २१			१३-१४
चि २०			१४-७
स्वा. १४			१५-८
वि. १४			

जैसे अश्विनी नक्षत्र में ५० घड़ी उपरान्त ५४ घड़ी तक विष घड़ी हैं। रविवार को २० घडी उपरि २४ घडी तक विष घड़ी हैं। प्रतिपदा को १५ घडी के उपरान्त १९ घडी तक विष घडी हैं। एव सर्वत्र जानना। विष घडी सर्वत्र ४ घडी तक रहती हैं। शुभ कामो में वर्जित हैं। जन्म मे भी अशुभ फल कारक हैं। यदि नक्षत्र ६० घडी पूरा न हो तो त्रैराशिक लगाना चाहिये। यदि चन्द्रमा केन्द्र त्रिकोण मे बली हो अथवा लग्नेश शुभयुक्त केन्द्र में हो तो विष घटी दोष नहीं होता है॥

तारा

जन्मर्क्षाद्दिनभं यावद्गणयेन्नवभिर्भजेत् ।
शेषा तारा प्रकीर्तिता ॥
जन्म सम्पद्विपत्क्षेम प्रत्यरिः साधको वधः ।
मैत्रातिमित्रास्तारा स्युस्त्रिरावृत्त्यान्वयेवहि ॥
जन्मतारा द्वितीयाच षष्ठी चैव चतुर्थिका ।
अष्टमी नवमी चैव षडेतास्तु शुभावहाः ॥
त्रीण्यद्रिभ मसत्स्मृतम् ।
यद्यस्यान्सबलश्चन्द्र स्तथापिक्लेशदायिनी ।
तृतीया पञ्चमी तारा सप्तमी च न्टणां भवेत् ॥
कृष्णे बलवती तारा शुक्लपक्षेतु चन्द्रमाः ।
सदा ग्राह्या बुधैरेवं कृष्णे तारा न चन्द्रमाः ॥
(प्रथमावृत्तौ दोषाधिक्यं, द्वितीया वृत्तौदोषाल्पता, तृतीयावृत्तौदोष हानिः । आवश्यकेलवणादिदानम्)

(अथ)

जन्म नक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गिनो और ९ का भाग दो जो शेष बचे उसी को तारा जानो ॥

ताराओं के नाम यह हैं —जन्म, सम्पत्, विपत्, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, वध, मैत्र, और अतिमैत्र । २७ नक्षत्रों की ३ आवृत्ति करने से ये ९ तारा होती हैं ॥

जन्मतारा, दूसरी, छठी, चौथी, आठवीं और नवीं, यह ६ तारा शुभ होती हैं, ३, ५, और ७ अशुभ होती हैं, यद्यपि चन्द्रमा बलवान् हो तथापि तीसरी, पाचवीं, और सातवीं तारा मनुष्यों को कष्ट देने वाली होती हैं ॥

कृष्णपक्ष में तारा का बल लेना चाहिये और शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा का बल विचार करना चाहिये, कृष्णपक्ष मे तारा का बल देखना चाहिये न कि चन्द्रमा का ॥

(तारा की प्रथम आवृत्तिमे अधिक दोष होता है। द्वितीय आवृत्ति मे दोष कम हो जाता है, तृतीय आवृत्ति में बहुत ही कम दोष रहता है।

आवश्यक में दूसरी और तीसरी आवृत्ति की तारा को ग्रहण करते हैं और दोष परिहार के लिये वध तारा में सुवर्ण तिल, विपत् में गुड़, प्रत्यरि में लवण का दान शास्त्रों में लिखा है) ॥

(८) तिथिवारर्क्ष योगप्रकरणम्

अमृतसिद्धियोगः—

हस्तः सूर्ये मृगः सोमे वारे भौमे तथाश्विनी।
बुधे मैत्रं गुरौ पुष्यो रेवती भृगुनन्दने ॥
रोहिणी सूर्यपुत्रे च सर्वसिद्धिप्रदायकः।
असावमृतसिद्धिश्च योगः प्रोक्तः पुरातनैः ॥

(अर्थ)

रविवार को हस्त नक्षत्र, सोमवार को मृगशिर, मङ्गलवार को अश्विनी, बुधवार को अनुराधा, बृहस्पति वार को पुष्य, शुक्र वार को रेवती, और शनि को रोहिणी नक्षत्र होने से अमृतसिद्धि योग होता है और यह योग सब प्रकार की सिद्धि देने वाला होता है ॥

सवर्तक योगः—

सप्तम्यां च रवेर्वारो बुधस्य प्रतिपद्दिने।
संवर्ताख्य स्तदायोगो वर्जितव्य सदाबुधैः ॥

(अर्थ)

रविवार को सप्तमी हो और बुधवार को प्रतिपदा हो तो सम्वर्त नाम योग होता है इसको सदा वर्जित करना चाहिये ॥

यमदंष्ट्र योगः—

मघा धनिष्ठा सूर्येतु चन्द्रे मूल विशाखके ।
कृत्तिका भरणी भौमे सौम्ये पूषा पुनर्वसुः ॥
गुरौ पूषाश्विनी शुक्रे रोहिणी चानुराधिका ।
शनौ विष्णुः शतभिष्ग्यमदंष्ट्राः प्रकीर्तिताः ॥

(अर्थ)

रविवार को मघा या धनिष्ठा हो, चन्द्रवार को मूल या विशाखा हो, मङ्गल वार को कृत्तिका या भरणी हो, बुधवार को पूर्वाषाढ़ा या पुनर्वसु हो, बृहस्पति वार को रेवती या अश्विनी हो, शुक्रवार को रोहिणी या अनुराधा हो, शनिवार को श्रवण या शतभिषा हो तो यमदंष्ट्र योग हो जाता है इसमें शुभ कर्म वर्जित करने चाहियें ॥

मृत्युयोगाः—

नन्दा सूर्ये मङ्गलेच भद्रा भार्गवसोमयोः ।
बुधे जया गुरौ रिक्ता शनौ पूर्णा च मृत्युदा ॥

(अर्थ)

रवि और मङ्गल वार को नन्दा तिथि हो, शुक्र और सोमवार को भद्रा तिथि हो, बुधवार को जया तिथि हो, बृहस्पति वार को रिक्ता तिथि हो, शनिवार को पूर्णा तिथि हो, तो मृत्यु योग होता है, इसमें सब शुभ कर्म वर्जित करने चाहियें ॥

क्रकच योगः—

तिथ्यङ्केन समायुक्तो वाराङ्को यदि जायते ।
त्रयोदशाङ्कः क्रकचो योगो निन्द्य स्तदाबुधैः ॥

(अर्थ)

यदि तिथि और वार का अङ्क मिलाकर तेरह हो जाय तो क्रकच योग बन जाता है । यह सब कार्यों में निन्दित है (जैसे सप्तमी तिथि

और शुक्रवार इन दोनों की संख्या मिला कर ७+६=१३ होने से क्रकच योग बन जावेगा, एवम् और भी जानो) ॥

सर्वार्थ सिद्धियोगः—

सूर्येऽर्क मूलोत्तरपुष्यदास्रं
चन्द्रे श्रुति ब्राह्म शशीज्य मैत्रम् ।
भौमेऽश्व्यहि बुध्न्य कृशानु सार्पं
ज्ञे ब्राह्म मैत्रार्क कृशानु चान्द्रम् ॥
जीवेऽन्त्यमैत्राश्व्यदितीज्य धिष्ण्यं
शुक्रेऽन्त्य मैत्रा श्व्यदिति श्रवोभम् ।
शनौ श्रुति ब्राह्म समीर भानि
सर्वार्थ सिद्ध्यै कथितानि पूर्वैः ॥

(अर्थ)

रविवार को हस्त, मूल, तीनों उत्तरा, पुष्य और अश्विनी नक्षत्र हों, चन्द्रवार को श्रवण, रोहिणी, मृगशिर, पुष्य और अनुराधा हों, मङ्गलवार को अश्विनी, अश्लेषा, उत्तराभाद्रपदा, कृत्तिका और अश्लेषा हों, बुधवार को रोहिणी, अनुराधा, हस्त, कृत्तिका, मृगशिर हों, बृहस्पतिवार को रेवती, अनुराधा, अश्विनी पुनर्वसु और पुष्य हों, शुक्रवार को रेवती, अनुराधा, अश्विनी, पुनर्वसु और श्रवण हों, शनिवार को श्रवण, रोहिणी और स्वाती नक्षत्र हों तो सर्वार्थ सिद्धि योग बनता है, इसमें काम करने से सब काम सिद्ध होते हैं ॥

ज्वालामुखीयोग —

चतुर्थी चोत्तरा युक्ता मघायुक्तातु पञ्चमी ।
अनुराधया तृतीयातु नवम्यासह कृत्तिका ॥
अष्टमी रोहिणीयुक्ता योगो ज्वाला मुखाभिध ।
त्याज्योऽयं शुभ कार्येषु गृह्यते त्वशुभेषुन. ॥

(अर्थ)

चतुर्थी के दिन उत्तरा, पञ्चमी के दिन मघा तृतीया के दिन अनुराधा, नवमी के दिन कृत्तिका, अष्टमी के दिन रोहिणी होने से ज्वालामुख योग होता है। शुभ कार्यों में वर्जित है, अशुभ कार्यों में ग्रहण किया जाता है॥

यमघण्टयोग —

सूर्यादिवारे तिथयो भवन्ति मघाविशाखा शिव मूल वह्निः।
ब्राह्मं करोऽर्कोद्यमघण्टकाश्च शुभे विवर्ज्या गमने त्ववश्यम्॥

(अर्थ)

रविवार को मघा, चन्द्रवार को विशाखा, मङ्गल को आर्द्रा, बुध को मूल, बृहस्पति को कृत्तिका, शुक्र को रोहिणी, शनिवार को हस्त होने से यमघण्ट योग हो जाता है, यह शुभ काम में वर्जित करना चाहिये॥

वर्ज्यनाड्य —

यमघण्टे त्यजेदष्टौ मृत्यौ द्वादशनाडिका।
अन्येषां पाप योगानां मध्याह्नात्परतः शुभम्॥

(अर्थ)

यमघण्ट में ८ घड़िया, मृत्यु योग में १२ घड़िया वर्जित करनी चाहियें, और पाप योगों में मध्याह्न के उपरान्त अशुभ फल नहीं रहता॥

अशुभयोगादीना परिहारः—

पङ्ग्वन्ध काण लग्नानि मास शून्याश्च राशय।
गौडमालवयोस्त्याज्या अन्यदेशेन गर्हिताः॥
कुयोगा स्तिथि वारोत्थास्तिथिभोत्थाभवारजाः।
हूण वङ्ग खसेष्वेव वर्ज्यास्त्रितयजास्तथा॥
मृत्युक्रकचदग्धादीनिन्दौशस्ते शुभाञ्जगुः॥
केचिद्यामोत्तरं चान्ये यात्रायामेव निन्दितान्॥

वारर्क्ष तिथि योगेषु यात्रा मेव विवर्ज येत् ।
विवाहादीनि कुर्वीत गर्गादीना मिदं वचः ॥
विरुद्ध योगा स्तिथि वार जाता
नक्षत्र वार प्रभवाश्च येच ।
हूणेषु वंगेषु खसेषु वर्ज्याः
शेषेषु देशेषु नते निषिद्धाः ॥
कुयोगः सिद्धि योगश्च यदि स्याता मुभावपि ।
सुयोगो हन्ति दुर्योगं कार्य सिद्धौ शुभावहः ॥

(अथ)

पगु, अन्ध और काण लग्न तथा मास शून्य राशिया गौड और मालव देशों में वर्जित हैं और देशों में वर्जित नहीं हैं ।

तिथि और वार से बने हुए योग अथवा तिथि और नक्षत्र से उत्पन्न अथवा नक्षत्र और वारों से उत्पन्न दुष्ट योग केवल हूण, वङ्ग और खस देशों में वर्जित हैं ।

यदि चन्द्रमा शुभ हो तो मृत्यु, क्रकच, दग्ध आदि योगों का अशुभ फल नहीं रहता, कुछ आचार्य्यों का यह मत है कि एक पहर के वाद इन योगों का दुष्ट फल नहीं रहता है, अन्य आचार्य्य कहते हैं कि यह योग केवल यात्रा ही में निन्दित हैं ।

वार, नक्षत्र और तिथियों के योग को केवल यात्रा ही मे वर्जित करना चाहिये, विवाह आदि कर्म्म इन योगों में करने चाहियें गर्ग आदि आचार्य्यो का यह वचन है ।

तिथि और वार से उत्पन्न अथवा नक्षत्र और वार से उत्पन्न दुष्ट योगों को केवल हूण वङ्ग और खस देशों में वर्जित करना चाहिये और देशों में वे निषिद्ध नहीं है । यदि दुष्ट योग और सिद्धि योग दोनों एक साथ पडें तो अच्छा योग बुरे योग के फल को मार देता है और कार्य्य सिद्धि में शुभ फल देना है ॥

तिथिवारनक्षत्रोत्थयोगचक्रम्

	रविवार	चन्द्रवार	मङ्गल	बुध	बृ.	शु.	श.
सिद्धियोग			जया ३-८-१३	भद्रा २ ७-१२	पूर्णा ५-१०-१५	नन्दा १-६-११	रिक्ता ४-९-१४
अधमयोग	नंदा	भद्रा	नंदा १-६ ११	जया३ -८-१३	रिक्ता	भद्रा	पूर्णा
मृत्युयोग	नन्दा	भद्रा	नन्दा	जया	रिक्ता	भद्रा	पूर्णा
दग्ध नक्षत्र	भरणी	चित्रा	उषा	धनि	उफा	ज्ये	रे
क्रकच योग	१२द्वादशी	११	१०	९	८	७	षष्ठी
संवर्तक योग	सप्तमी			प्रतिपदा			
दग्धयोग	द्वादशी	एकादशी	पंचमी	तृतीया	षष्ठी	अष्टमी	नवमी
विषयोग	चतुर्थी	षष्ठी	सप्तमी	द्वितीया	अष्टमी	नवमी	सप्तमी
हुताशन योग	द्वादशी	षष्ठी	सप्तमी	अष्टमी	नवमी	दशमी	एकादशी
यमघण्ट योग	मघा	विशाखा	आर्द्रा	मूल	कृत्तिका	रोहिणी	हस्त
उत्पात योग	विशाखा	शतभिषा	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उफा
मृत्यु योग	अनु.	पूभा	शत	अश्वि	मृग	अश्ले	हस्त
काण योग	ज्येष्ठा	उभा	पूभा	भर	आर्द्रा	मघा	चित्रा
यमदंष्ट्र योग	म. धनि.	मू. वि.	कृ. भ	पूषा. पुन.	रे. अश्वि.	रो. अनु.	श्र.शत.
सर्वार्थसिद्धियोग	ह मू.उत्तरा त्रय.पुष्य. अश्वि	अ. रो मृ. पुष्य अनु.	अश्वि. उभा. कृ. अश्ले.	रो. अनु. ह. कृ. मृग.	रे.अनु. अश्वि. पुष्य. पुन	रे. अनु. अश्वि. पुन. श्र.	श्र. रो. स्वा.

(९) योग-करणप्रकरणम्

विष्कम्भादि योगाः

विष्कम्भ· प्रीति रायुष्मान्सौभाग्य· शोभनस्तथा ।
अतिगण्डः सुकर्माच धृतिः शूलस्तथैवच ॥
गंडो वृद्धि र्ध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणस्तथा ।
वज्रः सिद्ध र्व्यतीपातो वरीयान्परिघः शिवः ॥
सिद्धः साध्य· शुभः शुक्रो ब्रह्माऐन्द्रश्चवैधृतिः ।
सप्तविंशतियोगास्तु कुर्युर्नामसमं फलम् ॥

(अर्थ)

विष्कम्भादियोगों के नाम यह है·—विष्कम्भ, प्रीति, आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्म्मा, धृति, शूल, गण्ड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र, सिद्धि, व्यतीपात, वरीयान्, परिघ, शिव, सिद्ध, साध्य, शुभ, शुक्र, ब्रह्मा, ऐन्द्र, और वैधृति, यह १७ योग हैं और अपने नाम के समान फल देते हैं ॥

वर्ज्ययोगाः

विरुद्ध संज्ञा इहयेच योगा
स्तेषामनिष्टः खलु पाद आद्यः ।
सवैधृतिस्तु व्यतिपातनामा
सर्वोप्यनिष्टः परिघस्य चार्द्धम् ॥
तिस्रस्तु योगे प्रथमे च वज्रे
व्याघात संज्ञे नवपंचशूले ।
गंडेऽतिगंडेचषडेवनाड्यः
शुभेषुकार्येषु विवर्जनीयाः ॥

(अर्थ)

इन योगों में खराब नाम वाले जो योग है इनका पहिला चरण अनिष्ट कारक होता है परन्तु वैधृति और व्यतीपात नाम वाले जो योग हैं इनके चारों चरण और परिघ योग के दो चरण अनिष्ट हैं ।।

किन्हीं आचार्यों का मत है कि विष्कम्भ और वज्रयोग में तीन नाडियां, व्याघात योग में ६ नाडिया, शूल योग में ५ नाडियां, और गण्ड तथा अतिगण्ड योगों मे ६ नाडिया शुभ कार्यों में वर्जित करनी चाहिये ।।

विष्कम्भादियोगज्ञानोपायः

यस्मिन्नृक्षे स्थितो भानुर्यत्रतिष्ठति चन्द्रमाः ।
एकीकृत्यत्यजेदेकं योगा विष्कम्भकादयः ॥

(अर्थ)

विष्कम्भादि योग जानने का उपाय यह है कि जिस नक्षत्र मे सूर्य्य हो और जिस नक्षत्र मे चन्द्रमा हो उन दोनों को जोडके १ घटा देने से विष्कम्भादि योग बन जाते हैं ।।

(सूर्य और चन्द्रमा की गति के योग करने से यह योग बनते हैं) ॥

आनन्दादियोगाः

आनन्दाख्यः कालदण्डश्चधूम्रो
धाता सौम्योध्वांक्षकेतू क्रमेण ।
श्रीवत्साख्यो वज्रकं मुद्गरश्च
छत्रं मित्रं मानसं पद्म लुम्बौ ॥
उत्पातमृत्यू किल काणसिद्धी
शुभोऽमृताख्यो मुसलं गदश्च ।
मातङ्गरक्षश्चर सुस्थिराख्यः
प्रवर्द्धमानाः फलदाः स्वनाम्ना ॥

(अर्थ)

आनन्दादि योगों के नाम.—आनन्द, कालदण्ड, धूम्र, धाता, सौम्य, ध्वांक्ष, केतु, श्रीवत्स, वज्र, मुद्गर, छत्र, मित्र, मानस, पद्म, लुम्ब, उत्पात, मृत्यु, काण, सिद्धि, शुभ, अमृत, मुसल, गद, मातङ्ग, रक्ष, चर, सुस्थिर, और प्रवर्धमान। ये योग अपने नाम के समान फल देने वाले हैं ॥

आनन्दादि योग ज्ञानोपायः

दास्रादर्के मृगादिन्दौ सार्पाद्भौमे कराद्बुधे।
मैत्राद्गुरौभृगौवैश्वाद् गण्या मन्दे च वारुणात् ॥

(अर्थ)

आनन्दादि योग जानने का उपाय यह है कि रविवार को अश्विनी नक्षत्र से गिने, सोमवार को मृगशिर से गिने, मङ्गलवार को अश्लेषा से गिने, बुध को हस्त से गिने, बृहस्पति वार को अनुराधा से गिने, शुक्र वार को उत्तराषाढ़ा से गिने, और शनिवार को शतभिषा से गिने ॥

(रविवार को अश्विनी हो तो आनन्द योग, भरणी हो तो कालदण्ड, इत्यादि। इसी प्रकार से सोमवार को मृगशिर हो तो आनन्द, आर्द्रा हो तो कालदण्ड, इत्यादि जानना चाहिये) ॥

वर्ज्यनाड्यः

ध्वांक्षे वज्रे मुद्गरे चेषुनाड्यो
वर्ज्यावेदाः पद्म लुम्बे गदे ऽश्वाः।
धूम्रे काणे मौसले भूर्द्वयंद्वे
रक्षो मृत्यूत्पातकालाश्चसर्वे ॥
ध्वांक्ष मुद्गर वज्राणां घटीपञ्चक मादिषु।
काण मौसलयोर्द्वे द्वे चतस्रः पद्मलुम्बयोः ॥
एका धूम्रे गदेसप्त चरेतिस्रो घटीस्त्यजेत्।
त्यजेत्सर्वान् शुभे मृत्युकालोत्पाताख्यराक्षसान् ॥

(अर्थ)

ध्वाङ्क्ष मुद्गर और वज्र योगों में आदि की ५ घडियां, काण और मुशल योगों को दो दो घडिया, पद्म और लुम्ब योगों की चार चार घड़िया वर्जित करनी चाहियें ॥

धूम्र योग में एक घड़ी, गद योग में ७ घडिया, चरयोग में ३ घडिया छोडनी चाहियें। मृत्यु, काल, उत्पात और राक्षस योगों की सब घडिया शुभ कार्य्यों में वर्जित करनी चाहियें ॥

करणानि

गततिथ्योद्विनिघ्नाश्च शुक्ल प्रतिपदादितः।
एकोनाःसप्तहृच्छेषाः करणंस्याद्ववादिकम् ॥
ववश्चबालवश्चैव कौलवस्तैतिलस्तथा।
गरश्चवणिजोविष्टिः सप्तैतानिचराणिच ॥
कृष्णपक्षेचतुर्दश्यां शकुनिः पश्चिमेदले।
चतुष्पादश्चनागश्च अमावास्या दलद्वये ॥
शुक्लप्रतिपदायास्तु किंस्तुघ्नः प्रथमेदले।
स्थिराण्येतानिचत्वारि करणानि जगुर्बुधाः ॥
शुक्लप्रतिपदान्ते च ववाख्यः करणो भवेत्।
एकादशैव ज्ञेयानि चर स्थिर विभागतः ॥

(अर्थ)

करण निकालने की रीति यह है कि शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ करके गत तिथियों को २ से गुणन करना चाहिये। गुणनफल

में से १ घटा कर शेष में ७ का भाग देने से बव आदि करण निकल आते हैं।

करणों के नाम ये हैं—बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज, विष्टि ये ७ करण चर हैं। कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के पर भाग में शकुनि करण होता है। अमावास्या के पहिले भाग में चतुष्पाद और दूसरे भाग में नाग करण होते हैं। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के प्रथम भाग में किंस्तुघ्न करण होता है। ये ४ करण स्थिर होते हैं। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के दूसरे भाग में बव करण होता है। इस प्रकार से चर और स्थिर मिल कर ११ करण होते हैं॥

विष्टि करणं वर्ज्यम्

नसिद्धि मायाति कृतं च विष्ट्यां
विषारिघातादिषु तंत्र सिद्धिः॥

(अर्थ)

विष्टि करण में किया हुआ काम सिद्ध नहीं होता है परन्तु विष, घात आदि तान्त्रिक कर्मों में सिद्धि होती है॥

(१०) भद्राप्रकरणम्

भद्रा

शुक्ले पूर्वार्धेऽष्टमी पञ्चदश्यो
र्भद्रैकादश्यां चतुर्थ्यां परार्धे।
कृष्णेन्त्यार्धे स्यात्तृतीया दशम्योः
पूर्वे भागे सप्तमी शम्भुतिथ्योः॥

(अर्थ)

शुक्ल पक्ष की अष्टमी और पौर्णमासी के पूर्वार्धं में तथा एकादशी और चतुर्थी के परार्ध में, एव कृष्ण पक्ष की तृतीया और दशमी के परार्धं में और सप्तमी तथा चतुर्दशी के पूर्वार्द्ध में भद्रा होती है॥

स्वर्ग पाताल भूलोकगा भद्रा

मेषत्रयालिगे चन्द्रे भद्रा स्वर्लोक चारिणी।
कन्याद्वये धनुर्युग्मे चन्द्रे भद्रा रसातले॥
कुम्भे मीने तथा कर्के सिंहे चन्द्रे भुविस्थिता।
भूर्लोकस्था सदा त्याज्या स्वर्ग पातालगा शुभा॥

(अर्थ)

मेष, वृष, मिथुन, और वृश्चिक के चन्द्रमा होने पर भद्रा स्वर्गलोक में रहती है, कन्या, तुला धन और मकर के चन्द्रमा होने पर भद्रा पाताल में रहती है, कुम्भ, मीन, कर्क और सिंह के चन्द्रमा होने पर भद्रा भूलोक मे रहती है। जब भद्रा का निवास भूलोक में हो तो उसको सदा वर्जित करना चाहिये, परन्तु जब स्वर्ग और पाताल में हो तो वह शुभ होती है॥

भद्रा फलम्—

स्वर्गे भद्रा धनं धान्यं पातालेच धनागमः।
मृत्युलोके यदा भद्रा कार्यसिद्धिस्तदा नहि॥

(अर्थ)

जब स्वर्ग मे भद्रा हो तो धन और धान्य मिलते हैं, जब पाताल में हो तो धन की प्राप्ति होती है, परन्तु जब मृत्यु लोक में हो तो कार्य्य की सिद्धि नहीं होती है॥

भद्राया मुख पुच्छादयः—

मुखे पञ्च गलेत्वेका वक्षस्येकादश स्मृताः।
नाभौ चतस्रः षट्कट्यां तिस्रः पुच्छाख्य नाडिकाः॥

(अर्थ)

भद्रा की ५ नाड़ी मुख में होती है, १ गले में, ११ छाती में, ४ नाभि में, ६ कमर में, ३ पुच्छ में॥

भद्राया मुखपुच्छादिफलम्—

कार्यहानिर्मुखे मृत्युर्गले वक्षसि निःस्वता ।
कट्या मुन्मत्तता नाभौ च्युतिः पुच्छे ध्रुवो जयः ॥

(अर्थ)

भद्रा के मुख में काम करने से कार्य हानि होती है, गले में काम करने से मृत्यु होती है, छाती में काम करने से दारिद्र होता है, कमर में काम करने से उन्मत्तता होती है, नाभि में च्युति होती है, और पुच्छ में जय होता है ॥

अत्यावश्यके परिहारः—

कार्येऽत्यावश्यके विष्टे मुखमात्रं परित्यजेत् ॥

(अर्थ)

यदि अति आवश्यक काम हो तो भद्रा के केवल मुख मात्र को छोड़ देना चाहिये ॥

वृश्चिकी सर्पिणी भद्रा—

शुक्ले तु वृश्चिकी भद्रा कृष्णपक्षे भुजंगमा ।
सा दिवा सर्पिणी रात्रौ वृश्चिकी त्वपरे जगुः ॥
मुखं त्याज्यं तु सर्पिण्या वृश्चिक्याः पुच्छमेव च ॥

(अर्थ)

शुक्ल पक्ष की भद्रा का नाम वृश्चिकी है, कृष्णपक्ष की भद्रा का नाम सर्पिणी है। कोई आचार्य कहते हैं कि दिन में जो भद्रा है वह सर्पिणी है, रात्रि में जो भद्रा है वह वृश्चिकी है। क्योंकि सर्प के मुख में विष रहता है इसलिये सर्पिणी भद्रा का मुख छोड देना चाहिये, और वृश्चिक की पूंछ में विष रहता है इसलिये वृश्चिकी भद्रा का पुच्छ छोड़ देना चाहिये ॥

भद्रा मंगलकार्येषु वर्ज्या

नकुर्यान्मङ्गलं विष्ट्यां जीविातार्थी कदाचन ।

(अर्थ)

जो मनुष्य जीवित रहना चाहे तो भद्रा में कभी शुभ कर्म न करे। (विष्टि भद्रा को कहते हैं, एक करण का नाम भी विष्टि है। वस्तुत दोनों एक ही पदार्थ हैं।)

केषु कर्मसु भद्रा ग्राह्या

युद्धे भूपति दर्शने—
वैद्यस्यागमने जल प्रतरणे शत्रो स्तथोच्चाटने
स्त्री सेवा क्रतुमज्जनेषु शकटे भद्रा सदा गृह्यते ॥

(अर्थ)

नीचे लिखे हुए कर्म्मों में भद्रा का ग्रहण किया जाता है :—

युद्ध में, राजदर्शन में, वैद्य बुलाने में, जल को तरने में, शत्रु का उच्चाटन करने में, स्त्री सेवा करने में, यज्ञ स्नान करने में और गाढ़ी की सवारी में ॥

(११) मुहूर्त प्रकणम्

मुहूर्तादिविभागः—

घटिकाद्वयम् = एको मुहूर्तः
दिवसे = १५ मुहूर्ताः
रात्रौ = १५ मुहूर्ताः

प्रातः संगवादि परिभाषा—

दिवा ३ मुहूर्ताः = प्रातः कालः
३ ,, = संगवः

३ मुहूर्ताः = मध्याह्नः
३ ,, = अपराह्णः
३ ,, = सायाह्नः

(अर्थ)

प्रायः दो घड़ी का १ मुहूर्त होता है। रात दिन के घटने बढ़ने से कुछ पलों का अन्तर हो जाता है। १५ मुहूर्त दिन में होते हैं और १५ मुहूर्त्त रात्रि में होते हैं। दिन में सूर्य्योदय से ३ मुहूर्त पर्यन्त प्रातः काल होता है, उसके उपरान्त ३ मुहूर्त पर्यन्त सङ्गव होता है, उसके उपरान्त ३ मुहूर्त्त पर्यन्त मध्याह्न होता है, उसके उपरान्त ३ मुहूर्त पर्यन्त अपराह्न होता है, तदुपरान्त ३ मुहूर्त पर्यन्त सायङ्काल होती है॥

प्रदोषादि परिभाषा—

उदयात्प्राक्तनी सन्ध्या घटिकात्रयमुच्यते।
सायंसन्ध्यात्रिघटिका अस्तादुपरि भास्वतः॥
त्रिमुहूर्तः प्रदोषः स्याद्रवावस्तंगते ततः।
महानिशा निशीथस्य मध्यस्थघटिका द्वयम्॥
उषः कालः पंच पंच सप्त पंचा रुणोदय.।
अष्टपञ्च भवेत्प्रातः शेषः सूर्योदयः स्मृतः॥

(अर्थ)

सूर्य्योदय से तीन घड़ी पर्यन्त प्रात: सन्ध्या कहलाती है। सूर्य्यास्त से ३ घड़ी पर्यन्त सायं सन्ध्या कहलाती है। सूर्य्यास्त से ३ मुहूर्त पर्यन्त प्रदोष कहलाता है। अर्द्ध रात्र की मध्य की २ घड़ियां महानिशा कहलाती हैं। ५५ घडी में उष काल, ५७ में अरुणोदय, ५८ में प्रातः काल, तदनन्तर सूर्य्योदय कहलाता है॥

दिवा मुहूर्ताः—

१ २ ३ ४ ५ ६ ७
गिरिश भुजग मित्राः पित्र्य वस्वम्बु विश्वेऽ
८ ९ १० ११
भिजिदथच विधाता पीन्द्र इन्द्रानलौच ।
१२ १३ १४ १५
निर्ऋति रुदकनाथोऽप्यर्यमाथोभगः स्युः
क्रमश इह मुहूर्ता वासरे बाणचन्द्राः ॥
(इन्द्रानलौ = इन्द्राग्नी । उदकनाथः = वरुणः)

रात्रि मुहूर्ताः—

१ २—९ १० ११
शिवोऽजपादादृष्टांस्य भंशाश्विदिनिजीवकौ ।
१२ १३ १४ १५
विष्णवर्क त्वाष्ट्र मरुतो मुहूर्ता निशिकीर्तिताः ॥
(अजैकपात् = पूर्वाभाद्रपदा)

२	३	४	५	६	७	८	९
पू.भा	उभा.	र	अ.	भ.	कृ	रो.	मृ.
अजैकपाद्	अहिर्बुध्न्य.	पूषा	दास्र	यम	अग्नि	ब्रह्म	चंद्र.

निषिद्ध मुहूर्ताः—

रव्यावर्यमा ब्रह्म रक्षश्चसोमे
कुजेवह्निपित्र्ये बुधेचाभिजित्स्यात् ।
गुरौतोयरक्षो भृगौ ब्राह्म पित्र्ये
शनावीश सार्पौ मुहूर्ता निषिद्धाः ॥

(अथ)

दिन मे १५ मुहूर्त होते हैं उनके नाम यह हैं :—

(१) गिरिश (२) भुजग (३) मित्र (४) पित्र्य (५) वसु (६) अम्बु (७) विश्वे (८) अभिजित् (९) विधाता (१०) इन्द्र (११) इन्द्राग्नी (१२) निर्ऋति (१३) वरुण (१४) अर्य्यमा (१५) भग ।

रात्रि में भी १५ मुहूर्त होते हैं उनके नाम यह हैं—

(१) शिव (२) अजैकपाद् (३) अहिर्बुध्न्य (४) पूषा (५) दास्र (६) यम (७) अग्नि (८) ब्रह्मा (९) चन्द्र (१०) अदिति (११) जीव (१२) विष्णु (१३) अर्क (१४) त्वाष्ट्र (१५) मरुत् ।

रविवार के दिन अर्य्यमा मुहूर्त, चन्द्रवार के दिन ब्रह्म और रत्त, मङ्गल के दिन वह्नि और पित्र्य, बुध के दिन अभिजित्, बृहस्पति के दिन जल और रत्त, शुक्र के दिन ब्रह्म और पित्र्य, शनि के दिन ईश और सार्प, ये मुहूर्त निषिद्ध हैं ॥

(१२) संक्रान्ति प्रकरणम्

सूर्य सक्रातिः

संक्रांतिकाला दुभयत्र नाडिकाः
पुण्या मताः षोडशषोडशोष्णगोः ।
निशीथतोऽर्वागपरत्र सङ्क्रमे
पूर्वापराहान्तिमपूर्वभागकौ ॥
पूर्णे निशीथे यदि संक्रमःस्या
द्दिनद्वयं पुण्य मथोदयास्तात् ।
पूर्वं परस्ता द्यदियाम्यसौम्या
यने दिने पूर्वपरे तु पुण्ये ॥
संध्यात्रिनाडी प्रमितार्क बिम्बा
दर्धोदितास्तादध ऊर्ध्वमत्र ।
चेद्याम्य सौम्ये अयने क्रमात्स्तः
पुण्यौ तदानीं परपूर्वघस्रौ ॥

विषुव संक्रान्तिः=तुलाजौ विषुवम् ।
अयन संक्रान्तिः=(सौम्य) याम्यायनं मकर
कर्कद्वयोनिरुक्तम् ॥
संक्रान्ति वस्त्राशन वाहनादे
र्नाशश्च तद्वृत्त्युपजीविनांच ॥

(अर्थ)

जिस समय में सूर्य्य सक्रान्ति हो उससे आगे और पीछे सोलह, सोलह घड़ी तक पुण्य काल होता है । अर्द्धरात्रि से पहिले यदि सक्रान्ति हो तो पहिले दिन के पिछले दो पहर पुण्य काल होते हैं, यदि अर्द्ध-रात्रि के उपरात संक्रान्ति हो तो दूसरे दिन का पूर्व भाग पुण्य काल होता हैं ।

यदि ठीक अर्द्धरात्र में सक्राति हो तो दोनों दिन पुण्य काल होता है । दक्षिणायन अर्थात् कर्क संक्राति सूर्य्योदय से पहिले हो तो पहिला दिन पुण्य काल होता है और जा सूर्य्यास्त के उपरांत उत्तरायण अर्थात् मकर सक्राति हो तो पर दिन पुण्य काल होता है ।

सूर्य्य विम्ब से आधे उदय होने के पहिली ३ घडी, और विम्ब के आधे अस्त होने की पिछली ३ घड़ी सन्ध्या समय होता है । जो प्रातः सन्ध्या में कर्क की संक्रान्ति हो तो दूसरा दिन पुण्य काल होता है और सायं सन्ध्या में मकर की सक्रान्ति हो तो पूर्व दिन पुण्य काल होता है ॥

मेष और तुला सक्रान्ति को विषुव सक्रान्ति कहते हैं । मकर और कर्क सक्रान्ति को अयन संक्रान्ति कहते हैं ।

संक्रान्ति में जो वस्त्र, भोजन, वाहन, आजीविका करने वालों का नाम लिखा रहता है उसका यह अर्थ है कि उस महीने में उन पदार्थों का नाश होता है ॥

विषुवत्सङ्क्रान्ति विचारः—

सप्त शीर्षे मुखेत्रीणि त्रितयं कर पादयोः ।
हृदये पञ्चधिष्ण्यानि विषुवत्पुरुषेन्यसेत् ॥
यथा-पुष्यनक्षत्रे संक्रान्तिः । तर्हिसंक्रान्त्यधर नक्षत्रात्. त्रीणिनक्षत्राणि—अर्थात् अश्लेषा. मघा. पूर्व फल्गुनी. नक्षत्राणि वामपादे पतितानि—इत्यादि ज्ञेयम्

वामपादे	३	नक्षत्राणि
दक्षिण पादे	३	,,
वामकरे	३	,,
दक्षिणकरे	३	,,
हृदये	५	,,
मुखे	३	,,
शीर्षे	७	,,
	२७	,,

फलम्

कपाले भूपाल स्तदनुवदने पंडित वरो
धनाध्यक्षोवक्षस्यनुपमवधू दक्षिण करे ।
करे वामे भैक्ष्यं भ्रमण मथवा दक्षिण पदे
पदे वामे मृत्यु र्भवति निज नक्षत्र गणनात् ॥
(वामपादे निज नक्षत्र पतने शान्ति र्विधेया)

(अर्थ)

विषुवत् संक्रान्ति का एक नराकार चक्र बनाना चाहिये, उसके सिर पर ७ नक्षत्र, मुख में ३ नक्षत्र, हाथ और पैरों में ३, ३, नक्षत्र, हृदय में ५ नक्षत्र रखने चाहिये ॥

उदाहरण:—मान लो कि पुष्य नक्षत्र में विषुवत् संक्रान्ति होती है तो एक नक्षत्र छोड़ कर विचार करना चाहिये। अर्थात् अश्लेषा, मघा पूर्वफल्गुनी यह तीन नक्षत्र वाम पाद में पड़ेंगे इत्यादि—

बाएं पैर में	३ नक्षत्र
दाहिने पैर में	३ ,,
बाएं हाथ में	३ ,,
दाहिने हाथ में	३ ,,
छाती पर	५ ,,
मुख में	३ ,
सिर पर	७ ,
	२७ नक्षत्र,

इसका फल यह है कि यदि सिर पर संक्रान्ति पड़े तो भूमि लाभ हो, मुख में होने से विद्या लाभ हो, छाती में होने से धन की प्राप्ति हो, दाहिने हाथ में होने से स्त्री लाभ हो बाएं हाथ में होने से भिक्षा मांगनी पड़े. दाहिने पैर में होने से देश भ्रमण हो और बांए पैर में होने से मृत्यु होती है (मृत्यु शब्द का अर्थ दशाध्याय में देखना चाहिये)। यह विचार अपने जन्म नक्षत्र से होता है॥

(यदि बाएं पैर में संक्रांति जावे तो शान्ति करनी चाहिये)

अन्य संक्रान्ति विचार —

संक्रान्तिधिष्ण्याधरधिष्ण्यनस्त्रिभे
खभे निरुक्तं गमनं ततोऽङ्ग भे।
सुखं त्रिभे पीडन मङ्ग भेंऽशुकं
त्रिभेऽर्थहानी रसभे धनागमः॥

(अर्थ)

विषुवत्संक्रान्ति को छोड कर अन्य संक्रान्तियों का विचार इस प्रकार किया जाता है कि संक्रान्ति के नक्षत्र को छोड़कर उसके नीचे वाले नक्षत्र से अपने जन्म नक्षत्र तक गिनती करे। यदि ३ नक्षत्र भीतर अपना नक्षत्र आवे तो उसका फल गमन है। तदुपरान्त ६ नक्षत्र तक सुख मिलता है, फिर ३ नक्षत्र तक पीड़ा होती है, फिर ६ नक्षत्रों तक वस्त्र का लाभ होता है, फिर ३ नक्षत्रों तक धन की हानि होती है, फिर ६ नक्षत्रों तक धन की प्राप्ति होती है ॥

शुभकार्येषुवर्ज्यघटिकादयः—

अयने विषुवेत्याज्यंपूर्वमध्यंपरं दिनम् ।
शेषसंक्रमणेपूर्वं पश्चाच्छोडशनाडिकाः ॥

(अर्थ)

अयन और विषुवत् संक्रान्तियों मे पूर्व मध्य और पर दिन शुभ कार्य्यों में वर्जित करने चाहियें, शेष संक्रान्तियों मे संक्रान्ति से पहिले और पीछे सोलह, सोलह, घडी वर्जित करनी चाहियें ॥

अन्य ग्रह संक्रान्तिषु वर्ज्यघट्यः—

देवद्व्यङ्कर्तवोऽष्टाष्टौ नाड्योऽङ्काः खनृपाः क्रमात् ।
वर्ज्याः संक्रमणेऽर्कादेः प्रायोऽर्कस्यातिनिन्दिताः ॥

(अर्थ)

सूर्य संक्रम से पूर्वापर की ३३ घटी, चन्द्रमा के संक्रम मे २, मङ्गल के संक्रम में ९, बुध के संक्रम में ६, बृहस्पति के संक्रम में ८८, शुक्र के संक्रम में ९, शनि के संक्रम में १६० घटी, शुभ कार्य्यो मे वर्जित हैं, विशेषतः सूर्य की अतिनिन्दित हैं ॥

———

(१३) राशिप्रकरणम्

द्वादश राशि नामानि

मेषो वृषोऽथमिथुनं कर्कटः सिंह कन्यके ।
तुलाथ वृश्चिको धन्वी मकरः कुम्भमीनकौ ॥

(अर्थ)

१२ राशियों के नाम यह हैं :—(१) मेष (२) वृष (३) मिथुन (४) कर्क (५) सिंह (६) कन्या (७) तुला (८) वृश्चिक (९) धन (१०) मकर (११) कुम्भ (१२) मीन ॥

राशीश्वराः —

मेष वृश्चिकयोर्भौमः शुक्रो वृषतुलाधिपः ।
कन्या मिथुनयोः सौम्यः कर्क स्वामी च चन्द्रमाः ॥
सिंहस्याधिपतिः सूर्यो गुरुस्तु धन मीनयोः ।
शनिर्नक्रस्य कुम्भस्य कथितोगणकोत्तमैः ॥

(अर्थ)

मेष और वृश्चिक राशियों का स्वामी मङ्गल है। वृष और तुला राशियों का स्वामी शुक्र है। कन्या और मिथुन राशियों का स्वामी बुध है। कर्क राशि का स्वामी चन्द्रमा है। सिंह राशि का स्वामी सूर्य है। धन और मीन राशियों का स्वामी बृहस्पति है। मकर और कुम्भ राशियों का स्वामी शनैश्चर है ॥

राशि पर्यायाः—

मेराजवस्तं प्रथमं क्रियश्च वृषोक्षगो तावुरिशुक्रभंच ।
बौधं नृयुग्मं जितुमं तृतीयं चान्द्रं कुलीरं चचतुर्थराशिम् ॥
सिंहस्य कंठीरवलेय संज्ञे पाथोन पष्ठी त्ववला च तन्वी ।
जूको वणिक्सतम तौलिसंज्ञाः कौर्प्योऽष्टमं कोजमलेस्तुसंज्ञाः ॥
जैवं धनुस्तौक्षिक चापसंज्ञं त्वाकोकरंस्याद्दशमं च चक्रम् ।
हृद्रोगकुम्भौ घट राशि संज्ञे मीनोऽन्त्यपश्चान्तिमरिष्फसंज्ञः ॥

(अर्थ)

मेष राशि के पर्याय अर्थात् दूसरे नाम यह हैं:—अज, वस्त, प्रथम और क्रिय। वृष राशि के पर्याय उक्षा, गो, तावुरि शुक्र का गृह। मिथुन के पर्याय बुध का गृह नृयुग्म और जितुम। कर्क के पर्य्याय चन्द्रमा का गृह और कुलीर। सिंह राशि के पर्य्याय कंठीरव और लेय। कन्या के पर्य्याय पाथोन, अबला और तन्वी। तुला के पर्याय जूक, वणिक् और तौलि। वृश्चिक के पर्याय कौर्प्य, मङ्गल का घर और अलि। धन के पर्याय वृहस्पति का घर, तौक्षिक और चाप। मकर के पर्याय आकेकर और चक्र। कुम्भ के पर्याय हृद्रोग और घट। और मीन के पर्याय झष, अन्तिम और रिष्फ॥

राशीना मन्य भाषासु नामानि

संस्कृत	अङ्ग्रेजी	अरबी
मे०	Aries	हमल
वृ०	Taurus	सोर
मि०	Gemini	जौजा
क०	Cancer	सरतान
सि०	Leo	असद्
क०	Virgo	समबला
तु०	Libra	मीजा
वृ०	Scorpio	अकरब
ध०	Sagittarius	कोस
म०	Capricornis	जद्दी
कु०	Aquarius	दलू
मी०	Pisces	हूत

शून्यराशयः

घटो झषोगो मिथुनं मेष कन्यालि तौलिनः ।
धनुः कर्कोमृगः सिंह श्चैत्रादौ शून्य राशयः ॥

(अर्थ)

चैत्र के महीने में कुम्भ, वैशाख में मीन, ज्येष्ठ में वृष, आषाढ़ में मिथुन, श्रावण में मेष, भाद्रपद में कन्या, आश्विन में वृश्चिक, कार्तिक में तुला, मार्गशीर्ष मे धन, पौष में कर्क, माघ में मकर, फाल्गुन में सिंह ये शून्य राशिया हैं ॥

शून्य लग्नानि—

प्रतिपदि तुला मकरौ सिंह मकरौ तृतीयायाम् ।
कन्या मिथुनं पञ्चम्यां सप्तम्यां चैव धनुः कर्कौ ॥
नवम्यां कर्क सिंहा वेकादश्यां तु धनुर्मीनौ ।
त्रयोदश्यां वृषभमीनौ शून्य लग्नानि तिथियोगात् ॥

(अर्थ)

प्रतिपदा के दिन तुला और मकर, तृतीया के दिन सिंह और मकर, पञ्चमी के दिन कन्या और मिथुन, सप्तमी के दिन धन और कर्क, नवमी के दिन कर्क और सिंह, एकादशी के दिन धन और मीन, त्रयोदशी के दिन वृष और मीन शून्य लग्न होते हैं ॥

पङ्ग्वन्ध वधिर लग्नानि—

धस्रे तुलाली वधिरौ मृगाश्वौ
रात्रौच सिंहाज वृषा दिवान्धाः ।
कन्या नृयुक्कर्कटका निशान्धा
दिनेघटोऽन्त्यो निशिपङ्गु संज्ञः ॥

(अर्थ)

दिन में तुला और वृश्चिक लग्न वधिर (वहिरे) होते हैं, रात में मकर और धन लग्न वधिर होते हैं । सिंह, मेष और वृष लग्न दिन में अन्धे होते

हैं, कन्या, मिथुन, और कर्क लग्न रात में अन्धे होते हैं, दिन में कुम्भ और रात में मीन लग्न पंगु अर्थात् लूले होते हैं ॥

कालाङ्गानि—

कालाङ्गानि वराङ्गमाननमुरो हृत्क्रोडवासोभृतो
वस्तिर्व्यञ्जन मूरु जानुयुगले जङ्घे ततोऽङ्घ्रिद्वयम् ॥

अथवा---

शीर्षाननौ तथा बाहू हृत्क्रोडकटिवस्तयः ।
गुह्योरुयुगले जानु युग्मे वै जंघके तथा ।
चरणौ द्वौ तथा लग्ना ज्ञेयाः शीर्षादयः क्रमात् ॥

(अर्थ)

कालाङ्ग इस प्रकार से होते हैं (लग्न से अथवा मेष से)

लग्न	सिर	मे.
दूसरा स्थान	मुख	वृ.
तीसरा स्थान	बाहु (छाती)	मि.
चौथा स्थान	चित्त	क.
पाचवां स्थान	गोद	सि.
छठा स्थान	कमर	क.
सातवा स्थान	वस्ति (पेट)	तु.
आठवा स्थान	गुह्य	वृ.
नवां स्थान	जाघ	ध.
दसवा स्थान	घुटना	म.
ग्यारहवा स्थान	टाग	कु.
बारहवा स्थान	पैर	मी.

मे Head सिर (अथवा लग्न से)
वृ. neck गर्दन
मि Arms हाथ
क. Breast हृदय
सिं. Heart चित्त
क. Bowels आंत
तु. Reins पेट
वृ Loin गुह्य
ध. Thighs जांघ
म. Knees घुटना
कु. Legs टांग
मी. Feet पैर

जैसे किसी के जन्मपत्र में सूर्य मेष का हो, मेष का सूर्य उच्च का होता है और मेष सिर को बतलाता है, इस लिये वह मनुष्य बड़ी मस्तिष्क वाला होगा और मस्तिष्क द्वारा वह रुपया पैदा करेगा। वह मन्त्री आदि हो सकता है।

राशिस्वरूपाणि—

चरस्थिरद्विस्वभावाः क्रूराक्रूरौ नरस्त्रियौ।
पित्तानिलत्रिधात्वैक्यं श्लैष्मिकाश्च क्रियादय ॥
रक्तवर्णो बृहद्गात्र श्चतुष्पाद्रात्रिविक्रमी।
पूर्ववासी नृपज्ञातिः शैलचारी रजोगुणी ॥
पृष्ठोदयः पावकीच मेषराशिः कुजाभिधः ॥
श्वेतः शुक्राधिपो दीर्घ श्चतुष्पाच्छर्वरीवली।
याम्येट् ग्राम्यो वणिग्भूमी रजः पृष्ठोदयो वृषः ॥
शीर्षोदयं नृमिथुनं सगदं च सवीणकम्।
प्रत्यक् शमी द्विपाद्रात्रि बली ग्राम्यो व्रजोऽनिली ॥
समगात्रोहरिद्वर्णो मिथुनाख्यो बुधाधिपः।
पाटलो वनचारी च ब्राह्मणो निशि वीर्यवान्।
बहुपादुत्तरः स्थूल तनुः सत्त्वगुणी जलम् ॥

पृष्ठोदयः कर्कराशि मृगाङ्कोऽधिपतिः स्मृतः ॥
सिंहः सूर्याधिपः सत्त्वी चतुष्पात्क्षत्रियो बली ।
शीर्षोदयो बृहद्गात्रः पाण्डुः पूर्वेट् द्युवीर्यवान् ॥
पार्वतीयाथ कन्याख्या राशिर्दिनबलान्विता ।
शीर्षोदयाच मध्याङ्गा द्विपाद्याम्यचराचला ॥
ससस्यदहना वैश्या चित्रवर्णा प्रभञ्जिनी ।
कुमारी तमसा युक्ता बालभावा बुधाधिपा ॥
शीर्षोदयो द्युवीर्याढ्यस्तुलः कृष्णो रजोगुण. ।
पश्चिमो भूचरोघाती शूद्रोमध्यतनुर्द्विपात् ॥
शुक्राधिपोऽथ स्वल्पाङ्गा बहुपाद्ब्राह्मणो बली ।
सौम्यस्था दिनवीर्याढ्यः पिशङ्गो जलभूवहः ॥
रोमस्वाढ्योऽतितीक्ष्णाङ्गा वृश्चिकश्च कुजाधिपः ॥
पृष्ठोदयस्त्वथ धनुर्गुरुस्वामी च सात्त्विकः ।
पिङ्गलो निशि वीर्याढ्यः पावकः क्षत्रियो द्विपात् ॥
आदावन्ते चतुष्पादः समगात्रो धनुर्धरः ॥
पूर्वस्थो वसुधाचारी तेजस्वी निशि वीर्यवान् ।
मन्दाधिपस्तमो भूमि याम्येट् पृष्ठोदयस्तथा ॥
मकरस्तु बृहद्गात्रः कर्बुरोवनभूचरः ।
आदौ चतुष्पादन्तेतु विपदो जलगोमतः ॥
कुम्भः कुम्भी नरो बभ्रुवर्णो मध्यतनुर्द्विपात् ।
द्युवीर्योजलमध्यस्थो वातः शीर्षोदयस्तमः ॥
शूद्रः पश्चिमदेशस्य स्वामी दैवाकरिः स्मृतः ॥
मीनौ पुच्छास्यसंलग्नौ मीनराशिर्दिवाबली ।
जलं सत्त्वगुणाढ्यश्च स्वस्थो जलचरो द्विजः ॥
अपदो मध्यदेही च जीवस्वाम्युभयोदयः ॥

पुनरपि राशिस्वरूपाणि—

(१) सिंहादिचतुष्क युग्मकुम्भाः शीर्षोदयाः ।
मीन उभयोदयः ।
शेषाः पृष्ठोदयाः ।
पृष्ठोदया धनुर्मेषो मकरो वृषकर्कटौ ।
उभयोदयवान्मीन स्ततोऽन्ये मस्तकोदयाः ॥
गोऽजाश्वि कर्कमिथुनाः समृगा निशाख्याः
पृष्ठोदया विमिथुनाः कथितास्तएव ।
शीर्षोदया द्विनबलाश्च भवन्ति शेषा
लग्नं समेत्युभयतः पृथुरोमयुग्मम् ॥

(२) सिंहादि चतुष्कं दीर्घम् । सिं क तु. वृश्चि
कुम्भादि चतुष्कं ह्रस्वम् । कुं. मी मे. वृ.
शेषाः समाः । मि. कर्क. ध. म

(३) कर्कघटैणझषालितुलाः सजलाः ।
शेषाः शुष्काः ।

(४) ५ । २ । १ । धनस्य परार्धम् । मकरस्यपूर्वार्धम्
=चतुष्पाद राशय
४ । ८=वहुपाद राशयः
११ । १२=पादहीन राशयः
मि. कु तु कन्या धन पूर्वार्धम्=द्विपद राशयः

(५) मकरोत्तरार्धम्+मीनः=जलचारिणौ
कर्कः=कीटः
वृश्चिकः=सरीसृपः

(६) म. कुं=अर्धशब्द राशय
तु वृ कर्क मी =शब्दरहित राशयः
१ । २ । ३ । ५ । ६=सशब्दराशयः

(७) अल्पप्रजासंग राशय । मे. सिं. कन्या, तु. ध. म.
मध्यप्रजासंग राशयः । वृष. मि. कुं.
बहुप्रजासंग राशयः । कर्क. वृश्चिक. मी.

(८) मेषसिंहधनुषोऽग्नयः ।
वृषकन्यामृगा भूमयः ।
मिथुनतुलाकुम्भा वायवः ।
कर्कवृश्चिकमीना जलानि ।
अग्निवायुराशीनां मिथो मैत्री
भूमिजलराशीनां मिथो मैत्री } परतः शत्रुता
धराम्बुनोरग्निसमीरयोश्च वर्गेसुहृत्त्वंपरतोऽरिभावः ॥

(९) पुंस्त्री क्रूराक्रूरौ चरस्थिर द्विस्वभाव संज्ञाश्च ।
विषमोऽथ समः ।

चरराशयः	१ । ४ । ७ । १०
स्थिरराशयः	२ । ५ । ८ । ११
द्विस्वभावराशयः	३ । ६ । ९ । १२

मे. मि. सिं. तु ध कुं =पुरुषराशयः, क्रूराः, विषमाः ।
वृष कर्क. कन्या वृ. म मी =स्त्री राशयः, सौम्या, समाः ।
पुरुष राशेः पुरुष राशीनां मैत्री. स्त्रीणां स्त्रिया ॥

(१०) नृपविट्शूद्र भूदेवा स्तथा पूर्वादिका दिशः ।
मेषात्त्रिः परिवर्तेन विज्ञेया विबुधैः सदा ॥
प्रागादीशाः क्रिय वृषनृयुक्कर्कटाः सत्रिकोणाः ॥
(११) पित्तानिलौ धातुसमः कफश्चत्रिर्मेषत. सूरिभि रूहनीयाः ।
राजन्यविट्शूद्रधरासुराश्च सर्वफलंराश्यनुसारतः स्यात् ॥
(१२)दिगीशाः । क्षत्रिय,वैश्य,शूद्र,ब्राह्मणाः । सम्मुख चन्द्रादयः ।
अग्नि, भूमि, वायु जल तत्त्वानि । राशि शुद्धिः । पित्त, वायु,
धातुसम कफाः । मेषादितस्त्रि. परिवर्तनेन भवन्ति ॥

उ०

कर्क. वृश्चिक मीन

मि. तु कुं ——————— मे. सिं ध

प० पू०

वृष. कन्या. मकर

द०

चन्द्राशुद्धिः—

मेष सिंह धनस्थेचन्द्रे वृष कन्या मकर राशीनां चन्द्राशुद्धि·

वृष कन्या मकरस्थे चन्द्रे मिथुन तुला कुम्भ ,, ,,

मिथुन तुला कुम्भस्थेचन्द्रे कर्क वृश्चिकमीन ,, ,,

कर्क वृश्चिकमीनस्थेचन्द्रे—मेषसिंह धन ,, ,,

(अर्थ)

मे. सिं ध. के चन्द्रमा होने पर वृष, कन्या, मकर राशि वालों को अशुद्धि होती है।

वृ. क. म.	,,	मि. तु. कु.	,,
मि. तु. कु.	,,	कर्क. वृश्चिक. मीन	,,
क. वृ. मी.	,,	मे. सिं. ध.	,,

सूचना.

सारांश यह है कि ४। ८। १२ स्थानों में कोई ग्रह अच्छा नहीं होता है। पूर्वोक्त राशियों से पूर्वोक्त स्थान गिननी में ४। ८। १२ होवेंगे। चन्द्रमा का पृथ्वी से विशेष सम्बन्ध है। इसलिये जब इन स्थानों में चन्द्रमा हो तो सब शुभ काम वर्जित होते हैं। इसी प्रकार विवाह आदि में सूर्य तथा बृहस्पति का भी विचार होता है॥

राशि चक्रम्

राशि	चरादिसंज्ञा	विषम आदि	क्रूर आदि	दिशा	पुरुष आदि	जाति	प्रकृति
मेष	चर	विषम	क्रूर	पूर्व	पुरुष	क्षत्रिय	पित्त
वृष	स्थिर	सम	सौम्य	दक्षिण	स्त्री	वैश्य	वात
मिथुन	द्विस्वभाव	विषम	क्रूर	पश्चिम	पुरुष	शूद्र	त्रिधातु
कर्क	चर	सम	सौम्य	उत्तर	स्त्री	ब्राह्मण	कफ
सिंह	स्थिर	विषम	क्रूर	पूर्व	पुरुष	क्षत्रिय	पित्त
कन्या	द्विस्वभाव	सम	सौम्य	दक्षिण	स्त्री	वैश्य	वात
तुला	चर	विषम	क्रूर	पश्चिम	पुरुष	शूद्र	त्रिधातु
वृश्चिक	स्थिर	सम	सौम्य	उत्तर	स्त्री	ब्राह्मण	कफ
धन	द्विस्वभाव	विषम	क्रूर	पूर्व	पुरुष	क्षत्रिय	पित्त
मकर	चर	सम	सौम्य	दक्षिण	स्त्री	वैश्य	वात
कुम्भ	स्थिर	विषम	क्रूर	पश्चिम	पुरुष	शूद्र	त्रिधातु
मीन	द्विस्वभाव	सम	सौम्य	उत्तर	स्त्री	ब्राह्मण	कफ

(अर्थ)

मेष राशि का स्वरूपः—लाल रङ्ग, बड़ा शरीर, चारपैर, रात्रि में बलवान्, पूर्व दिशा में निवास, राजा का मित्र, पर्वतों में फिरने वाला, रजोगुण, पृष्ठोदय, अग्नि, और इसका स्वामी मङ्गल है ॥

वृष राशि का स्वरूप —सफेद, स्वामी शुक्र, दीर्घ, चार पैर, रात्रि में बलवान्, दक्षिण दिशा का स्वामी, ग्राम में निवास, जाति का वनियां, भूमि तत्त्व, रजोगुण और पृष्ठोदय ॥

मिथुन राशि का स्वरूप —शीर्षोदय, स्त्री पुरुष का जोडा, गदा और वीणा हाथ में, पश्चिम दिशा, शान्त, दो पैर वाला, रात्रि में बलवान्, ग्राम और व्रज (गोठ) में निवास, वात प्रकृति, समान शरीर वाला, हरा रङ्ग, स्वामी बुध ॥

कर्क राशि का स्वरूप —गुलाबी रङ्ग, वन में फिरने वाला, ब्राह्मण जाति, रात्रि में बलवान् बहुत पैर वाला, उत्तर दिशा, मोटा शरीर, सत्त्व गुण, जल, पृष्ठोदय, स्वामी चन्द्रमा ॥

सिंह राशि का स्वरूपः—स्वामी सूर्य, सत्त्व गुण, चार पैर, क्षत्रिय-जाति, बलवान्, शीर्षोदय, बडा शरीर, गुलाबी रङ्ग, पूर्वदिशा, दिन में बलवान् ॥

कन्या राशि का स्वरूप.—पर्वत में निवास दिन में बलवान्, शीर्षो-दय, शरीर के अङ्ग मध्यम, दो पैर, दक्षिण दिशा, हाथ में धान और आग ली हुई, वैश्य वर्ण, चित्र विचित्र रङ्ग, वायुतत्त्व, कुमारी, तापस, बालक-पन का स्वभाव, स्वामी बुध ॥

तुलाराशि का स्वरूपः—शीर्षोदय, दिन में वीर्य्यवान्, कालारङ्ग, रजो-गुण, पश्चिम दिशा, भूचर, शूद्र जाति, मध्यम शरीर, दो पैर, स्वामी शुक्र, ॥

वृश्चिक राशि का स्वरूप—छोटे अङ्ग, बहुत पैर, ब्राह्मण जाति, बलवान्, सौम्य स्वभाव, दिन में वीर्य्यवान्, कबरैला, जल और भूमि में निवास, बालों से भरा हुआ, अति तीक्ष्ण, स्वामी मङ्गल ॥

धनराशि का स्वरूप—पृष्ठोदय, स्वामी बृहस्पति, सत्त्व गुण, पीला-रङ्ग, रात में बलवान्, अग्नि, क्षत्रिय, आदि मे दो पैर और अन्त में चार पैर वाला, समान शरीर, धनुर्धारी, पूर्वदिशा, तेजस्वी ॥

मकर राशि का स्वरूप.—स्वामी शनि, तमोगुण, भूमि मे निवास, दक्षिण दिशा, पृष्ठोदय, बडा शरीर, कबरैला, वन मे फिरने वाला, आदि में चार पैर, अन्त मे विना पैर का, जल मे चलने वाला, ॥

कुम्भ राशि का स्वरूपः—घडा लिया हुआ मनुष्य, कबरैला, मध्यम शरीर, दो पैर, दिन मे बलवान्, जल के मध्य मे स्थित, वातप्रकृति, शीर्षो-दय, तमोगुण, शूद्र जाति, पश्चिम देश, स्वामी शनैश्चर ॥

मीन राशि का स्वरूप.—दो मछलिया, जिनकी पूंछ और मुख मिले हुए हैं, दिन में बलवान्, जल, सत्त्व गुण, ब्राह्मण, विनापैर के, मध्य देह, उभयोदयी, स्वामी बृहस्पति ॥

पुनरपि राशियों के स्वरूप :—

सिंह आदि चार राशियां, कन्या और कुम्भ शीर्षोदय हैं अर्थात् इनका उदय सिर की ओर से होता है, मीन उभयोदय है, अर्थात् इसका उदय न सिर से न पैर से, शेष राशियां पृष्ठोदय है ॥

सिंह आदि चार राशियां दीर्घ हैं, कुम्भ आदि चार राशिया ह्रस्व हैं, शेष सम हैं ॥

कर्क, कुम्भ, मकर, मीन, वृश्चिक और तुला, जल राशियां हैं, शेष राशियां शुष्क हैं ॥

मेष, वृष, मिथुन और धन का परार्द्ध और मकर चार पैर वाली राशियां हैं ।

कर्क वृश्चिक राशिया बहुत पैर वाली हैं।

कुम्भ और मीन राशिया पादहीन हैं।

मिथुन, तुला. कन्या, और धन का पूर्वार्द्ध दो पैर वाली राशिया हैं॥

मकर का उत्तरार्ध, मीन = जलचारी
कर्क = कीट
वृश्चिक = सरीसृप (रेंगनेवाला)
मकर कुम्भ = अर्द्ध शब्द
तुला, वृश्चिक, कर्क और मीन = शब्द रहित
मेष, वृष, मिथुन, सिंह और धन = शब्द सहित॥
मे सिं. कन्या. तु ध म = कम सन्तान वाले
वृष. मि. कु. = मध्य सन्तान वाले
कर्क वृश्चिक, मीन = बहुत सन्तानवाले
मेष, सिंह, धन = अग्नि, क्षत्रिय, पूर्व, पित्त
वृष, कन्या, मकर, = भूमि ,वैश्य, दक्षिण, वायु
मिथुन, तुला, कुम्भ = वायु शूद्र, पश्चिम, धातुसम
कर्क, वृश्चिक, मीन = जल, ब्राह्मण, उत्तर, कफ
(१) अग्नि और वायु वाली राशियों की आपस में मित्रता होती है॥
(२) भूमि और जल वाली राशियों की आपस में मित्रता होती है॥
(१) और (२) की आपस मे शत्रुता है।

१ । ४ । ७ । १० = चर.
२ । ५ । ८ । ११ = स्थिर,
३ । ६ । ९ । १२ = द्विस्वभाव,
मे. मि. सिं तु ध कु = पुरुष, क्रूर, विषम
वृ. कर्क कन्या वृ म मीन = स्त्री, सौम्य. सम

पुरुष राशियों की पुरुष राशि से और स्त्री राशियो की स्त्री राशि से मित्रता होती है ॥

मेष आदि राशियों को तीन वार घुमाने से पूर्व आदि दिशाओं के स्वामी, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, ब्राह्मण वर्ण विदित हो जाते हैं। सम्मुख चन्द्रमा आदि, राशि शुद्धि (जिसे कूर्माचल में पैट, अपैट कहते हैं) चक्र से समझ मे आ जावेंगे ॥

(१४) ग्रह प्रकरणम्

नवग्रहाः

रविविधुक्षितिजाबुधवाक्पती
भृगुशनीच तम· शिखिनोग्रहाः ॥

(अर्थ)

सूर्य्य, चन्द्रमा, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु, यह नौ ग्रह हैं ॥

दिगीशाः—

रविः शुक्रो महीसूनुः स्वर्भानुर्भानुजो विधुः।
बुधो बृहस्पतिश्चैव दिशामीशास्तथा ग्रहाः ॥

(अर्थ)

सूर्य्य, शुक्र, मङ्गल, राहु, शनि, चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति, ये क्रम से पूर्व आदि दिशाओं के स्वामी हैं।
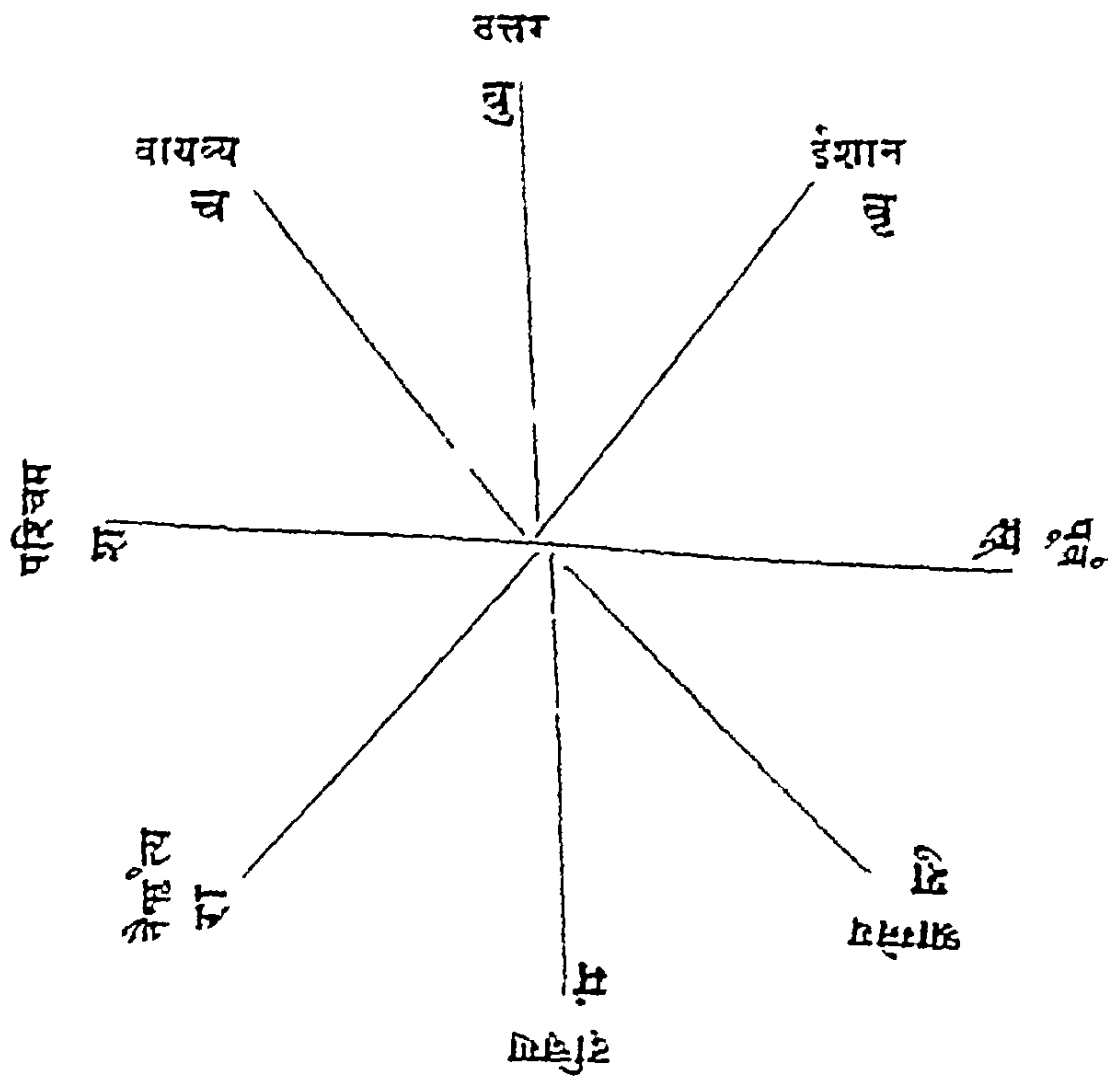
सौम्य पाप ग्रह विवेकः

क्षीणश्चन्द्रो रविर्भौमः पापो राहु. शनिः शिखी ।
बुधोपितैर्युतः पापः शेषाश्चैव शुभग्रहाः ॥

(अर्थ)

क्षीण चन्द्रमा, सूर्य्य, मङ्गल, राहु, शनि, और केतु ये पापग्रह हैं । बुध भी जब इनमें से किसी पापग्रह से युक्त हो तो वह भी पाप ग्रह हो जाता है, शेष ग्रह अर्थात् बुध, बृहस्पति और शुक्र तथा पूर्ण चन्द्रमा शुभ ग्रह हैं ॥

क्षीणचन्द्र

कृष्णाष्टमी दला दूर्ध्वं यावच्छुक्लाष्टमी भवेत् ।
तावत्क्षीण शशीज्ञेयः सम्पूर्ण स्तदनन्तरम् ॥

(अर्थ)

कृष्ण पक्ष की अष्टमी के उपरान्त शुक्ल पक्ष की अष्टमी पर्यन्त क्षीण चन्द्रमा कहलाता है, उसके उपरान्त पूर्ण चन्द्रमा कहलाता है ।

ग्रहाणा पर्यायाः

सूर्यो हेलिर्भानुमान् दीप्तरश्मि
श्चण्डांशुः स्याद्भास्करोऽहस्करश्च ।
अब्जः सोमश्चन्द्रमाः शीतरश्मिः
शीतांशुःस्याद् ग्लौर्मृगांकः कलेशः ॥
आरोवक्रश्चावनेयः कुजःस्या
द्भौमः क्रूरोलोहिताङ्गोऽथपापी ।
विज्ञः सौम्यो बोधनश्चन्द्रपुत्र
श्चान्द्रिः शान्तः श्यामगात्रोऽतिदीर्घः ॥
जीवोऽङ्गिरादेवगुरुः प्रशान्तो
वाचांपतीज्यस्त्रिदिवेशवन्द्याः ।
भृगूशनोभार्गवसूनवोऽच्छः
काणः कविर्दैत्यगुरुः सितश्च ॥
छायात्मजः पंगुयमार्कपुत्राः
कोणोऽसितः सौरिशनी च नीलः ।
क्रूरः कृशाङ्गः कपिलाक्षदीर्घौ
तमोऽसुरश्चेत्यगुसैंहिकेयौ ॥
राहुः सुवर्भानुविधुन्तुदः स्यात्
केतुः शिखीस्याद् ध्वजनामधेयः ॥

(अर्थ)

ग्रहों के पर्य्याय अर्थात् दूसरे नाम ये हैं —

सूर्य्य :—हेलि, भानुमान्, दीप्तरश्मि चण्डांशु, भास्कर, अहस्कर ।

चन्द्रमा—अब्ज, सोम, शीतरश्मि, शीतांशु, ग्लौ, मृगाङ्क, कलेश ।

मङ्गल—आर, वक्र, आवनेय कुज, भौम, क्रूर, लोहिताग, पापी ।

बुध—वित, ज्ञ, सौम्य, बोधन, चन्द्रपुत्र, चान्द्रि, शान्त, श्यामगात्र, अतिदीर्घ ।

बृहस्पतिः—जीव, अङ्गिरा, देवगुरु, प्रशान्त, वाचास्पति, ईज्य, त्रिदिवेशवन्द्य ।

शुक्रः—भृगु, उशना भार्गवसूनु अच्छ, काण, कवि दैत्यगुरु, सित ।

शनि—छायात्मज, पङ्गु, यम अर्कपुत्र, काण, असित, सौरि, नील ।

राहु—क्रूर, कृष्णाङ्ग, कपिलाक्ष, दीर्घ, तम, असुर अगु, सैंहिकेय, स्वर्भानु, विधुन्तुद ।

केतु के नामः—शिखी, ध्वज ।

ग्रहाणामन्यभाषासु नामानिः —

संस्कृत.	अङ्गरेज़ी.	फारसी.
सू.	Sun	शम्स, आफताब
च.	Moon	कमर
मं.	Mars	मिर्रीख़
बु.	Mercury	उतारद
बृ.	Jupiter	मुश्तरी
शु.	Venus	ज़ुहरा
श.	Saturn	ज़ुहल्
रा	Dragon's head or the ascending node	रास
के	Dragon's tail or the descending node.	जनब

ग्रहस्वरूपाणि—

प्रभातसिन्दुजगुरू मध्याह्नं रविभूमिजौ ।
अपराह्नं भार्गवेन्दू सन्ध्या मन्द भुजंगमौ ॥
पित्तं प्रभाकरक्ष्माजौ श्लेष्मा भार्गवशीतगू ।
ज्ञगुरू समधातू च पवनौ राहुमन्दगौ ॥
कुजार्कौ कटुकौ जीवो मधुरस्तुवरो बुधः ।
क्षाराम्लौ चन्द्रभृगुजौ तीक्ष्णौ सूर्यार्कनन्दनौ ॥
स्थूल इन्दु सितः खण्ड श्चतुरस्रौ कुजोष्णगू ।
वर्तुलौ सौम्यधिषणौ दीर्घौ शनिभुजंगमौ ॥
विप्रौ शुक्रगुरू क्षत्रौ कुजार्कौ शूद्र इन्दुजः ।
इन्दुर्वैश्य. स्मृतौ म्लेच्छौ सैंहिकेयशनैश्चरौ ॥
शुक्रे चन्द्रे भवेद्रौप्यं बुधे स्वर्णमुदाहृतम् ।
गुरौ रत्नयुतं हेम सूर्ये मौक्तिकमुच्यते ॥
भौमेत्रपु शनौ लोहम् ।
त्वग्मांसरोम्णां मन्दोऽथ मज्जास्थ्नां भास्करः प्रभुः ।
कुजो रक्तस्य शुक्रस्य भार्गवो मेदस. शशी ॥
अग्निभूमिनभस्तोय वायव क्रमतो द्विज ।
भौमादीनां ग्रहाणांच तत्त्वाश्चामी प्रकीर्तिताः ।
चन्द्रेज्यसूर्याविच्छुक्रौ महीजरविजौ द्विज ॥
सत्त्वं रजस्तम इति स्वभावो ज्ञायते क्रमात् ॥
गुरो पीताम्बरं विप्र भृगो. क्षौमं सितंतथा ।
रक्तक्षौमं भास्करस्य इन्दोः क्षौमं सितं द्विज ।
बुधस्य श्यामलंवस्त्रं रक्तचित्रं कुजस्यच ।
वस्त्रं चित्रं शनें विप्र ग्रहवस्त्रं तथैव च ॥
राहुश्चाण्डालजातिश्च केतुर्जात्यन्तरस्तथा ॥

ग्रहेषु मन्दो वृद्धोस्ति ।
मधुपिंगलदृक्सूर्यश्चतुरस्र. शुचिर्द्विज ।
पित्तप्रकृतिको धीमान्पुमानल्पकचो द्विज ॥
बहुवातकफः प्राज्ञ श्चन्द्रो वृत्ततनु र्द्विज ।
शुभदृङ्मधुवाक्यश्च चंचलो मदनातुरः ॥
क्रूरोरक्तारुणोभौम श्चपलोदारमूर्तिक. ।
पित्तप्रकृतिकः क्रोधी कृशमध्यतनुर्द्विज ॥
वपुः श्रेष्ठः क्लिष्टवाक्च अतिहास्यरुचिर्बुधः ।
पित्तवान्कफवान्विप्र मारुतप्रकृतिस्तथा ॥
वृहद्गात्रो गुरुश्चैव पिङ्गाक्षः पिङ्ग मूर्द्धजः ।
कफप्रकृतिको धीमान्सर्व शास्त्रविशारदः ॥
सुखी कान्तवपुः श्रेष्ठ. सुलोचनोभृगोः सुतः ।
काव्यकर्ता कफाधिक्योऽनिलात्मा वक्र मूर्धजः ॥
कृशदीर्घतनुः सौरिः पिङ्गाक्षश्चानिलात्मकः ।
स्थूलदन्तोऽलस. पंगुः खररोमकचो द्विज ॥
धूम्राकारो नीलतनुर्वनस्थोऽपि भयङ्करः ।
वातप्रकृतिको धीमान्स्वर्भानुप्रतिमः शिखी ॥

देवस्थानं भास्करस्याम्बुवासश्चन्द्रस्याग्निस्थान मंगारकस्य ।
क्रीडास्थानं सोमपुत्रस्य कोश. स्थानं जीवस्यैवमाहुर्भृगोस्तु ॥
सुप्तिस्थानं भानुजस्योत्करं तु सर्पस्थानं सैंहिकेयस्यचैवम् ।
धातुग्रहा राहुशनीन्दुभौमा मूलग्रहौ शुक्रदिनाधिनाथौ
जीवग्रहौ जीवशशाङ्कसूनू मेषादिदस्रादि यथाक्रमेण ॥
अधोर्ध्वदृष्टी दिननाथभौमौ दृष्टिः कटाक्षेण कवीन्दुसून्वोः ।
शशाङ्कगुर्वोः समभाग दृष्टिस्त्व धोक्षिपातस्त्वहिनाथ शन्योः ॥
युवा कुजः शिशुः सौम्यः शशिशुक्रौच मध्यमौ ।

मार्तण्ड मन्द देवेज्य फणिनः स्थविरा ग्रहाः ॥
जीव मंगल मार्तण्डा नुशन्ति पुरुषान्बुधाः ।
सोम सोमज मन्दाहि भृगुपुत्रा हि योषितः ॥
रक्त श्यामो भास्करो गौर इन्दु
नीत्युच्चाङ्गो रक्तगौरश्च वक्रः ।
दूर्वाश्यामो ज्ञो गुरु गौरगात्रः
श्यामः शुक्रो भास्करिः कृष्णदेहः ॥
भृगोर्ऋतुर्वसन्तश्च कुम्भान्वोश्चग्रीष्मकः ।
चन्द्रस्य वर्षा विज्ञेया शरच्चैव तथा विदः ॥
हेमन्तोऽपि गुरोर्ज्ञेयः शनैस्तु शिशिरः स्मृतः ॥
अस्थि रक्तं मज्जा त्वग्वसा शुक्र स्नायूनि सूर्यादीनां धातवः ।
मन्दार्काराः शुष्काश्चन्द्राच्छौ सजलौ जलर्क्षगौ ज्ञेज्यौच ॥

(अर्थ)

ग्रहों का स्वरूप इस प्रकार है :—

बुध और बृहस्पति से प्रातःकाल जानना चाहिये, सूर्य्य और मङ्गल से मध्याह्न जानना चाहिये, चन्द्रमा और शुक्र से अपराह्ण जानना चाहिये, शनैश्चर और राहु से सन्ध्या काल जाननी चाहिये ॥

सूर्य्य और मङ्गल पित्त प्रकृति हैं, शुक्र और चन्द्रमा कफ प्रकृति हैं, बुध और बृहस्पति समधातु हैं, राहु और शनैश्चर वात प्रकृति हैं ॥

मङ्गल और शनैश्चर कटुरस (कड़वा) हैं, बृहस्पति का रस मीठा है, बुध का रस तीता है, चन्द्रमा और बुध नमकीन और खट्टे रस वाले हैं, सूर्य्य और शनैश्चर तीक्ष्ण हैं ॥

चन्द्रमा स्थूल है, शुक्रखण्ड अर्थात् टुकड़ा है, मङ्गल और सूर्य्य चौकोर हैं, बुध और बृहस्पति गोल हैं, शनैश्चर और राहु लम्बे हैं ॥

शुक्र और बृहस्पति ब्राह्मण जाति हैं, मङ्गल और सूर्य्य क्षत्रिय जाति हैं, बुध शूद्र है, चन्द्रमा वैश्य है, राहु और शनैश्चर म्लेच्छ है ॥

शुक्र और चन्द्रमा से चांदी, बुध से सुवर्ण, बृहस्पति से रत्नयुक्त सुवर्ण, सूर्य्य से मोती, मङ्गल से शीशा और शनि से लोहा जानना चाहिये ॥

त्वचा, मांस, और बालों का स्वामी शनि है, मज्जा और हड्डियो का स्वामी सूर्य्य है, रुधिर का स्वामी मङ्गल है, वीर्य्य का स्वामी शुक्र है, वसा (चर्वी) का स्वामी चन्द्रमा है ॥

मङ्गल आदि ग्रहों के तत्त्व, अग्नि, भूमि, आकाश, जल और वायु क्रम से हैं ॥

चन्द्रमा, बृहस्पति और सूर्य्य सत्त्वगुण हैं, बुध और शुक्र रजोगुण हैं, मङ्गल और शनि तमोगुण है ॥

बृहस्पति का पीला वस्त्र, शुक्र का सफेद वस्त्र, सूर्य्य का लाल वस्त्र, चन्द्रमा का सफेद वस्त्र, बुध का काला वस्त्र, मङ्गल का लाल और चित्र विचित्र, शनि का विचित्र वस्त्र है ।

राहु की जाति चाण्डाल है, केतु अन्य जाति का है ॥

सब ग्रहों में शनैश्चर वृद्ध है ॥

सूर्य्य पीले नेत्र वाला, चौकोर, पित्त प्रकृति वाला, बुद्धिमान्, पुरुष, थोड़े बाल वाला है ॥

चन्द्रमा वात और कफ वाला, पण्डित, गोल शरीर वाला, मीठा बोलने वाला, चञ्चल और कामी है ॥

मङ्गल लाल रङ्ग वाला, क्रूर स्वभाव, चञ्चल, उदार, मूर्ति, पित्त प्रकृति, क्रोधी, कृश शरीर वाला है ॥

बुध श्रेष्ठ शरीर वाला, क्लिष्ट वचन वाला, बहुत हसने वाला, वात पित्त कफ प्रकृति वाला है ॥

बृहस्पति बड़े शरीर वाला, पीले बाल और पीले नेत्र वाला, कफ प्रकृति वाला, बुद्धिमान्, तथा सब शास्त्रों में पण्डित है ॥

शुक्र सुखी, सुन्दर शरीर वाला, श्रेष्ठ, अच्छे नेत्र वाला, काव्य लिखने वाला, कफ प्रकृति, टेढ़े वाल वाला है ॥

शनैश्चर लम्बा, दुर्बल शरीर वाला, पीले नेत्र वाला, वात प्रकृति, बड़े दांत वाला, आलसी, लूला, कड़े वाल वाला है ॥

राहु धुएं के समान नील वर्ण, वन में रहने वाला, वड़ा भयानक, वात प्रकृति वाला, बुद्धिमान् हैं ॥

केतु भी राहु के समान है ॥

सूर्य्य का देवस्थान है, चन्द्रमा का जल स्थान है, मङ्गल का अग्नि स्थान है, बुध का क्रीडा स्थान है, बृहस्पति का खजाना (भण्डार) स्थान है, शुक्र का शय्या स्थान है, शनैश्चर का उत्कर (गञ्ज अथवा ढेर) स्थान है, राहु का स्थान सर्प का विल है ॥

राहु, शनि, चन्द्रमा और मङ्गल धातु ग्रह हैं, शुक्र और सूर्य्य मूल ग्रह हैं, बृहस्पति और बुध जीव ग्रह हैं ॥

सूर्य्य और मङ्गल ऊपर को देखने वाले हैं, शुक्र और चन्द्रमा तिरछे देखते हैं, मङ्गल और बृहस्पति सीधा देखते हैं, राहु और शनैश्चर नीचे को देखते हैं ॥

ग्रहों की अवस्था इस प्रकार है—मङ्गल युवा, बुध बालक, चन्द्रमा और शुक्र अधेड़, सूर्य्य, शनि, बृहस्पति और राहु वृद्ध हैं ॥

बृहस्पति, मङ्गल और सूर्य्य पुरुष ग्रह हैं, चन्द्रमा, बुध, शनि, राहु और शुक्र स्त्री ग्रह हैं ॥

सूर्य्य का लाल रङ्ग है, चन्द्रमा का सफेद, मङ्गल का गुलावी, बुध का दूब की तरह हरा, बृहस्पति का पीला, शुक्र का सफेद, और शनि का काला रंग है ॥

शुक्र की वसन्त ऋतु है, मङ्गल और सूर्य्य की ग्रीष्म ऋतु है, चन्द्रमा की वर्षा ऋतु है, बुध की शरद् ऋतु है, बृहस्पति की हेमन्त ऋतु है, और शनि की शिशिरऋतु है ॥

सूर्य्यं से अस्थि (हड्डी), चन्द्रमा से रक्त (खून) मंगल से मज्जा, बुध से त्वचा, बृहस्पति से वसा (चर्बी), शुक्र से वीर्य्य, और शनि से स्नायु (नसें) जाननी चाहिये ॥

शनैश्चर सूर्य्य और मंगल शुष्क ग्रह हैं, चन्द्रमा और शुक्र सजल ग्रह हैं, बुध और बृहस्पति यदि जल राशि में हो तो वे भी सजल ग्रह हैं ॥

(बृहस्पति आकाश है, शनि वायु है, सूर्य तथा मंगल अग्नि हैं, चन्द्रमा तथा शुक्र जल हैं, बुध पृथिवी है। यदि एक राशि और एक ही अंश पर वायु, अग्नि तथा पृथ्वी (अर्थात् शनि मंगल और बुध) हों तो आंधी आती है, अग्नि, आकाश (अर्थात् मंगल बृहस्पति) हों तो भूकम्प होता है, अग्नि तथा जल (अर्थात् सूर्य अथवा मंगल+चन्द्रमा अथवा शुक्र) हों तो वर्षा होती है)

यथाक्रमं वीर्यवन्तोग्रहाः—

शकुबुगुशुचराद्या वृद्धितो वीर्यवन्तः ॥

अर्थ—शनि, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, चन्द्रमा, और सूर्य यथा क्रम पूर्व से पर अधिक बलवान् हैं ॥

आत्मादयः

Sun	represents	soul
Moon	,	mind
Mercury	,,	Speech, eloquence
Saturn	,,	Sorrow and miseries
Mars	,,	Physical strength
Venus	,,	Sexual and worldly pleasures
Jupiter	,,	Wisdom

धात्वादयः

Mars	represents	marrow
Jupiter	,,	brain
Venus	,,	Semen
Mercury	,,	skin
Moon	,,	blood
Sun	,,	bones
Saturn	,,	nerves

भूम्यादयः

Jupiter represents ether
Saturn „ air
Sun & mars represent fire
Moon & Venus „ water
Mercury represents earth

The conjunction of 3 elements, air, fire and earth, or Saturn, Mars and Mercury in one and the same degree produces storms &c

Fire and ether or Mars and Jupiter = Earthquakes

Water + fire = rain

Water opposite to fire and air = rain.

ग्रहाणा मुच्चनीचस्थानानि परमोच्चपरमनीचांशाश्च—

अज वृषभमृगाङ्गना कुलीरा
झषवणिजौच दिवाकरादितुङ्गाः ।
दशशिखि मनुयुक् तिथीन्द्रियांशै
स्त्रिनवक विंशतिश्चतेऽस्तनीचाः ॥

	सू	च.	मं.	बु	बृ	शु.	श.	रा.	के.
परमो-	मे.	वृष	म.	कन्या.	कर्क.	मी.	तु.	मि.	ध.
च्चांशा.	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	२०	६
परम	तु.	वृश्चि.	कर्क	मी.	म.	कन्या.	मे.	ध.	मि.
नीचांशाः	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	२०.	६.

(अथ)

मेष का सूर्य्य, वृष का चन्द्रमा, मकर का मङ्गल, कन्या का बुध, कर्क का बृहस्पति, मीन का शुक्र और तुला का शनैश्चर उच्च के ग्रह होते हैं। उच्च से सातवां नीच होता है, जैसे—तुला का सूर्य्य, वृश्चिक का चन्द्रमा, कर्क का मङ्गल, मीन का बुध, मकर का बृहस्पति, कन्या का शुक्र और मेष का शनैश्चर नीच के ग्रह होते हैं ॥

उच्च और नीच के अंश ऊपर लिखे हुए चक्र में समझ लेने चाहिये ॥

ग्रहाणां मूलत्रिकोणस्थानानि—

सिंहो वृषभमेषौच कन्या धन्वि तुलाघटाः।
रव्यादीनां क्रमान्मूलत्रिकोणा राशयः क्रमात् ॥
राहोः कुम्भः (अथवा कर्कः)। केतोः सिंहः ॥

मूलत्रिकोणांशाः

ग्रहाः	सू.	च	म.	बु	बृ	शु	श.	रा.	के.
राशयः	सि.	वृष.	मे.	कन्या.	धन.	तुला	कुम्भ.	कुम्भ.	सिं.
अंशाः (यावत्)	२०	४-३०	१२	२१-३०	१०	१५	२०	६	६

शेषांशे स्वक्षेत्रसम्बन्ध उच्चसम्बन्धो न कोऽपि सम्बन्धोवा ॥

(अर्थ)

ग्रहों के मूल त्रिकोण इस प्रकार हैं:—सिंह का सूर्य्य, वृष का चन्द्रमा, मेष का मङ्गल, कन्या का बुध, धन का बृहस्पति, तुला का शुक्र, कुम्भ का शनि, कुम्भ (अथवा कर्क) का राहु तथा सिंह का केतु ॥

पूर्वोक्त अंश पर्यन्त मूल त्रिकोण सम्बन्ध रहता है। शेष अंशों में ग्रह स्वक्षेत्री अथवा उच्च कहलाता है। कहीं शेष अंशों में कुछ भी सम्बन्ध नहीं है।

राहु केतूनामुच्चादय:—

कामोच्चः (३) कामिनीशः (६) प्रणतगरधरः (६ नीचः)
सिंहिका गर्भभूतो (रा)
उग्राः सूर्येन्दुभौमा बुधसितशनयो यस्य मित्राणि खेटाः।
सामान्यो देव मंत्री सहज (३) रस (६) शिवे (११)
सर्व दोष प्रहर्ता
शेषे भावे न शस्तः कलियुग फलदः कालरुद्रा वदन्ति ॥
चापोच्चः (९) कामनी चो (३) धनरस चर पः (१२ स्वामी)
कज्जलाभः करालः

सिंहो मूलत्रिकोणं हितसमरिपवो
राहुवद्भावकर्ता ॥
कन्या राहु गृहंप्रोक्तं राहूच्चं मिथुनं स्मृतम् ।
राहुनीचंधनुः॥
राहोस्तुवृषभःकेतोर्वृश्चिकस्तुङ्गसंज्ञकः ।
मूलत्रिकोणं कर्कश्च युग्मचापौ तथैवच ।
कन्याच स्वगृहं प्रोक्तं मीनश्च स्वगृहंस्मृतम् ॥
कन्या गृहं कुम्भ मथो त्रिकोण
मुच्चं नृयुग्मं परमं नखांशम् ।
मनीषिणः केऽपिवदन्ति राहो
स्ततस्ततः सप्तमकं चकेतोः ॥

उच्चं नृयुग्मं घटभं त्रिकोणं कन्यागृहं शुक्रशनीच मित्रे ।
सूर्यःशशाङ्को धरणीसुतश्च राहो रिपुर्विंशतिकः परांशः ॥
सिंहस्त्रिकोणं धनुरुच्चसंज्ञं मीनो गृहं शुक्र शनी विपक्षौ ।
सूर्यारचन्द्राः सुहृदः समानौ जीवेन्दुजौषट्शिखिनः परांशाः ॥

(अर्थ)

मिथुन में राहु उच्च का होता है, कन्या राशि का स्वामी है, धन राशि में नीच का होता है, सूर्य्य, चन्द्रमा और मङ्गल इसके शत्रु हैं, बुध शुक्र और शनि इसके मित्र हैं, बृहस्पति सम है अर्थात् न तो मित्र है न शत्रु है, ३, ६, और ११ भावो में सब प्रकार के दोषो का नाश करता है, शेष भावों में शुभ फल देने वाला नहीं है और कलियुग में प्रत्यक्ष फल देने वाला है ॥

केतु मीन राशि में उच्च का होता है, मिथुन राशि में नीच का होता है, मीन का स्वामी है, काजल के समान काले रङ्ग वाला है, इसका मूल

त्रिकोण सिंह राशि है, इसके मित्र, सम और शत्रु राहु के समान हैं, और राहु के समान भावों का फल भी देता है ॥

राहु का घर कन्या है, उच्च स्थान मिथुन है और नीच स्थान धन है।

कोई आचार्य कहते हैं कि राहु का उच्च वृष है, केतु का उच्च वृश्चिक है, राहु का मूलत्रिकोण कर्क है और केतु के मूल त्रिकोण मिथुन और मीन हैं, राहु का घर कन्या और केतु का घर मीन है।

किन्हीं आचार्यों का मत है कि कन्या राहु का घर है, कुम्भ मूल-त्रिकोण है, मिथुन उच्च है। २० अंश तक परमोच्च है और राहु से सप्तम केतु के घर आदि जानने चाहिये ॥

राहु मिथुन राशि में उच्च का होता है। उसका मूल त्रिकोण कुम्भ है। कन्या घर है। शुक्र और शनि मित्र हैं। सूर्य, चन्द्रमा और मंगल शत्रु हैं ॥

केतु का मूलत्रिकोण सिंह है, उच्च धन राशि है, मीन अपना घर है, शुक्र शनि शत्रु हैं, सूर्य, मंगल और चन्द्रमा मित्र हैं, बुध बृहस्पति सम हैं, ६ अंश पर्यन्त परमोच्च हैं ॥

त्रिकोणस्थानानि—

ये मन्दाद्यास्त्रिखेटाः कलियुगबलिनो विक्रमारित्रिकोणं
सूर्यस्यक्षोणिसूनोर्दशमभवगृहं कोणसंज्ञं पवित्रम् ।
अन्येषां खेचराणां नवम शिवमुखं तत्त्रिकोणं प्रसिद्धं
सर्वग्रन्थेषुधीरा मुनिजनसहिताः पाण्डुपुत्रावदन्ति ॥

(अर्थ)

कलियुग में बलवान् शनैश्चर राहु और केतु इन तीनो ग्रहों के त्रिकोण स्थान ३, ६ हैं, सूर्य्य और मङ्गल के त्रिकोण स्थान १०, ११ हैं, शेष ग्रहों के त्रिकोण स्थान ५, ९, हैं ॥

राहोः सप्तमः केतुः—

राहोश्छाया स्मृत केतुर्यत्रराशौभवेद्यम् ।
तस्मात्ससमके केतू राहुः स्याद्यन्नवांशके ॥

(अर्थ)

राहु की छाया केतु है और जिस राशि में राहु स्थित है उससे सातवें स्थान में केतु रहता है ॥

ग्रहाणा मित्र सम शत्रवः

शत्रू मन्दसितौ समश्च शशिजो मित्राणि शेषारवे
स्तीक्ष्णांशुर्हिमरश्मिजश्चसुहृदौ शेषाः समाः शीतगोः ।
जीवेन्दूष्णकराः कुजस्य सुहृदोज्ञोऽरिः सितार्कौ समौ
मित्रे सूर्य सितौ बुधस्य हिमगुः शत्रुः समाश्चापरे ॥
सूरेः सौम्य सितावरी रविसुतोमध्योऽपरैस्त्वन्यथा
सौम्यार्कौ सुहृदौ समौकुजगुरू शुक्रस्य शेषावरी
शुक्रज्ञौ सुहृदौ समः सुरगुरुः सौरस्य चान्येऽरयो
ये प्रोक्ताः सुहृद स्तु मन्दवदिमे राहोः परैस्तर्किताः ॥
राहोस्तुमित्राणि कवीज्यमन्दाः केतोस्तथैवात्रवदंतितज्जाः ॥
शुक्र शनीच मित्रे । सूर्यः शशाङ्को धरणी सुतश्च राहोरिपुः ।
सामान्यो देवमंत्री ॥
शुक्र शनी विपक्षौ । सूर्यारचन्द्राः सुहृदः, समानौ जीवेन्दुजो
(केतोः) ।

चन्द्रार्कारेज्याः परस्परं मित्राणि शेपाश्च । इतस्तथा रिपवः ॥

(अर्थ)

सूर्य्य के शनि और शुक्र शत्रु हैं, बुध सम है, शेप ग्रह मित्र हैं ॥

चन्द्रमा के सूर्य्य और बुध मित्र हैं, शेप ग्रह सम हैं (चन्द्रमा का शत्रु कोई नहीं है) ।

मंगल के बृहस्पति, चन्द्रमा और सूर्य्य मित्र हैं, बुध शत्रु है, शुक्र और शनैश्चर सम हैं।

बुध के सूर्य्य और शुक्र मित्र हैं, चन्द्रमा शत्रु है, शेष ग्रह सम हैं॥

बृहस्पति के बुध और शुक्र शत्रु हैं, शनि सम है, शेष मित्र हैं॥

शुक्र के बुध और शनि मित्र हैं, मङ्गल और बृहस्पति सम हैं, शेष दो ग्रह शत्रु हैं॥

शनि के शुक्र और बुध मित्र हैं, बृहस्पति सम है, शेष ग्रह शत्रु हैं॥

किन्हीं आचार्य्यों का मत है कि शनि के समान राहु के भी मित्र आदि हैं परन्तु कोई आचार्य्य कहते हैं कि शुक्र बृहस्पति और शनि राहु के मित्र हैं, राहु के समान केतु के भी मित्र जानने चाहियें॥

राहु के शुक्र, शनि मित्र हैं, सूर्य, चन्द्र, मङ्गल शत्रु हैं, बृहस्पति सम है॥

केतु के शुक्र शनि शत्रु हैं, सूर्य, चन्द्र, मङ्गल मित्र हैं, बुध बृहस्पति सम हैं॥

चन्द्रमा सूर्य्य मङ्गल और बृहस्पति परस्पर मित्र हैं. शेष ग्रह अर्थात् बुध, शुक्र, शनि, राहु, और केतु भी परस्पर मित्र हैं, चन्द्रमा आदि पूर्वोक्त ग्रहों की बुध आदि ग्रहों के साथ शत्रुता है॥

अतिमैत्री. परमवैरञ्च.

अतिमैत्री राहुशन्यो रिन्दुगुर्वोः कुजार्कयोः॥
राहु रव्योः परं वैरं गुरु भार्गवयोरपि।
हिमांशुबुधयोर्वैरं विवस्वन्मन्दयोरपि॥

(अर्थ)

राहु और शनि की, चन्द्रमा और बृहस्पति की, मङ्गल और सूर्य की, आपस में बड़ी मित्रता है। सूर्य्य और राहु की, बृहस्पति और शुक्र की, चन्द्रमा और बुध की, सूर्य्य और शनि की आपस में बडी शत्रुता है॥

ग्रहाणा तात्कालिक मैत्री शत्रुताच—

दशायवन्धुसहज स्वान्त्यस्थास्ते परम्परम् ।
अन्योन्यं मित्रतां यान्ति तत्कालं तानिवै मुने ॥
तथा त्रिकोण षष्ठाष्ट सप्तैकस्थित खेचराः ।
अन्योन्यं रिपुतां यान्ति तत्कालं तानिवै मुने ॥

अधिमित्राधिशत्रवः—

तत्कालमित्रंच निसर्गमित्रं
द्वयं भवेत्तत्त्वधिमित्रसंज्ञम् ।
तथैव शत्रोरधिशत्रुसंज्ञा
चैकत्र शत्रुः समता मुपैति ॥

२ । ३ । ४ । १२ । ११ । १० स्थानेषु स्थिताग्रहाः
=तात्कालिकमित्राणि.
१ । ५ । ६ । ७ । ८ । ६ स्थानेषु स्थिताग्रहा.
=तात्कालिकशत्रवः

तात्कालिकमित्रं+निसर्ग मित्रं=अधिमित्रम्
,, शत्रुः+ ,, शत्रुः =अधिशत्रुः
एकत्र मित्रं+अन्यत्र शत्रुः =समः

(अथ)

१०, ११, ४, ३, २, १२ स्थानो मे स्थित ग्रह परस्पर तात्कालिक मित्र होते हैं, तथा त्रिकोण (५, ६), ६, ८, ७, १, स्थानें में स्थित ग्रह परस्पर तात्कालिक शत्रु होते हैं ।

तत्कालमित्र और निसर्गमित्र मिल कर अधिमित्र हो जाते हैं ॥
वैसे ही तत्काल शत्रु और निसर्ग शत्रु का नाम अधिशत्रु है ॥
एक ओर से शत्रु दूसरी ओर से मित्र ग्रह सम कहलाता है ॥

सूर्यादितः किं विचार्यम्—

सूर्यादात्मपितृस्वभावनिरुजः शक्तिश्रियौ चिन्तये
च्चेतोवृद्धिनृपप्रसादजननीसम्पत्करश्चन्द्रमाः ।
सत्त्वं रोगगुणानुजावनिसुतान् ज्ञातिं धरासूनुना
विद्याबन्धुविवेकमातुलसुहृद्वाक्कर्मकृद्बोधनः ॥
प्रज्ञा वित्त शरीर पुष्टि तनय ज्ञानानि वागीश्वरात्
पत्नी वाहन भूषणानि मदन व्यापार सौख्यं भृगो
रायुर्जीवन मृत्युकारण विपत्संप्रदाता शनिः
सर्पेणैव पितामहं तु शिखिना मातामहं चिन्तयेत् ॥

(अर्थ)

आत्मा, पिता, स्वभाव, नीरोगता, सामर्थ्य और लक्ष्मी का विचार सूर्य्य से करना चाहिये ॥

चित्त, बुद्धि, राजा, प्रसन्नता, माता, और सम्पत्ति का विचार चन्द्रमा से करना चाहिये ॥

पराक्रम, रोग, गुण, भाई, पृथ्वी, पुत्र, और भाई बिरादरी का विचार मङ्गल से करना चाहिये ॥

विद्या, बान्धव, विवेक, मामा, मित्र, और वाणी का विचार बुध से करना चाहिये ॥

बुद्धि, धन, शरीर की पुष्टि, पुत्र, और ज्ञान का विचार बृहस्पति से करना चाहिये ॥

स्त्री, वाहन, भूषण, कामदेव का व्यापार और सुख का विचार शुक्र से करना चाहिये ॥

आयु, जीवन, मृत्यु का कारण, और विपत्ति का विचार शनि से करना चाहिये ॥

पितामह अर्थात् दादा का विचार राहु से करना चाहिये ।

मातामह अर्थात् नाना का विचार केतु से करना चाहिये ॥

ग्रहाणामुदयास्तादि ज्ञानम्

लग्नाद्द्वितीयेग्रहउदयमभिलषेत ।
लग्नादष्टम राशौ सोऽस्तमभिलषेत ।
सप्तमराशावस्ताभिमुखीभवति ।
यश्चषष्ठे स्थितः सोऽस्ताभिमुखो भवति ।

(अर्थ)

लग्न से दूसरे स्थान में जो ग्रह हाता है वह उदय होने को तत्पर रहता है। लग्न से अष्टम राशि में जो ग्रह होता है वह अस्त होने को तत्पर रहता है, लग्न से सप्तम राशि में जो ग्रह होता है वह अस्त होने को अभिमुख होता है और छठे स्थान में जो ग्रह होता हैं वह अस्त के सम्मुख होता है ॥

उदयादि फलम्

उदये सुखदाज्ञेया वक्रे देशान्तरप्रदाः ।
मार्गे त्वारोग्यकर्तारश्चास्ते मानार्थहानिदाः ॥

(अर्थ)

उदयी ग्रह सुख देता है, वक्री ग्रह परदेश भेजता है, मार्गी ग्रह आरोग्य करता है, अस्त हुआ ग्रह आदर और धन का नाश करता है ॥

मित्रादिस्थफलानि

मित्रस्वक्षेत्रगाः स्वोच्चे त्वधिमित्रे समेऽपिवा ।
सर्वे शुभफलाः प्रोक्ताः शत्रुगेहेत्वनिष्टदाः ॥

(अर्थ)

जो ग्रह मित्र क घर में हों या स्वक्षेत्री हों या अपने उच्च के हों या अधिमित्र या सम हों वे सब शुभ फल देने वाले होते हैं, परन्तु जो ग्रह शत्रु के घर में हों वे अनिष्ट देने वाले होते हैं ॥

ग्रहाणामङ्गविभाग पीड़ाकारक

शिरः प्रदेशे वदने दिनेशो
वक्षःस्थलेचापि गले कलावान् ।
पृष्ठोदरे भूतनयश्च पीडां
करोति सौम्यश्चरणेच पाणौ ॥
कटिप्रदेशे जघनेच जीवः
कविश्च गुह्यस्थल मुष्कयुग्मे ।
जानुप्रदेशे नलिनीश सूनु
श्चारेणवा जन्मनि चिन्तनीयम् ॥

(अर्थ)

सूर्य सिर पर या मुख में पीड़ा करता है, चन्द्रमा छाती पर या गले में पीड़ा करता है, मङ्गल पीठ या पेट में, बुध हाथ और पैरों में, वृहस्पति कमर में या टांगों में, शुक्र गुप्त स्थान में, शनैश्चर घुटना या जांघ में पीड़ा करता है। जन्म में या गोचर में इस बात का विचार करना चाहिये ॥

आत्मादीनां विचारः

कालात्मा दिनकृन्मनस्तु हिमगुः सत्त्वं कुजोज्ञोवचो
जीवो ज्ञानसुखे सितश्चमदनो दुःखं दिनेशात्मजः ।

(अर्थ)

सूर्य आत्मा है, चन्द्रमा मन है, मङ्गल पराक्रम है, बुध वाणी है, वृहस्पति ज्ञान और सुख है, शुक्र कामदेव है, और शनि दुःख है, यह काल पुरुष के अंग विभाग हैं ॥ (यदि आत्मा का विचार करना हो तो सूर्य से करे इत्यादि)

ग्रहेषु राजादयः

राजानौ रविशीतगू क्षितिसुतो नेता कुमारो बुधः
सूरिर्दानवपूजितश्च सचिवौ प्रेष्यः सहस्रांशुजः ।

(अर्थ)

सूर्य्य और चन्द्रमा राजा हैं, मङ्गल सेनापति है, बुध कुमार है, बृहस्पति और शुक्र मन्त्री हैं और शनैश्चर दास है ॥

आत्मादीनां बलाबलविचारः

बलाबलाद्ग्रहाणांस्यादात्मादीनां बलाबलम् ।
नृपाद्याः प्रबलाः कुर्युः स्वरूपं शनिरन्यथा ॥

(अर्थ)

ग्रहों के बल और अबल से आत्मा आदि के बल और अबल का विचार करना चाहिये, ऊपर लिखे हुए राजा आदि ग्रह बलवान् हों तो पुरुष को भी अपने समान बलवान् बनाते हैं, परन्तु शनि का विचार विपरीत है ।

ग्रहाणां बलविचारः

आदौ बलफलं (निसर्गबलं) प्रोक्तं ततो दृष्टि फलं स्मृतम् ।
ततो भावफलं प्रोक्त मिष्टानिष्टफलावहम् ॥
चेष्टाबलफलं चादौ स्थानवीर्यं ततो भवेत् ।
दिग्बलं च ततः प्रोक्तं कालायनबले ततः ॥

(अर्थ)

ग्रहों का बल इस प्रकार से विचारना चाहिये :—सब से पहले निसर्ग बल का विचार करना चाहिये, तदनन्तर दृष्टि फल, तदनन्तर भाव फल, जिससे इष्ट और अनिष्ट का विचार होता है, फिर चेष्टा बल, फिर स्थान बल, दिग्बल, काल बल, और अयन बल का विचार करना चाहिये ॥

चेष्टा बलम्

वक्रिणो बलिनः खेटा श्चेष्टाबल समन्विताः ।

(अर्थ)

वक्री ग्रह यदि बलवान् हों तो उनको चेष्टा बल से युक्त कहते हैं ।

ग्रहाणां कालबलम्—

निशायां बलिन श्चन्द्र कुज सौरा भवन्ति हि।
सर्वदा ज्ञो बली ज्ञेयो दिने शेषा द्विजोत्तम ॥

(अर्थ)

चन्द्रमा मङ्गल और शनि रात्रि में बलवान् होते हैं, बुध सर्वदा बलवान् होता है, शेष ग्रह दिन में बलवान् होते हैं ॥

पक्षायन बलम्

कृष्णे च बलिनः क्रूराः सौम्या वीर्ययुताः सिते।
सौम्यायने सौम्यखेटो बली याम्यायनेऽपरः ॥

(अर्थ)

क्रूरग्रह कृष्ण पक्ष में बलवान् होते हैं, सौम्य ग्रह शुक्ल पक्ष में बलवान् होते हैं, सौम्य ग्रह उत्तरायण में बली होते हैं, और क्रूर ग्रह दक्षिणायन में बलवान् होते हैं ॥

ग्रहाणां पूर्ण बलादयः

स्वोच्चे शुभे बलं पूर्णं त्रिकोणे पादवर्जितम्।
स्वर्क्षे दलं मित्रगेहे पादमात्रं प्रकीर्तितम् ॥
पादार्द्धं समभे प्रोक्तं व्यर्थनीचास्तशत्रुगे।
तद्दुष्टफलं ब्रूयाद्व्यत्ययेनर्विचक्षण. ॥

(अर्थ)

यदि शुभ ग्रह अपने उच्च का हो तो पूर्ण बलवान् होता है, यदि अपने मूल त्रिकोण में हो तो चौथाई बल कम हो जाता है, अपने घर में हो तो आधा बल पाता है, मित्र के घर में हो तो केवल चौथाई फल रह जाता है, सम के घर में हो तो आठवां हिस्सा फल देता है, यदि नीच या अस्त या शत्रु के घर में हो तो सब फल व्यर्थ हो जाते हैं। इसी प्रकार दुष्ट फल पूर्वोक्त फल के विपरीत हो जाता है। जैसे नीच का हो तो शून्य बल पाता है इत्यादि ॥

ग्रहाणांदिग्वलम्

बुधेज्यौ वलिनौ पूर्वे रविभौमौच दक्षिणे।
वारुणः (प.) सूर्य पुत्रश्च सितचन्द्रौ तथोत्तरे॥

लग्न = पूर्व, बु० वृ०

सप्तम = पश्चिम, श०

चतुर्थ = दक्षिण, सू० म०

दशम = उत्तर, चं० शु०

(अर्थ)

बुध और वृहस्पति पूर्व में वलवान् होते हैं, सूर्य और मङ्गल दक्षिण में वलवान् होते है, शनैश्चर पश्चिम में वलवान् होता है, शुक्र और चन्द्रमा उत्तर में वलवान् होते है॥

कुण्डली में लग्न को पूर्व दिशा, सप्तम स्थान को पश्चिम दिशा, चतुर्थ स्थान को दक्षिण दिशा, और दशम स्थान को उत्तर दिशा समझना चाहिये। अर्थात् बुध वृहस्पति लग्न में, शनि सप्तम में, सूर्य मङ्गल चतुर्थ में, चन्द्रमा शुक्र दशमस्थान में वलवान् होते हैं॥

ग्रहाणामेकराशिभोगकालः

मासं शुक्रबुधादित्याः सार्धमासं तु मङ्गलः।
त्रयोदश गुरुर्मासांस्त्रिंशन्मासान् शनैश्चरः॥
मासानष्टादश तमः सपाद द्विदिनं शशी।
राहुवत्केतुरुक्तस्तु॥

(अर्थ)

(प्रायः) सूर्य बुध तथा शुक्र एक मास पर्यन्त एक राशि में रहते हैं। मङ्गल डेढ महीना, वृहस्पति १३ महीना, शनैश्चर ३० महीना, राहु केतु १८ महीना, चन्द्रमा सवा दो दिन एक राशि में रहते हैं (वक्री अथवा शीघ्री होने से कभी कभी बुध आदि ग्रहों में अन्तर पड जाता है)॥

ग्रहाणा गृहाणि (स्वक्षेत्राणि वा)

यस्य ग्रहस्य यो राशिस्तस्यतद्गृह मुच्यते ॥
भौमोशनः सौम्यशशीनर्वित्सिता
रेज्यार्कि मन्दाङ्गिरसो गृहेश्वराः ॥
कन्या राहुगृहं प्रोक्तं मीनः केतुगृहं स्मृतम् ॥

(अर्थ)

ग्रह.	सू.	च.	म	बु.	वृ	शु	श.	रा.	केतु
गृह.	सिं	कर्क.	मे वृश्चि	मि कन्या	ध. मी.	वृष तु.	म. कुं.	कन्या	मी

ग्रहाणा वालाद्यवस्थाः

वालो रसांशै (६) रसमे (विषमराशौ) प्रदिष्ट
स्तत. कुमारो हि (६) युवाथ (६) वृद्ध (६) ।
मृत (६) क्रमादुत्क्रमतः (वैपरीत्येन) समर्क्षे (समराशौ)
वालाद्यवस्थाः कथिता ग्रहाणाम् ॥

(अर्थ)

ग्रहों की वाल आदि अवस्था इस प्रकार है :—विषम राशिमें ग्रह ६ अंश तक वालक रहता है, फिर ६ अंश तक कुमार, फिर ६ अंश तक तरुण, फिर ६ अंश तक वृद्ध, फिर ६ अंश तक मृत रहता है, सम राशि में इसके विपरीत होता है अर्थात् पहिले ६ अंश तक मृत, फिर वृद्ध इत्यादि ॥

फलम्

फलं तु किञ्चिद्वितनोति वाल
श्चार्द्धं कुमारो यतते च पुंसाम् ।
युवा समग्रं खचरोऽथ वृद्ध.
फलंच दुष्टं मरणं मृताख्यम् ॥

(अर्थ)

बालक ग्रह थोडा सा फल देता है, कुमार ग्रह आधा फल देता है, तरुण ग्रह सम्पूर्ण फल देता है, वृद्ध ग्रह दुष्ट फल देता है, और मृत ग्रह मरण करता है ।।

ग्रहाणां जाग्रदाद्यवस्थाः

त्रिंशदंशं त्रिभागं च कल्पयित्वा पृथक्पृथक् ।
विषमादि क्रमेणैव समे वै विपरीतकम् ॥
विज्ञाय प्रथमं पुंसां जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिकाः ।
विशेषतः परीक्ष्यः स्या ज्जागरः कार्यसाधकः ॥
स्वप्नावस्था मध्यफला उपदेष्टा गुरुर्यदि ।
निष्फला चरमावस्था ज्ञातव्या मुनिसत्तम ॥

(अर्थ)

ग्रहों की जाग्रत् आदि अवस्था इस प्रकार हैं :—हर एक राशि के ३० अंशों के तीन भाग दस, दस, अंशों मे करने चाहियें, विषम राशि में पहिले १० अंश तक जाग्रत् अवस्था, फिर १० अंश तक स्वप्न अवस्था, फिर १० अंश तक सुषुप्ति अवस्था होती है। सम राशि मे इसके विपरीत जानना चाहिये, अर्थात् सुषुप्ति, स्वप्न, और जाग्रत् अवस्था क्रम से जाननी चाहिए। जाग्रत् अवस्था कार्य साधन करनेवाली होती है उसको अच्छे प्रकार से विचार करना चाहिये, स्वप्न अवस्था मध्यम फल देने वाली होती है, सुषुप्ति अवस्था निष्फल जाननी चाहिये ।।

ग्रहाणां दीप्ताद्यवस्थाः

स्वोच्चे दीप्तः । दीप्ते सिद्धिश्च कार्याणाम्
नीचे दीनः । दीने दुःख समागमः
मुदितो मित्रगेहस्थ । आनन्दो मुदिते महान्.

स्वस्थः स्वगृहे । स्वस्थे कीर्तिस्तथा लक्ष्मी·
शत्रु गेहेस्थित· सुप्तः । सुप्ते रिपुभयं दुःखम्
जितोऽन्येन निपीडितः । धनहानिर्निपीडिते
नीचाभिमुखगो हीनः । हीनेच धननाशः स्यात्
मुषितोऽस्तंगतोग्रहः । मुषिते स्यात् कार्यनाश·
सुवीर्य उच्चाभिलाषी । सुवीर्ये रत्नसम्पदः

(अर्थ)

ग्रहों की दीप्त आदि अवस्थाएं और उनके फल .—

जब ग्रह अपने उच्च का होता है तो उसे दीप्त अवस्था वाला कहते हैं उसका फल यह है कि उसमें कार्य की सिद्ध होती है ॥

जब ग्रह नीच का होता है तो उसे दीन कहते हैं उसका फल दुःख की प्राप्ति है ।

जब ग्रह अपने मित्र के घर मे हो तो उसे मुदित कहते हैं और उसका फल यह है कि बड़ा आनन्द होता है ॥

जब ग्रह अपने घर का होता है तो उसे स्वस्थ कहते हैं उसका फल कीर्ति और लक्ष्मीप्राप्ति है ॥

जब ग्रह शत्रु के घर में हो तो उसे सुप्त कहते हैं उसका फल यह है कि शत्रु भय और दुःख होते हैं ।

जब किसी ग्रह को दूसरा ग्रह युद्ध में जीत लेवे तो उसे निपीडित कहते हैं उसका फल धनहानि है ॥

जब ग्रह नीच होने को सन्मुख हो तो उसे हीन कहते हैं उसका फल धन नाश है ॥

जब ग्रह अस्त हो जावे तो उसे मुषित कहते हैं, उसका फल कार्य नाश है ॥

जब ग्रह उच्च होने को तत्पर हो तो उसे सुवीर्य कहते हैं उसका फल रत्न और सम्पत्ति की प्राप्ति है ॥

ग्रहाणां लज्जितावस्थाः

लज्जितो[1] गर्वित[2] श्चैव क्षुधित[3]स्तृषित[4] स्तथा।
मुदितः[5] क्षोभित[6] श्चैव ग्रहभावाः प्रकीर्तिताः ॥१॥
पुत्र गेह गतः खेटो राहु केतु युतो भवेत्।
रवि मन्द कुजैर्युक्तो लज्जितो[1] ग्रह एवच ॥ २ ॥
तुङ्ग स्थान गतोवापि त्रिकोणेऽपिभवेत्पुनः।
गर्वितः[2] सो पि कथितो निर्विशङ्कं द्विजोत्तम ॥३॥
शत्रुगेही शत्रुयुक्तो रिपुदृष्टो भवेद्यदि।
क्षुधितः[3] सचविज्ञेयः शनियुक्तो यथा तथा ॥४॥
जलराशौ स्थितः खेटः शत्रुणा चावलोकितः।
शुभग्रहा न पश्यन्ति तृषितः[4] सउदाहृतः ॥५॥
मित्रगेही मित्रयुक्तो मित्रेण चावलोकितः।
गुरुणा सहितो यश्च मुदितः[5] स प्रकीर्तितः ॥६॥
रविणा सहितो यश्च पापाः पश्यन्ति सर्वथा।
क्षोभितं[6] तं विजानीया च्छत्रुणा यदि वीक्षितः ॥७॥
येषु येषु च भावेषु ग्रहास्तिष्ठन्ति सर्वथा।
क्षुधिताः क्षोभिता वापि स नरो दुःखभाजनः ॥८॥
एवं क्रमेण वोद्धव्यं सर्वभावेषु पण्डितैः।
वलावलविचारेण वक्तव्यः फलनिर्णयः ॥९॥

(अर्थ)

ग्रह इतने प्रकार के होते हैं:—(१) लज्जित (२) गर्वित (३) क्षुधित (४) तृषित (५) मुदित (६) क्षोभित ॥१॥

जब ग्रह पञ्चम स्थान में राहु, केतु, सूर्य, शनि और मङ्गल से युक्त हो तो उसको लज्जित कहते हैं ॥२॥

जब ग्रह उच्च स्थान में हो अथवा त्रिकोण में हो तो वह गर्वित कहलाता है ॥३॥

जब ग्रह शुक्र के घर में हो अथवा शत्रु से युक्त अथवा दृष्ट हो अथवा शनि के साथ बैठा हो तो उसको क्षुधित कहते हैं ॥४॥

जब ग्रह जलराशि में स्थित हो अथवा शत्रु से दृष्ट हो और शुभ ग्रह उसको न देखे तो उसको तृषित ग्रह कहते हैं ॥ ५ ॥

जब ग्रह मित्र के घर में हो अथवा मित्र से युक्त या दृष्ट हो अथवा बृहस्पति सहित हो तो उसको मुदित कहते हैं ॥६॥

जो ग्रह सूर्य के साथ हो या पापग्रह अथवा शत्रुग्रह उसको देखे तो वह क्षोभित कहलाता है ॥७॥

जिन जिन भावों में क्षुधित अथवा क्षोभित ग्रह हों वे मनुष्य को दुःख देने वाले होते हैं ॥८॥

इसी प्रकार सब भावों में बल और अबल का विचार करके फल का निर्णय करना चाहिये ॥ ९ ॥

अस्तलक्षणम्

रविणास्तमयो योगो वियोगस्तूदयो भवेत् ।
(सूर्यसन्निकर्षेणास्तमितप्रायत्वाद्ग्रहोऽशुभ)

(अर्थ)

जब ग्रह सूर्य के साथ हो तो वह अस्त हो जाता है और जब सूर्य से पृथक् हो तो उसका उदय हो जाता है (सूर्य के समीप रहने से ग्रह प्राय. अस्त हो जाता है और अशुभ फल देता है) ।

वक्रग्रहादयः

सदैव वक्रिणौ दैत्यौ सूर्येन्दू शीघ्रगौ यत. ।
सूर्यमुक्ता उदीयन्ते शीघ्राः खेटा धने रवेः ॥
तृतीये च समा प्रोक्ता श्चतुर्थे मन्दगामिनः ।
भानोः खेटाः पञ्चमे च वक्रा श्चाष्टम सप्तमे ॥
अतिवक्राः स्मृता धर्मे दशमे मार्गगामिन. ।

लाभ द्वादशके शीघ्रा यदा वक्री भवेद्ग्रहः ॥
सौम्योऽतिसौम्यश्चोग्रोऽतिपापः शीघ्रः स्वभाववत् ॥

(अर्थ)

राहु और केतु सदा वक्री होते हैं अर्थात् उल्टी चाल चलते हैं, सूर्य और चन्द्रमा शीघ्र चलने वाले हैं।

जब ग्रह सूर्य से पृथक् हो जाते हैं तो उनका उदय हो जाता है, सूर्य से दूसरे स्थान में ग्रहों की चाल शीघ्र हो जाती है, तीसरे घर में सम रहते हैं, चौथे स्थान में उनकी गति मन्द हो जाती है, सातवें और आठवें घर में वक्री हो जाते हैं, नवें स्थान में अतिवक्री हो जाते हैं, दसवें स्थान में मार्गी हो जाते हैं, ग्यारहवें और बारहवें स्थान में शीघ्री हो जाते हैं ॥

वक्रादिज्ञानम्

पूर्वास्ततः पश्चिम उद्गमोऽस्मा
द्वक्रन्ततोऽस्त पर उद्गम प्राक् ।
मार्गी पुरास्तात्खलु दन्तदन्तै
र्वेदैर्नृपैर्वेदरदैर्बुधः स्यात् ॥
भृगो सार्द्धद्विमासाष्ट मासैस्त्र्यश्विदिनैः क्रमात् ।
नवभिस्त्र्यश्विदिवसै र्मासै रष्टमितैस्तथा ॥
भौमास्तादुदयस्तस्माद्वक्रन्तदनुमार्गता ।
ततोऽस्त एवं क्रमतो वेद काष्ठा द्विपंक्तिभिः ॥
मासैर्भुवासाङ्घ्रि वेदै र्गुणैस्साङ्घ्रियुगैर्गुरोः ।
शनेः साङ्घ्रिभुवारामै र्वेदैः सार्द्धैश्चवह्निभिः ॥

वक्रादि ज्ञानाय चक्रम्

दिनानि	पूर्वास्तात्पश्चिम उदयः	पश्चिमोदयाद्वक्री	वक्रात् पश्चिमेऽस्तः	पश्चिमास्तात्प्रागुदयः	प्रागुदयान्मार्गी	मार्गात् पूर्वास्तः
बु०	३२	३२	४	१६	४	३२
शु०	७५	२४०	२३	६	२३	२४०

मासाः	अस्तादुदय	उदयाद्वक्री	वक्रान्मार्गी	मार्गादस्त
मं०	४	१०	२	१०
बृ०	१	४$\frac{५}{४}$	४	४$\frac{५}{४}$
श०	१$\frac{५}{४}$	३	४	३$\frac{५}{२}$

(अर्थ)

बुध पूर्व में अस्त होने के पश्चात् पश्चिम में उदय होता है, फिर वक्री होता है फिर अस्त हो जाता है, फिर पूर्व में उदय होता है, फिर पूर्व में अस्त होने के पहिले मार्गी हो जाता है उसके दिन इस प्रकार से हैं :—
३२, ३२, ४, १६, ४, ३२ ॥

शुक्र के दिन इस प्रकार हैं: —७५, २४०, २३, ६, २३, २४०,।

मंगल अस्त होने के उपरान्त उदयी होता है, फिर वक्री होता है, फिर मार्गी होता है, तब अस्त होता है। इस क्रम से मास इस प्रकार हैं: — ४, १०, २, १०,

बृहस्पति के मास इस प्रकार हैं :—१, ४$\frac{१}{४}$, ४, ४$\frac{१}{४}$,

शनि के मास इस प्रकार हैं :—१$\frac{१}{४}$, ३, ४, ३$\frac{१}{२}$.

ऊपर चक्र में देखने से स्पष्ट हो जावेगा॥

वक्रग्रहफलम्

क्रूरा वक्रा महाक्रूराः सौम्या वक्रा महाशुभाः।

(अर्थ)

क्रूर ग्रह जब वक्री होते हैं तो उनका फल बड़ा क्रूर होता है, परन्तु सौम्य ग्रह वक्री हों तो अतिशुभ फल देने वाले होते हैं।।

ग्रहाणां दोषपरिहारः

राहु दोषं बुधो हन्या दुभयोस्तु शनैश्चर ।
त्रयाणां भूमिजो हन्ति चतुर्णां दानवार्चित॥
पञ्चानां देवमन्त्री च षण्णां दोषं तु चन्द्रमा।
सप्तदोषं रविर्हन्या द्विशेषादुत्तरायणे॥

(अर्थ)

राहु के दोष को बुध मार देता है, राहु और बुध दोनों के दोषों को शनि मार देता है, राहु, बुध और शनि इन तीनों के दोषों को मङ्गल दबा देता है, चारों के दोषों को शुक्र हर लेता है, पांचों के दोषों को बृहस्पति दूर कर देता है, ६ ग्रहों के दोषों को चन्द्रमा नाश कर देता है और पूर्व लिखे हुए सातों ग्रहों के दोषों को सूर्य नष्ट कर देता है विशेषतः उत्तरायण में।।

ग्रहचक्रम्

ग्रहाः	सू	च	म	बु	बृ	शु	श	रा	के
राशिस्वामिनः	५	४	१।८	३।६	६।१२	२।७	१०।११	६	३
एकराशिभुक्तिप्रमाणम्	१ मास	२। दिन	१॥ मास	१ मास	१३ मास	१ मास	२॥ वर्ष	१॥ वर्ष	१॥ वर्ष
मित्राणि	च० म० बृ	सू बु	सू. बृ च	सू शु रा	सू. च. मं	बु श रा	बु शु रा	बु शु श	सू म चं
समाः	बु	मं. शु बृ श.	शु. श	म बृ श	श. रा	मं बृ	बृ	बृ	चं. बृ
शत्रवः	शु श रा	रा	बु रा.	च	बु. शु.	सू चं	सू. चं मं	सू. चं म	शु श.
उच्चस्थानानि	मे	वृष	मकर	कन्या	कर्क	मीन	तुला	मि.	ध
परमोच्चांशाः	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	२०	६
नीचस्थानानि	तु	वृश्चि	कर्क	मी	म	कन्या	मे.	ध.	मि
परमनीचांशाः	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	२०	६
मूलत्रिकोणम् अंशपर्यन्तम्	सि. २०	वृष ४-२०	मे. १२	कन्या २१—३०	ध १०	तु. १५	कु. २०	कर्क ६	सिंह ६

(१५) तन्वादिभावप्रकरणम्

तन्वादिद्वादशभावनामानि ।

तनुर्धनंच भ्राता च सुहृत्पुत्रो रिपुर्वधूः ।
मृत्युश्च धर्मकर्मायौ व्ययोभावाः प्रकीर्तिताः ॥

(अर्थ)

१२ भावों के नाम ये हैं.—

(१) तनु (२) धन (३) भ्राता (४) सुहृद (५) पुत्र (६) शत्रु (७) स्त्री (८) मृत्यु (९) धर्म (१०) कर्म्म (११) लाभ (१२) व्यय ॥

भावनामपर्यायाः

होरा तनु मूर्त्युदयं शिरश्च
वाग्वित्तकौटुम्बमथाक्षिसंज्ञम् ।
सहोत्थ दुश्चिक्य गलं तृतीयं
शौर्यं च कर्णं सुख मम्बु बन्धुः ॥
रसातलं वै हिवुकंच वेश्म
पाताल हृद्वाहन मातृ संज्ञाः ।
बुद्धि प्रभावात्मज मन्त्र संज्ञं
विवेक शक्ती उदर प्रवेशः ॥
रोग क्षतारि व्यसनं तु चौर
स्थानं भवे द्विघ्न मिहाहुरार्याः ।
चित्तोत्थ कामो मदनश्चभर्तृ
स्थानं कलत्रं दधि सूप संज्ञम् ॥
क्षीरं गुडं मूत्रक कृच्छ्र नाम
गुह्यंचरन्ध्रं मरणान्तकायुः ।

धर्मोदयो पैतृक भाग्यभंतु
गुरु स्तपो लाभ शुभार्जितानि ॥
आज्ञा च मानं दशमंच कर्म
तदास्पदं खं धन लाभ मायम् ।
व्ययोन्त्यभं रिष्फ विनाश संज्ञं
लग्नान्त्यखण्डः कथितो मुनीन्द्रैः ॥
द्यूनं द्यु न मथास्तंच यामित्रं सप्तमं स्मृतम् ॥

(अर्थ)

तनुभाव के पर्य्याय (दूसरे नाम) ये हैं.—होरा, मूर्ति, उदय और सिर ॥

धनभाव के नाम —वाक्, वित्त, कुटुम्ब और नेत्र ॥

तीसरे भाव के नामः—सहोत्थ, दुश्चिक्य, गल ॥

चौथे स्थान के नाम·—

शौर्य, कर्ण, सुख, अम्बु, बन्धु, रसातल, हिबुक, वेश्म, पाताल, हृदय, वाहन और माता ॥

पांचवें भाव के नाम·—

बुद्धि, प्रभाव, आत्मज, मन्त्र, विवेक, शक्ति, उदरप्रवेश ॥

छठे स्थान के नामः—

रोग, क्षत, अरि, व्यसन, चोर, विघ्न ॥

सप्तम स्थान के नाम·—

चित्तोत्थ, काम, मदन, भर्ता, कलत्र, दधि और सूप ॥

आठवें घर के नाम.—

छीर, गुड़, मूत्रकृच्छ्र, गुह्य, रन्ध्र, मरण, अन्तक, और आयु ॥

नवम स्थान के नामः—

धर्म, पैतृक, भाग्य, गुरु, तप, लाभ, शुभ ॥

दशम स्थान के नाम:—
आज्ञा, मान, कर्म्म, आस्पद और ख ॥

ग्यारहवें स्थान के नाम —लाभ और आय हैं ॥

बारहवें स्थान के नामः—व्यय, अन्त्य, रिष्फ, विनाश, और लग्न का अन्त्यखण्ड ॥

सातवें स्थान के नाम:—द्यून, द्युन, अस्त और यामित्र भी हैं ॥

केन्द्रादि सञ्ज्ञाः

केन्द्र चतुष्टय कण्टक संज्ञा व्यचतुर्थ सप्त दशानाम् ।
परतः पणफर मापोक्लिमं च वेवं यथाक्रमशः ॥
त्रिलाभदशमारीणां भवे दुपचयाख्यकम् ।
चतुर्थाष्टमयोः संज्ञा चतुरस्त्रं स्मृता बुधैः ॥
त्रिकोणं नव पञ्चमे ।
नवमं त्रित्रिकोणम् ।
षष्ठाष्टम द्वादशानां त्रिक संज्ञा निगद्यते ।
स्वायाष्टमात्मजाः पणफराः (२ । ५ । ८ । ११)
ऽयरि धर्मान्त्या आपोक्लिमाः (३ । ६ । ९ । १२)
केन्द्रात्परंपणफरं परत स्तुसर्वमापोक्लिमम्—

(अर्थ)

१, ४, ७, और १० स्थानों के नाम केन्द्र, चतुष्टय और कण्टक हैं ॥

उसके उपरान्त क्रम से पणफर और आपोक्लिम हैं ॥ (२।५।८।११ = पणफर ॥ ३।६।९।१२ = आपोक्लिम)

३, ६, १० और ११ स्थानों का नाम उपचय है ॥
४, ८, स्थानों का नाम चतुरस्र है ॥
५, ९, स्थानों का नाम त्रिकोण है ॥
नवें स्थान का नाम त्रित्रिकोण है ॥
६, ८, और १२ स्थानों का नाम त्रिक है ॥

भाव नाम चक्रम्
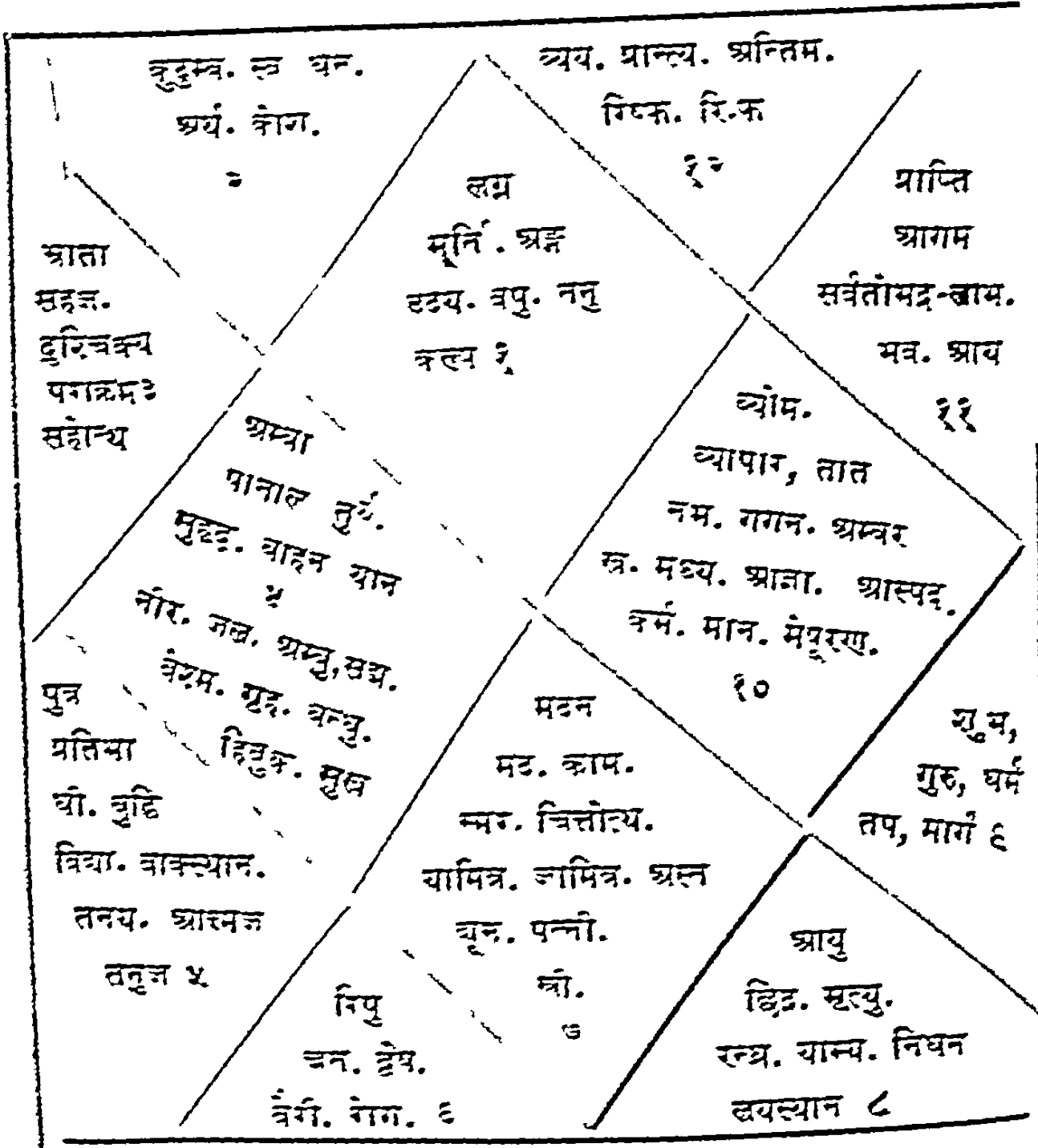
१ । ४ । ७ । १० = कण्टक. केन्द्र. चतुष्टय.

२ । ५ । ८ । ११ = पणफर

३ । ६ । ९ । १२ = आपोक्लिम.

४ । ८ = चतुरस्र

५ । ९ = त्रिकोण

९ = त्रित्रिकोण

३ । ६ । १० । ११ = उपचय

१ । २ । ४ । ५ । ७ । ८ । ९ । १२ = अपचय

६ । ८ । १२ = त्रिक

द्वादश भाव निरीक्षणम्

भिन्नं द्वादशधा विरच्य विलसं चक्रं चतत्र न्यसे
ल्लग्नाद् द्वादश राशयोतिविशदा वामाङ्ग भागे क्रमात् ।
अङ्क्यास्तत्रनभश्चरा· स्फुटतरा राशौच यत्र स्थिता
स्तेभ्यः साधुफलंत्वसाधु सुधिया वाच्यंच होरागमात् ॥

रूपं तथा वर्ण विनिश्चयश्च चिह्नानि जातिर्वयसः प्रमाणम् ।
सुखानि दुःखान्यपि साहसंच लग्ने विलोक्यं खलु सर्व मेतत् ॥
स्वर्णादिधातुक्रय विक्रयश्च रत्नानि कोशोऽपिचसङ्ग्रहश्च ।
एतत्समस्तं परिचिन्तनीयं धनाभिधाने भवने सुधीभिः ॥
सहोदराणामथकिङ्कराणां पराक्रमाणां सहजाद्विचारः ।
बाहुस्तृतीयं सहजाख्य मत्र त्वस्वापितृव्यास्वकमातुलादेः ॥
दास्यादिकानां श्रुति विक्रमादेर्भ्रातुःफलंवाच्यमत सुधीभि· ।
सुहृद्गृहग्रामचतुष्पदोवा क्षेत्रोद्यमालोकनकं चतुर्थे ॥
सुखं चतुर्थात्क्षितिवाहनादेर्वापीतडाग प्रहिभूरुहादेः ।
क्षेत्रेष्टमित्रालय वन्धुमातृ वक्ष स्थलादेश्चफलं विचार्यम् ॥
(श्वशुरस्य जनक मातुश्च विचारोऽस्मादेव स्थानात्)
वुद्धि प्रवन्धात्मज मंत्र विद्या विनेयगर्भस्थितिनित्यसंस्था ।
सुताभिधाने भवने नराणां होरागमज्ञैः परिचिन्तनीयम् ॥

वैरिप्रीति क्रूरकर्मामयानां चिन्ता शङ्का मातुलानां विचारः।
होरा पारावार पार प्रयातै रेतत्सर्वं शत्रुभावे विचिन्त्यम् ॥
रणाङ्गणश्चापिवणिक् क्रियाश्च जायाविचारो गमनं प्रयाणम्।
शास्त्रप्रवीणैर्हिविचारणीयं कलत्रभावे किल सर्व मेतत् ॥
नद्युत्तारात्यन्तवैषम्यदुर्गं शस्त्रं चायुः सङ्कटंचेतिसर्वम्।
रन्ध्रस्थाने सर्वदा कल्पनीयं प्राचीनानामाज्ञया जातकज्ञैः ॥
नद्युत्तारेच नौकायां मार्गवैषम्यसंस्थिते।
दुर्गस्यवेष्टनंचैव फलं तस्माद्विचिन्तयेत् ॥
वस्तुनाशे हृतेचापि शत्रुभिः कारिते भये।
अथवा युद्धसमये तथा व्याधिसमुद्भवे ॥
छिद्रालोकान्यलीकानि चिन्तयेच्चाष्टमेबुधः ॥
धर्मक्रियायांहिमनः प्रवृत्तिर्भाग्योपवृद्धिर्विमलंचशीलम्।
तीर्थप्रयाणं प्रणयः पुराणैः पुण्यालये सर्वमिदं प्रदिष्टम् ॥
विहाय सर्वं गणकै र्विचिन्त्यं
भाग्यालयं केवलमेव यत्नात्।
आयुश्च माताच पिताच्च वंशो
भाग्यान्वितेनैव भवन्ति धन्याः ॥
व्यापार मुद्रा नृपमान राज्यं वियोजनं चापि पितुस्तथैव।
महत्पदाप्तिः खलु सर्वमेतद्राज्याभिधाने भवने विचार्यम् ॥
गजाश्व हेमाम्बर रत्नजात मान्दोलिकामङ्गल मण्डनानि।
लाभः किलैषामखिलं विचार्य मेतत्तु लाभस्यगृहे ग्रहज्ञैः ॥
हानिर्दानं व्ययश्चापि दण्डो निर्बन्धणं च।
सर्वमेवव्ययस्थाना च्चिन्तनीयं प्रयत्नतः ॥
सपत्नीमातरश्चापि हारिस्थानान्निरीक्षयेत्।
प्रवासस्य ऋणस्यापि व्योमस्थानान्निरीक्षणम् ॥
पशुर्विचार्यः शत्रुभावात्।

(अर्थ)

पहिले एक चक्र बनाना चाहिये जिसमें १२ कोठे हों, लग्न से आरम्भ करके बाए हाथ की ओर क्रम से बारह राशियों को अङ्कों में लिखे, फिर जिस राशि में गणित से ग्रह स्पष्ट निकले उस राशि में ग्रहों को लिखे, तब उसका विचार करके अच्छा या बुरा फल बुद्धिमान् मनुष्य कहे ॥

रूप, वर्ण चिन्ह, जाति, आयु का प्रमाण, सुख, दुःख, इन सब बातों का विचार लग्न से करना चाहिये ॥

सुवर्ण आदि धातुओं का बेचना या ख़रीदना, रत्न, कोश (खजाना), संग्रह, इन सब बातों का विचार धन स्थान से करना चाहिये ॥

भाई, बहिन, नौकर, पराक्रम, हाथ, चचा, मामा, दासी आदि सब बातों का विचार तीसरे स्थान से करना चाहिये ॥

मित्र, घर, ग्राम, चौपाया, खेती, उद्यम, सुख, भूमि, वाहन, बावड़ी, तालाव, कुआ, वृक्ष, इष्ट मित्र, भाई बिरादर, माता, छाती, ससुर, नानी का विचार चौथे स्थान से करना चाहिये ॥

बुद्धि, सन्तान, मन्त्र, विद्या, शील स्वभाव, गर्भस्थिति का विचार, पञ्चम स्थान से करना चाहिये ॥

शत्रु, क्रूरकर्म्म, रोग, चिन्ता, शका, मामा का विचार छठे स्थान से करना चाहिये ॥

सग्राम, व्यापार, स्त्री का विचार गमन इन सब बातों का विचार सप्तम स्थान से करना चाहिये ॥

नदी का पार करना, अत्यन्त विषम मार्ग, किला, शस्त्र, आयु, सङ्कट का विचार आठवें स्थान से करना चाहिये ॥

नदी तैरना, नाव चलाना, विषम मार्ग, किले को घेरना, वस्तु का नाश, शत्रु का भय, युद्ध समय, व्याधि का उत्पन्न होना, छिद्र मार्ग, टेढी बात इनका विचार भी अष्टम स्थान से, होता है ॥

धर्म के काम में चित्त लगना, भाग्य की वृद्धि, निर्मल स्वभाव, तीर्थ-यात्रा, नम्रता का विचार, नवम स्थान से करना चाहिये ॥

ज्योतिषी को चाहिये कि सब बातों को छोड़ कर, केवल भाग्य स्थान का विचार यत्न से करे, क्योंकि भाग्यवान् पुरुष के पैदा होने से आयु, माता, पिता और वंश धन्य होते हैं ॥

व्यापार, मुद्रा, राजा से आदर, राज्य, पिता, बड़ी पदवी की प्राप्ति का विचार दशम स्थान से करना चाहिये ॥

हाथी, घोडा, सुवर्ण, वस्त्र, रत्न, आभूषण, लाभ इन सब बातों का विचार ग्यारहवें घर से करना चाहिये ॥

हानि, दान, व्यय, पाखण्ड, घेरना या पकड़ना, इन सब बातों का विचार बारहवें घर से करना चाहिये ॥

सौतेली मा का विचार छठे स्थान से होता है । प्रवास (परदेश में जाना) और ऋण का विचार दशम स्थान से करना चाहिये ॥

पशु (गाय, भैंस इत्यादि) का विचार छठे स्थान से करना चाहिये ॥

कस्मिन्भावे किंविचार्यम्.

१ — शरीर की दुर्बलता और पुष्टता. शरीर का रंग. शील. आकृति क्लेश- रूप. शरीर में चिह्न. आयु-आरोग्य. शरीर लक्षण. अवस्था-गुण. सुख दुःख. ब्राह्मण आदि जाति १

२ — सुवर्ण. रौप्य. रत्न. धातु. द्रव्य. धन. मुक्ता. मणि सखा. वस्त्र. अश्व कार्य. अध्व ज्ञान २

३ — भाई. बहिन. भृत्य. मार्ग चलना. पित्र्य. ३ साहस. दास.

४ — विधि. पित्र्यवित्त. क्षेत्र. गृह. भूमि. बगीचा. तालाब. महौषधि. विवरादि प्रवेश. माता. सुख. मित्र. बन्धु. ४

५ — मन्त्र धनोपाय गर्भ, विद्या पुत्र, सन्तान बुद्धि ५

६ — खर उष्ट्र, महिष आदिपशु.चौरभय सग्राम. मातुल-मान्द्य. रोग. शत्रु. व्रण भय. क्रूरकर्म बन्धभय. भृत्य. ६

७ — स्त्री. विवाद. वाणिज्य व्यवहार. कलह. मार्ग गमागम. नष्ट विस्मृत सकथा ७

८ — नदी तैरना, मार्ग वैषम्य. परिवार छिद्र. गुदारोग. मृत वित्त.रण. रिपु.दुर्गस्थान. मृति. नाश-मनोव्यथा. ऋण. चिरन्तन द्रव्य ८

९ — धर्म यात्रा. दीक्षा. मठ देवगृह वापी कूपादि. ९

१० — राज्य. पैतृक. वृद्धि. प्रवास-ऋण. १० वृष्ट्यादि व्योम वृत्तान्त स्थान.

११ — ११ सर्वार्थ धान्य. अश्व ,कन्या मित्र,चतुष्पाद परिवार, लाभोपाय,राजा से द्रव्य गज,अश्व, यान वस्त्र, काचन, विद्यालाभ धन लाभ

१२ — वैरिनिरोध. अर्ति. व्यय. त्याग. भोग. विवाद. दान. इष्ट कृषिकर्म. १२

(१६) लग्न प्रकरणम्

राशिचक्रम्—

जैसे ही भूगोल ३६० अंशों में बटा है, ऐसे ही खगोल भी ३६० अंशों में विभाजित है। जैसे ही पृथ्वी में विषुवद्रेखा है ऐसे ही खगोल में भी एक मध्य रेखा मान ली गई है और उसके ८ अंश उत्तर और ८ अंश दक्षिण तक मेष आदि बारह राशियां हैं। हर एक राशि ३० अंशों की है, कुल ३०×१२=३६० अंश हैं। २८ नक्षत्र भी इन्हीं १२ राशियों में हैं। हरएक नक्षत्र १२$\frac{६}{७}$ अंश का है।
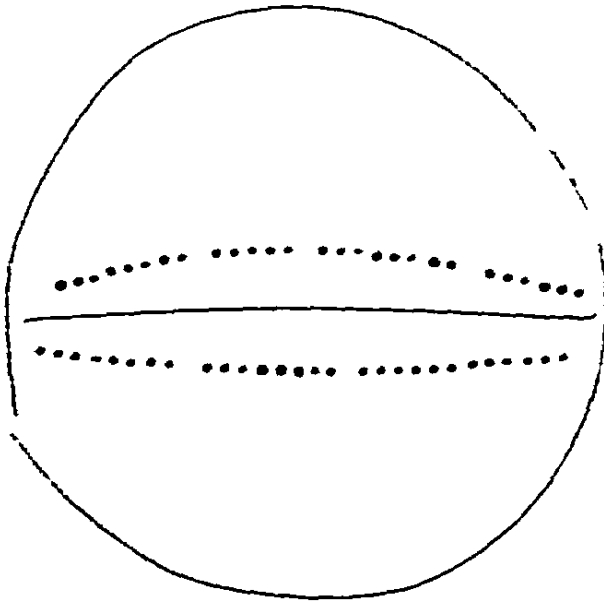
भूमध्यरेखादयः—

यल्लङ्कोज्जयिनी पुरी परि कुरुक्षेत्रादिदेशान्स्पृशन्
सूत्रं मेरुगतं बुधैर्निगदिता सामध्यरेखा भुवः ॥

मध्यरेखा=latitude and not the equator.

रेखान्तर संस्कार=E. or W of मध्य रेखा।

देशान्तर=longitude or meridian.

$\frac{360^\circ}{24}$ hrs = 15° per hour or $1^\circ = 4$ minutes.

अक्षांश = उत्तर दक्षिण रेखा॥

(अर्थ)

भूगोल में पृथ्वी के पूर्व पश्चिम और उत्तर दक्षिण को नक्शे में रेखायें खींची रहती हैं, पूर्व-पश्चिम रेखाएं देशान्तर कहलाती हैं और उत्तर दक्षिण रेखायें अक्षांश कहलाती हैं। आज कल नक्शो में ग्रीनविच से मध्य रेखा मानी जाती है परन्तु भारतवर्ष में पुराने समय में मध्य रेखा लङ्का से उज्जैन और कुरुक्षेत्र आदि देशों को स्पर्श करती हुई, मेरु पर्वत (उत्तर ध्रुव) पर्यन्त पहुंची हुई मानी गई है। मध्य रेखा से पूर्व या पश्चिम का विचार देशान्तर संस्कार कहलाता है॥

गणित में सब गोल चीजें, ३६० अंशों में बांटी जाती हैं इस लिये पृथ्वी भी ३६० अंशों मे बांटी गई है। रात दिन के मिला कर २४ घण्टे (अथवा ६० घड़िया) होते हैं। ३६० में २४ का भाग देने से १५ अंश आते हैं अर्थात् एक घंटे में पृथ्वी १५ अंश चलती है अथवा एक अंश चलने में ४ मिनट् लगते हैं॥

लङ्कोदयाः—

लङ्कोदया विघटिका गजभानिगोऽङ्क
दस्रास्त्रिपक्ष दहनाः क्रमगोत्क्रमस्थाः।
हीनान्विताश्चरदलैः क्रमगोत्क्रमस्थै
र्मेषादितो घटत उत्क्रमत स्त्विमेस्युः॥

(अर्थ)

लङ्कोदय इस प्रकार से हैं :—

मेष	२७८	मीन
वृष	२९९	कुम्भ
मिथुन	३२३	मकर
कर्क	३२३	धन
सिंह	२९९	वृश्चिक
कन्या	२७८	तुला

मेष के २७८ पल, वृष के २९९ पल, मिथुन के ३२३ पल, कर्क से इनका उलटा समझना चाहिये, फिर तुला से मीन तक विपरीत समझना चाहिये, इनमें अपने अपने देश के चरखण्डों को घटाने से तथा जोडने से स्वदेशीय राशियों के उदय स्पष्ट हो जाते हैं ॥

लङ्का प्रायः मध्यरेखा के पास है इसलिए वहा रात दिन घटते बढ़ते नहीं हैं, समान रहते हैं, परन्तु वहा से जितना उत्तर अथवा दक्षिण को बढोगे उतनाही रात दिनों में अन्तर होता जावेगा । इसी कारण राशियों के उदयों में भी अन्तर पड़ता है उनका निकालने की विधि आगे लिखी जावेंगी ।

अयनांशाः—

वेदाब्ध्यब्ध्यूनः खरस हृतः शकोऽयनांशाः ॥

उदाहरणम् ।

शाके १८४०

--४४४

———अंश. कला.

६०) १३९६ (२३-१६

१२०

———

१९६

१८०

———

१६

(अर्थ)

शाके में ४४४ घटा कर ६० का भाग देने से अयनांश सिद्ध हो जाते हैं। उदाहरण ऊपर लिखा है। ६० वर्ष में एक अयनांश बदलता है। चल संक्रम सक्रान्ति से प्रायः २१ दिन पहिले हो जाता है यही अयनांश का तात्पर्य्य है।

चरखण्डानयनम्—

मेषादिगे सायन भाग सूर्ये
दिनार्द्धजाभा पलभाभवेत्सा।
त्रिस्था हताः स्युर्दशभिर्भुजङ्गै
र्दिग्भिश्चरार्द्धानि गुणोद्धृतान्त्या ॥
द्वादशाङ्गुलः शङ्कुः।
पलभा=छाया।

लङ्कोदयेषुक्रमसंस्थितेषु हेयानितत्तच्चरखंडकानि।
विलोमसंस्थेषुविलोमगानि योज्यानितत्स्वस्वविलग्नमानम् ॥

(अर्थ)

चरखण्डा निकालने की विधि यह है—जब सूर्य्य मेष राशि के प्रारम्भ में हो उसमें अयनाश मिला कर दोपहर के समय १२ अङ्गुल का शङ्कु बना कर छाया नापे, उसे पलभा कहते हैं॥ उस पलभा को ३ स्थानों में स्थापित करे, पहिले स्थान में १० से गुणा करे, दूसरे स्थान में ८ से और तीसरे स्थान में १० से गुणा करे, और तीसरे स्थान के गुणन फल में ३ का भाग देवे। इस प्रकार से अपने देश के चरखण्डे निकल आते हैं॥

ऊपर लिखे हुए लङ्कोदयों में चरखण्डों को घटावे परन्तु जो विपरीत लिखे हैं, उनमें चरखण्डो को जोडना चाहिये ऐसा करने से अपने देश का लग्नमान निकल आता है ॥

कूर्माचले चरखण्डानयनम्—

अलमोड़ायां पलभा = ६।४०

(६ अंगुल, ४० प्रत्यङ्गुल)

```
   ६-४०        ६-४०           ६-४०
×   १०           ८              १०
 ─────       ─────          ─────
    ६७          ५३       ३ ) ६७ ( २२
                             ६६
                           ─────
```

इसलिये चरखण्डा = ६७-५३-२२

सप्तषष्टिस्त्रिपञ्चाशदाकृतिश्चरखण्डकाः ।

अथवा

चरखण्डाः सप्तरसा गुणबाणाः कराश्विनः ।

(अर्थ)

अलमोडा में पलभा ६ अङ्गुल, ४० प्रत्यङ्गुल है। ऊपर लिखी रीति के अनुसार ६७,५३,२२, चरखण्डे निकलते हैं। रीति ऊपर स्पष्ट लिखी हुई है ॥

कूर्माचले लग्नमानम्

लंकोदयाः				चरखंडा.		
मे.	२७८	मी.	—	६७	=	२११
वृ.	२९९	कु	—	५३	=	२४६
मि.	३२३	म.	—	२२	=	३०१
क.	३२३	ध.	+	२२	=	३४५
सिं.	२९९	वृ	+	५३	=	३५२
क.	२७८	तु.	+	६७	=	३४५

मेषेरुद्राश्विषट् सिद्धा भूखाग्नि पञ्चवागुणाः ।
द्विशराग्नि शराब्ध्यग्नि पलाजूकाद्विपर्ययाः ॥

(अयनाशायेोज्याः)

मेषेखाग्नियमाः प्रोक्ता वृषे शून्यंगजाश्विनः ।
मिथुने चन्द्रदेवाः स्युः कर्कटेऽक्षशराग्नयः ॥
सिंहे शैलाब्धिरामाःस्युः, कन्यायां द्वियुगाग्नयः ।
तु लायां तान रामाः स्युर्वृश्चिकेग्नि शराग्नयः ॥
धनुष्यभ्ररदाः प्रोक्ता मकरेऽक्षषडश्विनः ।
कुम्भे चन्द्राकृतिमता मीनेशैलनखास्तथा ॥

(अथ)

कूर्मांचल मे लग्न का मान निकालने का उदाहरण ऊपर लिखा है ॥

लग्नमानम्.

कूर्मांचले.			काश्याम्
पलात्मकमानम्.	घटीपलात्मकमानम्		घटीपलात्मकमानम्
२३०	३।५०	मे.	३।४४
२८०	४।४०	वृ.	४।१४
३३१	५।३१	मि	५।३
३५५	५।५५	क.	५।४०
३४७	५।४७	सि.	५।४३
३४२	५।४२	क.	५।३४
३४६	५।४६	तु	५।४३
३५३	५।५३	वृ.	५।४०
३२०	५।२०	ध.	५।४०
२६५	४।२५	म.	५।३
२२१	३।४१	कुं.	४।१४
२०७	३।२७	मी.	३।४४

काश्यां पलभा = ५।४५, चरार्धानि ५७।४६।१६ तेनसिद्धमेषादिमानम् २२१।२५३।३०४।३४२।३४५।३३५ तुलादौविपरीतम्।

(अर्थ)

काशी में पलभा ५, ४५ है, चरखण्ड ५७, ४६, १६ हैं, उदाहरण के लिये अलमोड़ा और काशी का लग्नमान लिया गया है वह ऊपर चक्र में देखने से स्पष्ट हो जावेगा। इसी प्रकार अन्य देशों के भी सिद्ध हो सकते हैं॥

वर्तमान लग्नमानम् (कूर्माचले केषाचिन्मतेन)

मेषे पञ्चाग्नि दस्राः स्युर्वृषेबाणाष्ट लोचनाः।
मिथुने खाग्निरामाः स्युः कर्कटे खशराग्नयः॥
सिंहे शैला ब्धिदहनाः तन्व्यामश्व्यनिलाग्नयः।
तुलाया मभ्रबाणाग्निर्वृश्चिके द्विशराग्नयः॥
धनुष्यब्धि द्विजलना मकरे द्विरसाश्विनः।
कुम्भे द्विद्वियमाः प्रोक्ता मीनेरुद्राश्वि सम्मताः॥

पलात्मकमानम्

मे.	२३५
वृ.	२८५
मि.	३३०
क.	३५०
सि.	३४७
क.	३३२
तु.	३५०
वृ.	३५२
ध.	३२४
म.	२६२
कु.	२२२
मी,	२११

अर्थ

कूर्माचल में वर्तमान लग्नमान ऊपर चक्र में लिखा है॥

लग्नानयनम्—

भुक्ताहोभिर्हतंलग्नं मासमानेन भाजितम् ।
लब्धंरात्रिगतं विद्या च्छेषं दिनगतं भवेत् ॥

(अर्थ)

लग्न निकालने की विधि यह है कि सक्रान्ति से जितने दिन व्यतीत हों उनसे पलात्मक लग्नमान को गुणा करे और जितने दिन का वह महीना हो उस संख्या से भाग देवे.जो लब्धि आवे वह रात्रि गत लग्न है जो शेष रहे वह दिनमें जानना चाहिये ॥

उदाहरण—

जिस राशिमें सूर्य हो वही लग्न सूर्योदय के समय होता है। मानलो कि किसी का जन्म ११ बजे दिन में हुआ, मानलो कि उस दिन सूर्योदय ६ बजे है, तो सूर्योदय से जन्म समय पर्यन्त ५ घण्टे व्यतीत हुए। २॥ घड़ी का एक घण्टा होता है। इसलिये ५ घण्टे की १२॥ घड़िया हुईं अत- इष्ट काल १२$\frac{१}{२}$ अथवा १२ घडी ३० पल हुआ इसके उपरान्त नीचे लिखी हुई विधि करनी चाहिये।

सारणीतोलग्नस्पष्टविधिः

स्फुटार्कराश्यंक समान कोष्ठे स्वेष्ट कालेयोज्यः ।
तदङ्क समान कोष्ठे राश्यादि लग्नं स्पष्टं भवति ॥

(अर्थ)

लग्न सारणी से लग्न निकालने की विधि यह है कि जिस दिन का लग्न निकालना हो उस दिन के सूर्य्य स्पष्ट के अङ्क के समान कोष्ठक में अपना इष्ट काल जोड देना चाहिये जोड़ने पर जो अङ्क निकले वह अङ्क जिस कोष्ठक के समान हो वही लग्न स्पष्ट होता है, (यदि जोडने पर ६० से अधिक अङ्क हो तो ६० उसमें से घटा देना चाहिये) ॥

सन्देहे लग्न निर्णयः—

उदयाद्वा गता नाड्य स्तासामर्द्धेन संख्यया ।
सूर्यर्क्षाद्यद्भवेल्लग्नं तेन लग्नस्य निर्णयः ॥
चन्द्रलग्नाधिपोयत्रतत्त्रिकोणमथापिवा ।
तत्सप्तमेत्रिकोणेवा संशये लग्न निर्णयः ॥

(अर्थ)

यदि लग्न के निर्णय में सन्देह होवे तो उसको निश्चय करने को यह रीति है कि सूर्योदय से जितनी घड़ी दिन गया हो उन घड़ियों का आधा करे और जिस नक्षत्र में सूर्य्य हो उससे जो लग्न निकले वही लग्न जानना चाहिये । अथवा चन्द्र लग्न का स्वामी जहा पर हो अथवा जहां से उसका त्रिकोण हो उससे सातवें में अथवा त्रिकोण में लग्न का निर्णय करना चाहिये ॥

(१७) ग्रहादिसाधनप्रकरणम्

ग्रहसाधनम् (पञ्चाङ्गात्)

मिश्रमानेष्टमध्यस्था गत्या गुण्या घटीप्रमा ।
योज्या शोध्या ग्रहे स्पष्टेऽधिका हीनाऽन्यथाऽऽवक्रजौ ॥

(अर्थ)

(पञ्चाङ्ग के मिश्रमान और इष्ट के मध्य जो दिन घटिका हों उन सबको घटिका बनालो उन घटिकाओं को ग्रह की गति से गुणा करो । फिर ६० का भाग दो । जो लब्धि मिले उसको + या — करो । वक्री ग्रह हो तो उलटी रीति करो अर्थात् + में — और — में + करो)

ग्रहस्पष्टस्यावश्यकता

ग्रहस्पष्टं विनाये ते निगदन्ति कुबुद्धयः ।
दशान्तर्विदशादीनां फलं यान्त्युपहास्यताम् ॥

(अथ)

जो कुबुद्धि वाले लोग विना ग्रहों के स्पष्ट किये हुए दशा और अन्तर्दशा का फल कहते हैं उनकी हसी होती है अर्थात् उनके कहे हुए फल ठीक नहीं मिलते ॥

सूर्यस्पष्टोदाहरणम्

भाद्र शुक्ल द्वादश्यां रवौ—इष्टम् २४ । ३६

पौर्णमास्यां बुधे (प्रातः) तिथि पत्रे सूर्यस्यगतिः ५८ । ३३

$\text{५८-३३} = \text{५८}\frac{\text{३३}}{\text{६०}} = \text{५८}\frac{\text{११}}{\text{२०}} = \frac{\text{११७१}}{\text{२०}}$ (गतिः)

वा.घ.प.

बुधे प्रातः ४-०-०

रवौ-इष्टसमये १-२४-३६

२-३५-३४ गुणक ऋणम्—

$\text{२-३५-३४} = \text{२-३५}\frac{\text{३४}}{\text{६०}} = \text{२-३५}\frac{\text{१७}}{\text{३०}}$

$= \text{२-}\frac{\text{१०६७}}{\text{३०} \times \text{६०}} = \text{२}\frac{\text{१०६७}}{\text{१८००}}$

$= \frac{\text{४६६७}}{\text{१८००}}$ दिनात्मकम्

$\frac{\text{११७१}}{\text{२०}}$ (गतिः) $\times \frac{\text{४६६७}}{\text{१८००}}$ (गतदिवस) $\div \text{६०}$ (स्वपट्हृता)

$= \frac{\text{११७१}}{\text{२०}} \times \frac{\text{४६६७}}{\text{१८००}} \times \frac{\text{१}}{\text{६०}} = \frac{\text{५४६५०५७}}{\text{२१६००००}} = \text{२-३१-४८}$

पौर्णमास्यां पञ्चाङ्गे स्पष्टः = ५-०-२८-३

—२-३१-४८

सूर्य स्पष्टः (द्वादश्यां) ४-२७-३६-१५

एव भौमादीनाम् । राहुकेतोर्वक्रग्रहस्य च विपरीतम् ॥

(अर्थ)

सूर्य्य स्पष्ट का उदाहरण ऊपर लिखा है इसी प्रकार भौम आदि ग्रहों का भी स्पष्ट निकालना चाहिये । चन्द्रमा के स्पष्ट की विशेष रीति आगे लिखी है, राहु, केतु और वक्री ग्रहों के स्पष्ट निकालने में विपरीत क्रिया होती है अर्थात् औरों में जहा धन हो इनमें ऋण होता है जहां औरों में ऋण हो इनमें धन होता है ॥

चन्द्रस्पष्ट रीतिः

गतर्क्षनाड्य खरसेषु शुद्धाः
सूर्योदयादिष्टघटीषु युक्ताः ।
भयात संज्ञा भवतीह तस्य
निजर्क्षनाडीसहितो भभोगः ॥
चेत्स्वेष्टकालात्प्रागेव ऋक्षं यदि समाप्यते ।
तदिष्टकालतो ऋक्ष नाड्यः शोध्यागतर्क्षकम् ॥
भभोगाः पूर्ववत्कार्याः ॥
खषड्घ्नं भयातं भभोगोद्धृतं तत्
खतर्कघ्नधिष्ण्येषु युक्तं द्विनिघ्नम् ।
नवाप्तः शशी भागपूर्वस्तु भुक्तिः
खखाभ्राष्टवेदाभभोगेन भक्ताः ॥

(अर्थ)

गत नक्षत्र की नाडियों को ६० मे घटावे और सूर्य्योदय से जो इष्ट काल हो उसमें जोड़ देवे इसका नाम भयात है और उसीमें अपने नक्षत्र की नाड़ी जोडने से भभोग बन जाता है ॥

यदि अपने इष्ट काल से पहिले ही नक्षत्र समाप्त हो जावे तो इष्ट काल में नक्षत्र की नाडी घटाने से गतर्क्ष बन जाता है और भभोग पूर्ववत् बनाना चाहिये ॥

भयात को ६० से गुणा करे और भभोग से भागदे और गत नक्षत्र की सख्या को ६० से गुणा करके उसमें जोड दे, योगफल को २ से गुणा करे, गुणनफल में ९ का भाग देने से चन्द्रमा का राश्यादि स्पष्ट निकल आता है ॥

४८००० में भभोग का भाग देने से चन्द्रमा की गति निकल जाती है॥

(स्थूलरीति)

एक राशि मे $२\frac{१}{४}$ नक्षत्र होते हैं एक नक्षत्र मे प्रायः ६० घडियां होती हैं इस कारण $२\frac{१}{४}$ नक्षत्रों के मिल कर ६०+६०+१५=१३५ घडिया हुईं।

३० अश भोग करने मे जब १३५ घडिया लगती हैं तो १ अश भोग करने में $४\frac{१}{२}$ घडिया लगेंगी और नक्षत्र के १ चरण (अर्थात् १५ घडी) भोग करने में ३ अंश, २० कला भुक्त हो जायेंगी ॥

चन्द्रमा की मध्यम गति ७९० होती है। सूर्य्य आदि ग्रहों की गति पञ्चाङ्ग मे दी रहती हैं ॥

भयात भभोगोदाहरणम्.

गतर्क्षम्. पूर्वा फल्गुनी, घट्यः २४।३३

वर्तमान नक्षत्रम्. उत्तरा फल्गुनी. घ. २१।३०

सूर्योदयादिष्टघट्यः—२०।०

घ. प.

६०—० खरसेषु शुद्धाः

— २४—३३ गतर्क्षनाड्यः

३५—२७

\+ २०—० सूर्योदयादिष्टघटीषु युक्ताः

५५—२७ भयात संज्ञा भवतीह तस्य.

३५—२७ = गतर्क्षनाड्यः खरसेषु शुद्धाः

\+ २१—३० = निजर्क्षनाड्य

५६—५७ निजर्क्षनाडी सहितो भभोगः

द्वितीयोदाहरणम्.

हस्त नक्षत्र घट्यः १४।५१, सूर्योदयादिष्टम् २०।३०

(२०—३०)—(१४—५१) = ५।३९ भयातम्.

(६०—०)—(१४—५१) = ४५-९;

(४५-९) + (१२-४१) (चित्रा नक्षत्र घट्यः) = ५७-५० भभोगः

चन्द्रस्पष्टोदाहरणम्.

घ. प.

५६-५७ पूर्वोदाहरणे भभोगः

× ६०

३३६०

\+ ५७

३४१७ पलात्मको भभोग. (एकजातिः)

५५—२७ भयातम्

\+ ६०

३३००

× २७

३३२७ पलात्मकं भयातम्. (एक जातिः)

३३२७ भयातम्.

× ६० खपड्घ्न

१९९६२० = खपड्घ्न भयातम्

खषड्घ्नं भयातं भभोगोद्धृतंतत्.

३४१७) १९९९१० (घ. प.
१७०८५ ५८-२५ उत्तराफल्गुनीभे स्पष्टभुक्तघट्यः

२८७७०
२७३३६

१४३४
६० पल.

३४१७) ८६०४० (२५
६८३४

१७७००
१७०८५

६१५

खतर्कघ्नधिष्ण्येषु युक्तम्.
गतनक्षत्रं = पूर्वफल्गुनी, सख्या = ११
११ × ६० = ६६०
+५८

७१८ खतर्कघ्नधिष्ण्येषु युतम्
× २ द्विनिघ्नम्
अंश पल विपल

नवाप्त ९) १४३६ (१५९-३८-५२

(अर्थ)

भयात, भभोग, चन्द्रस्पष्ट, और चन्द्रमा की गति का उदाहरण ऊपर लिखा हुआ है ॥

भावसाधनम्.

पूर्वं नतंस्याद्दिनरात्रिखंडं दिवानिशो रिष्टघटीविहीनम् ।
दिवानिशो रिष्टघटीषु शुद्धं द्युरात्रिखंडं त्वपरं नतंस्यात् ॥
तत्काले सायनार्कस्य भुक्तभोग्यांशसंगुणात् ।
स्वोदयात्खाग्निलब्धं यद्भुक्त भोग्यंरवेस्त्यजेत् ॥
इष्टनाडी पलेभ्यश्च गतगम्यान्निजोदयात् ।
शेषंखत्र्याहतं भक्त मशुद्धेन लवादिकम् ॥
अशुद्धशुद्धभेहीनं युक् तनुर्व्ययनांशकम् ।
एवंलङ्कोदयैर्भुक्तं भोग्यं शोध्यं पलीकृतात् ॥
पूर्वपश्चान्नतादन्यत्प्राग्वत्तद्दशमं भवेत् ।
सषड् भे लग्नखे जाया तुर्यौ लग्नोनतुर्यतः ॥
षष्ठांशयुक्तनोःसन्धिरग्रे षष्ठांशयोजनात् ॥
त्रयःससन्धयोभावाः षष्ठांशोनैकयुक्सुखात् ।
अग्रे त्रयःषडेवंते भार्धयुक्तापरेऽपिषट् ॥
खेटे भावसमे पूर्णफलं सन्धिसमे तुखम् ॥
खेटे सन्धिद्वयान्तःस्थे फलंतद्भावजं भवेत् ॥
भुक्तंभोग्यंस्वेष्टकालान्नशुद्धेत्त्रिंशन्निघ्नात्स्वोदयाप्तंलवाद्यम् ।
हीनंयुक्तं भास्करेतत्तनुः स्याद्रात्रौलग्नं भार्धयुक्ताद्रवेस्तु ॥

(अर्थ)

लग्न आदि बारह भावों के साधन की रीति यह है कि दिन रात्रि खण्ड में दिन रात्रि की इष्ट घडी घटाने से पूर्वनत होता है। अर्थात् दिनार्द्ध में इष्ट घड़ी घट जावे अथवा अर्द्ध रात्रि में रात्रि गत इष्ट काल घट जावे तो पूर्व नत होता है।

इष्ट काल में दिनार्द्ध अथवा अर्द्धरात्रि घट जावे तो परनत होता है ॥

इष्टकाल में अयनांशों को जोड देने से सायनार्क बन जाता है इसके भुक्त अथवा भोग्यांशों को अपने देशोदय राशि से गुणा करे अथवा जब ऋण लग्न साधन करना हो तो भुक्तांशों को ग्रहण करना चाहिये यदि धन लग्न साधन करना हो तो भोग्य अंशों को ग्रहण करना चाहिये फिर उसमें ३० का भाग देने से जो लब्धि मिले वह सूर्य के भुक्त अथवा भोग्य अंश पल आदि होते हैं इसी भुक्त व भोग को इष्ट घडी पलों में घटा देवे, घटा देने से जो शेष रहे उसमें अपने उदय से गत व गम्य राशि घटा देवे, घटाने से जो शेष रहे उसको ३० से गुणा करे, इसी में अशुद्धोदय से भाग देवे लब्ध अंश आदि को अशुद्ध में घटा देवे और शुद्ध में जोड देवे फिर अयनांशों को इसमें घटाने से जो शेष रहे वही स्पष्ट लग्न राश्यादिक होता है। इसी रीति से सायनार्क के भुक्त व भोग्य काल को ग्रहण कर दशम भाव स्पष्ट करने के लिए लङ्कोदय राशि के मान से गुणन करे और ३० में भाग देकर पल आदि निकलते हैं फिर इन भुक्त अथवा भोग्य पलात्मक अंकों को पूर्वनत वा पश्चिमनत से शोधन करे तो दशम भाव स्पष्ट हो जाता है, लग्न में ६ राशि जोड देने से सप्तमभाव सिद्ध हो जाता है, दशमभाव में ६ राशि जोड देने से चतुर्थभाव सिद्ध हो जाता है. चौथे भाव में लग्न घटा देवे इसका षडांश लग्न में जोडने से लग्न की सन्धि होती है फिर इसमें षडांश जोड़ देने से धन भाव सिद्ध होता है इसमें षडांश जोड़ देने से धन भाव की सन्धि होती है इसी प्रकार षडांश जोडने से तीनों भाव सन्धि सहित सिद्ध होते हैं फिर षडांश को एक राशि में घटा कर चौथे भाव से जोड़ना आरम्भ करे इस प्रकार से छठे भाव की सन्धि तक सिद्ध हो जाते हैं। शेष ६ भावों को सिद्ध करने के लिए क्रमशः ६ राशि युक्त करनी चाहिये सन्धियों में ६, ६, राशि जोडने से इन भावों की सन्धि सिद्ध हो जाती है॥ जो ग्रह अपने भाव में हो तो पूर्णफल देता है और जो ग्रह सन्धि में हो तो इसका फल शून्य होता है। जिस भाव की सन्धि में हो उसीका फल देता है॥

जब सूर्य्य का भुक्त अथवा भोग्य इष्ट घडी पलों में न घट सके तो इष्ट घड़ी पल को ३० से गुणा करे, फिर सायन सूर्य्य के राशि उदय से भाग देवे लब्धि को सूर्य्य के अशों में हीन करे और जब सूर्य्य का भोग्य हो तो लब्ध अंशादिको को सूर्य्य में जोड देना चाहिये, घटाने व जोडने से लग्न सिद्ध होता है यदि रात्रि लग्न साधन करना हो तो ६ राशियों को सूर्य्य में जोड कर भुक्त व भोग्य काल में लग्न का साधन करे शेष क्रिया ऊपर लिखित रीति से सिद्ध होती है ॥

सूचनाः—भाव साधन करने की रीति ऊपर लिखी है जो लोग रीति जानने के इच्छुक हो उनके लिये रीति लिख दी है परन्तु असल बात यह है कि इस रीति से नया विद्यार्थी बड़े चक्कर में पड जाता है और ज्योतिषी लोग जो रात दिन इस काम को करते है इस रीति से कभी साधन नहीं करते यदि वे लोग ऐसा करे तो उनको एक जन्मपत्री के भाव साधन मे कई घण्टे लग जावेंगे, सामान्यत. वे लोग सारणी देख कर स्पष्ट निकालते हैं जिस विद्यार्थी को सारणी देखने की अभिलाषा हो वह वृहत्पाराशरी ग्रन्थ को देखे अथवा ज्योतिषियो से प्रार्थना करके भाव स्पष्ट के चक्र की नकल करके अपने पास रख ले उसके निकालने की रीति जानने पर मिनटों मे भाव स्पष्ट निकल आता है। पूर्वोक्त रीति से साधन करने पर नये विद्यार्थी को अति कष्ट उठाना पडेगा तथापि रीति जानना आवश्यक है इसलिये यहा पर इस बात का भी संग्रह किया गया है ऐसा न हो कि ग्रन्थ में त्रुटि पाई जावे ॥

नतोदाहरणम्—

उदयादूर्ध्वं मध्याह्नादध इष्टं चे दर्धरात्रे युतं पूर्व नतः। मध्याह्नादूर्ध्वमर्धरात्रादध इष्टं चेदिष्टे मध्याह्नहीनं कार्यं — पश्चिमनतः। अर्धरात्रादूर्ध्वमिष्टं चेन्मिश्रमानमिष्टे हीनं कार्यं पूर्वनतः।

चैत्र कृष्ण द्वितीयायाम् । सूर्योदयादिष्टम् २० । ०

दिनमानम् २८ । ४५ तदर्धम् १४ । २२

(२०-०)—(१४-२२) = ५-३८ पश्चिमनतः ।

लग्न स्पष्टोदाहरणम्—

संवत् १९६१ भाद्र शुक्ल १२ रवौ सिंहार्क गतांशाः ३० सूर्योदया दिष्टम् २४ । २६

तत्कालार्कः ४-२७-३६-१५

अयनांशाः २३-०-०

सायन सूर्यः—५-२०-३६-१५

(५-२०=कन्या)

स्वदेशीयोदयाः

१	२११	१२
२	२४६	११
३	३०१	१०
४	३४५	९
५	३५२	८
६	३४५	७

अंश

३०-०-०

२०-३६-३५

९-२३-४५ भोग्यांशाः

× कन्या लग्नं । त्रिस्थापितम्—

(३)
३४५
९
३१०५
१३६ °
३०) ३२४१ (१०८ §§
३०
२४१
२४०
१

(२)
३४५
२३
१०३५
६९०
७९३५
२५८ ¶
६०) ८१९३ (१३६ °
६०
२१९
१८०
३९३
३६०
३३

(१)
३४५
४५
१७२५
१३८०
१५५२५ /२५८
६०) १२०
३५२
३००
५२५
४८०
४५

६०-०-०
१-३३-४५ भाग शेष.
५८-२६-१५ पलात्मक शुद्ध.
(*a*) (*b*) (*c*)
§§
१०८ भोग्य कालः पलात्मकः
२४-२६ इष्टम्.
६०
१४४०
२६
१४६६ इष्ट पलात्मक
—१०८ भोग्यकाल
१३५८
३४५ तुला (हीनंकार्यम्)
१०१३ / ३५२ वृश्चिक
६६१
३४५ धन.
३१६
३०१ मकर
१५
—१
१४
३० गुणित
४२० खज्यादि गुणित शेप
(*a*) ५८ पलात्मक शुद्ध
४७८
अशुद्ध कुम्भ (१)
२४६) ४७८ (१
२४६
२३२
६०
१३९२०
२६ (*b*)

(२)

२४६) १३९४६ (५६
१२३०
―――
१६४६
१४७६
―――
१७०
६०
―――
१०२००
१५ (८)
―――

(३)

२४६) १०२१५ (४२
९८४
―――
३७५

(१) (२) (३)

१-५६-४२-अंशादि-लवाद्य
+१०-०-० अशुद्ध राशयः मकर पर्यन्तम्
१०-१-५६-४२
२३-०-० अयनांश
―――
९-७-५६-४-२ लग्नस्पष्टम्
अत. मकर लग्नं ७ अंश ५६ कला. ४२ विकला

भाव स्पष्टोदाहरणम्

लंकोदयाः

१	२७८	१२
२	२९९	११
३	३२३	१०
४	३२३	९
५	२९९	८
६	२७८	७

४-२७ ३६-१५ तत्कालीनः सूर्यः
२३-० ० अयनांशाः
―――
५-२० ३६-१५ सायनसूर्यः

३० ०-० अंशादि
—२०-३६ १५ भुक्तांशाः
९-२३ ४५ भोग्यांशाः

×

×२७८ २७८ २७८
९ २३ ४५
―――

२५०२
११० §§

(क)
३०) २६१२ (८७
२८०
२१२
२१०
२

८३४
५५६

६३९४
२०८ *
६०) ६६०२ (११० §§
६०
६०२
६०
२

१३९०
१११२

६०) १२५१० (२०८ *
१२०
५१०
४८०
३०

अ.
३०-६० ६०
२-२ ३० भाग शेष
२८-५७-३०
२७ ५८

९-५- पश्चिमनत
६०
५४०
५
५४५
— ८७ (क)
४५८
— १
४५७
— २७८
१७९
३०
५३७०
+ २७

```
२९९  ) ५३९७ ( १८
अशुद्ध )  २९९
        -----
         २४०७
         २३९२
        -----
           १५
           ६०
        -----
          ९००
           ५७
        -----
२९९  )  ९५७ ( ३
         ८९७
        -----
           ६०
           ६०
        -----
         ३६०
          ३०
        -----
२४   )  ३९०  ( १
         २९९
        -----
           ९१
```

७-१८-३-१
२३-०-०

६-२५-३-१ दशमभाव

लग्न + ६ = जायास्थान

दशम + ६ = चतुर्थ

$\frac{१}{६}$ (चतुर्थ-लग्न) + लग्न = तनुसंधि

तनुसंधि + षष्ठांश = धन भाव

धन अथवा धनसंधि + ६ = अष्टम, अष्टमसंधि

सहज + ६ = नवम

सुख + ६ = दशम

पंचम + ६ = एकादश

षष्ठ + ६ = द्वादश

लग्न	धन	सहज	सुख	पुत्र	रिपु	जाया	मृत्यु	धर्म	कर्म	लाभ	व्यय
९ ७ ५६ ४२	१० १३ ३८ ४८	११ १९ २० ५४	० २५ ३ १	१ १९ २० ५५	२ १३ ३८ ४९	३ ७ ५६ ४२	४ १३ ३८ ४८	५ १९ २० ५४	६ २५ ३ १	७ १९ २० ५५	८ १३ ३८ ४९
सं धि	स	सं	सं	सं	सं	स	सं	स	स	स	सं
९ २५ ४७ ४५	११ १ २९ ५१	० ७ ११ ५७	१ ७ ११ ५८	२ १ २९ ५२	२ २५ ४७ ४८	३ २५ ४७ ४५	५ १ २९ ५१	६ ७ ११ ५७	७ ७ ११ ५८	८ १ २९ ५२	८ २५ ४७ ४८

(१८) षड्वर्गप्रकरणम्

गृहादिसंज्ञाः

त्रिंशद्भागात्मकंलग्नं होरा तस्यार्धमुच्यते ।
लग्नात्त्रिभागोद्रेष्काणो नवांशोनवमांशकः ।
द्वादशांशोद्वादशांशस्त्रिंशांशस्त्रिंशदंशकः ॥

(अर्थ)

३० अंश का एक लग्न होता है, उसके आधे (अर्थात् १५ अंश) की होरा होती है, लग्न का तीसरा भाग (अर्थात् १० अंश) का द्रेष्काण होता है, लग्न का नवां भाग एक नवांश होता है, बारहवें भाग का एक द्वादशांश होता है, लग्न के तीसवें भाग को त्रिंशांश कहते हैं ॥

षड्वर्गज्ञानोपायः

(१) त्रिंशद्भागात्मकं लग्नम्.
(२) सूर्येन्द्वोर्विषमे लग्ने होराचन्द्रार्कयोः समे.
(३) द्रेष्काणपाः प्रथम पञ्च नवाधिपानाम् ।
(४) सप्तांशपास्त्वोजगृहे गणनीयानिजेशतः ।
युग्मराशौतु विज्ञेयाः सप्तमर्क्षादिनायकात् ॥
(५) क्रियैणतौलीन्दुभतोनवांशाः
(६) लग्नस्य द्वादशांशास्तु स्वराशेरेव कीर्तिताः ।
(७) शुक्र जीव शनि भूतनयस्यवाण
शैलाष्ट पञ्च विशिखाः समराशिमध्ये ।
त्रिंशांशको विषमभे विपरीतमस्मात् ॥

(अर्थ)

(१) ३० अंश का लग्न होता है ॥

(२) जब विषम राशि हो तो पहिली होरा सूर्य्य की और दूसरी होरा चन्द्रमा की होती है, परन्तु सम राशि में पहिली होरा चन्द्रमा की और दूसरी होरा सूर्य्य की होती है ॥

(३) द्रेष्काण जानने की यह रीति है कि पहिला द्रेष्काण उसी राशि का होता है जो लग्न में हो, फिर पाचवें और नवे स्थानों के स्वामियो के द्रेष्काण होते हैं ॥

(४) विषम राशि में सप्तांश के स्वामी अपने निज स्वामी से गिनने चाहिये, परन्तु सम राशि में अपने से सातवें स्थान के स्वामी से गिनने चाहियें ॥

(५) नवांश निकालने की रीति यह है कि मेष सिंह और धन लग्न में मेष से गिनती करनी चाहिये, वृष कन्या और मकर लग्न में मकर राशि

से नवांश का आरम्भ होता है, मिथुम तुला और कुम्भ लग्नो में कुम्भ से गिनती होती है, कर्कट, वृश्चिक, और मीन लग्नों में कर्क से गिनती होती है ॥

(६) द्वादशांश अपनी ही राशि से आरम्भ होवे हैं ॥

(७) सम राशि में त्रिंशाश शुक्र के (५) अंशतक, वुध के (७) अश तक, वृहस्पति के (८) अश तक, शनि के (५) अंश तक और मङ्गल के (५) अंश तक होते हैं, परन्तु विषम राशि में इनके विपरीत होते हैं अर्थात् मङ्गल से आरम्भ होते हैं ॥

राश्यादेः सूक्ष्म विभागः

रात्रि दिनम् =१२ राशयः
एक राशिः स्थूल मानेन $=\frac{60}{12}=$५ घः=२ घंटा.

पुनश्च होरा द्रेष्काण चतुर्थांश सप्तांश नवांश दशांश द्वादशांश षोडशांश विंशांश चतुर्विंशांश त्रिंशांश खवेदांशा अक्षवेदांश षष्ठ्यंशा भवन्ति । एवं च षष्ठ्यंशः सूक्ष्मतमो भागो लग्नस्य सम्पद्यते । एतावत्पर्यन्तं सूक्ष्मविचारः कर्तुं शक्यते ॥

(अर्थ)

रात और दिन में मिल कर १२ राशियों का एक चक्कर पूरा हो जाता है ॥

रात दिन में मिल कर ६० घड़ियां होती हैं उनमें १२ का भाग देने से ५ घड़ी अथवा २ घंटा एक राशि का स्थूल मान है । परन्तु अक्षांश और देशान्तरों के भिन्न होने से न्यून अथवा अधिक इनका मान हो जाता है । होरा, द्रेष्काण, चतुर्थांश, सप्तांश, नवांश दशांश, द्वादशांश, षोडशांश, विंशांश, चतुर्विंशांश, त्रिंशांश, खवेदांश, अक्षवेदांश, और षष्ठ्यंश, इन भेदों से लग्न के कई छोटे छोटे टुकड़े हो जाते हैं । इनका सूक्ष्म विचार वृहत्पाराशरी आदि ग्रन्थों में लिखा है । इस प्रकार लग्न के ६० टुकड़े करने से प्रायः ४ मिनट का एक भाग निकल आता है । यहां तक सूक्ष्म विचार हो सकता है ॥

गृहादिफलम्

गेहात्सौख्यमुदाहरन्ति मुनयो होराबलाच्छीलतां
द्रेष्काणात्पदवी धनस्य निचयं सप्तांशकाच्चिन्तयेत् ।
वर्णं रूपगुणान्सुधीसुतनयान् प्रायो नवांशेऽखिलं
भावाद्द्वादशकाद्व्ययं इति त्रिंशांशकात्स्त्रीफलम् ॥
लग्ने देहाकारो होरायामर्थसम्पदो विपदः ।
द्रेष्काणे कर्मफलं सप्तांशे बन्धुसंज्ञाच ॥
पुत्रं नवांशभावे द्वादशभागे चिन्तयेत्पत्नीम् ।
त्रिंशांशे निधनफलं शुभाशुभं सर्वजन्तूनाम् ॥

होरा. १५ अंश पर्यन्त शुभा-ततोऽशुभा ॥
बहवो धनगाः श्रेष्ठा स्तथानिष्टा व्ययेग्रहाः ॥

द्रेष्काण. द्रेष्काणे केन्द्रगः कुर्यादुच्चस्थो भूपतिं नरम् ।
स्वक्षेत्रगश्च भूनाथं मित्रगश्चापि वाग्मिनम् ॥

सप्तांश सप्तांशलग्नात्सहजाधिनाथः
क्रूरोऽथसौम्यः शुभपापदृष्टः ।
पापैर्निजभ्रातृविहीन एव
सौम्यैर्बहुभ्रातृयुतोनरः स्यात् ॥

नवांश नवांशलग्नात्सुतपश्च सौम्यः
शुभाशुभैर्युक्तविलोकितोवा ।
शुभैः सुताः स्युः प्रचुरा नरस्य
क्रूरैर्न सन्तानसुखं तदा भवेत् ॥

द्वादशांश. स्याद् द्वादशांशादशुभाः शुभावा
जायाधिपः क्रूरयुतेक्षितोवा ।
भार्या शुभैः पुत्रयुता तथैका
स्त्रीदुःखमेवाप्यपरैर्नरस्य ॥

त्रिंशांश. त्रिंशांशलग्नात्त्रिधनाधिपश्च
क्रूरोऽथसौम्यः शुभपापदृष्टः ।
तीर्थे शुभे क्रूरतरे नरस्य
मृत्युं वदेदग्निजलादितश्च ॥

(अर्थ)

यदि सुख का विचार करना हो तो लग्न से करे, शील, स्वभाव का होरा से, पदवी का विचार द्रेष्काण से, धन सचय का विचार सप्तांश से, वर्ण, रूप, गुण अच्छी बुद्धि और पुत्रों का विचार अथवा प्रायः सब बातों का विचार नवांश से, शरीर और आयु का विचार द्वादशांश से, और स्त्री का विचार त्रिंशांश से करना चाहिये ।

शरीर की आकृति का विचार लग्न से, सम्पत्ति और विपत्ति का विचार होरा से, कर्म्म के फल का विचार द्रेष्काण से, भाई बहिन का विचार सप्तांश से, पुत्र का विचार नवांश से, स्त्री का विचार द्वादशांश से, मृत्यु का विचार त्रिशांश से करना चाहिये ॥

होराः—१५ अंश पर्य्यन्त शुभ होती है उससे अधिक अशुभ होती है, धन स्थान में बहुत से ग्रह श्रेष्ठ होते हैं और व्यय स्थान के ग्रह अच्छे नहीं होते ॥

द्रेष्काणः—द्रेष्काण में यदि उच्च ग्रह केन्द्र में हो तो मनुष्य राजा होता है और अपने क्षेत्र का ग्रह पृथ्वी का स्वामी बनाता है और मित्र स्थान का ग्रह हो तो मनुष्य बोलने में बड़ा चतुर होता है ॥

नवांशः—नवांश लग्न से पञ्चम स्थान का स्वामी सौम्य ग्रह हो और शुभ ग्रहों से युक्त हो अथवा देखा गया हो तो बहुत से पुत्र होते हैं, यदि क्रूर ग्रह हों तो सन्तान का सुख नहीं होता है ॥

द्वादशांशः—द्वादशांश लग्न से सप्तमेश शुभ ग्रह युक्त हो अथवा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो स्त्री पुत्रयुक्त होती है, परन्तु यदि वे पाप ग्रह हो तो स्त्री से दुःख ही मिलता है ॥

त्रिंशांश—त्रिंशांश लग्न से अष्टम स्थान का स्वामी यदि सौम्य ग्रह हो अथवा सौम्य ग्रह से दृष्ट हो तो तीर्थ में मृत्यु होती है, यदि क्रूर ग्रह हो तो अग्नि, जल, आदि से मृत्यु होती है ॥

होराचक्रम्.

स्वामी.	अंश.	मे.	वृ.	मि	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
देव.	१५	५ सू	४ चं	५ सू	४ चं.	५ सू	४ चं	५ सू	४ चं	५ सू.	४ चं.	५ सू	४ च.
राक्षस.	३०	चं ४	सू ५	च. ४	सू. ५	चं. ४	सू ५	चं ४	सू ५	च. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५

द्रेष्काणचक्रम्

स्वामी.	अंश.	मे.	वृ	मि.	क.	सि	क.	तु.	वृ	ध.	म.	कु	मी.
नारद	१०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
अगस्त्य.	२०	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
दुर्वासा.	३०	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८

सप्तांश चक्रम्

स्वामी	अंश	मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी
क्षार	४।१७	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६
क्षीर	८।३४	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७
दधि	१२।५१	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८
आज्य	१७।८	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९
इक्षुरस	२१।२५	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०
मद्य	२५।४२	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११
शुद्ध जल	३०।०	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२

नवांश चक्रम्

नवांश	मे	वृ	मि.	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	अंश
१	म	श	शु	च	म	श	शु	च	म	श	शु	च	३।२०
२	शु	श	म	सू	शु	श	म	सू	शु	श	म	सू	६।४०
३	वु	वृ	वृ	वु	वु	वृ	वृ	वु	वु	वृ	वृ	वु	१०।०
४	च	न	श	शु	च	म	श	शु	च	म	श	शु	१३।२०
५	सू	शु	श	म	सू	शु	श	म	सू	शु	श	म	१६।४०
६	वु	वु	बृ	वृ	वु	वु	वृ	वृ	वु	वु	वृ	वृ	२०।०
७	शु	च	म.	श	शु	च.	मं	श	शु	च	मं	श	२३।२०
८	मं	सू	शु	श	म	सू	शु	श	म	सू	शु	श	२६।४०
९	वृ	वृ	बु	वृ	वृ	वु	वु	वृ	वृ	वु	वु	वृ	३०।०

स्वामिनः

देवान् राक्षसाश्चैवचरादिषुगृहेषुच ॥

द्वादशांश चक्रम्

स्वामी	अंश	मे १	वृ २	मि ३	क ४	सि ५	क ६	तु ७	वृ ८	ध ९	म १०	कुं ११	मी १२
गणेशः	२।३०	म	शु	बु	च	सू	बु	शु	म	वृ	श	श	वृ
अश्विनौ	५।०	शु	बु	च	सू	बु	शु	म	वृ	श	श	वृ	म
यमः	७।३०	बु	च	सू	बु	शु	म	वृ	श	श	वृ	मं	शु
गहिः	१०।०	चं	सू	बु	शु	म	वृ	श	श	वृ	म	शु	बु
अणेशः	१३।३०	सू	बु	शु	म	वृ	श	श	वृ	म	शु	बु	च
अश्विनौ	१५।०	बु	शु	म	वृ	श	श	वृ	म	शु	बु	च	सू
यमः	१७।३०	शु	म	ह	श	श	वृ	म	शु	बु	च	सू	बु
अहिः	२०।०	म		श	श	वृ	मं	शु	बु	चं	सू	बु	शु
गणेशः	२२।३०	वृ	श	श	वृ	मं	शु	बु	चं	सू	बु	शु	म
अश्विनौ	२५।०	श	श	वृ	म	शु	बु	चं	सू	बु	शु	मं	वृ
यमः	२७।३०	श	वृ	म	शु	बु	चं	सू	बु	शु	म	वृ	श
अहिः	३०।०	वृ	मं	शु	बु	चं	सू	बु	शु	मं	वृ	श	श

विषम त्रिंशांश चक्रम्

स्वामिनः	अंशाः	मेष	मिथुन	सिंह	तुला	धन	कुंभ
वह्निः	५ ०	मं	मं	म	म	म	म
वायुः	१०-०	श	श	श	श	श	श
इन्द्रः	१८-०	वृ	वृ	वृ	वृ	वृ	वृ
कुबेरः	२५-०	बु	बु	बु	बु	बु	बु
मेघः	३०-०	शु	शु	शु	शु	शु	शु

सम त्रिंशांश चक्रम्

स्वामिनः	अंशाः	वृष	कर्क	कन्या	वृश्चिक	मकर	मीन
मेघः	५-०	शु	शु	शु	शु	शु	शु
कुबेरः	१२-०	बु	बु	बु	बु		बु
इन्द्रः	२०-०	वृ	वृ	वृ	वृ	वृ	वृ
वायुः	२५-०	श	श	श	श	श	श
वह्निः	३०-०	म	म	म	मं	मं	म

वर्गोत्तमनवांशाः

चरभवनेचाद्यांशाः स्थिरेषु मध्याद्विमूर्तिषु तथान्त्याः।
वर्गोत्तमाः प्रदिष्टास्तेष्विहजाताः कुलेमुख्याः ॥
स्वे स्वे गृहेषु स्वनवांशकाये
वर्गोत्तमास्ते मुनिभिर्निरुक्ताः ॥
अन्ते तुच्छफलं लग्नं यदि वर्गोत्तमं नचेत् ॥
षडन्त्यरन्ध्रंचनिजंनवांशं वर्गोत्तमाख्यं विबुधावदन्ति ॥

(अर्थ)

चरराशियों में आदि के नवांश, स्थिर राशियों में मध्य के नवांश, और द्विस्वभाव राशियो में अन्त के नवाश वर्गोत्तम कहलाते हैं, जिन मनुष्यो का जन्म इन वर्गोत्तम नवांशों में होता है वे अपने कुल में मुख्य होते हैं। अपने २ घरों में जो अपने नवाश हो उनको कोई आचार्य्य वर्गोत्तम वतलाते हैं। लग्न का अन्त नवाश तुच्छ फल देने वाला होता है यदि वह वर्गोत्तम न हो ॥

कोई आचार्य्य कहते हैं कि ६, ८, ६, और अपने नवाश वर्गोत्तम हैं ॥

लग्नस्यादिमध्यावसानेषु फलम्

आदौ हि सम्पूर्णफलप्रदंस्या
न्मध्ये पुनर्मध्यफलं विलग्नम् ।
अतीव तुच्छं फल मस्यचान्ते
विनिश्चयोऽयं विदुषा विधेयः ॥
सौम्यग्रहस्य मित्र ग्रहस्य च नवांशाः शुभाः ।
पापग्रहस्य शत्रु ग्रहस्य च निन्द्याः ।
वृषश्च मिथुनं कन्या तुला धन्वी झषस्तथा ।
एते शुभनवांशास्तु ततोऽन्ये कुनवांशकाः ॥
सूर्यभौमशनीनां नवांशाद्योऽशुभाः ॥

(अर्थ)

आरम्भ में लग्न पूर्णफल देता है, मध्य में मध्यम फल देता है और अन्त में इसका फल अत्यन्त ही अशुभ होता है। सौम्य ग्रह अथवा मित्र ग्रह के नवांश शुभ होते हैं, पापग्रह अथवा शत्रु ग्रह के नवांश अशुभ होते हैं ॥

कोई आचार्य्य कहते हैं कि वृष, मिथुन, कन्या, तुला, धन, और मीन शुभ नवांश हैं शेष कुनवांश हैं ॥

सूर्य्य, मङ्गल, शनि के नवांश सब शुभ कामों में वर्जित हैं ॥

(१९) प्रकीर्णप्रकरणम्

निरनयन गणना

निरनयनगणनयैव लोके सकलव्यवहारो दृश्यते. सायनत्वेच ग्रहः कदाचिदेकनक्षत्रान्तरे नक्षत्रद्वयान्तरे वोपलभ्यते एवं सति यात्रादिशुभकार्यमुहूर्तेषु भरण्यादिदुष्टनक्षत्राणां गुरुपुष्यादि सिद्धयोगानां च व्यवहारो निरयनेनैवोपलभ्यते सायनगणनानुनियतविषया "अयनांशा प्रदातव्या लग्ने क्रान्तौ चरागमे। त्रित्रिभे सत्रिभे पाते तथादिक् कर्म पातयोः"

(अर्थ)

पञ्चाङ्ग में जिस दिन सक्रान्ति लिखी रहती है उस दिन से प्रतिदिन सूर्य्य प्रायः एक २ अंश भोग करता है उसको निरनयन गणना कहते हैं परन्तु जब इसमें अयनांश मिला दिये जाते हैं तो उसको सायन सूर्य्य कहते हैं॥ ६० बरस में एक अयनांश बदलता है ॥

साम्प्रत में निरनयन और सायन गणना में प्राय: २३ दिन का अन्तर पड़ता है, जैसे अंग्रेजी हिसाब से २१ ता० दिसम्बर से सूर्य्य मकर राशि में चला जाता है, परन्तु सक्रान्ति के हिसाब से "मकरेऽर्क" प्रायः १३ तारीख जनवरी को होता है। यही २३ दिन का अन्तर अयनांश से निकाला जाता है, इसको पत्रों में चल संक्रम कहते हैं। इस बात पर यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि जैसे किसी मनुष्य का जन्म २५ ता० दिसम्बर को हो तो उसकी जन्मपत्री में सूर्य्य धनराशि में लिखना चाहिये या मकर राशि में, इसका उत्तर यह है कि लौकिक व्यवहार में सब कारोबार निरनयन गणना से ही होता है, सायन गणना से ग्रह में एक या दो नक्षत्र का भेद पड जावेगा ॥

यात्रा आदि में अथवा शुभ कार्य्यों के मुहूर्तों में, भरणी आदि दुष्ट नक्षत्रों का अथवा गुरु पुष्यादि सिद्ध योगों का व्यवहार निरनयन गणना से ही होता है, सायन गणना नियत विषयों में काम आती है जैसे कि लग्न निकालने में, सक्रान्ति में, पात में, दिक्रमें में ॥

इस लिए ऊपर लिखे हुए उदाहरण में धन का ही सूर्य लिखना पडेगा न कि मकर का॥

सम्भव है कि इसी अन्तर के कारण आज कल ग्रहो के फल कभी २ ठीक २ नहीं मिलते, परन्तु गणित के अनुसार जन्मपत्र आदि बनाने में सब बातों में बडा अन्तर पड जावेगा, भास्कराचार्य्य के समान किसी नये आचार्य्य का जन्म हो तब ही इन सब बातों का नया सस्कार हो सकता है नहीं तो परम्परा का ही अनुसरण करना पडेगा ॥

दिनमान रात्रिमान ज्ञानम्

अयनसंक्रमतो गतवासराद्

गुण (३) हतान्खगुणेन्द्रियभूयुतान् (१५३०)।

खरस (६०) लब्धघटीपलशेषिका
निशि कुलीरकतो मृगतो दिवा ॥
रवेराश्यंशजं कोष्ठमधस्तत्सप्तमात्त्यजेत् ।
दिनमानं भवेत्तत्तु षष्ठिशुद्धं निशामितिः ॥

(अर्थ)

अयन सक्रान्ति (मकर अथवा कर्क) मे गतदिनों को ३ से गुणा करो, उसमें १५३० जोड दो, उसमें ६० का भाग दो, जो लब्धि मिले वह दिनमान अथवा रात्रिमान है, कर्कसक्रान्ति मे रात्रि और मकरसक्रान्ति से दिन निकलते हैं ॥

लग्नसारणी मे वर्तमान दिन के राश्यादिक को उसमे नीचे की सातवीं पंक्ति में घटाने से दिनमान निकल आता है। उसको ६० में घटाने से रात्रिमान होता है।

स्थूलप्रकारेण दिनलग्नज्ञानम्

छायापादे रसोपेतैरेकविंशच्छतं भजेत् ।
लब्धाङ्के घटिका ज्ञेयाः शेषाङ्के च पलाः स्मृताः ॥
परमं दिनं दिनमानविहीनं सप्तभिराहतं पंचविभक्तम् ।
आर्यभटेन विनिर्मितयाभा साचभवेद्दिनमध्यछाया ॥
या यत्र काले भवतीह छाया मध्याह्नहीना स्फुट शंकुयुक्ता ।
तयादिनंषड्गुणितं विभाज्यं पूर्वापरार्धे गतगम्यनाड्यः ॥
उदाहरणम्—परमं दिनम् ३४-५
— दिनमानम् २५-५६

८-९
× ७

---

५) ५७-३ (११-२४ दिनमध्यछाया

शकु छाया २८-०

— दिन मध्य छाया ११-२४

———

१६-३६

(शकु १२ अंगुल) + १२

———

२८-३६

दिनमान २५ ५६

× ६

———

२८-३६) १५५-३६ (५-२५ दिनशेष·

(अथ)

अपनी छाया को पैरों से नापे, उसमें ६ जोड देवे, उससे १२१ में भाग दे, जो लब्धि मिले उसको घड़ी जाने, जो शेष रहे उसको ६० से गुणन कर के उसी अङ्क का भाग देने से पल जाने, इस प्रकार दिन में स्थूल लग्नमान निकल जाता है। दोपहर से पहिले हो तो इतना दिन चढा है ऐसा जानना चाहिये, परन्तु दोपहर के उपरान्त हो तो दिनशेप जानना चाहिये ॥

परम दिनमान (सव से जो वडा दिन है अर्थात् २१ ता० जून) में अपना दिनमान घटा दे, उसको ७ से गुने, ५ से भाग दे, जो फल आवे वह दिन के मध्य की छाया है, जो दिनमध्यछाया निकलती है उसमें शकु की छाया युक्त करे, उससे दिन को ६ गुना करे, दिन की गत और गम्य नाडी उससे निकल आती हैं। उदाहरण ऊपर लिखा है ॥

रात्रिलग्नज्ञानम्

सूर्यभान्मध्यनक्षत्र सप्तसंख्याविशोधितम् ।
विंशतिघ्नंनवहृत गता रात्रिः स्फुटा भवेत् ॥

सूर्यभान्मौलिनक्षत्रं समहीनंच शेषकम् ।
द्विगुणच द्विहीनंच गता रात्रिः स्फुटा भवेत् ॥
पूर्वाषाढ़ानुराधाच ज्येष्ठाश्लेषा च रेवती ।
विशाखाच यदा मूर्ध्नि तदास्यादष्टमोदयः ॥
मस्तके मृगशीर्षे च मूलेच नवमोदयः ।
अन्यदृक्षं यदा मूर्ध्नि तदास्यादष्टमोदयः ॥

(अर्थ)

जिस नक्षत्र में सूर्य्य हो उस नक्षत्र से अपने सिर के ऊपर के नक्षत्र पर्यन्त गिन कर ७ घटावे, शेष को २० से गुणा करे, और ६ का भाग दे तो गतरात्रि स्पष्ट निकल आती है ॥ सूर्य्य नक्षत्र से मस्तक के नक्षत्र पर्यन्त गिन कर ७ घटा दे, शेष को दोगुना करे और २ घटा दे तो रात्रि-स्पष्ट निकल आती है। पूर्वाषाढा, अनुराधा, ज्येष्ठा, अश्लेषा, रेवती और विशाखा नक्षत्र जब सिर के ऊपर हों तो अष्टम में उदय होता है, जब मृगशिर और मूल नक्षत्र मस्तक पर हों तो नवम उदय होता है, जब कोई और नक्षत्र हो तो अष्टम उदय होता है ॥

सूचना ।

दिन रात मिल कर अहोरात्र सदा ६० घड़ी अथवा २४ घंटे का होता है। २॥ घड़ी का एक घंटा और २॥ पल का एक मिनट होता है। यदि हमको दिनमान मालूम हो जावे तो ६० घड़ी में घटाने से रात्रि-मान निकल आवेगा। दिनमान का आधा करने से दोपहर निकल आवेगा उसी समय अंग्रेजी हिसाब से दिन में बारह बजेंगे। यही हिसाब रात का भी है। जिस दिन ३० घड़ी का दिनमान होता है उस दिन ६ बजे सूर्योदय और ६ बजे सूर्यास्त होता है। जब ३० घड़ी से कम हो तो दिन मान को ३० से घटावे जो शेष रहे उसके मिनट् बना दे उसका आधा कर के ६ में जोड़ने से सूर्योदय निकल आवेगा। जब दिनमान ३० घड़ी

से अधिक हो तो उसमें ३० कम कर दे जो शेष रहे उसके मिनट् बना कर ६ में घटा देने से सूर्योदय निकल आवेगा। सूर्योदय को १२ में घटाने से सूर्यास्त निकल आवेगा ॥

चन्द्रोदयज्ञानम्.

तिथिगुणितं रजनीपरिमाणं
यम (२) रहितं सितपक्षविमिश्रम् ।
बाणशशाङ्कविभाजितलब्धं
प्रतिदिवसं चन्द्रोदयमानम् ॥

(अथवा)

तिथिघ्नं रजनीमानं नेत्रहीनं च कारयेत् ।
कृष्णे पञ्चदशी योज्या बाणैकेन विभाजयेत् ॥
लब्धं प्रतिदिनं चन्द्रोदयमानं विभावयेत् ।
स्थूलचन्द्रोदयज्ञानं सूक्ष्मं तु गणितागतम् ॥

(अर्थ)

रात्रिमान को वर्तमान तिथि से गुणन करे, यदि कृष्णपक्ष हो तो गुणनफल में २ घटा दे, शुक्र पक्ष हो तो २ जोड दे, तदनन्तर १५ से भाग दे, जो लब्धि हो वही चन्द्रोदय है। शेष को ६० से गुण कर के १५ का भाग देने से पल निकल आवेंगे ॥

(पौर्णमासी के उपरान्त प्रतिदिन ५४ मिनट् अथवा सवा दो घडी पीछे चन्द्रोदय होता है)।

कृष्णपक्ष हो तो उतने घटी पल गये चन्द्रोदय होगा। शुक्रपक्ष हो तो उतने घडी पल गये रात्रि को चन्द्रास्त होगा ॥

उदाहरण कृष्ण पक्ष की पंचमी को दिनमान ३२।० है। अहोरात्र मान ६० में ३२ घटाने से शेष २८।० रात्रिमान हुआ, इसको ५ से गुणन किया तो गुणनफल १४० हुआ, कृष्ण पक्ष होने से दो कम किया तो शेष

१३८ रहा, इसमें १५ का भाग देने से ६ घटी १२ पल मिला. इतनी रात्रि बीते उस दिन चन्द्रोदय होगा ॥

ग्रहण सम्भव.

(१) भानोः पञ्चदशे ऋक्षे चन्द्रमा यदि तिष्ठति ।
पौर्णमास्यां निशाशेषे चन्द्रग्रहणमादिशेत् ॥

(२) माघोनं (११) ग्रस्तनक्षत्राच्छोडशं यदि सूर्यभम् ।
अमावास्यादिवाशेषे सूर्यग्रहणमादिशेत् ॥

(३) द्विर्द्वादशेऽपि यामित्रे समराशिगतेऽपिवा ।
तथाषष्ठाष्टके राहु ग्रहणं चन्द्रसूर्ययोः ॥
(सूर्यात्सप्तमश्चंद्रः । अथवा चन्द्रात्सप्तमः सूर्यः ।
तन्मध्ये एकोऽपि राहुयुतः । इत्यादि)
पात चं = १२ अंश ॥ सू = १८ अंश

(अर्थ)

यदि सूर्य्य के नक्षत्र से १५ वें नक्षत्र में चन्द्रमा हो तो पौर्णमासी को रात्रिशेष में चन्द्रग्रहण होता है ॥

ग्रस्तनक्षत्र से ११ घटा कर यदि सोलहवाँ सूर्य्यनक्षत्र हो तो अमावास्या के दिन दिनशेष में सूर्य्यग्रहण होता है ॥

जब राहु दूसरे, बारहवें, सातवें, छठे, आठवें, या समराशि में हों तो सूर्य्यग्रहण अथवा चन्द्रग्रहण होता है ॥

सूर्य्य से सप्तमस्थान में चन्द्रमा हो अथवा चन्द्रमा से सप्तम स्थान में सूर्य्य हो और सूर्य्य चन्द्रमा दोनों में से एक के साथ राहु बैठा हो तो ग्रहण सम्भव है ॥

चन्द्रमा १२ अंश भीतर और सूर्य्य १८ अंश भीतर होने से पात होता है ॥

ग्रहणफलम् (जन्मभात्)

१ घातः
२ क्षतिः
३ श्रीः
४ व्यथा
५ चिन्ता
६ सौख्य
७ कलत्रनाशः
८ मृत्युः
९ माननाशः
१० सुखम्
११ लाभः
१२ व्ययः

(अर्थ)

जन्म राशि से ग्रहण का फल ऊपर लिखा है।

केवल जन्मपत्र्युपरि शकादि ज्ञानम्

वर्षज्ञानम्

यस्मिन्राशौभवेत्सौरिस्तस्मात्सार्द्धं चद्वौसमाः ।
शनिर्यावद्भवेद्वर्षं तथेज्याश्रितराशितः ॥

मासज्ञानम्

वैशाखे स्थापयेन्मेषं यावद्भानुश्च गण्यते ।
तावन्मासे भवेज्जन्म गर्गस्य वचनं यथा ॥

पक्षज्ञानम्

यस्मिन्राशौ भवेत्सूर्यस्तस्मात्सप्तगृहान्तरे ।
चन्द्रे शुक्ले भवेज्जन्म त्वन्यथा कृष्णपक्षकः ॥

तिथिज्ञानम्

यत्र भानुः कुहूस्तत्र सार्द्धद्वेच तिथी स्मृते ।
चन्द्र यावत्समाख्यातं तिथिज्ञानं मनीषिभिः ॥

दिवा रात्रि ज्ञानम्

सूर्याक्रान्तस्थ भवनाल्लग्न सप्तगृहान्तरे॥
दिने जन्म वदेत्प्राज्ञ स्त्वन्यथा निशि जन्मच ॥

घटीज्ञानम्

सूर्याक्रान्तस्थभवनात्पञ्च पञ्च च गण्यते ।
लग्नं यावत्समाख्यातं घटीज्ञान मनीषिभिः ॥

प्रतिवर्षदशाज्ञानम्

जन्मलग्नं समारभ्य गतवर्षाणि वर्जयेत् ।
द्वादशेषुचभावेषुग्रहैर्वाच्यं शुभाशुभम् ॥

(अर्थ)

जिस राशि में शनैश्चर हो उससे २॥, २॥ वरस शनिपर्यन्त गिने अथवा बृहस्पति की राशि मे गिने तो वर्ष का निर्णय हो जाता है ॥

मेष राशि को वैशाख माने उससे सूर्य जिस राशि में हो उससे जन्म मास का निर्णय हो जाता है ॥

जिस राशि में सूर्य हो वहा से ७ घरों के भीतर यदि चन्द्रमा हो तो शुक्र पक्ष में जन्म होता है अन्यथा कृष्ण पक्ष जानना चाहिये ॥

जिस स्थान पर सूर्य हो उसको अमावास्या मानना चाहिये, वहां से हर एक घर को २॥, २॥ तिथि समझना चाहिये, सूर्य से चन्द्रमा तक गिनती करे तो तिथि मालूम हो जावेगी ॥

जिस राशि में सूर्य हो वहां से ७ घर के भीतर यदि लग्न हो तो दिन मे जन्म जानना चाहिये अन्यथा रात्रि में ॥

जिस राशि में सूर्य्य हो वहां से लग्न तक गिनती करे और प्रत्येक घर को ५, ५ घडी का माने इस प्रकार जन्म के समय की घडिया निकल आती हैं ॥

जन्म लग्न से लेकर १२ स्थानों को १२ वरस माने, फिर दूसरी आवृत्ति में २४, तीसरी आवृत्ति में ३६ इत्यादि, वर्ष निकल आवेंगे, जिन जिन भावों में शुभ ग्रह अथवा पाप ग्रह हों पूर्वोक्त रीति से गिनती करने पर उन उन वर्षों का शुभ अथवा अशुभ फल कहना चाहिये ॥

गुरुशुक्रास्तादौ मलमासे च वर्ज्याणि

वाप्यारामतड़ागकूपभवनारम्भप्रतिष्ठाव्रता
रम्भोत्सर्गवधूप्रवेशनमहादानानि सोमाष्टके ।
गोदानाग्रयणप्रपाप्रथमकोपाकर्म वेदव्रतं
नीलोद्वाहमथातिपन्नशिशुसंस्कारान्सुरस्थापनम् ॥
दीक्षामौञ्जिविवाहमुण्डनमपूर्वं देवतीर्थेक्षणं
संन्यासाग्निपरिग्रहौ नृपतिसंदर्शाभिषेकौ गमम् ।
चातुर्मास्यसमाव्रती श्रवणयोर्वेधं परीक्षांत्यजेद्
वृद्धत्वास्तशिशुत्वइज्यसितयोर्न्यूनाधिमासे तथा ॥

(अर्थ)

जव वृहस्पति या शुक्र का अस्त हो अथवा वाल वृद्धत्व हो अथवा न्यून मास अथवा अधिमास हो तो इतनी वातें वर्जित करनी चाहिये :—

वावडी, वगीचा, तालाव, कुआं, घर का आरम्भ करना, किसी मन्दिर की प्रतिष्ठा करना, किसी व्रत का आरम्भ या उद्यापन करना, वधूप्रवेश, महादान, सोमाष्टक, गोदान, आग्रयण, प्रथम उपाकर्म, वेदव्रत, नीलोद्वाह, वालक के संस्कार, देवप्रतिष्ठा, दीक्षा, मौञ्जी, विवाह, मुण्डन, तीर्थयात्रा जो पहिले कभी न की हो, संन्यास, अग्निग्रहण, राजदर्शन, राज्याभिषेक, चातुर्मास्यव्रतों की समाप्ति, कर्णवेध, और परीक्षा ॥

सिंहस्थमकरस्थवक्रातिचारगो गुरुः

अस्ते वर्ज्यं सिंहनक्रस्थ जीवे वर्ज्यं केचिद्वक्रगेचातिचारे ।
गुर्वादित्ये विश्वघस्रेऽपिपक्षे प्रोचुस्तद्वद्दन्तरत्नादिभूषाम् ॥

(अर्थ)

शुभ कर्म्म जैसे ही गुरु शुक्रास्त में वर्जित होते हैं वैसे ही सिंहस्थ अथवा मकरस्थ बृहस्पति में भी वर्जित होते हैं ॥

किन्हीं आचार्य्यों का मत है कि जब बृहस्पति वक्री हो अथवा अति-चार का हो (जब उसकी चाल अधिक हो) अथवा गुर्वादित्य हो (जब बृहस्पति और सूर्य्य एक घर में हों) अथवा विश्वघस्र (जिस पक्ष में १३ दिन होते हैं) पक्ष हो तो शुभ काम वर्जित होते हैं ॥

गुर्वादित्यः

एकराशिगतौ स्यातां देवाचार्य दिनेश्वरौ ।
गुर्वादित्यः सविज्ञेयः सर्व कर्म सुनिन्दितः ॥

(अर्थ)

जब बृहस्पति और सूर्य्य एक राशि में हों तो गुर्वादित्य कहलाता है और वह सब शुभकर्मों में वर्जित है ॥

लुप्तसंवत्सरः

एकस्मिन्वत्सरे जीवः स्पृशेद्राशित्रय यदि ।
लुप्तसंवत्सरो नाम वर्जितः सर्वकर्मसु ॥

(अर्थ)

जिस सम्वत्सर में बृहस्पति वर्ष भर के भीतर ३ राशियों को स्पर्श करे उसका नाम लुप्तसंवत्सर है और वह सब शुभ कार्यों में वर्जित है ॥

शुक्रजीवचन्द्राणा बालवृद्धत्वम्—

प्रागुद्गतः शिशु रहस्त्रितयं सितःस्यात्
पश्चाद्दशाहमिह पञ्चदिनानि वृद्धः ।

प्राक्पक्ष एव कथितोऽत्र वसिष्ठमुख्यै
र्जीवस्तु पक्षमपि वृद्धशिशुर्विवर्ज्यः ॥
वर्जनीयाः प्रयत्नेन वृद्धे पञ्च शिशौ त्रयम् ॥
वृद्धत्वमिन्दोस्त्रिदिनं दिनार्द्धं
बालत्वमस्तत्वमहर्द्वयंच ॥
शुक्रे चास्तंगते जीवे चन्द्रे वास्तमुपागते ।
तेषां वृद्धे च बाल्येच शुभकर्म भयप्रदम् ॥

(अर्थ)

जब शुक्र का पूर्व में उदय होता है तब ३ दिन तक वह बालक कहलाता है, वैसे ही पश्चिम दिशा में उदय होने के अनन्तर १० दिन तक बालक कहलाता है, अस्त होने से ५ दिन पहले वृद्ध कहलाता है, बृहस्पति १५ दिन बाल और वृद्ध रहता है और यह बाल वृद्धत्व सब शुभ कार्यों में वर्जित करना चाहिये ॥

कोई आचार्य कहते हैं कि वृद्धत्व में ५ दिन और बालत्व में ३ दिन अवश्य वर्जित करने चाहियें ॥

जैसे ही बृहस्पति और शुक्र का बाल वृद्धत्व होता है वैसे ही चन्द्रमा का भी होता है, चन्द्रमा का ३ दिन वृद्धत्व होता है आधा दिन बालत्व होता है और २ दिन अस्त होता है ॥

शुक्र बृहस्पति, और चन्द्रमा के बाल, वृद्धत्व, अथवा अस्त में सब शुभ कर्म्म वर्जित करने चाहिये ॥

अपवादाः—

(१) गयायां सर्वकालेषु पिण्डं दद्याद्विचक्षणः ।
अधिमासे जन्मदिने अस्ते च गुरुशुक्रयोः ।
न त्यक्तव्यं गयाश्राद्धं सिंहस्थेच बृहस्पतौ ॥

गयागोदावरीयात्रायां मलमासगुरुशुक्रास्तादिदोषो नास्ति ॥

(२) नामकर्म विषये=मुख्यकाले कुर्वन् विप्रादिः पुण्यतिथि-नक्षत्रचन्द्रानुकूल्यादिगुणादरं न कुर्यात् । अतिक्रमे तु आवश्यकम् ।

(३) चैत्र माहात्म्ये—
नष्टे शुक्रे तथा जीवे दुर्बले चन्द्र भास्करे ।
तत्रोपनयन कार्यं चैत्रे मीनगते रवौ ॥

(अर्थ)

ऊपर लिखे हुए शुक्रास्तादि वर्जित कालों में भी गया की यात्रा हो सकती है जैसा कि यह वचन है:—विद्वान् मनुष्य को चाहिये कि सब काल में गया में पिण्डदान करे चाहे अधिमास हो, जन्मवार हो, बृहस्पति शुक्र का अस्त हो, या सिंहस्थ बृहस्पति हो, परन्तु गया श्राद्ध नहीं छोड़ना चाहिये ॥

गया और गोदावरी की यात्रा में मलमास, गुरुशुक्रास्तादि दोष नहीं है ॥

नाम कर्म के विषय में:—धर्म सिन्धु में लिखा है कि मुख्य काल में (११ वें अथवा १२ वें दिन) नाम कर्म करने पर तिथि, नक्षत्र, चन्द्रमा का विचार आदि न करे, परन्तु यदि मुख्य काल व्यतीत हो जावे तो विचार करना पड़ेगा ॥

चैत्र मास का माहात्म्य:—जिस बटु के उपनयन करने में गोचर आदि की शुद्धि न हो तो मीनस्थ सूर्य अर्थात् चैत्रमास में उसका उपनयन करना चाहिये, चाहे शुक्र अस्त हो, चाहे बृहस्पति अस्त हो, चाहे सूर्य चन्द्रमा की शुद्धि न हो ॥

कार्यविशेषेषु चन्द्रादिशुद्धिः

ताराशुद्धं क्षौरं रविगुरुशुद्धा व्रतदीक्षा ।
शुक्रविशुद्धा यात्रा सर्वं शुद्धं शशाङ्केन ॥

(अर्थ)

चौर कर्म्म में तारा की शुद्धि लेनी चाहिये, व्रत और दीक्षा में सूर्य्य और बृहस्पति की शुद्धि लेनी चाहिये, यात्रा में शुक्र की शुद्धि लेनी चाहिये, सब कामों में चन्द्रमा की शुद्धि लेनी चाहिये ॥

सवत्सरे राजादयः

चैत्रशुक्लादिमार्तण्डोदयवारेश्वरो नृपः ।
मेषार्कदिनपो मन्त्री तदाद्यो वर्षपः परे ॥
आर्द्राकर्कतुलाचाप मकरार्कदिनेश्वराः ।
मेघशस्यरसा धान्यनीरसेशाः शुभैः शुभम् ॥

(अर्थ)

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के दिन सूर्य्योदय के समय जो वार होता है वही वर्ष में सम्वत्सर का राजा होता है, मेषार्क प्रवेश के दिन जो वार होता है वही सम्वत्सर का मन्त्री होता है, आर्द्रा प्रवेश, कर्क, तुला, धन, और मकर सक्रान्ति के दिन जो वार होते हैं वही मेघ शस्य, रस, धान्य, और नीर-सेश क्रम से होते हैं ॥

लाभव्ययविचारः संवत्सरे.

लाभव्ययौ समौ कृत्वा एकहीनं तु कारयेत् ।
अष्टभिस्तु हरेद्भागं शेषाङ्के फलमादिशेत् ॥
लाभः सौख्यं तथा क्लेशो रोगो लोकापवादकम् ।
सन्मानं विजयो हानिः कथिताः पूर्वसूरिभिः ॥
(कृष्णपक्षे जन्म=अष्टोत्तरीमतम्
शुक्लपक्षेजन्म=विंशोत्तरीमतम)

(अर्थ)

लाभ और व्यय को जोड़ कर १ घटावे, ८ का भाग दे, जो अंक शेष रहे उससे फल कहना चाहिये ॥

लाभ, सुख, क्लेश, रोग, लोकापवाद, सन्मान, विजय, और हानि ये क्रमश: शेष अङ्कों के फल हैं ॥

यदि कृष्णपक्ष में जन्म हो तो अष्टोत्तरीमत लेना चाहिये, शुक्लपक्ष में जन्म हो तो विंशोत्तरीमत लेना चाहिये ॥

ध्रुवज्ञानोपायः

(अथवोत्तरदिशाज्ञानम्)

ध्रुवः

× × × ख

× × × क

वसिष्ठ × (अरुन्धती)
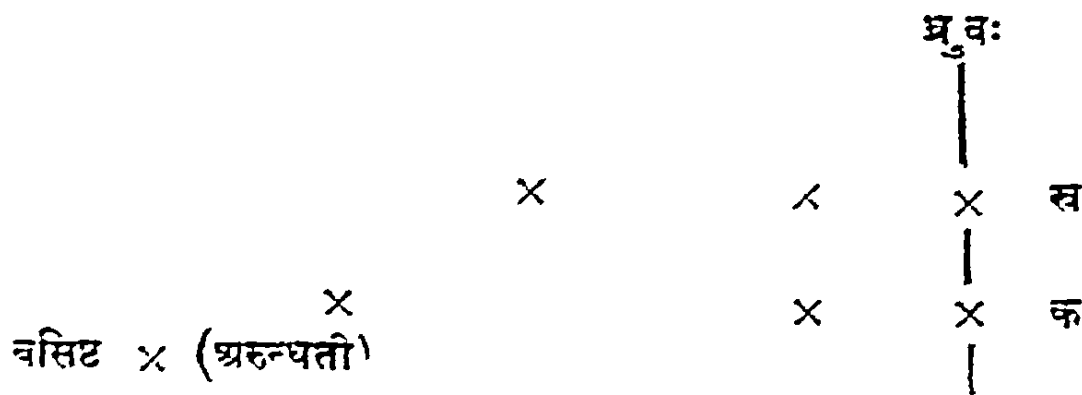
ध्रुव तारा उत्तर की ओर सदा एक ही स्थान पर स्थिर दिखलाई देता है, यदि हमको रात में उत्तर का ज्ञान हो जावे तो और दिशाएं मालूम हो सकती हैं, सात तारों का व्यूह रात में बहुधा गर्मी दिनों में शाम को दिखलाई देता है, इनको सप्तर्षि कहते हैं, इनकी सूरत ऊपर लिखी है यदि क ख. से एक रेखा सीधी खींची जाय तो ठीक उत्तर में ध्रुव तारे के पास पहुंचेगी. विषुवद्रेखा के पास ध्रुव दृष्टिसीमा पर दिखलाई देता है, एक डिग्री उत्तर में यह भी एक डिग्री दृष्टि सीमा से ऊपर दिखलाई देगा. होते होते उत्तर ध्रुव से यह ठीक सिर के ऊपर दिखलाई देगा. यदि किसी स्थान पर ध्रुव तारा ४० अक्षांश में दिखलाई दे तो उस स्थान का अक्षांश भी ४० होगा

श्रीदेवीदत्तज्योतिर्वित्संगृहीतानुवादिते सुगमज्योतिषे संज्ञाध्यायः प्रथम ॥

सुगमज्योतिषम्

जातकाध्यायोद्वितीयः

—:०:—

(१) उपसूतिकादिप्रकरणम्

उपसूतिकाज्ञानम्

(१) धनान्त्यबन्धुस्थितखेचरेन्द्रै
र्वाच्यास्तदानीमुपसूतिकाश्च ॥
चन्द्रलग्नान्तरगतैर्ग्रहैः स्युरुपसूतिकाः ॥
मीने मेषे तथाप्येका चतस्रो वृषकुम्भयोः ।
अन्यलग्ने च तिस्रः स्युर्वाणाश्च धनकर्कयोः ॥
(२) तत्र स्थिते भानुसुते तु शूद्रा रवौ स्थिते क्षत्रियभामिनी सा ।
राहुध्वजाभ्यामथ जातिहीना त्वन्यैर्ग्रहैर्जातिसमा प्रदिष्टा ॥
जीवेन्दुपुत्रासुरदेवपूज्यैस्तत्र स्थितैर्ब्रह्मकुलाभिरामा ॥
(३) क्रूरैर्विरूपदेहा लक्षणहीनाश्च रौद्रमलिनाश्च ॥
(४) पापग्रहस्तु विधवा सधवा सौम्यखेचरा ।
बुधशुक्रौ कुमारी स्याद्गुरुसूर्यौ प्रसूतिका ॥
अन्यग्रहेषु वृद्धास्यात् ।

(अर्थ)

(१) धनस्थान मे, व्यय स्थान में, और चतुर्थस्थान में जितने ग्रह हों उतनी ही उपसूतिका (अर्थात् जो स्त्रियां बच्चे होने वाली स्त्री के पास रहती हैं) होती हैं ।

कोई आचार्य कहते हैं कि चन्द्रमा और लग्न के बीच में जितने ग्रह हों उतनी ही उपसूतिका होती हैं।

मीन अथवा मेष लग्न हो तो एक स्त्री होती है, वृष और कुम्भ लग्न हों तो ४ स्त्रिया होती हैं, धन और कर्क में ३ स्त्रियां होती हैं, शेष लग्नों में २ स्त्रिया होती हैं॥

(२) यदि पूर्वोक्त स्थानो में शनि हो तो शूद्र जाति की स्त्री होती है, यदि राहु और केतु हों तो हीन जाति की होती है, शेष ग्रहों के होने से अपनी ही जाति की होती है, यदि बृहस्पति बुध शुक्र हों तो ब्राह्मणी होती है।

(३) यदि क्रूर ग्रह हों तो उपसूतिका देखने में बदसूरत, मैली कुचैली, क्रोधवाली और शुभलक्षणहीन होती है॥

(४) यदि पापग्रह हों तो उपसूतिका विधवा होती है, यदि सौम्य ग्रह हों तो सधवा होती है॥ यदि बुध और शुक्र हों तो उपसूतिका कुमारी अर्थात कन्या होती है, यदि बृहस्पति और सूर्य हों तो बाल बच्चे वाली होती है, इनके सिवाय और कोई ग्रह हों तो बुढ़िया होती है॥

गृहमध्ये प्रसूतिस्थानज्ञानम्

प्राच्यादिगृहे क्रियाद्यो द्वौद्वौ कोणगताद्विमूर्तयः।

(लग्ने १।२ राशि० तदा पूर्वे
,, ३ ,, आग्नेये
,, ४।५ ,, दक्षिणे
,, ६ ,, नैऋत्ये
,, ७।८ ,, पश्चिमे
,, ९ ,, वायव्ये
,, १०।११ ,, उत्तरे
,, १२ ,, ईशाने

(अर्थ)

जिस घरमे बच्चा पैदा हो उस घर में प्रसूता स्त्री का स्थान जानने की यह रीति है—

यदि लग्न में मेष अथवा वृषराशि हो तो पूर्व दिशा जाननी चाहिए, मिथुन राशि हो तो आग्नेय, कर्क सिंह राशि हो तो दक्षिण, कन्या हो तो नैऋर्त्य, तुला वृश्चिक हो तो पश्चिम, धन हो तो वायव्य, मकर कुम्भ हो तो उत्तर, मीन राशि हो तो ईशान दिशा जाननी चाहिये ॥

प्रसूतेः पूर्वं मातृभोजनज्ञानम्.

तुर्यंशवशतोवाच्यं प्रसूतेः प्राङ्मातृभोजनम् ॥
कठिनं मधुरं रूक्षं लेह्यपेयादिकं मृदु ।
शोषणाम्लगुडं दुग्धं विचित्रं स्वल्पभोजनम् ॥
वटकाद्यं बहुरसं पेयादि मधुरं हिमम् ।
क्रोधादिना कदन्नं स्यात्सूर्यादेः श्लोकपादतः ॥

(अर्थ)

प्रसूति से पहले माता ने क्या भोजन किया था इसका विचार चतुर्थेश के वश से करना चाहिये। यदि चतुर्थेश सूर्य हो तो भोजन कठिन (सख्त) मीठा और रूखा कहना चाहिये, यदि चन्द्रमा हो तो कोई मीठी पतली चीज जो चाटी जा सकती है या पी जा सकती है, यदि मङ्गल हो तो मीठा या दूध, यदि बुध हो तो अनेक प्रकार का स्वल्प भोजन, यदि बृहस्पति हो तो बड़े आदि बहुत रसवाले भोजन, यदि शुक्र हो तो ठंढी, मीठी, पीने वाली चीज़ (शर्बत आदि), यदि शनैश्चरहो तो मोटा अन्न झगड़े के साथ मिला हो ऐसा कहना चाहिये ॥

शीर्षादिना जन्म.

शीर्षोदयैश्च शिरसाप्युभये कराभ्यां
पृष्ठोदयैश्च जननं भवतीह पद्भ्याम् ॥

(अर्थ)

यदि शीर्षोदय लग्न हो तो बच्चा सिर से उत्पन्न होता है, यदि उभयोदय लग्न हो तो उसके हाथ पहिले निकलते हैं, यदि पृष्ठोदय लग्न हो तो उसके पैर पहिले निकलते हैं ॥

जननीक्लेशयोगः

पापैश्चन्द्रात्स्मरसुखगतैःक्लेशमाहुर्जनन्याः ॥
शुभग्रहैः खबन्धुगैः सुखेन संयुतः सवः ।
सुताङ्गसप्तमस्थितै रसद्ग्रहैस्तु कष्टतः ॥

(अर्थ)

यदि चन्द्रमा से चौथे या सातवें घर में पाप ग्रह हों तो बच्चा होने में माता को कष्ट होता है ॥

चौथे और दसवें स्थान में यदि शुभ ग्रह हों तो सुख से प्रसव होता है। यदि ५,७,६, स्थानों में पाप ग्रह हों तो प्रसव होने में कष्ट होता है ॥

सूतिकावस्त्रम्

अरुणधवलवर्णं पाटलं तोयदाभं
रजनिधवलवर्णं चित्रवर्णं च कृष्णम् ।
कनकरजनिवर्णं कर्बुरं बभ्रु स्वच्छं
क्रियत इह सुवाच्यं चाम्बरं सूतिकायाः ॥

(अर्थ)

सूतिका के वस्त्र जानने की रीति यह है:—मेष लग्न हो तो लाल वृष हो तो सफेद, मिथुन हो तो गुलाबी, कर्क हो तो बादल के समान रङ्ग वाला सिंह हो तो पीला, कन्या हो तो सफेद, तुला हो तो चित्र विचित्र, वृश्चिक हो तो काला धन हो तो पीला, मकर हो तो काला कुम्भ हो तो कबरैला, मीन हो तो साफ वस्त्र होता है ॥

रोदनज्ञानम्

मेषत्रिपञ्चाननचापलग्ने विस्मृत्य सर्वं वहुरोदतिस्म ।
अल्पं घटे स्त्री वणिजोः परेषु रुदन्तिनो ज्ञान वलस्यसत्त्वात् ॥

(अर्थ)

यदि मेष, मिथुन, सिंह, अथवा धन लग्न हो तो बच्चा बहुत रोता है यदि कुम्भ, कन्या, अथवा तुला लग्न हो तो कम रोता है, शेष लग्नों में नहीं रोता है ॥

दीपादिज्ञानम्.

स्नेहः शशाङ्का दुदयाच्च वर्ति दीपोऽर्क युक्तर्क्षवशाच्चराद्यः ।
द्वारं च तद्वस्तुनि केन्द्रसंस्थै ज्ञेयं ग्रहैर्वीर्यसमन्वितैर्वा ॥
(राश्यादौ पूर्णतैलं-मध्येऽर्धमित्यादि)
चरे दीपश्चरः । स्थिरे स्थिरः ।
सूर्य राशिर्यस्यां दिशि तत्र दीपः ॥
केन्द्रस्था दथवा लग्नस्थाद्बलवतो ग्रहात्सूतिकागृहद्वारम्.
चरलग्ने करे दीपः स्थिरे तत्रैव संस्थितः ।
द्विस्वभावे तथा वाच्यः करेण परिचालित· ॥

(अर्थ)

चन्द्रमा से तेल का, लग्न से बत्ती का, सूर्य्य युक्त राशि से दीप का ज्ञान होता है । यदि राशि का आरम्भ हों तो दिये में तेल भरा होगा, मध्य हो तो आधा तेल होगा, अन्त हो तो तेल बहुत कम होगा ॥

यदि चर लग्न हो तो दीप भी चलायमान होगा, यदि स्थिर लग्न हो तो दीप भी स्थिर होगा । जिस दिशा में सूर्य्य की राशि हो उसी दिशा में दीप भी होगा ॥

केन्द्र में अथवा लग्न में जो बलवान् ग्रह हो उससे सूतिका के गृह का द्वार जानना चाहिये । यदि चर लग्न हो तो दिया हाथ में होगा, यदि स्थिर

लग्न हो तो दिया अपने स्थान पर स्थित होगा, यदि द्विस्वभाव लग्न हो तो हाथ में चलायमान होगा ॥

जातकस्य शिरोदिक् ज्ञानम्

मेषे चापमृगेन्द्रयोर्यदि शिशुः प्राचीशिरो जायते
गोकन्यामकरेषु दक्षिणशिरा जातो भवेन्निश्चितम् ।
मीने वृश्चिककर्किणो यदि तदा कौवेरमूर्द्धा भवेत्
कुम्भाख्ये घटयुग्मके यदि ततः पश्चान्मुखः शोभनः ॥

(अर्थ)

यदि मेष, धन सिंह लग्न हों तो बच्चे का सिर पूर्व की ओर होता है, यदि वृष, कन्या मकर लग्न हो तो दक्षिण को सिर होता है, यदि मीन वृश्चिक अथवा कर्क लग्न हों तो उत्तर को सिर होता है, यदि कुम्भ, तुला अथवा मिथुन लग्न हो तो पश्चिम को सिर होता है ॥

शिशु, पुत्रः कन्यावा.

(१) पुंराशौ शनिरथवा राहुः (२) दशमएकादशे वा बली बुधः
(३) पुंराशिस्थौ बलिनौ रविगुरू चेत्पुत्रः । अन्यथा कन्या.

(अर्थ)

(१) शनि अथवा राहु पुरुष राशि में हों (२) अथवा बुध बलवान् हो कर दशम या एकादश स्थान में हो (३) अथवा सूर्य या बृहस्पति बलवान् होकर पुरुष राशि में बैठे हों तो पुत्र का जन्म होता है, अन्यथा कन्या का॥

गृहज्ञानम्

संस्कारितं च जरितं रविजे कुजेतु
दग्धं च काष्ठसहितं न दृढं स्वरांशौ ।
रम्यं नवं भृगुसुते शशिजे विचित्रं
सोमे नवं च धिषणे सुदृढं गृहं स्यात् ॥

(अर्थ)

यदि शनैश्चर मंगल लग्न में हो तो वह घर जिस में बालक उत्पन्न हुआ हो पुराना मरम्मत किया होगा, यदि सूर्य्य हो तो वह घर आग लगा हुआ लकड़ी का और कच्चा होगा, यदि शुक्र हो तो रमणीय नया घर होगा, यदि बुध हो तो विचित्र होगा, यदि चन्द्रमा हो तो नया होगा, यदि बृहस्पति हो तो दृढ़ अर्थात् मजबूत घर होगा ॥

प्रसूतिस्थानात्पाकशालादिविचारः

सूर्य मं. जिस दिशा में हों वहां अग्नि स्थान (पाकगृह) जानना चाहिये।

चन्द्रमा से जल स्थान
बुध से भंडार
बृ. से धन स्थान
शु. से देव स्थान
श. से अशुभ (मैला) स्थान
} जानना चाहिये

पितुः परोक्षे जन्म

पितुर्जातः परोक्षस्य लग्नमिन्दावपश्यति ॥

(अर्थ)

यदि चन्द्रमा लग्न को न देखें तो पिता के परोक्ष में जन्म हुआ होगा ऐसा कहना चाहिये ॥

कृष्णलाञ्छनविचारः

राहुमन्दौ च यत्रस्थौ तत्र स्यात्कृष्णलाञ्छनम् ॥

(अर्थ)

जिस स्थान में राहु और शनैश्चर हों उस स्थान में काला चिह्न (तिल आदि) होता है ॥

द्विशालादिमन्दिरम्

चेत्तुङ्गादधिकोनकेऽथपरमोच्चांशस्थिते वा गुरुः
स्वस्थे द्वित्रिचतुर्थकमट कुर्यात्तदा मन्दिरम् ।

एवं वीर्ययुते शरासनगते तद्वा त्रिशालं गृहं
चेदन्येषु समर्थकेषु सुधिया वाच्यं द्विशालं गृहम् ॥

(अर्थ)

यदि बृहस्पति उच्च का हो अथवा परम उच्च हो या अपने राशि का हो तो घर दो मञ्जिला तेमञ्जिला या चोमञ्जिला होता है, ऐसे ही बृहस्पति बलवान् होकर धन राशि में हो तो तिमंजिला घर होता है, यदि और कोई ग्रह वीर्य्यवान् हो तो दोमजिला घर होता है ॥

आधानलग्नाज्जन्मलग्नज्ञानम्

आधानलग्नात्सुतभेतु जन्म लग्नं भवेच्छास्त्रविदोवदन्ति ॥

(अर्थ)

आधान लग्न से पञ्चम लग्न में जन्म होता है ॥

जन्ममास में ४, तिथि में ३, नक्षत्र में १०, लग्न में ५, वार में ३ जोड़ देने से गर्भमास आदि निकलते हैं ॥

सूचना.

यदि लग्न में ज्योतिषी को सन्देह न हो तो उपसूतिका आदि मिलाने की कोई आवश्यकता नहीं है। परन्तु यदि लग्न में सन्देह हो, ठीक समय मालूम न हो सके, या सन्धिगत लग्न हो तो पूर्वोक्त उपसूतिका का आदि बातों को मिला कर लग्न निश्चय करना चाहिये। यह विचार छोटे बालक के विषय में है। यदि अधिक अवस्था वाले मनुष्य की जन्म पत्री के ठीक होने में सन्देह हो उस के फल ठीक न मिलें तो लग्न से एक घर पहिले या एक घर पीछे लेकर उसको लग्न माने यदि उसके अनुसार ग्रह स्थिति करने से ठीक फल मिलें तो वही लग्न निश्चय करना चाहिये। अथवा जन्म पत्री वाले से यह प्रश्न करना चाहिये कि उस समय पर्यन्त उसके जीवन में कौन कौन सी अच्छी या बुरी घटनाएं किस किस समय में हुई। दशा तथा अन्तर्दशाओं का फल उन घटनाओं से मिलाना चाहिये। इस रीति से भी जन्मपत्री का संशोधन हो सकता है।

(२) गण्डान्तादिप्रकरणम्

त्रिविधा गण्डान्ताः

नन्दातिथीनामादौच पूर्णानाञ्च तथान्तिमे ।
घटिकैका शुभे त्याज्या तिथिगण्डं घटीद्वयम् ॥

ज्येष्ठाश्लेषारेवतीना मन्तेच घटिकाद्वयम् ।
आदौ मूलमघाश्विन्या भगण्डंच चतुर्घटी ॥

मीनवृश्चिककर्कान्ते घटिकार्धं परित्यजेत् ।
आदौ मेषस्य चापस्य सिंहस्य घटिकार्धकम् ॥

तिथिगंडे भगंडे च लग्नगंडे च जातकः ।
न जीवति यदाजातो जीविते च धनी भवेत् ॥

(अर्थ)

(१) तिथि गण्डान्त

नन्दा तिथियों की आदि की एक घडी और पूर्णा तिथियो की अन्त की एक घडी गण्डान्त होती है । यह शुभकार्य्यों में वर्जित है ॥

(२) नक्षत्रगण्डान्त

ज्येष्ठा. अश्लेषा, और रेवती की अन्त की दो घडियां, मूल, मघा और अश्विनी की आदि की २ घडिया नक्षत्र गण्डान्त कहलाती हैं ॥

(३) लग्नगण्डान्त

मीन, वृश्चिक, और कर्क लग्नों के अन्त की आधी घडी, मेष, धन और सिंह की आदि की आधी घड़ी वर्जित करनी चाहिये ॥

तिथि गण्डान्त, नक्षत्र गण्डान्त अथवा लग्न गण्डान्त में जो उत्पन्न हो वह नहीं बचता है, यदि बच जावे तो धनवान् होता है ॥

मूलादि जन्मफलम्—

मूलजा श्वशुरं हन्ति व्यालजा कुलटाङ्गना ।
विशाखजा देवरघ्नी ज्येष्ठाजा ज्येष्ठनाशका ॥
पिता म्रियेत मूलाद्ये पादे पुत्रजनिर्यदि ।
द्वितीये जननीनाशो धननाशस्तृतीयके ॥
चतुर्थे कुलनाशोऽतः शान्तिः कार्या प्रयत्नतः ॥
न कन्या हन्ति मूलर्क्षे पितरं मातरं तथा ।
मूलजा श्वशुरं हन्ति (इत्यादि) ॥
ज्येष्ठान्ते घटिका चैव मूलादौ घटिकाद्वयम् ।
अभुक्तमूलमथवा सन्धिनाडीचतुष्टयम् ॥
नवमासं सार्पदोषो मूलदोषोऽष्टवर्षकम् ।
ज्यैष्ठो मासान्पञ्चदश तावद्दर्शनवर्जनम् ॥
ज्येष्ठान्त्यपादजातस्तु पितुः स्वस्य च नाशकः ।
अश्लेषाप्रथमः पादः पादो मूलान्तिमस्तथा ।
विशाखाज्येष्ठयो राद्यास्त्रयः पादाः शुभावहाः ॥
गण्डान्तेन्द्रभशूलपातपरिघ व्याघातगण्डावमे
संक्रान्तिव्यतिपातवैधृतिसिनीवाली कुहूदर्शके ।
ऽत्रे कृष्णचतुर्दशीषु यमघण्टे दग्धयोगे मृतौ
विष्टौ सोदरभे जनिर्न पितृभे शस्ता शुभा शान्तितः ॥

(अर्थ)

जो कन्या मूल नक्षत्र में उत्पन्न हो उसका ससुर मर जाता है, जो कन्या अश्लेषा नक्षत्र में उत्पन्न हो वह बदचलन होती है, जो कन्या विशाखा नक्षत्र मे उत्पन्न हो उसका देवर मर जाता है, और जो कन्या ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न हो उसके पति का बड़ा भाई मर जाता है ॥

यदि मूल नत्त्र के प्रथम चरण में पुत्र का जन्म हो तो पिता मर जाता हैं, दूसरे चरण में माता का नाश होता है, तीसरे चरण मे धन का नाश होता है और चौथे चरण में वंश का नाश होता है, इसलिए मूल नत्त्र में जन्म होने पर शान्ति करनी आवश्यक है ॥

मूल नत्त्र मे कन्या का जन्म हो तो माता पिता का नाश नहीं होता है किन्तु सास ससुर का नाश होता है ॥

ज्येष्ठा नत्त्र के अन्त की १ घड़ी और मूल नत्त्र के आदि की २ घडिया अथवा सन्धि की ४ घडियों को अभुक्तमूल कहते हैं ॥

अश्लेषा का दोष ६ महीने पर्यन्त रहता है, मूल का दोष ८ वर्ष पर्यन्त, ज्येष्ठा का दोष १५ महीने पर्यन्त रहता है, तब तक पुत्र का मुख देखना वर्जित है ॥

ज्येष्ठा के अन्त चरण में उत्पन्न हुआ पुत्र पिता का नाश करता है और आप भी नष्ट हो जाता है ॥ अश्लेषा का प्रथम चरण, मूल का अन्त चरण, विशाखा और ज्येष्ठा के पहले ३ चरण शुभ हैं ॥

गण्डान्त, ज्येष्ठा, शूल, पात, परिघ, व्याघात, गण्ड, अवमतिथि, संक्रान्ति, व्यतीपात, वैधृति, कृष्ण पत्त की चतुर्दशी, अमावास्या, वज्र, यमघण्ट, दग्ध, और मृत्यु योग, भद्रा और सहोदर भाई बहिन के नत्त्र में अथवा पिता के नत्त्र में जन्म हो तो शुभ नहीं होता है, शान्ति करने से शुभ होता है ॥

दिनत्तयादिजन्मफलम्

दिनक्षये व्यतीपाते व्याघाते विष्टिवैधृतौ ।
शूले गण्डेऽतिगण्डे च परिघे यमघण्टके ॥
कालदण्डे मृत्युयोगे दग्धयोगे सुदारुणे ।
तस्मिन् गण्डदिने प्राप्ते प्रसूतिर्यदि जायते ॥
अतिदोषकरी प्रोक्ता तत्र पापयुता सती ॥

(अर्थ)

यदि दिनक्षय, व्यतीपात, व्याघात, विष्टि, वैधृति, शूल, गण्ड, अति-गण्ड, परिघ, यमघण्ट, कालदण्ड, मृत्यु, दग्ध योग और गण्डान्त में जन्म हो तो बडा दोष होता है और बच्चे की माता के पतिव्रता होने में सन्देह आ पडता है ॥

सिनीवालीप्रसूतिफलम्

सिनीवाल्यां प्रसूतास्या यस्यभार्या पशुस्तथा ।
गजोऽश्वोमहिषी चैव शक्रस्यापि श्रियं हरेत् ॥

(अर्थ)

अमावास्या के दिन, स्त्री, पशु, हाथी, घोड़ा अथवा महिषी के बच्चा यदि इन्द्र के घर भी हो तो लक्ष्मी का नाश होता है ॥

कृष्णचतुर्दशीजन्मफलम्

कृष्णपक्षे चतुर्दश्यां प्रसूतेः षड् विधं फलम् ।
चतुर्दश्यास्तु षड् भागान् कुर्यादादौ शुभं स्मृतम् ॥
द्वितीये पितरं हन्ति तृतीये मातरं तथा ।
चतुर्थे मातुलं हन्ति पञ्चमे वंशनाशनम् ॥
षष्ठेच धनहानिः स्या दात्मनो वंशनाशनम् ॥

(अर्थ)

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के दिन जन्म का फल ६ प्रकार का है ।

चतुर्दशी के ६ भाग करने चाहिये, पहला भाग शुभ होता है, दूसरा भाग पिता का नाश करता है, तीसरा भाग माता का नाश करता है, चौथा भाग मामा का नाश करता है, पांचवां भाग वंश का नाश करता है, और छटा भाग धन की हानि और अपने वश का नाश करता है ।

एकनक्षत्रजननफलम्

समानभौ यदादेवि पितापुत्रौ च सोदरौ ।
भगिन्यौ वा स्वबन्धू वा तदा पूर्वस्य नाशनम् ॥१॥

एकस्मिन्नेव नक्षत्रे भ्रात्रोर्वा पितृपुत्रयोः ।
प्रसूतिश्च तयोर्मृत्युर्भवेदेकस्य निश्चयात् ॥२॥

(अर्थ)

जब पिता पुत्रों का अथवा सहोदर भाई बहिनों का एक ही जन्म नक्षत्र हो तो जिसका जन्म पहले हुआ हो उसका नाश होता है ॥१॥

जब भाई बहिनों का अथवा पितापुत्रों का एक ही जन्म नक्षत्र हो तो उन दोनों में से एक का मृत्यु होता है ॥ २ ॥

(३) अरिष्टप्रकरणम्

अरिष्टयोगाः

लग्नसप्तमगौ पापौ चन्द्रोऽपिक्रूरसंयुत ।
यदात्वनीक्षितः सौम्यै· शीघ्रं मृत्युं विनिर्दिशेत् ॥ १ ॥
जीर्णे शशिनि लग्नस्थे पापैः केन्द्राष्टसंस्थितैः ।
यो जातो मृत्यु माप्नोति सोऽचिरात्तु न संशयः ॥ २ ॥
पापयोर्मध्यगश्चन्द्रो लग्नाष्टद्व्यन्तसप्तगः ।
अचिरान्मृत्युमाप्नोति योजातः सशिशुस्तदा ॥ ३ ॥
पापद्वयमध्यगते चन्द्रे लग्नं समाश्रिते ।
सप्ताष्टमेन पापेन मात्रा सह मृत· शिशुः ॥ ४ ॥
रवौ पापान्विते ग्रस्ते यदा लग्नं समाश्रिते ।
अष्टमस्थे कुजे शस्त्रान्मृतिः स्यान्मातृबालयो· ॥ ५ ॥
शनैश्चरार्कभौमेषु रिप्फधर्माष्टमेषुच ।
शुभैरवीक्ष्यमाणेषु यो जातो निधनं गत· ॥ ६ ॥
शनिक्षेत्रगतो भानुर्भानुक्षेत्रगतः शनिः ।
विंशद्वर्षे भवेन्नाशो रक्षिता यदि शङ्करः ॥ ७ ॥
लग्नस्थितो यदा राहु· केन्द्रे भवति चन्द्रमाः ।
वालस्य तदारिष्टं स्याद्रक्षिता यदि शङ्कर ॥ ८ ॥

भौमक्षेत्रे यदा जीवो जीवक्षेत्रे क्षितेः सुत ।
द्वादशे वत्सरे नाशो रक्षिता यदि शङ्करः ॥ ९ ॥
चतुर्थे च यदा राहुः केन्द्रषष्ठाष्टगः शशी ।
दशमेऽब्दे भवेन्मृत्युः सद्यो जातो न संशयः ॥ १० ॥
सप्तमे च यदा राहु मूर्तौ भवति चन्द्रमा ।
वर्षे चतुर्थे मरणं जातकस्य न संशयः ॥ ११ ॥
अष्टमे द्वादशे जीवो लग्ने भवति चन्द्रमाः ।
अष्टमे मङ्गलश्चैव सयाति यममन्दिरम् ॥ १२ ॥
आपोक्लिमस्थिताः सर्वे ग्रहा बलविवर्जिता ।
षण्मासं वा द्विमासं वा तस्यायुः समुदाहृतम् ॥ १३ ॥
विलग्नाधिपतौ जीवे निधने चार्कजो भवेत् ।
कृच्छ्रेण जीवितं विद्यात्तृणप्रार्थी भवेन्नरः ॥ १४ ॥
यस्याष्टमगतः पापो लग्नेशे पापसंयुते केन्द्रे ।
सौम्यायुते दृष्टिहीने निधनं स्यात्सप्तमे वर्षे ॥ १५ ॥
चतुर्थे नवमे सूर्ये चाष्टमे च बृहस्पतौ ।
द्वादशस्थे शशाङ्के च सद्यो मृत्युं विनिर्दिशेत् ॥ १६ ॥
द्वादशस्थो यदा सौरो जन्मसंस्थोऽपि भूसुतः ।
चतुर्थे सैंहिकेयश्च सोऽष्टमासान्न जीवति ॥ १७ ॥
मेषालिमृगकुम्भस्थो लग्नादष्टमगो रविः ।
छिद्र्यादिपापकेऽष्टो मरणाय न संशयः ॥ १८ ॥
द्वादशस्थौ रविकुजा वष्टमस्थो यदा शनिः ।
वर्षमेकं न जीवेत रक्षिता यदि शङ्करः ॥ १९ ॥
लग्नाच्च नवमे सूर्यः सप्तमे च शनैश्चरः ।
एकादशे गुरुभृगू त्रिमासं मृत्यु मृच्छति ॥ २० ॥

लग्नाच्छष्ठे शनिकुजौ सौम्यस्तु द्वादशे स्थितः ।
तनुस्थानगते चन्द्रे मासमेकं न जीवति ॥ २१ ॥
तृतीयस्थौ रविकुजा वष्टमस्थो यदा शनिः ।
बलहीनौ गुरुभृगू वर्ष मेकं न जीवति ॥ २२ ॥
अरिजायास्थिते चन्द्रे भृगुपुत्रेण संयुते ।
मार्तण्डे दशमस्थे च मासमेकं न जीवति ॥ २३ ॥
लग्नस्थोऽपि यदा पापः सौम्यो द्वादशसंस्थितः ।
तदा मृत्युं व्रजेज्जातो देवराजसमो यदि ॥ २४ ॥
लग्नस्थाः सर्वपापास्तु द्वादशस्थो यदा गुरुः ।
बुधो भवेद्यदा षष्ठः सयाति यममन्दिरम् ॥ २५ ॥
समसप्तमगे भौमे लग्ने भास्करशीतगू ।
यदा षष्ठे गुरुभृगू तदा कष्टं समादिशेत् ॥ २६ ॥
पापः सप्तमगः पङ्गु द्वादशे चन्द्रमा यदि ।
अष्टमे मङ्गलो यस्य तस्य मृत्युर्भवेद्ध्रुवम् ॥ २७ ॥
जातः सौरि र्विलग्नस्थो भृगुः सूर्येण संयुतः ।
द्वादशस्थो गुरुश्चैव पञ्चमासं न जीवति ॥ २८ ॥

व्ययाष्टसप्तोदयगे शशाङ्के
पापेन दृष्टे शुभ दृष्टि हीने ।
केन्द्रेषु सौम्यग्रहवर्जितेषु
प्राणैर्वियोगं व्रजति प्रसूतः ॥ २९ ॥

रवि चन्द्र भौम गुरुभिः कुज भृगु सूर्येन्दुभिस्तथैकस्थैः ॥
रवि शनि भौम शशाङ्कै मरणं खलु पञ्चभिर्वर्षैः ॥ ३० ॥
राशिप्रमितैर्वर्षै मारयति विलग्नपो रिपुस्थाने ॥ ।
लग्ने रवि सौर कुजाः शत्रुगृहे सप्तमे शशी क्षीणः ।
दृष्टो न देवगुरुणा सप्तभिरब्दैर्विनाशयति ॥ ३१ ॥

केन्द्रे रविमुपिततनुः क्षितिसुत मन्द विलोकितोऽथयुतः।
वर्षद्वयेन चन्द्रो मारयति किमत्र गणितेन ॥ ३२ ॥
राहु सप्तमभवने शशि सूर्य निरीक्षिता न शुभदृष्टः।
दशभिर्द्वाभ्यां सहिते रव्दैर्जातं विनाशयति ॥ ३३ ॥
शशिन्यरिविनाशगे निधन माशु पापेक्षिते ॥
रिपुव्ययगतैः पापैर्यदि वा धनमृत्युगैः।
लग्ने वा पापमध्यस्थे वूने वा मृतिमाप्नुयात् ॥ ३४ ॥
भास्कर हिमकर सहितः शनैश्चरो मृत्युदः प्रसूतौ।
वर्षैर्नवभिर्याते रित्याहुर्ब्रह्मशौण्डाख्याः ॥ ३५ ॥
भौम दिवाकर सौराश्छिद्रे जातस्य यस्य शत्रु गेहे।
म्रियतेऽवश्यं सनरो यमकृतरक्षोऽपि मासेन ॥ ३६ ॥
एक पापोऽष्टमगः शत्रु गृहे पापवीक्षिता वर्षात्।
मारयति नर जातं सुधारसो येन पीताऽपि ॥ ३७ ॥
लग्ने लग्नाधिपो यस्य पापयुक्तक्षितो भवत्।
पीडां करोति जातस्य शुभयुग्दृष्टितोऽल्पिकाम् ॥ ३८ ॥
क्षीणशरीरश्चन्द्रो लग्नस्थः क्रूरवीक्षितः कुरुते।
स्वर्गगमनं हि पुंसां कुलीरगोऽजान्परित्यज्य ॥ ३६ ॥
लग्नाद् द्वादशधनगैः क्रूरै म्रियते च रन्ध्ररिपुसंस्थैः।
शुभसम्पर्कमयातै मांसे षष्ठेऽष्टमे द्विद्वादशेवा ॥ ४० ॥
चन्द्रः कुजरवियुक्तः स्वसुतस्थाने न वापिशुभदृष्टः।
मरणं शिशोः प्रयच्छति वर्षे नवमे न सन्देहः ॥ ४१ ॥
होराधिपतिः सूर्यः स्वपुत्रसहितोऽष्टमे भवति राशौ।
वर्षे राशिप्रमितै मरणाय सितेन संदृष्टः ॥ ४२ ॥
आरार्को वक्रिणौ मृत्यु श्चान्योन्यभवनस्थितौ।
वेश्म (?) पण्मृत्युरिःफस्थाः क्षीणेन्दूरक्तिराप्टयाः ॥ ४३ ॥

अष्टमस्था ग्रहा· सर्वे पापदृष्टयुतास्तुवा ।
भौममन्दर्क्षगाश्चेत्तु (१।८।१०।११) शुभ दृष्टि विवर्जिताः ॥४४॥
लग्ने माने सप्तमे चाथ बन्धौ पापाः खेटा जन्मकालेतु सर्वे ।
तिष्ठन्त्येते स्वल्पमायुःप्रदिष्टंतेषामेकोलग्नपोवायदिस्यात् ॥४५॥

व्यये सर्वे ग्रहा नेष्टाः

व्यये सर्वे ग्रहा नेष्टा· सूर्यशुक्रेन्दुराहवः ।
विशेषान्नाशकर्तारो दृष्ट्यावा भङ्गकारिण· ॥ ४६ ॥
व्ययशत्रुगतैः क्रूरै मृत्युर्द्व्ययगतैरपि ।
पापमध्यगते लग्ने सत्यमेव मृतिं वदेत् ॥ ४७ ॥

(अर्थ)

जब बालक की जन्मपत्री में लग्न और सप्तमस्थान में पाप ग्रहहों, चन्द्रमा भी पापग्रहों से युक्त हो और सौम्य ग्रह उसको न देखें तो शीघ्र मृत्यु होती है ॥ १ ॥

जब चन्द्रमा जीर्ण (अमावास्या के समीप) हो कर लग्न में स्थित हो, पापग्रह केन्द्र और अष्टम स्थान में स्थित हों तो ऐसे योग में उत्पन्न हुए बालक की शीघ्र ही मृत्यु हो जाती है इसमें सन्देह नहीं ॥ २ ॥

चन्द्रमा दो पाप ग्रहों के बीच में हो कर लग्न, अष्टम, द्वितीय, द्वादश, या सप्तम स्थान में स्थित हो तो बालक की शीघ्र ही मृत्यु होती है ॥ ३ ॥

जब दो पाप ग्रहों के मध्य में हो कर चन्द्रमा लग्न में स्थित हो और सप्तम तथा अष्टम स्थानों में पाप ग्रह हों तो माता के साथ बालक की मृत्यु हो जाती है ॥ ४ ॥

जब सूर्य पापग्रह से युक्त हो कर अथवा राहु केतु के साथ हो कर लग्न में बैठा हो और अष्टम स्थान में मङ्गल हो तो शस्त्र से बालक तथा माता की मृत्यु होती है ॥ ५ ॥

जब शनैश्चर, सूर्य्य, और मङ्गल १२, ६, ८ स्थानों में स्थित हों और उनको शुभग्रह न देखें तो ऐसे योग में जन्म होने से मृत्यु होती है ॥ ६ ॥

जब शनि के क्षेत्र में सूर्य्य हो और सूर्य के क्षेत्र में शनि हो तो २० वर्ष में मृत्यु होती है यदि शिव जी भी रक्षा करने वाले हों ॥ ७ ॥

जब लग्न में राहु हो और केन्द्र में चन्द्रमा हो तब बालक को अरिष्ट होता है यदि शंकर भी रक्षा करने वाले हों ॥ ८ ॥

यदि मङ्गल के क्षेत्र में बृहस्पति हो और बृहस्पति के क्षेत्र में मङ्गल हो तो १२ वें वर्ष में मृत्यु होती है चाहे महादेव जी भी रक्षा करने वाले हों ॥ ९ ॥

जब चौथे स्थान में राहु हो, केन्द्र, छठे अथवा अष्टम स्थान में चन्द्रमा हो तो दसवें बरस में मृत्यु होती है इसमें सन्देह नहीं ॥ १० ॥

जिस बालक के सप्तम स्थान में राहु हो और लग्न में चन्द्रमा हो तो चौथे वर्ष में मृत्यु होती है इसमें सन्देह नहीं ॥ ११ ॥

जिस बालक के जन्म समय में अष्टम अथवा द्वादश स्थान में बृहस्पति हो और लग्न में चन्द्रमा हो तथा आठवें स्थान में मङ्गल हो तो वह यम के मन्दिर को प्राप्त होता है ॥ १२ ॥

जिस बालक के सब ग्रह आपोक्लिम (३।६।९।१२) में स्थित हों और बलहीन हों तो उसकी आयु २ महीने या ६ महीने की होती है ॥ १३ ॥

जिस बालक के लग्न का स्वामी बृहस्पति हो और अष्टम स्थान में शनैश्चर हो तो उसका जीवन बड़े कष्ट से व्यतीत होता है और वह घास के तिनके के समान दुबला पतला होता है ॥ १४ ॥

जिसके अष्टम स्थान में पाप ग्रह हो और लग्न का स्वामी पापग्रह से युक्त हो कर केन्द्र में बैठा हो और सौम्य ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट न हो तो सातवें वर्ष में उसकी मृत्यु होती है ॥ १५ ॥

जिसके चौथे या नवें स्थान में सूर्य हो और आठवें स्थान में बृहस्पति हो तथा बारहवें स्थान में चन्द्रमा हो तो उसकी तत्काल मृत्यु होती है ॥ १६ ॥

जिसके बारहवें स्थान में शनैश्चर हो और लग्न में मङ्गल हो तथा चतुर्थ स्थान में राहु हो वह बालक आठ महीने नहीं बचता है ॥ १७ ॥

जिस बालक के जन्म लग्न से अष्टम स्थान में मेष वृश्चिक मकर या कुम्भ का सूर्य्य हो और उसको दो तीन अथवा अधिक पापग्रह देखते हों तो उसकी मृत्यु होती है इसमें सन्देह नहीं ॥ १८ ॥

जिसके बारहवें स्थान मे सूर्य्य तथा मङ्गल हों और अष्टम स्थान में शनि हो तो वह बालक बरस भर भी नहीं जीता है यद्यपि शिवजी भी रक्षा करने वाले हों ॥ १९ ॥

यदि लग्न से नवें स्थान में सूर्य्य हो, सप्तम स्थान में शनैश्चर हो और ग्यारहवें स्थान में बृहस्पति और शुक्र हों तो तीन महीने की आयु होती है ॥ २० ॥

जिसके लग्न से छठे स्थान में शनि और मङ्गल हों, बारहवें स्थान में बुध हों और लग्न में चन्द्रमा हो तो वह एक महीना भी नहीं बचता है ॥ २१ ॥

जिसके तीसरे स्थान में सूर्य और मङ्गल हों, अष्टम स्थान में शनि हो, बृहस्पति और शुक्र बलरहित हों तो वह एक बरस भी नहीं बचता है ॥ २२ ॥

जिसके छठे या सातवें स्थान में चन्द्रमा शुक्र से युक्त हो कर स्थित हो तथा दशम स्थान में सूर्य्य हो तो वह एक महीने भी नहीं जीता है ॥ २३ ॥

जिसके लग्न में पापग्रह स्थित हों सौम्य ग्रह बारहवें घर में हों तो वह बालक मृत्यु को प्राप्त होता है ॥ २४ ॥

जिसके लग्न में सब पापग्रह स्थित हो, बारहवें स्थान में बृहस्पति हो और छठे स्थान में बुध हो तो वह बालक यम के मन्दिर में प्राप्त होता है ॥२५॥

यदि सप्तम स्थान में मङ्गल हो, लग्न में सूर्य्य और चन्द्रमा हों, और छठे स्थान में बृहस्पति और शुक्र हों तो कष्ट होता है ॥ २६ ॥

यदि सप्तम स्थान में पापग्रह शनैश्चर हो, द्वादश स्थान में चन्द्रमा हो, अष्टम स्थान में मङ्गल हो तो मृत्यु होती है ॥ २७ ॥

लग्न में शनि हो, शुक्र सूर्य्य से युक्त हो, और बारहवां बृहस्पति हो तो जातक पांच महीने बचता है ॥ २८ ॥

१२, ८, ७, १ स्थानों में चन्द्रमा हो, पापग्रह उसको देखे, शुभ ग्रह न देखता हो और केन्द्रस्थानों में सौम्यग्रह न हो तो उत्पन्न हुए बालक का प्राणों से वियोग होता है ॥ २९ ॥

यदि सूर्य, चन्द्रमा, मङ्गल, बृहस्पति अथवा मङ्गल, शुक्र, सूर्य्य, चन्द्रमा अथवा सूर्य, शनि, मङ्गल और चन्द्रमा एक ही स्थान में हो तो ५ वर्ष में मृत्यु होती है ॥ ३० ॥

लग्नेश शत्रु स्थान में हो तो राशि के अङ्क के समान वर्षों में मृत्यु होती है ॥

लग्न में सूर्य शनि और मङ्गल हो, सप्तमस्थान में क्षीण चन्द्रमा शत्रु के घर का हो और बृहस्पति उसको न देखे तो सातवें वर्ष में मृत्यु होती है ॥ ३१ ॥

चन्द्रमा केन्द्र में हो और सूर्य के साथ होने से अस्त हो गया हो, मङ्गल शनि से युक्त या दृष्ट हो तो दो वर्ष में मृत्यु होती है, गणित करने की कोई आवश्यकता नहीं है ॥ ३२ ॥

यदि सप्तम स्थान में राहु हो, सूर्य और चन्द्रमा की उस पर दृष्टि हो और कोई शुभ ग्रह उसको न देखे तो बारहवें वर्ष में बालक की मृत्यु हो जाती है ॥ ३३ ॥

यदि छठे या आठवे घर में चन्द्रमा हो और पाप ग्रह उसको देखे तो शीघ्र मृत्यु हो जाती है ॥

छठे और वारहवें घर में अथवा धन स्थान और मृत्यु स्थान मे पाप ग्रह हों, या दो पाप ग्रहों के मध्य मे लग्न अथवा सप्तम स्थान हो तो मृत्यु होती है ॥ ३४ ॥

जन्म समय में सूर्य अथवा चन्द्रमा से शनैश्चर युक्त हो तो ब्रह्मशौण्ड आचार्य का मत है कि नौ वर्ष बीतने पर मृत्यु होती है ॥ ३५ ॥

जिसके आठवें स्थान में मङ्गल, सूर्य और शनि शत्रुक्षेत्री हों तो उसकी मृत्यु एक महीने मे होती है चाहे यमराज भी रक्षा करनेवाले क्यों न हों ॥ ३६ ॥

एक भी पापग्रह अष्टम स्थान में शत्रु क्षेत्री हो और पापग्रह से दृष्ट हो तो एक वर्ष के भीतर मृत्यु करता है चाहे उस बालक को अमृत भी पिलाया हो ॥ ३७ ॥

जिसके लग्न में लग्नेश हो और वह पाप ग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो पीडा कारक होता है, शुभ ग्रह युक्त अथवा शुभ ग्रह दृष्ट होने से कम पीडा करता है ॥ ३८ ॥

क्षीण चन्द्रमा लग्न में हो और उसको क्रूर ग्रह देखते हो तो जातक को स्वर्ग मे पहुंचाता है, परन्तु यदि चन्द्रमा कर्क, वृष और मेष का हो तो पूर्वोक्त फल नही रहता है ॥ ३९ ॥

लग्न से द्वादश तथा धन स्थान मे, अष्टम तथा रिपु स्थान में, क्रूर ग्रह हों और शुभ ग्रहों से युक्त न हों तो छठे, आठवें दूसरे या वारहवें मास में मृत्यु होती है ॥ ४० ॥

मङ्गल या सूर्य से युक्त होकर बुध के घर में चन्द्रमा हो और शुभ ग्रह से दृष्ट न हो तो नवें वर्ष में बालक की मृत्यु करता है इसमें सन्देह नहीं ॥ ४१ ॥

होरा का स्वामी सूर्य हो और शनैश्चर से युक्त अष्टम राशि में हो, शुक्र की उस पर दृष्टि हो तो राशि के समान वर्षों में मृत्यु करता है ॥४२॥

मङ्गल और शनि वक्री होकर परस्पर एक दूसरे के घर में स्थित हों १, ६, ८, १२ स्थानों में क्षीण चन्द्रमा लग्नेश और अष्टमेश हों तो मृत्यु करते हैं ॥ ४३ ॥

अष्टम स्थान में स्थित सब ग्रह पापग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त हों, मङ्गल और शनि के घर में हों और शुभ दृष्टि से वर्जित हों तो मृत्यु कारक होते हैं ॥ ४४ ॥

जिसके जन्मकाल में लग्न दशम, सप्तम, चतुर्थ स्थानों में सब पाप ग्रह हों तो वह अल्पायु होता है यद्यपि उनमें से एक लग्नेश भी हो ॥ ४५ ॥

व्ययस्थान में कोई ग्रह शुभ नहीं होता है विशेषतः सूर्य्य, शुक्र, चन्द्रमा और राहु नाश करने वाले होते हैं अथवा नेत्र हानि करते हैं ॥ ४६ ॥

जिसके व्यय और शत्रु स्थान मे, मृत्यु और धन स्थान में पाप ग्रह हों और लग्न पाप ग्रहों के मध्य मे हो तो अवश्य मृत्यु होती है ॥ ४७ ॥

ग्रहकृतारिष्टम्.

(१) सूर्यकृतारिष्टम्.

पापास्त्रिकोणकेन्द्रे सौम्याः षष्ठाष्टमव्ययगाश्च ।
सूर्योदये प्रसूतः सद्य प्राणांस्त्यजति जन्तुः ॥
सूर्य· पापेन संयुक्त सूर्यो वा पापमध्यग· ।
सूर्यात्सप्तमगः पाप स्तदाचात्मवधो भवेत् ॥

(२) चन्द्रकृतारिष्टम्.

षष्ठोऽष्टमोऽथवेन्दुः सद्यो मरणाय पाप संदृष्टः ।
अष्टाभि शुभदृष्टो वर्षैर्मिश्रै स्तदर्द्धेन ॥

सुतमदननवान्त्यलग्न रन्ध्रेष्वशुभयुतो मरणाय शीतरश्मिः ।
भृगुसुतशशिपुत्र देवपूज्यैर्यदि वलिभिर्न युतोऽवलोकितोवा ॥
द्यूनचतुरस्रसंस्थे पापद्वयमध्यगते शशिनि जातः ।
विलयं प्रयाति नियतं देवैरपि संरक्षितो बालः ॥
क्षीणे शशिनि विलग्ने पापैः केन्द्रेषु मृत्युसंस्थैर्वा ।
भवति विपत्तिरवश्यं यवनाधिपतेर्मतंचैतत् ॥
चन्द्रं क्रूरयुतं क्षीणं पश्येद्राहुर्यदा तदा ।
दनैः स्वल्पतरै र्बालः कालस्यालयमाव्रजेत् ॥
चन्द्रः पापेन संयुक्त श्चन्द्रो वा पापमध्यगः ।
चन्द्रात्सप्तमगः पाप स्तदा मातृवधोभवेत् ॥
चन्द्रः सप्तमभवने शनिराहुसूर्यतोभवति ।
सप्तमदिवसे मृत्युः ॥
भौमक्षेत्रे यदा भौमः षष्ठे मृत्यौच चन्द्रमाः ।
षष्ठाष्टमेऽब्दे मृत्युः स्यात् ॥

(३) भौमकृतारिष्टम्.

भौमक्षेत्रे यदा भौमः षष्ठे मृत्यौच चन्द्रमाः ।
षष्ठाष्टमेऽब्दे मृत्युः स्यात् ॥
भौमो विलग्ने शुभदैरदृष्टः षष्ठेऽष्टमे चार्कसुतेन दृष्टः ।
सद्यः शिशुं हन्ति वदन्मनीषी स्मरे यमारौ न शुभेक्षितौतु ॥

(४) बुधकृतारिष्टम्.

कर्कटसद्मनि सौम्यः षष्ठाष्टमसंस्थितो विलग्नर्क्षात् ।
चन्द्रेण दृश्यमूर्तिं र्वर्षचतुष्केण मारयति ॥
षष्ठाष्टमे च मूर्तौ च जन्मकाले यदा बुधः ।
वर्षे चतुर्थे मृत्युः स्यात् ॥

(५) गुरुकृतारिष्टम्

बृहस्पतिर्भौमगृहेऽष्टमस्थः सूर्येन्दुभौमार्कजदृष्टमूर्तिः।
वर्षैस्त्रिभिर्भार्गवदृष्टिहीनो लोकान्तरं प्रापयति प्रसूतम् ॥
सुरगुरु रविशशियुतः शशिजः क्रूरैर्दृष्टोऽपि मारयति।
एकादशभिर्वर्षैर्द्वादशकेपि स्थितं बालम् ॥

(६) शुक्रकृतारिष्टम्

रवि शशि भवने शुक्रो द्वादश रिपुरन्ध्रगोऽशुभैः सर्वैः।
दृष्टः करोति मरणं षड्भिर्वर्षैः किमिह चित्रम् ॥

(७) शनिकृतारिष्टम्

मारयतिषोडशाहाच्छनैश्चरः पापवीक्षितो लग्ने।
सयुक्तो मासेनतु वर्षाच्छुक्रेण मारयति ॥
वक्री शनि भौमगृहं प्रयातश्छिद्रेऽथषष्ठेऽथचतुष्टयेवा।
कुजेन सम्प्राप्तवलेन दृष्टो वर्षद्वयं जीवति तत्र बालः ॥
उदयाद्दशमें मन्दो नाशयेदचिरात्सुतम् ॥

(८) राहुकृतारिष्टम्

राहुश्चतुष्टयस्थो निधनाय निरीक्षित पापैः।
वर्षैर्वदन्ति दशभिः षोडशभिः केचिदाचार्याः ॥
अष्टमस्थो यदा राहुः केन्द्रे भवति चन्द्रमाः।
सद्य एव भवेन्मृत्युः ॥

(९) लग्नारिष्टम्

लग्नं पापेन संयुक्तं लग्नं वा पापमध्यगम्।
लग्नात्सप्तमगः पाप स्तदा चात्मवधो भवेत् ॥

(१०) लग्नाधिप राश्यधिपरिष्टम्

लग्नाधिपजन्मपती षष्ठाष्टमरिःफगौ प्रसूतिकाले।
अस्तमितौ मरणकरौ राशिप्रमितैर्वदेद्वर्षैः ॥

(११) सौम्यग्रहारिष्टम्.

सौम्याः षष्ठाष्टमव्ययगाः पापैर्वक्रोपगैर्ग्रहैर्दृष्टाः।
मासेन मृत्युदास्ते यदि न शुभैस्तत्र संदृष्टाः॥

(१२) क्रूरग्रहारिष्टम्.

लवास्तगैर्वा व्ययसंस्थितैर्वा धनाष्टमस्थै र्व्ययशत्रुगेहे।
क्रूरग्रहैर्योजननं प्रपन्नो षष्ठऽष्टमे मासि मृतिं प्रयाति॥

(१३) सूर्यचन्द्रबुधारिष्टम्.

व्यये रवीन्दू युगपत्पृथग्वा नेत्रे हरेतामपसव्यसव्ये।
सौम्यैरदृष्टो रविचन्द्रयुक्तो बुधो निहन्त्येव हि रुद्रवर्षैः॥

(अर्थ)

(१) सूर्य्य का अरिष्ट

त्रिकोण और केन्द्रस्थानों में पापग्रह हों ६, ८, १२ स्थानों में सौम्य ग्रह हों, सूर्योदय के समय में जन्म हो तो जातक शीघ्र प्राणों को छोडता है॥

सूर्य्य पाप ग्रह से युक्त हो अथवा पाप ग्रहों के मध्य में हो अथवा सूर्य्य से सातवें स्थान में पाप ग्रह हो तो मृत्यु होती है॥

(२) चन्द्रमा का अरिष्ट

यदि छठा अथवा आठवां चन्द्रमा पापग्रह से दृष्ट हो तो तत्काल मृत्यु करता है, यदि शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो ८ बरस में मृत्यु करता है, यदि शुभ ग्रह और पाप ग्रह दोनों से दृष्ट हो तो ४ वर्ष में मृत्यु करता है॥

चन्द्रमा ५, ७, ६, १२, १, ८, स्थानो में अशुभ ग्रह से युक्त हो और बलवान् शुक्र, बुध और बृहस्पति से युक्त या दृष्ट न हो तो मृत्यु करता है॥

यदि ७, ४, ८, स्थानो में चन्द्रमा दो पापग्रहों के मध्य में बैठा हो तो बालक का नाश होता है यद्यपि देवता भी उसकी रक्षा करने वाले हों॥

क्षीण चन्द्रमा लग्न में हो, पाप ग्रह केन्द्र अथवा अष्टम स्थान में हो तो अवश्य विपत्ति होती है यह यवनाचार्य्य का मत है ॥

जब चन्द्रमा क्षीण हो कर पाप ग्रह से युक्त हो और राहु उसको देखे तो बालक थोडे दिनों में काल के घर में प्राप्त होता है ॥

जब चन्द्रमा पाप ग्रह से युक्त हो अथवा पाप ग्रहों के मध्य में हो और चन्द्रमा से सप्तम स्थान में पाप ग्रह हो तो माता की मृत्यु होती है ॥

जब शनि, राहु, सूर्य्य से सप्तम स्थान में चन्द्रमा हो तो सातवें दिन मृत्यु होती है ॥

(३) मङ्गल का अरिष्ट

जब मङ्गल अपने घर का हो और, ६, ८, स्थानों में चन्द्रमा हो तो छठे या आठवें वर्ष में मृत्यु होती है ॥

लग्न में मङ्गल हो, शुभ ग्रह उसको न देखते हों, अथवा मगल छठे और आठवें स्थान में स्थित हो और शनैश्चर उसको देखे, अथवा सप्तम स्थान में शनि और मङ्गल हों और वे शुभ ग्रहों से दृष्ट न हों तो तत्काल बालक की मृत्यु होती है ॥

(४) बुध का अरिष्ट

लग्न से छठे अथवा आठवें स्थान में बुध कर्क राशि का हो और चन्द्रमा की उस पर दृष्टि हो तो ४ वर्ष में मार डालता है ॥

जब जन्म के समय बुध ६, ८, अथवा १ स्थान में हो तो चौथे वर्ष मृत्यु होती है ॥

(५) वृहस्पति का अरिष्ट

जब वृहस्पति मङ्गल के घर का होकर आठवें स्थान में स्थित हो, सूर्य्य, चन्द्रमा मङ्गल और शनैश्चर उसको देखें तथा शुक्र की दृष्टि उस पर न हो तो ३ वर्ष के भीतर बालक परलोक को प्राप्त होता है ॥

जब सूर्य्य चन्द्रमा से वृहस्पति युक्त हो और बुध क्रूर ग्रहों से दृष्ट हो

तो यद्यपि वालक देवताओं की गोद में भी वैठा हो तथापि ११ वर्ष में उसकी मृत्यु होती है ।।

(६) शुक्र का अरिष्ट

यदि सूर्य्य चन्द्रमा के घर मे १२, ६, ८ स्थानों में शुक्र स्थित हो और सव अशुभ ग्रह उसको देखें तो ६ वर्ष में मृत्यु करता है इसमें कोई आश्चर्य्य नहीं ।।

(७) शनि का अरिष्ट

पापग्रह से दृष्ट शनैश्चर लग्न मे वैठा हो तो १६ दिन के भीतर मृत्यु हो जाती है, यदि शुभ ग्रह से युक्त हो तो एक महीने में और शुक्र से युक्त हो तो १ वर्ष मे मार डालता है ।।

जव वक्री शनैश्चर मङ्गल के घर में होकर ८, ६, १, ४,७, १० स्थानो में वैठा हो और वलवान् मङ्गल उसको देखे तो वालक दो वर्ष जीता है ।।

लग्न से दसवें स्थान में शनैश्चर हो तो शीघ्र वालक को मार डालता है ।।

(८) राहु का अरिष्ट

यदि राहु केन्द्र में हो और पाप ग्रह उसको देखते हों तो कोई आचार्य्य १० वर्ष और कोई आचार्य्य १६ वर्ष में मृत्यु वतलाते हैं ।

यदि अष्टम स्थान में राहु हो और केन्द्र में चन्द्रमा हो तो तत्काल मृत्यु होती है ।।

(९) लग्न का अरिष्ट

लग्न पाप ग्रह से युक्त हो अथवा पाप ग्रह के मध्य में हो और लग्न से सातवें स्थान मे पाप ग्रह हो तो मृत्यु होती है ।।

(१०) लग्नेश और राशीश का अरिष्ट

जव लग्न का स्वामी और जन्म राशि का स्वामी ६, ८, १२ स्थानों में अस्त होकर स्थित हों तो राशि की सख्या के समान वर्षो में मृत्यु होती है ।।

(११) सौम्य ग्रह का अरिष्ट

जब सौम्य ग्रह ६, ८, १२, स्थानों में हों, वक्री पाप ग्रह इनको देखें और सौम्य ग्रहों की इन पर दृष्टि न हो तो एक महीने में मृत्यु होती है ॥

(१२) क्रूरग्रहों का अरिष्ट

जिस बालक के जन्म समय में ६, ७, १२, २, ८, ६ स्थानों में क्रूर ग्रह स्थित हों तो छटे अथवा आठवें महीने में मृत्यु होती है ॥

(१३) सूर्य्य, चन्द्रमा और बुध का अरिष्ट

बारहवें स्थान में सूर्य्य और चन्द्रमा एक साथ हों या पृथक् हों तो दहिने अथवा बाए नेत्र का नाश करते हैं । सूर्य्य और चन्द्रमा से बुध युक्त हो, शुभ ग्रह उसको न देखें तो ग्यारहवें बरस में मृत्यु करता है ॥

अरिष्टभङ्गयोगाः

लग्नेश्वरो राशिपतिस्त्रिकोणे केन्द्रेऽथवालाभतृतीयसंस्थः ।
जातोऽपिदीर्घायुररिष्टभङ्गो नैरोग्यदेहोनृपतिप्रतिष्ठा ॥१॥
यदा यामिनीशोदिनेशं प्रपश्येद्बुधोऽपीहचेद्वीक्ष्यतेयामिनीशम् ।
तदादैवचेद्वीकिमर्थं विमृश्येत्सुखीदीर्घजीवीभवेज्जातकश्च ॥२॥
यस्य जन्मनि तुङ्गस्थाः स्वक्षेत्रस्थास्तथा ग्रहाः ।
चिरायुषं शिशुं जातं कुर्वन्त्यष्टमगा यदि ॥ ३ ॥
एकः शुभः केन्द्रत्रिकोणगेषु विलग्नतः सर्वबलेन युक्तः ।
अरिष्टभङ्गं च करोति नूनं दीर्घायुरारोग्यकरः शिशूनाम् ॥४॥
एक एव सुरराजपुरोधाः केन्द्रगोऽथ नवमपञ्चमगो वा ।
लाभगो भवति यस्य विलग्ने शेषखेचरबलैरबलैः किम् ॥५॥
पाताले चाम्बरे लग्ने सुते धर्मेऽथवायगः ।
देवपूज्योऽथवा शुक्रो नाशयेद्दुरितान्बहून् ॥ ६ ॥

एकोऽपि यदि केन्द्रस्थो भार्गवो वा गिरांपतिः ।
नवमे वा सुतस्थाने सर्वारिष्टान्निवारयेत् ॥ ७ ॥
केन्द्रे शतायुर्भृगुजे गुरौ वा रिष्टंच चन्द्रग्रहजं विनश्येत् ॥
किं कुर्वन्ति ग्रहाःसर्व यस्य केन्द्रे बृहस्पतिः ।
मत्तमातङ्गयूथानि भिनत्त्येकोऽपिकेसरी ॥ ८ ॥
विलग्नजन्यम्बुदशान्त्यलाभे शुभेक्षितेन्दुश्च हरेत्स रिष्टम् ॥
राहुस्त्रिषष्ठलाभे लग्नात्सौम्यनिरीक्षितः सद्यः ।
नाशयति सर्वदुरितम् ॥ ९ ॥
दशमभवननाथे केन्द्रकोणे धनस्थे
बलवति यदि याते जन्म सिंहासनं च ॥ १० ॥
लग्ने वा सप्तमे वापि नवमे वा तथैवच ।
सौरो भौम स्तथा जीवो जीवयेत्पूर्णसप्ततिम् ॥ ११ ॥
अज वृष कर्किणि लग्ने रक्षति राहुः समस्तपीडाभ्यः ॥१२॥
द्वित्रिचतुर्थे नीचा योगोयं राजराजस्य ।
रिपु निधन व्यय तुङ्गा योगोयं दासदासस्य ॥ १३ ॥
नीचस्थितो जन्मनि यो ग्रहः स्यात्तद्राशिनाथश्च तदुच्चनाथः ।
भवेत् त्रिकोणे यदि केन्द्रवर्ती राजा भवेद्धार्मिकचक्रवर्ती ॥१४॥
त्रिषडेकादशे भौमस्त्रिषडेकादशे शनिः ।
त्रिषडेकादशे राहुः सर्वारिष्टान्निवारयेत् ॥१५॥
मित्रर्क्षगे वा यदि रन्ध्रनाथे दीर्घायुरायुर्मुनयो वदन्ति ॥
लग्नस्थो लग्ननाथश्चेज्जनयेद्दीर्घजीविनम् ॥१६॥
मेषे वृषेच कर्केच सर्वापद्भ्योहि रक्षति ।
सिंहिकातनयो बालं प्रियं पुत्रं यथा पिता ॥१७॥
चक्रस्य षड्गृहं शून्यं (?) षड्गृहं ग्रहवर्जितम् ।
नृपतुल्यो नृपो वास्या दन्ते याति सुरालयम् ॥१८॥

केन्द्रे शुभो यदैकोऽपि वली विश्वप्रकाशकः ।
सर्वे दोषा. क्षयं यान्ति ॥१९॥

षष्ठाष्टचन्द्रदोषपरिहारः

रात्रौ जातः सिते पक्षे दिवा कृष्णे प्रसूयते ।
तदा रिष्टं न वक्तव्यं चन्द्रः षष्ठाष्टगो यदि ॥२०॥

(अर्थ)

जब लग्नेश अथवा राशिका स्वामी त्रिकोण केन्द्र लाभ अथवा तृतीय स्थान में हो तो बालक दीर्घायु होता है, अरिष्ट का नाश होता है, शरीर रोग रहित होता है और राजा के यहा उसकी प्रतिष्ठा होती है ॥ १ ॥

जब चन्द्रमा की दृष्टि सूर्य्य पर हो और बुध की दृष्टि चन्द्रमा पर हो तो बालक सुखी और चिरञ्जीवी होता है, ज्योतिषी को चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है ॥२॥

जिसके जन्म समय में ग्रह उच्च के हों अथवा अपने घरके हों तो यद्यपि वे अष्टम स्थान में हों तथापि बालक की दीर्घायु करते हैं ॥३॥

लग्न से केन्द्र अथवा त्रिकोण मे एक भी शुभ ग्रह पूर्णवली हो तो अरिष्ट का नाश करता है और बालको को दीर्घायु और आरोग्यवान् करता है ॥४॥

जिसके जन्म समय में केवल एक बृहस्पति केन्द्र अथवा नवम, पञ्चम अथवा लाभस्थान में हो तो शेष ग्रह बलहीन भी हों तो कोई चिन्ता नहीं ॥५॥

४,१०,१,५,९, स्थानों में अथवा ११वें स्थान में बृहस्पति अथवा शुक्र हो तो बहुत अरिष्टों का नाश होता है ॥६॥

यदि केन्द्र नवम अथवा पञ्चम स्थान में बृहस्पति अथवा शुक्र दोनों में से एक भी हो तो सब अरिष्टों का निवारण हो जाता है ॥७॥

केन्द्र में वृहस्पति अथवा शुक्र हो तो बालक शतायु होता है और चन्द्रमा का दोष भी दूर हो जाता है ॥

जिसके केन्द्र में बृहस्पति हो तो शेष ग्रह बुरे भी हों तो क्या कर सकते हैं जैसे कि अकेला सिंह मत्त हाथियों के झुण्ड को मार डालता है ॥ ८ ॥

यदि चन्द्रमा लग्न ३, ४, १० १२ और ११ स्थानों म से किसी स्थान मे हो और शुभग्रह उसको देखें तो अरिष्टों का परिहार होता है ॥

३,६,११ स्थानों में राहु हो और सौम्य ग्रह उसको दखे तो सब अरिष्टों का नाश करता है ॥ ९ ॥

यदि दशम स्थान का स्वामी कन्द्र, कोण, अथवा धनस्थान मे बलवान् होकर बैठे तो मनुष्य सिंहासन पर बैठता है ॥ १० ॥

लग्न, सप्तम, अथवा नवम स्थान में शनि, मङ्गल, और वृहस्पति हो तो ७० वर्ष की आयु होता है ॥११॥

यदि मेष, वृष और कर्क लग्न का राहु हो तो सब पीडाओं से रक्षा करता है ॥१२॥

जिसके दूसरे, तीसरे, चौथे घर म नीच ग्रह बैठे हो तो राजा होने का योग होता है, परन्तु जिसके ६, ८, १२ घर में उच्च ग्रह हो तो उसका दास होने का योग है ॥१३॥

जिसके जन्म समय में कोई ग्रह नीच का हो परन्तु उस राशि के स्वामी के उच्च स्थान का स्वामी यदि त्रिकोण अथवा केन्द्र में बैठा हो तो वह मनुष्य बड़ा धार्मिक और चक्रवर्ती राजा होता है ॥ १४ ॥

यदि ३, ६, ११ स्थानों में मङ्गल, शनि अथवा राहु हों तो सब अरिष्टों का निवारण होता है ॥ १५ ॥

यदि अष्टमेश मित्र के घर में हो तो बालक दीर्घायु होता है ॥

लग्नेश लग्न में हो तो मनुष्य दीर्घायु होता है ॥१६॥

यदि मेष, वृष और कर्क का राहु हो तो बालक को सब आपत्तियों से बचाता है जैसे कि पिता अपने प्रिय पुत्र को ॥ १७ ॥

चक्र में ६ घर शून्य अर्थात् ग्रह रहित हों तो मनुष्य यातो राजा होता है या राजा के समान होता है और अन्त में स्वर्ग को प्राप्त होता है ॥ १८ ॥

जब केन्द्र में एक भी ग्रह बलवान् हो कर बैठा हो तो सब दोषों का नाश हो जाता है ॥ १९ ॥

६।८ चन्द्रमा के दोष का परिहार ।

यदि शुक्लपक्ष की रात्रि में जन्म हो और कृष्ण पक्ष के दिन में जन्म हो तो चाहे चन्द्रमा छठा अथवा आठवां भी हो तब भी अरिष्ट नहीं होता है ॥२०॥

(४) आयुः प्रकरणम्

योगायुः

भौमे लग्नं याते रविमन्दौ केन्द्रगौ बलाढ्यौ ।
आविंशतेर्मृतिः स्याद्वह्नौ वा रोगयुक्तो वा ॥१॥
कुजरवियुक्ते लग्ने चरराशौ मध्य (१०) संस्थिते जीवे ।
सुतधर्मगते चन्द्रे जातस्याविंशतेर्मृतिर्भवति ॥२॥
चन्द्राष्टमगैः पापैः सौम्यै रापोक्लिमस्थितैर्जन्मनि ।
निधनारिगते चन्द्रे तस्यायुर्विंशतिः परमम् ॥३॥
गुरुणा युक्तः शुक्रो घनोपगः पञ्चमे कुजार्कसुतौ ।
बलरहितश्चन्द्रो जातोऽल्पजीविनो नियतम् ॥४॥
अष्टाविंशतिवर्षे मरणं चन्द्रार्कराहवो लग्ने ।
कुर्वन्ति तदा नृणां जीवे व्ययगे तथा नियतम् ॥५॥
चन्द्रलग्नाष्टमपतौ केन्द्रगतावष्टमे ग्रहः कश्चित् ।
आद्वात्रिंशन्मरणं नास्यस्मिन्शुभयुते केन्द्रे ॥६॥

अष्टमाधिपतौ केन्द्रे लग्नेशे बलवर्जिते ।
त्रिंशद्वर्षाण्यसौ जीवेद्द्वात्रिंशज्जातकक्रमः ॥७॥
आपोक्लिमगते चन्द्रे लग्नेशे च तथैवहि ।
पापेक्षिते बलैर्हीने जीवत्यष्टचतुर्गुणम् ॥८॥
गुरुशुक्रौ च केन्द्रस्थौ लग्नेशे पापसंयुते ।
आपोक्लिमस्थे सन्ध्यायां जातस्यायुर्ऋषित्रयम् ॥९॥
पापमध्यगते सूर्ये लग्नस्थे पापवेश्मनि ।
जातश्च रोगपीडार्तः परमायुर्ऋषित्रयम् ॥१०॥
लग्नेशे व्ययसंस्थे च क्षीणे पापयुतेऽपिवा ।
षष्ठिवर्षात्परं नायुर्न लग्ने चेद्गुरुर्यदि ॥११॥
अष्टमाधिपतौ केन्द्रे भौमे लग्नं समाश्रिते ।
अर्कार्कजौ त्रिषष्ठस्थौ जीवेद्गुरु (?) चतुष्टयम् ॥१२॥
द्विशरीरोदयलग्ने मन्दे चन्द्रेऽष्टमे व्ययेवापि ।
जातस्तत्र मनुष्यो जीवेद्वर्षं द्विपञ्चाशत् ॥१३॥
चतुरस्रगताः पापा लग्नात्कुर्वन्ति मध्यायुषं पुरुषम् ।
चन्द्रात्तथैव दिवसैः सौम्यै रनवीक्षिता न शुभयुक्ताः ॥१४॥
षष्ठाष्टमव्ययगतै ग्रहैः समस्तैर्नृपालयोगेऽपि ।
अस्मिन्योगे जातः परमायुश्चाष्टपञ्चाशत् ॥१५॥
क्रूरभवनेषु पापैः सौम्यक्षेत्रेषु संस्थितैः सौम्यैः ।
लग्नेशे स्वबलाढ्ये जातः परमायुराप्नोति ॥१६॥

केन्द्रत्रिकोणभवनेषु न यत्र पापा
लग्नाधिप सुरगुरुश्च चतुष्टयस्थः ।
भुंक्ते सुखानि विविधानि सुपुण्यकर्मा
जीवेच्च वत्सरशतं स विमुक्तरोग ॥१७॥

मृगवदनपश्चिमार्द्धे भूनन्दनसंयुते लग्ने ।
केन्द्रगते च सुरेज्ये जीवेच्च वर्षशतम् ॥१८॥
लग्नात्षष्ठाष्टमे चन्द्रे यदि केन्द्रे बृहस्पतिः ।
जातो रोगविनिर्मुक्तः परमायुः सजीवति ॥१९॥
धर्मेश्वरो धर्मगतस्तु यस्य भौमांशकस्थे हिमगौच्च दृष्टे ।
मुनीश्वरोऽयं मुनियोगजातः शास्त्रादिकर्ता परमायुरेव ॥२०॥
अक्षीणचन्द्रे सुहृदुच्चभागे लाभाश्रिते लग्नमुपागते च ।
धर्मेश्वरे सूर्ययुते बलाढ्ये जातो युगायुर्मुनिवल्लभः स्यात् ॥२१॥

(अर्थ)

जब लग्न में मङ्गल हो, सूर्य्य और शनैश्चर बलरहित होकर केन्द्र में हो तो बीस वर्ष की आयु होती है अथवा कोई अङ्ग का भङ्ग हो जाता है या मनुष्य रोग युक्त होता है ॥ १ ॥

जब लग्न मे मङ्गल और सूर्य्य हों और बृहस्पति चर राशि में होकर दशम स्थान में हों, चन्द्रमा पञ्चम अथवा नवम स्थान में हो तो २० वर्ष में मृत्यु हो जाती है ॥ २ ॥

चन्द्रमा से अष्टम स्थान में पाप ग्रह हों, सौम्य ग्रह आपोक्लिम में हों, चन्द्रमा छठे या आठवें स्थान मे हो तो २० वर्ष की आयु होती है ॥ ३ ॥

जिसके जन्म में शुक्र से युक्त होकर बृहस्पति धन स्थान में हो, पञ्चम स्थान में मङ्गल और शनैश्चर हों, चन्द्रमा बल हीन हो तो वह बालक अल्पायु होता है ॥ ४ ॥

जब चन्द्रमा, सूर्य्य और राहु लग्न मे हों तथा बृहस्पति व्ययस्थान में हो तो २८ वर्ष में मृत्यु का योग होता है ॥ ५ ॥

जन्म राशि का स्वामी और अष्टम स्थान का स्वामी केन्द्र में हों, कोई भी ग्रह अष्टम स्थान में हों और केन्द्र में कोई शुभ ग्रह न हों तो ३२ वर्ष में मृत्यु होती है ॥ ६ ॥

अष्टम स्थान का स्वामी केन्द्र में हो और लग्नेश बलहीन हो तो ३२ वर्ष की आयु होती है ॥ ७ ॥

चन्द्रमा और लग्नेश आपोक्लिम में हों, पाप ग्रह से दृष्ट और बल रहित हों तो ३२ वर्ष की आयु होती है ॥ ८ ॥

वृहस्पति और शुक्र केन्द्र में हों, लग्नेश पापयुक्त होकर आपोक्लिम में स्थित हो तथा सन्ध्यासमय मे जन्म हों तो २१ वर्ष की आयु होती है ॥ ९ ॥

सूर्य पाप ग्रहों के मध्य में और पाप ग्रह के घर का होकर लग्न में बैठे तो मनुष्य रोग से पीडित होता है और २१ वर्ष की परम आयु होती है ॥ १० ॥

लग्नेश व्यय स्थान में बैठा हो और वह बल रहित अथवा पाप ग्रहों से युक्त हो तो ६० वर्ष से अधिक आयु नहीं होती है, परन्तु यदि लग्न में वृहस्पति हो तो पूर्वोक्त योग का फल नहीं रहता है ॥ ११ ॥

अष्टम स्थान का स्वामी केन्द्र में हो, मङ्गल लग्न मे हो, सूर्य और शनैश्चर तीसरे तथा छठे स्थान में हों तो २४ (?) वर्ष की आयु होती है ॥ १२ ॥

द्विस्वभाव लग्न में शनैश्चर हो, चन्द्रमा अष्टम अथवा द्वादश स्थान में हो तो मनुष्य ५२ वर्ष जीता है ॥ १३ ॥

लग्न अथवा चन्द्रमा से चतुरस्त्र स्थानों में पाप ग्रह हों, सौम्य ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त न हों तो मनुष्य मध्यायु होता है ॥ १४ ॥

६, ८, १२ स्थानों मे सम्पूर्ण ग्रहों के होने से यद्यपि राज योग होता है तथापि इसयोग में उत्पन्न हुए मनुष्य की आयु ५८ वर्ष की होती है ॥१५॥

क्रूर ग्रहों के स्थानों मे पाप ग्रह हों, सौम्य भवनों मे सौम्य ग्रह हों, लग्नेश बलवान् हो तो मनुष्य पूर्ण आयु पाता है ॥ १६ ॥

जिसके केन्द्र और त्रिकोण स्थानों में पाप ग्रह न हों, लग्नेश और बृहस्पति केन्द्र में हों तो वह मनुष्य अनेक प्रकार के सुखों का भोग करता है और धर्म के कर्मों को करता है तथा रोग रहित होकर १०० वर्ष की आयु का भोग करता है ॥ १७ ॥

मकर के उत्तमार्द्ध का मङ्गल लग्न में बैठा हो, केन्द्र में बृहस्पति बैठा हो तो मनुष्य १०० वर्ष जीता है ॥ १८ ॥

लग्न से छठे अथवा आठवें घर में चन्द्रमा हो, परन्तु केन्द्रमें बृहस्पति हो तो मनुष्य रोग रहित होकर परम आयु का भोग करता है ॥ १९ ॥

धर्म्म स्थान का स्वामी धर्म्म स्थान में हो, मङ्गल के नवांश का चन्द्रमा उसको देखे तो मनुष्य शास्त्र कर्त्ता होता है, परम आयु का भोग करता है और यह मुनियोग कहलाता है ॥ २० ॥

चन्द्रमा क्षीण न हो, मित्र के घर में हो, या उच्च का हो, लाभ स्थान या लग्न में हो, धर्म्म स्थान का स्वामी बलवान् होकर सूर्य्य के साथ बैठा हो तो बड़ी आयु वाला मुनि होता है ॥ २१ ॥

आयुर्विचार

त्रिविधाश्चायुषो योगाः स्वल्पायुर्मध्यमोत्तमाः ।
द्वात्रिंशात्पूर्वमल्पायु र्मध्यमायुस्ततो भवेत् ॥१॥
चतुःषष्ट्याः पुरस्तात्तु ततो दीर्घमुदाहृताः ।
उत्तमायुः शतादूर्द्ध्वं ज्ञातव्यं मुनिसत्तम ॥२॥
चतुर्विंशति वर्षाणा मायुर्ज्ञातुं न शक्यते ।
जपहोमचिकित्साद्यै र्बालरक्षांतु कारयेत् ॥३॥
पित्रोर्दोषैर्मृताः केचित्केचिन्मातृग्रहैरपि ।
अपरेऽरिष्टयोगाच्च त्रिविधा बालमृत्यवः ॥४॥
त्रिषु योगेषु सर्वेषु प्रत्येकं त्रिविधं भवेत् ।
अल्पायुस्त्वमध्यंतु पूर्णायुस्त्रिविधं भवेत् ॥५॥

अष्टमर्क्षं तृतीयञ्च लग्नादायुरुदाहृतम् ।
द्वितीयं सप्तमस्थानं मारकस्थानमुच्यते ॥६॥
चरे चरस्थिरद्वन्द्वाः स्थिरे द्वन्द्वचरस्थिराः ।
द्वन्द्वे स्थिरोभयचरा दीर्घमध्याल्पकायुषः ॥७॥
जन्मलग्नाष्टमेशौ द्वौ चिन्तयेज्जन्मपत्रके ।
पञ्चमैकादशे विप्र दीर्घायुश्च प्रजायते ॥८॥
लाभे तृयीयगे मध्य आयुर्दायं विचिन्तयेत् ।
लाभे वित्ते त्रिकोणे वा ह्यायुरल्पं भवेद्द्विज ॥
गतायुर्लाभगौ द्वौच जातकोऽपि न जीवति ॥६॥
केन्द्रांशसंख्यां त्रिगुणीविधाय
राह्वारसंख्याङ्कमतोविहीनाम् ।
आयुः प्रमाणं कथितं मुनीन्द्रै
श्चिरन्तनैर्ज्यौतिषिकैः स्मृतं हि ॥१०॥

आयुश्चक्रम्.

अल्पायु		मध्यायु		दीर्घायुः	
लग्नेशः	अष्टमेशः	लग्नेश	अष्टमेश.	लग्नेश.	अष्टमेश.
चरः	द्विस्वभाव	चर	स्थिरः	चर	चरः
स्थिरः	स्थिरः	स्थिरः	चर.	स्थिर.	द्विस्वभावः
द्विस्वभावः	चरः	द्विस्वभावः	द्विस्वभाव	द्विस्वभावः	स्थिरः
३२ यावत्		६४ यावत्		६४ उपरि	

(अर्थ)

आयु के योग तीन प्रकार के होते हैं, अल्पायु, मध्यायु और दीर्घायु। ३२ वर्ष तक अल्पायु कहलाती है ॥ १ ॥

३२ वर्ष के उपरान्त ६४ वर्ष तक मध्यायु कहलाती है, उसके उपरान्त १०० वर्ष तक दीर्घायु कहलाती है, १०० वर्ष से अधिक उत्तमायु कहलाती है ॥२॥

२४ वर्ष की अवस्था तक आयु का ज्ञान नहीं हो सकता है, तब तक जप, होम, औषधि आदि से बालक की रक्षा करनी चाहिये ॥ ३ ॥

(कोई आचार्य्य कहते हैं कि जब तक बालक तीन वर्ष का न हो तब तक जन्म पत्री नहीं बनानी चाहिये) ॥

बालकों की मृत्यु ३ प्रकार से होती है, कोई तो माता पिता के दोषों से मर जाते हैं, कोई पूतना आदि मातृ ग्रहों के दोष से मर जाते हैं और कोई अरिष्ट योगों से मर जाते हैं ॥ ४ ॥

इन तीनों योगों में प्रत्येक के अल्पायु, अल्प मध्य और पूर्णायु ये तीन भेद होते हैं ॥ ५ ॥

लग्न से अष्टम स्थान तथा तृतीय स्थान आयु के स्थान हैं, द्वितीय स्थान और सप्तम स्थान मारक स्थान कहलाते हैं ॥ ६ ॥

सातवें श्लोक का अर्थ पूर्वोक्त चक्र से समझ में आजावेगा ॥७॥

जन्मपत्री में जन्म लग्नेश और अष्टमेश का विचार करना चाहिये।

यदि वे ५।११ स्थानों में हों तो मनुष्य दीर्घायु होता है ॥८॥

यदि वे ११।३ स्थानों में हों तो मध्यम आयु होती है। यदि वे लाभ, धन अथवा त्रिकोण स्थानों में हों तो अल्प आयु होती है। यदि दोनों लाभ स्थान में हों तो मनुष्य गतायु होता है ॥९॥

स्थूल प्रकार से आयु जानने की रीति यह है कि केन्द्रों के अङ्कों की संख्या को तिगुना करे उसमें राहु और मङ्गल की संख्या घटा देवे ॥१०॥

मरणे चतुरारोवलिनो ग्रहाः

रविः कुजः शनी राहु र्मरणे बलिनः क्रमात् ॥

रव्यारराहुपङ्गूनां चतुःखेटान्तरे वली ।
तस्य योगानुसारेण जातकस्य मृतिं वदेत् ॥

(अर्थ)

सूर्य्य, मङ्गल, शनि और राहु क्रम से मरण के ज्ञान मे वलवान् होते हैं ।

सूर्य्य, मङ्गल, राहु और शनि इन चार ग्रहों में जो अधिक वलवान् हो उसके योग के अनुसार मृत्यु होती है ॥

मारकस्थानम्

अष्टमं मारकस्थान मष्टमादष्टमं च यत् ।
तयोरपि व्ययस्थानं मारकस्थान मुच्यते ॥
द्वितीयं वलवत्तरम् ॥ (२।७)

(अर्थ)

अष्टम स्थान और अष्टम से अष्टम स्थान और इन दोनों का व्यय स्थान (अर्थात् ८, ३, ७, २,) मारक स्थान कहलाते हैं ॥

इन चार स्थानों में भी द्वितीय और सप्तम स्थान अधिक वलवान् होते हैं ॥

मारकेशविचारः

अल्पमध्यमपूर्णायुः प्रमाणमिह योगजम् ।
विज्ञाय प्रथमं पुंसां ततो मारकचिन्तनम् ॥१॥
महामारकसंज्ञौ तौ मान्दिकेतू इतिस्मृतौ ।
जायाकुटुम्बकाधीशौ मारकावष्टमेश्वरौ ॥२॥
षष्ठभे पापभूयिष्ठे षष्ठेशो मुख्यमारकः ।
मारकेशदशाकाले मारकस्थस्य पापिनः ।
पापे पापयुजां पाके सम्भवे निधनं दिशेत् ॥३॥
असम्भवे व्ययाधीशदशायां मरणं नृणाम् ।
तदभावेऽष्टमेशस्य दशायां निधनं पुनः ॥४॥

मन्दश्चेत्पापसंयुक्तो मारकग्रहयोगतः ।
तिरस्कृत्य ग्रहान्सर्वान्निहन्ता पापकृच्छनिः ॥५॥
दुष्टतारापतेः पाके निर्याणं कथितं बुधैः ॥
भ्रातृषष्ठाष्टमद्यून धनरिष्फान्तरेष्वपि ।
सर्वेषां बलवान्खेटो मारको ग्रह उच्यते ॥६॥

तेषां मध्येऽधिकारी च षष्ठेशो मुख्यमारकः ।
मारका बहवः खेटा यदि वीर्यसमन्विताः ।
तत्तद्दशान्तरे विप्र रोगकष्टादिसम्भवः ॥७॥
षष्ठाधिपदशायां च निधनं भवति ध्रुवम् ॥
प्रबलस्य दशायां च महारोगश्च मृत्युवत् ।
भयशोकादिभिर्भीतिस्तस्कराग्निभयं तथा ॥८॥
षष्ठाष्टरिष्फनाथाना मपहाराष्टके मृतिः ।
तेषामन्तर्दशाधीशा स्तेषां मध्ये बलाढ्यकः ।
तदीयान्तर्दशाकाले मरणं भवति ध्रुवम् ॥९॥
(लग्नेशाष्टमेशयोर्मध्ये बलिनि ग्रहे)
केन्द्रे स्थितेऽपि दीर्घायु र्मध्यायुः पणफरे स्थिते ।
आपोक्लिमे स्थितेत्वल्प मायुर्भवति निश्चितम् ॥१०॥

द्वादशे दशमे वापि संस्थिते पुच्छनायके ।
पापदृष्टे दशाधामे तदन्तरगते मृतिः ॥११॥
द्वादशे दशमे केतुः शुभग्रहनिरीक्षितः ।
नायं योगो महाप्राज्ञ नकष्टं नच मृत्युकृत् ॥१२॥
लग्नाद्द्यूनाष्टमेशौ यौ तयोर्मध्ये च योबली ।
प्राणी रुद्रः सविज्ञेयः सूर्यादिखेचरोऽपिच ॥१३॥
तयोर्मध्येऽबली चिन्त्यः शुभदृष्टो न संयुतः ।
दुर्बलः सोपि गौणाख्यो रुद्रग्रह इतीर्यते ॥१४॥

शुभैर्युक्ते शुभैर्दृष्टे शुभसंबंधकारक. ।
प्राणी रुद्रः सविज्ञेय स्तस्याधीनं मतं फलम् ॥१५॥
रुद्रशूलान्तमायुः स्यात् ॥

(अर्थ)

पहिले अल्प, मध्य और पूर्णायु इन तीन योगों का प्रमाण जान कर तब मारकेश का विचार करना चाहिये ॥ १ ॥

शनैश्चर और केतु की महा मारक संज्ञा है सप्तम, द्वितीय और अष्टम स्थान के स्वामी मारकेश होते हैं ॥ २ ॥

छठे स्थान में यदि पाप ग्रह बहुत होवें तो षष्ठेश मुख्य मारक है ।

मारकेश की महा दशा में, मारक स्थान में स्थित क्रूर ग्रह की अन्तर्दशा में अथवा पाप ग्रह की महादशा में जब पाप ग्रह की अन्तर्दशा हो तो मृत्यु होना सम्भव है ॥ ३ ॥

नहीं तो व्ययेश की दशा में अथवा अष्टमेश की दशा में मृत्यु होती है ॥ ४ ॥

शनैश्चर पाप ग्रह से युक्त हो तो सब ग्रहों को दबा कर मृत्यु कारक है ॥ ५ ॥

जब चन्द्रमा दुष्ट स्थानो में पड़े तो उसके पाक में भी मृत्यु होती है ॥

३, ६, ८, ७, २, १२ स्थानों के स्वामियों की अन्तर्दशा में भी मृत्यु होती है । इनमें जो सब से बलवान् ग्रह हो उसको मारक ग्रह कहते हैं ॥६॥

उनमें से षष्ठेश मुख्य मारक है ॥

यदि बहुत से ग्रह बलवान् होकर मारकेश हों तो उनके दशान्तर में रोग, कष्ट, आदि होना सम्भव है ॥ ७ ॥

षष्ठेश की दशा में मृत्यु होती है ॥

बलवान् ग्रह की दशा में मृत्यु के तुल्य महारोग होता है, भय, शोक, चोरी और अग्नि का भय होता है ॥ ८ ॥

६, ८, १२ स्थानों के स्वामियों की दशा में मृत्यु होती है, उनकी अन्त दशा के स्वामियों में से जो ग्रह बलवान् हो उसकी अन्तर्दशा में मृत्यु होते हैं ॥ ९ ॥

लग्नेश और अष्टमेश में से जो बलवान् ग्रह हो वह केन्द्र में स्थित हो तो दीर्घायु करता है। पणफर में स्थित हो तो मध्यायु करता है। आपोक्लिम में स्थित हो तो अल्पायु करता है ॥ १० ॥

बारहवें अथवा दशवें स्थान में केतु स्थित हो और उसको पाप ग्रह देखें तो उसकी दशा आने पर मृत्यु होती है ॥ ११ ॥

परन्तु द्वादश और दशम स्थान में केतु को शुभ ग्रह देखते हो तो पूर्वोक्त योग नहीं होता है कष्ट भी नहीं होता है, मृत्यु भी नहीं होती है ॥ १२ ॥

लग्न से सप्तम और अष्टम स्थानों के स्वामियों में से जो बलवान् हो वह ग्रह मार्गारूढ कहलाता है ॥ १३ ॥

इन दोनों में से जो कम बलवान् हो, शुभ ग्रह से दृष्ट अथवा युक्त न हो तो वह गौण रूढ कहलाता है ॥ १४ ॥

शुभ ग्रहों से युक्त अथवा शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो शुभ कारक है ॥

पूर्वोक्त मार्गी रूढ के आधीन आयु है ॥ रूढ शूल के अन्त तक आयु होती है ॥

मरणनिमित्तानि.

तृतीये भानुना दृष्टे तथा शुक्रे बलाधिके ।
राजहेतोश्च मरणं निर्विशङ्कं द्विजोत्तम ॥ १ ॥
तृतीये चन्द्रुना युक्ते दृष्टे वा यक्ष्मणा मृतिः ।
कुजेन व्रणशस्त्राग्निदाहाद्यैर्मरणं भवेत् ॥ २ ॥
तृतीये शनिराहुभ्यां दृष्टे वापियुतेऽथवा ।
विषार्तिर्मरणं वाच्यं जलाद्वा वह्निपीडनात् ॥
गर्ताद्वाप्यप्रपतनं बन्धनाद्वा मृतिर्भवेत् ॥ ३ ॥

तृतीये चन्द्रमान्दिभ्यां दृष्टे वापि युते द्विज ।
कृमिकुष्ठादिना चैव सत्वरं मरणं दिशेत् ॥ ४ ॥
तृतीये गुरुणा दृष्टे युक्ते शोफादिना मृतिः ।
तृतीये भृगुयुग्दृष्टे मेहरोगेण वै मृतिः ॥ ५ ॥
बहुयुक्ते तृतीये च बहुरोगयुता मृतिः ।
तृतीयके तु सत्खेटे योगे दृष्टियुतेऽथवा ॥ ६ ॥

तथैव चन्द्रयोगे च तत्तद्रोगेण वै मृतिः ।
अनेन योगभावेन तस्य मृत्युः सुनिश्चितः ॥ ७ ॥
मृत्यु मृत्युगृहेक्षणेन बलिभिस्तद्धातुकोपोद्भव
स्तत्संयुक्तभगात्रजो बहुभवो वीर्यान्वितैर्भूरिभिः ।
अग्न्यम्ब्वायुधजो ज्वरामयकृतस्तृट्क्षुत्कृतश्चाष्टमे
सूर्याद्यैर्निधने चरादिषु परासाध्यप्रदेशेष्विति ॥ ८ ॥
द्वाविंशः कथितस्तु कारणं द्रेष्काणोनिधनस्य सूरिभिः ।
तस्याधिपतिर्भपोऽपिवा निर्याणं स्वगुणैः प्रयच्छति ॥९॥
दिनकरप्रमुखैर्निधनस्थितै र्भवति मृत्युरिति प्रवदेत् क्रमात् ।
अनलतो जलतःकरवालतो ज्वरभवो गदतःक्षुधयातृषा ॥१०॥
स्थिरश्चरोद्व्यङ्गसमाह्वयश्च राशिर्यदा जन्मनि चाष्टमस्थः ।
स्वकीयदेशे विषयान्तरेच मार्गे प्रकुर्यान्मरणं क्रमेण ॥११॥
आयुर्गृहं खेटविवर्जितं च विलोकयेद्वा बलवान् खगेन्द्रः ।
तद्धातुजातं प्रवदन्ति मृत्युं बहुप्रकारं बहवो वलिष्ठाः ॥१२॥
पित्तं कफः पित्तमथत्रिदोषः श्लेष्मानिलौ चाप्यनिलःक्रमेण ।
सूर्यादिकेभ्यो मरणस्य हेतुः प्रकल्पितः प्राक्तन जातकज्ञैः ॥१३॥
सौम्येऽष्टमस्थे शुभदृष्टियुक्ते धर्मेश्वरे वा शुभखेचरेन्द्रे ।
तीर्थेमृतिःस्याद्यदियोगयुग्मं तीर्थेहिविष्णुस्मरणेनमृत्युः ॥१४॥

(अथ)

तीसरे स्थान को जब सूर्य्य देखे अथवा वह स्थान सूर्य्य से युक्त हो और बलवान् हो तो राजा के कारण मृत्यु होती है ॥ १ ॥

तीसरा स्थान जब चन्द्रमा से युक्त अथवा दृष्ट हो तो क्षय रोग से मृत्यु होती है, जब मङ्गल से युक्त या दृष्ट हो तो घाव, हथियार या आग में जलने से मृत्यु होती है ॥ २ ॥

जब तीसरा स्थान शनि और राहु से दृष्ट अथवा युक्त हो तो विष, जल अग्नि, ऊचे स्थान से गिरने से अथवा फांसी लगने से मृत्यु होती है ॥३॥

जब तीसरा स्थान चन्द्रमा और शनैश्चर से दृष्ट अथवा युक्त हो तो कीड़े पड़ने से अथवा कुष्ठ आदि रोगों से मृत्यु होती है ॥ ४ ॥

जब तीसरा स्थान बृहस्पति से दृष्ट अथवा युक्त हो तो शोथ आदि रोग से मृत्यु होती है ॥

जब तीसरा स्थान शुक्र से युक्त अथवा दृष्ट हो तो प्रमेह रोग से मृत्यु होती है ॥५॥

जब तीसरा स्थान बहुत ग्रहों से युक्त हो तो बहुत रोगों से मृत्यु होती है ॥६॥

जब तीसरा स्थान अच्छे ग्रह से दृष्ट या युक्त हो अथवा चन्द्रमा से युक्त हो तो उन उन ग्रहो के रोग विकार से मृत्यु होती है ॥ ७ ॥

मृत्यु गृह का स्वामी बलवान् होकर उस गृह को देखे तो उसी ग्रह के धातु के कोप से मृत्यु होती है। यदि बहुत से बलवान् ग्रह उसको देखें तो उनके धातु कोप से मृत्यु होती है। अष्टम स्थान में सूर्य्य आदि ग्रह होने से यथा क्रम अग्नि, जल, आयुध, ज्वर, रोग, प्यास, भूख से मृत्यु होती है ॥ ८ ॥

लग्न से बाईसवें द्रेष्काण को मृत्यु का कारण जानना चाहिये। उसका स्वामी अपने गुणों के अनुसार मृत्यु करता है ॥९॥

जब अष्टम स्थान में सूर्य्य आदि ग्रह हो तो यथाक्रम अग्नि, जल, तलवार, ज्वर, रोग, क्षुधा और तृषा से मृत्यु होती है ॥ १० ॥

आठवें स्थान में स्थिर, चर, द्विस्वभाव राशि हो तो अपने देश, परदेश और मार्ग में यथाक्रम मृत्यु करती हैं ॥ ११ ॥

यदि आयु का घर ग्रहरहित हो तो जो बलवान् ग्रह उस स्थान को देखे उसी के धातु से उत्पन्न कारण से मृत्यु होती है ॥ १२ ॥

सूर्य्य आदि ग्रहों से यथाक्रम पित्त, कफ, पित्त, त्रिदोष, कफ, वायु, और वायु के दोषों से मृत्यु होती है ॥ १३ ॥

अष्टम स्थान में सौम्य ग्रह हो, शुभ ग्रह से दृष्ट अथवा युक्त हो अथवा धर्म्म स्थान का स्वामी शुभ ग्रह हो तो तीर्थ में मृत्यु होती है। यदि दोनों योग पूरे हों तो तीर्थ में विष्णु भगवान् के स्मरण करने से मृत्यु होती है ॥ १४ ॥

(५) सङ्कीर्णप्रकरणम्

द्वादशभावेषु ग्रहाणां सामान्यतः फलम्

शुभग्रहाणाम्.

शुभैर्लग्नात्स्वायुर्धनमनुजसौख्यंगृहसुखं
सुविद्यासत्पुत्रा रिपुभयमथस्त्रीसुखमुदः।
चिरायुः पुण्यर्द्धि निजकुलपता लाभहतयो
विधौ लग्ने छिद्रे जडिमरुजताऽन्यत्र शुभवत् ॥

(अर्थ)

लग्न आदि स्थानों में शुभ ग्रह होने से यथाक्रम यह फल होते हैं.— अच्छी आयु, धन, भ्रातृसुख, गृहसुख, अच्छी विद्या और अच्छे पुत्र, शत्रुभय, स्त्रीसुख, चिरायु, पुण्यकर्म्म, अपने कुल का पालन, लाभ और हानि। चन्द्रमा लग्न में हो तो मनुष्य जड़ होता है, यदि अष्टम स्थान मे हो तो रोगी होता है, शेष स्थानों में पूर्वोक्त फल होते हैं ॥

पापग्रहाणाम्.

पापैर्लग्नाद्रोगितानिःस्वतास्या
द्विक्रान्त्वं सौख्यपुत्रारिनाशाः ।
स्त्र्यर्ती रोगाः पापवित्तं च शौर्यं
लाभो हानिः स्वर्क्षतुङ्गेऽल्पदोषम् ॥

(अर्थ)

लग्न आदि स्थानों में पापग्रह होने से यथाक्रम निम्नलिखित फल होते हैं:—

रोग, निर्धनत्व, पराक्रम, सुख का नाश, पुत्र का नाश, शत्रु का नाश, स्त्रीपीड़ा, रोग, पाप की कमाई, शूरता, लाभ और हानि । परन्तु जब ग्रह अपने उच्च का हो तो दोष कम हो जाता है ॥

सौम्यपापानाम्.

तुर्याम्रान्त्येषु पापाः पितुरसुखदा द्व्यब्व्यगान्त्येषु मातु
र्भ्रातुस्त्रिस्थाः सुत ? मतिहतिदाः सप्तमे स्त्रीहराः स्युः ।
सौम्याः सर्वत्र शस्तास्त्र्यरिभवखला मूर्तिषष्ठाष्टमान्त्ये
क्षीणश्चन्द्रोऽन्त्यतनुमृति खला रिष्टदा जन्मभेन्द्वोः ॥
(जन्मराशितो जन्मलग्नाद्वा)

(अर्थ)

जन्मराशि अथवा जन्मलग्न से ४, १० और १२ स्थानों में पाप ग्रह हों तो पिता को कष्ट देते हैं, २, ४, ७ और १२ स्थानों में पाप ग्रह हों तो माता को कष्ट देते हैं, तीसरे स्थान में भाई को कष्ट देते हैं, पञ्चम स्थान में बुद्धि की हानि करते हैं, सप्तम स्थान में स्त्री का नाश करते हैं । सौम्य ग्रह सब स्थानों में अच्छे होते हैं, पाप ग्रह ३, ६, ११ स्थानों में अच्छे होते हैं । १, ६, ८, १२ स्थानों में क्षीण चन्द्रमा शुभ नहीं होता है । १२, १, ८ स्थानों में पाप ग्रह अरिष्ट करते हैं ॥

ग्रहाणा प्रशस्तस्थानानि,

शत्रौ सूर्यः प्रशस्तः सुखभवनगत पूर्णचन्द्रोऽति शस्तः
कोणे जीवोऽति शस्त स्तनुगतभृगुजो विक्रमार्किः प्रशस्तः।
लाभे सर्व प्रशस्ताः।
लेके वेदे प्रसिद्ध : सकल फलहरा नीचगाः पापखेटाः
स्वोच्चा नैव प्रशस्ता विमलफलहरा रन्ध्ररिःफारियुक्ताः॥

(अर्थ)

छठे स्थान में सूर्य्य, चौथे स्थान में पूर्ण चन्द्रमा, त्रिकोण में बृहस्पति, लग्न में शुक्र, पराक्रम स्थान में शनैश्चर और लाभ में सब ग्रह अच्छा फल देने वाले होते हैं ॥ पापग्रह नीच के हो तो सम्पर्ण फलों का नाश करते हैं। ८, १२, ६ स्थानों में सबग्रहों का फल अच्छा नहीं होता है ॥

भावबृद्धिभावहानियोगाः

यो यो भावः स्वामिदृष्टो युतोवा
सौम्यैर्वास्यात्तस्यतस्यापि वृद्धिः।
पापैरेवं तस्य तस्यास्ति हानि
र्निर्दृष्टव्या पृच्छतां जन्मतोवा ॥१॥
सौम्याः षष्ठे पापास्तन्वर्थसुखधर्मधीव्ययपाः।
कुर्युर्भावविपत्तिं शेषोपगाश्च तद्वृद्धिम् ॥२॥
यस्मिन्भावे मृत्युषष्ठान्त्यभेशा वाच्या धीरैस्तस्य तस्यापि हानिः।
केन्द्रे कोणे रन्ध्र रिष्फेषु पापाः पुत्रे जीव स्तद्गृहं चात्मजार्त्यै ॥३॥
येये भावाः स्वामिसद्भिर्युतेक्षा स्तेषां तेषां वृद्धिरीशैः सुवीर्यैः।
पापै र्हानि र्व्यत्ययोर्यष्टमान्त्ये प्रायो मित्रस्वोच्चपुष्टैः कुलेशः ॥४॥

षष्ठे क्षतस्याष्टमे मृत्योर्द्वादशे व्ययस्य विचारस्तेषां तु सौम्य-योगदृष्टिवशाद्धानिः। क्रूरयोगादिना वृद्धिरिति। अत्रापि विशेषो ज्ञेयः। षष्ठभावविचारे अरिचतुष्पदमातुलानां

स्वामिसौम्यग्रहयोगादिना वृद्धिरेव। पापयोगादिना हानि र्ज्ञेया। नतु वैपरीत्यम्। यत्तु षष्ठे वैपरीत्यमित्युक्तं तत्अतायभि- प्रायेण। उक्तञ्च। अरातिव्रणयोः षष्ठे अष्टमे मृत्युरंध्रयोः। व्ययस्य द्वादशस्थाने वैपरीत्येन चिन्तनम् ॥५॥

यस्मिन्भावे भावनाथेन युक्तो
लग्नस्वामी तस्य भावस्य वृद्धिम्।
कुर्यान्नित्यं मृत्युनाथेन युक्तो
यस्मिन्भावे तस्य हानिं सदैव ॥६॥

(अर्थ)

जो भाव अपने स्वामी से दृष्ट अथवा युक्त हो अथवा सौम्य ग्रह से दृष्ट या युक्त हो उस भाव की वृद्धि होती है। एवं जो भाव पापग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त हो उस भाव की हानि होती है। यह फल सामान्यतः जन्म और प्रश्न में कहना चाहिये ॥ १ ॥

छठे घर में सौम्यग्रह हों, लग्न, धन, सुख, धर्म, बुद्धि तथा सप्तम स्थानों के स्वामी पाप ग्रह हों तो भाव का नाश करते हैं। शेष स्थानों में भाव की वृद्धि करते हैं ॥२॥

मृत्यु, षष्ठ और द्वादश स्थानों के स्वामी जिस भाव में हों उस भाव की हानि करते हैं। केन्द्र, कोण अष्टम और द्वादश, स्थानों में पापग्रह भावों की हानि करते हैं। पञ्चम स्थान में बृहस्पति हो अथवा पञ्चम स्थान बृहस्पति का घर (९, १२) हो तो सन्तान का दुःख होता है ॥३॥

जो जो भाव अपने स्वामी अथवा सौम्यग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हों उनकी वृद्धि होती है। एवं जो भाव पापग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हों उनकी हानि होती है। परन्तु छठे, आठवें और बारहवें स्थानों में इसका विपरीत फल

होता है। उच्च, मित्र अथवा बलवान् ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त होने से मनुष्य अपने कुल में श्रेष्ठ होते हैं ॥४॥

छठे स्थान में चोटका, अष्टम स्थान में मृत्यु का, द्वादश स्थान में व्यय का विचार होता है। इन स्थानों में सौम्य ग्रह हों अथवा सौम्य ग्रहों की दृष्टि हो तो हानि होती है। क्रूर ग्रह हों अथवा क्रूर ग्रहों की दृष्टि हो तो उन भावों की वृद्धि होती है। इसमें भी यह विशेष है कि जब छठे भाव का विचार करना हो तो षष्ठेश के सौम्यग्रह होने से अथवा षष्ठ स्थान में सौम्य ग्रह के योग से शत्रु, चौपाये और मामा की वृद्धि होती है। पाप ग्रह के योग या दृष्टि से हानि होती है, विपरीत नहीं। पहिले जो यह बात कही गई है कि छठे स्थान में विपरीत फल जानना चाहिये उसका अभिप्राय व्रण अर्थात् चोट आदि से है जैसा कि यह वचन है.—

छठे स्थान से शत्रु और व्रण का, अष्टम स्थान से मृत्यु और छिद्र का द्वादशस्थान से व्ययका विपरीत विचार करना चाहिये ॥५॥

लग्न का स्वामी जिस भाव के स्वामी से युक्त हो उस भाव की वृद्धि करता है, परन्तु लग्नेश जिस भाव में अष्टमेश से युक्त हो उस स्थान की सदा हानि करता है ॥६॥

त्रिकेशदुष्टफलम्.

यद्भावपो नीचगः खेचरः स्यात्फलं यच्छतीहाशुभं निश्चयात् ॥
यद्भावपः खलयुतस्त्रिकगोऽरिनिम्न
स्तद्भावहा विबलभेऽल्पफलः समश्चेत्।
केन्द्र त्रिकोण पतयोऽधिकसत्सुत्रोऽप्य
न्योन्यं धनव्ययगताः सखला न शस्ताः ॥१॥
यद्भावेऽष्टमपस्तद्भावं निश्चितं विनाशयति।
यद्भावे लग्नपति स्तद्भावं निश्चितं वर्धयति ॥
मित्रक्षंगे वा यदिरन्ध्रनाथे दीर्घायुरायुर्मुनयो वदन्ति ॥ १ ॥

(अर्थ)

जिस भाव का स्वामी नीच ग्रह हो उस स्थान का फल निश्चय से अशुभ होता है ।

जिस भाव का स्वामी पापग्रह से युक्त होकर त्रिक स्थान में अथवा शत्रु स्थान में हो अथवा नीच का हो तो उस भाव की हानि करता है ॥

यद्यपि केन्द्र और त्रिकोण के स्वामी सद्फल देने वाले होते हैं तथापि यदि परस्पर धन और व्ययस्थानों में पापग्रह सहित हों तो शुभ फल नहीं देते हैं ॥१॥

जिस भाव में अष्टम स्थान का स्वामी हो उस भाव का अवश्य नाश होता है । जिस भाव में लग्नेश हो उस भाव की अवश्य वृद्धि होती है । कोई आचार्य कहते हैं कि यदि अष्टमेश मित्र के घर में हो तो दीर्घायु करने वाला होता है ॥२॥

भावफल भावेशाच्चिन्त्यम्.

यद्भावाद्यत्फलं चिन्त्यं तदीशात्तत्फलं विदुः ॥
दुःस्थाने चारिगे मूढे दुर्बले भावनायके ।
भावस्य सम्पदं कर्तुं न शक्ता भावमाश्रिताः ॥

(अर्थ)

जिस भाव का फल विचारना हो उस भाव के स्वामी से उसका फल कहना चाहिये । यदि भाव का स्वामी दुष्ट स्थान में अथवा शत्रु के घर में हो अथवा बलहीन हो तो भाव में स्थित ग्रह उस भाव का फल अच्छा नहीं कर सकते हैं ॥

प्रत्यक्षफलदाग्रहाः

लग्नस्य पूर्वार्द्धगताः खगेन्द्राः प्रत्यक्षमेवेह फलं प्रदद्युः ।
परार्द्धषट्कोपगतास्तु नूनं फलं प्रयच्छन्ति परोक्षमेव ॥

(अर्थ)

लग्न से पूर्वार्द्ध में जो ग्रह हों वे प्रत्यक्ष फल देते हैं । जो ग्रह परार्द्ध में हों वे परोक्ष फल देते हैं ॥

राशिबलम्.

नृपशवो लग्नगता वरिष्ठा श्चतुर्थसंस्था जलराशयः स्युः ।
अस्तस्थितो वृश्चिकराशिरेवं नभः स्थलस्थाः पशुराशयस्तु ॥१॥
राशयो बलिनः केन्द्रे मध्याः पणफरे स्थिताः ।
आपोक्लिमगता हीन बलाः सर्वेऽपि कीर्तिताः ॥२॥
अधिपयुतो दृष्टो वा बुधजीवनिरीक्षितश्च योराशिः ।
सभवति बलवान्न यदा युतोऽवलोकितोवा शेषैः ॥३॥
जलचर पशु नर कीटा बन्धौ माने तनौ मदे चापि ।
क्रमशो भवन्ति सवीर्या विगतबलास्तत्सप्तमेऽपि ॥४॥

(अर्थ)

लग्न में स्थित नर और पशुराशि, चतुर्थ में स्थित जलराशि, सप्तम स्थान में स्थित वृश्चिक राशि और दशम स्थान में स्थित पशु राशि बलवान् होता है ॥१॥

केन्द्र में राशियां बलवान् होती हैं, पणफर में मध्यबली और आपोक्लिम में सब बलहीन होती हैं ॥२॥

जो राशि अपने स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट हो अथवा जिस राशि को बुध तथा बृहस्पति देखें वह राशि बलवान् होती है। परन्तु जो राशि शेष ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो बलवान् नहीं होती है ॥३॥

४ । १० । १ । ७ स्थानों में जलचर, पशु, नर, कीट राशियां यथाक्रम बलवान् होती हैं। अपने से सातवें स्थान में वे बलहीन होती हैं ॥४॥

स्थानबलम्.

स्वोच्चस्थिताश्चेष्टबलाभवन्ति मूलत्रिकोणे स्वगृहेचमध्याः ॥

(अर्थ)

जो ग्रह अपने उच्च के हों तो इष्ट बल पाते हैं, मूलत्रिकोण में अथवा अपने घर में मध्यबल पाते हैं ॥

सम्यक् फलदाग्रहा

चन्द्रो रविश्च मकरादिकराशिषट्के
सम्यक्फलं वलयुनः प्रकरोत्यशेषम् ॥
नर युवति विहङ्गा राशिषट्के मृगादौ
शनिरपि शशिभादौ (कर्क) चन्द्रमास्तुर्यसंस्थः।
विपुल विमल देहा वक्रिण सूर्यमुक्ताः ॥

(अर्थ)

चन्द्रमा और सूर्य मकर आदि ६ राशियों में अच्छे बल से युक्त हों तो पूर्ण प्रकार से अच्छा फल देते हैं। मकर आदि ६ राशियो में पुरुष, स्त्री, और पक्षी (ग्रह) तथा कर्क आदि में शनैश्चर, चौथे स्थान में चन्दमा अच्छा फल देते हैं ॥

जब ग्रह सूर्य से मुक्त (अर्थात् उदयी हों) और वक्री हों और निर्मल उनकी कान्ति हो तो अच्छा फल देते हैं ॥

चन्द्रबलम्—

मासे तु शुक्लप्रतिपत्प्रवृत्ते पूर्वं शशी मध्यबलो दशाहे।
श्रेष्ठो द्वितीयेऽल्पबलस्तृतीये सौम्यैस्तु दृष्टो बलवान्सदैव ॥
कृष्णाष्टमीदलादूर्ध्वं यावच्छुक्लाष्टमी भवेत्।
तावत्क्षीणशशी ज्ञेयः सम्पूर्णस्तदनन्तरम् ॥

(अर्थ)

शुक्ल प्रतिपदा से ले कर १० दिन पर्य्यन्त चन्द्रमा मध्यबली होता है, द्वितीय भाग मे श्रेष्ठ होता है, तृतीय भाग में अल्पबली होता है, परन्तु जब सौम्य ग्रहों से दृष्ट हो तो सदा बलवान् होता है ॥

कृष्ण पक्ष की अष्टमी से ले कर शुक्ल पक्ष की अष्टमी तक चन्द्रमा क्षीण होता है, तदनन्तर पूर्ण कहलाता है ॥

बलशालिनो भावाः

अग्रहात्सग्रहोज्यायान्सग्रहेत्वधिकग्रहः ।
साम्ये चर स्थिर द्वन्द्वाः क्रमात्स्यु र्वलशालिनः ॥

(अर्थ)

निर्ग्रह से सग्रह स्थान वलवान् होता है, सग्रह में अधिक बलवाला बलवान् होता है, समता में चर, स्थिर द्विस्वभाव क्रम से बलवान् होते हैं ॥

सूर्यात्सप्तमस्था ग्रहाः पूर्णफलदाः

खेटाः पूर्ण फलं दद्युः सूर्यात्सप्तमके स्थिताः ।

(अर्थ)

सूर्य्य से सप्तम स्थान में स्थित ग्रह पूर्ण फल देते हैं ॥

उत्तरोत्तर प्रवलस्थानानि

लग्नाम्बुद्यूनकर्माणि प्रवलान्युत्तराणि हि ।
सुतधर्मौ तथा भावै प्रवलौह्युत्तरोत्तरौ ॥

(अर्थ)

लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम स्थान क्रम से उत्तरोत्तर बलवान् होते हैं, पञ्चम और नवम स्थान भी उत्तरोत्तर बलवान् होते हैं ॥

सुख दुःखदा भावेशाः

पुत्राधिपोऽपि शुभदः क्रूरोऽपि सुखदः स्मृतः ।
त्रिलाभरिपुमृत्यूनां पतयो दुःखदा मताः ॥

(अर्थ)

पञ्चम स्थान का स्वामी यद्यपि क्रूर ग्रह हो तथापि शुभ फल देने वाला और सुख दायक होता है, ३, ११, ६, ८ स्थानों के स्वामी दुःख दायक होते हैं ॥

लग्नात् ६,७,८, स्थानेषु शुभग्रहाराजयोगकारकाः

लग्नाद्व्यूनषडष्टमेषु शुभदाः पापैरयुक्तेक्षिता
मन्त्री दण्डपतिः क्षितेरधिपतिर्नेता वहूनां पतिः ॥

अशोकिनां व्याधिविवर्जितानां प्रीतिप्रसादस्थिरसौहृदानाम्।
दीर्घायुषां भार्गवजीवसौम्याः कुर्वन्ति जन्माष्टमराशिसंस्थाः॥

(अर्थ)

लग्न से ७,६,८ स्थानों में स्थित ग्रह पापग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट न हों तो शुभ फल देने वाले होते हैं। जिनका ऐसा योग पड़े वे मन्त्री या राजा होते हैं, या बहुत आदमियों के अग्रणी होते हैं॥

जब शुक्र वृहस्पति और बुध जन्म लग्न से अष्टम स्थान हों तो मनुष्य शोक रहित, व्याधि रहित, प्रेम युक्त, स्थिर मैत्री वाले और दीर्घायु होते हैं॥

लग्नेशस्य धनेशादिभिः परस्परसम्बन्धः

लग्नाधीशेऽर्थगेचेद्धनभवनपतौ लग्नयातेऽर्थवान्स्या
द्बुद्ध्याचारप्रवीणः परमसुकृतकृत्सारभृद्भोगशीलः।
भ्रातृस्थानेऽङ्गनाथेसहजभवनपे लग्ननाथेऽल्पशक्तिः
सद्वन्‌ राजपूज्य कुलजनसुखदो मातृपक्षेण युक्तः॥१॥
तुर्येशे लग्नयाते तदनु तनुपतौ तुर्यगे स्वःस्वक्षमार्या
स्तातात्राराजकार्यप्रगुणमतियुतः सद्गुरुः स्वीयपक्षः।
लग्नस्थेसूनुनाथेतनुजपदगते लग्ननाथे मनस्वी
विद्यालङ्कारयुक्तो निजकुलविदितो ज्ञानवान्मानसक्तः॥२॥
षष्ठेशे लग्नयाते तदनु तनुपतौ षष्ठगे व्याधिहीनो
नित्यं द्रोहादिसक्तो वपुषि सबलवान्द्रव्यवान्संग्रही स्यात्।
मूर्तीशे कामयाते मदनसदनपे मूर्तिगे तातसेवी
लोलस्वान्तोऽङ्गनाथो भवति हि मनुजः सेवकः श्यालकस्य॥३॥
अष्टमेशे रन्ध्रयाते निधनगृहपतौ चाङ्गगे द्यूतबुद्धिः
शूरश्चौर्यादिसक्तो निधनपदमियाद्भूपतेर्लोकतोवा।
देहाधीशे शुभस्थे शुभभवनपतौ देहसंस्थे विदेशी
धर्मासक्तो नितान्तं सुरगुरुभजने तत्परो राजमान्य॥४॥

कर्मस्थे लग्ननाथे गगनभवनपे लग्नगे भूपतिः स्यात्
ख्यातो लाभे च रूपे गुरुभजनरतो लोलुपोद्रव्यनाथः ।
लाभेशे लग्नयाते तनुभवनपतौ लाभसंस्थे सुकर्मा
दीर्घायुः क्षोणिनाथः शुभविहगयुतः कोविदो मानवः स्यात् ॥ ५ ॥
लग्नेशे रिःफयाते व्ययसदनपतौ लग्नगे सर्वशत्रु
र्बुद्ध्याहीनो नितान्तं कृपणतरमति द्रव्यनाशी विलोलः ।
इत्थं तातादिकानामपि जनुषि तथा खेचराणां हि योगा
द्वाच्यं होरागमज्ञैस्तदनु तनुपयुग्भावगे राजपूज्यः ॥ ६ ॥

(अर्थ)

जब लग्नेश धन स्थान में हो और धनेश लग्न में हो तो मनुष्य धनवान्, बुद्धिमान्, आचरण में चतुर, बड़ा पुण्य कर्म करने वाला, बलवान् और भोगी होता है । जब लग्नेश भ्रातृ भाव में हो और तृतीयेश लग्न में हो तो मनुष्य अल्प सामर्थ्य वाला, अच्छे बन्धु वाला, राजपूज्य, अपने वंश के लोगों को सुख देने वाला और माता के पक्ष से युक्त होता है ।। १ ।।

जब चतुर्थेश लग्न में हो और लग्नेश चतुर्थ स्थान में हो तो मनुष्य क्षमावान्, पिता की आज्ञा मानने वाला, राज कार्य्य में चतुर, अच्छे गुरु वाला, स्त्री पक्ष सहित होता है । जब पञ्चमेश लग्न में हो और लग्नेश पञ्चम में हो तो मनुष्य अच्छे चित्त वाला, विद्या से युक्त, अपने कुल में प्रख्यात, ज्ञानवान् और मान्य होता है ॥ २ ॥

जब षष्ठेश लग्न में हो और लग्नेश छठे स्थान में हो तो मनुष्य व्याधि रहित, द्रोही, शरीर में बल वाला, धनवान् और संग्रह करने वाला होता है । जब लग्नेश सप्तम स्थान में हो और सप्तमेश लग्न में हो तो मनुष्य पिता की सेवा करने वाला, चलचित्त और अपने साले की सेवा करने वाला होता है ॥ ३ ॥

जब लग्नेश अष्टम स्थान में हो और अष्टमेश लग्न में हो तो मनुष्य जुआ खेलने वाला, शूर और चोर होता है तथा राजा के घर से उसकी मृत्यु होती है। जब लग्नेश नवम स्थान में हो और नवम स्थान का स्वामी लग्न में हो तो मनुष्य परदेश में वास करने वाला, धर्म में तत्पर, देवता और गुरु के भजन में तत्पर और राजमान्य होता है ॥ ४ ॥

जब लग्नेश कर्म स्थान में हो और कर्मेश लग्न में हो तो मनुष्य राजा होता है और वह लाभ और रूप में प्रसिद्ध, गुरु की भक्ति में तत्पर, लालची और धनवान् होता है। जब लाभेश लग्न में हो और लग्नेश लाभ में हो तो मनुष्य अच्छे कर्म करने वाला, दीर्घायु, तथा पृथ्वी का स्वामी होता है, यदि शुभ ग्रह हो तो मनुष्य पण्डित होता है ॥ ५ ॥

जब लग्नेश द्वादश स्थान में हो और द्वादशेश लग्न में हो तो मनुष्य सब का शत्रु, बुद्धि हीन, बडा कृपण, और चचल होता है। इसी प्रकार जन्म समय में ग्रहों के योग से पिता आदि का भी विचार करना चाहिये ॥ यदि शुक्र लग्नेश से युक्त हो तो मनुष्य राज पूज्य होता है ॥

द्वादश योगाः

उदयार्थौ स्वदुश्चिक्यौ त्रितुर्यौ तुर्यपञ्चमौ।
द्विडात्मगौ पष्ठमरौ स्त्रीरन्ध्रौ मतिभाग्यकौ ॥
धर्मतातौ खलाभौ च लाभरिष्फौ व्ययोदयौ।
य वे पुष्कललाभः स्या द्राजभृत्यश्चमूपतिः ॥
अमात्यो दारुणं कर्म राजयोगः प्रियामृतिः।
भाग्यव्ययो राजयोगो भूमिद्रव्यमृणव्ययम् ॥
वित्तहानिर्द्वादशैते योगा वै सर्वदा स्मृताः ॥

(अर्थ)

१,२।२,३।३,४।४,५।५,६।६,७।७,८।८,९।९,१०।१०,११।११,१२।१२, १।१२,१। ये द्वादश योग हैं इनका फल यथाक्रम यह है:—बहुत लाभ, राजभृत्य, सेनापति, मन्त्री, भयानक कर्म, राजयोग, स्त्री की मृत्यु, भाग्य का व्यय, राज योग, भूमि द्रव्य ऋण तथा व्यय, धन की हानि ॥

केन्द्रत्रिकोणपतिसम्बन्धः

केन्द्रत्रिकोणपतयः सम्बन्धेन परस्परम्।
इतरैरप्रसक्ताश्चे द्विशेषफलदायकाः॥
लक्ष्मीस्थानं त्रिकोणं च विष्णुस्थानं च केन्द्रकम्।
तयोः सम्बन्धमात्रेण राजयोगादिकं भवेत्॥

(अर्थ)

यदि केन्द्र और त्रिकोण स्थान के स्वामियों का परस्पर सम्बन्ध हो तो विशेष फल देने वाले होते हैं॥

त्रिकोण लक्ष्मी का स्थान है और केन्द्र विष्णु का स्थान है, इनके केवल सम्बन्ध से राजयोग आदि होते हैं॥

धर्मकर्माधिपयोर्व्यत्ययेन सम्बन्धः

धर्मकर्माधिपौ चैव व्यत्यये तावुभौ स्थितौ।
योगयुक्तस्तदा वाच्यः सर्वसौख्यसमन्वितः॥

(अर्थ)

जब धर्मेश कर्म स्थान में हो और कर्मेश धर्मस्थान में हो तो मनुष्य सब प्रकार के सुखों से युक्त होता है॥

सुखेशमानभावयोः परस्परसम्बन्धः

सुखेशे मानभावस्थे मानेशे सुखसंयुते।
लग्नकारकयोर्दृष्टे भिषग्योगोऽस्ति सम्मतः॥

(अर्थ)

जब सुखेश मानभाव में हो और मानेश सुख स्थान में हो तो मनुष्य वैद्य होता है॥

चतुर्विधसम्बन्धः

प्रथमः स्थानसम्बन्धो दृष्टिजस्तु द्वितीयकः।
तृतीयस्त्वेकतो दृष्टिश्चतुर्थस्त्वेकतः स्थितिः॥

अन्योन्यगौ तथा स्वे स्वे संयुतावन्यमे स्थितौ ।
पूर्णेक्षितौ मिथो वापि चैकवर्गगतौ यदा ॥

(अर्थ)

पहिला स्थान सम्बन्ध होता है, दूसरा दृष्टि सम्बन्ध होता है, तीसरा एक ओर से दृष्टि, चौथा एक स्थान में स्थिति होने से सम्बन्ध होता है। परस्पर एक दूसरे के स्थान में स्थित होने से अथवा एकत्र स्थिति होने से स्थान सम्बन्ध होता है, परस्पर पूर्ण दृष्टि होने से अथवा एक वर्ग में होने से दृष्टि सम्बन्ध होता है ॥

फलविरोधे किंकर्तव्यम्

एकग्रहस्यसदृशे फलयोर्विरोधे ,नाशम्वदेद्यदधिकंपरिपच्यतेतत् ॥

(अर्थ)

जब ग्रह समान हों परन्तु फल में विरोध हो तो जिसका अधिक बल हो उसीका फल कहना चाहिये ॥

रन्ध्रेशो लग्नेशोऽपिचेच्छुभः

भाग्यव्ययाधिपत्वेन रन्ध्रेशो न शुभप्रदः ।
सएव शुभसन्धाता लग्नाधीशोऽपिचेत्स्वयम् ॥

(अर्थ)

अष्टम स्थान भाग्य स्थान का व्यय स्थान अर्थात् बारहवां स्थान है। इस लिये अष्टमेश का फल शुभ नहीं होता है। परन्तु जब वही अष्टमेश लग्नाधीश भी हो तो शुभ फल देता है ॥

जीवमन्दयो र्विशेषविचारः

जीवः स्वस्थानहन्ता वदति मुनिवरो दृष्टिरस्य प्रशस्ता
सौरिः स्वस्थानपाल परमभयकरी दृष्टिरस्य प्रनष्टा ॥
केन्द्रात्परतरो जीवः केन्द्रात्परतरः शनिः ।
स्थानहानिकरो जीवः स्थानवृद्धिकरः शनिः ॥
(लग्नात्परतरो जीवो लग्नात्परतरः शनिरपि पाठः)

(अर्थ)

बृहस्पति अपने स्थान की हानि करता है परन्तु उसकी दृष्टि शुभ होती है, शनैश्चर अपने स्थान का पालन करने वाला होता है परन्तु इसकी दृष्टि परम भयकारक है ॥

कोई आचार्य कहते हैं कि केन्द्र को छोड़ कर अन्यत्र स्थित बृहस्पति स्थान हानि करने वाला होता है और केन्द्र से अन्यत्र स्थित शनि स्थान की वृद्धि करन वाला है (पूर्वोक्त श्लोक में कहीं कहीं केन्द्र के बदले लग्न शब्द है) ॥

तातादीना विचारः

सूर्याच्च नवमे तातो माता चन्द्राच्चतुर्थतः ।
कुजात्तृतीयतो भ्राता मातुलो रिपुभाद्बुधात् ॥१॥
देवेज्यात्पञ्चमात्पुत्रो दैत्येज्याद्द्यूनभात्स्त्रिय. ।
मन्दादष्टमतो मृत्यु स्तातादीनां विचिन्तयेत् ॥२॥
पञ्चमं नवमं चैव विशेषं धनमुच्यते ।
चतुर्थं दशमं चैव विशेषं सुखमुच्यते ॥३॥
नवमेऽपि पितुर्ज्ञानं सूर्याच्च नवमे तथा ॥४॥
तुर्ये तनौ धने लाभे भाग्ये यच्चिन्तनं च तत् ।
चन्द्रात्तुर्ये तनौ लाभे भाग्ये तच्चिन्तयेद्ध्रुवम् ॥५॥

(अर्थ)

सूर्य्य से नवें स्थान में पिता का, चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान में माता का, मङ्गल से तृतीय स्थान में भाई का, बुध से छठे स्थान में मामा का, बृहस्पति से पञ्चम स्थान में पुत्र का, शुक्र से सप्तम स्थान में स्त्री का, शनि से अष्टम स्थान में मृत्यु का विचार करना चाहिये ॥ १ ॥ ।२ ॥

जब धन स्थान का विशेष विचार करना हो तो पांचवें और नवें स्थान से करना चाहिये । जब सुख स्थान का विशेष विचार करना हो तो चतुर्थ और दशम स्थान से करना चाहिये ॥ ३ ॥

पिता का विचार नवें स्थान से तथा सूर्य्य से नवें स्थान से भी करना चाहिये ॥ ४ ॥

जिन बातों का विचार ४,१,२,११,६, स्थानों से करना लिखा है उनका विचार चन्द्रमा से ४,१,(२), ११,६ स्थानों से भी करना चाहिये ॥ ५ ॥

वृत्तिनिर्णयः

अर्थाप्तिं कथये द्विलग्न शशिनो प्राबल्यतः खेचरै
सू. चं. मं. बु बृ.
र्मानस्थैः पितृ मातृ शत्रु ससुहृद्भ्रात्रादिभिः स्याद्धनम् ।
श
भृत्याद्वा दिननाथ लग्न शशिनां मध्ये बली यस्ततः
कर्मेशस्थ नवांशराशिपवशाद्वृत्ति जगुस्तद्विदः ॥

(अर्थ)

लग्न और चन्द्रमा में से जो बलवान् हो उसके अनुसार धन की प्राप्ति कहनी चाहिये । दशम स्थान में स्थित ग्रहों के अनुसार यह कहना चाहिये कि पिता, माता, शत्रु, मित्र, भाई, (स्त्री), भृत्य आदि किससे धन मिलेगा । सूर्य्य लग्न और चन्द्रमा में से जो बलवान् हो उससे अथवा कर्म्मेश के नवांश की राशि के स्वामी से वृत्ति अर्थात् आजीविका बतलानी चाहिये ॥

(अथवा सब से अधिक बली ग्रह के द्वारा वृत्ति बतलानी चाहिये)

भाग्योदयवर्षाणि

द्वाविंशे दिनपे च वर्षकमिते चन्द्रे चतुर्विंशके
अष्टाविंशमितेऽब्दके क्षितिसुते द्वात्रिंशकेऽब्दे बुधे ।
जीवे षोडशके भृगौ शरयमे षट्त्रिंषकेऽब्दे शनौ
कर्मेशात्खलु कर्म चैव कथितं भाग्योदयं स्यान्नृणाम् ॥

(अर्थ)

यदि सूर्य्य कर्मेश हो तो २२वें वर्ष में भाग्योदय जानना चाहिये, एवं चन्द्रमा से २४वें में, मङ्गल से २८वें में, बुध से ३२वें, में, बृहस्पति

से १६वें में, शुक्र से २५वें मे, शनि से ३६वें वर्ष मे भाग्योदय जानना चाहिये। (राहु से ४२वें वर्ष मे जानना चाहिये) ॥

कस्मिन्वयसि सुखम्

उदयात्पञ्चमं याव ज्जन्मपत्र्यां शुभग्रहाः ।
वयसि प्रथमे सौख्यं प्रवुर्वाच्यं नवं नवम् ॥ १ ॥
पञ्चमान्नवमं यावत्तत्र संस्थैः शुभग्रहैः ।
तारुण्ये वयसि प्राप्ते सर्वसौख्यं प्रवर्तते ॥ २ ॥
नवमाद्व्ययभं यावत्स्थितैः सर्वशुभग्रहैः ।
वृद्धत्वेऽपि हि सम्प्राप्ते सर्वसौख्यं प्रवर्तते ॥ ३ ॥
लग्नादातुरीयगाः शुभा आद्ये वयसि सुखम् ।
पञ्चमादष्टमपर्यन्तं शुभा मध्ये वयसि सुखम् ।
धर्मादारिःफगाः शुभा अन्त्ये वयसि सुखम् ॥ ४ ॥
मीनाद्यं मिथुनान्तकं प्रथमकं प्रोक्तं वयः प्राक्तनैः
कर्काद्यं वणिजान्तकं तरुणतासंज्ञं च मध्यं बुधैः ।
कुम्भान्तं स्थविराह्वयंच बहुभि र्यत्तत्फलैः संयुतं
तत्सौख्यार्थविशेषकं वलयुते नैतद्वि शेषाच्छुभम् ॥ ५ ॥
यस्मिन्वयसि तुङ्गाश्च मुदिताः स्वगृहे स्थिताः ।
तत्र राज्यं सुखं लक्ष्मी स्तेजो भवति निश्चितम् ॥ ६ ॥
यस्मिन्वयसि मन्दाश्चे त्क्रूरदृष्टा विरश्मिकाः ।
तत्र हानिं रुजं विद्यात्पदभ्रंशं खलागम ॥ ७ ॥

(अर्थ)

यदि जन्मपत्री में लग्न से पाचवें स्थान पर्यन्त शुभ ग्रह हों तो बाल्यावस्था में सुख होता है ॥ १ ॥

पञ्चम स्थान से नवम स्थान पर्यन्त शुभग्रह हों तो युवावस्था में सुख मिलता है ॥ २ ॥

नवें स्थान से व्ययस्थान पर्यन्त शुभग्रह हों तो वृद्धावस्था में सुख मिलता है ॥ ३ ॥

लग्न से चौथे स्थान पर्यन्त शुभ ग्रह होने से बचपने में सुख मिलता है, पाचवें से आठवें स्थान पर्यन्त शुभग्रह होने से युवावस्था में सुख मिलता है, धर्म्म स्थान से व्यय स्थान पर्यन्त शुभ ग्रह होने से बुढ़ापे में सुख मिलता है ॥ ४ ॥

कोई आचार्य्य कहते हैं कि मीन से मिथुन पर्यन्त बाल्यावस्था होती है। कर्क से तुला पर्यन्त तरुण अवस्था होती है। वृश्चिक से कुम्भ पर्यन्त वृद्धावस्था होती है। यदि इन अवस्थाओं में शुभग्रह हों तो सुख मिलता है। पाप ग्रह हों तो दुःख मिलता है ॥५॥

जिस अवस्था में उच्च, मुदित अथवा स्वगृही ग्रह हों उस अवस्था में राज्य, सुख, लक्ष्मी और तेज बढ़ते हैं ॥ ६ ॥

जिस अवस्था में ग्रह बलहीन हों, क्रूर ग्रहों से दृष्ट हों, रश्मिरहित हों, उस अवस्था में हानि, रोग, पदभ्रंश (अर्थात् रोजगार से छूट जाना) और खल आदमी से झगडा होता है ॥ ७ ॥

लज्जिताद्यवस्थाफलानि

कर्मस्थाने स्थितो यस्य लज्जितस्तृपितस्तथा ।
क्षुधितः क्षोभितो वापि सनरो दुःखभाजनः ॥ १ ॥
सुतस्थाने भवेद्यस्य लज्जितो ग्रह एवच ।
सुतनाशो भवेत्तस्य एकस्तिष्ठति सर्वदा ॥ २ ॥
क्षोभितस्तृषितश्चैव सप्तमे यस्यवा भवेत् ।
म्रियते तस्य नारी च सत्यमाहुर्द्विजोत्तम ॥ ३ ॥
नवालयारामसुखं नृपत्वं कलापटुत्वं विदधाति पुंसाम् ।
सदार्थलाभं व्यवहारवृद्धिं फलं विशेषादिह गर्वितस्य ॥४॥
भवति मुदितयोगे वासशाला विशाला
विमलवसनभूषा भूमियोषासु सौख्यम् ।

स्वजनजनविलासो भूमिपागारवासो
रिपुनिबहविनाशो बुद्धिविद्याप्रकाशः ॥ ५ ॥
सक्षोभितस्यापि फलं विशेषाद् दरिद्रजातं कुमतिं च कष्टम् ।
करोति वित्तक्षयमंघ्रिबाधां धनाप्तिबाधामवनीशकोपात् ॥६॥
क्षुधितखगवशाद्वै शोकमोहादितापः
परिजनपरितापा दाधिभीत्या कृशत्वम् ।
कलिरपि रिपुलोकै रर्थबाधा नराणा
मखिलबलनिरोधो बुद्धिरोधो विषादात् ॥ ७ ॥
तृषितखगभवे स्या दङ्गनासङ्गमध्ये
भवति मदविकारो दुष्टकार्याधिकार. ।
निज जन परिवादा दर्थहानिः कृशत्वं
खलकृतपरितापो मानहानिः सदैव ॥ ८ ॥

(अर्थ)

(लज्जित आदि अवस्थाओं की परिभाषा पहले अध्याय में दी गई है। यहा पर उनका विशेष फल लिखा जाता है)

जिस मनुष्य के कर्म्म स्थान में लज्जित, तृषित क्षुधित अथवा क्षोभित ग्रह हों वह मनुष्य सदा दु.खी रहता है ॥ १ ॥

जिस मनुष्य के पञ्चम स्थान में लज्जित ग्रह हो उसका सुतनाश होता है ॥ २ ॥

जिस मनुष्य के सप्तम स्थान में क्षोभित अथवा तृषित ग्रह हों उसकी स्त्री मर जाती है ॥ ३ ॥

गर्वित ग्रह के फल यह हैं —नया घर, बगीचा, सुख, राज्य, कलाओं मे चतुरता, धर्म्म, लाभ, व्यवहार की वृद्धि ॥ ४ ॥

मुदित ग्रह होने से रहने को बडा भारी घर मिलता है, निर्मल वस्तु और आभूषण मिलते हैं, भूमि और स्त्री से सुख मिलता है, अपने इष्ट

मित्रों से प्रीति होती है, राजा से मैत्री होती है, शत्रुओं का नाश होता है, बुद्धि और विद्या का प्रकाश होता है ॥ ५ ॥

क्षोभित ग्रह होने से दारिद्र्य, दुर्बुद्धि, कष्ट, धननाश, पैर की बीमारी और राजा के कोप से धन का नाश होता है ॥ ६ ॥

क्षुधित ग्रह होने से शोक, मोह, ताप, आपसी आदमी से दुःख, आधिभीति, कृशता, शत्रुओं से झगड़ा, धन न होने का दुःख, बलकी हानि और बुद्धिनाश होते हैं ॥ ७ ॥

तृषित ग्रह होने से व्यभिचार, दुष्ट कार्य्य का अधिकार, निज जन अथवा अपने परिवार के द्वारा द्रव्यनाश, शरीर में कृशता, खलजन के द्वारा चित्त में सन्ताप और मानहानि होते हैं ॥ ८ ॥

(६) भावविशेषविचारप्रकरणम्

तनुभावविचार

विलोकिते सर्वग्रहैर्विलग्ने लीलाविलासैः सहितो बलीयान् ।
कुले नृपालो विपुलायुरेव भयेन मुक्तोऽरिकुलस्य हन्ता ॥१॥
सौम्यास्त्रयो लग्नगता यदि स्युः कुर्वन्ति जातं नृपतिं विनीतम् ।
पापास्त्रयो दुःखदरिद्रशोकैर्युतं नितान्तं बहुभक्षकञ्च ॥२॥
सोमो वा सोमपुत्रो वा राहुकेतुशनैश्चराः ।
यस्य लग्ने स्थितास्तस्य दोलिता प्रकृतिर्भवेत् ॥३॥
कविर्गुरुर्भानुसोमौ स्थिरप्रकृतिदायकाः ॥
सौम्यो लग्नपतिर्लग्ने लग्नं वा यदि वीक्ष्यते ।
गतक्लेशश्चिरायुश्च सुखी लोकस्तदा भवेत् ॥४॥
यस्मिन्भावे भावनाथेन युक्तो लग्नस्वामी तस्य भावस्य वृद्धिम् ।
कुर्यान्नित्यं मृत्युनाथेन युक्तो यस्मिन्भावे तस्य हानिं सदैव ॥५॥
सौम्ये लग्नपतौ वापि सौम्यैर्वा लग्नगैस्तथा ।
चिरायुर्जायते मर्त्यो वीतक्लेशः सुखी तदा ॥६॥

क्रूरे लग्नपतौ नष्टे क्रूरा लग्नगता ग्रहाः।
अल्पायुषं प्रकुर्वन्ति नात्र कार्या विचारणा ॥७॥
तनुपतिः सबलोऽष्टषडन्त्यगस्तनुसुखंन षडन्त्यमृतीट्स्वभे।
तनुसुखं न यदा विबलेऽङ्गपे वपुषि पापखगेच रुजाधिकः ॥८॥
तनुपतिः स्वगृहे बुध जीव भार्गवयुतश्च चतुष्टयेऽथवा।
भवति तुङ्गगृहे यदि सौम्यभे हितदशा सुखराज्ययशोऽर्थदः ॥९॥
लग्नपोवा लग्नगोवा यादृशोहि भवेद्ग्रहः।
सवर्णस्तत्समाचारो मानवो भविता भुवि ॥१०॥
यथा लग्नगते भौमे सवृद्धोऽपि युवाथवा।
तथा लग्न गते सौम्ये (बु.) युवा वालायते किल ॥११॥
शशिशुक्रौ यदा लग्ने नातिवृद्धो न वै युवा ॥
स्थविरौ राहुमार्तण्डौ तथा जीवशनैश्चरौ ॥१२॥
स्थविरौ सबलौ यस्य ग्रहौ स्यातां विलग्नगौ।
प्रकृत्या सभवेद्वृद्धो मान्यः सर्वजनेषु च ॥१३॥
राशिस्वभाव तुल्या ज्ञेया प्रकृतिः ॥
आरोहवीर्ये तु विलग्ननाथे भाग्याधिपे तादृशवीर्ययुक्ते।
विख्यातकीर्तिप्रभवो नरस्तु शुभग्रहेणापि समन्विते स्यात् ॥१४॥
(यथा मेषे दशांशपर्यन्तंसूर्यःपरमोच्चः। तुलायांदशांशपर्यन्तंनीचः।
नीचादुच्चपर्यन्तमारोही। उच्चान्नीचपर्यन्तमवरोही।
आरोही ग्रहः शुभः। अवरोही ग्रहोऽशुभः) ॥१५॥

(अर्थ)

जब सब ग्रह बलवान् हो कर लग्न को देखें तो मनुष्य अपने कुल में श्रेष्ठ, दीर्घायु, भयरहित और शत्रुनाशी होता है ॥ १ ॥

जब लग्न में २ शुभग्रह हों तो मनुष्य राजा होता है और उसमें नम्रता होती है, परन्तु जब लग्न में २ पाप ग्रह हों तो मनुष्य दुःखी, दरिद्री, शोकयुक्त और बहुत खाने वाला होता है ॥ २ ॥

जिस मनुष्य के जन्म लग्न में चन्द्रमा या बुध या राहु, केतु, शनैश्चर हों तो वह मनुष्य दोलायमान प्रकृति वाला होता है ॥ ३ ॥

जिसके लग्न में शुक्र, बृहस्पति, सूर्य और मङ्गल हों वह स्थिर स्वभाव वाला होता है। जिस मनुष्य के लग्न में सौम्य ग्रह हों या लग्न को सौम्य ग्रह देखें तो वह मनुष्य क्लेश रहित, चिरायु और सुखी होता है ॥ ४ ॥

लग्नेश जिस भाव में भाव के स्वामी के साथ बैठा हो उस भाव की वृद्धि करता है, परन्तु जिस भाव में वह अष्टमेश से युक्त हो उस भाव की सदा हानि करता है ॥ ५ ॥

जब लग्न का पति सौम्य ग्रह हो या लग्न में सौम्य ग्रह बैठे हों तो मनुष्य चिरायु, क्लेशरहित और सुखी होता है ॥ ६ ॥

जब लग्नेश क्रूर ग्रह हो अथवा नष्टबल हो या लग्न में क्रूर ग्रह हों तो मनुष्य अल्पायु होता है। इसमें विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं है ॥ ७ ॥

जब लग्नेश बलवान् हो और ६,८,१२, स्थानों में हो, अथवा ६,८,१२ स्थानों के स्वामी अपने घर में हो, अथवा लग्नेश बलहीन हो तो शरीर का सुख नहीं मिलता है। यदि लग्न में पाप ग्रह हों तो मनुष्य अधिक रोगी होता है ॥ ८ ॥

जब लग्नेश अपने घर में हो अथवा बुध, बृहस्पति और शुक्र से युक्त हो अथवा केन्द्र में हो अथवा सौम्यग्रह के घर में हो या उच्च का हो या मित्र ग्रह की दृष्टि से युक्त हो तो सुख, राज्य, यश और धन मिलते हैं ॥ ९ ॥

लग्नेश अथवा लग्न में स्थित ग्रह अच्छा या बुरा जैसा हो वर्ण के रङ्ग के समान और वैसे ही गुण वाला मनुष्य होता है ॥ १० ॥

जब लग्न में मङ्गल हो तो मनुष्य वृद्ध होने पर भी जवान दिख-लाई देता है। ऐसे ही लग्न में बुध के होने से जवान आदमी भी बालक के समान काम करता है ॥ ११ ॥

जब लग्न में चन्द्रमा और शुक्र हों तो मनुष्य न तो अति वृद्ध स्वभाव वाला और न तरुण अवस्था का स्वभाव वाला होता है। राहु, सूर्य्य, बृह-पति और शनैश्चर वृद्ध ग्रह हैं ॥ १२ ॥

जिसके लग्न में वृद्ध ग्रह बलवान् हो कर बैठें वह मनुष्य स्वभाव ही से वृद्ध और सब लोगों में मान्य होता है ॥ १३ ॥

जैसी ही राशि लग्न में हो वैसी हा मनुष्य की प्रकृति भी होती है ॥

जब लग्नेश आरोहवीर्य्य वाला हो और भाग्येश भी आरोहवीर्य्य वाला हो और दोनों शुभ ग्रह से युक्त हो तो मनुष्य प्रख्यात तथा बलवान् होता है ॥ १४ ॥

(आरोह वीर्य्य का अर्थ यह है —जैसे मेष राशि में १० अंश पर्यन्त सूर्य्य परम उच्च होता है और तुला राशि में १० अंश पर्य्यन्त परम नीच होता है। नीच से उच्च पर्य्यन्त ७ घरों में जब ग्रह जावे तो वह आरोही कहलाता है। इसके विपरीत उच्च से नीच पर्य्यन्त अवरोही कहलाता है। आरोही ग्रह अथवा उसकी दशा शुभ फल दायक है, अवरोही ग्रह अथवा उसकी दशा अशुभ है) ॥ १५ ॥

धनभावविचारः

लग्नपो धनभावस्थो जनयेत्कुलदीपकम् ॥
धनाधिपो गुरुर्यस्य धनराशिस्थितो यदि ।
भौमेन सहितो वापि धनवान्सनरो भवेत् ॥१॥

चन्द्रेण मङ्गलो युक्तो जन्मकाले यदा भवेत् ।
तत्र जातस्य जायेत कुवेराद्धिकं धनम् ॥२॥

धनेशे लाभराशिस्थे लाभेशेच धनं गते ।
तावुभौ केन्द्रराशिस्थौ धनवान्सनरो भवेत् ॥३॥
धनेशे केन्द्रराशिस्थे लाभेशे तन् त्रिकोणगे ।
गुरुशुक्रयुते दृष्टे धनलाभ मुदीरयेत् ॥४॥
वित्तेशे रिपुभावस्थे लाभेशेऽस्तगते यदि ।
वित्तलाभौ पापयुतौ दृष्टौ निर्धन एवसः ॥५॥
लग्नेशे वै रिप्फगते रिप्फेशे लग्नमागते ।
मारकेशयुत दृष्टे जात· स्यान्निर्धनोनरः ॥६॥
धनभावगताः सौम्याः कुर्वन्त्येव धनं बहु ।
बुधदृष्टो गुरुस्तत्र निर्धनं कुरुते नरम् ॥७॥
गुरुश्चन्द्रेक्षितस्तत्र सर्वस्वं हन्ति निश्चितम् ।
क्रूरखेटादियोगैश्च दारिद्र्यं संभवेन्नृणाम् ॥८॥

(अर्थ)

जिसका लग्नेश धन स्थान में हो वह मनुष्य कुलदीपक होता है ॥

जिसके धन स्थान का स्वामी बृहस्पति हो और वह धन राशि में स्थित हो या मङ्गल से युक्त हो तो वह मनुष्य धनवान् होता है ॥१॥

जिसके जन्मसमय में चन्द्रमा मङ्गल से युक्त हो उसके पास कुबेर से भी अधिक धन होता है ॥२॥

धनेश लाभ स्थान में हो और लाभेश धन स्थान में हो और वे दोनों केन्द्र राशि में (?) स्थित हों तो मनुष्य धनवान् होता है ॥३॥

धनेश केन्द्र राशि में स्थित हो, लाभेश उससे त्रिकोण में स्थित हो, बृहस्पति अथवा शुक्र से युक्त या दृष्ट हो तो धन का लाभ होता है ॥४॥

धनेश शत्रु भाव में हो, लाभेश अस्तगत हो, धन स्थान और लाभ स्थान पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो तो मनुष्य निर्धन होता है ॥५॥

लग्नेश बारहवें स्थान में हो, द्वादशेश लग्न में हो, मारकेश से युक्त अथवा दृष्ट हो तो मनुष्य निर्धन होता है ॥६॥

धन भाव में सौम्य ग्रह हों तो बहुत धन होता है। यदि उस स्थान में बृहस्पति हो और बुध से दृष्ट हो तो मनुष्य निर्धन होता है ॥७॥

यदि धन स्थान में बुध हो और चन्द्रमा उसको देखे तो सर्वस्व हरण करता है। ऐसे ही क्रूरग्रह आदि के योग से दारिद्र्य होता है ॥८॥

भ्रातृ भावः

स्त्रीग्रहो भ्रातृभावेशः स्त्रीग्रहो भ्रातृगोऽपिवा ।
भगिनी स्यात्तदा भ्राता पुंग्रहे पुंग्रहो यदि ।
मिश्रे मिश्रफलं चात्र बलाबलविनिर्णयः ॥१॥
सहजाङ्कसमान सोदरमालम् ॥
अग्रे जातान्विहन्त्या त्पृष्ठेजातांश्छनैश्चरः ।
अग्रजान्पृष्ठजान्भ्रातॄन्हतो राहुकुजौ सदा ॥२॥
लग्नात्तृतीयभवने राहुयुक्तो यदा शशी ।
भ्रातृहीनो भवेद्बालो लक्ष्मीवानपि जायते ॥३॥
शन्यारसंयुते लग्ने तृतीयैकादशे द्विज ।
कनिष्ठज्येष्ठयोर्नाशं भिन्नस्थे भिन्नभावहन् ॥४॥

(अर्थ)

जब भ्रातृ भाव का स्वामी स्त्री ग्रह हो या भ्रातृ भाव में स्त्री ग्रह हो तो बहिन होती है, परन्तु यदि पुरुष ग्रह हो तो भाई होता है और पुरुष ग्रह स्त्री ग्रह दोनों के मेल से भाई बहिन दोनों होते हैं, बल और अबल से निर्णय करना चाहिये ॥ १ ॥

भ्रातृ भाव में जो राशि हो उसकी संख्या के समान सहोदरों की की संख्या होती है। यदि भ्रातृस्थान मे सूर्य्य हो तो बड़े भाइयो का

नाश होता है, शनैश्चर हो तो छोटे भाइयो का नाश होता है, राहु और मङ्गल हो तो छोटे और बड़े दोनों का नाश होता है ॥२॥

जब लग्न से तीसरे स्थान में राहु युक्त चन्द्रमा हो तो बालक भ्रातृ हीन होता है परन्तु लक्ष्मीवान् भी होता है ॥३॥

जब लग्न, तृतीय अथवा एकादश स्थान में शनि और मङ्गल एक साथ बैठे हों तो ज्येष्ठ कनिष्ठ दोनों भाइयों का नाश होता है। यदि और किसी भाव में ये दोनों स्थित हों तो उस भाव का नाश होता है ॥४॥

सन्तानभावविचारः

झपालिवृपसिंहानां पञ्चमगा यदि सूतिसमये स्युः ।
ग्रह सहितेऽल्पसुतत्वं ग्रहरहिते पुत्रशोकार्तः ॥१॥
पञ्चमे स्थिरगेहे स्या द्रविः प्रथमपुत्रहा ।
पञ्चमे रजनीनाथ· कन्यापुत्र मपुत्रकम् ॥२॥
रिपुदृष्टो रिपुक्षेत्रे नीचो वा पापसंयुतः ।
भूमिजः पुत्रशोकार्तिं करोति नियतं नृणाम् ॥३॥
पञ्चमस्थश्चन्द्रपुत्रः सन्तानं प्रकरोति हि ।
अस्तं गतः शत्रुदृष्ट श्चोत्पन्नस्य विनाशक ॥४॥
समृद्धो वहुपुत्रश्च सुतस्थे देवतागुरौ ॥
सुत सुख विविधोपचितं परम धनं पण्डितं शुक्रः ॥५॥
सुतभवनगतोऽरिमन्दिरस्थः सकलसुतान्विनिहन्ति मन्दगामी।
समुदितकिरणःस्वतुङ्गभस्थःकथमपिजनयेत्सुतीक्ष्णमेकम् ॥६॥
तनयं दीनमलिनं सुतर्क्षे रचयेत्तमः ।
यदि चन्द्रगृहं तत्स्या चद्रानौ सन्ततिर्भवेत् ॥
पुत्रे केतुः प्रजाहानि र्विद्याविज्ञानवर्जितः ॥७॥
सुते राशितुल्या भवेत्सन्ततिर्वा ।
सुते दृष्टिसंख्यं सुतानां च संख्या ।
(पुंग्रहे पुत्रः । स्त्रीग्रहे कन्या) ॥८॥

यदैकादशे क्रूरखेटो नराणां परं पञ्चमे चन्द्रशुक्रौ भवेताम् ।
तदा तस्य कन्या भवेत्पूर्वगर्भे ।
तथा पञ्चमस्वामिना दृष्टयुक्तं भवेत्सन्ततिश्चान्यथानाशमाहुः ॥६॥
वृश्चिक झष कर्कटा येषामपत्यभावमापन्नाः ।
बहुलापत्या ज्ञेयाः कन्यापूर्वप्रजाश्चापि ॥१०॥
पापैर्बलिभिर्युक्ते पापर्क्षे पञ्चमे यदा राशौ ।
जातः पुरुषोऽपुत्रः सौम्यग्रहदर्शनातीते ॥११॥
अस्तं गते पञ्चमेशे पापाक्रान्तेच दुर्बले ।
नापत्यं जायते दैवा ज्जातोऽपि म्रियते शिशुः ॥१२॥
सुतारिरिःफगः पापः सन्तानाधिपतिर्यदि ।
पुत्राभावो भवेत्तस्य यदि जीवो न पश्यति ॥१३॥
भौमेन राहुणा वापि युक्तः स्यात्पञ्चमेश्वरः ।
राहुभौमान्तरस्थोवा पुत्रनाशकरो भवेत् ॥१४॥
जीवे मकरं याते पञ्चमभ आत्मजमृतिं विद्यात् ।
मीन स्थितेऽपि चैवं नवमे शुभसंस्थितेऽल्पजीवीच ॥१५॥
जीवस्थितस्य राशेः पञ्चमभे पापसंयुक्ते ।
पुत्रविनाशं विद्यात्सौम्यक्षेत्रं तु शुभदं स्यात् ॥१६॥
पुत्रभावे कुजक्षेत्रे जातं जातं विनाशयेत् ॥१७॥
पञ्चमैकादशे राहुः पञ्चमैकादशे शनिः ।
पञ्चमैकादशे भौमः सन्तानप्रतिबन्धकाः ॥१८॥
भौमः सूर्योऽथवा राहुः शनिर्वा यस्य पञ्चमे ।
द्वितीया पुत्रिणी तस्य प्रथमा स्यादपुत्रिणी ॥१६॥
क्षीणेन्दौ लग्नगते पापैर्व्ययनैधनलग्नस्थैः ।
क्षीणे विधौ सुतस्थे पुत्रहानो नरो भवति ॥२०॥
पापद्वयेन युक्ते पञ्चमभवने पुत्रशोकभाग्भवति ।
सौम्ये स्वक्षेत्रगते पञ्चमभे बहुप्रजालाभः ॥२१॥

सुतभे सितचन्द्राभ्यां युक्ते दृष्टेऽथवा तयोः ।
अल्पापत्यो भवेज्जातः कन्यानां जनको भवेत् ॥२२॥
पञ्चमे भवने शुक्रे जीवे वा मृगलाञ्छने ।
अल्पापत्यो भवेज्जातः कन्यानां जनको भवेत् ॥२३॥
भौमः पञ्चमभवने जातं जातं विनाशयति पुत्रम् ।
सौम्यग्रहैर्यदि दृष्टः कृच्छ्रादपरे वयसि पुत्री ॥२४॥
भूनन्दनो नन्दनभावसंस्थो जातं च जातं तनयं निहन्यात् ।
दृष्टो यदा चित्रशिखण्डिजेन तदा विनष्टः प्रथमः सुतः स्यात् ॥२५॥
सुताभिधाने भवने यदि स्यात् खलस्य राशिः खलखेटयुक्तः ।
सौम्यग्रहालोकनवर्जितश्च सन्तानहीनो मनुजस्तदानीम् ॥२६॥
सन्तानभावे गगनेचराणां यावन्मितानामिह दृष्टिरस्ति ।
स्यात्संततिस्तत्प्रमिता न संशे नराश्च कन्याः प्रमदाभिधाने ॥२७॥
षडादित्रयसंस्थे तु सुताधीशेत्वपुत्रता ।
केन्द्रत्रिकोणसंस्थे तु पुत्रलाभाभिसम्भव ॥२८॥
सत्पुत्र लाभः सुतपे सुरेड्ये
शुभेषु गेहेषु गते च भानौ ।
एकः स्थिरः स्यात्सुत एक एव
स्मिनः शुभ केन्द्रनवात्मजस्थे ॥२९॥
षष्ठे नीचे सुताधीशे काकवन्ध्या विशेषतः ।
काकवन्ध्या भवेन्नारी सुते केतुबुधौ यदि ॥३०॥
तत्र सौरिबुधौ स्यातां काकवन्ध्यात्व माप्नुयात् ॥
पापाक्रान्ते सुतस्थाने सुतं कष्टादिनिर्दिशेत् ॥३१॥
पञ्चमाधिपतिर्यस्य नेक्षते पञ्चमं गृहम् ।
तदा पुत्रस्य चिन्ता स्यात् ॥३२॥

सुतभवने भृगुजीवसौम्यनाथे
वलसहितैरवलोकितैर्युतैर्वा ।
वहुसुतजननं वदन्ति सन्त. ॥३३॥
पापद्वयेन युक्ते पञ्चमभवने नहि प्रजालाभः ॥३४॥

ऋतुस्तु भौमो विज्ञेयो रेतः शुक्र· प्रकीर्तितः ।
ऋतुं रेतोन पश्येन रेतसं न ऋतुस्तथा ।
अप्रसूतो जातकःस्यात् कान्तावर्गयुतोऽपिसन् ॥३५॥

ऋतुश्च कथितो भौमो रेतः शुक्रः प्रकीर्तितः ।
यद्वर्षे पश्यतश्चोभौ तद्वर्षे गर्भसम्भवः ॥३६॥

सुत लग्नेश दारेश लग्नेशानां यदा तदा ।
सङ्गमस्तु तदा पुत्र लाभः स्याद्यवनोदितम् ॥३७॥

(अर्थ)

यदि जन्म समय में मीन, वृश्चिक, वृष, सिंह राशियों में से कोई राशि पञ्चम स्थान में हो, तथा पञ्चम स्थान ग्रह सहित हो तो पुत्र कम होते हैं, ग्रह रहित हो तो मनुष्य पुत्र शोक से पीडित होता है ॥१॥

यदि पञ्चम भाव में स्थिर राशि हो और उसमें सूर्य बैठा हो तो ज्येष्ठ पुत्र का नाश होता है। पञ्चम स्थान में चन्द्रमा हो तो कन्या उत्पन्न होती है, पुत्र नही होते हैं ॥२॥

जव पञ्चम स्थान में मङ्गल वैठा हो और उसको शत्रु ग्रह देखें या वह शत्रु के क्षेत्र में हो या नीच का हो या पाप ग्रह से युक्त हो तो पुत्र शोक करता है ॥३॥

पञ्चम स्थान में बुध होने से सन्तान होती है, परन्तु यदि वह अस्त-ङ्गत अथवा शत्रु दृष्ट हो तो उत्पन्न सन्तान का भी नाश करता है ॥४॥

जव पञ्चम स्थान में वृहस्पति हो तो मनुष्य समृद्ध और वहुपुत्र

होता है। जब पञ्चम स्थान में शुक्र हो तो पुत्र का सुख, बहुत धन, और पाण्डित्य होते हैं ॥५॥

पञ्चम स्थान में शनैश्चर शत्रुगृही हो तो सब पुत्रों का नाश करता है, परन्तु यदि शनैश्चर अपने उच्च का हो और उदयी हो तो बहुत कष्ट से एक पुत्र होता है ॥६॥

पञ्चम स्थान में राहु हो तो पुत्र बड़ा दुःखी और मलिन होता है। यदि कर्क का राहु हो तो सन्तति होती है। पञ्चम स्थान में केतु होने से सन्तान की हानि होती है और मनुष्य विद्या तथा ज्ञान से रहित होता है ॥७॥

पञ्चम स्थान में जो राशि हो उसी की संख्या के समान सन्तान की भी संख्या होती है। अथवा पञ्चम स्थान में जितने ग्रहों की दृष्टि हो उसी के अनुसार सन्तान की संख्या होती है। पुरुष ग्रहों की दृष्टि होने से पुत्र होते हैं। स्त्री ग्रहों की दृष्टि होने से कन्याएं होती हैं ॥८॥

जब एकादश स्थान में पाप ग्रह हों और पञ्चम स्थान में चन्द्रमा और शुक्र हों तो पहिले गर्भ में कन्या का जन्म होता है। यदि पञ्चम स्थान अपने स्वामी से दृष्ट अथवा युक्त हो तो सन्तान होती है अन्यथा सन्तान का नाश होता है ॥९॥

जिस मनुष्यके सन्तान भाव में वृश्चिक, मीन और कर्क राशियां हों उसकी बहुत सन्तति होती है और पहिले गर्भ में उसके कन्याजन्म होता है ॥१०॥

जब पञ्चम स्थान में बहुत से बलवान् पाप ग्रह हों और पञ्चम स्थान पापग्रह का घर हो, सौम्य ग्रह उसको न देखे तो मनुष्य पुत्रहीन होता है ॥११॥

जब पञ्चमेश अस्तङ्गत हो अथवा पापग्रह से दबाया हो, या बलहीन हो तो सन्तान नहीं होती है. यदि दैव से हो भी जाय तो बालक मर जाता है ॥१२॥

यदि सन्तान भाव का स्वामी ५, ६, १२ स्थानों में हों और वह पाप ग्रह हो और उस पर बृहस्पति की दृष्टि न हो तो पुत्र का अभाव होता है ॥१३॥

यदि पञ्चमेश मङ्गल अथवा राहु से युक्त हो अथवा राहु और मङ्गल के मध्य में स्थित हो तो पुत्र का नाश करता है ॥१४॥

जब मकर का बृहस्पति पञ्चम स्थान में हो तो सन्तान की मृत्यु होती है। ऐसा ही फल मीनस्थ बृहस्पति का है। नवम स्थान में अशुभ ग्रह होने से पुत्र अल्पजीवी होता है ॥१५॥

जिस राशि में बृहस्पति हो उससे पाचवें घर मे यदि पाप ग्रह बैठा हो तो पुत्र का नाश करता है, परन्तु यदि वह स्थान सौम्य ग्रह का क्षेत्र हो तो शुभ फल होता है ॥१६॥

जब पञ्चम स्थान मङ्गल का क्षेत्र हो तो बालक उत्पन्न होकर नाश होते हैं ॥१७॥

पञ्चम और एकादश स्थान मे राहु, शनि अथवा मङ्गल हो तो सन्तान होने में विलम्ब होता है ॥१८॥

जिसके पञ्चम स्थान में मङ्गल, सूर्य्य, राहु अथवा शनि हो उसकी प्रथम स्त्री पुत्रहीन होती है, द्वितीय विवाह करने से पुत्र उत्पन्न होता है ॥१९॥

जब क्षीण चन्द्रमा लग्न में हो तथा पापग्रह व्यय, अष्टम और लग्न में स्थित हो, अथवा क्षीण चन्द्रमा पञ्चम स्थान में हो तो मनुष्य पुत्रहीन होता है ॥२०॥

जब पञ्चम स्थान में दो पाप ग्रह हों तो मनुष्य को पुत्र का शोक होता हैं, परन्तु जब पञ्चम स्थान में सौम्य ग्रह स्वक्षेत्री हो तो बहुत सन्तान की प्राप्ति होती है ॥२१॥

जब पञ्चम स्थान शुक्र और चन्द्रमा से युक्त अथवा दृष्ट हो तो मनुष्य कम सन्तान वाला होता है और वह कन्याओं का पिता होता हैं ॥२२॥

जब पञ्चम स्थान में शुक्र, बृहस्पति अथवा चन्द्रमा हो तो मनुष्य अल्प सन्तान वाला होता है और वह कन्याओं का पिता होता है ॥२३॥

यदि पञ्चम स्थान में मङ्गल हो तो उत्पन्न हुए पुत्र का नाश होता है, परन्तु यदि सौम्य ग्रहों की उस पर दृष्टि हो तो मनुष्य बुढ़ापे में कठिनता से पुत्र वाला होता है ॥२४॥

जब मङ्गल सन्तान भाव में स्थित हो तो उत्पन्न हुए पुत्र का नाश करता है, परन्तु जब उस पर बृहस्पति की दृष्टि हो तो पहिले लड़के का नाश होता है ॥२५॥

जब पञ्चम स्थान में खल ग्रह की राशि हो अथवा वह स्थान खल ग्रह से युक्त हो और सौम्य ग्रह उसको न देखें तो मनुष्य सन्तान हीन होता है ॥२६॥

सन्तान भाव में जितने ग्रहों की दृष्टि हो उसी प्रमाण की सन्तति होती है। पुरुष ग्रहों की दृष्टि होने से पुत्र होते हैं, स्त्री ग्रहों की दृष्टि होने से कन्याएं होती हैं ॥ २७ ॥

जब पञ्चमेश ६,८,१२ स्थानों में हो तो मनुष्य पुत्रहीन होता है, परन्तु यदि पञ्चमेश केन्द्र अथवा त्रिकोण में हो तो पुत्र लाभ सम्भव है ॥ २८ ॥

जब पञ्चमेश बृहस्पति हो, सूर्य शुभस्थान में हो और शुभ ग्रह केन्द्र अथवा ५,६ स्थानों में हो तो एक ही पुत्र होता है ॥ २६ ॥

जब पञ्चमेश छठे स्थान में नीच का हो और पञ्चम स्थान में केतु और बुध हों तो स्त्री काकवन्ध्या होती है (काकवन्ध्या उस स्त्री को कहते हैं जो जन्म भर में केवल एक ही बार गर्भवती हो) ॥ ३० ॥

जब पञ्चम स्थान में शनि और बुध हों तब भी स्त्री काकवन्ध्या होती है। जब पञ्चम स्थान में पाप ग्रह हों तो कष्ट से पुत्र होता है ॥३१॥

जब पञ्चम स्थान का स्वामी पञ्चम स्थान को न देखे तो पुत्र की चिन्ता होती है ॥ ३२ ॥

जब पञ्चम स्थान के स्वामी शुक्र, बृहस्पति अथवा बुध हों और बलवान् ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हों तो बहुत से पुत्र होते हैं ॥ ३३ ॥

जब पञ्चम स्थान मे दो पापग्रह हों तो सन्तान की प्राप्ति नहीं होती है ॥ ३४ ॥

मङ्गल ऋतु है, शुक्र वीर्य्य है, ऋतु को वीर्य्य न देखे और वीर्य्य को ऋतु न देखे तो बहुत से विवाह करने पर भी सन्तान नहीं होती है ॥३५॥

जिस वर्ष मे ऋतु को वीर्य्य देखे और वीर्य को ऋतु देखे उस वर्ष मे गर्भ होना सम्भव है ॥ ३६ ॥

सुतेश और लग्नेश का तथा सप्तमेश और लग्नेश का जब समागम हो तब पुत्रलाभ होता है यह यवनाचार्य्य का वचन है ॥ ३७ ॥

विद्याविचारः

सुतपस्त्रिके:वाग्धीनो विद्याहीनश्च ॥
वागीश वाग्गृहाधीशौ षडादित्रयसंस्थितौ ।
मूकतां कुरुतोप्येवं पितृमातृगृहाधिपाः ॥

(अर्थ)

जिसका पञ्चमेश त्रिकस्थान में हो वह वाणी और विद्या से हीन होता है। बृहस्पति और पञ्चमेश यदि ६, ८, १२ स्थानों में स्थित हों तो मनुष्य गूंगा होता है। ऐसे ही पिता और माता के घर के स्वामी पूर्वोक्त स्थानों में स्थित हों तो पिता और माता गूंगे होते हैं ॥

पञ्चमस्थसूर्यादिफलानि

तातांम्बिकासोदरमातुलाश्च मातामहाःपितृपिताच सूनुः ।
सूर्यादि खेटैः खलुपञ्चमस्थै र्नश्यन्ति नूनं मुनयो वदन्ति ॥

(अर्थ)

यदि पञ्चम स्थान में सूर्य्य आदि ग्रह स्थित हों तो पिता, माता,

सहोदर भाई बहिन, मामा, नाना, दादा और पुत्रों का क्रम से नाश होता है ॥

बुद्धिः (देवसेवाच)

भृगुः पुत्रे मृदुर्बुद्धिः कुटिला राहुमन्दयोः ।
सुदेवसेवा सौम्ये च बहुदेवा च पापके ॥
शुभग्रहे साधुधर्मः प्रपञ्ची चाशुभग्रहे ।

(अर्थ)

यदि पञ्चम स्थान में शुक्र हो तो निर्मल बुद्धि होती है, यदि राहु और शनैश्चर हों तो कुटिल बुद्धि होती है ॥

यदि पञ्चम स्थान में सौम्य ग्रह हो तो मनुष्य अच्छे देवता का भक्त होता है । यदि पाप ग्रह हो तो बहुत देवताओं की पूजा करने वाला होता है ॥

यदि पञ्चम स्थान में शुभ ग्रह हो तो मनुष्य धर्म्म करने वाला होता है । पाप ग्रह हो तो प्रपञ्ची होता है ॥

सन्तानाधरोधकर्तॄणां ग्रहाणामुपायः ।

वंशाख्नेन रविः शशी शिवव्रता द्भौमस्तु गौर्य्यर्चना
त्सौम्यः सम्पुटकांस्यपात्रकनकै र्जीवस्तु पित्रर्चनात् ।
शुक्रो गोः प्रतिपालनात्प्रकुरुते सौरिस्तु मृत्युञ्जयात्
कन्यादानमखात्तमस्तु कपिलादानाच्छिखी सन्ततिम् ॥१॥
बालघाती च पुरुषो मृतवत्सः प्रजायते ।
ब्राह्मणोद्वाहनं तेन कर्तव्यं तस्य शुद्धये ॥२॥
श्रवणं हरिवंशस्य कर्तव्यं च यथाविधि ।
महारुद्रस्य जाप्यं वा कारयेच्च यथाविधि ॥३॥
शीतलैः सलिलैः शुद्धैः वस्त्रपूतैः सचन्दनैः ।
लक्षसंख्यघटैर्भक्त्या स्नापयेच्च महेश्वरम् ॥४॥

लक्षपुष्पैरर्चयित्वा धूपदीपादिभिस्तथा ।
चतुर्दशीव्रतं कुर्यान्निर्जलं वा स्त्रिया सह ॥५॥
सूर्यवारे व्रतं कुर्यादथवा जलवर्जितम् ।
सहस्रनामजापीच भवेदेवं प्रमुच्यते ॥६॥

(अर्थ)

यदि सूर्य्य के दोष से सन्तान न हो तो हरिवंश सुनना चाहिये, यदि चन्द्रमा का दोष हो तो शिवजी का व्रत करना चाहिये, यदि मङ्गल का दोष हो तो भगवती की उपासना करनी चाहिये, यदि बुध का दोष हो तो कांसे की थाली और सोने का दान करना चाहिये, यदि बृहस्पति का दोष हो तो पितरों का श्राद्ध (अर्थात् गयायात्रा आदि) करना चाहिये, यदि शुक्र का दोष हो तो गोमाता का सेवन करना चाहिये, यदि शनि का दोष हो तो मृत्युञ्जय का आराधन करना चाहिये, यदि राहु का दोष हो तो कन्यादान करना चाहिये, यदि केतु का दोष हो तो गोदान करना चाहिये। ऐसा करने से सन्तान हो जाती है (यदि दृढमूल कर्म्म न हों जिनका वर्णन पहिले अध्याय मे किया गया है) ॥१॥

जिस मनुष्य ने पूर्वजन्म में बालहत्या की हो उसकी सन्तान हो हो कर मर जाती है। उस पाप की शुद्धि के निमित्त उसको ब्राह्मण की कन्या का विवाह कराना चाहिये ॥ २ ॥

अथवा विधिपूर्वक हरिवंश की कथा सुननी चाहिये, अथवा विधिपूर्वक महारुद्र का जप कराना चाहिये (११ आवृत्ति रुद्रिय को रुद्र कहते हैं, उसके ११ गुने को अतिरुद्र कहते हैं, उसके ११ गुने को महारुद्र कहते हैं) ॥३॥

अथवा पवित्र और वस्त्र में छाने हुए चन्दन सहित शीतल जल के एक लाख घड़ों से शिवजी को भक्ति सहित स्नान करावे ॥४॥

लाख पुष्पों से तथा धूप दीप आदि से पूजन करे। अथवा चतुर्दशी के दिन अथवा रविवार को स्त्रीसहित निर्जल व्रत करे, अथवा सहस्रनाम का पाठ करे। ऐसा करने से मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है ॥६॥

पितृव्यादिनाशयोगाः

सोमार्कभूसुनुयमा व्ययस्था अम्बापितृभ्रातृसुतप्रणाशः ।
लग्नाच्छशाङ्काद्बहवस्तृतीये पापा यदि स्युः सहज प्रणाशः ॥१॥
सौरोऽह्नि रात्रौ तपनः पितृव्य स्तत्पापयोगाच्च पितृव्य नाश ।
रिपुस्मराष्टव्ययजन्मसंस्थाः पापाः पुन र्मातुलमृत्युदाः स्यु ॥२॥
चन्द्रे नभःस्थे हिबुके च पापे शुक्रे स्मरे स्यात्स्वकुलस्य हन्ता ।
येन ग्रहेण प्रवलेन योगो दृष्ट्या च मातुः पितुरप्यरिष्टम् ॥३॥
चन्द्रात् त्रिकोणगे सूर्ये मातुलो म्रियते ध्रुवम् ।
कुजात् त्रिकोणगे शुक्रे मातृमाता विनश्यति ॥४॥

(अर्थ)

जब व्ययस्थान में चन्द्रमा, सूर्य्य, मङ्गल अथवा शनि हो तो यथाक्रम माता, पिता, सहोदर भाई बहिन, तथा पुत्र का नाश होता है। लग्न से अथवा चन्द्रमा से तीसरे घर में बहुत पाप ग्रह हों तो भाई का नाश होता है॥१॥

यदि दिन में जन्म हो तो शनैश्चर और रात में जन्म हो तो सूर्य्य पितृव्य (चचा अथवा ताऊ) होता है। यदि वह पाप ग्रह युक्त हो तो पितृव्य का नाश होता है। ६, ७, ८, १२ और १ स्थानों में यदि पाप ग्रह हों तो मामा की मृत्यु होती है ॥२॥

दशमस्थान में चन्द्रमा हो, चतुर्थस्थान में पाप ग्रह हो, सप्तम स्थान में शुक्र हो तो मनुष्य अपने कुल का नाश करने वाला होता है। जिस बलवान् ग्रह से अथवा जिसकी दृष्टि मे माता के अरिष्ट का योग हो वसीसे पिता को भी अरिष्ट होता है ॥३॥

चन्द्रमा से त्रिकोण स्थान में सूर्य्य हो तो मामा की मृत्यु होती है। मङ्गल से त्रिकोण में शुक्र हो तो नाना की मृत्यु होती है ॥४॥

मातृपितृरिष्टयोगाः

रिपुस्थाने यदा पापा व्ययस्थाने च चन्द्रमाः ।
चतुर्थे मङ्गलो यस्य माता तस्य नजीवति ॥१॥
लग्नस्थाने यदा सौरिः शत्रुस्थाने च चन्द्रमाः ।
कुजश्च सप्तमस्थाने पितुस्तस्य च संशयः ॥२॥
चतुर्थे मातृहा पापो दशमे पितृहा भवेत् ।
सप्तमे भवने पापा मातृपितृविनाशकाः ॥३॥
द्वादशे रिपुभावेच यदा क्रूरो व्यवस्थितः ।
तदा मातुर्भयं विद्या च्चतुर्थे दशमे पितु ॥४॥
उच्चस्थो वापि नीचस्थः सप्तमस्थो यदा रविः ।
तदा जातो निहन्त्याशु मातरं नात्र संशयः ॥५॥
इन्दुतो नवमे द्यूने नैधने पापखेचराः ।
अखिलाः पितरं हन्यु र्वालं जातं समातृकम् ॥६॥
द्वादशाष्टमगे पापे लग्नेशे वलवर्जिते ।
जन्मकाले शिशुर्दुःखी सवालो मातृनाशक ॥
द्वितीये द्वादशे मातुश्चतुर्थे दशमे पितुः ॥७॥

(अर्थ)

जिसके शत्रु स्थान में पाप ग्रह हो, व्यय स्थान में चन्द्रमा हो, चतुर्थ स्थान में मङ्गल हो उसकी माता नहीं जीती है ॥ १ ॥

जिसके लग्न में शनि हो, शत्रु स्थान में चन्द्रमा हो, सप्तम स्थान में मङ्गल हो उसके पिता के जीने में सन्देह है ॥२॥

चतुर्थ स्थान में पाप ग्रह होने से माता का नाश होता है, दशम स्थान में पाप ग्रह होने से पिता का नाश होता है। सप्तम स्थान में पाप ग्रह होने से माता पिता दोनों का नाश होता है ॥३॥

जब बारहवें अथवा छठे घर में क्रूर ग्रह स्थित हो तो माता को भय

होता है, परन्तु जब चतुर्थ अथवा दशम स्थान में पाप ग्रह हो तो पिता को भय होता है ॥ ४ ॥

यदि सप्तम स्थान में सूर्य हो, चाहे वह उच्च का हो चाहे नीच का हो, तो बालक अपने माता का शीघ्र नाश करता है इसमें सन्देह नहीं है ॥ ५ ॥

चन्द्रमा से ६, ७, ८ स्थानो में सम्पूर्ण पाप ग्रह होने से पिता, माता तथा बालक का नाश होता है ॥६॥

१२, ८, स्थानो मे पाप ग्रह हो और लग्नेश बलहीन हो तो बालक दुःखी होता है और माता का नाश करता है।

कोई आचार्य्य कहते हैं कि दूसरे और बारहवे स्थान में पाप ग्रह होने से माता का नाश होता है, चौथे और दसवें स्थान में पाप ग्रह होने से पिता का नाश होता है ॥७॥

दारहायोगाः

कामार्थपतिसम्बन्धिभुक्तौ परिणयं भवेत्।
शुक्रेन्दुलग्नतः कामनाथस्य च दशाथवा ॥१॥
पत्नीस्थानगतो राहुः पापयुग्मेन वीक्षितः।
पत्नीयोगस्तदा नस्याद् भूत्वापि म्रियतेऽचिरात् ॥२॥
षष्ठे च भवने भौमः सप्तमे राहुसम्भवः।
अष्टमे च यदा सौरि स्तस्य भार्या न जीवति ॥३॥
यदा शनिः सप्तमवेश्मसंस्थितः
सूर्येण दृष्टो रविणा युतोवा।
तस्यैव भार्या म्रियते च नूनं
सुखं च नाप्नोति तदा कलत्रात् ॥४॥
यदासप्तमे चान्तिमे लग्नगेहे स्थिता पापखेटाः सुतेक्षीणचन्द्रः।
तदा पुत्रभार्याविहीनस्य योगः।
यदाकन्यकालग्नगासप्तमार्किस्तदाकामिनीनाशमायातिनूनम् ५

पापग्रहे कर्मगतेऽतिनीचे वक्रान्विते पापखगैः प्रदृष्टे ।
नाशं कलत्रस्य वदन्ति नूनं मुनीश्वरास्तद्वदनेकशास्त्रैः ॥६॥
लाभेशे मदगृहगेऽथरन्ध्रयाते नो जीवेदिह वनिता नरस्य कापि॥
शुक्रज्ञौ द्यूने दारहीनः ॥७॥
पापा लग्नास्तान्त्यगाः सुतस्त्रीनाशकाः ।
द्यूनेऽङ्गेशे भार्याहीनो वा विरक्त ॥८॥
सप्तमे तु स्थिते शुक्रेऽतीव कामी भवेन्नर. ।
यत्र कुत्र स्थिते पाप युते स्त्रीमरणं भवेत् ॥६॥

(अर्थ)

जब सप्तमेश तथा द्वितीयेश की दशा का भोग हो तब विवाह होता है, अथवा शुक्र चन्द्रमा या लग्न से जो सप्तमेश हो उसकी दशा मे विवाह होता है ॥ १ ॥

जब सप्तम स्थान में राहु हो और दो पाप ग्रह उसको देखें तो विवाह का योग नही होता है । यदि विवाह हो भी जावे तो शीघ्र पत्नी की मृत्यु हो जाती है ॥२॥

जिसके छठे घर में मङ्गल हो, सातवे घर मे राहु हो और आठवें घर में शनि हो उसकी स्त्री नहीं जीती है ॥३॥

जिसके सातवें घर में शनि हो, सूर्य्य से दृष्ट अथवा युक्त हो, उसकी स्त्री मर जाती है और स्त्री का सुख उसे नहीं मिलता है ॥४॥

जिसके सातवें या बारहवें घरमें या लग्न में पाप ग्रह हों और पुत्र भाव में क्षीण चन्द्रमा हो वह स्त्रीपुत्ररहित होता है ।

जब लग्न में कन्या राशि हो, सातवां शनि हो तो स्त्री का नाश होता है ॥ ५ ॥

जब कर्म स्थान में पाप ग्रह अति नीच होकर बैठे और वह वक्री ग्रह से युक्त तथा पाप ग्रह से दृष्ट हो तो स्त्री का नाश होता है ॥६॥

जब लाभेश सातवें या आठवें घर में हो तो मनुष्य की कोई भी स्त्री नहीं जीती है॥ जब शुक्र और बुध सप्तम स्थान में हों तो मनुष्य स्त्री रहित होता है ॥ ७ ॥

जब लग्न, सप्तम और द्वादश स्थानों में पापग्रह हों तो पुत्र और स्त्री का नाश करते हैं। जब लग्नेश सप्तम स्थान में हो तो मनुष्य भार्य्या हीन अथवा विरक्त होता है ॥८॥

जब सप्तम स्थान में शुक्र हो तो मनुष्य अतिकामी होता है। पाप ग्रह युक्त शुक्र जिस किसी स्थान में भी स्थित हो तो स्त्री की मृत्यु होती है ॥९॥

भाग्यभावः

विहाय सर्वं गणकैर्विचिन्त्यं भाग्यालयं केवलमेव यत्नात् ।
आयुश्च माता च पिता च वंशो भाग्यान्विते नैव भवन्ति धन्याः ॥१॥
भाग्यादेव नृणां सिद्धिर्भाग्यादेव धनार्थतिः।
यशांसि भाग्यतो भाग्यविपर्यासाद्विपर्ययः ॥२॥
नवे क्रूरयुक्तःसपापोनर स्यात्ससौम्येभवेत्पुण्यशीलैश्च युक्तः ॥३॥
यदा भाग्यगेहं भवेत्क्रूरयुक्तं तदा भाग्यहीनं वदन्ति प्रवीणाः।
तथाभाग्यपो भाग्यगेहेनराणां त्रिकोणेधने केन्द्रकेवासुभाग्य. ॥४॥
यदाचन्द्रमानीचगोमानवानां तदाभाग्ययोगाचिनष्टाश्च सर्वे ॥५॥
यदा देवपूज्यो मृगे यस्यतिष्ठेत् तदा तस्य गेहे दरिद्रस्य वासः।
तथाभार्गवोनीचगोवायदास्यात्तदाभाग्यहीनंनरंतं वदन्ति ॥६॥
लग्नादिन्दोश्च नवमं भाग्यं बलवशाद्भवेत् ।
शुभपापारिमित्राख्यै ग्रंहैरेवं शुभाशुभे ॥७॥
उच्चादि पंचका वृद्धि (उच्च मूल त्रिकोण. स्वक्षं. मित्र. अधिमित्र)
रन्यस्माद्धानिरुच्यते (सम. शत्रु. अधिशत्रु. नीच) ॥८॥

स्वस्मिन्नन्यत्र विषये स्वदेशेतरदेशयोः ।
स्वेष्वन्येषु तु वर्गेषु ज्योतिर्विद्भिस्तु स्थितैः ॥६॥
भाग्यत्रिकोणोपगतैः शुभं स्याद्भाग्यंतु केन्द्रोपगतैः शुभैश्च ।
पापैस्तथास्यादशुभंचभाग्यंमित्रादिभि ःस्यान्नियमो विशिष्टात्।१०।
एवं भाग्यविपर्यासौ भावानां च वदेत्सदा ॥
लग्नेशेऽङ्के भाग्यवान् ॥११॥
भाग्याधिपश्चेद्यदि केन्द्रसंस्थश्चाद्ये वयस्येव सुखोदयःस्यात्।
त्रिकोणगः स्वोच्चगतोऽथवा चेन्मध्ये वयस्येव फलप्रदःस्यात्॥
भाग्याधिनाथः स्वगृहेऽथ मित्रगृहेऽथवास्याद्वयसोन्त्यभागे ।१२।
क्रूरा धर्मे धर्महीनं कर्कशं चपलं तथा ।
सौम्याः कुर्वन्ति भाग्याढ्यं दयालुं प्रियभाषिणम् ॥१३॥
भाग्याधिनाथोऽपिच भाग्यकर्ता शुक्रोऽपि पापैः सहचेत्त्रिपुस्यात्।
षडादिभावेषुचभाग्यहीनंकेन्द्रत्रिकोणायगतोऽतिभाग्यम् ॥१४।

(अर्थ)

ज्योतिषी को चाहिये कि सब बातों को छोड कर केवल भाग्य स्थान का विचार यत्नपूर्वक करे, क्योंकि भाग्यवान् पुत्र के होने से आयु, माता पिता और वंश धन्य होते हैं ॥१॥

मनुष्यों की सिद्धि भाग्य ही से होती है, धन की प्राप्ति भाग्य ही से होती है, यश भी भाग्य ही से मिलता है। भाग्य विपरीत होने से सब बातें विपरीत होती हैं ॥२॥

नवें स्थान में क्रूर ग्रह होने से मनुष्य पापी होता है, परन्तु सौम्य ग्रह होने से धर्मात्मा होता है ॥३॥

जब भाग्य स्थान क्रूर ग्रह से युक्त हो तो मनुष्य भाग्य हीन होता है। जब भाग्य स्थान, त्रिकोण, धनस्थान, अथवा केन्द्र में भाग्येश हो तो मनुष्य बडा भाग्यवान् होता है ॥४॥

जब मनुष्यों के जन्म समय में चन्द्रमा नीच का हो तो सब भाग्य योगों का नाश हो जाता है ॥५॥

जिसके जन्म समय में मकर का बृहस्पति हो उसके घर में दारिद्रय का वास होता है। ऐसे ही जन्म समय में शुक्र नीच का हो तब भी मनुष्य भाग्यहीन होता है ॥६॥

लग्न अथवा चन्द्रमा से नवम स्थान भाग्य का स्थान होता है। शुभ ग्रह, पापग्रह, शत्रु ग्रह अथवा मित्र ग्रह होने से शुभ अथवा अशुभ फल कहना चाहिये ॥७॥

उच्च, मूल त्रिकोण, स्वक्षेत्री, मित्र, अधिमित्र ग्रह होने से भाग्य की वृद्धि होती है। सम, शत्रु, अधिशत्रु अथवा नीच ग्रह होने से भाग्य की हानि होती है ॥८॥

षड्वर्ग का विचार करके इस तरह से फल कहना चाहियेः—अपने देश में, परदेश में, अपने देश में, परदेश में, अपने देश में, परदेश में भाग्य की वृद्धि होती है ॥९॥

जब भाग्य भाव त्रिकोण, अथवा केन्द्र में शुभ ग्रह हों तो मनुष्य भाग्यवान् होता है, परन्तु जब उन स्थानों में पाप ग्रह हों तो अशुभ फल होता है। मित्र आदि ग्रह होने से वैसा ही फल कहना चाहिये ॥१०॥

इसी प्रकार से भाग्य का विपर्यास भी जानना चाहिये।

जब लग्नेश भाग्य स्थान में हो तो मनुष्य भाग्यवान् होता है ॥११॥

जब भाग्येश केन्द्र में हो तो बाल्यावस्था में सुख मिलता है, जब त्रिकोण में हो अथवा उच्च का हो तो युवावस्था में सुख मिलता है। जब भाग्येश अपने घर में अथवा मित्र के घर में हो तो वृद्धावस्था में सुख मिलता है ॥१२॥

जब धर्म स्थान में क्रूर ग्रह हों तो मनुष्य धर्महीन, कठोर और चपल होता है।

जब भाग्य स्थान में सौम्य ग्रह हों तो मनुष्य भाग्यवान्, दयालु और मीठा बोलने वाला होता है ॥१३॥

जब भाग्येश अथवा शुक्र ६, ८, १२ स्थानों मे हों तो मनुष्य भाग्य हीन होता है। परन्तु जब केन्द्र अथवा त्रिकोण में हो तो मनुष्य भाग्यवान् होता है ॥ १४ ॥

लाभविचारः

शीतांशुवित्तेश्वरलग्ननाथाः परस्परं सयुतवीक्षितावा ।
धनत्रिकोणोदयगा यदा स्युस्तदार्थलाभं प्रवदेन्नराणाम् ॥१॥
लग्नलाभपती लग्ने लाभे वा लग्नलाभपौ ।
लग्ने लाभाधिपो वापि लाभे लग्नाधिपो भवेत् ॥२॥
एकोऽपि हि यदा योगस्तदा लाभश्च निश्चितम् ।
चन्द्र योगे विशेषेण ॥३॥
लग्नलाभपयोर्दृष्टि र्लाभे लाभकरी मता ।
लाभः सर्वखगैर्दृष्टो लाभः पूर्णो भवेत्तदा ॥४॥
चरलग्नेशुभैर्युक्ते लाभे चन्द्रे वलान्विते ।
त्रिकोणकेन्द्रगैः सौम्यै र्लाभो भवति तत्क्षणात् ॥५॥
केन्द्रगो यदि लग्नेशः शुभदृष्टयुतोऽपिवा ।
लग्नपो वा त्रिकोणस्थ श्चन्द्रोऽङ्के क्षेमकृत्तदा ॥६॥
चरे दूरं विजानीयात्स्थिरे लाभ· स्वमन्दिरे ।
द्विस्वभावे वहिर्लाभो ग्रहयोगवशाद्भवेत् ॥७॥

(अर्थ)

जब चन्द्रमा, धनेश और लग्नेश परस्पर युक्त हों अथवा एक दूसरे को देखते हों और वे धनस्थान, त्रिकोण तथा लग्न में बैठे हों तो मनुष्यों को धन का लाभ होता है ॥ १ ॥

लग्नेश और लाभेश लग्न मे हो, अथवा लग्नेश और लाभेश लाभ स्थान में हों, अथवा लाभेश लग्न में हो और लग्नेश लाभ में हो ॥ २ ॥

पूर्वोक्त योगों में से जब एक भी योग हो तो निश्चय से लाभ होता है। यदि चन्द्रमा का योग हो तो विशेष लाभ होता है ॥ ३ ॥

लग्नेश और लाभेश की दृष्टि लाभ स्थान में हो तो लाभ होता है। जब लाभ स्थान को सब ग्रह देखें तो पूर्ण लाभ होता है ॥४॥

जब चर लग्न हो और शुभ ग्रहों से युक्त हो, तथा लाभ स्थान में चन्द्रमा बलवान् होकर बैठे और त्रिकोण तथा केन्द्र में सौम्य ग्रह हों तो उसी क्षण से लाभ होता है ॥५॥

जब लग्नेश केन्द्र में हो अथवा शुभ ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त हो, अथवा लग्नेश त्रिकोण में हो, चन्द्रमा भाग्य स्थान में हो तो शुभ होता है ॥६॥

चर लग्न होने से दूर देश में लाभ होता है। स्थिर लग्न होने से अपने घर ही में लाभ होता है। द्विस्वभाव लग्न होने से घर के बाहर लाभ होता है। जैसा योग हो उसके अनुसार फल कहना चाहिये ॥७॥

(७) उच्चादिफलप्रकरणम्

जन्मलग्नफलम्

मेषेत्वगम्यागमनप्रियश्च त्वभक्ष्यभक्षो वृषभे सुशील ।
देवेशदेवालयधर्मकारी युग्मे विरक्तोऽपि धनैर्विहीनः ॥१॥
चान्द्रे च तीव्रं प्रकरोति पापं परस्वहर्तापि च पूर्तकारी ।
सिंहे तु देवस्य विघातकारी पाथोनके धर्मरतिः सुकृत्यः ॥२॥
जूके परेषां धनदश्च पूर्तं करोति चापे च तु वृश्चिकेतु ।
परस्वहर्ता परदारसक्तो मृगेऽपि चैवं घटभे कृतज्ञ ॥
यज्ञस्य कर्ता झषभे तथैव पूर्तादिकारी बहुयोजकः स्यात् ॥३॥

(अर्थ)

मेष लग्न में जन्म होने से मनुष्य अगम्यागमन करता है और अभक्ष्य भक्षण करता है। वृष लग्न में अच्छे स्वभाव वाला, देवताओं को पूजने वाला,

मन्दिर बनाने वाला और धर्म्म करने वाला होता है । मिथुन लग्न में विरक्त और धन हीन होता है ॥१॥

कर्क लग्न में बडा पापी, पराया धन हरने वाला और तालाव आदि बनाने वाला होता है । सिंह लग्न में देवताओं के कार्य्य में विघ्न करने वाला होता है । कन्या लग्न में धर्म में प्रीति रखने वाला और अच्छा कर्म करने वाला होता है ॥२॥

तुला लग्न मे औरों को धन देने वाला होता है । धन लग्न में तालाव आदि बनाने वाला होता है । वृश्चिक लग्न मे पराया धन हरने वाला और पराई स्त्री में आसक्त होता है । मकर लग्न में भी यही फल होता है । कुम्भ लग्न मे कृतघ्न अर्थात् किये हुए उपकार को मानने वाला होता है । मीन लग्न मे यज्ञ करने वाला, तालाव आदि बनाने वाला और बहुत आद-मियो को नौकर रखने वाला होता है ॥३॥

उच्चादित्रयफलम्

त्रिभिः स्वस्थै र्भवेन्मन्त्री त्रिभिरुच्चैर्नराधिपः ।
त्रिभिर्नीचैर्भवेद्दास स्त्रिभिरस्तंगतैर्जडः ॥

(अर्थ)

जब ३ ग्रह अपने घर के हों तो मनुष्य मन्त्री होता है । जब ३ ग्रह उच्च के हों तो राजा होता है । जब ३ ग्रह नीच के हो तो दास होता है । जब ३ ग्रह अस्त के हों तो जड़ होता है ।

उच्च मित्र शत्रु नीचस्थ फलानि

जन यति नृप मेकोऽप्युच्चगो मित्रदृष्टः
प्रचुरधनसमेतं मित्रयोगाच्च सिद्धम् ।
विवसुविसुखमूढव्याधिता बन्धुतप्ता
वधदुरितसमेताः शत्रुनिम्नर्क्षगेषु ॥

(अर्थ)

यदि एक भी ग्रह उच्च का हो तो मनुष्य राजा होता है । मित्र से दृष्ट हो

तो बडा धनवान् होता है। मित्र के साथ ग्रह बैठा हो तो सिद्धि होती है। जब ग्रह शत्रु के घरमें अथवा नीच के हो तो मनुष्य धन हीन, सुख रहित, मूर्ख, रोग युक्त, बान्धवों से दुःखित तथा पाप युक्त होते हैं ॥

उच्च मित्रस्थो ग्रहः षष्ठादित्रयविनानदोषकृत्

दोषकृन्नच सर्वत्र स्वोच्चस्वर्क्षगतो ग्रहः।
षष्ठादित्रयसंस्थश्चेत्तद्विना दीपकृच्छुभः ॥

(अर्थ)

जब ग्रह अपने उच्च अथवा अपने घर का हो तो दोष करने वाला नहीं होता है। ६, ८, १२ स्थानों को छोड कर अन्यत्र शुभ होता है ॥

उच्चस्थ ग्रहफलम्

महाधनी महोग्रश्च तुङ्गस्थे भास्करे नरः।
सुभूषणो महाभोगी धनी तुङ्गे निशाकरे ॥१॥
उच्चे भौमे सुपुत्रश्च तेजस्वी गर्वितो नरः।
मेधावी दृढवाक्यश्च बलाढ्यश्च बुधे भवेत् ॥२॥
राजपूज्यश्च विख्यातो विद्वानार्यो गुरौ नरः।
स्वोच्चे शुक्रे विलासी च हास्यगीतादिसंयुतः ॥३॥
स्वोच्चगे रविपुत्रे च चक्रवर्ती धनी भवेत्।
राजलब्धनियोगश्च राहुः शनिस्समो मतः ॥४॥

(अर्थ)

जब सूर्य उच्च का हो तो मनुष्य बडा धनवान् और उग्रस्वभाव वाला होता है। जब चन्द्रमा उच्च का हो तो मनुष्य अच्छे आभूषण वाला, बडा भोग करने वाला तथा धनवान् होता है ॥१॥

जब मङ्गल उच्च का हो तो मनुष्य अच्छे पुत्र वाला, तेजस्वी और घमण्डी होता है। जब बुध उच्च का हो तो मनुष्य बुद्धिमान्, बलवान् और दृढ बातका वाला होता है ॥ २ ॥

जब बृहस्पति उच्चका हो तो मनुष्य राजपूज्य, प्रसिद्ध, पण्डित और श्रेष्ठ होता है। जब शुक्र उच्च का हो तो मनुष्य विलास वाला, बहुत हंसने वाला और गायन विद्या में प्रीति रखने वाला होता है ॥ ३ ॥

जब शनैश्चर अपने उच्च का हो तो मनुष्य चक्रवर्ती, धनवान् और बडे ओहदे में होता है। राहु का फल शनि के समान है ॥४॥

उच्चगत पापग्रह फलम्

पापैरुच्चगतैर्जाता न भवन्ति नराधिपाः।
किन्तु वित्तान्वितास्ते स्युः क्रोधनाः कलहप्रियाः॥

(अर्थ)

जब पाप ग्रह उच्च के हों तो मनुष्य राजा नहीं होते हैं, परन्तु वे धनवान्, बडे क्रोधी और कलह में प्रीति रखने वाले होते हैं॥

बलयुत सौम्य पाप ग्रह फलम्

आचार सत्य शुभ शौच युताः सुरूपा
स्तेजस्विनः स्मृतिविदो द्विजदेवभक्ताः।
सद्वस्त्र माल्य जल भूषण संप्रियाश्च
सौम्यग्रहैर्वलयुतैः पुरुषा भवन्ति ॥१॥
लुब्धाः कुकर्म निरता निजकार्यनिष्ठाः
पापान्विताः सकलहाश्च तमोऽभिभूताः।
क्रूराः शठा वधिरतामलिना. कृतघ्नाः
पापग्रहै र्वलयुतैः पिशुनाः कुरूपाः ॥२॥

(अर्थ)

जिन मनुष्यों के सौम्य ग्रह बलवान् हो वे सदाचार वाले, सत्यता तथा शौच से युक्त, रूपवान्, तेजस्वी, स्मृति जानने वाले, ब्राह्मण और देवताओं के भक्त, अच्छे वस्त्र, माला तथा आभूषण के प्रिय होते हैं॥१॥

जिन लोगों के पापग्रह बलवान् हो वे लोभी, कुकर्म करने वाले,

अपना काम सिद्ध करने वाले, पापी, झगडालू, तमोगुणी, क्रूर, शठ, किसी की न सुननेवाले, कृतघ्न, चुगलखोर और कुरूप होते हैं ॥ २ ॥

नीचस्थग्रहफलम्

नीचे सूर्ये भवेत्प्रेष्यो बन्धुभिर्वर्जितो नरः ।
चन्द्रे रोगी स्वल्पपुण्यो दुर्भगो नीचराशिगे ॥१॥
नीचे भौमे भवेन्नीच कुत्सितो व्यसनातुरः ।
बुधे क्षुद्रो बन्धुवैरी गुरौ दीनो मलान्वितः ॥२॥
शुक्रे नीचे नष्टदारः स्वतन्त्रः शीलवर्जितः ।
शनौ काणो दरिद्रश्च ॥३॥

(अर्थ)

जिस मनुष्य के जन्म समय में सूर्य नीच का हो वह दास होता है और बान्धवों से वर्जित होता है । चन्द्रमा नीच का हो तो मनुष्य रोगी, धर्महीन तथा दुर्भाग्य होता है ॥१॥

जब मङ्गल नीच का हो तो मनुष्य नीच, कुत्सित और व्यसनी होता है । जब बुध नीच का हो तो मनुष्य क्षुद्र बुद्धिवाला, बान्धवों से वैर करने वाला होता है । जब बृहस्पति नीच का हो तो मनुष्य दुःखी और मलिन होता है ॥२॥

जब शुक्र नीच का हो तो मनुष्य स्त्री रहित, स्वेच्छाचारी, और शील रहित होता है । जब शनि नीच का हो तो मनुष्य काना और दरिद्री होता है ॥३॥

स्वगृहस्थग्रहफलम्

स्वगृहस्थे रवौ लोके महोग्रश्च महाधनी ।
चन्द्रे धर्मरत साधुर्मनस्वी रूपवानपि ॥१॥
स्वगृहस्थे कुजे मल्लो धनवानपराजितः ।
बुधे नानाकलाभिज्ञ. पण्डितो धनवान्नरः ॥२॥

केन्द्रस्थ ग्रह फलम्

सूर्यकेन्द्रे राजसेवी वैश्यवृत्तिर्निशाकरे ।
शस्त्रवृत्तिः कुजे शूरो बुधे चाध्यापको भवेत् ॥१॥
स्वानुष्ठानरतो नित्यं दिव्यवुद्धिर्नरो गुरौ ।
शुक्रे विद्यार्थसंपन्नो नीचसेवी शनैश्चरे ॥२॥

(अर्थ)

जब सूर्य्य केन्द्र में हो तो मनुष्य राजा की सेवा करने वाला होता है। जब चन्द्रमा केन्द्र में हो तो मनुष्य वैश्य वृत्ति वाला होता है। जब मङ्गल केन्द्र में हो तो मनुष्य शस्त्र का व्यापार करने वाला और शूर होता है। जब बुध केन्द्र में हो तो मनुष्य अध्यापक अर्थात् पढ़ाने वाला होता है ॥१॥

जब बृहस्पति केन्द्र में हो तो मनुष्य अपने अनुष्ठान में तत्पर और दिव्य बुद्धि वाला होता है। जब शुक्र केन्द्र में हो तो मनुष्य विद्या और धन से युक्त होता है। जब शनैश्चर केन्द्र में हो तो मनुष्य नीच की सेवा करने वाला होता है ॥ २ ॥

केन्द्रस्थपापग्रहफल विशेषेण

केन्द्रस्थिता जन्मनि यस्य कस्य पापाश्च सर्वे विफलप्रदाः स्युः ।
कुर्वन्ति दारिद्र्य मनेकदुःखं श्वासक्षयप्लीहगुदोदरार्त्तिम् ॥१॥
दुःखी मूढो लोकविद्वेषकारी काणः पङ्गुर्निर्धनो मानहीनः ।
अल्पायुः स्यात्केन्द्रगाः पापखेटा ब्रह्मद्वेषी चापकीर्तिश्च सर्वे ॥२॥
लग्ने माने सप्तमे चाथ बन्धौ पापाः खेटा जन्मकालेतु सर्वे ।
तिष्ठन्त्येते स्वल्पमायुः प्रमाणं तेषामेको लग्नपो वा यदि स्यात् ॥३॥

(अर्थ)

जिस मनुष्य के केन्द्र में पाप ग्रह हों वे सब खराब फल देने वाले होते हैं। दारिद्र्य, अनेक प्रकार का दुःख, श्वास, क्षय, खांसी, गुदा और उदर में रोग करते हैं ॥ १ ॥

जब केन्द्र में पाप ग्रह हों तो मनुष्य दुःखी, मूर्ख, लोगों से झगडा करने वाला, काना, लूला, निर्धन, मानहीन, और अल्पायु होता है। यदि सब पाप ग्रह केन्द्र में हों तो मनुष्य ब्रह्मद्वेषी और अपयश वाला होता है ॥२॥

जब जन्म काल में सब पाप ग्रह लग्न, दशम, सप्तम, चतुर्थ स्थानों में स्थित हों तो आयु कम होती है, चाहे उनमें से एक लग्नेश भी क्यों न हो ॥ ३ ॥

सूचना।

जैसे ही उच्च से सप्तम नीच होता है और उसका फल अशुभ होता है ऐसे ही अपने घर से सप्तम स्थान को अंग्रेजी ज्योतिषी "हानि कारक" स्थान कहते हैं और उसका फल भी अशुभ कहते हैं। इसके मूल वचन का पता नहीं लगा है ॥

(८) पुरुष जातक प्रकरणम्

पुरुष जातकम्

लग्नस्थितोदिनपतिः कुरुतेऽङ्गपीडां
पृथ्वीसुतो वितनुते रुधिरप्रकोपम्।
छायासुतः प्रकुरुते बहुदुःखभाजं
जीवेन्दुभार्गवबुधा सुखकान्तिदाः स्युः ॥ १ ॥
दुःखावहा धनविनाशकराः प्रदिष्टा
वित्ते स्थिता रविशनैश्चरभूमिपुत्राः।
चन्द्रो बुधः सुरगुरुर्भृगुनन्दनो वा
नानाविधं धनचयं कुरुते धनस्थः ॥२॥
भानुः करोति निरुजं रजनीकरोऽपि
क्लीवां युतं शनिसुतः प्रचुरप्रकोपम्।

ऋद्धिं बुधः सुधिषणं सुविनीतवेषं
स्त्रीणां प्रियं गुरुरवी कविजस्तृतीये ॥ ३ ॥
आदित्यभौमशनयः सुखवर्जिताङ्गं
कुर्वन्ति जन्मनि नरं सुचिरं चतुर्थे ।
सोमो बुधः सुरगुरुर्भृगुनन्दनो वा
सौख्यान्वितं च नृपकर्मरतप्रधानम् ॥ ४ ॥
पुत्रे रविः प्रचुरकोपयुतं बुधश्च
स्वल्पात्मजं शनिधरातनुजावपुत्रम् ।
शुक्रेन्दुदेवगुरवः सुतधामसंस्थाः
कुर्वन्ति पुत्रबहुलं सुखिनं सुरूपम् ॥ ५ ॥
मार्तण्डभूमितनयौ हतशत्रुपक्षं
पङ्गुर्नरं रिपुगृहेष्वतिपूजनीयम् ।
काव्येन्दुजौ मतिविहीन मनल्परोगं
जीवः करोति विकलं मरणं शशाङ्कः ॥६॥
तिग्मांशुभैामरविजाः किल सप्तमस्था
जायां कुकर्मनिरतां तनुसन्ततिं च ।
जीवेन्दुभार्गवबुधा बहुपुत्रयुक्तां
रूपान्वितां जनमनोहररूपशीलाम् ॥७॥
सर्वे ग्रहा दिनकरप्रमुखा नितान्तं
मृत्युस्थिता वितनुते किल दुष्टबुद्धिम् ।
शस्त्राभिघातपरिपीडितगात्रयष्टिं
सौख्यैर्विहीनमतिरोगगणैरुपेतम् ॥ ८ ॥
(सूर्यादिनवखेटाः सुमृत्युस्थाने यदा तदा ।
विरुद्धं फलमेवस्या न्नात्र कार्या विचारणा ॥)

धर्मस्थिता रविशनैश्चरभूमिपुत्रा
कुर्वन्ति धर्मरहितं विमतिं कुशीलम्।
चन्द्रो बुधो भृगुसुतः सुरराजमन्त्री
धर्मक्रियासु निरतं कुरुते मनुष्यम् ॥९॥
आदित्यभौमशनयः किल कर्मसंस्थाः
कुर्युर्नरं बहुकुकर्मरतं कुपुत्रम्।
चन्द्रः सुकीर्तिमुशना बहुवित्तयुक्तं
रूपान्वितं बुधगुरू शुभकर्मभाजम् ॥ १० ॥
लाभस्थितो दिनकरो नृपलाभयुक्तं
तारापतिर्बहुधनं क्षितिज क्षितीशम्।
सौम्यो विवेकसुभगं च धनायुपीज्यः
शुक्रः करोति सगुणं रविजः सुकीर्तिम् ॥ ११ ॥
सूर्यः करोति पुरुषं व्ययगो विशीलं
काणं शशी क्षितिसुतो बहुपापभाजम्।
चन्द्राङ्गजोगतधनं धिषण कृशाङ्गं
शुक्रो बहुव्ययकरं रविजः सुतीव्रम् ॥ १२ ॥

(अर्थ)

जब सूर्य लग्न में हो तो शरीर में पीड़ा होती है। मङ्गल हो तो रुधिर का प्रकोप होता है। शनि हो तो बहुत दुःख मिलता है। बृहस्पति, चन्द्रमा, शुक्र अथवा बुध हों तो सुख और कान्ति को देते हैं ॥१॥

जब धनस्थान में सूर्य, शनि अथवा मङ्गल हों तो दुःख देते हैं और धन का नाश करते हैं। परन्तु जब चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति अथवा शुक्र हों तो अनेक प्रकार का धन सञ्चय कराते हैं ॥ २ ॥

जब तृतीय स्थान में सूर्य हो तो मनुष्य रोग रहित होता है। चन्द्रमा हो तो मनुष्य कीर्तिमान् होता है। मङ्गल हो तो मनुष्य बड़ा क्रोधी होता है।

बुध हो तो मनुष्य बडी समृद्धि वाला होता है। जब बृहस्पति हो तो मनुष्य अच्छी बुद्धि वाला होता है। जब सूर्य हो तो मनुष्य नम्र स्वभाव वाला होता है। जब शुक्र हो तो मनुष्य स्त्रियों का प्रिय होता है ॥३॥

जब चतुर्थ स्थान में सूर्य्य, मङ्गल अथवा शनि हों तो शरीर में सुख नहीं मिलता है। जब चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति अथवा शुक्र हों तो मनुष्य सुख से युक्त और राजकार्य्य मे प्रधान होता है ॥४॥

जब पञ्चम स्थान में सूर्य्य, हो तो मनुष्म बड़ा क्रोधी होता है। बुध हो तो पुत्र कम होते हैं। शनि अथवा मङ्गल हों तो मनुष्य पुत्रहीन होता है। जब शुक्र, चन्द्रमा अथवा बृहस्पति हों तो बहुत पुत्र होते हैं और मनुष्य सुखी और रूपवान् होता है ॥ ५ ॥

जब छठे घर में सूर्य्य अथवा मङ्गल हो तो शत्रु का नाश होता है। यदि शनि हो तो शत्रु के घर में मनुष्य की बडी पूजा होती है। यदि शुक्र और बुध हों तो मनुष्य बुद्धिहीन और बडा रोगी होता है। यदि बृहस्पति हो तो मनुष्य का चित्त विकल रहता है। चन्द्रमा हो तो मृत्यु करता है ॥६॥

जब सप्तम स्थान में सूर्य्य, मङ्गल अथवा शनि हो तो मनुष्य की स्त्री कुकर्म में तत्पर रहती है और उसकी सन्तान कम होती है। जब बृहस्पति, चन्द्रमा, शुक्र अथवा बुध हो तो स्त्री के बहुत पुत्र होते हैं तथा स्त्री रूपवती और अच्छे स्वभाव वाली होती है ॥७॥

सूर्य्य आदि ग्रह जब अष्टम स्थान मे हों तो मनुष्य दुष्ट बुद्धि, सुख रहित, तथा अति रोगी होता है और उसके शरीर में शस्त्र की चोट के घाव होते हैं ॥८॥

(जब मृत्यु स्थान में सूर्य्य आदि ग्रह हों तो विरुद्ध फल होता है इसमें सन्देह नहीं है ॥)

जब धर्म्म स्थान में सूर्य्य, शनि अथवा मङ्गल हो तो मनुष्य धर्महीन,

कुमति और कुशील होता है, परन्तु जब चन्द्रमा, बुध, शुक्र अथवा बृहस्पति हो तो मनुष्य धर्म्म के कार्य्यों में तत्पर रहता है ॥९॥

जब कर्म स्थान में सूर्य्य, मङ्गल अथवा शनि हो तो मनुष्य बहुत कुकर्मों में प्रीति रखने वाला होता है और उसके पुत्र कुत्सित होते हैं। जब चन्द्रमा हो तो अच्छे यश वाला होता है। शुक्र हो तो बहुत धन से युक्त होता है। बुध हो तो रूपवान् होता है। बृहस्पति हों तो शुभ कर्म करने वाला होता है ॥१०॥

जब लाभ स्थान में सूर्य्य हो तो राजा से लाभ होता है। चन्द्रमा हो तो मनुष्य बड़ा धनी होता है। मङ्गल हो तो पृथ्वी का स्वामी होता है। बुध हो तो बड़ा विवेकी होता है। बृहस्पति हो तो धनवान् तथा दीर्घायु होता है। शुक्र हो तो गुणवान् होता है। शनि हो तो बड़ी कीर्ति वाला होता है ॥११॥

जब व्यय स्थान में सूर्य्य हो तो मनुष्य सदाचार से रहित होता है। चन्द्रमा हो तो काना होता है। मङ्गल हो तो बड़ा पापी होता है। बुध हो तो धन रहित होता है। बृहस्पति हो तो दुबला पतला होता है। शुक्र हो तो बहुत खर्च करने वाला होता है। शनि हो तो बड़ा तीव्र स्वभाव होता है ॥१२॥

राहुफलम्.

जन्मस्थो भूरिदुःखं धनभवनगतो वित्तनाशङ्करोति
दुश्चिक्ये भूपपूजां सुहृदि विनयं भ्रातृमित्रादिहानिम्।
पुत्रभ्रंशं सुतस्थो रिपुभवनगतः शत्रुसन्तापहानिं
जायास्थः स्त्रीविनाशं निधनभवनगतः स्वेच्छयाभूपपूजाम् ॥१॥
धर्मस्थोधर्मनाशं दशमभवनगतः पापबुद्धिं ददाति
लाभस्थानेऽतिलाभं भवति सुयुवतीवस्तुलक्ष्म्यादिभोगम्।
रूपाढ्यं द्वादशस्थः सुखमतितरां नेत्ररोगंच राहुः ॥२॥

(अर्थ)

जब राहु लग्न में हो तो बहुत दुःख देता है। जब धन स्थान में हो तो धन का नाश करता है। जब तीसरे स्थान में हो तो राजा के यहां

आदर होता है। चतुर्थ स्थान में हो तो भ्राता और मित्र आदि की हानि होती है। पञ्चम स्थान में हो तो सन्तान का नाश करता है। छठे स्थान में हो तो शत्रु का नाश होता है। सप्तम स्थान में हो तो स्त्री का नाश करता है। अष्टम स्थान मे हो तो राजा से आदर होता है। धर्म स्थान में हो तो धर्म का नाश करता है। दशम स्थान में हो तो पाप बुद्धि होती है। लाभ स्थान मे हो तो बहुत लाभ होता है तथा स्त्री, लक्ष्मी आदि का भोग मिलता है। व्यय स्थान में हो तो मनुष्य रुपवान् होता है और उसको अत्यन्त सुख मिलता है परन्तु नेत्र रोग होता है॥

राहुकेतुफलविचारणे रीतिः

यद्यद्भावगतौवापि यद्यद्भावेशसंयुतौ।
तत्तत्फलानि प्रबलौ प्रदिशेतां तमोग्रहौ॥

(अर्थ)

राहु और केतु जिस स्थान में हों अथवा जिस भाव के स्वामी के साथ बैठे हों उन स्थानों के फलो को वृद्धि करते हैं॥

राहु केत्वोः किञ्चिच्छुभफलम्

राहु र्दुष्टः परं किञ्चि दुदास्ते मित्रसद्मनि।
कन्यामिथुनयोः किञ्चिद्विधत्ते शुभमप्ययम्॥

(अर्थ)

राहु दुष्ट फल को देता है परन्तु जब मित्र के घर मे हो तो उसका खराब फल कुछ कम हो जाता है। कन्या तथा मिथुन में स्थित होने से कुछ शुभ फल भी देता है॥

तन्वादिस्थरव्यादीना फलानि.

(१) सूर्यस्य.

तनौ रविः शिरोरोगं बन्धूनांच विरोधताम्।
द्वितीये धनहानिं च तृतीये मित्रवर्द्धनम्॥१॥

धनलाभं सुखे सौख्यं शत्रुभिश्च समागमम् ।
पञ्चमे पुत्रलाभंच कार्यसिद्धिंच सन्मतिम् ॥२॥
षष्ठे धनंजयं कुर्यात्सप्तमे स्त्रीविरोधनत् ।
अष्टमे व्याधिहानीच नवमे मित्रबन्धनम् ॥३॥
भाग्यहानिंच दशमे धनलाभं सुखं जयम् ।
एकादशे धनानांच सिद्धिं मित्रसमागमम् ॥४॥
द्वादशे धनहानिंच जाड्यं कुक्षिरुजं तथा ।

(२) चन्द्रस्य.

चन्द्रे लग्नेच कलहं द्वितीये धनयोजनम् ।
तृतीये भ्रातृभिर्लाभं धनवस्त्रादिसंग्रहम् ः
चतुर्थे धनवस्त्रादि वाहनादिसुसंयुतम् ॥ १ ॥
तीक्ष्णे (५) धनी सुतयुतः परिपूर्णसम्पत्
षष्ठेतु रोगसहितः कुमतिश्च कामे ।
विद्याधनक्षितिसुखादि समन्वितश्च
मृत्यौ च मृत्युविषयः खलु कुक्षिरोगी ॥२॥
स्त्रीस्वर्णदासायति रेव धर्मे
माने सुचारित्रगुणो धनी च ।
लाभेतु चैतत्सकलं व्ययेतु
धनस्य रिष्फं कुरुते शशी तु ॥३॥

(३) भौमस्य.

कुजे लग्ने तु चापल्यात्क्षतं स्वे धननाशनम् ।
विक्रमे भ्रातृमरणं धनलाभ सुखं यशः ॥१॥
चतुर्थे बन्धुमरणं शत्रुवृद्धिर्धनव्ययम् ।
पञ्चमे पुत्रहानिं च धनायतिनुतौ यशः ॥२॥
षष्ठे रिपुसमृद्धेश्च जयं बन्धुसमागमम् ॥
अर्थवृद्धिं स्त्रियां दारमरणं नीचसेवनम् ।
नीचस्त्रीसङ्गमो मृत्यौ धननाशं पराभवम् ॥३॥

पराभवमनर्थं च धर्मे पापरुचिक्रिया ।
धनव्ययं च दशमे धनलाभं कुकर्म च ॥४॥
लाभे धनं सुखं वस्त्रं स्वर्णक्षेत्रादिसंग्रहम् ।
व्यये नेत्ररुजं भ्रातृनाशं च कुरुते कुजः ॥५॥

(४) बुधस्य.

बुध. षष्ठेऽरिवृद्धिं च युद्धे सति पराजयम् ।
मृतौ बन्धुविहीनत्वं बन्धनं व्ययभे व्ययम् ॥
भावेषु फलवृद्धिं च परेषु कुरुते तथा ॥१॥

(५) गुरोः (६) शुक्रस्य.

गुरुशुक्रौ तृतीये तु शत्रुवृद्धिं धनक्षयम् ।
षष्ठे पराजयं व्याधिं मष्टमे बन्धनं तथा ॥१॥
रिःफे चौरहृतस्वंतु नेत्ररोगं पराजयम् ।
सप्तमे च चतुर्थे च सैनापत्यधनायतिः ॥२॥
सर्वसम्पत्समृद्धिं च नवमे राजसम्पदम् ।
पूर्वोक्तफलसंयोगमन्येष्वपि समं भवेत् ॥३॥

(७) शनेः

कुजवद्रविवन्मन्दः ।

(अथ)

(१) सूर्य का फल

जब सूर्य्य लग्न में हो तो सिर में रोग होते हैं और बान्धवों से विरोध होता है । जब दूसरे स्थान में हो तो धन की हानि करता है । तीसरे में मित्रों की वृद्धि और धन का लाभ होता है । सुख स्थान में हो तो दुःख मिलता है और शत्रुओं से समागम होता है । पञ्चम स्थान में पुत्र लाभ होता है, कार्य्य की सिद्धि होती है और सुबुद्धि होती है । छठे स्थान में धन का लाभ होता है । सप्तम में स्त्री से विरोध होता है । अष्टम स्थान में व्याधि

और हानि होते हैं। नवम स्थान में मित्र का बन्धन होता है तथा भाग्यहानि होती है। दशम स्थान में धन का लाभ, सुख और जय होते हैं। एकादश स्थान में धन की प्राप्ति होती है और मित्र से सङ्गम होता है। द्वादश स्थान में धन की हानि, मूर्खता और कुक्षि रोग होते हैं॥

(२) चन्द्रमा का फल

जब चन्द्रमा लग्न में हो तो झगडा होता है। दूसरे स्थान में हो तो धन इकट्ठा होता है। तीसरे स्थान में हो तो भाइयों से लाभ होता है तथा धन, वस्त्र आदि का संग्रह भी होता है। चतुर्थ स्थान में हो तो मनुष्य धन, वस्त्र, वाहन आदि से युक्त होता है। पाचवें स्थान में हो तो मनुष्य धनवान्, पुत्रवान् और सम्पत्ति से परिपूर्ण होता है। छठे में हो तो मनुष्य रोगी और कुबुद्धि वाला होता है। सप्तम स्थान में हो तो मनुष्य विद्यावान् तथा धनी होता है, भूमि और सुख से युक्त होता है। अष्टम स्थान में हो तो मृत्यु करता है तथा कुक्षि रोग होता है। धर्म स्थान में हो तो स्त्री, सुवर्ण और दासों से परिपूर्ण होता है। दशम स्थान में हो तो उसका अच्छा चरित्र होता है और वह गुणवान् तथा धनवान् भी होता है। लाभ स्थान में हो तो पूर्वोक्त नवम दशम का फल होता है। व्यय स्थान में हो तो धन का व्यय कराता है॥

(३) मङ्गल का फल

जब मङ्गल लग्न में हो तो चञ्चलता से चोट लगने के कारण घाव होता है। दूसरे स्थान में हो तो धनका नाश होता है। तीसरे में हो तो भाई की मृत्यु, धन का लाभ, सुख तथा यश होते हैं। चौथे में हो तो बान्धवों की मृत्यु, शत्रुओं की वृद्धि और धन का व्यय होता है। पाचवें में पुत्र की हानि, धन की प्राप्ति और यश होते हैं। छठे में शत्रुओं का पराजय और बान्धवों से समागम होता है। सप्तम स्थान में हो तो धन की वृद्धि, स्त्री की मृत्यु और नीच मनुष्य की सेवा तथा नीच जाति की स्त्री से सङ्ग होता है। अष्टम स्थान में हो तो धन का नाश होता है और

पराभव भी होता है। नवम स्थान में हो तो पराभव तथा अनर्थ होते हैं, पाप करने में रुचि होती है, और धन का व्यय होता है। दशम स्थान में धन का लाभ होता है और कुत्सित कर्म करने में प्रवृत्ति होती है। लाभ स्थान में हो तो धन, सुख, वस्त्र, सुवर्ण, क्षेत्र आदि का सङ्ग्रह होता है। बारहवें स्थान में हो तो नेत्र रोग होता है और भाई का नाश होता है॥

(४) बुध का फल

छठे स्थान में बुध हो तो शत्रुओं की वृद्धि करता है और युद्ध में भी पराजय होता है। अष्टम स्थान में हो तो मनुष्य बन्धु हीन होता है और बन्धन आदि भी होते हैं। व्यय स्थान में हो तो व्यय कराता है। शेष स्थानों में जिस स्थान में हो उस स्थान के फल की वृद्धि करता है॥

(५) (६) बृहस्पति तथा शुक्र का फल

जब बृहस्पति अथवा शुक्र तीसरे स्थान में हों तो शत्रुओं की वृद्धि होती है और धन का नाश होता है। छठे स्थान में हों तो पराजय और रोग होते हैं। अष्टम स्थान में बन्धन होता है। द्वादश स्थान में धन की चोरी, नेत्र रोग और पराजय होते हैं। सप्तम स्थान और चतुर्थ स्थान में हों तो मनुष्य सेनापति और धनी होता है। जब नवम स्थान में हों तो सब प्रकार की समृद्धि होती है, और राजा के यहां सन्मान होता है। शेष स्थानों में भी पूर्वोक्त फल (अर्थात् नवम स्थान का फल) होता है॥

(७) शनैश्चर का फल

शनि का फल सूर्य्य और मङ्गल के पूर्वोक्त फल के समान जानना चाहिये॥

खान खनाना ज्योतिषम्.

भावफलानि.

(१) सूर्य का फल.

(१) दुबला। स्त्री सन्तान रहित। (तुला राशि का हो तो मानहीन। बिना विचारे काम करने वाला)

(२) गुस्सावर । बुद्धिहीन । कृपण । द्रव्यहीन । रोगी ।
(३) नामवर । किफायती । नीरोगी । धनाढ्य । स्त्री सुख ।
(४) सुखहीन । वेश्या भोग । शत्रु बहुत हों । पागल की तरह घूमे ।
(५) मूर्ख । थोड़े पुत्र हों । व्याधि युक्त । क्रोधी । धर्म हीन ।
(६) धनी । नीरोगी । शत्रु नाशी । नाना के घर से लाभ ।
(७) चिन्ता व्याकुल । कामी । स्त्री हीन ।
(८) दुर्बल । उद्यम रहित । विदेश मृति ।
(९) प्रसिद्ध । सुखी । दूसर के धन से शोभित । ननहाल से सुख नहीं ।
(१०) धनाढ्य । नामवर । (नीच का सूर्य हो तो पिता से सुख न मिले)।
(११) धनवान् । सुन्दर स्त्री । गायन विद्या में चतुर । सर्दार ।
(१२) वामनेत्र पीड़ा । बड़ा खर्च करने वाला । रोगी । शरारत करने वाला ।

(२) चन्द्रमा का फल

(१) धनवान् । रूपवान् । पुष्ट । कार्य सिद्धि । (नीच हो या शत्रु के साथ हो या शत्रु दृष्ट हो तो विपरीत फल) ।
(२) धनवान् । मिष्ट भाषी । (नीच हो तो विपरीत) ।
(३) बल सन्तोष युक्त ।
(४) दानी । दहदेदार । चित्त का मलिन । पंडित ।
(५) तेजस्वी । असावधान चित्त ।
(६) दुबला शरीर । कुरूपी । रोगी । हमेशा परेशान ।
(७) नीरोगी । धनवान् । सुन्दर । यशस्वी ।
(८) रोगी । क्रोधी । निर्दयी । विदेशभ्रमण ।
(९) तेजस्वी । धनी । ईश्वर भक्त ।
(१०) पिता तथा कुटुम्ब का सेवक । धनी । विद्वान् । शान्त प्रकृति ।
(११) धनवान् । रूपवान् । दाता । बुद्धिमान् । मिष्ट भाषी ।

(१२) नेत्र विकार । विरोधी । दुष्ट स्वभाव । दुष्कीर्ति । ज्यादा खर्च करने वाला ।

(३) मङ्गल का फल

(१) शत्रु अथवा मालिक से झगडा करने वाला । भारी रोग से पीड़ित । बेकार व दुःखी । विरोधी । दुर्बल । कुटुम्ब, स्त्री पुत्र से वियोग ।

(२) बे सुध । पुत्र, धन, स्त्री सुख से हीन । लडाई में शूर । चिन्ता युक्त । कुरूप । शक्ति हीन । निर्दयी । दुष्ट बुद्धि । हमेशा कर्जदार ।

(३) धनी । सहज रोग । त्रिमति ।

(४) दुःखी । सग्राम में धैर्यवान् । निर्धनी । मजबूत । निर्दयी । कर्जदार।

(५) थोडा बोलने वाला । निर्बुद्धि । पुत्र धन का सुख नहीं । वात कफ रोगी । बेमुरव्वत । क्रोधी । पेट का रोग ।

(६) शत्रु नाशी । रूपवान् । ऐबी । धन युक्त । गुण ग्राही । कुल पूज्य । माता के पक्ष में कुठार समान ।

(७) कामी न हो । सदा दुःखी । जाहिल । जुल्म करने वाला । सदा लडाई में व्यस्त । स्त्री न जीवे । यात्रा । स्त्री सुख न हो ।

(८) हितवादी । गुप्त रोग । स्त्री सुख नहीं । सदा चिन्ता युक्त । जौहरी । शरीर में घाव । बुद्धि हीन । दुबला । रुधिर विकार ।

(९) राज मान्य । परस्त्री रत । भाग्यवान् ।

(१०) धनी, गुणी । किफायत सार । ससार में मान्य । साहसी । दयावान् । सब पदार्थ घर में हों । दानी ।

(११) धनवान् । दयालु । विशेष कामी । पडित । सत्य भाषी ।

(१२) कठोर व कटु वचन भाषी । जालिम । क्रोधी । हमेशा परेशान् ।

(४) बुध का फल.

(१) रूपवान् । दयावान् । नीतिज्ञ । हिम्मत दार । दानी । पुत्र सुख ।

(२) मिष्ट भाषी । बुद्धिमान् । धनी । प्रीतियुक्त । नीतिज्ञ । नम्र ।

(३) शीलवान् । दयालु । धनी । मित्र युक्त । स्त्री प्रिय । प्रसन्न चित्त ।
(४) पुत्र हीन । पुष्ट शरीर । गीत प्रिय । दानी । मिष्ट भाषी । आलसी ।
(५) सुख युक्त । धनी । बुद्धिमान् । सन्तोषी । रूपवान् । हिम्मतदार ।
(६) सदा दुःखी । आलसी । दुष्ट स्वभाव । शत्रु युक्त ।
(७) धनी । सत्यवाक् । सुसाहिब । परोपकारी । स्वरूपवान् । बुद्धिमान । सुशील ।
(८) दीर्घायु । अभिमानी । राजा से लाभ । लोगों से वैर ।
(९) दाता । सत्य युक्त । प्रसन्न चित्त । धर्म में तत्पर । प्रसिद्ध । शुभ कर्म कारक ।
(१०) धनी । बड़ा आदमी । मिष्ट भाषी । दयावान् ।
(११) धनी । पुत्र सुख युक्त । समझदार । सर्दार । दिल का साफ ।
(१२) अशुद्ध । गुणवान् । नुकसान वाली बात करे । किसी की बात को न सहे । दया हीन । दुःखी । बेहूदा घूमने वाला ।

(५) बृहस्पति का फल

(१) बड़ा आदमी । खुश दिल । ईश्वर भक्त । दाता । सर्दार । तेजस्वी ।
(२) मिजाज में बुजुर्गी । धर्म में मति । सिद्धि प्राप्त । सुवर्ण और पुत्र युक्त । खूब सूरत । धनी ।
(३) गाफिल । कटु वचन वाला । कृपण । पराक्रमी । बहु जन पालक ।
(४) घोडा, धन, जरीदार कपड़ा, रथ, हाथी से युक्त । राजप्रिय । सम्पूर्ण सुख युक्त ।
(५) पंडित । पुत्र पौत्र सहित । धनी । चिन्ता युक्त ।
(६) आलसी । व्याधि युक्त । कटु वाक्य वाला । मातुल सौख्य हीन ।
(७) बड़ा पंडित । विनीत । सुखी । स्त्री सुख युक्त । चतुर ।
(८) दया रहित । परदेश वास । मूर्ख । रोगी । क्रोधी ।
(९) बड़ा आदमी । भाग्यवान् । रूपवान् । बहुप्रिय । सुकीर्ति । ईश्वर भक्त ।

(१०) पालकी, जवाहिर, हाथी, सुवस्त्र से युक्त। श्रेष्ठ।
(११) सन्तोषी। सुशरीर। धनी। विद्वान्। पराक्रमी। चतुर।
(१२) दरिद्री। कम बोलने वाला। वेवकूफ। निर्लज्ज। खराब बचन बोलने वाला। आलसी। बुरे कामों में खर्च करने वाला।

(६) शुक्र का फल.

(१) तेजस्वी। बुद्धिमान्। धनी। रूपवान्।
(२) मिष्ट भाषी। चतुर। दुशाला आदि वस्त्रों से युक्त।
(३) नेक। जोरावर। आलसी। भ्रातृ सहित। धन रहित।
(४) अल्पाश। प्रियम्वद। धनाढ्य। पंडित। नेक मिजाज।
(५) दाता। राज प्रिय। सुत धन धान्य युक्त।
(६) रोगी। मूर्ख। दया हीन। मित्र रहित।
(७) दयावान्। चतुर। कलाज्ञ। स्त्री चिन्ता युक्त।
(८) स्त्री धन सौख्य वर्जित। कटु वादी। संग्राम चित्त। अभिमानी।
(९) नेक काम करने वाला। रूपवान्। प्रसन्न चित्त। सभा करने वाला। मिजाज में दानापन।
(१०) धृष्ट। धनी। पितृ गुरु भक्त। विद्वान्। मन्त्री या बडा आदमी।
(११) धनी। तेजस्वी। सर्दार। शीलवान्।
(१२) बड़ा खर्च करने वाला। बदकार। दुष्ट बुद्धि। क्रोधी।

(७) शनि का फल.

(१) निर्बुद्धि। दुर्बल शरीर। दुष्ट स्वभाव। कुरूप। दया रहित। उलटी अकल।
(२) हमेशा खराब हाल। तंग हाथ। क्रोधी। बलहीन। परदेश गामी।
(३) बलवान्। यशस्वी। प्रसन्न चित्त। सभ्य। अनुचर वृन्द समेत।
(४) चिन्ता युक्त। वेहोश। परितप्त। बलहीन।

(५) निर्बुद्धि । चिन्ता युक्त । पुत्र सुख हीन । आलसी । मूर्ख । छोटा शरीर ।

(६) दानी । दु:खी । शत्रु नाशी । राज प्रिय ।

(७) बद चलन । कृश । कम बोलने वाला । निर्बुद्धि । पराधीन ।

(८) रोगी । आलसी । विश्वास घाती । कृपण । पापी । भीरु ।

(९) अपने जमाने में बड़ा आदमी । श्रीमान् । मिष्ट भाषी । सुखी । दयालु ।

(१०) राजा या मंत्री । सुकृती ।

(११) दयावान् । नेक । मिष्ट भाषी । धनी । सतोषी । शत्रु नाशी ।

(१२) तंग दस्त । बदफेल । निर्धन । आलसी ।

(८) (९) राहु केतु का फल.

(१) दु:खी । आलसी । कुरूप । स्वार्थ परायण । रोगी । मूर्ख ।

(२) कर्मच्युत । मतलबी । दु:खी । परदेश में धन युक्त ।

(३) बलवान् । यशस्वी । दाता । धनी ।

(४) सदा दु:खी । परदेश में भ्रमण । नादान (मूर्ख) । विवादकारी । सुखहीन । मित्र पक्ष विपक्ष हो जावे ।

(५) पुत्रसुख रहित । बेहोश । पीड़ा युक्त । मूर्ख ।

(६) म्लेच्छ राजा से द्रव्य प्राप्ति । अमीर दिल । शत्रु नाशी ।

(७) पागल की तरह घूमे । दूसरे को हानि पहुंचावे । क्रोधी । बदचलन । कलह कारक ।

(८) सदा मुसाफिर । बेदीन । रोगी । बदचलन । दरिद्री ।

(९) धनी । सुखी ।

(१०) बलवान् । शत्रु नाशी । धनी । चिन्ता युक्त ।

(११) कर्जदार । बेकार । कलह प्रिय ।

(१२) कलह प्रिय । बेकार । कर्ज मन्द । गरीब । दु:खी ॥

(९) स्त्रीजातकप्रकरणम्

भावफलानि

मूर्त्तौ करोति विधवां दिनकृत्कुजश्च
राहुर्विनष्टतनयां रविजो दरिद्राम् ।
शुक्रः शशाङ्कतनयश्च गुरुश्च साध्वी
मायुःक्षयं च कुरुतेऽत्र च शर्वरीशः ॥ १ ॥

कुर्वन्ति भास्करशनैश्चरराहुभौमा
दारिद्र्यदु खमतुलं नियतं द्वितीये ।
वित्तेश्वरीमविधवां गुरुशुक्रसौम्या
नारी प्रभूततनयां कुरुते शशांक· ॥ २ ॥

सूर्येन्दुभौमगुरुशुक्रबुधास्तृतीये
कुर्युः स्त्रियं बहुसुतां धनभागिनीं च ।
सत्यं दिवाकरसुतः कुरुते धनाढ्यां
लक्ष्मीं ददाति नियतं किल सैंहिकेयः ॥ ३ ॥

स्वल्पं पयोभवति सूर्यसुते चतुर्थे
दौर्भाग्यमुष्णकिरणः कुरुते शशी च ।
राहुर्विनष्टतनयां क्षितिजोऽल्पवीर्जा
सौख्यान्वितां भृगुसुरेज्यबुधाश्च कुर्युः ॥ ४ ॥

नष्टात्मजां रविकुजौ खलु पञ्चमस्थौ
चन्द्रात्मजो बहुसुतां गुरुभार्गवौ च ।
राहुर्ददाति मरणं रविजस्तु रोग
कन्याप्रसूतिनिरतां कुरुते शशांकः ॥ ५ ॥

षष्ठस्थिताः शनिदिवाकरराहुभौमा
जीवस्तथा बहुसुतां धनभागिनीञ्च ।

चन्द्रः करोति विधवा मुशना दरिद्रां
वेश्यां शशांकतनयः कलहप्रियांच ॥ ६ ॥
सौरारजीवबुधराहुरवीन्दुशुक्रा
दद्युः प्रसह्य मरणं खलु सप्तमस्थाः ।
वैधव्यबन्धनभयं क्षयवित्तनाशं
व्याधिप्रवासमरणं नियतं क्रमेण ॥ ७ ॥
स्थानेऽष्टमे गुरुबुधौ नियतं वियोगं
मृत्युं शशी भृगुसुतश्च तथैव राहुः ।
सूर्यः करोति विधवां धनिनीं कुजश्च
सूर्यात्मजो बहुसुतां पतिवल्लभां च ॥ ८ ॥
धर्मस्थिता भृगुदिवाकरभूमिपुत्र
जीवाः सुधर्मनिरतां शशिज सुभोगाम् ।
राहुश्च सूर्यतनयश्च करोति वन्ध्यां
नारीं प्रभूततनयां कुरुते शशांकः ॥ ९ ॥
राहुर्नभःस्थलगतो विधवां करोति
पापे परां दिनकरश्च शनैश्चरश्च ।
मृत्युं कुजोऽर्थरहितां कुटिलां च चन्द्रः
शेषा ग्रहा धनवती बहुवल्लभां च ॥ १० ॥
आये रविर्बहुसुतां धनिनीं शशाङ्कः
पुत्रान्वितां क्षितिसुतो रविजो धनाढ्याम् ।
आयुष्मतीं सुरगुरुर्भृगुजः सुपुत्रां
राहुः करोति सुभगां सुखिनीं बुधश्च ॥ ११ ॥
अन्ते धनव्ययवतीं दिनकृद्दरिद्रां
वन्ध्यां कुजः पररतां कुटिलां च राहुः ।
साध्वीं सितेज्यशशिजा बहुपुत्रपौत्र
युक्तां विधुः प्रकुरुते व्ययगो दिनान्धाम् ॥ १२ ॥

(अर्थ)

जब सूर्य्य लग्न में हो तो स्त्री विधवा होती है, मङ्गल का भी यही फल है, जब राहु लग्न में हो तो सन्तान का नाश होता है, शनि हो तो स्त्री दरिद्री होती है, जब शुक्र, बुध या बृहस्पति हों तो स्त्री पतिव्रता होती है, चन्द्रमा हो तो आयु क्षीण होती है ॥१॥

जब दूसरे स्थान में सूर्य्य, शनि, राहु अथवा मंगल हो तो नित्य दारिद्रय से बड़ा दुःख होता है, जब बृहस्पति, शुक्र अथवा बुध हों तो स्त्री के पास बहुत धन होता है, जब चन्द्रमा हो तो उसके बहुत पुत्र होते हैं ॥२॥

जब तीसरे स्थान में सूर्य्य, चन्द्रमा, मङ्गल, बृहस्पति, शुक्र अथवा बुध हों तो स्त्री के बहुत पुत्र होते हैं और वह धनाढ्य होती है, जब शनि हो तो वह धनाढ्य होती है, जब राहु हो तो उसको बहुत लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ॥३॥

जब चतुर्थ स्थान में शनि हो तो स्त्री की छाती में दूध कम होता है। सूर्य्य अथवा चन्द्रमा हो तो स्त्री भाग्य हीन होती है। यदि राहु हो तो पुत्र का नाश होता है। मङ्गल हो तो वीर्य्य कम होता है। जब शुक्र, बृहस्पति अथवा बुध हों तो बहुत सुख मिलता है ॥४॥

जब पचम स्थान में सूर्य्य अथवा मंगल हों तो पुत्र का नाश करते हैं। यदि बुध, बृहस्पति अथवा शुक्र हों तो बहुत पुत्र होते हैं। राहु हो तो मृत्यु होती है, शनि हो तो रोग कारक होता है, यदि चन्द्रमा हो तो केवल कन्याओं की उत्पत्ति होती है ॥५॥

छठे स्थान में शनि, सूर्य्य, राहु, मगल अथवा बृहस्पति हों तो बहुत पुत्र होते हैं और बहुत धन भी होता है। चन्द्रमा हो तो स्त्री विधवा होता है। यदि शुक्र हो तो दारिद्रय होता है, यदि बुध हो तो स्त्री वेश्या होती है और कलह करने में तत्पर रहती है ॥६॥

जिस स्त्री के सप्तम स्थान में शनि, मङ्गल, बृहस्पति, बुध, राहु, सूर्य्य, चन्द्रमा तथा शुक्र हों तो उनका फल यथाक्रम यह है:—मृत्यु, वैधव्य, बन्धन, क्षय, धननाश, रोग, प्रवास और मृत्यु ॥७॥

जब अष्टम स्थान में बुध तथा बृहस्पति हों तो पति से वियोग होता है। चन्द्रमा हो तो मृत्यु होती है। शुक्र और राहु का भी यही फल है। सूर्य्य होने से विधवा होती है। मङ्गल होने से धनाढ्य होती है। शनि होने से बहुत पुत्र वाली और पति की प्यारी होती है ॥८॥

जब धर्म स्थान में शुक्र, सूर्य्य, मङ्गल अथवा बृहस्पति हों तो स्त्री अच्छे धर्म में तत्पर रहती है। बुध हो तो भोग करने वाली, राहु अथवा शनैश्चर हों तो वन्ध्या अर्थात् बाँझ होती है, चन्द्रमा हो तो बहुत पुत्र वाली होती है॥ ६ ॥

जब दशम स्थान में राहु हो तो स्त्री विधवा होती है। यदि सूर्य्य अथवा शनैश्चर हों तो पाप कर्म करने वाली होती है। यदि मङ्गल हो तो मृत्यु होती है। यदि चन्द्रमा हो तो धनहीन और कुटिलस्वभाव वाली होती है। शेष ग्रह हों तो धन वाली और बहुमित्र होती है ॥१०॥

यदि एकादश स्थान में सूर्य्य हो तो बहुत पुत्र होते हैं, यदि चन्द्रमा हो तो स्त्री धनाढ्य होती है, मंगल हो तो पुत्र वाली होती है, शनि हो तो धनाढ्य होती है, बृहस्पति हो तो दीर्घायु होती है, शुक्र हो तो अच्छे पुत्र वाली होती है, राहु हो तो भाग्यवती होती है, बुध हो तो सुख वाली होती है ॥११॥

यदि बारहवें स्थान में सूर्य्य हो तो बहुत व्यय करने वाली और दरिद्री होती है, मङ्गल हो तो वन्ध्या होती है, राहु हो तो परपुरुष से प्रीति करने वाली और कुटिल स्वभाव वाली होती है। यदि शुक्र, बृहस्पति अथवा बुध हों तो पतिव्रता और बहुत पुत्र पौत्रों से युक्त होती है। यदि चन्द्रमा हो तो दिनान्ध होती है ॥१२॥

गुरुफलम्.

नष्टात्मजा धनवती विधवा कुशीला
पुत्रान्विता हतधवा सुभगा विपुत्रा ।

स्वामिप्रिया विगतपुत्रधवा धनाढ्या
वन्ध्या भवेत्सुरगुरौ क्रमशोऽभिजन्म ॥

(अर्थ)

लग्न आदि स्थानों में बृहस्पति होने से यथाक्रम यह फल होते हैं।—
पुत्र नाश, धनवती, विधवा, दुराचार, पुत्रयुक्त, विधवा, भाग्यवती, पुत्रहीन, पति की प्रिय, पुत्र पति रहित, धनाढ्य, और वन्ध्या ॥

स्त्रीजातके विशेषविचारः

(१) सौभाग्यादि विचारः

फलं स्त्रीपुरुषयोस्तुल्यम्—विशेषस्तु—
वैधव्यं निधने चिन्त्यं शरीरं जन्मलग्नभाक् ।
सप्तमे पतिसौभाग्यं पञ्चमे प्रसवस्तथा ॥

(२) ग्रहाणां शुभस्थानानि सामान्यतः

नारीणां जन्मकाले कुजशनितमसः कोणकेन्द्रेषु शस्ता
श्चन्द्रोऽस्ते च प्रशस्तो बुधसितगुरवः सर्वभावेषु शस्ताः ।
लग्नेशः कामभावे मदनगृहपति र्लाभभावे प्रशस्तो
लाभेश· पुत्रभावे (प्रशस्त) ।

(३) राजयोगाः

जीवो वा भार्गवो वा परमबलयुतः कामभावेषु यासां
कर्मेशे धर्मलाभे तनुसुखतनये कर्मकोशे बलस्थः ।
तासां चन्द्राननानां कमलदलदृशां नायका रूपयुक्ता
राजन्ते राजलक्ष्मीमणिमयशिबिरे दारभावे सदैव ॥
केन्द्रे च सौम्या यदि पृष्ठभाजः (३।६।६।१२)
पापाः कलत्रे च मनुष्यराशौ ।
राज्ञी भवेत्स्त्री बहुकोशयुक्ता
नित्यं प्रशान्ता च सुपुत्रिणी च ॥

बुधे विलग्ने यदि तुङ्गसंस्थे लाभस्थिते देवपुरोहिते च।
एकोऽपि जीवो रसवर्गशुद्धः केन्द्रे यदा चन्द्रनिरीक्षितश्च॥
कर्कोदये सप्तमगे पतङ्गे जीवेन दृष्टे परिपूर्ण देहा।
लाभस्थित शीतकरो भृगुश्च कलत्रगः सोमसुतेन युक्तः॥
जीवेन दृष्टो भवतीह राज्ञी ख्याता धरायां सकलैः स्तुता च॥

(४) प्रकृति विचारः

युग्मेषु लग्नशशिनोः प्रकृतिस्थिता स्त्री
सच्छीलभूषणयुता शुभदृष्टयोश्च।
ओजस्थयोश्च मनुजाकृतिशीलयुक्ता
पापा च पापयुतवीक्षितयोर्गुणोनः॥

(५) लग्नस्थग्रहफलम्.

ईर्ष्यान्विता सुखपरा शशिशुक्रलग्ने
ज्ञेन्द्वोः कलासु निपुणा सुखिता गुणाढ्या।
शुक्रज्ञयोस्तु रुचिरा सुभगा कलाज्ञा
त्रिष्वप्यनेकवसुसौख्यगुणा शुभेषु॥

(६) सप्तमभावविचार.

शून्येऽस्ते कापुरुषो बलहीने सौम्यदर्शनैर्हीने।
चरभे प्रवासशीलो भर्ता क्लीवो ज्ञसौरयोर्मूने॥
उत्सृष्टा सूर्येऽस्ते कुजेऽस्ते विधवा नवोढैव।
कन्यैवाशुभदृष्टे शनैश्चरे वृद्धतां याति॥

(७) वन्ध्यायोगः

शनिभौमगृहे लग्ने चन्द्रे च सितसंयुते।
पापदृष्टेऽथ सा नारी वन्ध्यात्व मुपगच्छति॥

(८) गलद्गर्भायोगः

अष्टमे जीवबुधशुक्रे नष्टगर्भा मृतापत्या वा॥

सप्तमस्थः कुजश्चैव दृष्टः सौरेण चेद्भवेत्।
गलद्गर्भा तु सा ज्ञेया शनौ रोगयुतप्रजा ॥

(९) मृतप्रजायोगः

रवौ मृतप्रजा ज्ञेया राहुणापि तथैव च।

(१०) कन्याजन्मयोगः

चन्द्रे बुधे च सा नारी कन्याजन्मवती भवेत् ॥

(११) बहुपुत्रयोगः

पञ्चमस्थौ गुरुसितौ बहुपुत्रयुता भवेत्।
सुभगा पतिपूज्यासौ गुणयुक्ता तु सुप्रजा ॥

(१२) भर्तुरग्रे मरण योगः

यदा शुभाः क्रूरखगा विलग्ने द्वितीयग शोभनखेचरस्तु।
सा भर्तुरग्रे म्रियते च नारी गोसिंहकर्केन्दुगतेऽल्पपुत्रा ॥

(१३) पुरुषप्रगल्भा योगः

शुक्रेन्दुसौम्या विबला भवेयुः
शनैश्चरो मध्यबलो यदि स्यात्।
शेषाः सवीर्या विषमे च लग्ने
योषा विशेषात्पुरुषप्रगल्भा ॥

(१४) ब्रह्मविचारिणी योगः

समे विलग्ने यदि संस्थिताः स्युर्बलान्विताः शुक्रबुधेन्दुजीवाः।
स्यात्कामिनी ब्रह्मविचारचर्चा परागमज्ञानविराजमाना ॥

(१५) लग्न सुत सप्तमस्थ पापग्रह फलम्.

पापैः सुतस्थैः सुतवर्जितास्या लग्ने कलत्रे कुलटा शनौ स्त्री।
सूर्ये कुजे लग्नकलत्रसंस्थे स्वक्षोंच्चगेऽप्यर्थयुता च रण्डा ॥

(१६) कुलटा योगः

लग्ने सितेन्द्वोर्यमभौमभस्थयोः सदृष्ट्यो पापखगेन पुंश्चली ॥
लग्ने कलत्रे कुलटा शनौस्त्री ॥

कुजेऽष्टमे कुलटा । द्यूने राहौ कुलदोषदा दुःखार्ता ।
सूर्येऽष्टमे सा पापयुक्ता । रन्ध्रे राहौ कुलक्षयघ्नी ।
लग्नतुर्याष्टमान्त्यनन्दान्यतमे सपापारेपतित्यक्तान्यस्योपरिरक्ता ।
यामित्रनाथे बहुखेटसंयुते भवन्ति जारा बहवस्तु योषिताम् ॥
स्वर्क्षे कुजे याति तदीयमन्दिरम् ॥

(१७) वैधव्य योगाः

लग्नाच्चन्द्रात्पापाः सप्तमेऽष्टमे वा विधवा ।
भौमर्क्षे राहौ सप्तमेऽष्टमे व्यये वा विधवा ।
द्यूनगे पापे विवाहानन्तरं सप्तमाब्दे रण्डा ।
षष्ठेऽष्टमे चन्द्रेऽष्टमाब्दे रण्डा ।
सप्तमे रन्ध्रेशे रन्ध्रे सप्तमेशे पापदृष्टे नवोढा रण्डा ।
षष्ठाष्टमेशौ षष्ठे व्यये पापयुतौ नवोढा रण्डा ।

(१८) अष्टमस्थ शनि फलम्

मन्देऽष्टमे पतिरोगी ।

(१९) वैधव्यप्रबलयोगाः

सप्तमेशोऽष्टमे यस्या सप्तमे निधनाधिपः ।
पापेक्षणयुताद्बाला वैधव्यं लभते ध्रुवम् ॥
सप्तमाष्टपती षष्ठे व्यये वा पापपीडितौ ।
तदा वैधव्य माप्नोति नारी नैवात्र संशयः ॥

(२०) प्रव्रज्या योग.

पापेऽन्ते नवमगतग्रहस्य तुल्यां
प्रव्रज्यां युवति करोत्यसंशयेन ।
उद्वाहे वरणविधौ प्रदानकाले
चिन्तायामपि सकल विधेय मेतत् ॥

(अर्थ) (१) सौभाग्यविचार

स्त्री जातक के फल भी पुरुष जातक के समान होते हैं, परन्तु जो फल स्त्री के विषय में घटित न हो सके उसका फल उसके पति के विषय में वतलाना चाहिये। विशेष यह है कि अष्टम स्थान से वैधव्य का विचार, जन्म लग्न से शरीर का विचार, सप्तम स्थान से सौभाग्य का विचार, और पंचम स्थान से सन्तान का विचार करना चाहिये॥

(२) ग्रहोंके शुभस्थान

स्त्रियों के जन्म समय में कोण और केन्द्र स्थानों में मंगल, शनि तथा राहु शुभ होते हैं। चन्द्रमा सप्तम स्थान में शुभ होता है। वुध, शुक्र, तथा वृहस्पति सव स्थानों में शुभ होते हैं। लग्नेश सप्तम में, सप्तमेश लाभ में, लाभेश पञ्चम स्थान में शुभ होते हैं॥

(३) राजयोग

जिन स्त्रियों के जन्म समय में वृहस्पति या शुक्र वलवान् होकर सप्तम स्थान में हों, कर्मेश वलवान् होकर धर्म, लाभ, लग्न, सुख, पंचम, कर्म या धन स्थान में वैठे तो उनके पति रूपवान् होते हैं और वे स्त्रिया राजलक्ष्मी से युक्त होकर वड़े २ महलों में अपने पति को दास वनाकर रहती हैं॥

जिस स्त्री के केन्द्र में सौम्य ग्रह हों, ३, ६, ६ १२ स्थानों में पाप ग्रह हों, सप्तम स्थान में नर राशि हो वह स्त्री रानी होती है, धनाढ्य होती है, शान्त स्वभाव वाली और वहुत पुत्र वाली होती है॥

जव उच्च का वुध लग्न में हो, वृहस्पति लाभ स्थान में हो, केवल एक वृहस्पति षड्वर्ग में शुद्ध होकर केन्द्र में वैठा हो तथा उस पर चन्द्रमा की दृष्टि हो, कर्क लग्न हो, सप्तम स्थान में सूर्य्य हो, वृहस्पति की उस पर दृष्टि हो, लाभ स्थान में चन्द्रमा हो, सप्तम स्थान में शुक्र हो और वुध से वह युक्त हो, वृहस्पति उसको देखे तो वह स्त्री रानी होती है, पृथ्वी में प्रसिद्ध होती है और सव लोग उसकी स्तुति करते हैं॥

(४) प्रकृतिविचार

जब सम राशियों में लग्न तथा चन्द्रमा हों और शुभ ग्रह उनको देखें तो स्त्री अच्छी प्रकृति वाली अच्छे स्वभाव वाली, और आभूषणों से युक्त होती है, परन्तु जब विषम राशि में लग्न या चन्द्रमा हों तो उसकी आकृति और शील पुरुष के समान होते हैं, यदि लग्न और चन्द्रमा पाप ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हों तो वह पाप कर्म कर्त्री है और गुण रहित होती है ॥

(५) लग्नस्थग्रहफल

जब लग्न मे चन्द्रमा या शुक्र हो तो स्त्री ईर्ष्या वाली और अपने सुख में तत्पर होती है, यदि बुध और चन्द्रमा हों तो स्त्री सब कलाओं में चतुर, सुखिनी और गुणवती होती है, यदि शुक्र तथा बुध हों तो मनोहर, भाग्यवती और कलाओं को जानने वाली होती है। यदि तीनों शुभ ग्रह हों तो अनेक प्रकार के धन और सुख से युक्त होती है ॥

(६) सप्तमभावविचार

जब सप्तम स्थान शून्य हो तो स्त्री का पति कुत्सित होता है। यदि सप्तम स्थान बलहीन हो, सौम्य ग्रहों की दृष्टि उस पर न हो तथा चर लग्न हो तो स्त्री का पति परदेश में रहता है। यदि सप्तम स्थान में बुध और शनि हों तो उसका पति नपुंसक होता है। जब सप्तम स्थान में सूर्य्य हो तो उसका पति उसे त्याग देता है। जब सप्तम स्थान में मङ्गल हो तो बाल वैधव्य होता है। यदि शनि हो और शुभ ग्रह उसको देखे तो विना विवाह हुए ही स्त्री वृद्ध हो जाती है ॥

(७) वन्ध्यायोग

जब लग्न की राशि शनि या मङ्गल का घर हो, शुक्र से युक्त चन्द्रमा हो और पाप ग्रह उसको देखे तो स्त्री वन्ध्या होती है ॥

(८) गर्भनाशयोग

यदि अष्टम स्थान में बुध बृहस्पति या शुक्र हों तो गर्भ का नाश हो जाता है और सन्तान हो कर मर जाते हैं ॥

जब सप्तम स्थान में मङ्गल हो और उस पर शनि की दृष्टि हो तो स्त्री के गर्भ का नाश हो जाता है। यदि शनि हो तो उसकी सन्तति रोग युक्त होती है।

(९) सन्तानहानियोग

जब सप्तम स्थान में सूर्य्य या राहु हों तो सन्तान नहीं जीते हैं॥

(१०) कन्याजन्मयोग

यदि सप्तम स्थान में चन्द्रमा या बुध हो तो कन्याओं का जन्म होता है॥

(११) बहुपुत्रयोग

जिस स्त्री के पचम स्थान में वृहस्पति अथवा शुक्र हों उसके बहुत पुत्र होते हैं और वह स्त्री बडी भाग्यवती, पति से सेवित, अच्छे गुणों से युक्त और अच्छे सन्तान वाली होती है॥

(१२) पति से पहिले मृत्युयोग

जब लग्न में क्रूर तथा शुभ ग्रह हों, दूसरे स्थान में शुभ ग्रह हो तो स्त्री पति से पहिले मर जाती है। जिस स्त्री के वृष, सिंह और कर्क राशियों में चन्द्रमा हो उसके पुत्र कम होते हैं॥

(१३) धृष्टतायोग

जब शुक्र, चन्द्रमा और बुध बलहीन हों तथा शनि मध्यम बल वाला हो, शेष ग्रह बलवान् हों, लग्न में विषम राशि हो तो स्त्री पुरुष के समान धृष्ट होती है॥

(१४) ब्रह्म विचारिणी योग

जब सम लग्न में शुक्र, बुध, चन्द्रमा तथा वृहस्पति बलवान् होकर बैठें तो स्त्री ब्रह्म विचार की चर्चा करने वाली और बड़ी ज्ञानवाली होती है॥

(१५) पापग्रहोंका फल

जिस स्त्री के पञ्चम स्थान में पाप ग्रह हों वह पुत्र हीन होती है। जब लग्न अथवा सप्तम स्थान में शनि बैठा हो तो स्त्री व्यभिचारिणी होती है। जब सूर्य्य अथवा मङ्गल लग्न अथवा सप्तम स्थान में अपने घर के अथवा उच्च के होकर बैठे हों तो स्त्री विधवा होती है। परन्तु धनाढ्य भी होती है॥

(१६) व्यभिचारिणीयोग

जब लग्न की राशि शनि अथवा मङ्गल का घर हो और उसमें शुक्र अथवा चन्द्रमा बैठे हों और पाप ग्रह उसको देखें, अथवा लग्न या सप्तम में शनि हो, अथवा अष्टम स्थान में मंगल बैठा हो तो स्त्री व्यभिचारिणी होती है। जब सप्तम स्थान में राहु हो तो कुल में स्त्री कलंक लगाती है और दु:खित रहती है। यदि अष्टम स्थान में सूर्य्य हो तो स्त्री पाप कर्म में तत्पर रहती है। जब अष्टम स्थान में राहु हो तो स्त्री दोनो कुलों का नाश करती है॥

जब लग्न, चतुर्थ, अष्टम, द्वादश, नवम स्थानों में से किसी स्थान में पाप युक्त मंगल बैठा हो तो स्त्री को उसका पति छोड देता है और वह दूसरे के ऊपर आसक्त रहती है॥

सप्तमेश जितने ग्रहों से युक्त हो उतने ही स्त्री के जार होते हैं। यदि मंगल स्वगृही हो तो स्त्री स्वयं जार के घर जाती है॥

(१७) वैधव्ययोग

लग्न अथवा चन्द्रमा से सप्तम अथवा अष्टम स्थान में पाप ग्रह होने से स्त्री विधवा होती है। जब मंगल के घर में राहु हो अथवा ७, ८, १२ स्थानो में हो तो स्त्री विधवा होती है। सप्तम स्थान में जब पाप ग्रह हो तो विवाह के उपरान्त ७ वें वर्ष के भीतर स्त्री विधवा हो जाती है। छठे या आठवें स्थान में चन्द्रमा हो तो विवाह के उपरान्त आठवें वर्ष में स्त्री विधवा हो जाती है॥

जब अष्टमेश सप्तम स्थान में हो और सप्तमेश अष्टम स्थान में हो और पाप ग्रह उनको देखें तो स्त्री विवाह होने के उपरान्त शीघ्र ही विधवा

हो जाती है। जब षष्ठेश और अष्टमेश छठे अथवा बारहवें स्थान में पाप ग्रह से युक्त हों तो स्त्री विवाह के उपरान्त शीघ्र ही विधवा हो जाती है॥

(१८) शनिफल

जिस स्त्री के अष्टम स्थान में शनि हो उसका पति सदा रोगी रहता है॥

(१९) प्रबलवैधव्ययोग

जिस स्त्री का सप्तमेश अष्टम स्थान में बैठा हो और अष्टमेश सप्तम स्थान में बैठा हो और वे पाप ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो तो निश्चय वैधव्य होता है॥

जब सप्तमेश तथा अष्टमेश छठे अथवा बारहवें स्थान में पाप ग्रह के साथ बैठे हो तो स्त्री को वैधव्य की प्राप्ति होती है इसमें सन्देह नहीं है॥

(२०) प्रव्रज्यायोग

जब सप्तम स्थान में पाप ग्रह हो. तो नवम स्थान में जो ग्रह हो उस ग्रह के समान स्त्री प्रव्रज्या (फकीरी) को धारण करती है। विवाह, कन्या वरण, कन्या दान अथवा प्रश्न लग्न के समय में इन बातों का विचार करना चाहिये॥

(१०) भावेशप्रकरणम्.

भावेशफलविचारः

(१) देहाधिपः पापयुतोऽष्टमस्थो व्ययारिगोवाङ्गसुखं निहन्ति।
सर्वत्र भावेषु च योजनाय मेवं बुधै र्भाववशात्फलंहि॥१॥
एवं तृतीयेऽपिच सप्तमेऽपि फलं विमृश्यं कृतिभिः प्रयत्नात्।
तथाव्यये मित्रगृहे रिपौमृतौ स्थितेविलग्नाधिपतौफलंस्यात्॥२॥
पापो विलग्नाधिपति र्विलग्ने चन्द्रे विलग्ने यदि वा द्वयं स्यात्।
तदातिरोगं सहि केन्द्रसंस्थस्त्रिकोणलाभेषु गदं निहन्ति॥३॥

बलोनता मेयतु पापवत्ता मेतस्य वेवं फल मानुरूप्यात् ।
नीचारिस्थर्यस्य गृहेषु तिष्ठन्स्वर्क्षं विनार्थादिगृहत्रयेच ॥४॥
देहाधिपश्चन्द्रगृहाधिपोवा तृतीयरिष्फारिगतोबलः स्यात् ।
नीचास्तगद्विड्गृहे स्थितोवा कार्श्यं शरीरेऽतिगदं करोति ॥५॥

(२) शुक्रेण युक्तो यदि नेत्रनाथः शुक्रस्य वार्क्षादिगृहत्रयस्थः ।
सम्बन्ध्यपि स्याद्यदि येन केन नेत्रं विधत्ते विपरीतभावम् ॥१॥
दोष कृच्च सर्वत्र स्वोच्चस्वर्क्षगतो ग्रहः ।
षडादित्रयसंस्थश्चेत्तद्विना दोषकृच्छुभः ॥२॥

(३) स्वांशो भ्रातृभावेश षडादित्रयसंस्थितः ।
भ्रातृक्षेत्रगतो वापि भ्रात्रभावं विनिर्दिशेत् ॥१॥
तौ पापयोगतः पाप क्षेत्रयोगेन वा पुनः ।
उत्पाद्य सहजान्सद्यो निहन्ता शास्त्रनिश्चयात् ॥२॥
स्त्रीग्रहो भ्रातृभावेशः स्त्रीग्रहो भ्रातृगोऽपिवा ।
भगिनी स्यात्तदा भ्राता पुंग्रहः पुंग्रहो यदि ॥
मिश्रे मिश्रफलं चात्र बलाबलविनिर्णयः ॥३॥

(४) गेहाधिनाथेन युते तु गेहे देहाधिपेनापि गृहाभिलब्धि ।
युते षडाद्यैतु विपर्ययः स्याद्गृहाधिपे देहपतौ च तद्वत् ॥१॥
क्षेत्रस्य चिन्ता सदनाधिपेन जीवेन चिन्ता तु सुखस्य कार्या ।
दिव्याङ्गना वाहन वस्तु भूषा चिन्ता तु कार्या भृगुणा बुधेन्द्रैः ।
तमः शनिभ्यामभिचिन्त्य मायु रर्केण तातः शशिना च माता ॥
बुधेन बुद्धिः स्मदनर्क्षसंस्थो गतेन सप्तेशयुतेन च स्यात् ।
केन्द्रत्रिकोणेषु गतेन स्वस्य प्रपश्यता वापि स्वतुङ्गकेन ॥२॥

(५) षडादित्रयसंस्थे तु सुतार्थो गेहपुत्रता ।
केन्द्रत्रिकोणसंस्थे तु पुत्रलाभाभिसम्भवः ॥१॥

सत्पुत्रलाभः सुतपे सुरेज्ये शुभेषु गेहेषु गते च भानौ ।
एकः स्थिर. स्यात्सुत एकएव स्थितः शुभः केन्द्रनवात्मजस्थे ॥२॥
अस्तंगते पञ्चमेशे पापाक्रान्ते च दुर्बले ।
षष्ठे नीचे सुताधीशे काकवन्ध्या विशेषतः ॥३॥
सुताधीशो हि नीचस्थः षडादित्रयसंस्थितः ।
काकवन्ध्या भवेन्नारी सुते केतुबुधौ यदि ॥४॥
सुतेशो नीचगोयत्र सुतस्थानं न पश्यति ।
तत्र सौरिबुधौ स्यातां काकवन्ध्यात्व माप्नुयात् ॥५॥
भाग्येशो मूर्तिवर्ती च सुतेशो नीचगो यदि ।
सुते केतुबुधौ स्यातां सुतं कष्टाद्विनिर्दिशेत् ॥६॥
षडादित्रयसंस्थोऽपि नीचोवाप्यरिसंस्थितः ।
पापाक्रान्ते सुतस्थाने सुतं कष्टाद्विनिर्दिशेत् ॥७॥
(६) आदित्येन शिरोव्रणम् ।
इन्दुना च मुखे कण्ठे भौमेन ज्ञेन नाभिषु ॥१॥
गुरुणा नासिकायां तु भृगुणा नयने पदे ।
शनिना राहुणा कुक्षौ केतुना च तथा भवेत् ॥२॥
लग्नाधिपौ कुजबुधौ चन्द्रेण यदि वीक्षितौ ।
राहुर्वा शनिना सार्द्धं कुष्ठं तत्र विनिर्दिशेत् ॥३॥
लग्नाधिपं विना लग्ने स्थितश्चेत्तमसा शशी ।
श्वेतकुष्ठं तदा कृष्ण कुष्ठं च शनिना सह ॥४॥
(७) कलत्रपो विना स्वर्क्षं षडादित्रयसंस्थितः ।
रोगिणी कुरुते नारी तथा तुङ्गादिकं विना ॥१॥
सप्तमे तु स्थिते शुक्रेऽतीव कामी भवेन्नरः ।
यत्र कुत्र स्थिते पाप युते स्त्रीमरणं भवेत् ॥२॥

(८) आयुः स्थानाधिपः पापैः सहैव यदि संस्थितः ।
करोत्यल्पायुषं जातं लग्नेशोऽप्यत्र संस्थित. ॥१॥
एवं हि शनिना चिन्ता कार्या तर्कविचक्षणै. ।
कर्माधिपेन च तथा चिन्तनं कार्यमायुषः ॥२॥
षष्ठे व्ययेऽपि षष्ठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये ।
लग्नेऽष्टमे स्थितो वापि दीर्घमायु. प्रयच्छति ॥३॥
स्वस्थो न स्वांशके नाथि मित्रांशे मित्रमन्दिरे ।
दीर्घायुषं करोत्येव लग्नेशोऽष्टमपः पुनः ॥४॥
लग्नाष्टमपकर्मेश मन्दाः केन्द्रत्रिकोणयोः ।
लाभे वा संस्थितास्तद्वद् दिशेयुर्दीर्घमायुषम् ॥५॥
(९)भाग्याधिनाथोऽपिचभाग्यकर्ताशुक्रोऽपिपापैःसहचेत्त्रिषुस्यात्
षडादिभावेषु च भाग्यहानं केन्द्रत्रिकोणायगतोऽतिभाग्यम् ॥
(१०) कर्माधिपो बलीनश्चेत्कर्मवैकल्य मादिशेत् ।
सदि केन्द्रत्रिकोणस्थो ज्योतिष्टोमादियागकृत् ॥१॥
अत्रायुषश्चिन्तनं च कार्यं स्यात्कर्मणस्तथा ।
शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा षष्ठाष्टमगृहं तथा ॥२॥
(११) लाभाधिपो यदा लाभे तिष्ठेत्केन्द्रत्रिकोणयोः ।
बहु लाभं तदा कुर्यादुच्च. सूर्यांशगोऽपिवा ॥१॥
(१२) चन्द्रो व्ययाधिपो धर्मं लाभमन्त्रेषु संस्थितः ।
स्वोच्चस्वर्क्ष निजांशेवा लाभधर्मात्मजांशके ॥१॥
दिव्यागारादिपर्यङ्को दिव्यगन्धैकभोगवान् ॥
एवं स्वशत्रुनीचांश अस्तांशेवाष्टमे रिपौ ।
संस्थित. कुरुते जन्तुं कान्तासुखविवर्जितम् ॥२॥
व्ययाधिक्यपरिक्रान्तं दिव्यभोगनिराकृतम् ।
सहि केन्द्रत्रिकोणस्थः स्त्रियालङ्कृत स्वयम् ॥३॥

(अर्थ)

(१) जब लग्नेश पापग्रह से युक्त होकर अष्टम, व्यय, अथवा शत्रु स्थान में बैठा हो तो शरीर मे सुख नहीं मिलता है। इसी प्रकार सब भावों के फलका विचार करना चाहिये ॥१॥

इसी प्रकार तृतीय तथा सप्तम स्थान का भी विचार करना चाहिये। जब लग्नेश १२।४।६।८ स्थानो में बैठा हो तब भी यही फल होता है ॥२॥

जब लग्नेश पाप ग्रह होकर लग्न मे बैठा हो, या चन्द्रमा लग्न में बैठा हो, या पूर्वोक्त दोनों योग हों तो मनुष्य अतिरोगी होता है। यदि लग्नेश केन्द्र, त्रिकोण अथवा लाभ में स्थित हो तो रोग का नाश करता है ॥३॥

लग्नेश का बल हीन होना अथवा पाप युक्त होना इत्यादि विचार करके उसके समान फल कहना चाहिये। नीच, शत्रु अथवा सूर्य्य के घरमे स्थित हो अथवा धन आदि तीन स्थानो मे स्थित हो परन्तु अपने घरका न हो (तब भी पूर्वोक्त फल होता है ॥४॥

लग्नेश अथवा चन्द्रमा के घर का स्वामी ३, ८, ६ स्थानों मे बलहीन हो, नीच, अस्त अथवा शत्रु के घर में स्थित हो तो शरीर कृश होता है और नाना प्रकार के रोग होते हैं ॥

(२) जब धनेश शुक्र से युक्त हो अथवा शुक्र के घर का हो, अथवा त्रिकस्थान में स्थित हो, चाहे जो कोई सम्बन्ध हो, तो नेत्रों में विपरीत भाव होता है ॥१॥

अपने उच्च का अथवा अपने घर का ग्रह दोष नहीं करता है। ६,८, १२ स्थानो को छोड कर अन्यत्र शुभ होता है ॥२॥

(३) जब भ्रातृ भाव का स्वामी मङ्गल सहित होकर ६,८,१२ स्थानों मे स्थित हो अथवा तीसरे स्थान में हो तो भाई का अभाव होता है ॥१॥

यदि उन दोनों का पाप ग्रह के साथ योग हो, अथवा पाप क्षेत्र में योग हो तो भाइयों का जन्म होकर नाश हो जाता है। यह शास्त्र का निश्चय है ॥२॥

जब भ्रातृभाव का स्वामी स्त्रीग्रह हो अथवा भ्रातृभाव में स्त्रीग्रह बैठा हो तो बहिन पैदा होती हैं, परन्तु यदि पुरुषग्रह हो तो भाई पैदा होता है।

यदि स्त्रीग्रह पुरुषग्रहों का मिश्रित योग हो तो भाई बहिन दोनों होते हैं। बल और अबल का विचार करके निर्णय करना चाहिये ॥३॥

(४) जब चतुर्थ स्थान में चतुर्थेश अथवा लग्नेश बैठा हो तो घर की प्राप्ति होती है। यदि वे ६, ८, १२ स्थानों में हों तो विपरीत फल होता है ॥१॥

जब क्षेत्र की चिन्ता हो तो चतुर्थेश से विचार करना चाहिये। जब सुख का विचार करना हो तो बृहस्पति से करना चाहिये। जब स्त्री, वाहन, आभूषण का विचार करना हो तो शुक्र से करना चाहिये। जब आयु का विचार करना हो तो राहु तथा शनि से करना चाहिये। पिता का विचार करना हो तो सूर्य्य से करना चाहिये। माता का विचार करना हो तो चन्द्रमा से करना चाहिये। बुद्धि का विचार करना हो तो बुध से करना चाहिये॥)

जब चतुर्थेश सप्तमेश से युक्त होकर चतुर्थ स्थान में बैठा हो, अथवा केन्द्र या त्रिकोण में बैठा हो, अथवा अपने उच्च का होकर सप्तम स्थान को देखे (तो घर की प्राप्ति होती है)॥

(५) जब पञ्चमेश ६, ८, १२ स्थानों में स्थित हो तो पुत्र का अभाव होता है। यदि पञ्चमेश केन्द्र या त्रिकोण में स्थित हो तो पुत्र लाभ होना सम्भव है ॥१॥

जब पञ्चमेश बृहस्पति हो अथवा सूर्य्य शुभ स्थानो में बैठा हो तो एक पुत्र होता है। यदि केन्द्र तथा ५, ९ स्थानों में शुभ ग्रह हो तब भी एक पुत्र होता है ॥ २ ॥

जब पञ्चमेश अस्त हो अथवा उसको पाप ग्रह दबाता हो, अथवा वह बलहीन हो, अथवा छठे स्थान में हो अथवा नीच का हो तो स्त्री काक-वन्ध्या होती है ॥ ३ ॥

जब पञ्चमेश नीच का हो, अथवा ६, ८, १२ स्थानों में स्थित हो, अथवा पञ्चम स्थान में केतु या बुध बैठे हों तो स्त्री काकवन्ध्या होती है ॥ ४ ॥

जब पञ्चमेश नीच का हो और पंचम स्थान को न देखे और उस स्थान में शनि या बुध हो तो स्त्री काकवन्ध्या होती है ॥ ५ ॥

जब भाग्येश लग्न में हो, पंचमेश नीच का हो, पचम स्थान में केतु और बुध बैठे हों तो पुत्र कष्ट से होता है ॥ ६ ॥

जब पंचमेश ६, ८, १२ स्थानो मे हो, अथवा नीच का हो, अथवा शत्रु के घर में बैठा हो, अथवा पंचम स्थान में पाप ग्रह हो तो पुत्र कष्ट मे होता है ॥ ७ ॥

(६) जब छठे घर में सूर्य्य बैठा हो तो सिर पर घाव होता है, चन्द्रमा हो तो मुख में, मङ्गल हो तो गले मे, बुध हो तो नाभि में ॥१॥

बृहस्पति हो तो नाक में, शुक्र हो तो आँख में, शनि हो तो पैर में राहु अथवा केतु हो तो वगल में घाव होता है ॥ २ ॥

जब मङ्गल या बुध लग्न के स्वामी हो और इन पर चन्द्रमा की दृष्टि हो; अथवा राहु तथा शनि एक साथ बैठे हो तो कुष्ठ रोग होता है ॥३॥

यदि लग्न में राहु के साथ चन्द्रमा बैठा हो और लग्नेश वहा न हो तो श्वेत कुष्ठ होता है। यदि शनि के साथ हो तो कृष्ण कुष्ठ होता होता है ॥४॥

(७) जब सप्तमेश ६, ८, १२ स्थानों मे स्थित हो और अपने घर का न हो तो स्त्री रोगिणी होती है, परन्तु यदि उच्च का हो तो यह फल नहीं रहता है ॥ १ ॥

जब सप्तम स्थान मे शुक्र हो तो मनुष्य बडा कामी होता है। पाप ग्रह से युक्त शुक्र जिस किसी स्थान में भी स्थित हो तो स्त्री की मृत्यु होती है ॥ २ ॥

(८) जब अष्टमेश पाप ग्रहों के साथ स्थित हो अथवा अष्टम स्थान मे लग्नेश बैठा हो तो मनुष्य अल्पायु होता है ॥१॥

इसी प्रकार शनि अथवा कर्मेश से भी आयु का विचार करना चाहिये ॥ १॥

जब षष्ठेश छठे अथवा बारहवें स्थान में हो, व्ययेश छठे या बारहवें स्थान मे हो अथवा लग्न या अष्टम स्थान मे स्थित हो तो मनुष्य की दीर्घ आयु होती है ॥ ३ ॥

जब लग्नेश अथवा अष्टमेश अपने घर का हो, अपने नवांश अथवा अधिमित्र के नवांश में न हो परन्तु मित्र के नवांश में अथवा घर में हो तो मनुष्य को दीर्घायु कहना है॥ ४ ॥

जब लग्नेश, अष्टमेश, कर्मेश तथा शनि, केन्द्र त्रिकोण अथवा लाभ में स्थित हों तो बडी आयु होती है॥ ५ ॥

(९) भाग्येश तथा शुक्र पाप ग्रहों के साथ होकर ६, ८, १२ स्थानो में हों तो मनुष्य भाग्य हीन होता है, परन्तु जब केन्द्र त्रिकोण अथवा लाभ स्थानो में स्थित हों तो मनुष्य भाग्यवान् होता है॥

(१०) जब कर्मेश बलहीन हो तो मनुष्य के अच्छे कर्म नहीं होते हैं। यदि वह केन्द्र अथवा त्रिकोण में स्थित हो तो मनुष्य ज्योतिष्टोम आदि यज्ञ करने वाला होता है॥१॥

इस स्थान से आयु तथा कर्म का भी विचार करना चाहिये। शत्रु, नीच अथवा ६,८ घरों को छोड कर शेष स्थानो में कर्मेश शुभ होता है॥२॥

(११) जब लाभेश लाभ स्थान में अथवा केन्द्र या त्रिकोण में हो अथवा उच्च का अथवा सूर्य के नवांश में हो तो बहुत लाभ होता है॥

(१२) जब चन्द्रमा अथवा व्ययेश धर्म, लाभ अथवा पञ्चम स्थान में स्थित हो अथवा अपने उच्च का या अपने घर का या अपने नवांश का या लाभ, धर्म, पञ्चम, के नवांश में स्थित हो॥१॥ तो मनुष्य को अच्छे अच्छे महल, सुगन्ध, पलङ्ग आदि का भोग मिलता है।

यदि वह अपने शत्रु, नीच अथवा अस्त के नवांश में, अष्टम स्थान में अथवा शत्रु स्थान में हो तो मनुष्य को स्त्री का सुख नहीं मिलता है॥२॥

अधिक व्यय होने से उसको सदा चिन्ता रहती है और वह भोगों से रहित होता है। यदि वह केन्द्र अथवा त्रिकोण में स्थित हो तो मनुष्य अपनी स्त्री से शोभित होता है॥३॥

भावेशफलानि

(१) लग्नेशफलानि.

लग्नेशे लग्नगे मर्त्य सुदेहश्च पराक्रमी ।
मनस्वी चातिचाञ्चल्यो द्विभार्यः परगोऽपिवा ॥१॥
लग्नेशे धनगे लाभे सलाभः पीडितो नरः ।
सुशीलो धर्मविन्मानी वहूदारगुणैर्युत ॥२॥
लग्नेशे सहजे षष्ठे सिंहतुल्यपराक्रमी ।
सर्वसम्पद्युतो मानी द्विभार्यो मतिमान्सुखी ॥३॥
लग्नेशे दशमे तुर्ये पितृमातृसुखान्वितः ।
बहुभ्रातृयुतः कामी गुणसौन्दर्यसंयुत ॥४॥
लग्नेशे पञ्चमे मानी सुतसौख्यं च मध्यमम् ।
प्रथमापत्यनाशश्च क्रोधी राजप्रवेशकः ॥५॥
लग्नेशः सप्तमे यस्य भार्या तस्य न जीवति ।
विरक्तोवा प्रवासीवा दरिद्रोवा नृपोऽपिवा ॥ ६ ॥
लग्नेशेऽष्टमरिप्फस्थे सिद्धविद्याविशारदः ।
द्यूतश्चौरोमहाक्रोधी परनार्यां च भोगकृत् ॥७॥
लग्नेशे नवमे जातो भाग्यवाञ्जनवल्लभः ।
विष्णुभक्त पटुर्वाग्ग्मी पुत्रदारधनैर्युतः ॥ ८ ॥

(अर्थ)

जब लग्नेश लग्न में हो तो मनुष्य अच्छे देह वाला, पराक्रमी, उदार, चचल स्वभाव, दो विवाह वाला अथवा परस्त्रीगमन करने वाला होता है ॥१॥

जब लग्नेश धन स्थान अथवा लाभ स्थान में हो तो मनुष्य को लाभ होता है और वह दुःखी, अच्छे स्वभाव वाला, धर्म जानने वाला, अभिमानी और उदार चित्त होता है ॥२॥

जब लग्नेश तीसरे या छठे स्थान में हो तो मनुष्य सिंह के समान पराक्रम वाला, सब प्रकार की सम्पत्ति से युक्त, अभिमानी, दो स्त्री वाला, बुद्धिमान्, और सुखी होता है ॥ ३ ॥

जब लग्नेश दशम या चतुर्थस्थान में हो तो मनुष्य को पिता और माता से सुख मिलता है, और वह मनुष्य बहुत भाइयों से युक्त, कामी, गुणी और सुन्दरता से युक्त होता है ॥ ४ ॥

जब लग्नेश पंचमस्थान में हो तो मनुष्य अभिमानी होता है, उसको पुत्र का सुख मध्यम होता है, उसके पहिले सन्तान का नाश होता है तथा वह मनुष्य क्रोधी और राजदरबार में काम करने वाला होता है ॥ ५ ॥

जिसका लग्नेश सप्तम स्थान में हो उसकी स्त्री नहीं जीती है। वह मनुष्य या तो विरक्त होता है या प्रवासी होता है या दरिद्री होता है या राजा होता है ॥६॥

जिसका लग्नेश अष्टम या द्वादशस्थान में हो वह सिद्ध विद्या में पण्डित होता है और जुआरी, चोर, बड़ा क्रोधी तथा परनारी का भोग करने वाला होता है ॥ ७ ॥

जिसका लग्नेश नवम स्थान में हो वह मनुष्य भाग्यवान्, लोकों का प्रिय, विष्णु का भक्त, चतुर, बोलने में युक्ति वाला, पुत्र, स्त्री और धन से युक्त होता है ॥ ८ ॥

(२) धनेश फलानि.

धनेशे धनगे जातो धनवान् गर्वसंयुतः ।
भार्याद्वयं त्रयं चापि सुतहीनः प्रजायते ॥१॥
धनेशे सहजे तुर्ये विक्रमी मतिमान् गुणी ।
परदाराभिभोगी च लोभी वा देवनिन्दकः ॥२॥
धनेशे रिपुगे शत्रोर्धनं प्राप्नोति निश्चितम् ।
शत्रुतो धननाशः स्याद् गुदोर्वोस्त्व भवेच्च रुक् ॥३॥

धनेशे सप्तमे वैद्यः परजायाभिगामिकः ।
जाया तस्य भवेद्वेश्या मातापि व्यभिचारिणी ॥४॥
धनेशे मृत्युगेहस्थे भूमिद्रव्यं लभेद्ध्रुवम् ।
जायासौख्यं भवेत्स्वल्पं ज्येष्ठभ्रातृसुखं नहि ॥५॥
धनेशे नवमे लाभे धनवानुद्यमी पटुः ।
बाल्ये रोगी सुखी पश्चा यानादायुः समाप्यते ॥६॥
धनेशे दशमे याने कामी मानी च पण्डितः ।
बहुदारधनैर्युक्तः सुतहीनोऽपिजायते ॥७॥
धनेशे व्ययगे मानी साहसी धनवर्जितः ।
जीविका नृपगेहाच्च ज्येष्ठपुत्रसुखं नहि ॥८॥
धनेशे तनुगे पुत्रे स्वकुटुम्बस्य कण्टकः ।
धनवान्निष्ठुरः कामी परकार्येषु तत्परः ॥६॥

(अर्थ)

जब धनेश धन स्थान में हो तो मनुष्य धनी, अभिमानी, दो या तीन स्त्री वाला और पुत्र हीन होता है ॥१॥

जब धनेश तीसरे या चौथे स्थान में हो तो मनुष्य पराक्रमी, बुद्धिमान्, गुणवान्, परस्त्री भोग करने वाला, लोभी अथवा देवताओं की निन्दा करने वाला होता है ॥२॥

जब धनेश छठे स्थान में हो तो मनुष्य को शत्रु से धन की प्राप्ति होती है और शत्रु के द्वारा धन का नाश भी होता है, गुदा और जाघों में रोग होता है ॥३॥

जब धनेश सप्तम स्थान में हो तो मनुष्य वैद्य होता है और पर स्त्री गमन करने वाला होता है। उसकी स्त्री वेश्या होती है और माता भी व्यभिचारिणी होती है ॥४॥

जब धनेश अष्टम स्थान में हो तो भूमि में द्रव्य मिलता है, स्त्री से अल्प सुख मिलता है और बड़े भाई से सुख कभी नहीं मिलता है ॥५॥

जब धनेश नवम अथवा लाभ स्थान में हो तो मनुष्य धनी, उद्यमी, चतुर, बाल्यावस्था में रोगी तदनन्तर सुखी होता है और सवारी के द्वारा उसकी आयु समाप्त होती है ॥६॥

जब धनेश दशम स्थान में हो तो मनुष्य कामी, अभिमानी, पण्डित, बहुत स्त्री और धन से युक्त और पुत्र हीन होता है ॥७॥

जब धनेश व्यय स्थान में हो तो मनुष्य अभिमानी, साहसी, तथा धन-हीन होता है, राजा के घर से उसकी आजीविका होती है और ज्येष्ठ पुत्र का सुख उसको नहीं मिलता है ॥८॥

जब धनेश लग्न अथवा पंचम स्थान में हो तो मनुष्य अपने कुटुम्ब में कण्टक रूप होता है, धनी निष्ठुर, कामी और दूसरे के काम करने में तत्पर होता है ॥९॥

(३) सहजेश फलानि

तृतीयेशे तृतीयस्थे विक्रमी सुतसंयुतः ।
धनयुक्तो महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम् ॥१॥
तृतीयेशे कर्मसुखसुतस्थे न सुखी तदा ।
अतिक्रूरा भवेद्भार्या धनाढ्यो मतिमान्भवेत् ॥२॥
तृतीयेशे रिपौ याने भ्रातृशत्रुर्महाधनी ।
मातुलानां सुखं नस्यान्मातुलीभोग मिच्छति ॥३॥
तृतीयेशे व्यये भाग्ये स्त्रीभिर्भाग्योदयो भवेत् ।
पिता तस्य महाचौरः मुखेऽपि दुःखदर्शकः ॥४॥
तृतीयेशेऽष्टमे द्यूने राजद्वारे मृतिर्भवेत् ।
चौरो वा परगामी वा बाल्ये कष्टं दिने दिने ॥५॥
तृतीयेशे तनौ लाभे स्वभुजार्जितवित्तवान् ।
मूर्खश्चैव महारोगी साहसी परसेवक ॥६॥

तृतीयेशे धने स्थूलः परभार्याधने रुचिः ।
स्वल्पारम्भी सुखी नस्याद् गुदाभञ्जनिकस्तथा ॥७॥

(अर्थ)

जब तृतीयेश तीसरे स्थान मे हो तो मनुष्य पराक्रमी, पुत्रों से युक्त, धनवान्, अति प्रसन्न और अद्‌भुत सुख का भोग करने वाला होता है ॥१॥

जब तृतीयेश कर्म, सुख अथवा पचम स्थान में हो तो मनुष्य कभी सुखी नहीं रहता है, उसकी स्त्री बडी क्रूर स्वभाव वाली होती है और वह मनुष्य धनाढ्य तथा बुद्धिमान् होता है ॥२॥

जब तृतीयेश छठे या चौथे स्थान में हो तो मनुष्य अपने भाई का शत्रु और बड़ा धनवान् होता है, मामा का सुख उसे कभी नहीं मिलता है और मातुली से भोग करना चाहता है ॥३॥

जब तृतीयेश बारहवें अथवा नवें स्थान में हो तो स्त्रियों के द्वारा मनुष्य का भाग्योदय होता है, उस का पिता चोर होता है और वह मनुष्य सुख में भी दुःख देखता है ॥४॥

जब तृतीयेश सप्तम या अष्टम स्थान में हो तो राजद्वार में मृत्यु होती है। वह मनुष्य या तो चोर होता है या परस्त्री गमन करने वाला होता है और बाल्यावस्था में उसे दिन दिन कष्ट होता है ॥५॥

जब तृतीयेश लग्न या लाभ स्थान में हो तो मनुष्य अपनी कमाई से धनवान् होता है, मूर्ख, महारोगी, साहसी, और दूसरे की सेवा करने वाला होता है ॥६॥

जब तृतीयेश धन स्थान मे हो तो मनुष्य स्थूल होता है, दूसरे की स्त्री और धन में उसकी रुचि होती है, आलसी होता है, उसे सुख नहीं मिलता है तथा वह दुष्ट चरित होता है ॥७॥

(४) सुखेशफलानि.

तुर्येशे तुर्यगे मन्त्री भवेत्सर्वधनाधिपः ।
चतुरः शीलवान्मानी धनाढ्यः स्त्रीप्रियः सुखी ॥१॥

तुर्येशे पञ्चमे भाग्ये सुखी सर्वजनप्रियः ।
विष्णुभक्तिरतो मानी स्वभुजार्जितवित्तवान् ॥२॥
तुर्येशे शत्रुगेहस्थे नरः स्याद्बहुमातृकः ।
क्रोधी चौरोऽभिचारी च दुष्टचित्तो मनस्यपि ॥३॥
तुर्येशे सप्तमे लग्ने बहुविद्यासमन्वितः ।
पित्रर्जितधनत्यागी सभायां मूकवद्भवेत् ॥४॥
तुर्येशे व्ययरन्ध्रस्थे सुखहीनो भवेन्नरः ।
पितृसौख्यं भवेदल्पं क्लीवो वा जारजोऽपिवा ॥५॥
तुर्येशे कर्मगेहस्थे राजमान्यो भवेन्नरः ।
रसायनी महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम् ॥६॥
तुर्येशे सहजे लाभे नित्यरोगी भवेन्नरः ।
उदारो गुणवान्दाता स्वभुजार्जितवित्तवान् ॥७॥
तुर्येशे धनगे मानी सर्वसम्पद्युतो नरः ।
कुटुम्बसंयुतो भोगी साहसी च तथैव च ॥८॥

(अर्थ)

जब चतुर्थेश चतुर्थ स्थान में हो तो मनुष्य मन्त्री, धनवान्, चतुर, शीलवान्, अभिमानी, धनाढ्य, स्त्रियों का प्रिय और सुखी होता है ॥१॥

जब चतुर्थेश पंचम या भाग्य स्थान में हो तो मनुष्य सुखी, सब लोगों का प्रिय, विष्णु का भक्त, अभिमानी और अपनी भुजाओं से धन का उपार्जन करने वाला होता है ॥२॥

जब चतुर्थेश शत्रु गृह में हो तो मनुष्य बहुत माताओं से पालित होता है, क्रोधी, चोर और अभिचार (जादू) करने वाला तथा दुष्ट चित्त होता है ॥३॥

जब चतुर्थेश सप्तम या लग्न में हो तो मनुष्य अनेक विद्याओं को जानने वाला, पिता के उपार्जित धन का त्याग करने वाला और सभा में जड़वत् होता है ॥४॥

जब चतुर्थेश व्यय अथवा अष्टम स्थान में हो तो मनुष्य सुख हीन होता है, पिता से उसको अल्प सुख मिलता है और वह नपुंसक अथवा जारजात होता है ॥५॥

जब चतुर्थेश कर्म स्थान में हो तो मनुष्य राजमान्य, रसायन विद्या जानने वाला, अति प्रसन्न, और अद्भुत सुख का भोग करने वाला होता है ॥६॥

जब चतुर्थेश तीसरे या लाभ स्थान में हो तो मनुष्य नित्य रोगी, उदार, गुणवान्, दाता और अपने पराक्रम से द्रव्य उपार्जन करने वाला होता है ॥७॥

जब चतुर्थेश धन स्थान में हो तो मनुष्य अभिमानी, सब प्रकार की सम्पत्तियों से युक्त, कुटुम्बी, भोगी और साहसी होता है ॥८॥

(५) पञ्चमेश फलानि

सुतेशे पञ्चमे जाते सुतस्तस्य न जीवति ।
क्षणिकः क्रूरभाषी च धार्मिको मतिमान्भवेत् ॥१॥
सुतेशे षष्ठरिष्फस्थे पुत्रः शत्रुत्वमाप्नुयात् ।
मृतापत्यो ग्राह्यपुत्रो धनपुत्रोऽथवा भवेत् ॥२॥
सुतेशे कामगे मानी सर्वधर्मसमन्वितः ।
सुतेशे चाष्टमे वित्ते बहुपुत्रो न संशयः ॥
कासश्वासी सुखी न स्यात्क्रोधयुक्तो धनान्वित ॥३॥
सुतेशे नवकर्मस्थे पुत्रो भूपसमो भवेत् ।
अथवा ग्रन्थकर्ता च विख्यातः कुलदीपकः ॥४॥
सुतेशे लाभभवने पण्डितानां च वल्लभः ।
ग्रन्थकर्ता महादक्षो बहुपुत्रधनान्वित ॥५॥
सुतेश लग्नसहजे मायावी पिशुनो भवेत् ।
लोष्टं च ददते नैव द्रविणस्य तु का कथा ॥६॥
सुतेशे मातृभवने चिरं मातृसुखं भवेत् ।
लक्ष्मीयुक्तः सुबुद्धिश्च सचिवोऽप्यथवा गुरुः ॥७॥

(अर्थ)

जिस मनुष्य का पञ्चमेश पंचम स्थान में हो उसका पुत्र नहीं जीता है और वह मनुष्य क्षणिक अर्थात् क्षण मात्र में स्वभाव बदलनेवाला, निष्ठुर बोलने वाला, धार्मिक और बुद्धिमान् होता है ॥१॥

जब पचमेश छठे अथवा बारहवें स्थान में स्थित हो तो पुत्र शत्रु के समान होता है, या तो उस मनुष्य के सन्तान मर जाते हैं या वह धर्म पुत्र बनाता है ॥ २ ॥

जब पंचमेश सप्तम स्थान में हो तो मनुष्य अभिमानी और धर्म करने वाला होता है। जब पञ्चमेश अष्टम अथवा द्वितीय स्थान में हो तो मनुष्य के बहुत पुत्र होते हैं। श्वास की बीमारी होती है। तथा वह मनुष्य सुखी, क्रोधी और धनवान् भी होता है ॥३॥

जिसका पंचमेश नवम या दशम स्थान में हो उसका पुत्र राजा के समान होता है अथवा ग्रन्थकर्ता, प्रख्यात और कुल दीपक होता है ॥४॥

जब पंचमेश लाभ स्थान में हो तो मनुष्य पण्डितों का प्रिय, ग्रन्थ कर्ता, अति चतुर और बहुत पुत्र और धन से युक्त होता है ॥५॥

जब पचमेश लग्न या सहज स्थान में हो तो मनुष्य मायावाला और चुगलखोर होता है। एक मिट्टी का ढेला भी किसी को नहीं देता है धन का तो क्या कहना है ॥ ६ ॥

जब पञ्चमेश चतुर्थ स्थान में हो तो माता का सुख चिर काल पर्यन्त मिलता है। वह मनुष्य लक्ष्मीवान्, बुद्धिमान्, मन्त्री अथवा गुरु होता है ॥७॥

(६) षष्ठेशफलानि.

षष्ठेशे रिपुगेहस्थे स्वज्ञातिः शत्रुवद्भवेत्।
परजातिर्भवेन्मित्रं भूमौ न चलति ध्रुवम् ॥१॥
षष्ठेशे सप्तमे लाभे लग्नेवा कीर्तिमान्भवेत्।
धनवान् गुणवान्मानी साहसी पुत्रवर्जितः ॥२॥

षष्ठेशेऽष्टमरिष्फस्थे रोगी शत्रुर्मनीषिणाम् ।
परजायाभिभोगीच जीवहिंसासु तत्परः ॥३॥
षष्ठेशे नवमे जाते काष्ठपाषाणविक्रयी ।
व्यवहारे क्वचिद्धानिः क्वचिद्‌वृद्धिर्भवेत्किल ॥४॥
षष्ठेशे कर्मवित्तस्थे साहसी कुलनिन्दकः ।
परदेशसुखी वक्ता स्वकर्मनिष्ठितस्तथा ॥५॥
षष्ठेशे सहजे तुर्ये क्रोधनोरक्तलोचनः ।
मनस्वी पिशुनो द्वेषी चलचित्तोऽपि वित्तवान् ॥६॥
षष्ठेश पञ्चमे जाते चलमित्रधनादिकम् ।
दयायुक्तः सुखी सौम्य· स्वकार्ये चतुरोमहान् ॥ ७ ॥

(अर्थ)

जब षष्ठेश छठे स्थान में हो तो अपना मित्र भी शत्रु हो जाता है, अन्य जाति वाला मित्र बन जाता है तथा वह मनुष्य अकड कर चलता है ॥ १ ॥

जब षष्ठेश सप्तम, लाभ अथवा लग्न में हो तो मनुष्य कीर्तिमान्, गुणवान्, धनवान्. अभिमानी, साहसी, और पुत्रहीन होता है ॥२॥

जब षष्ठेश अष्टम अथवा द्वादश स्थान मे हो तो मनुष्य रोगी, पंडितों का शत्रु, पर स्त्री से भोग करने वाला, और जीवहिंसा मे तत्पर होता है ॥ ३ ॥

जब षष्ठेश नवमस्थान में हो तो मनुष्य काष्ठ पाषाण का विक्रेता होता है और व्यवहार में कभी हानि होती है, कभी वृद्धि होती है ॥४॥

जब षष्ठेश कर्म या धन स्थान मे हो तो मनुष्य साहसी, कुल की निन्दा करने वाला, परदेश में सुखी, वक्ता और अपने कर्म में तत्पर होता है ॥ ५ ॥

जब षष्ठेश सहज या चतुर्थ स्थान में हो तो मनुष्य क्रोधी, लालनेत्र वाला, उदार, चुगली खाने वाला, द्वेष करने वाला, चलचित्त, और धनवान् होता है ॥ ६ ॥

जिसका षष्ठेश पंचम स्थान में हो उसके मित्र, धन आदि चलायमान होते हैं, वह मनुष्य दया युक्त, सुखी, सौम्य स्वभाव वाला, और अपने कार्य्य में बड़ा चतुर होता है ॥ ७ ॥

(७) सप्तमेश फलानि.

सप्तमेशे तनौ चास्ते परजायासु लम्पटः ।
दुष्टो विचक्षणो धीरो वातरोगान्वितः सदा ॥१॥
सप्तमेशेऽष्टमे षष्ठे सरोगः कामिनीप्रियः ।
क्रोधयुक्तो हानियुक्तः सुखं तु लभते क्वचित् ॥२॥
सप्तमेशे धने धर्मे नानास्त्रीभिः समागमः ।
आरम्भी दीर्घसूत्रीच स्त्रीषु वित्तव्ययः सदा ॥३॥
सप्तमेशे खे चतुर्थे नास्य जाया पतिव्रता ।
धर्मात्मा सत्यसंयुक्तः केवलं दन्तरोगवान् ॥४॥
सप्तमेशे सहोत्थाये मृतपुत्रः प्रजायते ।
कदाचिज्जीवते कन्या यत्नात्पुत्रोऽपिजायते ॥५॥
सप्तमेशे द्वादशाय्ये दरिद्रः कृपणो महान् ।
जारकन्या भवेद्भार्या वस्त्राजीवीच निर्द्धनः ॥ ६ ॥
सप्तमेशे सुतस्थेच भवेत्सर्वधनाधिपः ।
सदैव हर्षसंयुक्तो मानी सर्वगुणैर्युतः ॥ ७ ॥

(अर्थ)

जब सप्तमेश लग्न अथवा सप्तम स्थान में हो तो मनुष्य परस्त्रियों में लम्पट, दुष्ट, चतुर, धैर्य्यवान् और सदा वातरोग से युक्त होता है ॥ १ ॥

जब सप्तमेश छठे अथवा आठवें स्थान में हो तो मनुष्य रोगी, स्त्रियों का प्रिय, क्रोधी, हानि से युक्त होता है और उसको कभी सुख नहीं मिलता है ॥ २ ॥

जब सप्तमेश धन अथवा धर्म्म स्थान में हो तो अनेक स्त्रियों के साथ

सङ्गम होता है। वह मनुष्य दीर्घसूत्री (ढीला) और स्त्रियों के ऊपर द्रव्य का व्यय करने वाला होता है ॥ ३ ॥

जिस मनुष्य का सप्तमेश चतुर्थ अथवा दशम स्थान में हो उसकी स्त्री पतिव्रता नहीं होती है। वह मनुष्य धर्मात्मा, सत्यभाषी होता है, परन्तु उसको दन्तरोग भी होता है ॥ ४ ॥

जिस मनुष्य का सप्तमेश तृतीय अथवा लाभ स्थान में हो उस के पुत्र नहीं जीते हैं। कदाचित् एक कन्या बच जावे, उपाय करने से पुत्र भी उत्पन्न हो सकता है ॥ ५ ॥

जिसका सप्तमेश द्वादश स्थान में हो वह मनुष्य दरिद्री और बड़ा कृपण होता है। उसकी स्त्री जारकन्या होती है और वह वस्त्रों से अपनी आजीविका चलाता है तथा धनहीन होता है ॥६॥

जब सप्तमेश पंचम स्थान में हो तो मनुष्य धनवान्, सदा दर्प से युक्त, अभिमानी, और सब प्रकार के अच्छे गुणों से युक्त होता है ॥७॥

(८) अष्टमेश फलानि

अष्टमेशेऽष्टमस्थाने भार्या पररता भवेत्।
द्यूतश्चौरोऽन्यथावादी गुरुनिन्दासु तत्परः ॥ १ ॥
अष्टमेशे तपःस्थाने महापापी च नास्तिकः।
सुतहा दारवन्ध्यश्च परभार्याधने रुचिः ॥ २ ॥
अष्टमेशे कर्मसुखे पिशुनो बन्धुवर्जितः।
मातापित्रोर्भवेन्मृत्युः स्वल्पकालेन भीतियुक् ॥ ३ ॥
अष्टमेशे सुते लाभे तस्य बुद्धिर्न जायते।
अल्पं न स्थीयते गेहे जडबुद्धिर्भवेज्जनः ॥ ४ ॥
अष्टमेशे व्यये षष्ठे नित्यरोगी प्रजायते।
जलसर्पभयञ्चैव भवेत्तस्य च शैशवे ॥ ५ ॥

अष्टमेशे तनौ कामे द्विभार्यश्च भवेन्नरः ।
विष्णुद्रोहरतो नित्यं व्रणरोगी प्रजायते ॥६॥
अष्टमेशे धने बाहु बलहीनः प्रजायते ।
धनं तस्य भवेद्‌स्वल्पं गतवित्तं न लभ्यते ॥ ७ ॥

(अर्थ)

जिसका अष्टमेश अष्टम स्थान में हो उसकी स्त्री पतिव्रता नहीं होती है। वह मनुष्य जुआरी, चोर, झूठा और गुरु निन्दा में तत्पर होता है ॥ १ ॥

जिसका अष्टमेश धर्म स्थान में हो वह मनुष्य बड़ा पापी और नास्तिक होता है, उस के पुत्र नहीं जीते हैं, उसकी स्त्री बांझ होती है, परस्त्री और परधन में उसकी रुचि होती है ॥ २ ॥

जिसका अष्टमेश कर्म अथवा सुख स्थान में हो वह मनुष्य चुगलखोर और बन्धु रहित होता है, बाल्यावस्था में उसके माता पिता की मृत्यु होती है और उसे भय होता है ॥ ३ ॥

जिसका अष्टमेश पञ्चम अथवा लाभ स्थान में हो वह बुद्धिहीन होता है, उसके घर में कोई चीज नहीं टिकती है और वह जड़ बुद्धि होता है ॥४॥

जब अष्टमेश छठे अथवा बारहवें स्थान में हो तो मनुष्य नित्य रोगी होता है। बाल्यावस्था में उसको जल तथा सर्प से भय होता है ॥ ५ ॥

जब लग्नेश लग्न अथवा सप्तम स्थान में हो तो मनुष्य के दो विवाह होते हैं और वह मनुष्य विष्णुद्रोही तथा व्रण रोगी होता है ॥ ६ ॥

जब अष्टमेश धनस्थान में हो तो मनुष्य बलहीन और धन हीन होता है, गत वित्त उसको नहीं मिलता है ॥ ७ ॥

(९) नवमेश फलानि

भाग्येशो भाग्यसंयुक्ते धनधान्ययुतो नरः ।
बहुभ्रातृसुखं चैव गुणसौन्दर्यसंयुत ॥१॥

भाग्येशे दशमे तुर्ये मन्त्री सेनापतिर्भवेत् ।
पुण्यवान् कीर्तिमान्वाग्ग्मी साहसी क्रोधसंयुतः ॥ २ ॥
भाग्येशे पञ्चमे लाभे भाग्यवाञ्जनवल्लभः ।
गुरुभक्तिरतोमानी विरोधी गुणविन्नर ॥३॥
भाग्येशे रिपुरिष्फस्थे भाग्यहीनो भवेद्ध्रुवम् ।
मातुलस्य सुखं न स्याज्ज्येष्ठभ्रातृसुखं नहि ॥ ४ ॥
भाग्येशे मदलग्नस्थे गुणवान् कीर्तिमान्भवेत् ।
कदाचिन्नभवेत्सिद्धिर्यत्कार्यं कर्तुमिच्छति ॥ ५ ॥
भाग्येशे सहजे वित्ते सदा भाग्यानुचिन्तकः ।
धनवान् गुणवान् वाग्ग्मी पण्डितो जनवल्लभः ॥ ६ ॥

(अर्थ)

जब भाग्येश भाग्यस्थान में हो तो मनुष्य धन धान्य से युक्त होता है, उसे बहुत भाताओं से सुख मिलता है और वह गुणवान् तथा रूपवान् होता है ॥ १ ॥

जब भाग्येश दशम अथवा चतुर्थ स्थान में हो तो मनुष्य मन्त्री, सेनापति, पुण्यात्मा, कीर्तिमान्, वक्ता, साहसी और क्रोधी होता है ॥२॥

जब भाग्येश पंचम अथवा लाभ स्थान में हो तो मनुष्य भाग्यवान्, लोकप्रिय, गुरुभक्त, अभिमानी, वैर भाव रखने वाला और गुण ग्राहक होता है ॥ ३ ॥

जब भाग्येश अष्टम अथवा द्वादश स्थान में हो तो मनुष्य भाग्यहीन होता है, मामा और बड़े भाई का सुख उसको कभी नहीं मिलता है ॥४॥

जब भाग्येश सप्तम स्थान अथवा लग्न में हो तो मनुष्य गुणवान् तथा कीर्तिमान् होता है, जिस किसी काम को करना चाहता है उसमें कदाचित् सिद्धि होती है ॥५॥

जब भाग्येश भातृ स्थान अथवा धन स्थान में हो तो मनुष्य सदा

भाग्य की चिन्ता करता रहता है और वह धनवान्, गुणी, वक्ता, पण्डित तथा लोकप्रिय होता है ॥ ६ ॥

(१०) दशमेशफलानि

कर्मेशे सुखकर्मस्थे सुखी ज्ञानी च विक्रमी ।
गुरुदेवार्चनरतो धर्मात्मा सत्यसंयुतः ॥ १ ॥
कर्मेशे सुतलाभस्थे धनवान्पुत्रवान्भवेत् ।
सर्वदाहर्षसंयुक्तः सत्यवादी सुखी नर ॥ २ ॥
कर्मेशेऽरिव्ययस्थेतु शत्रुभिः परिपीडितः ।
चातुर्यगुणसम्पन्नः क्वचिच्च न सुखी नर ॥ ३ ॥
कर्मेशे लग्नसंस्थेतु कविताग्गुणसंयुतः ।
बाल्ये रोगी सुखी पश्चादर्थवृद्धि र्दिने दिने ॥ ४ ॥
कर्मेशे धनसंस्थेतु मदे च सहजे तथा ।
मनस्वी गुणवान्वाग्ग्मी सत्यधर्मसमन्वितः ॥ ५ ॥

(अर्थ)

जब कर्मेश सुख अथवा कर्म स्थान में हो तो मनुष्य सुखी, ज्ञानी, पराक्रमी, गुरु और देवताओं की पूजा में तत्पर, धर्मात्मा तथा सत्यवक्ता होता है ॥ १ ॥

जब कर्मेश पञ्चम अथवा लाभ स्थान में हो तो मनुष्य धनवान्, पुत्रवान्, सदा हर्ष से युक्त, सत्यवादी और सुखी होता है ॥२॥

जब कर्मेश छठे अथवा बारहवें स्थान में हो तो मनुष्य शत्रुओं से पीडित, तथा चतुरता के गुणों से युक्त होता है और उसे सुख कभी नहीं मिलता है ॥ ३ ॥

जब कर्मेश लग्न स्थान में हो तो मनुष्य कविता के गुणों से युक्त और बाल्यावस्था में रोगी रहता है, तदुपरान्त दिन दिन धन की वृद्धि होती है ॥४॥

जब कर्मेश धन, सप्तम अथवा भ्रातृ स्थान मे हो तो मनुष्य उदार चित्त, गुणवान्, वक्ता और सत्य धर्म्म से युक्त होता है ॥ ५ ॥

(११) लाभेश फलानि

लाभेशे संस्थिते लाभे स वाग्मी जायते ध्रुवम् ।
पाण्डित्येन च काव्येन वर्द्धते च दिने दिने ॥ १ ॥
लाभेशे रिष्फसंस्थेतु म्लेच्छसंसर्गकारकः ।
कामिको बहुकालश्च क्षणिको लम्पटः सदा ॥ २ ॥
लाभेशे संस्थिते लग्ने धनवान्सात्त्विको महान् ।
समदृष्टिर्महान्वक्ता कौतुकी च भवेत्सदा ॥ ३ ॥
लाभेशे धनपुत्रस्थे नानासुखसमन्वितः ।
पुत्रवान्धार्मिकश्चैव सर्वसिद्धिसमन्वितः ॥ ४ ॥
लाभेशे सहजे वित्ते तीर्थेषु तत्परो महान् ।
कुशलः सर्वकार्येषु केवलं शूलरोगवान् ॥५॥
लाभेशे षष्ठभवने नानारोगसमन्वितः ।
स्वल्पं सुखं भवेत्तस्य प्रवासी परसेवकः ॥ ६ ॥
लाभेशे सप्तमेरन्ध्रे भार्या तस्य न जीवति ।
उदारो गुणवान्कामी मूर्खोभवति निश्चितम् ॥ ७ ॥
लाभेशे गगने धर्मे राजपूज्यो धनाधिपः ।
चतुरः सत्यवादी च निजधर्मसमन्वितः ॥ ८ ॥

(अर्थ)

जब लाभेश लाभ स्थान में हो तो मनुष्य वक्ता, पण्डित, और कवि होता है ॥१॥

जब लाभेश द्वादश स्थान में हो तो मनुष्य म्लेच्छों से संसर्ग करने वाला, कामी, विलम्ब से काम करने वाला, क्षणिक चित्त और लम्पट होता है ॥२॥

जब लाभेश लग्न में हो तो मनुष्य धनवान्, सात्त्विक स्वभाव वाला, समदृष्टि, वक्ता और कौतुकी होता है ॥३॥

जब लाभेश धन अथवा पुत्र स्थान में हो तो मनुष्य अनेक प्रकार के सुखों से युक्त, पुत्रवान्, धार्मिक और सब प्रकार की सिद्धियों से युक्त होता है ॥४॥

जब लाभेश भ्रातृस्थान अथवा धन स्थान में हो तो मनुष्य तीर्थ यात्रा में तत्पर, सब कार्य्यों में चतुर तथा शूल रोग से युक्त होता है ॥५॥

जब लाभेश छठे स्थान में हो तो मनुष्य अनेक रोगों से युक्त, सुखहीन, प्रवासी, तथा पर सेवक होता है ॥६॥

जिसका लाभेश सप्तम अथवा अष्टम स्थान में हो उसकी स्त्री नहीं जीती है। वह मनुष्य उदार, गुणवान्, कामी तथा मूर्ख होता है ॥७॥

जब लाभेश नवम अथवा दशम स्थान में हो तो मनुष्य राजपूज्य, धनवान्, चतुर, सत्यवादी, तथा अपने धर्म में तत्पर होता है ॥८॥

(१२) द्वादशेश फलानि.

व्ययेशेऽरिव्यये पापी मातृमृत्युविचिन्तकः ।
क्रोधी सन्तानदुःखी च परजायासु लम्पटः ॥१॥
व्ययेशे मदने लग्ने जायासौख्यं भवेन्नहि ।
दुर्बलः कफरोगी च धनविद्याविवर्जितः ॥२॥
व्ययेशे च धने रन्ध्रे विष्णुभक्तिसमन्वितः ।
धार्मिकः प्रियवादी च सम्पूर्णगुणसंयुतः ॥३॥
व्ययेशे सहजे धर्मे स्वशरीरस्य पोषकः ।
भार्याद्वयपतिर्द्वेषी गुरुद्वेषी भवेन्नरः ॥४॥
व्ययेशे दशमे लाभे पुत्रसौख्यं भवेन्नहि ।
मणिमाणिक्यमुक्ताभिर्धनं किञ्चित्समालभेत् ॥५॥

(अर्थ)

जब द्वादशेश छठे अथवा बारहवें स्थान में हो तो मनुष्य पापी, माता की मृत्यु चाहने वाला, क्रोधी, सन्तान से दुःखित, तथा पर स्त्रियों में लम्पट होता है ॥१॥

जिसका द्वादशेश सप्तम स्थान अथवा लग्न में हो उसको स्त्री का सुख कभी नहीं मिलता है, वह मनुष्य दुर्बल, कफ रोगी, धन तथा विद्या से रहित होता है ॥२॥

जब द्वादशेश धनस्थान अथवा अष्टमस्थान में हो तो मनुष्य विष्णु का भक्त, धर्मात्मा, प्रियवादी, और सब अच्छे गुणों से युक्त होता है ॥३॥

जब द्वादशेश भ्रातृ स्थान अथवा धर्म स्थान में हो तो मनुष्य अपने शरीर का पोषण करने वाला, दो विवाह वाला, द्वेषी तथा गुरु द्रोही होता है ॥४॥

जब द्वादशेश दशम अथवा लाभ स्थान में हो तो पुत्र का सुख नहीं होता है, रत्नों से कुछ धन की प्राप्ति होती है ॥५॥

(११) मेषादिस्थग्रहफलप्रकरणम्

(१) सूर्यस्य

प्रथितश्चतुरोऽटनोऽल्पवित्त
क्रियगेत्वायुधभृद्विलुङ्गभागे ।
गवि वस्त्रसुगन्धपण्यजीवी
वनिताद्विट् कुशलश्च गेयवाद्ये ॥१॥
विद्याज्यौतिषवित्तवान्मिथुनगे भानौ कुलीरे स्थिते
तीक्ष्णोऽस्वः परकार्यकृच्छ्रमपथः क्लेशैश्च संयुज्यते ।
सिंहस्थे वनशैलगोकुलरति र्वीर्यान्वितोऽज्ञः पुमान्
कन्यास्थे लिपिलेख्यकाव्यगणितज्ञानान्वित स्त्रीवपुः ॥२॥

होता है। मीन का सूर्य्य हो तो जल से उत्पन्न मोती आदि रत्नों के व्यापार से धनवान् तथा स्त्रियों का पूजनीय होता है ॥४॥

(२) चन्द्रस्य.

स्थिरधनो रहितः सुजनैर्नरः सुतयुत प्रमदाविजितो भवेत् ।
अजगते द्विजराज इतीरितं विभुतयाद्भुतयास्वसुकीर्तिभाक् ॥१॥
स्थिरगतिं सुमतिं कमनीयतां कुशलतां हि नृणामुपभोगताम् ।
वृषगतोहिमगुर्भृशमादिशेत्सुकृतितः कृतितश्च सुखानिच ॥२॥
प्रियकरः करमत्स्ययुतो नरः सुरतसौख्यभरो युवतिप्रियः ।
मिथुनराशिगते हिमगौ भवेत्सुजनता जनताकृतगौरवः ॥३॥
श्रुतकलावलनिर्मलवृत्तयः कुसुमगन्धजलाशयकेलयः ।
किल नरास्तु कुलीरगते विधौ वसुमती सुमती स्मित लब्धयः ॥४॥
अचलकाननयानमनोरथं गृहकलिश्च गलोदरपीडनम् ।
द्विजपतिर्मृगराजगतो नृणां वितनुते तनुतेज (?) विहीनताम् ॥५॥
युवतिगे शशिनि प्रमदाजन प्रबलकेलिविलासकुतूहलैः ।
विमलशीलसुताजननोत्सवैःसुविधिनाविधिनासहित-पुमान् ॥६॥
वृपतुरङ्गमविक्रमविक्रम द्विजसुरार्चनदानमनाः पुमान् ।
शशिनि तौलिगते वहुदारभाग्विभवसम्भवसञ्चितविक्रमः ॥७॥
शशधरे हि सरीसृपगे नरो नृपदुरोदरजातधनक्षयः ।
कलिरुचि विंवलःखलमानसः कृशमनाःशमनापहतोभवेत् ॥८॥
वहुकलाकुशलः प्रवलो महाविमलताकलित. सरलोक्तिभाक् ।
शशधरे तु धनुर्धरगे नरो धनकरो न करोति वहुव्ययम् ॥९॥
कलितशीतभयः किल गीतवित्तनुरुजा सहितो मदनातुर ।
निजकुलोत्तमवृत्तिकरः परं हिमकरे मकरे पुरुषो भवेत् ॥१०॥
अलसतासहितोऽन्यसुतप्रियः कुशलता कलितोऽतिविचक्षणः ।
कलशगामिनि शीतकरे नरः प्रशमितः शमितारिगुणव्रजः ॥११॥

जातस्तौलिनि शौण्डिकोऽध्वनिरतो हैरण्यको नीचकृत्
क्रूरः साहसिको विषार्जितधनः शस्त्रान्तगोऽलिस्थिते ।
सत्पूज्यो धनवान्धनुर्द्धरगते तीक्ष्णो भिषक्कारुको
नीचोऽज्ञः कुवणिङ्मृगेऽल्पधनवान्लुब्धोऽन्यभाग्येरतः ॥३॥
नीचो घटे तनयभाग्यपरिच्युतोऽस्त्र
स्तोयोत्थपण्यविभवो वनितादृतोन्त्ये ॥४॥

(अर्थ)

जिसके जन्म समय में मेष राशि का सूर्य उच्च का हो वह मनुष्य प्रख्यात, चतुर, घूमनेवाला, अल्पधनवान्, शस्त्रधारण करने वाला होता है। वृष का सूर्य हो तो वस्त्र तथा सुगन्ध द्रव्य के व्यापार से आजीविका करने वाला, स्त्रियों से द्वेष रखने वाला तथा गाने बजाने में चतुर होता है ॥१॥

यदि मिथुन का सूर्य हो तो विद्यावान्, ज्योतिष शास्त्र जानने वाला तथा धनवान् होता है। यदि कर्क का सूर्य हो तो तीक्ष्ण स्वभाव, निर्धन, पराया कार्य्य करने वाला और मार्गादि क्लेश से युक्त होता है। सिंह का सूर्य हो तो वन, पर्वत, तथा गोकुल में प्रीति वाला, बलवान् और मूर्ख होता है। कन्या का सूर्य हो तो लिखने वाला, चित्र खींचने वाला, काव्य गणित ज्ञान से युक्त, तथा स्त्री के समान शरीर वाला होता है ॥२॥

तुला का सूर्य हो तो शौण्डिक (मद्यबनाने वाला), मार्ग चलने में तत्पर, सुवर्णकार, अनुचित कर्म करने वाला होता है। वृश्चिक का सूर्य हो उग्रस्वभाव, साहसी, विष के कर्म से धन कमाने वाला तथा शस्त्र विद्या में निपुण होता है। धन का सूर्य हो तो सज्जनों का पूज्य, धनवान्, तीक्ष्ण स्वभाव वैद्यविद्या तथा शिल्प कर्म जानने वाला होता है। मकर का सूर्य हो तो नीच, मूर्ख, व्यापार करने में हानि उठाने वाला, अल्पधनी, लोभी, पराये भाग्य का भोग करने वाला होता है ॥३॥

कुम्भ का सूर्य हो तो नीच, पुत्रों के ऐश्वर्य से रहित, तथा निर्धन

शशिनि मीनगते विजितेन्द्रियो बहुगुणः कुशलो जललालसः।
विमलधीः किल शास्त्रकलादरस्त्वबलताबलताकलितोनरः ॥१२॥

(अर्थ)

जिस मनुष्य के जन्म काल में मेष राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह मनुष्य स्थिर धन वाला, श्रेष्ठ जनों से रहित, पुत्र सहित, स्त्रीजित, अद्भुत वैभव और अच्छी कीर्ति से युक्त होता है ॥१॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में वृष राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह मनुष्य स्थिर गति, श्रेष्ठ बुद्धिवाला, शोभायमान, चतुर, भोगी, श्रेष्ठ कार्य तथा चातुर्य से सौख्ययुक्त होता है ॥२॥

जिस मनुष्य के जन्म काल मे मिथुन राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह मनुष्य प्रियकार्य करने वाला, हाथों में मछली के आकार की रेखा वाला, मैथुन सौख्य सहित, स्त्रियों का प्यारा, सज्जनता सहित, तथा अन्य मनुष्यों से सम्मानित होता है ॥३॥

जिस मनुष्य के जन्म कालमें कर्क राशि मे चन्द्रमा बैठा हो वह मनुष्य शास्त्र कलाओं में निर्मल व्यापार वाला, पुष्पों से गंध सूंघने वाला, जल मे क्रीड़ा करने वाला, धरती से सहित, श्रेष्ठ बुद्धि से मनोरथ को प्राप्त करने वाला होता है ॥४॥

जिस मनुष्य के जन्म काल मे सिंह राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह मनुष्य पर्वत और वन की यात्रा का मनोरथ करने वाला, घर में कलह करने वाला, गले और पेट में पीड़ा से युक्त, तथा शरीर के तेज से रहित होता है ॥५॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में कन्या राशि में चन्द्रमा बैठा हो, वह मनुष्य स्त्रियों के साथ अधिक विलास करने वाला, निर्मल आचरण वाला, कन्या सन्तान वाला, और भाग्यवान् होता है ॥६॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में तुला राशि में चन्द्रमा बैठा हो वह

मनुष्य रूप, अश्व और पराक्रम सहित, देवता और ब्राह्मणों का पूजन करने वाला, दानी, बहुत स्त्रियों से सहित, पराक्रम से वैभव और प्रतिष्ठा पाने वाला होता है ॥७॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में वृश्चिक राशि में चन्द्रमा हो उसका धन राजा और जुए के कारण नष्ट होता है। वह कलह में प्रीति वाला, निर्बल देह, दुष्ट चित्त, और शान्ति रहित होता है ॥८॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में धन राशि में चन्द्रमा हो वह मनुष्य बहुत कलाओं में चतुर, अधिक बलवान्, निर्मलता सहित, सीधी वाणी बोलने वाला, धनवान्, तथा कम खर्च करने वाला होता है ॥९॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मकर राशि में चन्द्रमा हो वह मनुष्य पानी से डरने वाला, गायन विद्या को जानने वाला, रोगी, कामातुर, तथा अपने कुल में उत्तम वृत्ति करने वाला होता है ॥१०॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में कुम्भ राशि में चन्द्रमा हो वह मनुष्य आलस्य सहित, पराये पुत्र से प्रीति करने वाला, अत्यन्त चतुर, तथा वैरियों का नाश करने वाला होता है ॥११॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मीन राशि में चन्द्रमा हो वह मनुष्य इन्द्रियों का जीतने वाला, बहुत गुण वाला, चतुर, जल की लालसा वाला, निर्मल बुद्धि, शास्त्र विद्या में प्रवीण, और निर्बल देह वाला होता है ॥१२॥

(३) भौमस्य.

नरपतिसत्कृतोऽटनश्च भूपवणिक्सधनः
क्षततनुश्चौरभूरिविषयांश्च कुजः स्वगृहे ।
युवतिजितान्सुहृत्सुविषमान्परदारतान्
कुहकसुवेषभीरुपरुषान्सितभे जनयेत् ॥१॥
बौधे सहत्तनयवान्विसुहृत्कृतज्ञो
गान्धर्वयुद्धकुशल कृपणोऽभयोऽर्थी ।

चान्द्रेऽर्थवान्सलिलयानसमर्जितस्वः
प्राज्ञश्च भूमितनये विकलः खलश्च ॥२॥
निःस्वः क्लेशसहोवनान्तरचरः सिंहेऽल्पदारात्मजो
जैवे नैकरिपुर्नरेन्द्रसचिवः ख्यातोऽभयोऽल्पात्मजः।
दुःखार्तो विधनोऽटनोऽनृतरतस्तीक्ष्णश्च कुम्भस्थिते
भौमे भूरिधनात्मजोमृगगते भूपोऽथवातत्समः ॥३॥

(अर्थ)

जिसके जन्म समय में मङ्गल अपने घर का हो वह राजपूजित, घूमने वाला, श्रेष्ठ व्यापारी, धनवान्, शरीर में चोट वाला, चोर तथा चञ्चल इन्द्रिय वाला होता है। यदि मङ्गल शुक्र के घर में हो तो मनुष्य स्त्री के वश में रहने वाला मित्रों से विरुद्ध रहने वाला, परस्त्री सङ्ग करने वाला, इन्द्रजाली, सुन्दर शृङ्गार युक्त, डरने वाला तथा स्नेह हीन होता है ॥ १ ॥

यदि मङ्गल बुध की राशि में हो तो मनुष्य सहन शील, पुत्रवान्, मित्र रहित, कृतज्ञ, गायन विद्या तथा युद्ध विद्या जानने वाला, कृपण, निर्भय, तथा मांगने वाला होता है। यदि मङ्गल कर्क का हो तो मनुष्य नाव आदि के काम से धनवान्, बुद्धिमान् विकल तथा दुर्जन होता है ॥ २ ॥

यदि मङ्गल सिंह का हो तो मनुष्य निर्धन क्लेश सहने वाला, वन में फिरने वाला, तथा अल्प स्त्री पुत्र वाला होता है। यदि मङ्गल धन तथा मीन का हो तो मनुष्य बहुत शत्रु वाला, राज मन्त्री, विख्यात, निर्भय तथा अल्प सन्तान वाला होता है। यदि मङ्गल कुम्भ का हो तो अनेक दुःखों से पीडित, निर्धन, फिरनेवाला, झूठ बोलने वाला, क्रूर होता है। यदि मङ्गल कुम्भ का हो तो धन और सन्तान बहुत होते हैं। यदि मङ्गल मकर का हो तो मनुष्य राजा अथवा राजा के तुल्य होता है ॥३॥

(४) बुधस्य

घृतार्णपानरतनास्तिकचौरनिस्वाः
कुस्त्रीककूटकृनसत्यरताः कुजर्क्षे।

आचार्यभूरिसुतदारधनार्जनेष्टः
शौक्रे वदान्यगुरुभक्तिरताश्च सौम्ये ॥१॥
विकत्थनः शास्त्रकलाविदग्धः
प्रियम्वदः सौख्यरतस्तृतीये ।
जलार्जितस्वः स्वजनस्य शत्रुः
शशाङ्कजे शीतकरर्क्षयुक्ते ॥ २ ॥
स्त्रीद्वेष्यो विधनसुखात्मजोऽटनोऽज्ञः
स्त्रीलोलः सुपरिभवोऽर्कराशिगे ज्ञे ।
त्यागी ज्ञः प्रचुरगुणः सुखी क्षमावान्
युक्तिज्ञो विगतभयश्च षष्ठराशौ ॥ ३ ॥
परकर्मकृदस्वः शिल्पबुद्धि
र्ऋणवान्विष्टिकरो बुधेऽर्कजर्क्षे ।
नृपसत्कृतपण्डिताप्तवाक्यो
नवमेऽन्त्ये जितसेवकोऽन्त्यशिल्पः ॥ ४ ॥

(अर्थ)

जिसके जन्म में बुध भैाम की राशि मे हो वह मनुष्य जुआरी, ऋणी, मद्यपान करने वाला, नास्तिक, धनहीन, निन्दित स्त्री वाला, प्रपञ्ची और झूठा होता है। जब बुध शुक्र की राशि में हो तो मनुष्य उपदेश करने वाला, आचार्य्य, बहुत पुत्र और स्त्रियों से युक्त, धन उपार्जन में तत्पर, उदार तथा गुरु की भक्ति में तत्पर होता है ॥१॥

जब बुध मिथुन राशि का हो तो मनुष्य आत्म श्लाघा करने वाला, शास्त्र विद्या में चतुर, प्यारी वाणी बोलने वाला, तथा सुखी होता है। जब कर्क का बुध हो तो मनुष्य जल कर्म से धन उत्पन्न करने वाला, तथा बन्धु जनों का शत्रु होता है ॥२॥

जब बुध सिंह का हो तो मनुष्य स्त्रियों का वैरी, धन सुख और पुत्रों से रहित' फिरनेवाला, मूर्ख, स्त्रियों की बहुत अभिलाषा रखने वाला, और पराजित

होता है। जब बुध कन्या राशि का हो तो मनुष्य दाता, पंडित, गुणवान्, सौख्यवान्, क्षमावान्, युक्ति जानने वाला, तथा निर्भय होता है ॥३॥

जब बुध शनि की राशि में हो तो मनुष्य पराया काम करने वाला, दरिद्री, शिल्प कर्म करने वाला, ऋणी, तथा दास कर्म करने वाला होता है। जब धन राशि का बुध हो तो मनुष्य राजपूजित, विद्वान् तथा आप्त वाक्य होता है। जब बुध मीन का हो तो मनुष्य पराई सेवा में तत्पर तथा शिल्प क्रिया को जानने वाला होता है ॥ ४ ॥

(५) गुरोः

सेनानीर्बहुवित्तदारतनयो दाता सुभृत्यः क्षमी
तेजोदारगुणान्वितः सुरगुरौ ख्यातः पुमान्कौजभे ।
कल्याङ्गः ससुखार्थमित्रतनयस्त्यागी प्रियः शौक्रभे
बौधे भूरिपरिच्छदात्मजसुहृत्साचिव्ययुक्तः सुखी ॥ १ ॥
चान्द्रे रत्नसुतस्वदारविभवप्रज्ञासुखैरन्वितः
सिंहे स्याद्बलनायकः सुरगुरौ प्रोक्तस्त्रयच्चन्द्रभे ।
स्वर्क्षे माण्डलिको नरेन्द्रसचिवः सेनापतिर्वा धनी
कुम्भे कर्कटवत्फलानि मकरे नीचोऽल्पवित्तोऽसुखी ॥२॥

(अर्थ)

जब बृहस्पति भौम की राशि में हो तो मनुष्य सेनापति, धनाढ्य, बहुत स्त्री और पुत्रों से युक्त, दाता, अच्छे भृत्यों से युक्त, क्षमावान्, तेजस्वी, गुणवती स्त्री से युक्त, तथा प्रख्यात होता है। जब बृहस्पति शुक्र की राशि में हो तो मनुष्य स्वस्थ देह वाला, सुखी, धन तथा मित्रों से युक्त, पुत्रवान्, सुख तथा धन से सर्वदा युक्त, उदार और सब का प्यारा होता है। जब बृहस्पति बुध की राशि में हो तो परिवार, मित्र और पुत्र बहुत होते हैं तथा मनुष्य मन्त्री होता है ॥१॥

जब बृहस्पति चन्द्रराशि का हो तो मनुष्य रत्न, पुत्र, धन, स्त्री,

ऐश्वर्य्य, बुद्धि, तथा सुख से युक्त होता है। जब बृहस्पति सिंह का हो तो मनुष्य सेनापति होता है तथा पूर्वोक्त चन्द्र राशि के समान फल होते हैं। यदि बृहस्पति स्वराशि का हो तो मनुष्य माण्डलिक अर्थात् कुछ गांवों का स्वामी, राजा का मन्त्री सेनापति, तथा धनवान् होता है। यदि बृहस्पति कुम्भ का हो तो चन्द्रराशि के समान फल होता है। यदि बृहस्पति मकर का हो तो नीच कर्म करने वाला, अल्पवित्तवान् तथा दुःखित होता है ॥२॥

(६) शुक्रस्य.

परयुवतिरतस्तदर्थवादै
र्हृतविभवः कुलपांसनः कुजर्क्षे ।
स्वबलमतिधनो नरेन्द्रपूज्यः
स्वजनविभुः प्रथितोऽभयः सिते स्वे ॥१॥
नृपकृत्यकरोऽर्थवान्कलावि
न्मिथुने षष्ठगतेऽतिनीचकर्मा ।
रविजर्क्षगतेऽमरारिपूज्ये
सुभगः स्त्रीविजितो रतः कुनार्याम् ॥२॥
द्विभार्योऽर्थी भीरुः प्रबलमदशोकश्च शशिभे
हरौ योषाप्तार्थः प्रवरयुवति र्मन्दतनयः ।
गुणैः पूज्यः सस्वस्तुरगसहिते दानवगुरौ
झषे विद्वानाढ्यो नृपजनितपूजोऽहि सुभग ॥३॥

(अर्थ)

जब शुक्र मङ्गल की राशि का हो तो मनुष्य पर स्त्रियों में आसक्त रहता है, पर स्त्रियों के द्वारा उसका धन हरण होता है तथा कुल पर कलङ्क लगाता है। जब शुक्र अपनी राशि का हो तो मनुष्य अपने बल तथा बुद्धि से धन कमाने वाला, राजपूज्य, अपने बन्धु जनों में प्रधान, प्रख्यात तथा निर्भय होता है ॥१॥

जब शुक्र मिथुन राशि का हो तो मनुष्य राजकार्य्य करने वाला, धनवान्, तथा कला जानने वाला होता है। जब शुक्र कन्या राशि का हो तो मनुष्य बड़ा नीच कर्म करने वाला होता है। जब शुक्र शनि की राशि का हो तो मनुष्य सुन्दर, स्त्री के वश में रहने वाला, तथा कुत्सित स्त्री में आसक्त रहता है ॥ २ ॥

जब शुक्र कर्क का हो तो मनुष्य दो स्त्री वाला, मांगने वाला, भय युक्त, उन्मत्त, तथा अतिदुःखित होता है। यदि शुक्र सिंह का हो तो मनुष्य स्त्री के द्वारा धन पाने वाला, सुन्दर स्त्री वाला, तथा अल्प सन्तान वाला होता है। यदि शुक्र धन राशि का हो तो मनुष्य बहुतों का पूज्य तथा धनवान् होता है। यदि शुक्र मीन का हो तो मनुष्य विद्वान्, सम्पन्न, राज पूज्य, तथा सब का प्यारा होता है ॥ ३ ॥

(७) शनेः

मूर्खोऽटनः कपटवान्विसुहृद्यमेऽजे
कीटेतु बन्धवधभाक् चपलो घृणश्च ।
निर्ह्रीसुखार्थतनयः स्खलितश्च लेख्ये
रक्षापतिर्भवति मुख्यपतिश्च चौर्ये ॥१॥
वर्ज्यस्त्रीष्टो न बहुविभवो भूरिभार्यो वृषस्थे
ख्यातः स्वोच्चे गणपुरबलग्रामपूज्योऽर्थवांश्च ।
कर्किण्यस्वो विकलदशनो मातृहीनोऽसुतोऽज्ञः
सिंहेऽनार्यो विसुखतनयो विष्टिकृत्सूर्यपुत्रे ॥२॥
स्वन्नः प्रत्ययिता नरेन्द्रभवने सत्पुत्रजायाधनो
जीवक्षेत्रगतेऽर्कजे पुरबलग्रामाग्रनेताथवा ।
अन्यस्त्रीधनसंवृतः पुरबलग्रामाग्रणीर्मन्ददृक्
स्वक्षेत्रे मलिनः स्थिरार्थविभवो भोक्ता च जातः पुमान् ॥३॥

(अर्थ)

जब शनि मेष का हो तो मनुष्य मूर्ख, फिरने वाला, कपटी, तथा मित्र रहित होता है। जब शनि वृश्चिक का हो तो मारने बांधने वाला, चपल, तथा

निर्दयी होता है। जब शनि मिथुन अथवा कन्या राशि का हो तो मनुष्य निर्लज्ज, दुःखित, निर्धन, अपुत्र, लिखने में भूल जाने वाला, रक्षा स्थान का पति तथा प्रधान होता है ॥१॥

जब शनि वृष का हो तो मनुष्य अगम्य स्त्रियों का गमन करने वाला, ऐश्वर्य्य रहित, बहुत स्त्रियों वाला होता है। जब शनि तुला का हो तो मनुष्य प्रख्यात, समृद्ध, नगर, सेना, तथा ग्राम में पूज्य और धनवान् होता है। जब शनि कर्क का हो तो मनुष्य निर्धन, विकल दांत वाला, मातृ रहित, पुत्र रहित, तथा मूर्ख होता है। जब शनि सिंह का हो तो मनुष्य अनार्य, सुख तथा पुत्र से हीन, दास कर्म करने वाला होता है ॥ २ ॥

जब शनि गुरुक्षेत्र का हो तो मनुष्य शुद्ध चित्त वाला, राजद्वार में प्रतीति वाला, सत्पुत्र, स्त्री तथा धन सहित, अथवा नगर, सेना वा ग्राम का नेता होता है।

जब शनि स्वक्षेत्री हो तो मनुष्य अल्प धा तथा धन संयुक्त, नगर, ग्राम तथा सेना में अग्रणी, मन्द नेत्र, मलिन, स्थिर धन वाला, तथा भोगवान् होता है ॥ ३॥

(१२) दृष्टिप्रकरणम्

ग्रहाणां दृष्टिः (जातके)

त्र्यायशं त्रिकोणं चतुरस्रसप्तमं
पश्यन्ति खेटाश्चरणाभिवृद्ध्या ॥ १ ॥
पादैकदृष्टिर्दशमे तृतीये
द्विपाददृष्टिर्नवपञ्चमे च ।
त्रिपाददृष्टिश्चतुरष्टमेच
सम्पूर्णदृष्टिः समसप्तके च ॥ २ ॥
पूर्णं पश्यति रविज स्तृतीयदशमे त्रिकोणमपि जीवः ।
चतुरस्रं भूमिसुतः सितार्कहिमकराः कलत्रं च ॥ ३ ॥
पश्यत्यसौ भानुसुतस्तृतीयं मानं च पूर्णं चतुरस्रमारः ।
जीवस्त्रिकोणं मदनं च सर्वे पश्यन्ति दृष्ट्या चरणाभिवृद्ध्या ॥४॥

केचन भ्रमादेव भौमादीनां सप्तमे पूर्णं दृष्टिं न वदन्ति तच्चिन्त्यम्।
अन्यथा मुनिवचनैर्विरोधतः स्यात् (होरा रत्नम्) ॥५॥
१।२।६।११।१२ स्थानेषु जातके ग्रहाणां दृष्टिर्नास्ति ॥६॥

राहुकेत्वोर्विशेषः

सुते सप्तमे पूर्णदृष्टिं तमस्य
तृतीये रिपौ पाददृष्टिर्नितान्तम्।
धने राज्यगेहेऽर्धदृष्टिं वदन्ति
स्वगेहे त्रिपाद् स्वेच्छयैव केतोः ॥ ७ ॥
सुतमदननवान्त्ये पूर्णदृष्टिः सुरारे
सुखलदशमराशौ दृष्टिमात्रत्रयं हि।
सहजरिपुचतुर्थे चाष्टमे चार्धदृष्टि
स्थितिभवनमुपान्त्यं नैव दृश्यं हि राहोः ॥८॥
केषांचिन्मते ५।६।१० स्थानेषु राहोर्दृष्टिः। केतुर्दृष्टिहीनोऽन्धः।
अन्यमते तु राहुवत् केतोरपि दृष्टिः।
केतुर्यत्र तिष्ठति तत्रैव स्थाने पश्यतीति केषांचिन्मतम् ॥६॥

दृष्टि चक्रम्

ग्रहा	एकपाद दृष्टि	द्विपाद दृष्टि	त्रिपाद दृष्टि	पूर्ण दृष्टि.
सू० च० बु० शु०	३।१०	५।६	४।८	७
म०	५।६	४।८	७	३।१०
गु०	४।८	७	३।१०	५।६
श०	७	३।१०	५।६	४।८
रा०		३।६।४।८	२।१०	५।७।६।१२
के०	दृष्टि हीन			

(अथ)

३, १० स्थानो को एक पाद दृष्टि से, ५।६ स्थानो को द्विपाद दृष्टि से, ४।८ स्थानो का त्रिपाद दृष्टि से और सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से ग्रह देखते हैं ॥१॥

दशम तृतीय स्थानों में एक पाद दृष्टि होती है, नवम पंचम स्थानों मे द्विपाद दृष्टि होती है, चतुर्थ अष्टम स्थानों में त्रिपाद दृष्टि होती है, सप्तम स्थान में पूर्ण दृष्टि होती है ॥२॥

शनि ३, १० स्थानो को, बृहस्पति त्रिकोण को, मङ्गल चतुरस्र को, शुक्र सूर्य्य तथा चन्द्रमा सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं ॥३॥

शनि तीसरे और दसवे स्थान को मङ्गल ४।८ स्थानो को, बृहस्पति ५, ९ स्थानों का, तथा सब ग्रह सप्तम स्थान को पूर्ण दृष्टि से, चरण वृद्धि से देखते हैं ॥४॥

होरारत्न नामक ग्रन्थ मे लिखा है कि मङ्गल आदि ग्रहों की सप्तम स्थान में पूर्ण दृष्टि नहीं होता है ऐसा जो लोग कहते हैं उनकी भूल है। इस पर विचार करना चाहिये। अन्यथा मुनि लोगों के वचनों से विरोध होगा ॥ ५ ॥

१, २, ६, ११, १२ स्थानों मे ग्रहों की दृष्टि जातक में नहीं होती है ॥४॥

राहु केतु की दृष्टि

पंचम सप्तम स्थानों में राहु की पूर्ण दृष्टि होती है। तीसरे और छठे स्थान मे एक चरण दृष्टि होती है। द्वितीय और दशम स्थान में आधी दृष्टि होती है। अपने घर में त्रिपाद दृष्टि होती है। ऐसे ही केतु की भी दृष्टि जाननी चाहिये ॥ ७ ॥

कोई आचार्य्य कहते हैं कि ५, ७ ६, १२ स्थानों में राहु की पूर्ण दृष्टि होती है। २।१० स्थानो में त्रिपाद दृष्टि होती है। ३।६।४।८ स्थानो में अर्ध दृष्टि होती है। जिस स्थान में स्थित हो उसमें तथा ११ वें स्थान में राहु की दृष्टि नहीं होती है ॥८॥

किन्हीं आचार्यों का मत है कि ५।६।१२ स्थानो में राहु का दृष्टि होती है। केतु दृष्टि हीन और अन्धा है ॥ किन्हीं के मत से राहु के समान केतु की भी दृष्टि है ॥ कोई आचार्य कहते हैं कि केतु जिस स्थान में स्थित हो उसी स्थान को देखता है ॥६॥

ऊपर लिखे हुए चक्र को देखने से ग्रहों की दृष्टि ठीक समझ में आ जावेगी ॥

ग्रहाणां दृष्टिवशात्फलम्

(१) सूर्योपरि ग्रहाणां दृष्टिफलम्

शुभैर्दृष्टोरवीराजसेवाफलधनायतिम् ।
शत्रुभिः कलहं दुःखं रुजं जठरनेत्रयोः ।
मित्रदृष्टो जयं बन्धु लाभं पापैश्च रोगिताम् ॥

(२) चन्द्रोपरि ग्रहाणां दृष्टिफलम्

धनहानिं शशी पापै शिरोनेत्ररुजं तथा ।
शत्रुभि पापकरणं धननाशं गमागमौ ॥
शुभैररोगितां सौख्यं धनलाभच बन्धुभिः ।
मित्रै लाभं जय क्षेत्र देशलाभं करोति हि ॥

(३) भौमोपरि ग्रहाणां दृष्टिफलम्

पापैर्दृ. कुजः क्षेत्र धनधान्यादिनाशकृत् ।
शत्रुभिर्बन्धनं रोगं चाहव दूरवासनम् ॥
शुभैस्तु विजयं देश क्षेत्रलाभं सुहृत्सुखम् ।
मित्रैश्च धनसम्सिद्धिं करोति हि न संशय ॥

(४) बुधोपरि ग्रहाणां दृष्टिफलम्

शुभैर्बुधो लिपिधानं विद्यालाभंच कौशलम् ।
मित्रै भूपाधनग्राम रत्नलाभंच शत्रुभिः ॥

अतिसारंच दुर्बुद्धिं प्रतीकेषु सदोद्यमम् ।
पापैर्महाविषादंच कुक्षौ शूलं च वर्द्धने ॥

(५) गुरोरुपरि ग्रहाणां दृष्टिफलम्

गुरुः शुभैस्तुसंदृष्टो धर्मकार्योद्यमं सुखम् ।
जयं धनायतिं मित्रैर्दारक्षेत्रादिसंग्रहम ॥
शत्रुभिः कुष्ठरोगंच त्वग्दोषकलहं रणम् ।
पापैः पराजयं बुद्धेः केदारादिवियोजनम् ॥

(६) शुक्रोपरि ग्रहाणां दृष्टिफलम्

शुभैः शुक्रः सुखं योषा लाभं भूपाधनायतिम् ।
मित्रैस्तु पदबन्धादि देशलाभादि चाखिलम् ॥
पापैः पराजयंयोषा वियोगंधननाशनम् ।
शत्रुभिर्जाप्यरोगंच मूत्रकृच्छ्रादिकं तथा ॥

(७) शनेरुपरि ग्रहाणां दृष्टिफलम्

मन्दः पापैस्तथा कुक्षिरोगं बन्धनकं क्षयम् ।
शत्रुभिः शत्रुबाधांच पराभवमथामयम् ॥
शुभैररोगितां मित्रैर्दृष्टो बन्धुसमागमम् ॥

(१) (अर्थ)

जब सूर्य्य को शुभ ग्रह देखे तो राजा की सेवा करने से मनुष्य को धन की प्राप्ति होती है। यदि शत्रु ग्रह देखें तो झगड़ा, दुःख, पेट और आंखो में रोग होते हैं। यदि मित्र ग्रह देखें तो जय तथा बान्धवों में लाभ होता है। यदि पाप ग्रह देखे तो मनुष्य रोगी होता है ॥

(२) (अर्थ)

जब चन्द्रमा को पाप ग्रह देखे तो धन की हानि, सिर तथा नेत्रों में रोग होता है। यदि शत्रु ग्रह देखे तो मनुष्य पाप कर्म करता है, उसके धन का नाश होता है तथा गमागम होते हैं। यदि शुभ ग्रह देखते हों तो मनुष्य

रोग रहित तथा सुखी होता है और उसको बान्धवों के द्वारा धनका लाभ होता है। यदि मित्र ग्रह देखते हों तो लाभ, जय, क्षेत्र तथा देश का लाभ होता है॥

(३) (अर्थ)

यदि मङ्गल को पापग्रह देखें तो क्षेत्र, धन, धान्य आदि का नाश होता है। यदि शत्रु ग्रह देखें तो बन्धन, रोग, युद्ध, तथा दूर देश में निवास होते हैं। यदि शुभ ग्रह देखे तो विजय, देश और क्षेत्र का लाभ तथा मित्रों से शुभ होता है। यदि मित्र ग्रह देखे तो धन की सिद्धि होती है॥

४) (अर्थ)

यदि बुध को शुभ ग्रह देखे तो मनुष्य लेखक, विद्यावान् तथा चतुर होता है। यदि मित्र ग्रह देखें तो आभूषण, धन रेशमी वस्त्र तथा रत्नों का लाभ होता है। यदि शत्रु ग्रह देखें तो अतीसार रोग, दुर्बुद्धि, तथा विपरीत कर्म करने में उद्योग होता है। यदि पाप ग्रह देखे तो बड़ा दुःख और शूल रोग होते हैं॥

(५) (अर्थ)

यदि बृहस्पति को शुभ ग्रह देखे तो मनुष्य धर्म के कार्यों के करने में उद्यम करता है और सुखी होता है। यदि मित्र ग्रह देखे तो जय, धन का लाभ, स्त्री, क्षेत्र आदि का संग्रह होता है। यदि शत्रु ग्रह देखे तो कुष्ठ रोग, त्वचा में दोष, कलह, तथा युद्ध होते हैं। यदि पाप ग्रह देखे तो बुद्धि का पराजय, तथा क्षेत्र आदि से वियोग होता है॥

(६) (अर्थ)

यदि शुक्र को शुभ ग्रह देखे तो सुख, स्त्री का लाभ, आभूषण तथा धन का लाभ होता है। यदि मित्र ग्रह देखे तो पट्टबन्ध तथा देश लाभ आदि होते हैं। यदि पाप ग्रह देखें तो पराजय, स्त्री वियोग तथा धन नाश होते हैं। यदि शत्रु ग्रह देखें तो मूत्रकृच्छ्र आदि बड़े भारी रोग होते हैं॥

(७) (अध)

यदि शनि को पाप ग्रह देखें तो नगर में रोग, बन्धन तथा क्षय होते हैं। यदि शत्रु ग्रह देखें तो शत्रु बाधा, पराभव, तथा रोग होते हैं। यदि शुभ ग्रह देखे तो मनुष्य रोग रहित होता है। यदि मित्र ग्रह देखें तो बान्धवों से सङ्गम होता है ॥

(१३) द्विग्रहादियोगप्रकरणम्

द्विग्रहयोगा

पाषाण यन्त्र क्रय विक्रयेषु कूटक्रियायाञ्च विचक्षणः स्यात् ।
कामी प्रकामी पुरुषः सगर्व सर्वाधिपीशेन रवौ समेते ॥१॥

भवेन्महौजा बलवान्विमूढो गाढोद्धतः सत्यवचा मनुष्यः ।
सुसाहस शूरनरोऽतिहिंस्रो दिवामणौ क्षोणिसुताभ्युपेते ॥२॥

प्रियवचाः सचिवो बहुसेवयार्जित धनश्च कलाकुशलो भवेत् ।
श्रुतपटुर्हिनरो नलिनीपतौ कुमुदिनीपतिसूनुसमन्विते ॥३॥

पुरोहितत्वे निपुणो नृपाणां मन्त्री च मित्रात्तधनः समृद्ध ।
परोपकारी चतुरो दिनेशे वाचामधीशेन युते नरः स्यात् ॥४॥

सङ्गीत वाद्यायुध चारु बुद्धि र्भवेन्नरो नेत्रबलेन हीनः ।
कान्तानिमित्तात्तसुहृत्समाजः सितान्विते जन्मनि पद्मिनीशे ॥५॥

धातु क्रिया पण्य मतिर्गुणज्ञो धर्मप्रियः पुत्रकलत्रसौख्यः ।
सदा समृद्धोऽतितरां नरः स्यात्प्रद्योतने भानुसुतेन युक्ते ॥६॥

आचारहीनः कुटिलः प्रतापी पण्यानुजीवी कलहप्रियश्च ।
स्यान्मातृशत्रुर्मनुजो रुजार्तः शीतद्युतौ भूसुतसंयुते वै ॥७॥

सद्वाग्विलासो धनवान्सुरूपः कृपार्द्रचेताः पुरुषो विनीतः ।
कान्तापरप्रीति र्ताविवक्ता चन्द्रे सचान्द्रौ बहुधर्मकृत्स्यात् ॥८॥

सदा विनीतो दृढगूढमन्त्रः स्वधर्मकर्माभिरतो नरः स्यात् ।
परोपकाराद्दृढरतैकचित्तः शीतद्युतौ वाक्पतिना समेते ॥९॥
वस्त्रादिकानां क्रयविक्रयेषु दक्षो नरः स्याद्व्यसनी विधिज्ञः ।
सुगन्धपुष्पोत्तमवस्त्रचित्तो द्विजाधिराजे भृगुजेन युक्ते ॥१०॥
नानाङ्गनानां परिसेवनेच्छो वैश्यानुवृत्तिर्गतसाधुशीलः ।
परात्मजः स्यात्पुरुषार्थहीन इन्दौ समन्दे प्रवदन्ति सन्तः ॥११॥
बाहुयुद्धकुशलो विपुलश्रीलालसो विविधभेषजपण्यः ।
हेमलोहविधिबुद्धिविभाव सम्भवे यदि कुजेन्दुज योगः ॥१२॥
मन्त्रार्थशास्त्रार्थकलाकलापे विवेकशीलो मनुजः किल स्यात् ।
चमूपतिर्वा नृपतिः पुरेशो ग्रामेश्वरो वा सकुजे सुरेज्ये ॥१३॥
नानाङ्गनाभोगविधानचित्तो द्यूतानृतप्रीतिरतिप्रपञ्चः ।
नरः सगर्वः कृतसर्ववैरो भृगोः सुते भूसुत संयुते स्यात् ॥१४॥
शस्त्रास्त्रवित्सत्कर्मकर्ता स्नेयानृतप्रीतिकरः प्रकामम् ।
सौख्येन हीनोऽतिनरो नरः स्याद्धरासुते मन्दयुतेऽतिनिन्द्यः ॥१५॥
सङ्गीतविद्गीतिपतिर्विनीतः सौख्यान्वितोऽत्यन्तमनोभिरामः ।
धीमान्नरः स्यात्सुतरामुदारः सुगन्धभाग्वाक्पति सौम्ययोगे ॥१६॥
कुलाधिशाली शुभवाग्विलासः सदा सहर्षः पुरुषः सुवेषः ।
भर्ता बहूनां गुणवान्विवेकी सभार्गवे जन्मनि सोमसूनौ ॥१७॥
चलस्वभावश्च कलिप्रियोऽपि कलाकलापे कुशलः सुशीलः ।
पुमान्बहूनां प्रतिपालकश्चेद्बुधेन्प्रसूतौ मिलनं शशन्योः ॥१८॥
विख्यातो भवति पण्डितः सदा पण्डितैरपि करोति विवादम् ।
पुत्रमित्रधनसौख्यसंयुतो मानवः सुरगुरौ भृगुयुक्ते ॥१९॥
शूरोऽग्रयान् ग्रामपुराधिनाथो भवेद्यशस्वी कुशलः क्रियासु ।
धीमान्प्रयप्राप्तमनोरथश्च नरः सुरेड्ये रविजेन युक्ते ॥२०॥

शिल्पलेख्यविधिजातकौतुको दारुणो रणकरो नरो भवेत् ।
अश्मकर्मकुशलश्च जन्मनि भार्गवे रविसुतेन संयुते ॥२१॥

(अर्थ)

जिस मनुष्य के जन्मकाल में सूर्य्य चन्द्रमा एक घर में बैठे हों वह मनुष्य पत्थर और यन्त्रों का बेचने वाला, माया रचने में चतुर, कामी तथा अभिमानी होता है ॥१॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में सूर्य्य मंगल एक घर में बैठे हों वह मनुष्य बड़े तेज वाला, बलवान्, भूलने वाला, अतिशय उद्धत, सत्य बोलने वाला, बड़ा साहसी, शूर तथा हिंसा करने वाला होता है ॥२॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य बुध एक घर में बैठे हों वह मनुष्य प्यारी बोली बोलने वाला, मन्त्री, बहुत सेवा से धन इकट्ठा करने वाला, कलाओं में चतुर, और शास्त्र में प्रवीण होता है ॥३॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य बृहस्पति एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य पुरोहिताई में निपुण, राजा का मन्त्री, मित्रता से धन की समृद्धि वाला, पराया उपकार करने वाला और चतुर होता है ॥४॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य शुक्र एक राशि में हों वह मनुष्य गाने बजाने और शस्त्र विद्या में सुन्दर बुद्धि वाला, नेत्रों के बल से रहित, स्त्री के निमित्त मित्रों का समूह वाला होता है ॥५॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य शनि एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य धातुक्रिया तथा व्यापार में प्रीति रखने वाला, गुण को जानने वाला, धर्म में प्रीति करने वाला, पुत्र और स्त्री के सौख्य से युक्त, तथा अत्यन्त समृद्धियों से सर्वदा युक्त होता है ॥६॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा मङ्गल एक घर में बैठे हों वह मनुष्य आचार रहित, कुटिल, प्रतापी, व्यापार से आजीविका करने वाला, कलह प्रिय, मातृ वैरी, तथा रोग से पीड़ित होता है ॥७॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा बुध एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य श्रेष्ठ वाणी वाला, धनवान्, श्रेष्ठ रूप वाला, दया से युक्त, नम्रता सहित, स्त्री से अधिक प्रीति करने वाला, बड़ा भागी वक्ता तथा धर्मात्मा होता है ॥८॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा बृहस्पति एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य सदा नम्रता सहित, दृढ़ गुप्त मन्त्र वाला, अपने धर्म व कर्म में तत्पर, केवल पराये उपकार करने में चित्त वाला होता है ॥९॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा शुक्र एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य वस्त्रादिकों के खरीदने और बेचने में चतुर, व्यसन सहित विधि का जानने वाला, सुगन्ध पदार्थ उत्तम पुष्प तथा उत्तम वस्त्रों में चित्त रखने वाला होता है ॥१०॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा शनि एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य अनेक स्त्रियों की सेवा करने की इच्छा वाला, वैश्य वृत्ति करने वाला, साधु शील से रहित तथा पुरुषार्थ हीन होता है ॥११॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मङ्गल बुध एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य मल्ल विद्या में चतुर, बहुत स्त्रियों की लालसा करने वाला, अनेक औषधियों का व्यापार करने वाला, सोना और लोहे की विधि में चित्त वाला होता है ॥१२॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मंगल बृहस्पति एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य मन्त्र और शास्त्र विद्या का कला के समूह में चतुर, सेनापति, अथवा राजा, अथवा नगर या ग्राम का स्वामी होता है ॥१३॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मंगल शुक्र एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य अनेक स्त्रियों के भोग में चित्त वाला, जुआ और झूठ में प्रीति करने वाला, प्रपञ्च में तत्पर, अभिमान सहित, और सब से बैर करने वाला होता है ॥१४॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मङ्गल शनैश्चर एक राशि में हों वह मनुष्य अस्त्र और शस्त्रों का जानने वाला, युद्ध करने वाला, चोरी और झूठ मे प्रीति करने वाला, निरन्तर सौख्य रहित तथा अतिनिन्दनीय होता है ॥१५॥

जिस मनुष्य के जन्म काल मे बुध बृहस्पति एक राशि मे बैठे हों वह मनुष्य गायन विद्या का जानने वाला, न्यायाधीश, नम्रता सहित सौख्य युक्त, अत्यन्त सुन्दर, धैर्य्यवान, अत्यन्त उदार, तथा सुगन्ध का भोग करने वाला होता है ॥१६॥

जिस मनुष्यय के जन्म काल मे बुध शुक्र एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य कुल में प्रतापी, श्रेष्ठ वाणी बोलने वाला, सदा हर्ष सहित, श्रेष्ठ वेष, वहुत मनुष्यों का स्वामी, गुणवान्, और विवेकी होता है ॥१७॥

जिस मनुष्य के जन्म काल मे बुध शनैश्चर एक राशि मे बैठे हों वह मनुष्य चञ्चल स्वभाव, कलह प्रिय, कलाओं के समूह मे चतुर, श्रेष्ठ स्वभाव वाला, तथा बहुत मनुष्यो का पालन करने वाला होता है ॥१८॥

जिस मनुष्य के जन्म काल मे बृहस्पति शुक्र एक राशि मे बैठे हों वह मनुष्य विद्या से युक्त, सदा पण्डितो से विवाद करने वाला, तथा पुत्र मित्र और धन के सौख्य से युक्त होता है ॥१९॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में बृहस्पति शनैश्चर एक राशि मे बैठे हों वह मनुष्य शूरवीर, धनवान्, ग्राम और नगर का स्वामी, यश वाला, कलाओं मे चतुर, तथा स्त्री के आश्रय से मनोरथ प्राप्त करने वाला होता है ॥२०॥

जिस मनुष्य के जन्म काल मे शुक्र शनैश्चर एक राशि मे बैठे हों वह मनुष्य शिल्प शास्त्र और लेखन विधि मे चतुर, भयानक युद्ध करने वाला तथा पत्थर के काम मे चतुर होता है ॥२१॥

त्रिग्रहयोगाः

शूराश्च यन्त्राश्रवविधिप्रवीणास्त्रपाकृपाभ्यां सुतरां विहीनाः ।
नक्षत्रनाथक्षितिपुत्रमित्रैरेकत्रसंस्थैर्मनुजा भवन्ति ॥१॥
भवेन्महौजा नृपकार्यकर्ता वार्ताविधौ शास्त्रकलासु दक्षः ।
दिवामणिज्ञामृतरश्मिसंस्थे प्राणी भवेदेकगृहप्रयातैः ॥२॥
सेवाविधिज्ञश्च विदेशगामी प्राज्ञः प्रवीणश्चपलोऽतिधूर्तः ।
नरो भवेच्चन्द्रसुरेन्द्रवन्द्य प्रद्योतनानां मिलने प्रसूतौ ॥३॥
परस्वहर्ता व्यसनानुरक्तो विमुक्तसत्कर्मरुचिर्नरः स्यात् ।
मृगाङ्कपद्मेरुहबन्धुशुक्रा ह्येकत्र भावे यदि संयुताः स्युः ॥४॥
परेङ्गितज्ञो विधनश्च मन्दो धातुक्रियायां निरतो नितान्तम् ।
व्यर्थप्रयासप्रकरो नरः स्यात्क्षेत्रे यदैकत्र रवीन्दुमन्दाः ॥५॥
ख्यातो भवेन्मन्त्रविधिप्रवीणः सुसाहसो निष्ठुरचित्तवृत्तिः ।
लज्जार्थजायात्मजमित्रयुक्तो युक्तेषु धार्कक्षितिजैर्नरः स्यात् ॥६॥
वक्तार्थयुक्तः क्षितिपालमन्त्री सेनापतिर्नीतिविधानदक्षः ।
महामनाः सत्यवचोविलासः सूर्याग्जीवैः सहितैर्नरः स्यात् ॥७॥
भाग्यान्वितोऽत्यन्तमतिर्विनीतः कुलीनवान्शीलविराजमानः ।
स्यादल्पजल्पश्चतुरो नरश्चेद्धामास्फुजित्सूर्ययुतिः प्रसूतौ ॥८॥
धनेन हीनः कलहान्वितश्च त्यागी वियोगी पितृबन्धुवर्गैः ।
विवेकहीनो मनुजः प्रसूतौ योगो यदार्कारशनैश्चराणाम् ॥९॥
विचक्षणः शास्त्रकलाकलापे सुसंग्रहार्थः प्रबलः सुशीलः ।
दिवाकरज्ञामरपूजितानां योगे भवेन्ना नयनामयार्तः ॥१०॥
साधुद्वेषी निन्दितोऽत्यन्ततप्तः कान्ताहेतोर्मानवः संयुताश्चेत् ।
दैत्यामात्यादित्यसौम्याख्यखेटा वाचालः स्यादन्यदेशाटनश्च ॥११॥

तिरस्कृतः स्वीयजनैश्च हीनोऽप्यन्यैर्महद्द्वेषकरो नरः स्यात् ।
षण्ढाकृति र्हीनतरानुयातश्चादित्य मन्देन्दुसुतैः समेते ॥१२॥
अप्रगल्भवचनो धनहीनोऽप्याश्रितोऽवनिपनैर्मनुजः स्यात् ।
शूरताप्रियतरः परकार्ये सादरोऽर्क गुरुभार्गव योगे ॥१३॥
नृपप्रियो मित्रकलत्रपुत्रै र्नित्यं युत कान्तवपुर्नरः स्यात् ।
शनैश्चराचार्यदिवामणीनां योगे सुनीत्याव्ययकृत्प्रगल्भः ॥१४॥

रिपुभयपरियुक्तः सत्कथाकाव्य मुक्तः
कुचरितरुचिरेवात्यन्तकण्डूयनार्तः ।
निजजनधनहीनो मानवः सर्वदा स्यात्
कविरविरविजानां संयुतिश्चेत्प्रसूतौ ॥१५॥
भवन्ति दीना धनधान्यहीना नानाविधानात्मजनापमानाः ।
स्युर्मानवाहीनजनानुयाताश्चेत्संयुताः क्षोणिसुतेन्दुसौम्याः ॥१६॥
व्रणाङ्कितः कोपयुतश्चहतो कान्तारत कान्तवपुर्नरः स्यात् ।
प्रसूतिकाले मिलिता भवन्ति चेदारनीहारकरामरेज्याः ॥१७॥
दुःशीलकान्तापतिरस्थिरः स्याद्दुःशीलकान्तो मनुजोऽल्पशीलः ।
नरोभवेज्जन्मनिचैकभावा भौमास्फुजिच्चन्द्रमसो यदिस्युः ॥१८॥
शैशवे हि जननीमृतिप्रदः सर्वदापि कलहान्वितो भवेत् ।
सम्भवे रविभवेन्दुभूसुताः संयुता यदि नरोऽतिगर्हितः ॥१९॥
विख्यातकीर्तिमतिमान्महौजा विचित्रमित्रो बहुभाग्ययुक्तः ।
सद्वृत्त विद्योऽतितरानरःस्यादेकत्रसंस्थैर्गुरुसोमसौम्यैः ॥२०॥

विद्याप्रवीणोऽपिच नीचवृत्तः स्पर्द्धाभिवृद्ध्यंच रुचिर्विशेषात् ।
स्यादर्थलुब्धोहिनरःप्रसूतौ मृगाङ्कसौम्यास्फुजितां युतिश्चेत् ॥२१॥
कलाकलापामलबुद्धिशाली ख्यातः क्षितीशाभिमतोनितान्तम् ।
नरः पुरग्रामपतिर्विनीतो बुधेन्दुमन्दाः सहिता यदिस्युः ॥२२॥

भाग्यभाग्भवति मानवः सदा चारुकीर्तिर्मतिवृत्तिसंयुतः ।
भार्गवेन्दुसुरराजपूजिता सद्युता यदि भवन्ति सम्भवे ॥२३॥
विचक्षणः क्षोणिपतिप्रियश्च सन्मन्त्रशास्त्राभिरतो नितान्तम् ।
भवेत्सुवेषो मनुजो महौजाः संयुक्तमन्देन्दुसुरेज्यपूज्ये ॥२४॥
पुरोधसो वेदविदो वरेण्याः स्युः प्राणिनः पुण्यपरायणाश्च ।
सत्पुस्तकालोकनलेखकेच्छाः कवीन्दुमन्दामिलितार्यजन्मयुः ॥२५॥
क्ष्मापालकः सौम्यकुलेनरः स्यात्कवित्वसङ्गीतकलाप्रवीणः ।
परार्थसंसाधकनैकचित्तो वाचस्पतिज्ञार्यनिसूनुयोगे ॥२६॥
वित्तान्वितः क्षीणकलेवरश्च वाचालताचञ्चलतासमेतः ।
धृष्टः सदोत्साहपरोनरः स्यादेकत्र यातैः कविभौमसौम्यैः ॥२७॥
कुलोचनः क्षीणतनुर्वनस्थ प्रेष्य प्रवासी बहुहास्ययुक्तः ।
स्यात्सोत्साहिष्णुश्च नरोऽपरार्थी मन्दारसौम्यैः सहितैः प्रसूतौ ॥२८॥
सत्पुत्रदारादिसुखैरुपेत क्ष्मापालमान्यः सुजनानुयातः ।
वाचस्पतिक्षोणिसुतास्फुजिद्भिः क्षत्रैयदेकत्रगतैनरः स्यात् ॥२९॥
नृपात्समानं कृपया विहीनं कृशं कुवृत्तं गतमित्रसख्यम् ।
जन्याश्च शक्त्याङ्गिरसावनीजा संयोगभाजो मनुजं प्रकुर्युः ॥३०॥
वासो विदेशे जननीत्वनार्या भार्या तथैवोपहृतिः सुखानाम् ।
दैत्येन्द्रपूज्यावनिजार्कजानां योगे भवेज्जन्म नरस्य यस्य ॥३१॥
नृपानुकम्पो बहुगीतकीर्तिः प्रसन्नमूर्तिर्विजितारिवर्गः ।
सौम्यामरेज्यास्फुजितां प्रसूतौ चेत्संयुतः सत्यपरोनरः स्यात् ॥३२॥
स्थानार्थसद्वैभवसंयुतः स्यादनल्पजल्पो धृतिमान्सुवृत्तः ।
शनैश्चराचार्यशशाङ्कपुत्राः क्षेत्रे यदैकत्रगता भवन्ति ॥३३॥
साधुशीलरहितोऽनृतवक्ता नल्पजल्पनरुचिः खलु धूर्तः ।
दूरयाननिरतश्च कलाज्ञो भार्गवज्ञशनिसंयुतजन्मा ॥३४॥

नीचान्वये यद्यपि जातजन्मा नरः सुकीर्तिः पृथिवीपति स्यात् ।
सद्वृत्तिशाली परिसूतिकाले मन्देज्य शुक्रा मिलितार्यदस्यु ॥३५॥
एकालये चेत्खलखेचराणां त्रय करोत्येव नरं कुरूपम् ।
दारिद्र्यदुःखैः परितप्तदेहं कदापि गेहं न समाश्रयेत्सः ॥३६॥

(त्रय)

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य चन्द्रमा मङ्गल एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य शूरवीर, यन्त्र और अस्त्र विद्या का जानने वाला, लज्जा और कृपा से हीन होता है ॥ १ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल मे सूर्य्य चन्द्रमा बुध एक राशि मे बैठे हों वह मनुष्य बडे तेज वाला, राजा का कार्य्य करने वाला, बात करने में तथा शास्त्र कला में चतुर होता है ॥२॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य चन्द्रमा बृहस्पति एक राशि मे बैठे हों, वह मनुष्य सेवा की विधि जानने वाला, परदेश जाने वाला, बुद्धिमान्, प्रवीण, चपल, तथा अत्यन्त धूर्त होता है ॥३॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल मे सूर्य्य चन्द्रमा शुक्र एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य पराया धन हरने वाला, व्यसनो में आसक्त, तथा सत्कर्मो की रुचि से रहित होता है ॥४॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य चन्द्रमा शनैश्चर एक राशि मे बैठे हों वह मनुष्य पराये इङ्गित का जानने वाला, धन हीन, मन्द बुद्धि, धातु क्रिया में निरन्तर तत्पर, तथा वृथा श्रम करने वाला होता है ॥५॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सू० म० बु० एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य प्रसिद्ध, मन्त्र शास्त्र की विधि में प्रवीण, साहसी, कठोर चित्त वाला, लज्जा, धन, स्त्री, पुत्र, मित्रों से सहित होता है ॥ ६ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल मे सूर्य्य मङ्गल बृहस्पति एक स्थान मे

बैठे हों वह मनुष्य वक्ता, धन सहित, राजा का मन्त्री, सेनापति, नीति विधान में चतुर, उदार चित्त, तथा सत्य बोलने वाला होता है ॥ ७ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य मङ्गल शुक्र एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य भाग्य सहित, अत्यन्त बुद्धिमान्, नम्रता सहित, कुलीन, शीलवान्, थोडा बोलने वाला, तथा चतुर होता है ॥ ८ ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में सूर्य्य मङ्गल शनैश्चर एक राशि में हों वह मनुष्य धन हीन, कलह सहित, त्यागी, पिता के बन्धु वर्ग से वियोगी, तथा विवेक रहित होता है ॥ ९ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सू० बु० बृ० एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य पण्डित, शास्त्रों की कला के समूह में प्रवीण, बड़ा बलवान्, सुशील, तथा नेत्र रोग से पीडित होता है ॥१०॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में, सूर्य्य, बुध, शुक्र एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य साधुओं का वैरी निन्दित, स्त्री के कारण से बहुत संतप्त, बहुत बोलने वाला तथा देशों का भ्रमण करने वाला होता है ॥ ११ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सू० बु० श० एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य तिरस्कार को प्राप्त, अपने जनों से रहित, औरों से बड़ा द्वेष करने वाला, हिजडों की सी आकृति वाला तथा नीच लोगों की सगति करने वाला होता है ॥ १२ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य बृहस्पति शुक्र एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य बोलने में अधृष्ट, धन रहित, राजा का आश्रय करने वाला, शूरता का प्रिय, तथा पराये कामों को उत्साह सहित करने वाला होता है ॥१३॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सू० बृ० श० एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य राजा का प्यारा, मित्र, स्त्री पुत्रों से सहित, शोभायमान शरीर वाला, अच्छी नीति से खर्च करने वाला, तथा बड़ा धृष्ट होता है ॥१४॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में सू० शु० श० एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य शत्रु के भय से युक्त, श्रेष्ठ कथा तथा काव्य से रहित, खोटे कामों में प्रीति करने वाला, अत्यन्त कटू रोग से पीडित, अपने धन तथा बन्धु वर्ग से हीन होता है ॥ १५ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में च० म० बु० एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य दीन, धन धान्य रहित, अपने बन्धु वर्गों से अनेक प्रकार से अपमानित, तथा नीच जनों से सग करने वाला होता है ॥१६॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल मे चं० म० बृ० एक राशि मे बैठे हों वह मनुष्य व्रण से सहित, क्रोध सहित, पराया धन हरने वाला, स्त्री मे प्रीति करने वाला तथा शोभायमान शरीर वाला होता है ॥ १७ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चं० मङ्गल और शुक्र एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य दुष्ट शीला स्त्री का पति, अस्थिर, दुष्ट शीला माता का सन्तान, तथा अल्प शील वाला होता है ॥ १८ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में च० म० श० एक भाव मे बैठे हों उसकी माता बालकपने में मर जाती है, वह सर्वदा कलह करने में तत्पर रहता है, तथा अति निन्दित होता है ॥ १९ ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में चं० बु० बृ० एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य प्रसिद्ध, बुद्धिमान्, बड़े तेजवाला, विचित्र मित्रों से सहित, बहुत भाग्य सहित, अच्छे चाल चलन वाला तथा विद्या सहित होता है ॥२०॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चं० बु० शु० एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य विद्या में प्रवीण, नीच वृत्ति करने वाला, स्पर्धा करने मे रुचि वाला, तथा धन का लोभी होता है ॥२१॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में च० बु० श० एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य कलाओं के समूह में निर्मल बुद्धि वाला, प्रख्यात, राजा का प्यारा, नगर अथवा ग्राम का पति, तथा नम्र होता है ॥२२॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चं० वृ० शु० एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य सदा भाग्यवान्, सुन्दर कीर्ति वाला, बुद्धिमान्, तथा आजीविका सहित होता है ॥२३॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चं० वृ० श० एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य पण्डित राजा का प्रिय श्रेष्ठ मन्त्र शास्त्र में अधिकारी, उत्तम वेष वाला, तथा बड़ा प्रतापी होता है ॥२४॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चं० शु० श० एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य पुरोहित, वेद के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ, पुण्य करने में तत्पर, श्रेष्ठ पुस्तकों को देखने वाला तथा लिखने वाला होता है ॥२५॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मं० बु० वृ० एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य अपने कुल में श्रेष्ठ, काव्य तथा गाने बजाने की कलाओं में प्रवीण, तथा पराये कार्य्य साधन में एकचित्त होता है ॥२६॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मं० बु० शु० एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य धन सहित, दुर्बल देह, बड़ा बोलने वाला, चञ्चलता सहित, धृष्ट, तथा निरन्तर उन्माद में तत्पर होता है ॥२७॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मङ्गल बुध शनैश्चर एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य बुरे नेत्र वाला, दुर्बल देह, वन में वास करने वाला, दूत का काम करने वाला परदेशी, बहुत हास्य सहित, किसी को न सहने वाला, तथा अपराधी होता है ॥ २८ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मं० वृ० शु० एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य श्रेष्ठ पुत्र तथा स्त्री आदि के सुख से युक्त, राजा का माननीय, तथा श्रेष्ठ जनों के साथ रहने वाला होता है ॥२९॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मं० वृ० श० एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य राजा से आदर प्राप्त, कृपा रहित, दुर्बल, खोटी वृत्ति करने वाला, तथा मित्रों की मित्रता से रहित होता है ॥ ३० ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में मं० शु० श० एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य परदेश में वास करने वाला, नीच माता तथा स्त्री से युक्त, तथा सुख हीन होता है ॥ ३१ ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में बु० बृ० शु० एक राशि में हों वह मनुष्य राजा की कृपा सहित, बहुत यश वाला, प्रसन्न मूर्ति, शत्रुओं का जीतने वाला, तथा सत्य में तत्पर होता है ॥३२॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में बु० बृ० श० एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य स्थान तथा धन से युक्त, बहुत बोलने वाला, धृतिमान्, तथा श्रेष्ठ वृत्ति वाला होता है ॥३३॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में बु० शु० श० एक राशि में बैठे हों वह मनुष्य अच्छे शील से रहित, झूठ बोलने वाला, बहुत बोलने वाला, धूर्त, बड़ी दूर की यात्रा करने वाला, तथा कलाओं का जानने वाला होता है ॥३४॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में बृ० शु० श० एक भाव में बैठे हों वह मनुष्य यद्यपि नीच वंश में उत्पन्न हो तथापि श्रेष्ठ कीर्ति वाला, धरती का स्वामी, तथा श्रेष्ठ वृत्ति करने वाला होता है ॥ ३५ ॥

जिस मनुष्य के जन्म समय में तीन पाप ग्रह एक घर में बैठे हों वह मनुष्य बुरे रूप वाला, दारिद्र्य तथा दुःखों से सन्तप्त, कभी घर में न रहने वाला होता है ॥ ३६ ॥

चतुर्ग्रहयोगाः

सूर्येन्दु भौम सौम्यानां योगे लेखकरो नरः ।
मुखरोगयुतश्चौरो मायायां निपुणो भवेत् ॥१॥
सूर्यश्चन्द्रः कुजोजीव एकस्थाने धनी नरः ।
शिल्पगो दीर्घनेत्रश्च स्वर्णाभो वीर्यवान्भवेत् ॥२॥
रवीन्दु भौम शुक्राणां योगे शास्त्रार्थविन्नरः ।

स्त्रीणां सौख्ययुतः पुत्री वाचालो मनुजो भवेत् ॥३॥
सूर्येन्दु भौम मन्दानां योगे दारिद्र्यसंयुतः ।
मूर्खो विषमदेहश्च द्रव्यहीनो भवेन्नरः ॥४॥
सूर्येन्दु बुध जीवानां योगे बहुधनी भवेत् ।
हीनशोकश्च तेजस्वी नीतिशास्त्रविशारदः ॥५॥
अर्केन्दुज कवीनाञ्च योगे कान्तियुतो नरः ।
लघुदेहो भूपमान्यो वाचालो विकलो भवेत् ॥६॥
सूर्य चन्द्रज मन्दानां योगे जातोऽतिनिर्धनः ।
भिक्षाशी नेत्ररोगी च कुटुम्बरहितो नरः ॥७॥
रवीन्दु गुरु शुक्राणां संयोगे नृपपूजितः ।
नीरप्रीतिर्मृगेऽरण्ये रतिमान्निर्गुणः सुखी ॥८॥
रवीन्दु गुरु मन्दानां योगे वित्तसुतान्वितः ।
सुनेत्रो लोकमान्यश्च भार्याप्रीतिः प्रतापवान् ॥९॥
सूर्येन्दु भृगु मन्दानां संयोगे ह्यतिदुर्बलः ।
नारीतुल्योऽसदाचारो भयभीतश्च जायते ॥१०॥
सूर्य भौमज जीवानां संयोगे विजयी भवेत् ।
परदाररतो नित्यं देवताद्विजसेवकः ॥११॥
सूर्येन्दु भौम शुक्राणां योगे दुर्जनमानसः ।
तस्करः स्त्रीरतो नित्यं निर्लज्जो निर्धनो भवेत् ॥१२॥
सूर्य भौमज मन्दानां योगे नीचजनान्वितः ।
मन्त्री सेनापतिर्वीरः काव्यशस्त्रास्त्रविन्नरः ॥१३॥
हंस भौमेज्य शुक्राणां संयोगे सुभगो नरः ।
भूपमान्यो धनी ख्यातो नीतिज्ञो नरपालकः ॥१४॥

सूर्य भूसुत जीवार्कि योगे सेनापति र्भवेत् ।
मन्त्रज्ञो भूपमान्यश्च धनधान्यदयान्वितः ॥१५॥
रवि भौमो भृगुर्मन्दो नीचसङ्गपरो नर. ।
वहुद्वेषी दुराचारो मूर्खस्तु पलभक्षकः ॥१६॥
सूर्य विद्गुरु शुक्राणां संयोगे विनयान्वितः ।
धनी मानी भूमिपालः पुत्रदारसुखान्वित· ॥१७॥
आदित्य वुध जीवार्कि संयोगे प्रभवो नरः ।
नपुंसको महामानी दुराचारो निरुद्यमः ॥१८॥
आदित्य वुध भृग्वार्कि संयोगे सुभगः शुचिः ।
वन्धुमान्यो महाप्राज्ञः पुत्रदारसुखान्वितः ॥१९॥
हंस जीवोशनोमन्द संयोगे कृपणो महान् ।
काव्यकृत्करुणायुक्तो भूपमान्यो भवेन्नरः ॥२०॥
विधु भौमज्ञ शुक्राणां संयोगे कलही भवेत् ।
वन्धुद्वेषी नीचसेवी वेदब्राह्मणनिन्दक ॥२१॥
चन्द्र भौम वुधेज्यानां योगे भूपदयान्वितः ।
सर्वशास्त्रार्थकुशल सत्यवादी सुखी भवेत् ॥२२॥
विधु भौमोशनस्सौम्य संयोगे कुलवञ्चकः ।
लोकद्वेषी दरिद्री च नरः शूरकुलोद्भवः ॥२३॥
इन्दु भैामेज्य शुक्राणां संयोगे विकलो नरः ।
धनपुत्रान्वितो मानी नीतिज्ञः साहसी भवेत् ॥२४॥
चन्द्रार जीव मन्दानां संयोगे नृपपूजित. ।
सत्यवादी सदानन्दो नीचसेवी दयान्वित· ॥२५॥
विधु भैामोशनोमन्द संयोगे पुंश्चलीपतिः ।
द्यूतकर्मरतो नित्यं मद्यमांसप्रियः सदा ॥२६॥

चन्द्रेन्दुजेज्यशुक्राणां योगे दाता दयान्वितः ।
बुद्धिमान्धनसम्पन्नो विद्यावादी विचक्षणः ॥२७॥
चन्द्रेन्दुजेज्य मन्दानां योगे लोकप्रियो नरः ।
यशस्वी ज्ञानसम्पन्नस्तेजस्वी विजितेन्द्रियः ॥२८॥
चन्द्र विच्छुक्र सौरीणां संयोगे नृपपूजितः ।
नेत्ररोगी पुराधीशो बहुदारयुतो धनी ॥२९॥
विधुजीवार्कि शुक्राणां संयोगे ललनाप्रियः ।
धर्मज्ञो निर्धनः प्राज्ञः स्थूलदेहो विचक्षणः ॥३०॥
कुजेज्य बुध शुक्राणां संयोगे कलहप्रियः ।
सुशीलो धनसम्पन्नो राजमान्यो दयान्वितः ॥३१॥
भौम विज्जीव मन्दानां संयोगे निर्धनो भवेत् ।
शुचिः सदा सत्ययुक्तः शूरश्च विनयान्वितः ॥३२॥
भौमेज्य सित मन्दानां संयोगे सुमुखो धनी ।
विद्याविनयसम्पन्नः साहसी सुजनप्रियः ॥३३॥
विद्सितासित भौमानां संयोगे धनवर्जितः ।
पुष्टदेहो मिष्टभाषी महत्क्रियाविशारदः ॥३४॥
जीवज्ञ भृगु सौरीणां योगे कामातुरो जनः ।
शास्त्रविचारको नित्यं वेदवेदाङ्गपारगः ॥३५॥

(अर्थ)

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य, चन्द्र, मंगल, बुध का योग हो वह मनुष्य लेख का करने वाला, मुख का रोगी, चोर, तथा माया में निपुण होता है ॥१॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य, चन्द्रमा, मंगल, बृहस्पति का योग हो वह मनुष्य धनवान्, शिल्प शास्त्र का जानने वाला, बड़े नेत्र वाला, सुवर्ण की सी कान्ति वाला तथा बलवान् होता है ॥२॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य, चन्द्रमा, भौम, शुक्र का योग हो वह मनुष्य शास्त्र के अर्थ को जानने वाला, पुत्र तथा स्त्री से सुखी, तथा बहुत बोलने वाला होता है ॥३॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य चन्द्रमा भौम, शनैश्चर का योग हो वह मनुष्य दरिद्री, मूर्ख, विषम देह तथा धनहीन होता है ॥४॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य, चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति का योग हो वह मनुष्य बडा धनवान्, शोक रहित, तेज युक्त, तथा नीति शास्त्र में पण्डित होता है ॥५॥

जिस मनुष्य के जन्म काल मे सूर्य्य, चन्द्र, बुध, शुक्र का योग हो वह मनुष्य कान्ति सहित, छोटे शरीर वाला, राजा का मान्य, बोलने वाला तथा विकल होता है ॥६॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य, चन्द्रमा, बुध, शनैश्चर का योग हो वह मनुष्य धन रहित, भिक्षा से भोजन करने वाला, नेत्र रोगी, तथा कुटुम्ब से हीन होता है ॥७॥

जिस मनुष्य के जन्म काल मे सूर्य्य, चन्द्रमा बृहस्पति, शुक्र का योग हो वह मनुष्य राजा का पूजनीय, जल मृग तथा वन में प्रीति करने वाला, गुण से रहित, तथा सुखी होता है ॥८॥

जिस मनुष्य के जन्म काल म सूर्य्य चन्द्र, बृहस्पति, शनैश्चर का योग हो वह धन तथा पुत्रों से सहित, अच्छे नेत्र वाला, संसार में मान युक्त, स्त्री से प्रीति करने वाला तथा प्रतापी होता है ॥९॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य, चन्द्रमा, शुक्र, शनैश्चर का योग हो वह अति दुर्बल शरीर वाला, स्त्रियों के तुल्य, खोटा आचार वाला, तथा भय भीत होता है ॥१०॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य मङ्गल बुध, बृहस्पति, का योग हो वह विजयी, पराई स्त्री में सदैव रति करने वाला, देवता तथा ब्राह्मणों का सेवक होता है ॥११॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य, चन्द्रमा, मंगल, शुक्र का योग हो वह खोटे चित्त वाला, चोर, स्त्रियो में प्रीति करने वाला, लज्जा तथा धन से रहित होता है ॥१२॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य, मंगल, बुध शनैश्चर का योग हो वह नीच संगति से युक्त, मंत्री, सेनापति, वीर, काव्य शास्त्र तथा अर्थों को जानने वाला होता है ॥१३॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य, मंगल, बृहस्पति, शुक्र का योग हो वह सुन्दर, राजा का मान्य, धनवान्, प्रख्यात, नीति का जानने वाला तथा मनुष्यों का पालन करने वाला होता है ॥१४॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य, मंगल, बृहस्पति, शनैश्चर का योग हो वह सेनापति, मन्त्र का जानने वाला, राजा का मान्य, धन धान्य तथा दया से सहित होता है ॥१५॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य, मङ्गल, शुक्र, शनैश्चर का योग हो वह नीच जाति के मनुष्यो से संग करने वाला, बहुत वैर करने वाला, दुष्ट आचार वाला, मूर्ख, तथा मांस का खाने वाला होता है ॥१६॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र का योग हो वह नम्रता सहित, धनवान्, अभिमानी, भूमि का स्वामी, पुत्र तथा स्त्री के सुख सहित होता है ॥१७॥

जो मनुष्य सूर्य्य, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर के योग में उत्पन्न हो वह नपुंसक, बड़ा अभिमानी, खोटे कर्म करने वाला, तथा उद्यम रहित होता है ॥१८॥

जो मनुष्य सूर्य्य, बुध, शुक्र, शनैश्चर के योग में उत्पन्न हो वह श्रेष्ठ भाग्य वाला, पवित्र, भाइयो से पूज्य, बडा पण्डित, पुत्र तथा स्त्री के सुख सहित होता है ॥१९॥

जो मनुष्य सूर्य्य, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर के योग में उत्पन्न हो वह

महा कृपण, काव्य का करने वाला, करुणा युक्त तथा राजमान्य होता है ॥२०॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्र, मङ्गल, बुध, शुक्र का योग हो वह कलह करने वाला, भ्राताओं का द्रोही, नीच जनों से प्रीति करने वाला, वेद तथा शास्त्र का निन्दक होता है ॥२१॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्र, मङ्गल, बुध, बृहस्पति का योग हो वह राजा की दया से सहित, सम्पूर्ण शास्त्रों में प्रवीण सच बोलने वाला तथा सुखी होता है ॥२२॥

जो मनुष्य चन्द्र, मङ्गल, बुध, शुक्र के योग में उत्पन्न हो वह कुल में वंचक, संसार का वैरी, दरिद्री, तथा शूर होता है ॥२३॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा, मगल, बृहस्पति, शुक्र का योग हो वह मनुष्य विकल, धन पुत्र से सहित, अभिमानी, नीति को जानने वाला तथा साहसी होता है ॥२४॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा, मङ्गल, बृहस्पति, शनैश्चर का योग हो वह राजपूजित, सच बोलने वाला, सदा आनन्द युक्त, नीचों की सेवा करने वाला, तथा दया से सहित होता है ॥२५॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा, मङ्गल, शुक्र, शनैश्चर का सयोग हो वह व्यभिचारिणी स्त्री का पति, सदैव जुआ खेलने वाला, तथा मद्य मांस को खाने वाला होता है ॥२६॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति, शुक्र का योग हो वह दाता, दया सहित, बुद्धिमान्, धन युक्त, विद्या का वाद करने वाला तथा चतुर होता है ॥२७॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति शनैश्चर का योग हो वह संसार को प्यारा, कीर्तिमान्, ज्ञान सहित, तेजस्वी, तथा इन्द्रियों का जीतने वाला होता है ॥२८॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा, बुध, शुक्र, शनैश्चर का संयोग हो वह राजपूजित, नेत्ररोगी, नगर का स्वामी, बहुत स्त्रियों से युक्त, तथा धनवान् होता है ॥२९॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर का संयोग हो वह मनुष्य स्त्री का प्यारा, धर्म का जानने वाला, धन रहित, पण्डित, स्थूल शरीर, तथा चतुर होता है ॥३०॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मंगल, बुध, बृहस्पति शुक्र का संयोग हो वह मनुष्य कलह करने वाला, सुशील, धनवान्, राजमान्य, तथा दयावान् होता है ॥३१॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में मंगल, बुध, बृहस्पति, शनैश्चर का योग हो वह धन रहित, पवित्र, सदा सच बोलने वाला, शूर, तथा नम्रता सहित होता है ॥३२॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मंगल, बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर का संयोग हो वह सुन्दर मुख वाला धनवान्, विद्या तथा नम्रता सहित साहसी, तथा अच्छे मनुष्यों का प्यारा होता है ॥३३॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मङ्गल बुध, शुक्र, शनैश्चर का संयोग हो वह धन रहित, पुष्ट शरीर वाला, मीठा बोलने वाला, तथा मल्ल विद्या में पण्डित होता है ॥३४॥

जिस मनुष्य के जन्म काल म बुध बृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर का योग हो वह कामातुर, शस्त्र विद्या से प्रीति करने वाला, वेद तथा वेद के अङ्गों में पारङ्गत होता है ॥३५॥

पञ्च ग्रह योगाः

भार्याहीन सदा दुःखी दुष्टः क्रोधी महाछली ।
हंसा च गुरुपर्यन्तैः संयोगे पञ्चभिग्रहैः ॥१॥

मिथ्यावादी भ्रातृहीनो दयालुः परसेवकः ।
क्लीवाकृति र्द्वादशात्मचन्द्र भौमज्ञ भार्गवैः ॥२॥
अल्पजीवी सदा दुःखी भार्यापुत्रविवर्जितः ।
सूर्येन्दुज्ञ कुजार्कीणां संयोगे तस्करो भवेत् ॥३॥
मातृपितृसुखैर्हीनो नेत्रदोषी च दुःखितः ।
गान विद्यारतो भौम भानु चन्द्रेज्य भार्गवैः ॥४॥
परस्वहर्ता व्यसनी साधुद्वेषी जडाकृतिः ।
कातरः सूर्यसंयोगे चन्द्रार गुरु सौरिभिः ॥५॥
परदाररतो द्वेषी धनधर्मविवर्जितः ।
संयोगे जायते भानु चन्द्रार भृगु सौरिभिः ॥६॥
राजमान्यो धनी मानी न्यायाधीशो विचक्षणः ।
रवीन्दुज्ञेज्य शुक्राणां संयोगे प्रभवो नर ॥७॥
वेश्यागामी ऋणग्रस्तो दुराचारो भयान्वितः ।
धर्मद्वेषी नरो भानु चन्द्रज गुरु सौरिभि ॥८॥
देहरोगी द्रव्यहीनः पुत्रमित्रविवर्जितः ।
बहुरोगान्वितो भानु चन्द्रज्ञ भृगु सौरिभिः ॥९॥
वाक्यजालरत पापी चलचित्तोऽङ्गनाप्रियः ।
शत्रुभिस्तप्त आदित्य चन्द्र जीव सितासितैः ॥१०॥
सेनापतिर्नरः कामी यशस्वी बहुसेवक ।
रव्यार ज्ञेज्य शुक्राणां संयोगे नृपपूजितः ॥११॥

भिक्षाशी च नरो रोगी स्वल्पवित्तः सुतान्वितः ।
वृद्धो जडो भानु भौम बुध जीव शनैश्चरैः ॥१२॥
स्थानभ्रष्टो व्याधियुक्तः शत्रुग्रस्तो बुभुक्षित ।
सूर्य शुक्रज्ञ मन्दार संयोगे विकलो नरः ॥१३॥

प्राज्ञो धनी बन्धुयुक्तो धातुयन्त्रात्मकारकः ।
तपस्वी भानु भौमार्कि भृगुजीवा न्वितैर्भवेत् ॥१४॥
दयालुर्धार्मिको वक्ता मित्रयुक्तो धनान्वितः ।
सामन्तः सूर्य विद्रेव गुरु शुक्र शनैश्चरैः ॥१५॥
सुशीलः पापरहितो मित्रद्रव्यै सुखान्वितः ।
बहुविद्यायुत श्चन्द्र भौमज्ञ गुरु भार्गवैः ॥१६॥
परान्नभोगी मलिनः परसेवान्वितः सुधीः ।
योगे भवति चन्द्रार जीव शुक्र शनैश्चरैः ॥१७॥
मित्रद्वेषी दुराचारो निष्ठुरः परनिन्दकः ।
चन्द्र भौमज्ञ शुक्रार्कि संयोगे प्रभवो नरः ॥१८॥
राजतुल्यो राजमान्यो लोकपूज्यो गणाधिपः।
चन्द्रज्ञ गुरु शुक्रार्कि संयोगे जायते नरः ॥१९॥
धनी मन्त्री शुचिर्वक्ता दीर्घायुः स्वजनप्रियः ।
भौमज्ञ गुरु शुक्रार्कि संयोगे नृपवल्लभ ॥२०॥

(अर्थ)

जिस मनुष्य के जन्मकाल में सूर्य से बृहस्पति पर्यन्त पांच ग्रहों का योग हो वह स्त्री रहित, सदा दुःखी, दुष्ट, क्रोधी तथा बड़ा छल प्रपञ्च वाला होता है ॥ १ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, बुध, शुक्र एक स्थान पर बैठे हों वह झूठ बोलने वाला, भ्रातृ हीन, दयावान्, पर सेवक तथा हिजड़ों की सी आकृति वाला होता है ॥ २ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य चन्द्रमा मङ्गल बुध शनि का योग हो वह अल्पायु, सदा दुःखी, स्त्री पुत्र हीन तथा चोर होता है ॥ ३ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य चन्द्रमा मङ्गल बृहस्पति शुक्र का

योग हो वह माता पिता के सुख से रहित, नेत्र में दोष वाला, दुःखी तथा गायन विद्या में प्रीति वाला होता है ॥४॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य चन्द्रमा मङ्गल बृहस्पति शनि का योग हो वह पराये धन का हरने वाला, व्यसनी, सज्जनों से द्वेष करने वाला, जड़ाकृति तथा कातर होता है ॥ ५ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य चन्द्रमा मङ्गल शुक्र शनैश्चर का योग हो वह पराई स्त्री में रमण करने वाला, सब से वैर करने वाला, तथा धन धर्म से रहित होता है ॥ ६ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य चन्द्रमा बुध बृहस्पति शुक्र का योग हो वह राजा का मान्य, धनवान्, आदर युक्त, न्यायाधीश, तथा बड़ा चतुर होता है ॥ ७ ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में सूर्य्य चन्द्रमा बुध बृहस्पति शनैश्चर का योग हो वह वेश्या गमन करने वाला, ऋण से ग्रस्त, दुष्ट कामों का करने वाला, भय से युक्त, तथा धर्म का द्वेष करने वाला होता है ॥ ८ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य चन्द्रमा बुध शुक्र शनैश्चर का योग हो वह रोगी, धन से हीन, पुत्र मित्रों से रहित, बहुत से रोगों से सहित होता है ॥ ९ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल मे सूर्य्य चन्द्रमा बृहस्पति शुक्र शनैश्चर का योग हो वह वाणी का जाल रचने वाला, पापी, चल चित्त, स्त्री का प्यारा, तथा शत्रुओं से संतप्त होता है ॥ १० ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में सूर्य्य मङ्गल बुध बृहस्पति शुक्र का संयोग हो वह सेनापति, कामी, कीर्तिमान् तथा बहुत नौकरों से सहित होता है ॥११॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य मङ्गल बुध बृहस्पति शनैश्चर का योग हो वह भिक्षा से भोजन करने वाला, रोग सहित, थोड़े धन से युक्त, पुत्रवान्, वृद्ध तथा जड होता है ॥ १२ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य मङ्गल बुध शुक्र शनैश्चर का योग हो वह स्थानभ्रष्ट, व्याधि युक्त, शत्रुओं से ग्रस्त, तथा भूख से दुःखी होता है ॥ १३ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य्य मङ्गल बृहस्पति शुक्र शनैश्चर का योग हो वह पण्डित, धनवान्, बान्धवों से युक्त, धातु के यन्त्रों का बनाने वाला, तथा तपस्वी होता है ॥ १४ ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में सूर्य्य बुध बृहस्पति शुक्र शनैश्चर का योग हो वह दयावान्, धर्मात्मा, वक्ता, मित्र तथा धन से सहित तथा अधीश्वर होता है ॥ १५ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्र मङ्गल बुध बृहस्पति शुक्र का योग हो वह श्रेष्ठ स्वभाव वाला, पाप से रहित, मित्र तथा धन से सुखी, तथा बहुत विद्या से युक्त होता है ॥ १६ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा मङ्गल बृहस्पति शुक्र शनैश्चर का योग हो वह पराये अन्न का भोग करने वाला, मलिन, पराई सेवा में तत्पर तथा पण्डित होता है ॥ १७ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा मङ्गल बुध शुक्र शनैश्चर का योग हो वह मित्रों से वैर करने वाला, खोटे कर्म करने वाला, कठोर चित्त, तथा पराई निन्दा करने वाला होता है ॥ १८ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा बुध बृहस्पति शुक्र शनैश्चर का योग हो वह राजा के सदृश, राज मान्य, संसार में पूजनीय, तथा गणाधीश होता है ॥ १९ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मङ्गल बुध बृहस्पति शुक्र शनैश्चर का योग हो वह धनवान्, मन्त्री, पवित्र, वक्ता, दीर्घायु, तथा अपने मनुष्यों को प्यारा होता है ॥ २० ॥

षड्ग्रहयोगाः

अल्पभाषी धनैर्युक्तो विद्याधर्मसुखैर्युतः ।
हंसाद्यैर्भृगुपर्यन्तैः संयुक्तै जायतेनरः ॥१॥
परोपकारी शुद्धात्मा दयालुश्चञ्चलो नरः ।
विपिने रमते नित्यं विनाशुक्रंतु षड्ग्रहैः ॥२॥
चिन्तायुक्तो नरो मानी सङ्ग्रामे विजयी तथा ।
वनाद्रौ रमते घाती विनाजीवंतु षड्ग्रहैः ॥३॥
धनाढ्य कृपण॰ क्रोधी ग्रामपूज्य॰ सुखप्रिय॰ ।
भूमिपालकृपापात्रं विना चन्द्र सुतं ग्रहैः ॥४॥
भार्यापुत्रस्नेहहीनो [illegible] सर्वज्ञो वेदपारग॰ ।
भूपमान्यो दयायुक्तो विना भौमेन षड्ग्रहैः ॥५॥
भिक्षाशी च क्षमायुक्तो ब्रह्मविचारनोनरः ।
विना चन्द्र ग्रहैः सर्वै॰ संयोगे धनवर्जित॰ ॥६॥
भूपमान्यो धनी ख्यातो बहुभार्यो गुणान्वित॰ ।
चन्द्राद्यैः शनि पर्यन्ते संयोगे प्रभवो नरः ॥७॥

(अथ)

जिस मनुष्य के जन्म काल में सूर्य से आदि लेकर शुक्र पर्यन्त ६ ग्रहों का योग हो वह थोड़ा बोलने वाला, धन से युक्त, विद्या धर्म तथा सुख सहित होता है ॥ १ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में शुक्र के विना ६ ग्रहों का योग हो वह पराया उपकार करने वाला, शुद्ध अन्तःकरण वाला, दयावान्, चंचल, तथा वन में विचरने वाला होता है ॥ २ ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में बृहस्पति के विना ६ ग्रहों का योग हो वह चिन्ता से युक्त, अभिमानी, संग्राम में जय पाने वाला, वन तथा पर्वत में विचरने वाला, तथा घाती होता है ॥ ३ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में बुध के विना ६ ग्रहों का योग हो वह धनयुक्त, कृपण, क्रोधी, ग्रामपूज्य, सुख चाहने वाला, तथा राजाओं का कृपापात्र होता है ॥ ४ ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में मङ्गल के विना ६ ग्रहों का योग हो वह स्त्री, पुत्र तथा धन से रहित, धर्म जानने वाला, वेद में पारङ्गत, राजा का मान्य, तथा दया सहित होता है ॥ ५ ॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में चन्द्रमा के विना ६ ग्रहों का योग हो वह भिक्षा मागने वाला, क्षमायुक्त, ब्रह्म विद्या में तत्पर तथा धन से रहित होता है ॥ ६ ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में चन्द्रमा से लेकर शनि पर्य्यन्त ६ ग्रहों का योग हो वह राजमान्य, धनवान्, संसार में प्रख्यात, बहुत स्त्री तथा गुणों से युक्त होता है ॥ ७ ॥

सप्तग्रहयोगः

दिवाकरनिभ तेजा भूपमान्यः शिवप्रियः ।
सूर्याद्यैः शनिपर्यन्तैर्योगे दानी धनान्वितः ॥१॥

(अर्थ)

जिस मनुष्य के जन्मकाल में सूर्य से शनि पर्यन्त सातों ग्रह एक स्थान पर बैठे हों वह सूर्य के समान तेजस्वी, राजमान्य, शिवभक्त, दानी तथा धनवान् होता है ॥ १ ॥

(१४) राजयोगप्रकरणम्

राजयोगा भाग्यप्रतिपादकाः

राजयोगा भाग्यप्रतिपादकाः । राजैवभवेदितिनायमर्थः ॥
भाग्यादिभावप्रतिपादितं यद्भाग्यं भवेत्तत्खलु राजयोगैः ।
तान्विस्तरेण प्रवदामि सम्यक्तैः सार्थकं जन्मयतोनराणाम् ॥

(अर्थ)

यदि मङ्गल, शनि, सूर्य, बृहस्पति चारों ग्रह अथवा इनमें से तीन ग्रह केन्द्र में अपने उच्च के हों और इनमें से एक उच्च ग्रह लग्न में हो तो १६ राजयोग होते हैं। इन्हीं चार ग्रहों में से दो ग्रह उच्च के केन्द्र में हों चन्द्रमा कर्क का हो अथवा केवल एक ग्रह उच्च का हो चन्द्रमा स्वक्षेत्री हो तो सब मिलकर बत्तीस प्रकार के राजयोग होते हैं॥

चतुर्णां बलवतां भावानां फलम्

भावैश्चतुर्भिर्बलिभिर्धनभाग्यायकर्मभि ।
सम्पूर्णवित्तः सततं कुबेर इव जायते ॥

(अर्थ)

जिस मनुष्य के चार भाव अर्थात् धन, भाग्य, लाभ तथा कर्म स्थान बलवान् हो वह कुबेर के समान धनाढ्य होता है॥

पंचमहापुरुषयोगाः

ये महापुरुषसंज्ञका नृपाः पंच पूर्वमुनिभि प्रकीर्तिताः ।
वच्मि तान्सुसरलान्महोक्तिभी राजयोगविधिदर्शनेच्छया ॥
स्वगेहतुङ्गाश्रयकेन्द्रसंस्थै
रुच्चोपगैर्वावनिसूनुमुख्यै ।
क्रमेण योगा रुचकाख्य भद्र
हंसाख्यमालव्यशशाभिधाना ॥
केन्द्रोच्चगायद्यपिभूसुतायामार्तंडशीतांशुयुता भवन्ति ।
कुर्वन्तिनोर्वीपति मात्मपाके यच्छन्ति ते केवलसत्फलानि ॥

(अर्थ)

प्राचीन काल के मुनियों ने पञ्च महापुरुष नाम के जो राजयोग कहे हैं उनका वर्णन करते हैं। जब मङ्गल आदि पांच ग्रह स्वगृही, अथवा उच्च के होकर केन्द्र में हों तो यथा क्रम रुचक, भद्र हंस, मालव्य, तथा शश नाम के ५ राजयोग होते हैं॥

यद्यपि मङ्गल आदि ग्रह केन्द्र में उच्च के हों परन्तु सूर्य्य अथवा चन्द्रमा से युक्त हों तो मनुष्य राजा नहीं होता है किन्तु उनके फलपाक समय में अच्छे भोग आदि प्राप्त होते हैं ॥

राजयोगाः

सुखिनः प्रकृष्टकार्या राजप्रतिरूपकाश्च राजानः ।
एकद्वित्रिचतुर्भिर्जायन्तेऽतः परं दिव्याः ॥१॥
नभश्चराः पञ्च निजोच्चसंस्था
यस्य प्रसूतौ स तु सार्वभौमः ।
त्रयः स्वतुङ्गादि गताः स राजा
राजात्मजोऽन्यस्य सुतोऽत्र मन्त्री ॥२॥
स्वोच्चे मूर्ति गतेऽमृतांशुतनये नक्रे सवक्रे शनौ
चापे वागधिपेन्दुभार्गवयुते स्याज्जन्म भूमीपतेः ॥३॥
दिनाधिराजे मृगराजसंस्थे नक्रे सवक्रे कलशेऽर्कसूनौ ।
पाठीरलग्ने शशिना समेते महीपतेर्जन्म महौजसः स्यात् ॥४॥
महीसुते मेषगते तनुस्थे बृहस्पतौ वा तनुगे स्वतुङ्गे ।
योगद्वयेऽस्मिन्नृपती भवेतां जिनारिपक्षौ नृपनीतिपक्षौ ॥५॥
वाचस्पतिः स्वोच्चगतो विलग्ने मेषे दिनेश शनिशुक्रसौम्याः
लाभालयस्थाः किल भूमिपालं तं भूतलस्याभरणं गृणन्ति ॥६॥
मन्दो यदा नक्रविलग्नवर्ती मृगेन्द्रयुग्माजतुलाकुलीराः ।
स्वस्वामियुक्ता जनयन्ति नाथं पाथोनिधिप्रान्तमहीतलस्य ॥७॥
द्वन्द्वे दैत्यगुरौ निशाकरसुते मूर्तौ स्वतुङ्गे स्थिते
नक्रे वक्रशनैश्चरे च शफरे चन्द्रामरेज्यौ स्थितौ ।
योगोऽयं प्रभवेत्प्रसूतिसमये यस्यावनीशो महान् ॥८॥
सिंहोदयेऽर्कस्त्वजगो मृगाङ्कः शनैश्चरः कुम्भधरे सुरेज्यः ।
धनुर्धरे चेन्मकरे महीजो राजाधिराजो मनुजो भवेत्सः ॥९॥
मीने निशाकरः पूर्णः सर्वग्रहनिरीक्षितः ।
सार्वभौमं नरं कुर्यादिन्द्रतुल्यपराक्रमम् ॥१०॥

कन्यालग्नगते बुधे च विबुधामात्ये च जायास्थिते
भौमार्कौ सहजेऽर्कजोऽरिभवनेऽम्बुस्थे भृगोर्नन्दने।(राजा) ॥११॥
मीनोदये दानवराजपूज्यश्चन्द्रामरेज्यौ भवतः कुलीरे ।
मेषेऽर्कभौमौ नृपतिः किलस्यादाखण्डलेनापि तुलां प्रयाति ।१२।
छायासुतो नक्रविलग्नयातश्चास्ते प्रसूतौ यदि पुष्पवन्तौ ।
लाभे कुजो वै भृगुजोऽष्टमस्थः स्याद्भूपतिर्भूपकुलप्रसूतः ॥१३॥
सुरासुरेज्यौ भवतश्चतुर्थेऽत्यर्थं समर्थः पृथिवीपतिः स्यात् ॥
कर्कस्थितो देवगुरुः सचन्द्रः काश्मीरदेशाधिपतिं करोति ॥१४॥
सुरासुरेज्यस्थितदृष्टिरिन्दुः स्वोच्चे स्थिता भूमिपतिं करोति ।
विलोकयन्तः परिपूर्णचन्द्रं शुक्रज्ञजीवा जनयन्ति भूपम् ॥१५॥
मेषे गतो मूर्तिगतः प्रसूतौ बृहस्पतिश्चास्तगतः कलावान् ।
रसातले व्योमगते सितश्चेन्महीपतिर्गीतदिगन्तकीर्तिः ॥१६॥
गुरुः कुलीरोपगतः प्रसूतौ स्मरास्मुखस्थाः भृगुमन्दसौम्याः ।
तद्यानकाले जलधेर्जलानि भेरीनिनादोच्छलनं प्रयान्ति ॥१७॥
वृषे शशी लग्नगतोऽम्बुसप्तखस्था रवीज्यार्कसुता भवन्ति ।
तद्दण्डयात्रासु रजोऽन्धकारा द्दिनेऽपि रात्रिः कुरुते प्रवेशम् ॥१८॥
गुर्विन्दुसौम्यास्फुजितश्च यस्य मूर्तित्रिधर्मायगता भवन्ति ।
मृगेऽर्कसूनुस्तनुगोऽत्रनूनमेकातपत्रां सभुनक्ति धात्रीम् ॥१९॥
तुङ्गस्थितौ शुक्रबुधौ विलग्ने नक्रे च वक्रो धनुषीज्यचन्द्रौ ।
प्रसूतिकाले क्रियतो भवेताम् आखण्डलौ भूमितलेऽपि संस्थौ ॥२०॥
कर्केऽर्कचन्द्रौ सुरराजमन्त्री गत्रुस्थितश्चापि बुधः स्वतुङ्गे ।
कश्चिद्बली लग्नगतः सराजा राजाधिराजाभिधया समेतः ॥२१॥
गुरुर्निजोच्चे यदि केन्द्रशाली राज्यालये दानवराजपूज्यः ।
प्रसूतिकाले किल तस्य मुद्रा चतुःसमुद्रावधिगामिनी स्यात् ॥२२॥

देवाचार्य दिनेश्वरौ क्रियगतौ मेषूरणे क्षोणिजः
पुण्येभार्गवसौम्यशीतकिरणायस्यप्रसूतौस्थिताः।(राजास्यात्)।२३।
मेषोदयेऽर्कश्च गुरुः कुलीरे तुलाधरे मन्दविधू भवेताम् ।
भवेन्नृपालोऽमलकीर्तिशाली भूपालमालापरिपालिताज्ञ ।२४।
पश्यन्मृगाङ्कात्मज मिन्द्रमन्त्री विचित्रसम्पन्नृपतिं करोति ।
नक्षत्रनाथोऽप्यधिमित्रभागे शुक्रेण दृष्टो नृपतिं करोति ॥२५॥
स्वोच्चेस्थितः सोमसुत स्तसोमः कुर्यान्नरं मागधदेशराजम् ॥
जन्माधिपो जन्मविलग्नपो वा केन्द्रे बली नीचकुलेऽपिभूपम् ।
कुर्यादुदारं सुनरां पवित्रं किमत्र चित्रं क्षितिपालपुत्रम् ॥२६॥
मेषे दिनेशः शशिना समेतो यस्य प्रसूतौ सतु भूपतिः स्यात् ॥
स्वतुङ्गगेहोपगतौ सितेज्यौ केन्द्रत्रिकोणे कुरुतश्च भूपम् ॥२७॥
प्रसूतिकाले मदने धने च व्यये विलग्ने यदि सन्ति खेटाः ।
ते छत्रयोगं जनयन्ति तस्य प्राक्पुण्यपाकाभ्युदयोहि यस्य ॥२८॥
एकोऽपि शस्त शुभदः स्वतुङ्गे केन्द्रे पतङ्गो बलवान्ग्रहश्च ।
सुतस्थितेनामरपूजितेन चेन्मानवो मानवनायकः स्यात् ॥२९॥
मृगराशिं परित्यज्य स्थितो लग्ने बृहस्पतिः ।
करोति पृथिवीनाथं मत्तेभपरिवारितम् ॥३०॥
कलाकलापाधिकृताधिशाली चन्द्रो भवेज्जन्मनि केन्द्रवर्ती ।
विहाय लग्नं कुरुते नृपालं लीलाविलासाकलितारिवृन्दम् ॥३१॥
केन्द्रगः सुरगुरुः सशशाङ्को यस्य जन्मनि च भार्गवदृष्टः ।
भूपतिर्भवतिसोऽतुलकीर्ति र्नीचपो यदि नकश्चिदिहस्यात् ॥३२।
धनस्थिता सौम्यसितामरेज्या मन्दारचन्द्रा यदि सप्तमस्थाः ।
यस्य प्रसूतौ सतु भूपतिः स्यादरातिदन्तिक्षतिसिंह एव ॥३३॥
सिंहे कमलिनीभर्ता कुलीरस्थो निशापतिः ।
दृष्टौ द्वावपि जीवेन पार्थिवं कुरुतस्तदा ॥३४॥

बुधः कर्कटमारूढो वाक्पतिश्च धनुर्द्धरे ।
रविभूसुतदृष्टौ तौ कुरुतः पृथिवीपतिम् ॥३५॥
शफरीयुगले चन्द्रः कर्कटे च बृहस्पतिः ।
शुक्रः कुम्भे भवेद्राजा गजवाजिसमृद्धिभाक् ॥३६॥
नीचस्थितो जन्मनि यो ग्रहः स्यात्तद्राशिनाथश्च तदुच्चनाथः ।
भवेत्त्रिकोणे यदि केन्द्रवर्ती राजा भवेद्धार्मिकचक्रवर्ती ॥३७॥
मूर्तौ वा पञ्चमस्थाने यदा जीवो भवेत्तदा ।
दशमे चन्द्रमा वापि राज्याध्यक्षस्तदा भवेत् ॥३८॥
जन्माधिपतिः केन्द्रे बलपूर्णः करोति परमर्द्धिम् ॥
जीवः शशाङ्कसूर्यात्पञ्चम नवम स्तृतीयगो लग्नात् ।
यदि भवति राजा ॥३९॥
एक एव ग्रहः स्वर्क्षे वर्गोत्तमगतो यदि ।
बलवान्मित्रसंदृष्टः करोति स महीपतिम् ॥४०॥
केन्द्रे विलग्ननाथः श्रेष्ठबलो मानवाधिपं कुरुते ॥
सर्वैर्गगनभ्रमणैर्दृष्टे लग्ने भवेन्महीपालः ॥४१॥
प्रालेयरश्मिः परिसूतिकाले निरीक्ष्यमाणः सकलैर्नभोगैः ।
कुर्यान्नरं भूपतिसार्वभौमम् ॥४२॥
चन्द्रो निशायां स्वसुहृन्नवांशे शुक्रेण दृष्टो नृपतिं करोति ।
स्वांशेऽधिमित्रांशगतो यदि स्याज्जीवेन दृष्टः कुरुतेऽधिभूपम् ॥४३॥
लग्नं विहाय केन्द्रे सकलकलापूरितो निशानाथः ।
विदधाति महीपालम् ॥४४॥
जीवो बुधो भृगुसुतोऽथ निशाकरो वा
धर्मे विशुद्धतनवः स्फुरदंशुजालाः ।
मित्रैर्निरीक्षितयुता यदि सूतिकाले
कुर्वन्ति देवसदृशं नृपतिं महान्तम् ॥४५॥

लग्नात्षष्ठ उताष्टमे यदि शुभाः पापैरयुक्तेक्षिता
मन्त्री दण्डपतिः क्षितेरधिपति र्नेता बहूनां पति. ।।४६।।
केन्द्रे विलग्ननाथ. श्रेष्ठबलो मानवाधिपं कुरुते ।।४७।।
दिवाकरसांपतेर्मन्त्री कुर्यात्पश्यन्बुध नृपम् ।।
यद्दिपश्यतिदानवार्चित वचसामधिपस्तदा भवेन् (नृपति) ।४८।
महीसुतः केन्द्रसमाश्रितो बलो रवीन्दुवाचस्पतिभिर्निरीक्षित ।
भवेन्न् पेन्द्र· ।।४६।।
कृत्तिका रेवती स्वाती पुष्य स्थायी भृगो· सुतः। (नृपंकरोति)।५०।
लग्नपो धनपश्चैव धनभावस्थितो यदि ।
तदा कोटिमितं द्रव्य ।।५१।।
चतुर्थं स्वामिना दृष्टं तन्मित्रेण च पापति ।
लग्नं वापि यदा यस्य तस्य सम्पद्भवेद्ध्रुवम् ।।५२।।
चतुर्थ हिरेकगृहे च संस्थे धीधर्मदुश्चिक्यतनुस्थितैर्वा ।
दासस्य जात· क्षितिपालतुल्यं ।।५३।।
शुक्रो यस्य बुधो यस्य यस्य केन्द्रे बृहस्पति ।
दशमोऽङ्गारको यस्य स जात कुलदीपकः ।।५४।।
लग्ने यस्य बुध· शुक्र केन्द्रे यस्य बृहस्पति ।
दशमोऽङ्गारको यस्य सजात· कुलदीपक ।।५५।।
लग्ने यस्य बुधो नास्ति केन्द्रे नास्ति बृहस्पतिः ।
दशमोऽङ्गारको नास्ति सजातः किं करिष्यति ।।५६।।
एक एव सुरराजपुरोधाः केन्द्रगोऽथ नवमपञ्चमगो वा ।
लाभगो भवति यस्य विलग्ने शेषखेचरबलैरबलैः किम् ।।५७।।
किं कुर्वन्ति ग्रहाः सर्वे यस्य केन्द्रे बृहस्पतिः ।
मत्तमातङ्गयूथानां भिनत्त्येकोऽपिकेसरी ।।५८।।

बुधभार्गवजीवाना मेकोऽपि यदि केन्द्रगः ।
पुमाञ्जातः सदीर्घायु र्गुणवान्राजवल्लभः ॥५९॥
तुलाकोदण्डमीनस्थो लग्नस्थोपि शनैश्चरः ।
करोति भू भुजां नाथं मत्तेभपरिवारितम् ॥६०॥
वनेऽपि मित्राणि भवन्ति तेषां येषां गुरु र्मित्रनिकेतनस्थः ॥
कामेऽजकन्ये (?) रिपुरन्ध्रसंस्थे केन्द्रत्रिकोणे व्ययगे च राहुः ।
कामी च शूरोवलवान्सभोगी गजाश्वछत्रं वहुपुत्रताच॥६१॥
मृगपति वृष कन्या कर्कटस्थे च राहु
र्भवति विपुललक्ष्मी राजराज्याधिपोवा ॥६२॥
लाभे त्रिकोणे यदि शीतरश्मिः करोत्यवश्यं क्षितिपालतुल्यम् ॥
उषः कालेऽभिजित्काले गोधूल्यां वा महानिशि ।
अत्र गोपालजातोऽपि राजा भवति निश्चितम् ॥६३॥
एको जीवो यदा लग्ने सर्वे योगास्तदा शुभाः ॥
लग्नाधिपोवा जीवो वा शुक्रो वा यदि केन्द्रगः ।
तस्य पुंसश्च दीर्घायुः सपुमान्राजवल्लभ ॥६४॥
चतुः सागरगे चन्द्रे कोणे चैव दिवाकरे ।
अपिदासकुले जातो राजा भवति निश्चितम् ॥६५॥
लग्नतश्चान्यतो वापि क्रमेण पतिता ग्रहा· ।
एकावली समाख्याता महाराजो भवेन्नर ॥६६॥
चतुर्ग्रहा एकगता· पापाः सौम्या भवन्ति हि ।
भ्रातृधीधर्मलग्नार्थे राजयोगो भवेदयम् ॥६७॥
त्रिकोणे सप्तमे लग्ने भवन्ति च यदा ग्रहाः ।
हंसयोगं विजानीयात्स्ववंशस्य च पालकः ॥६८॥
षष्ठाष्टमे द्वादशे च द्वितीये च यदा ग्रहाः ।
सिंहासनाख्योयोगोऽयं राजा सिंहासने भवेत् ॥६९॥

कर्किणि लग्ने जीवे मृगलाञ्छने तथा लाभे ।
मेषेऽर्के लाभगतौ बुधशुक्रौ जायते भूपः ॥७०॥
बुधादित्य समायोगे धार्मिकश्च विचक्षणः ।
धनी बहुसुतो ज्ञेयो भृत्ययुक्तो जितेन्द्रियः ॥७१॥
सौम्यास्त्रयो लाभगता यदिस्युः कुर्वन्ति जातं नृपतिं महान्तम् ।
पापास्त्रयो दुःखदरिद्रशोकैर्युतं नितान्तं बहुभक्षकञ्च ॥७२॥
सिंहलग्नेसमायातेलग्नस्पश्यतिलग्नप । साम्राज्यंजायतेपुंसः७३
लग्ने सौरिस्तथा चन्द्र त्रिकोणे जीवभास्करौ ।
कर्मस्थाने भवेद्भौमो राजयोगस्तदा भवेत् ॥७४॥

(अर्थ)

यदि मनुष्य का एक ग्रह उच्च का हो तो वह सुखी होता है । यदि दो ग्रह उच्च के हों तो वह बड़ा उत्कट कर्म करता है । यदि ३ ग्रह उच्च के हों तो वह राजा के समान होता है । यदि ४ ग्रह उच्च के हों तो वह राजा होता है । यदि ४ से अधिक उच्च के ग्रह हों तो वह दिव्य पुरुष अर्थात् अवतारी पुरुष होता है ॥ (जैसा कि ऊपर श्री रामचन्द्र महाराज तथा श्री श्रीकृष्ण महाराज की जन्म कुण्डलिया लिखी हैं जिनको देखने से यह विदित होगा कि उनके ५ ग्रह उच्च के पड़े थे) ॥१॥

जिसके जन्म में ५ ग्रह उच्च के पड़े हों वह मनुष्य चक्रवर्ती राजा होता है । यदि ३ ग्रह उच्च के हों तो वही मनुष्य राजा होता है जो राजा का पुत्र हो । परन्तु यदि राजवंश में उत्पन्न न हो तो मनुष्य मन्त्री होता है ॥२॥

यदि लग्न में उच्च का बुध बैठा हो, वक्री शनि मकर राशि का हो तथा मीन राशि में बृहस्पति चन्द्रमा और शुक्र हों तो मनुष्य राजा होता है ॥३॥

यदि सिंह का सूर्य्य हो, मकर का मङ्गल हो, कुम्भ का शनि हो, मीन राशि में चन्द्रमा वैठा हो, तो बालक वडा तेजस्वी राजा होता है ॥४॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में मेष राशि का मंगल लग्न में वैठा हो, अथवा बृहस्पति अपने उच्च का होकर लग्न में वैठा हो, वह राजा होता है, अपने शत्रुओं को जीत लेता है तथा राजनीति में चतुर होता है ॥५॥

जिसके लग्न में बृहस्पति अपने उच्च का होकर वैठा हो, मेष राशि में सूर्य्य वैठा हो, लाभ स्थान में शनि शुक्र तथा बुध वैठे हों, वह भूतल में सर्वोपरि राजा होता है ॥६॥

जब लग्न में मकर राशि का शनि हो, तथा सिंह, मिथुन, मेष, तुला, तथा कर्क राशिया अपने २ स्वामियो से युक्त हो, तो मनुष्य समुद्र पर्य्यन्त पृथ्वी का राजा होता है ॥७॥

जिसके जन्म समय में मिथुन का बृहस्पति हो, उच्च का बुध लग्न में वैठा हो, वक्री शनैश्चर मकर राशि में हो, मीन राशि में चन्द्रमा बृहस्पति हों वह मनुष्य वडा भारी राजा होता है ॥८॥

सिंह राशि में सूर्य्य हो, मेष में चन्द्रमा हो, कुम्भ में शनि हो, धन में बृहस्पति हो, मकर का मङ्गल हो तो मनुष्य राजाओं का राजा होता है ॥९॥

जिस मनुष्य के जन्म काल में पूर्ण चन्द्रमा मीन राशि का हो, शेष सब ग्रहों की उस पर दृष्टि हो तो वह सार्वभौम होता है और इन्द्र के समान उसका पराक्रम होता है ॥१०॥

जिसके जन्म लग्न में कन्या राशि का बुध हो, सप्तम स्थान में बृहस्पति हो, भ्रातृ स्थान में मगल तथा सूर्य्य हों, छठे स्थान में शनि हो, चौथे स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य राजा होता है ॥११॥

जिसके जन्म लग्न में मीन राशि में शुक्र वैठा हो, कर्क राशि में चन्द्रमा तथा बृहस्पति हों, मेष राशि में सूर्य्य तथा मगल हों, वह मनुष्य इन्द्र के समान पराक्रम वाला राजा होता है ॥१२॥

जिसके जन्म लग्न में मकर राशि का शनैश्चर हो, सप्तम स्थान में सूर्य तथा चन्द्रमा हो, लाभ स्थान में मङ्गल हो, अष्टम स्थान में शुक्र हो वह राजा होता है यदि राजवंश में उत्पन्न हो ॥ १३ ॥

जिसके चतुर्थ स्थान में बृहस्पति तथा शुक्र बैठे हों वह मनुष्य पृथ्वी का स्वामी होता है। यदि कर्क राशि का बृहस्पति चन्द्रमा सहित हो तो कश्मीर देश का राजा होता है ॥ १४ ॥

यदि चन्द्रमा उच्च का हो, इसको बृहस्पति तथा शुक्र देखते हों तो मनुष्य राजा होता है। जब पूर्ण चन्द्रमा को शुक्र बुध तथा बृहस्पति देखते हों तब भी मनुष्य राजा होता है ॥ १५ ॥

जिसके जन्म लग्न में मेष राशि का बृहस्पति हो, सप्तम स्थान में चन्द्रमा हो, चतुर्थ अथवा दशम स्थान में शुक्र हो वह मनुष्य प्रसिद्ध राजा होता है ॥ १६ ॥

जिसके जन्म समय में कर्क का बृहस्पति हो, सप्तम चतुर्थ तथा दशम स्थानो में शुक्र शनि तथा मङ्गल यथाक्रम हों वह मनुष्य राजा होता है ॥ १७ ॥

जिसके जन्म समय में वृष का चन्द्रमा हो, चतुर्थ सप्तम दशम स्थानों में सूर्य बृहस्पति तथा शनि यथाक्रम हो वह राजा होता है। जिस समय उसकी सवारी निकलता है उस समय इतनी धूल उड़ती है कि दिन में भी रात्रि के समान अन्धकार हो जाता है ॥१८॥

जिस मनुष्य के लग्न, तृतीय, धर्म तथा लाभ स्थानो में बृहस्पति चन्द्रमा बुध तथा शुक्र यथाक्रम हो, मकर राशि का शनि लग्न में बैठा हो, वह मनुष्य चक्रवर्ती राजा होता है ॥ १९ ॥

जिसके लग्न में बुध तथा शुक्र उच्च के हो कर बैठे हों, मकर का मङ्गल हो, धन राशि में बृहस्पति तथा चन्द्रमा हो वह मनुष्य पृथ्वीतल में इन्द्र के समान होता है ॥ २० ॥

जिसके जन्म समय कर्क राशि में सूर्य्य, चन्द्रमा तथा वृहस्पति हों, बुध उच्च का होकर छठे घर में हो, तथा कोई वलवान् ग्रह लग्न में बैठा हो वह मनुष्य राजाओं का भी राजा होता है ॥ २१ ॥

जिसके जन्मकाल में उच्च का वृहस्पति केन्द्र में बैठा हो, दशम स्थान में शुक्र हो उस राजा का सिक्का समुद्र पर्य्यन्त चलता है ॥ २२ ॥

जिसके जन्म समय वृहस्पति तथा सूर्य्य मेष राशि के हो, दशम स्थान में मङ्गल हो, धर्म स्थान में शुक्र बुध तथा चन्द्रमा हों वह मनुष्य राजा होता है ॥ २३ ॥

मेष का सूर्य्य हो, कर्क का वृहस्पति हो, तुला के शनि तथा चन्द्रमा हों तो मनुष्य इतना वड़ा राजा होता है कि और राजा उसकी आज्ञा को सिर से धारण करते हैं ॥२४॥

यदि बुध को वृहस्पति देखे तो मनुष्य विचित्र सम्पत्ति वाला राजा होता है ॥ चन्द्रमा अधिमित्र के घर मे वैठा हो तथा शुक्र उसको देखता हो तव भी मनुष्य राजा होता है ॥२५॥

जिसके जन्म काल में उच्च का बुध चन्द्रमा के साथ वैठा हो वह मनुष्य मगध देश का राजा होता है । जिसके जन्म राशि का स्वामी अथवा जन्म लग्न का स्वामी वलवान् होकर केन्द्र में वैठा हो वह मनुष्य यद्यपि नीच कुल में भी उत्पन्न हो तथापि उदार तथा पवित्र आचरण वाला राजा होता है । यदि राजा ही का पुत्र राजा हो तो इसमें आश्चर्य्य की कोई वात नहीं है ॥२६॥

जिसके जन्म समय सूर्य्य चन्द्रमा मेष राशि में एक साथ वैठे हों वह मनुष्य राजा होता है । जव शुक्र तथा वृहस्पति उच्च के होकर केन्द्र अथवा त्रिकोण स्थानो में हों तो मनुष्य राजा होता है ॥२७॥

जिसके जन्मकाल में सप्तम, धन, व्यय तथा लग्न स्थानों में ग्रह हों तो छत्र योग होता है और वह योग उसी मनुष्य का पडता है जिसने पूर्व जन्म में अच्छे कर्म किये हों ॥२८॥

जिसके जन्म समय एक भी शुभ ग्रह उच्च का हो, तथा केन्द्र में बलवान् सूर्य्य पर पंचम स्थान स्थित बृहस्पति की दृष्टि हो वह मनुष्य राजा होता है ॥२९॥

जिसके जन्म लग्न में मकर राशि को छोड कर शेष किसी राशि में बृहस्पति बैठा हो वह मनुष्य राजा होता है और बड़े बड़े मत्तहाथी उसके यहां होते हैं ॥३०॥

जिसके जन्म समय बलवान् चन्द्रमा लग्न के अतिरिक्त केन्द्र में बैठा हो वह मनुष्य शत्रुओं को जीत कर राजा होता है ॥३१॥

जिसके जन्म समय में चन्द्रमा सहित बृहस्पति केन्द्र में स्थित हो, शुक्र की उस पर दृष्टि हो, कोई ग्रह नीच का न हो वह मनुष्य बडी कीर्ति वाला राजा होता है ॥३२॥

जिसके जन्म समय मे बुध शुक्र तथा बृहस्पति धन स्थान में बैठे हों, शनि, मंगल तथा चन्द्रमा सप्तम स्थान में हों वह मनुष्य राजा होता है तथा शत्रुओं का नाश करता है ॥३३॥

सिंह राशि में सूर्य्य हो कर्क राशि मे चन्द्रमा हो, दोनों को बृहस्पति देखे तो मनुष्य राजा होता है ॥३४॥

यदि कर्क का बुध हो, धन का बृहस्पति हो, उन दोनो को सूर्य्य तथा मङ्गल देखे तो मनुष्य राजा होता है ॥३५॥

यदि मीन अथवा मिथुन राशि में चन्द्रमा हो, कर्क में बृहस्पति हो, कुम्भ में शुक्र हो तो मनुष्य राजा होता है ॥३६॥

जन्म समय में जो ग्रह नीच राशि का हो उस राशि का जो स्वामी हो उसका जो उच्च स्थान हो उस उच्च का स्वामी यदि त्रिकोण अथवा केन्द्र में हो तो मनुष्य चक्रवर्ती राजा होता है ॥३७॥

जिसके लग्न अथवा पंचम स्थान में बृहस्पति हो, दशम स्थान में चन्द्रमा हो वह मनुष्य राजा होता है ॥३८॥

जन्म लग्न का स्वामी पूर्ण वल से युक्त होकर केन्द्र में वैठा हो तो बड़ी सम्रृद्धि करता है ।। जव चन्द्रमा अथवा सूर्य्य से पचम नवम स्थानों में अथवा लग्न से तृतीय स्थान में वृहस्पति हो तो मनुष्य राजा होता है ॥३९॥

यदि केवल एक ग्रह अपने घर का, अथवा वर्गोत्तम हो, वलवान् तथा मित्र ग्रह से दृष्ट हो तो मनुष्य राजा होता है ॥४०॥

जव लग्नेश वलवान् होकर केन्द्र में वैठा हो तो मनुष्य राजा होता है ।। जव सव ग्रह लग्न को देखते हों तो मनुष्य राजा होता है ॥४१॥

जव जन्म समय में चन्द्रमा को सव ग्रह देखते तो हों मनुष्य राजा होता है ॥४२॥

जव रात्रि का जन्म हो, चन्द्रमा अपने मित्र के नवांश में हो तथा शुक्र उसको देखता हो तो मनुष्य राजा होता है । यदि दिन में जन्म हो तथा चन्द्रमा अपने नवांश अथवा अधिमित्र के नवांश में हो, वृहस्पति की उस पर दृष्टि हो तो मनुष्य राजा होता है ॥४३॥

यदि पूर्णवल वाला चन्द्रमा लग्न के अतिरिक्त केन्द्र में हो तो मनुष्य राजा होता है ॥४४॥

जिसके धर्म स्थान में वृहस्पति, वुध, शुक्र अथवा चन्द्रमा चेष्टावल युक्त हों, मित्र ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त हों वह मनुष्य वडा प्रतापी राजा होता है ॥४५॥

जव लग्न से छठे तथा आठवें स्थान में शुभ ग्रह हों तथा पाप ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट न हों तो मनुष्य या तो मन्त्री होता है या राजा होता है या सेनापति होता है ॥४६॥

जव लग्नेश वलवान् होकर केन्द्र में बैठा हो तो मनुष्य राजा होता है ॥४७॥

जव वृहस्पति वुध को देखता हो अथवा वृहस्पति शुक्र को देखता हो तो मनुष्य राजा होता है ॥४८॥

जव मगल वलवान् होकर केन्द्र में वैठा हो, सूर्य्य चन्द्रमा तथा वृहस्पति उसको देखते हों तो मनुष्य राजा होता है ॥४९॥

जब कृत्तिका, रेवती, स्वाती अथवा पुष्य नक्षत्र में शुक्र स्थित हो तो मनुष्य राजा होता है ॥ ५० ॥

जब लग्नेश अथवा धनेश धन भाव में स्थित हों तो मनुष्य करोड़ पति होता है ॥ ५१ ॥

जिसका चतुर्थ अथवा लग्न स्थान अपने स्वामी अथवा अपने मित्र से दृष्ट हो वह मनुष्य अवश्य सम्पत्ति वाला होता है ॥ ५२ ॥

जिसके पञ्चम, धर्म, तृतीय अथवा लग्न स्थानो में से किसी एक स्थान में चार ग्रह बैठे हो वह मनुष्य यद्यपि दासीपुत्र हो तथापि राजा के समान होता है ॥ ५३ ॥

जिसके केन्द्र में शुक्र बुध अथवा बृहस्पति हों, दशम मङ्गल हो, वह मनुष्य कुलदीपक होता है ॥ ५४ ॥

जिसके लग्न में बुध अथवा शुक्र हो, केन्द्र में बृहस्पति हो, दशम मङ्गल हो वह कुलदीपक होता है ॥ ५५ ॥

जिसके लग्न में बुध न हो, केन्द्र में बृहस्पति न हो, दशम मङ्गल हो उसका जन्म वृथा है ॥ ५६ ॥

जिसके जन्म में केवल एक बृहस्पति केन्द्र, नवम, पञ्चम, लाभ अथवा लग्न स्थान में बैठा हो, शेषग्रह बलहीन भी हो तो क्या कर सकते हैं ॥ ५७ ॥

जिसके केन्द्र में बृहस्पति हो, शेष ग्रह चाहे सबल भी हो तो क्या कर सकते हैं, जैसे केवल अकेला सिंह सैकड़ों मत्त हाथियों के झुण्डों का नाश कर सकता है ॥ ५८ ॥

जिसके जन्म समय में बुध, शुक्र, बृहस्पति इन तीनों में से एक भी ग्रह केन्द्र में स्थित हो वह मनुष्य दीर्घायु, गुणवान् तथा राजप्रिय होता है ॥ ५९ ॥

जिसके लग्न में तुला, धन अथवा मीन राशि का शनैश्चर हो वह मनुष्य राजा होता है और उसके यहां मत्त हाथी बंधे रहते हैं ॥६०॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में वृहस्पति अपने मित्र के घर में बैठा हो उसको वन में भी मित्र मिल जाते हैं। जिसके जन्मकाल में मिथुन, मेष अथवा कन्या राशि का राहु षष्ठ, अष्टम, केन्द्र, त्रिकोण अथवा द्वादश स्थान में बैठा हो वह मनुष्य कामी, शूर, बलवान्, भोगी, हाथी घोड़े और छत्र वाला, तथा बहुत पुत्रवाला होता है ॥ ६१ ॥

जिसके जन्म समय में मकर, वृष, कन्या अथवा कर्क का राहु हो वह मनुष्य बड़ा लक्ष्मीवान् होता है अथवा उसे राज्य मिलता है ॥६२॥

जब लाभ अथवा त्रिकोण मे चन्द्रमा हो तो मनुष्य राजा के समान होता है ॥ जिस मनुष्य का जन्म उष काल अथवा अभिजित्काल अथवा गोधूलि अथवा महानिशा में हो वह मनुष्य यद्यपि ग्वाले का पुत्र हो तथापि राजा होता है ॥ ६३ ॥

जब केवल एक वृहस्पति लग्न में हो तो सब शेष योग शुभ होते है ॥ जिसके जन्म लग्न का स्वामी अथवा वृहस्पति अथवा शुक्र केन्द्र मे हो वह पुरुष दीर्घायु तथा राजप्रिय होता है ॥६४॥

जिसके केन्द्र में चन्द्रमा हो, त्रिकोण में सूर्य्य हो, वह पुरुष यद्यपि दास कुल में उत्पन्न हो तथापि राजा होता है ॥६५॥

यदि लग्न से अथवा किसी और स्थान से यथाक्रम ग्रह पड़े हों तो एकावली योग होता है। ऐसे योग वाला मनुष्य राजा होता है ॥६६॥

यदि तृतीय, पचम, धर्म, लग्न अथवा धन स्थान में चार ग्रह (चाहे पाप ग्रह हों चाहे सौम्य ग्रह हों) एक साथ पड़े हों तो राज योग होता है ॥ ६७ ॥

यदि त्रिकोण, सप्तम, तथा लग्न में ग्रह बैठे हों तो हस योग होता है। इस योग में उत्पन्न हुआ मनुष्य अपने वश का पालन करने वाला होता है ॥ ६८ ॥

जब ६, ८, १२, २ स्थानों में ग्रह बैठे हों तो सिंहासन योग होता है। इस योग में उत्पन्न होने से मनुष्य राजा होकर सिंहासन पर बैठता है ॥६९॥

जिसके लग्न में कर्क राशि का बृहस्पति हो, चन्द्रमा लाभ स्थान में बैठा हो, मेष का सूर्य्य हो, लाभ स्थान में बुध शुक्र हों वह राजा होता है ॥७०॥

यदि किसी के जन्मकाल में बुध तथा सूर्य्य एक साथ बैठे हों तो बुधादित्य योग होता है। इस योग में उत्पन्न होने से मनुष्य धर्मात्मा, पण्डित, धनवान् बहुत पुत्र वाला, नृपों से सहित, तथा जितेन्द्रिय होता है ॥७१॥

जब लाभ स्थान में तीन सौम्य ग्रह बैठे हों तो मनुष्य बड़ा राजा होता है। यदि तीन पाप ग्रह बैठे हों तो मनुष्य दुःख दारिद्र्य तथा शोक से युक्त और बहुत खाने वाला होता है ॥७२॥

जिसके जन्म में सिंह लग्न हो तथा लग्नेश लग्न को देखता हो वह मनुष्य सम्राट् होता है ॥७३॥

यदि जन्म लग्न में शनि तथा चन्द्रमा हों, त्रिकोण में बृहस्पति तथा सूर्य्य हों, दशम स्थान में चन्द्रमा हो तो राजयोग होता है ॥७४॥

खानखनाना ज्योतिषे राजयोगाः

यदा मुश्तरी (बृ) कर्कटे वा कमाने (६)
यदा चश्मकोरा (शु) भवेन्मालखाने (२)।
तदा ज्योतिषी क्या लिखेगा पढ़ेगा
हुआ बालका बादशाही करेगा ॥ १ ॥
यदा चश्मकोरा (शु) भवेन्मालखाने (२)
यदा मुश्तरी (बृ) दोस्तखाने विलग्नात्।
उतारिद् (बु) तनुस्थो बृहत्साहवीस्याद्
बृहत्सूर्य (१ सू) मखमल खजाना स्वपूर्णः ॥ २ ॥

उतारिद् (बु) विलग्ने व्यये माहताबो (चं)
रविः खर्चखाने (१२) तमो (रा) मालखाने (२)।
जहानस्य धूरी भवेन्नेकबख्तः
खजानाहयाढ्यो मुलुकसाहबी स्यात् ॥३॥

यदा माहताबो (चं) भवेन्मालखाने (२)
मिरीखो (मं) ऽथवा मुश्तरी (बृ) बख्तखाने (९)।
उतारिद् (बु) विलग्ने भवेद्बख्तपूर्णो
भवेच्छानदारोऽथवा बादशाहः ॥ ४ ॥

भवेदाफतावो (सू) यदा षष्ठखाने
पुनर्दैत्यपीरो (शु) ऽथ केन्द्रे गुरुर्वा।
जातः शुतुर्फीलजातीहयाढ्यो (हाथी घोड़ा ऊंट)
जरा जर्जरी वक्त दाता चिरायुः ॥५॥

यदा चश्मकोरा (शु) भवेद्दोस्तखाने
तथा मुश्तरी (बृ) दोस्तखाने विलग्नात्।
उतारिद् (बु) धनस्थो बृहत्साहबीस्याद्
बृहत्सूर्य (१ सू) मखमल खजानाश्वपूर्णः ॥६॥

तृतीये भवेदाफतावस्य पुत्रो (श)
यदा माहताबस्य पुत्रो (बु) विलग्ने।
भवेन्मुश्तरी (बृ) केन्द्रखाने नराणां
बृहत्साहबी तस्य तालेबरः स्यात् ॥७॥

यदा मुश्तरी (बृ) पञ्ज (५) खाने मिरीखो (मं.)
यदा बख्तखाने (९) रिपावाफतावः (सू)।
नरो बाअकूफो (बुद्धिमान्) भवेत्कुञ्जरेशो
बृहद्रोशनो वाहिनीवारणाढ्यः ॥८॥

उतारिद (बु) विलग्ने सुखे माहतावो (चं.)
गुरुः कर्म खाने तमो लाभखाने ।
जहानस्य धूरी भवेन्नकवख्तः
खजानाहयाढ्यो मुलकसाहवी स्यात् ॥९॥

यदा देवपीरो (बृ) भवेद्बख्तखाने (९)
पुनर्दैत्यपीरो (शु) भवेद्धर्मखाने ।
उतारिद् (बु) विलग्ने तृतीये मिरीख (मं.)
शनि र्लाभखाने नरः काविलः (योग्य) स्यात् ॥१०॥

महल् (स्वगृहं) माहतावो (चं) व्यये चाफतावो (सू)
यदा मुश्तरी (बृ) केन्द्रखाने त्रिकोणे ।
भवेन्मानवो देवतजम्कराढ्यो
बृहत्साहवी वख्तखूबी कमालः ॥११॥

खजाना गजाढ्यो भवेल्लश्कराढ्यो
जहानप्रियो मुश्तरी (बृ) जायखाने (७) ।
मिरीखो (मं)ऽथ लाभे बुधः पञ्चखाने (५)
शनिः शत्रुखाने नरः काविलः स्यात् ॥१२॥

कमर (चं.) केन्द्रखाने शनिः शत्रुखाने
त्रिकोणेऽथवा मुश्तरी (बृ) चश्मकोरा (शु) ।
स जातो नरः साविरः सद्गुणज्ञो
भवेच्छायरो (कवि) मालदारोऽथ खूवी ॥१३॥

आयुःखाने चश्मकोरा (शु)
मालखाने च मुश्तरी (बृ) ।
राहु र्जन्म पैदा वखाने
शाह होवे मुल्क का ॥१४॥

मिरीखो (मं)ऽथवा कोशसंस्थो (२) लिखाने
गुरु मींतराशौ जाय (७) माहताबः (मं)।
भवेज्जन्मलग्ने यदा चश्मकोरा (शु)
विपक्षप्रहर्ता जहानप्रचण्डः ॥१५॥
धनस्थः कुमुद्बन्धु (चं) षष्ठेरविःस्यात्
सुखे वुधो ब्योम्नि विद्वत्कविश्च।
वृहत् ओहदा शाल मखमल्बनातः
शुतुर्फील फानूस तम्बू कनातः ॥१६॥
आफतावो (सू) मालखाने (२)
यस्य जन्मनि च ध्रुवम्।
सफल रोजी मुश्किलं
पड़ें फांके मुफ्लिसम् (दरिद्री) ॥१७॥
यदा शत्रु खाने, पड़े उच्च का।
करे खाक दौलत, फिरे जाबजा ॥१८॥
आयुःखाने चश्मकोरा (शु) मालखाने (२) च मुश्तरी (वृ)।
सवाबखाने (६) चन्द्र दीदम्-बादशाह बर्बरी ॥१९॥
आयुःखाने चश्मकोरा (शु) मालखाने (२) च मुश्तरी (वृ)।
राहु जो पैदा बखाने (१) शाह होवे मुल्क का ॥२०॥
हमल (१) आफतावो (सू) वृषे माहताबो (चं.)
यदा मुश्तरी (वृ) केन्द्रखाने त्रिकोणे।
भवेन्मानवो दौलती लश्कराढ्यो
वृहत्साहवी तस्य खूबी कमालः ॥२१॥
यदा भाग्य मालिक भले घर पड़े
कमा कर सुदौलत खजाने भरे।

करे गञ्ज वख्शी अमीरी सुफल
वजीरी अमीरी करे वेफिकर ॥२२॥

सूचना—

यह श्लोक नवाब खानखनाना साहब के समय में पण्डितों की सहायता से बनाये गए थे। इनमें जो योग लिखे हैं वे शास्त्रानुसार हैं और उनके फल ठीक मिलते हैं। चित्त विनोद के निमित्त यहां पर इनका भी संग्रह कर दिया गया है। इन श्लोकों में संस्कृत तथा उर्दू के शब्द मिले हैं। जो कठिन शब्द हैं उनके साम्हने कोष्ठ के भीतर अर्थ लिख दिया गया है। इतनी सहायता से इन श्लोकों का अर्थ समझ में आजावेगा अतः इन श्लोकों का हिन्दी भाषा में अनुवाद करना पिष्ट पेषण समझ कर छोड़ दिया गया है॥

राजयोगभङ्गः

घटोदये नीचगतैस्त्रिभिर्ग्रहै र्बृहस्पतौ नीचगते तथास्ते।
एकोऽपिनेत्रेत्वशुभेच खंगते प्रयान्ति नाशं शतशो नृपोद्भवाः ॥१॥
केन्द्रेषु शून्येषु शुभैर्नचेन्दावस्तं गते नीच मथ प्रयातैः।
चतुर्ग्रहैर्वापि गृहे रिपूणां प्रणश्यते राजकरोहि योगः ॥२॥
सर्वे क्रूराः केन्द्रे नीचारिगता न सौम्यसंदृष्टाः।
शुभदा व्ययरिपुरन्ध्रे तदापि भङ्गो भवेत्कुपतेः ॥३॥
शिशिरकिरणशत्रुर्लग्नगश्चन्द्रदृष्टः
सहजरिपुभवस्था भानुभूपुत्र मन्दाः।
शुभविरहितकेन्द्रै रस्तगैर्वापि सौम्यै
र्नरपतिवरयोगो याति नाशं क्षणेन ॥४॥
पञ्चभिर्निम्नगैः खेटै रस्तं यातैस्तथापिच।
प्रयान्ति विलयं योगा भूभुजां ये प्रकीर्तिताः ॥५॥
परं नीचगते चन्द्रे क्षीणो योगो महीपतेः।
नाशमायाति राजाख्य योगो दैवविलोमतः ॥६॥

तुलाया दशमे भागे स्थितः कमलवोधन. ।
सहस्रं राजयोगानां भङ्गमेव करोत्यसौ ॥७॥
भद्रायां वा व्यतीपाते तथा केतूदये जनिः ।
यस्य तस्य विनश्यन्ति राजयोगफलान्यपि ॥८॥
यदा चन्द्रमा नीचगो मानवानां तदा भाग्य योगा विनष्टाश्च सर्वे ॥९॥
नवायखेशा नीचगा व्यर्थाराजयोगाः ॥ १० ॥

भद्रायां व्यतीपाते जन्म ,, ॥ ११ ॥
परम नीचांशे चन्द्रे ,, ॥ १२ ॥
उच्चगा· खेटा नीचांशगा ,, ॥ १३ ॥
उच्चेऽर्के नीचांशे ,, ॥ १४ ॥
परमनीचगेऽर्के ,, ॥ १५ ॥
नीचगे शुक्रे सिंहांशे वा ,, ॥ १६ ॥
राज्यदा नीचारात्यस्तगा ,, ॥ १७ ॥
दशमे नीचखगे ,, ॥ १८ ॥
ग्रहमात्राद्दृष्टश्चन्द्रो वा लग्नं ,, ॥ १९ ॥
परम नीचांशे जीवे शुक्रे वा ,, ॥ २० ॥
पापा नीचगाः सर्वे कण्टकगा ,, ॥ २१ ॥
सौम्यास्त्रिकगा ,, ॥ २२ ॥
सौम्या अस्तगाः केन्द्रहीना ,, ॥ २३ ॥
लग्ने राहौ चन्द्रदृष्टे ,, ॥ २४ ॥
पापाः षट् त्र्यायगा ,, ॥ २५ ॥

ग्रहैश्चतुर्भिर्यदि पंचभिर्वा षड्भिस्तथैकालयसंस्थितैश्च ।
नश्यंति सर्वे खलु राजयोगाः प्रव्राजिकायोग इति प्रदिष्टः ॥२६॥

(अर्थ)

जब लग्न में कुम्भ राशि हो, तीन ग्रह नीच के हों, बृहस्पति नीच तथा अस्तका हो, एक ग्रह धन स्थान में हो, दशम स्थान में अशुभ ग्रह हो, तो सैकडों भी राजयोग नष्ट हो जाते हैं ॥१॥

जब केन्द्र शून्य हों, अथवा इनमें शुभ ग्रह न हो, चन्द्रमा अस्तका हो, चार ग्रह नीच अथवा शत्रु क्षेत्री हों तो राजयोग नष्ट हो जाते हैं ॥२॥

सम्पूर्ण पापग्रह केन्द्र में बैठे हों, नीच तथा शत्रु के घर के हो, सौम्य ग्रहों की इन पर दृष्टि न हो, शुभ ग्रह ६,८,१२ स्थानों में बैठे हों तो राजयोग भंग हो जाता है ॥३॥

जब राहु लग्न में हो, चन्द्रमा की इस पर दृष्टि हो, सूर्य मंगल तथा शनि १ ६,११ स्थानों में हों, शुभ ग्रह केन्द्र में न हों अथवा अस्तङ्गत हों तो राजयोग भंग हो जाता है ॥४॥

यदि पांच ग्रह नीच के हों अथवा अस्त को प्राप्त हों तो जिन राजयोगों का वर्णन पहिले किया गया है इन सबका नाश हो जाता है ॥ ५ ॥

जब चन्द्रमा परम नीच का हो तो राजयोग नष्ट होजाते हैं ॥६॥

जब चन्द्रमा तुला के दशम अंश में स्थित हो तो सहस्र राजयोगों का भी भंग हो जाता है ॥७॥

जिस मनुष्य का जन्म भद्रा, व्यतीपात अथवा केतु अर्थात् पूंछ वाले तारे के उदय होने में हो उसके सब राजयोग फल नष्ट हो जाते हैं ॥ ८ ॥

जब चन्द्रमा नीच का हो तो सब भाग्य योग नष्ट हो जाते हैं ॥९॥

जब ६, १२, तथा १० स्थानों के स्वामी नीच हों तो सब राज-योग व्यर्थ होते हैं ॥ १० ॥

जिसका जन्म भद्रा अथवा व्यतीपात में हो उसके सब राजयोग व्यर्थ होते हैं ॥ ११ ॥

जब चन्द्रमा परम नीच अंश का हो तो सब राजयोग व्यर्थ होते हैं ॥ १२ ॥

जब उच्च के ग्रह नीचांश में स्थित हो तो राजयोग व्यर्थ होते हैं।।१३।।

जब उच्च का सूर्य्य नीच अंश में हों तो राजयोग व्यर्थ होते हैं॥१४॥

जब सूर्य्य परम नीच का हो तो राजयोग व्यर्थ होते हैं ।। १५ ।।

जब शुक्र नीच का अथवा सिंह के अंश का हो तो राजयोग व्यर्थ होते हैं ।। १६ ॥

जब राज्य देने वाले ग्रह नीच, शत्रु अथवा अस्त के हों तो राजयोग व्यर्थ हैं ।। १७ ।।

जब दशम स्थान में नीच ग्रह हो तो राजयोग व्यर्थ होते हैं ||१८।।

जब चन्द्रमा अथवा लग्न को कोई ग्रह न देखें तो राजयोग व्यर्थ होते हैं ।। १९ ।।

जब बृहस्पति अथवा शुक्र परम नीच अंश का हो तो राजयोग व्यर्थ होते हैं ।। २० ।।

जब सब पाप ग्रह नीच के होकर केन्द्र में बैठे हों तो राजयोग व्यर्थ होते हैं ।। २१ ।।

जब सौम्यग्रह ६,८, १२ स्थानों में बैठे हों तो राजयोग व्यर्थ होते हैं ॥ २२ ॥

जब सौम्यग्रह अस्तङ्गत हों तथा केन्द्र में न हों तो राजयोग व्यर्थ होते हैं ।। २३ ।।

जब लग्न में राहु हो और चन्द्रमा का उस पर दृष्टि हो तो राजयोग व्यर्थ होते हैं ।। २४ ।।

जब पापग्रह ६, ३, ११ स्थानो मे हों तो राजयोग व्यर्थ हो जाते हैं ।। २५ ।।

जब ४, ५, अथवा ६ ग्रह एक स्थान में स्थित हों तो सम्पूर्ण राजयोग नष्ट हो जाते हैं और परिव्राट् (भिक्षु) योग होता है ।। २६ ।।

तीव्र राजयोगफलम्.

तीव्रफला राजयोगा यवनाद्यैर्ये निर्मितास्तेषु ।
वक्तव्यं दैवविदा खलजातस्य रिष्टमिति ॥

(अर्थ)

यवन आदि आचार्य्यो ने जो तीव्र फल वाले राजयोग कहे हैं उनमें यदि किसी दरिद्री के घर में बालक उत्पन्न हो तो अरिष्ट कारक जानना चाहिये ॥

कारकाः

स्वर्क्ष तुङ्ग मूल त्रिकोणगाः कण्टकेषु यावन्त आश्रिताः ।
सर्व एवतेऽन्योन्यकारकाः कर्मगस्तु तेषां विशेषतः ॥
कर्कटोदयगे यथोडुपे स्वोच्चगाः कुजयमार्कसूरयः ।
कारका निगदिता परस्परं लग्नगस्य सकलोऽम्बराम्बुगः ॥

(अर्थ)

जो ग्रह अपने घर के अथवा अपने उच्च के अथवा मूल त्रिकोण के केन्द्र में स्थित हों वे सब आपस में कारक होते हैं, उनमें से कर्मस्थान में स्थित ग्रह विशेष कारक होता है । जैसे लग्न में कर्क राशि हो और उसमें चन्द्रमा बैठा हो, मङ्गल शनि सूर्य्य तथा वृहस्पति अपने उच्च के हों वे परस्पर कारक कहलाते हैं । लग्न में स्थित ग्रह का चतुर्थ दशम स्थान में स्थित ग्रह पूर्ण कारक होता है ॥

लग्नात्कारकाः (स्थिर कारकाः)

द्युमणि १ रमरमन्त्री २ भूसुत ३ सोमसौम्यौ ४
गुरु ५ रिनतनयारौ ६ भार्गवो ७ भानुपुत्रः ८ ।
दिनकरदिविजेड्यौ ९ जीवभानुज्ञमन्दाः १०
सुरगुरु ११ रिनसूनुः १२ कारकाख्या विलग्नात् ॥

(अर्थ)

(१) सूर्य्य (२) बृहस्पति (३) मङ्गल (४) चन्द्रमा बुध (५) बृहस्पति (६) शनि, मङ्गल (७) शुक्र (८) शनि (९) सूर्य्य, बृहस्पति (१०) बृहस्पति सूर्य्य, बुध, शनि (११) बृहस्पति (१२) शनि ये लग्न से स्थिर कारक कहलाते हैं ॥

फलम्

नीचान्वये यद्यपि जातजन्मा मन्त्री भवेत्कारक खेचरेन्द्रैः ।
राजान्वये यस्य यदि प्रसूति भूमीपतित्वं सकथं नयाति ॥

(अर्थ)

यद्यपि मनुष्य नीच कुल में उत्पन्न हो तथापि वह कारक ग्रहों से मन्त्री होता है । जिसका जन्म राजवंश में हो वह राजा कैसे न होगा ॥

(१५) अनफादियोगप्रकरणम्.

अनफादियोगाः (चन्द्रकृताः)

रविवर्ज्यं द्वादशगैरनफा चन्द्राद्द्वितीयगैः सुनफा ।
उभयस्थितै दुरुधरा केमद्रुमसंज्ञिकोयोऽन्यः ॥

प्रभुर्विनीतः शुभवाग्विलासः सच्छीलशाली गुणपूर्तियुक्तः ।
उदारकीर्तिः स्मरतुष्टचित्तो नित्यं नरः स्यादनफाभिधाने ॥

भूमीपतेश्च सचिवः सुकृती कृतीच
नूनं भवेन्निजभुजार्जितवित्तयुक्तः ।
ख्यातः सदाखिलजनेषु विशालकीर्त्या
बुद्ध्याधिकश्च मनुजः सुनफाभिधाने ॥

सद्वित्तसद्वारणवाहधात्री सौख्याभियुक्तः सततं हतारिः ।
कान्तासुनेत्राञ्चललालसः स्याद्योगे सदा दौरुधरे मनुष्य ॥

सद्वित्तसूनुवनितात्मजनैर्विहीनः
प्रेष्यो भवेत्तु मनुजो हि विदेशवासी ।

नित्यं विरुद्धधिषणो मलिनः कुवेशः
केमद्रुमे च मनुजाधिपतेः सुतोऽपि ॥

यदि चन्द्रमा से द्वादश स्थान में सूर्य्य को छोडकर शेष कोई ग्रह स्थित हो तो अनफा योग होता है। यदि चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में सूर्य को छोड कर शेष कोई ग्रह हो तो सुनफायोग होता है। यदि चन्द्रमा से द्वितीय तथा द्वादश दोनों स्थानों में ग्रहस्थित हों तो दुरुधरा योग होता है। यदि दोनों स्थानो म कोई ग्रह न हो तो केमद्रुम योग होता है ॥

(अर्थ)

जिस मनुष्य का जन्म अनफा योग में हो वह प्रभु, नम्र, शुभ वचन बोलने वाला, अच्छे शील स्वभाव वाला, गुणवान्, उदार होता है तथा भोग विलास मे सन्तुष्ट रहता है ॥१॥

जिसका जन्म सुनफायोग में हो वह राजा का मन्त्री, धर्मात्मा, चतुर, अपने बाहुबल से द्रव्य उपार्जन करने वाला, सर्वत्र प्रसिद्ध तथा अधिक बुद्धिवाला होता है ॥ २ ॥

जिसका जन्म दुरुधरा योग में हो वह धनवान्, हाथी घोडे से युक्त, सुखी, शत्रुनाशी तथा स्त्री के वश में होता है ॥ ३ ॥

जिसका जन्म केमद्रुम योग में हो वह यद्यपि राजपुत्र हो तथापि धन सन्तान स्त्री मित्रों से रहित, दास, परदेश वासी, उलटी बुद्धि वाला, मलिन तथा कुरूप होता है ॥

केमद्रुम भङ्ग.

प्रालेयांशुः सूतिकाले यदा वा सर्वैः खेटैर्वीक्ष्यमाण. करोति।
दीर्घायुष्यं राजयोगं मनुष्यं सत्कोशाढ्यं हन्ति केमद्रुमं च ॥
सर्वे खेटाः केन्द्रतुर्येषु संस्था दुष्टो योगश्चापि केमद्रुमोऽयम्।
दुष्टं सर्वं स्वं फलं संविहाय कुर्युः पुंसां सत्फलं वै विचित्रम् ॥

(अर्थ)

जब चन्द्रमा सब ग्रहों से दृष्ट हो तो मनुष्य दीर्घायु, राजयोग वाला, तथा धनवान् होता है केमद्रुम योग का भी नाश होता है ॥ जब सब ग्रह चारों केन्द्रों में स्थित हों तो पूर्वोक्त दुष्ट फल वाले केमद्रुम योग का नाश हो जाता है तथा अद्भुत अच्छा फल मिलता है ॥

वोश्यादियोगाः (सूर्यकृताः)

सूर्याद्व्ययगैर्वोशि द्वितीयगैश्चन्द्रवर्जितैर्वेशिः ।
उभयस्थितैर्ग्रहगणैरुभयचरी नामतः प्रोक्ता ॥
तस्य प्रान्त्ये द्वितीये न भवति खचरः कर्त्तरी स्या न शस्ता ॥१॥

फलानि

किञ्चित्तद्वचनेषु नैव नियमोऽवश्यं नरश्चानतो
ऽत्यन्तं कष्टकरो नरश्च मृदुदृक् स्याद्वोसियोगोद्भवः ॥१॥
तिर्यग्दृष्टिः सत्त्वसत्यानुकम्पी मर्त्योऽत्यर्थं दीर्घकालोऽलसश्च ।
मूर्तीयस्यस्याद्यदा वेशि योगस्त्वल्पद्रव्योवाग्विलासाधिशाली ।२।
यस्य स्याज्जनने किलो भयचरी योगस्य चेत्सम्भवः
सोऽत्यन्तं समवायवानपि तदा मर्त्यो भवेत्सद्यशाः ।
नात्युच्चः प्रवलामलाब्धितनयायुक्त समृद्धः सदा
ह्यत्यर्थं स्थिरमानसः सरलदृक् सर्वंसहः सन्मतिः ॥३॥

(अर्थ)

यदि सूर्य्य से बारहवें स्थान में चन्द्रमा को छोड़ कर शेष कोई ग्रह हो तो वोशियोग होता है । यदि सूर्य से द्वितीय स्थान में चन्द्रमा को छोड़ कर शेष कोई ग्रह हो तो वोशियोग होता है । जब दोने स्थानों में ग्रह हों तो उभयचरी योग होता है । जब दोनों स्थानों में ग्रह न हों तो कर्त्तरीयोग होता है, उसका फल अच्छा नहीं होता है ॥ १ ॥

(फल)

जिस मनुष्य का जन्म वोशियोग में हो उसके बोलने पर कोई विश्वास न करना चाहिये तथा वह मनुष्य झूठा, बहुत मिहनत करने वाला, अच्छे नेत्र वाला होता है ॥१॥

जिस मनुष्य का जन्म वेशियोग में होता है वह तिरछी नजर वाला, सत्य बोलने वाला, दीर्घसूत्र, आलसी, कम द्रव्य वाला तथा बोलने में चतुर होता है ॥ २ ॥

जिसका जन्म उभयचरी योग में हो वह नेता तथा यशस्वी होता है, वह मनुष्य बहुत ऊंचा नहीं होता है, बहुत लक्ष्मी से युक्त, सदा समृद्ध, अत्यन्त स्थिरचित्तवाला, सीधी नजर वाला तथा सब की बातों को सह लेने वाला होता है ॥ ३ ॥

नाभस योगाः (३२)

आश्रयाख्यास्त्रयो योगा दल योगद्वयं ततः ।
आकृति विंशति संख्या योगानां सप्तकं स्मृतम् ॥
रज्जुयोगो मूशलश्च नलो,माला भुजङ्गमौ ॥
गदा योगश्च शकटः शृङ्गाटक विहङ्गमौ ।
हल वज्र यवाश्चैव कमलो वापि यूपकौ ॥
शर शक्ति दंड नोका कूटच्छत्र धनूंषि च ।
अर्द्धेन्दु योगश्चक्राख्यः समुद्र श्चेति विंशतिः ॥
वीणा दामनिका योग पाश केदार शूलकाः ।
युगगोलौ ततः प्रोक्तौ योगा द्वात्रिंशकाइमे ॥

(अर्थ)

आश्रय योग ३ होते हैं, दलयोग २ होते हैं, आकृति योग २० होते हैं, तदनन्तर संख्या योग ७ होते हैं ॥

रज्जु, मुसल, नल ये तीन आश्रय योग हैं ॥

माला, सर्प ये दो दल योग हैं ॥

गदा, शकट, शृंगाटक, विहङ्गम, हल, वज्र, यव, कमल, वापी, यूपक, शर, शक्ति, दण्ड, नौका, कूट, छत्र, धनुष, अर्द्धेन्दु, चक्र, समुद्र, ये २० आकृति योग हैं ॥

वीणा, दामनिका, पाश, केदार, शूल, युग गोल ये ७ संख्या योग हैं। सब मिलकर ३२ नाभस योग हैं ॥

आश्रययोगत्रयम्

चरभवनादिषु सर्वैं राश्रयजारज्जु मुसलनलयोगाः ।

(अर्थ)

जब चर राशियों में सब ग्रह हों तो रज्जुयोग होता है, जब स्थिर राशियों में सबग्रह हों तो मुसल योग होता है, जब द्विस्वभाव राशियों में सब ग्रह हों तो नल योग होता है। ये ३ योग मिलकर आश्रय योग कहलाते हैं ॥

दलयोगद्वयम्

केन्द्रत्रये सौम्यखगैस्तु माला
खलग्रहैर्व्यालसमाह्वयः स्यात् ॥

(अर्थ)

जब तीनों केन्द्रों में शुभ ग्रह हों तो माला नामक योग होता है। परन्तु यदि पाप ग्रह हों तो सर्प नामक योग होता है। ये दोनों योग मिल कर दल योग कहलाते हैं ॥

आकृति योगाः (२०)

आसन्नकेन्द्रद्वयगैर्गदा[१]ख्यो लग्नास्तसंस्थैः शकटः[२] समस्तैः ।
खबंधुयाते र्विहग[४]ः प्रदिष्टः शृङ्गाटको[३] लग्ननवात्मजस्थैः ॥१॥
धनारिखस्थैस्त्रिमदायगैर्वा चतुर्थरन्ध्रव्ययसंस्थितैर्वा ।
नभस्तलस्थैर्हल[५]नामधेयः किलोदितोयं निखिलागमज्ञैः ॥२॥
लग्न स्मर स्थान गतैः शुभाख्यै पापैश्च मेषूरणबन्धुयातैः ।
वज्रा[६]भिधस्तै र्विपरीतसंस्थै र्यव[७]श्च मिश्रै[८]ः कमलाभिधानः ॥३॥

त्यक्त्वा केन्द्राणि चेत्खेटाः शेषस्थानेषु संस्थिता ।
६
वापीयोगो भवेदेवं गदितः पूर्वसूरिभिः ॥४॥
लग्नाच्चतुर्थात्स्मरत खमध्याच्चतुर्गृहस्थै र्गगनेचरेन्द्रैः ।
१०   ११   १२   १३
क्रमेण यूपश्च शरश्च शक्तिर्दण्डः प्रदिष्टः खलु जातकज्ञैः ॥५॥
१४   १५
लग्नाच्चतुर्थात्स्मरतः खमध्या त्ससर्क्षगैर्नौरथ कूटसंज्ञः ।
१६   १७   १८
छत्र धनुश्चान्यगृहप्रवृत्ते र्नौपूर्वकैर्योग इहार्द्धचन्द्रः ॥६॥
तनोर्धनाच्चैकगृहान्तरेण स्युः स्थानषट्के गगनेचरेन्द्राः ।
१९   २०
चक्राभिधानं च समुद्रनामा योगा इतीहाकृतिजाश्च विंशत् ॥७॥

(अर्थ)

(१) जब समीप के दोनों केन्द्रों में ग्रह हों तो गदा नामक योग होता है ॥

(२) जब लग्न सप्तम स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह हों तो शकट योग होता है ॥

(३) जब लग्न ६, ५ स्थानों में सब ग्रह हों तो शृंगाटक योग होता है ॥

(४) जब १०, ४ स्थानों में ग्रह हों तो विहङ्गम योग होता है ॥

(५) जब २, ६, १०, अथवा ३, ७, ११, अथवा ४,८,१२, स्थानों में सब ग्रह स्थित हों तो हल योग होता है ।

(६) जब लग्न, सप्तम स्थानों में शुभ ग्रह हों, ४, १० स्थानों में पाप ग्रह हों तो वज्र योग होता है ॥

(७) यदि वज्रयोग के विपरीत ग्रह स्थिति हो (अर्थात् लग्न सप्तम में पाप ग्रह हों ४, १० में शुभ ग्रह हों) तो यवयोग होता है ॥

(८) जब पूर्वोक्त योग मिश्रित हो तो कमलयोग होता है ।

(९) जव केन्द्रों को छोडकर शेष स्थानों में ग्रह हों तो वापी योग होता है ॥

(१०) जब लग्न से चार स्थान पर्यन्त ग्रह हों तो यूप योग होता है ॥

(११) जब चतुर्थ स्थान से ४ घर पर्य्यंत ग्रह हों तो शर योग होता है ॥

(१२) जब सप्तम स्थान से चार स्थान पर्यन्त वरावर ग्रह हों तो शक्ति योग होता है ॥

(१३) जब दशम स्थान से ४ स्थान पर्यन्त ग्रह हों तो दण्ड योग होता है ॥

(१४) जब लग्न से सप्तम स्थान पर्य्यन्त ग्रह हों तो नौका योग होता है ॥

(१५) जब चतुर्थ स्थान से दशम स्थान पर्य्यन्त ग्रह हों तो कूट योग होता है ॥

(१६) जब सप्तम स्थान से सात घर पर्य्यन्त ग्रह हों तो छत्र योग होता है ॥

(१७) जब दशम स्थान से सात घर पर्य्यन्त ग्रह हों तो धनुष योग होता है ॥

(१८) जब पूर्वोक्त चार स्थानों को छोड़ कर शेष किसी स्थान से सात घर पर्य्यन्त ग्रह हों तो अर्द्धचन्द्र योग होता है ॥

(१९) जब लग्न से एक एक घर छोड़कर ६ स्थानों में सब ग्रह हों तो चक्र योग होता है ॥

(२०) परन्तु जब धन स्थान से एक एक घर छोड़ कर ६ स्थानों में सब ग्रह हों तो समुद्र योग होता है ॥ यह २० आकृति योग हैं ॥

सख्या योगाः (७)

ये योगाः कथिताः पुरा वहुतरा स्तेषामभावे भवेद्
गोलश्चैकगते युगं द्विगृहगैः शूलस्त्रिगेहोपगैः ।

केदारश्च चतुर्षु सर्वखचरैः पाशस्तु पञ्चस्थिते
षट्स्थैर्दामनिका च सप्तगृहगैर्वीणेति संख्या इमे ॥

(अथ)

यदि पूर्वोक्त योगों में से कोई भी योग न हो किन्तु एक स्थान में सब ग्रह हों तो गोल योग होता है। यदि दो स्थानों में सब ग्रह हों तो युग योग होता है। यदि तीन स्थानों में सब ग्रह हों तो शूल योग होता है। यदि चार स्थानो में सब ग्रह हों तो केदार योग होता है। यदि पाच स्थानों में सब ग्रह हों तो पाश योग होता है। यदि छः स्थानों में सब ग्रह हों तो दामनिका योग होता है। यदि सात स्थानो में सब ग्रह हों तो वीणा योग होता है॥

पूर्वोक्तयोगेषु प्रत्यक्षदोषः

पूर्वशास्त्रानुसारेण मया वज्राद्य कृताः।
चतुर्थे भवने सूर्याज्ज्ञशुक्रौ भवतः कथम् ॥ (वराहमिहिरः)

(अर्थ)

वराह मिहिर आचार्य कहते हैं कि प्राचीन ग्रन्थों के अनुसार वज्र आदि योग लिखे गये हैं, परन्तु सूर्य से चौथे घर में बुध तथा शुक्र कैसे हो सकते हैं। (याद रखना चाहिये कि सूर्य से बुध तथा शुक्र २८ अंश तथा ४८ अंश से अधिक दूरी पर नहीं हो सकते हैं। साराश यह है कि बुध शुक्र सूर्य से दूसरे अथवा तीसरे घर से अधिक दूरी पर नहीं हो सकते हैं॥)

नाभसयोगफलानि.

अटनप्रयासरूपाः परदेशस्वास्थ्यभागिनो मनुजाः।
क्रूराः खलस्वभावा रज्जु प्रभवाः सदा कथिताः ॥१॥
मानज्ञानयुताः स्थैर्ययुक्ता नृपप्रियाः ख्याताः।
बहुपुत्राः स्थिरचित्ता मुसल समुत्था भवन्ति नराः ॥२॥
न्यूनातिरिक्तदेहा धनसंचयभागिनोऽतिनिपुणाश्च।
बन्धुहिताश्च सरूपा नल योगे संप्रसूयन्ते ॥३॥

नित्यं सुखप्रधाना वाहनवस्त्रान्नभोगसंपन्नाः ।
कान्ताः सुवहुस्त्रीका मालायां संप्रसूताः स्युः ॥४॥

विषमाः क्रूरा निःस्वा नित्यं दुःखार्दिताः सुदीनाश्च ।
परभक्ष्यपाननिरताः सर्पप्रभवा भवन्ति नराः ॥५॥

सततोद्युक्तार्थवशा यज्वानः शास्त्रगेयकुशलाश्च ।
धनकनकरत्नसम्पत्संयुक्ता मानवा गदायां तु ॥६॥

रोगार्ताः कुनखा मूर्खाः शकटानुजीविनो निःस्वाः ।
मित्रस्वजनविहीनाः शकटे जाता भवन्ति नराः ॥७॥

भ्रमणरुचयो विकृष्टा दूताः सुरतानुजीविनो धृष्टाः ।
कलहप्रियाश्च नित्यं विहगे योगे सदा जाताः ॥८॥

प्रियकलहाः समरसहाः सुखिनो नृपतेः प्रियाः शुभकलत्राः ।
आढ्या युवतिद्वेष्याः शृङ्गाटकसंभवा मनुजाः ॥९॥

बह्वाशिनो दरिद्राः कृषीवला दुःखिताः सोद्वेगाः ।
बन्धुसुहृद्भिस्त्यक्ताः प्रेष्या हलसंज्ञके सदा पुरुषाः ॥१०॥

आद्यन्तवयःसुखिनः शूराः सुभगा निरीहाश्च ।
भाग्यविहीना वज्रे जाताः खला विरुद्धाश्च ॥११॥

व्रतनियममङ्गलपरा वयसो मध्ये सुखार्थपुत्रयुताः ।
दातारः स्थिरचित्ता यवयोगभवाः सदा पुरुषाः ॥१२॥

विभवगुणाढ्याः पुरुषाः स्थिरायुषो विपुलकीर्तयः शुद्धाः ।
शुभशतकाः पृथ्वीशाः कमलभवा मानवा नित्यम् ॥१३॥

निधिकरणे निपुणधियः स्थिरार्थसुखसंयुताः सुतयुताश्च ।
नयनसुखसंप्रहृष्टा वापीयोगे न दातारः ॥१४॥

आत्मविदिज्यानिरतः क्रियायुतः सत्त्वसम्पन्नः ।
व्रतनियमरतो नित्यं यूपे जातो विशिष्टश्च ॥१५॥

दृष्टा करणे दस्यु बन्धनमृगयाधनसेविताश्च मांसादाः ।
हिंस्राः कुशिल्पकराः शर योगे मानवाः प्रसूयन्ते ॥१६॥
धनरहितविफलदुःखितनीचालसाश्चिरायुषः पुरुषाः ।
सग्रामबुद्धिनिपुणाः शक्त्यां जाताः स्थिरा सुभगाः ॥१७॥
हतपुत्रदारनिःस्वाः सर्वत्र च निर्घृणाः स्वजनबाह्याः ।
दुःखितनीचप्रेष्या दण्ड प्रभवा भवन्ति नरा ॥१८॥
सलिलोपजीविविभवा बह्वाशाः ख्यातकीर्तयो दुष्टाः ।
कृपणा मलिना लुब्धा नौ संजाताः खला पुरुषाः ॥१९॥
अनृतकथनवधपापा निष्किञ्चना शठाः क्रूरा ।
कूट समुत्था नित्यं भवन्ति गिरिदुर्गवासिनो मनुजाः ॥२०॥
स्वजनाश्रयो दयावान्नानानृपवल्लभः प्रकृष्टमतः ।
प्रथमेऽन्त्ये वयसि नरः सुखवान्दीर्घायुरातपत्री स्यात् ॥२१॥
आनृतिकगुप्तपालाश्चौरा किनवाश्च काननै निरताः ।
कार्मुक योगे जाता भाग्यविहीनाः शुभा वयोमध्ये ॥२२॥
सेनापतयः सर्वे कान्तशरीरा नृपप्रिया बलिनः ।
मणिकनकभूषणयुता भवन्ति योगेऽर्धचन्द्राख्ये ॥२३॥
प्रणताशेषनराधिपकिरीटरत्नस्फुरितपादः ।
भवति नरेन्द्रो मनुजश्चक्रे यो जायते योगे ॥२४॥
बहुरत्नधनसमृद्धा भोगयुता धनजनप्रियाः ससुता ।
उदधि समुत्थाः पुरुषाः स्थिरविभवाः साधुशीलाश्च ॥२५॥
प्रियगीतनृत्यवाद्यनिपुणाः सुखिनश्च धनवन्तः ।
नेतारो बहुभृत्या वीणायां कीर्तिताः पुरुषाः ॥२६॥
दामिन्यामुपकारी नयधनयुक्तो महेश्वरः ख्यातः ।
बहुसुतरत्नसमृद्धो धीरो जायेत विद्वांश्च ॥२७॥

पाशे बन्धनभाजः कार्ये दक्षा. प्रपञ्चकाराश्च ।
बहुभाषिणो विशीला बहुभृत्याः संप्रतानाश्च ॥२८॥
सुबहूनामुपयोज्याः कृषीवलाः सत्यवादिनः सुखिनः ।
केदारे संभूताश्चलस्वभावा धनैर्युक्ताः ॥२६॥
तीक्ष्णालसधनहीना हिंस्राः सुत्रहिष्कृता महाशूराः ।
संग्रामे लब्धशब्दा. शूले योगे भवन्ति नरा ॥३०॥
पाखण्डवादिनो वाधनरहिता वा वहिष्कृता लोके ।
सुतमातृधर्मरहिता युग योगे ये नरा जाताः ॥३१॥
वलसंयुक्ता विधना विद्याविज्ञानवर्जिता मलिनाः ।
नित्यं दुःखितदीना गोले योगे भवन्ति नरा ॥३२॥

(अर्थ)

जो मनुष्य रज्जुयोग में उत्पन्न हों वे सदा घूमते रहते हैं, परिश्रमी होते हैं, परदेश में उन्हें चैन मिलता है, क्रूर स्वभाव वाले तथा खल होते हैं ॥ १ ॥

जो मनुष्य मुसलयोग में उत्पन्न हो वे अभिमानी, ज्ञानी, स्थिर स्वभाव, राजा के प्रिय, प्रसिद्ध, बहुत पुत्र वाले तथा स्थिर चित्त होते हैं ॥२॥

जो मनुष्य नलयोग में उत्पन्न हों उनके शरीर के अंग न्यून अथवा अधिक होते हैं, धन संचय करने वाले, बड़े निपुण, भाइयों से मेल रखने वाले तथा रूपवान् होते हैं ॥ ३ ॥

जो मनुष्य माला योग में उत्पन्न हों वे नित्य सुखी, वाहन, वस्त्र, अन्न, भोग से सम्पन्न होते हैं, दर्शनीय तथा बहुत स्त्री वाले होते हैं ॥ ४ ॥

जो मनुष्य सर्प योग में उत्पन्न हों वे विषम स्वभाव वाले, क्रूर, निर्धन, नित्य दु:खी, पराया अन्न भोजन करने वाले होते हैं ॥ ५ ॥

जो मनुष्य गदायोग में उत्पन्न हों वे नित्य उद्यम करने वाले, धनवान्, यज्ञ करने वाले, शास्त्रज्ञ, गायन विद्या में चतुर, तथा धन सुवर्ण रत्न सम्पत्ति से युक्त होते हैं ॥ ६ ॥

जो मनुष्य शकट योग में उत्पन्न हों, वे रोगी, कुनखी, मूर्ख, गाड़ी के द्वारा आजीविका करने वाले, धन रहित, मित्र तथा आत्मीय जनों से हीन होते हैं ॥ ७ ॥

जो मनुष्य विहग योग में उत्पन्न हों उनकी रुचि घूमने में रहती है, दूत का काम करते हैं, स्त्रियों से उनकी आजीविका चलती है, वे धृष्ट होते हैं तथा झगड़ा करना पसन्द करते हैं ॥ ८ ॥

जो मनुष्य शृंगाटक योग में उत्पन्न हों वे झगड़ा करना पसन्द करते हैं, लड़ाकू होते हैं, सुखी, राजा के प्रिय, अच्छी स्त्री वाले, धनाढ्य तथा स्त्री से द्वेष करने वाले होते हैं ॥ ९ ॥

जो मनुष्य हल योग में उत्पन्न हों वे बहुत खाने वाले, दरिद्री, खेती करने वाले, दुखित, भाई बिरादर इष्ट मित्रों से छूटे हुए तथा चाकरी करने वाले होते हैं ॥ १० ॥

जो मनुष्य वज्र योग में उत्पन्न हों वे बाल्य तथा वृद्ध अवस्था में सुखी, शूर, सुंदर, इच्छारहित, भाग्यहीन, खल तथा विरुद्ध आचरण वाले होते हैं ॥ ११ ॥

जो मनुष्य यव योग में उत्पन्न हों वे व्रत नियम पूजा आदि कर्मों में तत्पर, मध्य अवस्था में सुखी, धन तथा पुत्रों से युक्त, दाता, तथा स्थिर चित्त होते हैं ॥ १२ ॥

जो मनुष्य कमल योग में उत्पन्न हों वे धन तथा गुणों से परिपूर्ण, दीर्घायु, बड़े यश वाले, शुद्ध आचरणवाले तथा पृथ्वी के स्वामी होते हैं ॥१३॥

जो मनुष्य वापी योग में उत्पन्न हों वे रुपया एकत्रित करने में चतुर,

धन तथा सुख से युक्त, पुत्रवान्, नेत्रों के सुख से प्रसन्न होते हैं, परन्तु दाता नहीं होते हैं ॥ १४ ॥

जो मनुष्य यूप योग में उत्पन्न हों वे आत्मविद्या को जानने वाले, यज्ञ करने वाले, स्त्री से युक्त, सत्त्व गुण वाले, व्रत नियम करने वाले, तथा श्रेष्ठ होते हैं ॥ १५ ॥

जो मनुष्य शर योग में उत्पन्न हों वे काम करने में चतुर, चोरों से मित्रता करने वाले, शिकार खेलने वाले, मांस खाने वाले, हिंसा करने वाले, धनवान् तथा निन्दित काम करने वाले होते हैं ॥ १६ ॥

जो मनुष्य शक्ति योग में उत्पन्न हों, वे धन हीन, दुःखित, व्यर्थ काम करने वाले, नीच, आलसी, दीर्घायु, लड़ाई करने में तत्पर, स्थिर स्वभाव वाले तथा देखने में अच्छे होते हैं ॥१७॥

जो मनुष्य दण्ड योग में उत्पन्न हों वे पुत्र, स्त्री, तथा धन से हीन, घृणा रहित, आपसी लोगों से छूटे हुए, दु.खी, तथा नीच आदमी की सेवा करने वाले होते हैं ॥ १८ ॥

जो मनुष्य नौका योग में उत्पन्न हों वे जल से आजीविका करने वाले, बहुत भोजन करने वाले, दुष्ट, कृपण, मलिन तथा लालची होते हैं ॥ १९ ॥

जो मनुष्य कूट योग में उत्पन्न हों वे झूठ बोलने वाले, हत्या करने वाले, धनहीन, शठ, क्रूर, तथा जंगलो में रहने वाले होते हैं ॥ २० ॥

जो मनुष्य छत्र योग में उत्पन्न हों वे आत्मीय जनो की सहायता करने वाले, दयावान्, राजाओं के प्रिय, श्रेष्ठ बुद्धि वाले, बाल्य तथा वृद्ध अवस्था में सुखी, तथा दीर्घायु होते हैं ॥ २१ ॥

जो मनुष्य धनुष योग में उत्पन्न हों वे झूठ बोलने वाले, गुप्त काम के लिए नौकरों को रखने वाले, चोर, धूर्त, वन में वास करने वाले, भाग्य हीन, तथा युवावस्था में सुखी होते हैं ॥ २२ ॥

जो मनुष्य अर्द्धचन्द्र योग में उत्पन्न हों वे सेनापति, सुन्दर शरीरवाले, राजा के प्रिय, बलवान्, मणि सुवर्ण तथा आभूषणों से युक्त होते हैं ॥२३॥

जो मनुष्य चक्र योग में उत्पन्न हो वह श्रेष्ठ राजा होता है, शेष सब राजा उसके चरणों में मुकुट झुकाते हैं ॥ २४ ॥

जो मनुष्य समुद्रयोग में उत्पन्न हों वे बहुत रत्न तथा धन से युक्त, भोग करने वाले, धन तथा मनुष्यों को प्यार करने वाले, पुत्रवान्, स्थिर सम्पत्ति वाले तथा अच्छे स्वभाव वाले होते हैं ॥२५॥

जो मनुष्य वीणा योग में उत्पन्न हो वे गाने बजाने तथा नाच को पसन्द करने वाले, सुखी, धनवान्, नेता तथा बहुत भृत्य वाले होते हैं ॥२६॥

जो मनुष्य दामिनीयोग में उत्पन्न हों व परोपकारी, नीति तथा धन से युक्त, अति सामर्थ्य वाले, प्रसिद्ध, बहुत पुत्रवाले, धैर्य्यवान् तथा पण्डित होते हैं ॥२७॥

जो मनुष्य पाश योग में उत्पन्न हों वे बन्धन करने वाले, काम करने में चतुर, प्रपञ्ची, बहुत बोलने वाले, सदाचार रहित तथा बहुत भृत्य-वाले होते हैं ॥२८॥

जो मनुष्य केदार योग में उत्पन्न हों वे बहुत लोगों से काम कराने वाले, खेती करने वाले, सत्यवादी, सुखी, चञ्चल स्वभाव, तथा धनी होते हैं ॥२९॥

जो मनुष्य शूल योग में उत्पन्न हों वे बडे आलसी, धनहीन, हिंसा करने वाले, निकाले हुए, बडे शूर, तथा संग्राम में आदर पाये हुए होते हैं ॥ ३० ॥

जो मनुष्य युग योग में उत्पन्न हों वे पाखण्डी, धनहीन, लोगों से त्यक्त, पुत्र माता तथा धर्म से हीन होते हैं ॥ ३१ ॥

जो मनुष्य गोल योग में उत्पन्न हों वे बलवान्, धनहीन, विद्या तथा ज्ञान से रहित, मलिन, तथा नित्य दुःखी होते हैं ॥ ३२ ॥

सूर्यात्केन्द्रादिस्थे चन्द्रेऽधमादियोगाः

अधमसमवरिष्ठान्यर्ककेन्द्रादिसंस्थे
शशिनि विनयवित्तज्ञानधीनैपुणानि ॥
सूर्यात्केन्द्रस्थे (१।४।७।१०) चन्द्रे विनयादय अधमाः ।
सूर्यात्पणफरस्थे (२।५।८।११) चन्द्रे विनयादयः समाः ।
सूर्यादापोक्लिमस्थे(३।६।९।१२) चन्द्रे विनयादय उत्तमा ।

(अर्थ)

जब सूर्य्य से १, ४, ७, १० स्थानों में चन्द्रमा स्थित हो तो नम्रता, धन, ज्ञान, बुद्धि तथा चतुरता अधम अथवा न्यून होत हैं ।

जब सूर्य्य से २, ५, ८, ११ स्थानों में चन्द्रमा स्थित हो तो पूर्वोक्त नम्रता आदि सम (अर्थात् न न्यून न अधिक) होते हैं ।

जब सूर्य्य से ३, ६ ९, १२ स्थानों में चन्द्रमा स्थित हो तो पूर्वोक्त नम्रता आदि उत्तम अर्थात् अधिक होते हैं ॥

चन्द्रकृतोऽधियोगः

सौम्यैः स्मरारिनिधनै रधियोग इन्दो
स्तस्मिंश्च भूपसचिवक्षितिपालजन्म ।
सम्पन्नसौख्यविभवाहतशत्रवश्च
दीर्घायुषो विगतरोगभयाश्च जाताः ॥
(चन्द्रात् ६।७।८ स्थानेषु सौम्यग्रहेष्वधियोगः)

(अर्थ)

जब चन्द्रमा से ६, ७, ८ स्थानों में सौम्यग्रह हों तो अधियोग होता है । जो मनुष्य इसयोग में उत्पन्न हो वह राजा, अथवा मन्त्री, बहुत सम्पन्न, सुखी, धनवान्, शत्रुहीन, दीर्घायु, रोग तथा भय से रहित होता है ॥

चन्द्रकृत उत्कटयोगः

लग्नादतीव वसुमान्वसुमाञ्छशाङ्कात्
सौम्यग्रहैरुपचयोपगतैः समस्तैः ।
द्वाभ्यां समोऽथ वसुमांश्च तदूनितायामन्येष्वसत्स्वपि फलेष्विदमुत्कटेन ॥

(लग्नादथवा चंद्रात् ३।६।११ स्थानस्थितेषु सर्वेषु सौम्येष्वन्येषु दुष्टयोगेष्वप्ययमुत्कटोयोगः)

भूमिजरविजरवीणामेकस्तूपचयमस्थोविधोर्लग्नात् ।
आढ्यो द्वौचेन्मन्त्री त्रिभिश्चभूपतिर्भवति ॥

(अर्थ)

जब लग्न अथवा चन्द्रमा से ३, ६ ११ स्थानों में सब सौम्य ग्रह हों तो मनुष्य बडा धनवान् होता है। यदि दो सौम्य ग्रह हों तो सम फल होता है। यदि एक सौम्य ग्रह हो तो धनवान् होता है। यदि शेष योग अच्छे न भी हों तो यह योग उत्कट फल देता है।

यदि चन्द्रमा अथवा लग्न से ३, ६ ११ स्थानों में मङ्गल, शनि तथा सूर्य में से कोई भी एक ग्रह बैठा हो तो मनुष्य धनाढ्य होता है। यदि दो ग्रह हों तो मनुष्य मन्त्री होता है। यदि तीनों ग्रह हों तो मनुष्य राजा होता है॥

(१६) प्रव्रज्या प्रकरणम्

प्रव्रज्या योगाः

चतुराद्या एकस्थास्त्वेक्य लग्ने परिव्राट् स्यात् ॥१॥
एकस्थाने स्थितैः खेटैः सर्वैश्च बलसंयुतैः ।
निरन्तरं निराहारो योगमार्गपरायणः ॥२॥
एकस्थाने खेचराणां चतुर्णां योगश्चेत्स्यान्मानवानां प्रसूतौ ।
तेस्युर्भूमीपालवंशेऽपिजाताः कान्तारान्तर्वासिनः सर्वदैव ॥३॥

एकालये चेत्खलखेचराणां त्रयं करोत्येवनरं कुरूपम् ।
दारिद्र्यदुःखैः परितप्तदेहं कदापि गेहं न समाश्रयेत्सः ॥४॥
पञ्चखेचरयुतिर्यदि सूतौ भूपतेरपि सुतः स च नित्यम् ।
कन्दमूलफलभक्षणचित्तोऽत्यन्तशान्तिविजितेन्द्रियशत्रुः ॥५॥
एकत्र षण्णां गगनेचराणां प्रसूतिकाले मिलनं यदि स्यात् ।
ते केवलं शैलशिलातलेषु तिष्ठन्ति भूपालकुलेऽपिजाता ॥६॥
प्रायो दरिद्रो मूर्खश्च षड्भिर्वा पञ्चभिर्ग्रहै ॥ ७ ॥
ग्रहैश्चतुर्भिर्यदि पंचभिर्वा षड्भिस्तथैकालयसंस्थितैश्च ।
नश्यन्ति सर्वे खलु राज योगाः प्रव्राजिकायोग इति प्रदिष्टः ॥८॥

(अर्थ)

यदि चार अथवा अधिक ग्रह एक स्थान में स्थित हों अथवा लग्न में तीन ग्रह स्थित हों तो मनुष्य परिव्राट् अर्थात् जोगी होता है ॥ १ ॥

यदि एक स्थान में सब ग्रह बलवान् होकर बैठे हों तो मनुष्य नित्य निराहार रह कर योग मार्ग में तत्पर रहता है ॥ २ ॥

जिन मनुष्यों के जन्मकाल में एक स्थान में चार ग्रहों का योग हो वे नित्य वनवास करने वाले होते हैं यद्यपि वे राजवंश में उत्पन्न हुए हों ॥ ३ ॥

यदि एक स्थान में तीन पाप ग्रह बैठे हों तो मनुष्य कुरूप, दरिद्री, दुःखी तथा कभी अपने घर में न रहने वाला होता है ॥ ४ ॥

जिस मनुष्य के जन्मकाल में पाच ग्रह एक स्थान में बैठे हों वह नित्य कन्द मूल फल खाने वाला, अत्यन्त शान्त स्वभाव वाला, तथा जितेन्द्रिय होता है चाहे वह राजा का पुत्र क्यों न हो ॥ ५ ॥

जिसके जन्म समय में एक स्थान में छः ग्रह बैठे हों वह यद्यपि राजकुल में उत्पन्न हो तथापि नित्य पर्वत में शिलातल पर बैठ कर तपस्या करता है ॥ ६ ॥

जब पांच अथवा छः ग्रह एक स्थान में स्थित हों तो मनुष्य प्रायः दरिद्री तथा मूर्ख होता है ॥ ७ ॥

जब चार पांच अथवा छः ग्रह एक स्थान में स्थित हों तो सब राज-योग नष्ट हो जाते हैं तथा प्रव्राजिका (फकीरी) योग हो जाता है ॥८॥

(१७) योगविशेषप्रकरणम्

लग्नेशेऽन्त्येऽन्त्येशे लग्ने सर्वशत्रुर्बुद्धिहीनः कृपणश्च ॥१॥

भाग्यपे केन्द्रकोणे शुभयुतदृष्टे धनविद्याभाग्ययुक्तः ॥२॥

लग्नेशः षष्ठे षष्ठेशेऽङ्गे व्याधिहीनः शूरो बलवांश्च ॥३॥

सुतपेऽङ्गेऽङ्गेशे सुते मतस्था विद्वान्मानी च ॥४॥

रन्ध्रे लग्नेशे लग्ने रन्ध्रेशे द्यूतकारी शूरश्चौर्यादिरतश्च ॥५॥

धर्मेशेऽङ्गेऽङ्गेशे धर्मे विदर्शी धर्मशीलो राजमान्यश्च ॥६॥

लग्नेशे लाभे लाभपेऽङ्गे सुकर्मा दीर्घायुर्भूपतिः कोविदश्च ॥७॥

अन्त्यपेऽर्थेशे मानी धनहीनश्च ॥८॥

लग्ने पापे शुभादृष्टयुते संन्यासी श्रीनाशो वा ॥९॥

कर्माङ्गेशावन्योन्यभगौ ख्यातः प्रतापी च ॥१०॥

दारे कुजे बहुस्त्रीरतः कुलघ्नश्च ॥११॥

समन्दे ज्ञे परवञ्चन दक्षो गुरुवचनातिक्रमी च ॥१२॥

शुक्रेज्ययोगे सद्विद्याधनदारगुणयुक्तः ॥१३॥

ज्ञार्कज्ययोगे वाग्मी विद्वान्भूपगणपः ॥१४॥

ज्ञेज्ययोगे गानप्रियो नृत्यविन्मल्लः ॥१५॥

मन्दार्कयोगे दुष्ट्यनृतभाषी निन्दितश्च ॥१६॥

आरेज्ययोगे पुराध्यक्षो नृपः प्राप्तविद्यो द्विजः ॥१७॥

मन्देऽर्के कुटुम्बी बहुस्त्रीरतः ॥१८॥

मेषे चन्द्रे मन्ददृष्टे निर्धनो लोभी ॥१६॥
धनेशे पापदृष्टे कपटादिना विषभोजनम् ॥२०॥
खला मूर्तिगा भगन्दरादि रोगी ॥२१॥
खे चन्द्रे सुताङ्के जीवे दानी तपस्वी जितेन्द्रियश्च ॥२२॥
चन्द्राच्छौ षष्ठेऽष्टमेवा मन्दाग्न्युदररोगी ॥२३॥
लग्नेशेऽन्त्ये खे पापे भौमयुतचन्द्रे परदेशी भिक्षाशी दुःखी ॥२४॥
जीवार्थेशौ षष्ठान्त्यगौ क्लेशभाग्द्रव्यहीनः ॥२५॥
चन्द्रमन्दयोगे परुषवाक्कपटीच ॥२६॥
एकस्मिन्नप्युच्चेऽङ्गे समित्रे प्रचुरधनः सिद्धः ॥२७॥
व्ययारी पापयुतौ बालमृतिः ॥२८॥
यद्भावात्त्रिके (६।८।१२) पापास्तद्भावनाशश्च ॥२६॥
यद्भावेशस्त्रिके त्रिकेशोवा यद्भावे तद्भावनाशः ॥३०॥
केन्द्रस्थाः क्रूरा विकलाङ्गः ॥३१॥
केन्द्रगौ पुष्पवन्तौ विकलाङ्गः ॥३२॥
चन्द्रज्ञौभौमदृष्टौ विलज्जः ॥३३॥
ज्ञारयोगे कपटी ॥ ३४ ॥
राहुमन्दारयोगे हृत्कपटी ॥ ३५ ॥
लग्ने भौमे क्रोधी ॥ ३६ ॥
भौमेऽस्ते बलवान्शूरश्च ॥ ३७ ॥
केतुयुते सोऽत्थे कलहप्रियः ॥ ३८ ॥
शुभे तुर्ये क्षमावान् ॥ ३६ ॥
शनिगृहे ज्ञारौ हास्यासक्तः ॥ ४० ॥
सोऽत्थे भौमे ज्ञचन्द्रदृष्टे द्रोही ॥ ४१ ॥

धने रन्ध्रेशे चौरः ॥ ४२ ॥

ज्ञारौ लग्ने चौरः ॥ ४३ ॥

व्ययेशे नीचे व्यसनी ॥ ४४ ॥

व्यये पापे व्यसनी ॥ ४५ ॥

धर्मे शुभे निर्व्यसनी ॥ ४६ ॥

शुक्रेऽस्तेऽतिकामुक. ॥ ४७ ॥

पापदृष्टे शुभे कामी ॥ ४८ ॥

शुक्रात्पष्ठेऽष्टमे मन्दे पण्ढो वा तादृशः ॥ ४६ ॥

भौमेऽस्ते जावेऽङ्गे उन्मादी ॥ ५० ॥

धने केतौ शीघ्रं चाद्ध्रक्योदय. ॥ ५१ ॥

राह्वर्कजार्केज्या लग्नगा. प्रकृति वृद्धः ॥ ५२ ॥

खे सुखेशे रसायन व्यसनी ॥ ५३ ॥

लग्ने जीवे भोजन शूरः ॥ ५४ ॥

सुतेऽङ्गेशे पिशुन ॥ ५५ ॥

पापदृष्टे जीवे सतमसि चाण्डालता ॥ ५६ ॥

केन्द्रे मन्दे ज्ञयुते शिल्पी ॥ ५७ ॥

ज्ञेज्यौ त्रिके उपदेशप्रिय ॥ ५८ ॥

पष्ठाङ्गेशौ लग्नगौ ज्ञातिपीडा ॥ ५६ ॥

लग्नेशाद्वा लग्नात् त्रिकगैः पापै र्जातिच्युतिः ॥ ६० ॥

लाभेशेऽङ्गे कौतुकी ॥ ६१ ॥

ईज्यमन्दयोगे अलसः ॥ ६२ ॥

मन्दात्तुर्ये सौम्ये पष्ठेशे त्रिके वधिरः ॥ ६३ ॥

ज्ञारीशौ लग्नगौ मूकः ॥ ६४ ॥

चन्द्रार्कौ मीनस्थौ प्रहसितमुखः ॥ ६५ ॥

जामित्रे मन्दे चन्द्रे खे वाग्मी ॥ ६६ ॥

मन्देन्दुयोगे परुष वाक् ॥ ६७ ॥

षष्ठे सूर्यारमन्दाः पङ्गुः ॥ ६८ ॥

चतुर्षु स्वर्क्षगेषु धनी ॥ ६९ ॥

चन्द्रारयोगे धनी ॥ ७० ॥

केन्द्रचतुष्टये शुभान्विते महाधनी ॥ ७१ ॥

सौम्यैरुपचयगै बहुधनः ॥ ७२ ॥

सपापा धनधनेशायेशा निर्धन ॥ ७३ ॥

सोत्थाङ्गेशौ मित्रे भ्रातृ स्नेहः शत्रू चे द्वैरम् ॥ ७४ ॥

सहजपे केन्द्रकोणे विक्रमी ॥ ७५ ॥

पापे तुर्ये जीवेऽल्पबलिनि सधनोऽपि दुःखी ॥ ७६ ॥

द्यूनाङ्गेशमित्रत्वे स्त्री मैत्री ॥ ७७ ॥

सुताङ्गेशमित्रत्वे पुत्रो मित्रम् ॥ ७८ ॥

त्रिकेऽष्टमेशे नित्यरोगी ॥ ७९ ॥

षष्ठेशे षष्ठे ज्ञातिः शत्रुः ॥ ८० ॥

भौमे सबले सेनापतिः ॥ ८१ ॥

सराहुकेतौ दारेशे पापदृष्टे व्यभिचारी ॥ ८२ ॥

लाभे शुभा न्यायतो लाभोऽन्यथाऽन्यायतो मिश्रा उभयथा ॥ ८३ ॥

व्यये शुभे सद्व्ययोऽशुभेऽसद्व्ययो मिश्रे मिश्रः ॥ ८४ ॥

ऋण ग्रस्तो धने पापे लग्नेशे व्ययसंयुते ॥ ८५ ॥

द्यूनेशे दशमे तुर्ये नास्य जाया पतिव्रता ॥ ८६ ॥

जामित्रे मन्दभौमस्थे नदीशे मन्दभूमिजे ।
वेश्या वा जारिणी वापि तस्य भार्या न संशयः ॥ ८७ ॥
राहुणा सहित श्चन्द्रः सपापो गुरुवीक्षितः ।
महापातक योगोऽयं यदि शक्रसमो भवेत् ॥ ८८ ॥
यदासिंहगो मन्दगामी ससूर्यो महापातकीनांचयोगः प्रदिष्टः । ८९
यदाचैकदा चैकऋक्षे नराणां पतन्तित्रयो दुष्टखेटाः सशूला ॥९०॥
यदा मृत्युगः शत्रुगो हीन्दु युक्तो भवेन्मङ्गलो दंशनं तस्यसर्पं ॥९१॥
यदाकेन्द्रगाःसौम्यखेटानराणां नैपापखेटानरादुःखभाक्स्यात्९२
तथा पञ्चममूर्ति भावे चतुर्थे भवेच्चन्द्रमा स्तापस स्तदानीम् ॥९३॥
पशुर्विचार्यः शत्रुभावात् ॥९४॥
षष्ठे चन्द्रशुक्रौ जीवसौम्यौ सवीर्यौ गोधनम् ॥ ९५ ॥
सूयभौमौ चेदजादि । राहुशनी-माहिष धनम् ॥ ९६ ॥
शुक्रेन्दुबुधजीवानां दृष्ट्या संख्यां वदेत्त्रय ॥ ९७ ॥
नलग्न मिन्दुं च गुरु र्निरीक्ष्यते नवाशशाङ्कं रविणा समागतम् ।
सपापकोऽर्केण युतोऽथवा शशी परेण जातंःप्रवदन्ति निश्चयात्९८
द्वित्रि संस्था भवेन्नीचा धम र्याथे नृपो भवेत् ।
षष्ठे तुङ्गा भवे द्दासो निधनान्ते च भिक्षुकः ॥ ९९ ॥
मित्रर्क्षगे वा यदि रन्ध्रनाथे दीर्घायु रायु र्मुनयो वदन्ति ॥१००॥
षष्ठे क्रूरा नरं कुर्युः शत्रु पक्ष विमर्दकम् ।
सौम्याः षष्ठे महा रोगं षष्ठे चन्द्रस्त्वरिष्टदः ॥ १०१ ॥
शुक्रो यस्य बुधो यस्य यस्य केन्द्रे बृहस्पतिः ।
दशमेऽङ्गारको यस्य सजातः कुल दीपक ॥ १०२ ॥
गणितज्ञो भवेज्जातो वाग्भावे भूमिनन्दनः ।
ससोमे बुधसंदृष्टे केन्द्रे वा सोमनन्दने ॥ १०३ ॥

वाग्भावपे बुधे स्वोच्चे लग्ने देवेन्द्रपूजिते ।
शनावष्टमसंयुक्ते गणितज्ञो भवेन्नरः ॥ १०४ ॥
केन्द्रत्रिकोणगे जीवे शुक्रे स्वोच्चगते सति ।
वाग्भावपे रौहिणेये गणितज्ञो भवेन्नरः ॥ १०५ ॥
वेदान्त परिशीलः स्यात्केन्द्रकोणे गुरौ सति ।
षट्शास्त्र वल्लभः केन्द्रे जीवे दानवपूजिते ॥ १०६ ॥
व्ययस्थाने यदा चन्द्रो वामचक्षुर्विनाशकः ।
धने वा व्ययगे शुक्रे काणो वा मन्दलोचनः ।
तत्रैव शुक्रो यदि भवे दन्धो भवति नान्यथा ॥ १०७ ॥
लग्नेशे सार्कशुक्रे त्रिके जन्मान्धः ।
व्यये सर्वे ग्रहा नेष्टाः सूर्यशुक्रेन्दुराहवः ।
विशेषान्नाशकर्तारो दृष्ट्या वा भङ्गकारिणः ॥ १०८ ॥
यदा बुधः सूर्यसुतश्च सप्तमे तदा सबालो भवतीह कुष्ठी ।
तथैव राहु गुरुणा समेतो नपुंसकत्वं विदधाति बालः ॥१०९॥
पापश्चतुर्थः परवेश्मसंस्थ स्तदीक्षितोऽन्यैरशुभैरदृष्टः ।
करोत्यसंख्यानपरोत्थतापं प्रायस्तु वन्धूद्भवमेव दुःखम् ॥११०॥
केन्द्रत्रिकोणेष्वशुभग्रहास्तु
त्रिलाभषष्ठाष्टमगाः शुभाश्चेत् ।
द्वितीय वेश्मा (४) स्तगताश्च भौम
क्षीणेन्दुभौमा यदिवा च वामम् ॥
स्थानेषु धनदेष्वेवं शत्रु वर्गगता यदि ।
रव्यारार्कितमःक्षीणचन्द्राः स्यूरेकदाइमे ॥ १११ ॥
एवं त्रिकादियोगानां संयोगो रेकदो गुणैः ।
लग्नद्विधर्मकर्माय सुखपुत्रास्तविक्रमे ॥

स्थितः स्थितौ स्थिताः खेटा शत्रुग्रहनिरीक्षिताः ।
आदौ वयसि मध्येऽन्ते क्रमाद्दारिद्र्यदा स्मृताः ॥ ११२॥
लग्ने क्रूरा व्यये क्रूरा धने क्रूराः समन्विताः ।
सप्तमे भवने क्रूरा परिवार क्षयङ्कराः ॥ ११३
चन्द्रे नभःस्थे हिबुकेच पापे शुक्रे स्मरे स्यात्स्वकुलस्य हन्ता ।११४।
मन्दार्कयोगे धातुनैपुण्यम् ॥ ११५

(अर्थ)

जिस मनुष्य का लग्नेश व्यय स्थान में हो तथा व्ययेश लग्न में हो वह मनुष्य सब लोगों का शत्रु, बुद्धिहीन तथा कृपण होता है ॥१॥

जब भाग्येश केन्द्र अथवा त्रिकोण में हो, शुभ ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट भी हो तो मनुष्य धन, विद्या तथा भाग्य से युक्त होता है ॥२॥

जब लग्नेश छठे स्थान में हो तथा षष्ठेश लग्न में हो तो मनुष्य रोग रहित, शूर, तथा बलवान् होता है ॥ ३ ॥

जब पञ्चमेश लग्न में हो तथा लग्नेश पञ्चम स्थान में हो तो मनुष्य उदारचित्त, विद्यावान् तथा अभिमानी होता है ॥४॥

जब लग्नेश अष्टम स्थान में हो तथा अष्टमेश लग्न में हो तो मनुष्य जुआरी, शूर तथा चोर होता है ॥५॥

जब धर्मेश लग्न में हो, लग्नेश धर्म स्थान में हो तो मनुष्य परदेश में निवास करने वाला, धर्म में रुचिवाला, तथा राजमान्य होता है ॥ ६ ॥

जब लग्नेश लाभ स्थान में हो, लाभेश लग्न में हो तो मनुष्य अच्छे कर्म करने वाला, दीर्घायु, भूमि का स्वामी तथा पंडित होता है ॥ ७ ॥

जब धनेश व्ययस्थान में हो तो मनुष्य अभिमानी तथा धनहीन होता है ॥ ८ ॥

जब लग्न में पाप ग्रह शुभ ग्रह से दृष्ट अथवा युक्त न हो तो मनुष्य संन्यासी हो जाता है अथवा उसकी स्त्री का नाश हो जाता है ॥९॥

जव कर्मेश तथा लग्नेश परस्पर एक दूसरे के स्थान में हों तो मनुष्य प्रसिद्ध तथा प्रतापी होता है ॥१०॥

जब सप्तम स्थान में मङ्गल हो तो मनुष्य बहुत स्त्रियों से प्रीति करने वाला तथा कुलघ्न होता है ॥११॥

जब शनि के साथ बुध हो तो मनुष्य दूसरे को ठगने में चतुर तथा गुरुवाक्य को उल्लङ्घन करनेवाला होता है ॥ १२ ॥

जव बृहस्पति तथा शुक्र का योग हो तो मनुप्य अच्छी विद्या, धन, स्त्री तथा गुणों से युक्त होता है ॥ १३ ॥

जव बुध तथा शुक्र का योग हो तो मनुष्य वक्ता, पण्डित, भूमि का स्वामी तथा बहुत नोकरों का स्वामी होता है ॥१४॥

जव बुध तथा बृहस्पति का योग हो तो मनुष्य गायन में प्रीति करने वाला, नाच जानने वाला तथा मल्ल (कुश्ती करने वाला) होता है ॥१५॥

जव शनि तथा मङ्गल का योग हो तो मनुष्य दु खी, मिथ्यावादी तथा निन्दित होता है ॥ १६ ॥

जव मङ्गल तथा बृहस्पति का योग हो तो मनुष्य एक नगर का अध्यक्ष अथवा विद्यावान् ब्राह्मण होता है ॥१७॥

जव सप्तम स्थान में सूर्य्य हो तो मनुष्य वडे कुटुम्ब वाला तथा बहुत स्त्री वाला होता है ॥ १८ ॥

जव मेष के चन्द्रमा पर शनि की दृष्टि हो तो मनुष्य धनहीन तथा लोभी होता है ॥१९॥

जव धनेश को पाप ग्रह देखें तो कपट से विष भोजन होता है ॥२०॥

जव अष्टम स्थान में पाप ग्रह हों तो भगन्दर आदि रोग होते हैं॥२१॥

जिसके जन्मकाल में चन्द्रमा दशम स्थान में हो, बृहस्पति पंचम अथवा नवम स्थान में हो वह मनुष्य दानी, तपस्वी तथा जितेन्द्रिय होता है ॥२२॥

यदि चन्द्रमा अथवा शुक्र छठे अथवा अष्टम स्थान में हों तो मनुष्य मन्दाग्नि वाला तथा उदर रोगी होता है ॥ २३ ॥

जब द्वादश स्थान में लग्नेश हो, दशम स्थान में पाप ग्रह हों तथा चन्द्रमा मङ्गल से युक्त हो तो मनुष्य परदेशी, भिक्षा मांगने वाला, तथा दुःखी होता है ॥ २४ ॥

जब बृहस्पति तथा धनेश छठे अथवा द्वादश स्थान में हों तो मनुष्य क्लेश सहने वाला तथा द्रव्यहीन होता है ॥२५॥

जब चन्द्रमा तथा शनि का योग हो तो मनुष्य कडुए वचन बोलने वाला तथा कपटी होता है ॥२६॥

जब लग्न में एक भी उच्च का ग्रह अपने मित्र ग्रह से युक्त हो तो मनुष्य बड़ा धनवान् होता है ॥२७॥

जब द्वादश तथा षष्ठ स्थानों में पाप ग्रह हों तो बालकों की मृत्यु हो जाती है ॥२८॥

जिस भाव से ६,८,१२ स्थानों में पाप ग्रह हों उस भाव का नाश होता है ॥२९॥

जिस भाव का स्वामी त्रिक स्थान में हो अथवा त्रिकेश जिस भाव में हो उस भाव का नाश होता है ॥३०॥

जब केन्द्र में क्रूर ग्रह बैठे हों तो मनुष्य विकल अङ्ग वाला होता है ॥३१॥

जब सूर्य तथा चन्द्रमा केन्द्र में हों तो मनुष्य विकल अङ्ग वाला होता है ॥३२॥

जब चन्द्रमा तथा बुध मङ्गल से दृष्ट हों तो मनुष्य निर्लज्ज होता है ॥३३॥

जब बुध तथा मंगल का योग हो तो मनुष्य कपटी होता है ॥३४॥

जब राहु, शनि तथा मंगल का योग हो तो मनुष्य हृदय में कपट वाला होता है ॥३५॥

जिसके लग्न में मंगल बैठा हो वह मनुष्य क्रोधी होता है ॥३६॥

जब मंगल सप्तम स्थान में हो तो मनुष्य बलवान् तथा शूर होता है ॥ ३७ ॥

जब तृतीय स्थान में केतु हो तो मनुष्य झगड़ा करना पसन्द करता है ॥३८॥

जब चतुर्थ स्थान में शुभ ग्रह हो तो मनुष्य क्षमावान् होता है ॥३९॥

जब शनि के घर में बुध तथा मंगल हों तो मनुष्य हंसी ठट्ठा करना पसन्द करता है ॥४०॥

जब तृतीय स्थान में स्थित मंगल पर बुध तथा चन्द्रमा की दृष्टि हो तो मनुष्य द्रोही होताहै ॥४१॥

जब अष्टमेश धन स्थान में हो तो मनुष्य चोर होता है ॥४२॥

जब बुध तथा मंगल लग्न में हों तो मनुष्य चोर होता है ॥४३॥

जब व्ययेश नीच का हो तो मनुष्य व्यसनी होता है ॥४४॥

जब व्यय स्थान में पाप ग्रह हों तो मनुष्य व्यसनी होता है ॥४५॥

जब धर्म स्थान में शुभ ग्रह हों तो मनुष्य व्यसन रहित होता है ॥४६॥

जब शुक्र सप्तम स्थान में हो तो मनुष्य बड़ा कामी होता है ॥४७॥

जब शुभ ग्रह को पाप ग्रह देखे तो मनुष्य कामी होता है ॥४८॥

जब शुक्र से छठे अथवा आठवें स्थान में शनि हो तो मनुष्य हिजड़ा अथवा उसके समान होता है ॥४९॥

जब सप्तम स्थान में मंगल हो, लग्न में बृहस्पति हो तो मनुष्य उन्माद (मृगी) रोग वाला होता है ॥५०॥

जब धन स्थान में केतु हो तो मनुष्य को जल्दी बुढ़ापा आ जाता है ॥ ५१ ॥

जब राहु, शनि, सूर्य्य, तथा बृहस्पति लग्न में हों तो मनुष्य प्रकृति से वृद्ध होता है ॥५२॥

जब सुखेश दशम स्थान में हो तो मनुष्य रसायन के व्यसन वाला होता है ॥५३॥

जब लग्न में बृहस्पति हो तो मनुष्य बहुत भोजन करने वाला होता है ॥५४॥

जब लग्नेश पंचम स्थान में हो तो मनुष्य चुगलखोर होता है ॥५५॥

जब बृहस्पति राहु से युक्त हो तथा पाप ग्रह की उस पर दृष्टि हो तो मनुष्य में चाण्डालता होती है ॥५६॥

जब केन्द्र में बुध से युक्त शनि हो तो मनुष्य शिल्प विद्या जानने वाला होता है ॥५७॥

जब बुध तथा बृहस्पति त्रिक स्थान में हों तो मनुष्य औरों को उपदेश करना पसन्द करता है ॥५८॥

जब षष्ठेश तथा लग्नेश लग्न में हों तो बान्धवों से दुःख मिलता है ॥५९॥

जब लग्न अथवा लग्नेश से ६,८,१२ स्थानों में पाप ग्रह हों तो मनुष्य अपनी जाति से छूट जाता है ॥६०॥

जब लग्नेश लग्न में हो तो मनुष्य कौतुकी होता है ॥६१॥

जब बृहस्पति तथा शनि का योग हो तो मनुष्य आलसी होता है ॥६२॥

जब शनि से चौथे घर में बुध हो तथा षष्ठेश ६,८,१२ स्थानों में हो तो मनुष्य बहिरा होता है ॥६३॥

जब बुध तथा षष्ठेश लग्न में हो तो मनुष्य गूंगा होता है ॥६४॥

जब चन्द्रमा तथा सूर्य मीन राशि में हों तो मनुष्य के चेहरे में हंसी होती है ॥६५॥

जब सप्तम स्थान में शनि हो, दशम स्थान में चन्द्रमा हो तो मनुष्य वक्ता होता है ॥६६॥

जब शनि तथा चन्द्रमा का योग हो तो मनुष्य कड़ुए वचन बोलने वाला होता है ॥६७॥

जब छठे स्थान में सूर्य मंगल तथा शनि हों तो मनुष्य लूला होता है ॥६८॥

जब चार ग्रह स्वक्षेत्री हों तो मनुष्य धनवान् होता है ॥६९॥

जब चन्द्रमा तथा मगल का योग हो तो मनुष्य धनवान् होता है ॥७०॥

जब चारों केन्द्रों में शुभ ग्रह हों तो मनुष्य बड़ा धनवान् होता है ॥७१॥

जब ३।६।११ स्थानों में सौम्य ग्रह हों तो मनुष्य बड़ा धनवान् होता है ॥७२॥

जब धनस्थान, धनेश तथा लाभेश पापग्रह सहित हों तो मनुष्य निर्धन होता है ॥७३॥

जब तृतीयेश तथा लग्नेश मित्र हों तो भाई से स्नेह होता है, यदि शत्रु हों तो बैर होता है ॥७४॥

जब तृतीयेश केन्द्र अथवा कोण में हो तो मनुष्य पराक्रमी होता है ॥७५॥

जब चतुर्थ स्थान मे पाप ग्रह हो तथा बृहस्पति बलहीन हो तो धन होने पर भी मनुष्य दु.खी रहता है ॥७६॥

जब सप्तमेश तथा लग्नेश मित्र हों तो स्त्री से मैत्री होती है ॥७७॥

जब पचमेश तथा लग्नेश आपस में मित्र हों तो पुत्र से मित्रता होती है ॥७८॥

जब अष्टमेश ६,८,१२, स्थानों में हो तो मनुष्य नित्यरोगी होता है ॥७९॥

जब षष्ठेश षष्ठ स्थान में हो तो अपने भाई बिरादर शत्रु होजाते हैं ॥८०॥

जब मङ्गल बलवान् हो तो मनुष्य सेनापति होता है ॥८१॥

जब सप्तमेश राहु अथवा केतु सहित हो तथा पाप ग्रह की उस पर दृष्टि हो तो मनुष्य व्यभिचारी होता है ॥८२॥

जब लाभ स्थान में शुभ ग्रह हों तो न्याय से लाभ होता है। यदि पाप ग्रह हों तो अन्याय से लाभ होता है। यदि शुभ ग्रह तथा पाप ग्रह दोनों हों तो न्याय तथा अन्याय दोनों प्रकार से लाभ होता है ॥८३॥

जब व्यय स्थान में शुभ ग्रह हों तो अच्छे काम में व्यय होता है। यदि पाप ग्रह हों तो बुरे कामों में व्यय होता है। यदि पाप ग्रह तथा शुभ ग्रह दोनों हों तो अच्छे तथा बुरे कामों में व्यय होता है॥ ८४ ॥

जब धन स्थान में पाप ग्रह हो तथा लग्नेश व्यय स्थान में हो तो मनुष्य ऋण से ग्रस्त रहता है ॥ ८५ ॥

जिसका सप्तमेश दशम अथवा चतुर्थ स्थान में हो उसकी स्त्री पतिव्रता नहीं होती है ॥ ८६ ॥

जिसके सप्तम स्थान में शनि अथवा मंगल हों, अथवा सप्तमेश शनि अथवा मंगल हों उस मनुष्य की स्त्री या तो वेश्या होती है या व्यभिचारिणी होती है इसमें सन्देह नहीं है ॥ ८७ ॥

जब चन्द्रमा राहु से युक्त हो अथवा पाप ग्रह सहित चन्द्रमा को बृहस्पति देखता हो तो मनुष्य बड़ा पापी होता है ॥ ८८ ॥

जब सूर्य्य सहित शनैश्चर सिंह राशि में हो तो मनुष्य बड़ा पातकी होता है ॥ ८९ ॥

जब एक राशि में तीन दुष्ट ग्रह हों तो मनुष्य शूल रोग वाला होता है ॥ ९० ॥

जब चन्द्रमा सहित मंगल अष्टम स्थान में शत्रु गृही हो तो सर्प दंश का भय होता है ॥ ९१ ॥

जब केन्द्र में सौम्य ग्रह हों तथा धन स्थान में पाप ग्रह हों तो मनुष्य दुःखी होता है ॥ ९२ ॥

जब पंचम स्थान, लग्न अथवा चतुर्थ स्थान में चन्द्रमा हो तो मनुष्य तपस्वी होता है ॥ ९३ ॥

पशु का विचार छठे स्थान से करना चाहिये ॥ ९४ ॥

जब छठे स्थान में चन्द्रमा शुक्र, अथवा बुध बृहस्पति बलवान् हों तो गोधन होता है ॥ ९५ ॥

यदि छठे स्थान में सूर्य्य तथा मगल बलवान् हों तो बकरी, भेडी होती हैं। यदि राहु तथा शनि हों तो भैंस होती हैं ॥ ९६ ॥

शुक्र, चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति की दृष्टि से स्त्रियों की सख्या जाननी चाहिये ॥ ९७ ॥

जब लग्न अथवा चन्द्रमा को बृहस्पति न देखे, अथवा चन्द्रमा सूर्य्य के साथ हो और बृहस्पति उसको न देखे, अथवा सूर्य्य तथा किसी और पाप ग्रह के साथ चन्द्रमा बैठा हो तो मनुष्य परजात होता है ॥ ९८ ॥

जब दूसरे, तीसरे, धर्म, दशम तथा लाभ स्थान में नीच ग्रह बैठे हों तो मनुष्य राजा होता है। जब छठे स्थान में उच्च ग्रह हों तो मनुष्य दास होता है। जब ८,१२ स्थानों में उच्च ग्रह हों तो मनुष्य भिखारी होता है ॥ ९९ ॥

जब अष्टमेश मित्र के घर में हो तो मनुष्य दीर्घायु होता है ॥१००॥

जब छठे स्थान में पाप ग्रह हों तो मनुष्य शत्रुनाशी होता है। जब छठे स्थान में सौम्य ग्रह हो तो मनुष्य बडा रोगी होता है। जब छठे स्थान में चन्द्रमा हो तो अरिष्ट कारक होता है ॥ १०१ ॥

जिसके केन्द्र में शुक्र, बुध, अथवा बृहस्पति हो, दशम मगल हो वह मनुष्य कुलदीपक होता है ॥ १०२ ॥

जब पंचम स्थान में मङ्गल हो, अथवा पंचम स्थान में स्थित चन्द्रमा पर बुध की दृष्टि हो अथवा बुध केन्द्र में हो तो मनुष्य गणित शास्त्र का जानने वाला होता है ॥ १०३ ॥

अथवा पंचमेश बुध अपने उच्च का हो, लग्न में बृहस्पति हो, अष्टम स्थान में शनि हो तो मनुष्य गणित शास्त्र जानने वाला होता है ॥ १०४ ॥

जब बृहस्पति केन्द्र अथवा त्रिकोण में हो, शुक्र अपने उच्च का हो, अथवा पचमेश बुध हो तो मनुष्य गणित शास्त्र जानने वाला होता है ॥ १०५ ॥

जब केन्द्र अथवा कोण में बृहस्पति हो तो मनुष्य वेदान्ती होता है। जब बृहस्पति अथवा शुक्र केन्द्र में हो तो मनुष्य षट्शास्त्रवेत्ता होता है ॥ १०६ ॥

जब व्यय स्थान में चन्द्रमा हो तो बाईं आंख का नाश करताहै, जब धन स्थान अथवा व्यय स्थान में शुक्र हो तो मनुष्य काना अथवा मन्द दृष्टि वाला होता है, यदि उसी स्थान में शुक्र हो तो अन्धा होता है ॥ १०७ ॥

जब सूर्य्य तथा शुक्र से सहित लग्नेश ६,८,१२ स्थानों में बैठा हो तो मनुष्य जन्मान्ध होता है। व्यय स्थान में कोई ग्रह अच्छा नहीं होता है, विशेषतः सूर्य्य, शुक्र, चन्द्रमा, तथा राहु के होने से दृष्टि का नाश होता है ॥ १०८ ॥

जब सप्तम स्थान में बुध तथा शनि हों तो मनुष्य कोढी होता है। इसी प्रकार जब बृहस्पति के साथ राहु हो तो मनुष्य नपुंसक होता है ॥ १०९ ॥

जब पाप ग्रह चतुर्थ स्थान में शत्रु गृही हो कर बैठा हो, अथवा शत्रु ग्रह की उस पर दृष्टि हो तथा शुभ ग्रहों की उस पर दृष्टि न हो तो मनुष्य को बडा सन्ताप होता है विशेषत. भाई बिरादरों से दुःख मिलता है ॥ ११० ॥

जब केन्द्र अथवा त्रिकोण में पाप ग्रह हों, ३,६,११,८ स्थानों में शुभ ग्रह हों, दूसरे स्थान में मंगल, चौथे स्थान में क्षीण चन्द्रमा, तथा सप्तम स्थान में मङ्गल हों तो मनुष्य दरिद्री होता है। यदि पूर्वोक्त धन देने वाले स्थानों में सूर्य्य, मंगल, शनि, राहु तथा क्षीण चन्द्रमा शत्रु के वर्ग में हो कर स्थित हों तो मनुष्य दरिद्री होता है ॥ १११ ॥

इसी प्रकार त्रिक आदि का संयोग होने से भी मनुष्य दरिद्री होता है। जब लग्न, धन, धर्म, कर्म, लाभ, सुख, पुत्र, सप्तम, तथा पराक्रम स्थानों में शत्रु ग्रह से दृष्ट एक ग्रह स्थित हो तो बाल्यावस्था में, दो ग्रह स्थित हों

तो युवावस्था में, दे। से अधिक ग्रह हों तो वृद्धावस्था में दारिद्र्य होता है ॥ ११२ ॥

जब लग्न, व्यय अथवा धन स्थान में क्रूर ग्रह बैठे हों तथा सप्तम स्थान में भी क्रूर ग्रह हों तो परिवार का नाश करते हैं ॥ ११३ ॥

जब दशम स्थान में चन्द्रमा हो, चतुर्थ स्थान में पाप ग्रह हो, सप्तम स्थान में शुक्र हो तो मनुष्य अपने कुल का नाश करता है ॥ ११४ ॥

सूर्य तथा शनि के योग होने से मनुष्य धातुवाद में निपुण होता है ॥ ११५ ॥

श्रीदेवीदत्तज्योतिर्वित्संगृहीतानुवादिते सुगमज्योतिषे जातकाध्यायोद्वितीयः ॥

सुगमज्योतिषम्

दशाध्यायस्तृतीयः

—:०:—

(१) दशानयनप्रकरणम्

दशाभेदाः

दशाचान्तर्दशा चैव तत्तदन्तर्दशा तथा ।
सूक्ष्मभुक्तिप्राणदशाप्येवं पञ्च दशाः स्मृताः ॥

(१) निसर्गायुः (२) पिण्डायुः (३) अंशायुः (४) नक्षत्रायुरितिभेदेन चतुर्विधा महादशा ॥

(१) महादशा (२) अन्तर्दशा (३) विदशा अथवा उपदशा (४) सूक्ष्मदशा (५) प्राणपददशा (६) मासदशा (७) गोचर दशा (८) दिन दशा. इत्यादयो दशा भेदाः ॥

तत्र बृहत्पाराशरी ग्रन्थानुसारेण महादशाया द्विचत्वारिंशद् भेदाः सन्ति । कूर्माचले प्रायशो गौरीमाहेश्वरीदशा अथवा परमायुषी दशा गृह्यते । अन्यत्र च विंशोत्तरी दशा (अथवा पाराशरी दशा), अष्टोत्तरी दशा, योगिनी दशा च गृह्यन्ते । तन्मध्येऽपि कलौ पाराशरीदशेति वचनात् पाराशरी दशाया एव मुख्यत्वम् । केचित्तु—

शुक्ले ऽङ्केऽर्कस्य होरायां दिवा विंशोत्तरी मता ।
कृष्णे चन्द्रस्य होरायां रात्रावष्टोत्तरी मता ॥
सत्ये लग्नदशा प्रोक्ता त्रेतायां योगिनी तथा ।
द्वापरे हरगौरी च नक्षत्रायुः कलौयुगे ॥

(अर्थ)

दशा चार प्रकार से निकाली जाती है (१) निसर्गायु जिसमें स्वतः ग्रहों की वर्ष सख्या नियत है (२) पिण्डायु जिसमें ग्रहों की वर्ष संख्या उच्च नीच आदि होने के कारण घट वढ़ जाती है (३) अंशायु जिसमें नवांश आदि द्वारा दशा बनाई जाती है । (४) नक्षत्रायु जिसमें जन्म नक्षत्र की भुक्त भोग्य घटियों से दशा बनाई जाती है ॥

दशा कई प्रकार की होती हैं उनके मुख्य भेद यह है:—

(१) महादशा (२) अन्तर्दशा (३) विदशा अथवा उपदशा (४) सूक्ष्मदशा (५) प्राणपददशा, (६) मासदशा (७) गोचरदशा (८) दिन-दशा ॥

वृहत्पाराशरी ग्रन्थ के अनुसार महादशा ४० प्रकार की होती है। कूर्माचल में बहुधा गौरीमाहेश्वरी अथवा परमायुषी दशा का प्रचार है। अन्यत्र विंशोत्तरी दशा जिसको पाराशरी दशा भी कहते हैं अथवा अष्टोत्तरी तथा योगिनी दशाओं का प्रचार है। कलियुग में पाराशरी दशा लेनी चाहिये ऐसा भी वचन है। इसके अनुसार पाराशरी दशा मुख्य है। कोई आचार्य्य कहते हैं कि शुक्लपक्ष में दिनमें अथवा सूर्य्य की होरा में जन्म होने पर विंशोत्तरी दशा लेनी चाहिये। कृष्णपक्ष में, रात्रि में अथवा चन्द्रमा की होरा में जन्म होने पर अष्टोत्तरी दशा लेनी चाहिये। एक वचन यह भी है कि सत्ययुग में लग्न दशा ली जाती थी, त्रेतायुग में योगिनीदशा ली जाती थी, द्वापर युग में गौरी माहेश्वरी दशा ली जाती थी, कलियुग में नक्षत्र दशा अर्थात् विंशोत्तरी अथवा अष्टोत्तरी दशा लेनी चाहिये ॥

नैसर्गिक दशा

एकं द्वौ नव विंशति धृ'ति कृती पञ्चाशदेषां क्रमा
च्चन्द्रारेन्दुज शुक्र जीव दिनकृद्वैवाकरीणां समाः ।
स्वैः स्वैः पुष्टफला निसर्गजनितैः पक्तिर्दशायाः क्रमा
दन्ते लग्नदशा शुभेति यवना नेच्छन्ति केचित्तथा ॥

(अर्थ)

नैसर्गिक दशा में ग्रहों के वर्ष निसर्ग अर्थात् स्वभाव ही से नियत हैं। जन्म समय से एक वर्ष पर्यन्त चन्द्रमा की दशा रहती है। उपरान्त २ वर्ष पर्यन्त मङ्गल का, तब ९ वर्ष पर्यन्त बुध की,तब २० वर्ष पर्यन्त शुक्र की, तब १८ वर्ष पर्यन्त बृहस्पति की, तब २० वर्ष पर्यन्त सूर्य की, तब ५० वर्ष पर्यन्त शनि की दशा रहती है। सब का जोड १२० वर्ष होता है। जो बल-वान् ग्रह हो उसकी दशा में शुभ फल, जो बलहीन हो उसकी दशा में अशुभ फल जानना चाहिये। अन्त में लग्न दशा होती है ॥

(नक्षत्रायुः)

विंशोत्तरी दशा

अग्निभाज्जन्मभं यावद् गणयेन्नवभिर्भजेत् ।
शेषे दशा रवींभौराजीवार्किज्ञाः शिखी भृगुः ॥
रसाशास्वरधृत्यब्दाः षोडशैकोनविंशतिः ।
सूर्यादिवत्सराः प्रोक्ता सप्तचन्द्रो मुनिर्नखाः ॥
निजजन्मनि आदिमा दशा
जनिभस्यैष्यघटीसमाहता ।
सकलर्क्षघटीविभाजिता
जनिभुक्तादिदशा मता तत ॥

अन्तर्दशानयनम्

दशा दशाहता कार्या दशभिर्भागमाहरेत् ।
लब्धाङ्काश्च मासाः स्युस्त्रिंशघ्ने च दिनानि च ॥

यथा सूर्यमहादशावर्षाणि ६ । परस्परं गुणिते जातं ३६ । दशभिर्भक्ते लब्धं ३ मासाः । शेषाः ६ । त्रिंशद्गुणिता जाता. १८० । दशभिर्भक्ते लब्धं १८ दिनानि । एवं सूर्य महादशामध्ये सूर्यस्यान्तर्दशा मासाः ३ । दिनानि १८। एवं चंद्रादीनामपिज्ञेयम् ।

(अर्थ)

कृत्तिका नक्षत्र से जन्मनक्षत्र पर्यन्त गिन कर ९ का भाग दे कर जो शेष रहे वही आदि दशा है, दशा में ग्रहों का क्रम यह है:—

सूर्य्य, चन्द्रमा, भौम, राहु, जीव, शनि, बुध. केतु, शुक्र ।

सूर्य्य आदि ग्रहों के दशा वर्ष इस प्रकार से हैं.—६,१०,७,१८, १६,१९,१७,७,२० ॥

अपने जन्म समय में जो पहिली दशा हो उसको जन्म नक्षत्र की इष्ट घडी से गुणन करे, सकलर्क्ष से भाग दे, तो भुक्त दशा निकल आती है ॥

दशा को दशा से गुणा करे, १० का भाग दे, जो लब्धि निकले वे महीने हैं, शेष को ३० से गुणा करने से दिन निकल आते हैं ॥

जैसे सूर्य्य की महादशा ६ वर्ष है, ६ को ६ से गुनने से ३६ हुए, उसमें १० का भाग देने से ३ लब्धि आई, वह महीने हैं, शेष ६ को ३० से गुनने से १८० हुए । उसमें १० का भाग देने से १८ लब्धि हुई । वह दिन हैं । इस प्रकार से सूर्य्य की महादशा में सूर्य्य की अन्तर्दशा ३ महीने १८ दिन होगी । एवं चन्द्रमा आदि ग्रहों की भी अन्तर्दशा निकालनी चाहिये ॥

सूचना—

पिण्डायु तथा अंशायु यहा पर छोड़ दिये गये हैं । इन दशाओं का निकालना नये विद्यार्थियो के लिये कठिन विषय है । इन्ही के द्वारा निर्याण भी गिना जाता है । जिनको इन्हें जानने की अभिलाषा हो उन्हे बृहज्जातक आदि ग्रन्थ इस विषय में देखने चाहिये ॥

विंशोत्तरी (महादशा) वर्षाणि

ग्रहाः	वर्षाणि	नक्षत्राणि
सू.	६	कृ. उफ. उषा.
चं.	१०	रो. ह. श्र.
मं.	७	मृ. चि. ध.
रा.	१८	श्रा. स्वा श.
बृ.	१६	पुन. वि. पूभा.
श.	१६	पुष्य. अनु. उभा.
बु.	१७	अश्ले. ज्ये. रे.
के.	७	म. मू. अश्वि.
शु.	२०	पूफ. पूषा. भ.

वि शोत्तरीमहादशायामन्तर्दशा

सूर्यान्तराणि				चन्द्रान्तराणि				भौमान्तराणि			
ग्र.	व	मा	दि	ग्र	व	मा	दि	ग्र	व	मा	दि
सू	०	३	१८	चं	०	१०	०	मं	०	४	२७
चं	०	६	०	मं	०	७	०	रा	१	०	१८
म	०	४	६	रा	०	६	०	बृ	०	११	६
रा	०	१०	२४	बृ	१	४	०	श	१	१	९
बृ	०	९	१८	श	१	७	०	बु	०	११	२७
श	०	११	१२	बु	१	५	०	के	०	४	२७
बु	०	१०	६	के	०	७	०	शु	१	२	०
के	०	४	६	शु	१	८	०	सू	०	४	६
शु	१	०	०	सू	०	६	०	चं	०	७	०

राह्वन्तराणि				गुर्वन्तराणि				शन्यन्तराणि			
ग्र	व	मा	दि	ग्र	व	मा	दि	ग्र	व	मा	दि
रा	२	८	१२	बृ	२	१	१८	श	३	०	३
बृ	२	४	२४	श	२	६	१२	बु	२	८	९
श	२	१०	६	बु	२	३	६	के	१	१	९
बु	२	६	१८	के	०	११	६	शु	३	२	०
के	१	०	१८	शु	२	८	०	सू	०	११	१२
शु	३	०	०	सू	०	९	१८	च	१	७	०
सू	०	१०	२४	चं	१	४	०	म	१	१	९
चं	१	६	०	म	०	११	६	रा	२	१०	६
म	१	०	०	रा	२	४	२४	बृ	२	६	१२

बुधान्तराणि				केत्वन्तराणि				शुक्रान्तराणि			
ग्र	व	मा	दि	ग्र	व	मा	दि	ग्र	व	मा	दि
बु	२	४	२७	के	०	४	७	शु	३	४	०
के	०	११	२७	शु	१	२	०	सू	१	०	०
शु	२	१०	०	सू	०	४	६	च	१	८	०
सू	०	१०	६	च	०	७	०	मं	१	२	०
चं	१	५	०	म	०	४	२७	रा	३	०	०
म	०	११	२७	रा	१	०	१८	वृ	२	८	०
रा	२	६	१८	वृ	०	११	६	श	३	२	०
वृ	२	३	६	श	१	१	९	बु	२	१०	०
श	२	८	९	बु	०	११	२७	के	१	२	०

गौरीमाहेश्वरी वा परमायुषी दशा.

(विंशोत्तरीवद्वर्षाणि)

प्रथमांशादिजातानां परमायुः प्रकीर्तितम् ।
द्वितीयस्यांशकस्यादौ शतमायुरुदाहृतम् ।
समाशीतिस्तृतीयस्य षष्टिस्तुर्यस्य च स्मृतम् ॥

नक्षत्रप्रथमचरणे जन्म १२० वर्षाणि परमायुः

"	२	"	१००	"
"	३	"	८०	"
"	४	"	६०	"

नक्षत्रस्य गता नाड्यो वेदघ्नाश्च त्रिभाजिताः ।
लब्धंतु खार्कतः शोध्यं शेषमायुः स्फुटं भवेत् ॥

$$\frac{\text{नक्षत्र गत घटी} \times ४}{३} = \text{लब्धि}; \quad १२० - \text{लब्धि}.$$

दशाब्दाः स्वायुषा गुण्याः खार्कैर्भक्तात्समादिकम् ।
दशामानं भवेदेवं दशान्तर्विदशादिकम् ॥

(अर्थ)

गौरीमाहेश्वरी दशा में विशोत्तरी दशा के समान वर्ष होते हैं। जिन मनुष्यों का जन्म नक्षत्र के प्रथम चरण में हो उनको परमायु अर्थात् १२० वर्ष मिलते है। जिनका जन्म नक्षत्र के दूसरे चरण में हो उनको १00 वर्ष मिलते हैं। जिनका जन्म नक्षत्र के तीसरे चरण में हो उनको ८0 वर्ष मिलते हैं। जिनका जन्म नक्षत्र के चौथे चरण में हो उनको ६0 वर्ष मिलते हैं॥

नक्षत्र की गत नाडियों को ४ से गुणा करे ३, से भाग दे, जो लब्धि हो उसको १२० में से घटा दे शेष से स्पष्ट आयु हो जाती है॥

दशा के वर्षो को स्पष्ट आयु से गुणा करे उसमें १२० का भाग देने से वर्ष आदि निकल आते हैं। इस प्रकार से महादशा निकल आता है। ऐसे ही अन्तर्दशा विदशा, आदि भी जानने चाहियें॥

अष्टोत्तरी दशा.

आर्द्रा पुनर्वसुः पुष्य अश्लेषा च रवेर्दशा ।
मघा पूर्वोत्तरा चैव चन्द्रस्य च दशा तथा ॥
हस्तो विशाखा चित्रा च स्वाती भौमदशा स्मृता ।
ज्येष्ठानुराधामूले च सौम्यस्य च दशा बुधैः ॥
अभिजिच्छ्रवणः पूषा उषा चैव शनेर्दशा ।
धनिष्ठा शततारा च पूर्वाभाद्रपदा गुरो ॥
उभा पूषाश्विनी कालौ राहोश्चैव दशास्मृता ।
कृत्तिकारोहिणी चोक्ता मृगः शुक्रदशा बुधैः ॥

एषां भानां क्रमेणैव ज्ञेयाः सूर्यादिका दशाः ।
क्रूरजा अशुभा प्रोक्ता शुभास्यात्सौम्यखेटजा ॥
सूर्यस्य रसवर्षाणि इन्दोः पञ्चदशैव च ।
भौमस्य वसुवर्षाणि ऋषिचन्द्रौ बुधस्य च ॥
मन्दस्य दशवर्षाणि गुरोश्चैकोनविंशतिः ।
राहोर्द्वादशवर्षाणि शुक्रस्यैकोनविंशतिः ॥
महादशा स्वस्वदशाब्दनिघ्ना भक्ता वसुव्योमकुभिः समाद्याः ।
अन्तर्दशाः स्युर्गगनेचराणां तदैकभावो हि महादशा स्यात् ॥
गुर्जरे कच्छ सौराष्ट्रे पाञ्चाले सिन्धुपर्वते ।
देशेष्वष्टोत्तरी ज्ञेया प्रत्यक्षफलदायिनी ॥

ग्रह	सू	चं.	मं.	बु	श	रा	गं	शु
वर्ष	६	१५	८	१७	१०	१६	१२	२१
नक्षत्र	आ. पुन. पु अश्ले	म पूफा उफा	ह चि. स्वा वि	अनु ज्ये मू	पूषा उषा अभि श्र	ध श पूभा	उभा रे अ भ	कृ रो मृ

(अर्थ)

पूर्वोक्त श्लोकों का अर्थ चक्र से समझ में आ जावेगा । महादशा को ग्रह के वरसों में गुने, उसमें १०८ का भाग दे तो अन्तर्दशा निकल आती है ॥ गुजर (गुजरात) कच्छ, सोराष्ट्र (विहार) पाञ्चाल (पञ्जाब) सिन्धु देशों में अष्टोत्तरी दशा प्रत्यक्ष फल देने वाली है ॥

अष्टोत्तरी महादशामध्येऽन्तर्दशा

सूर्यस्य					चन्द्रस्य					भौमस्य					बुधस्य				
ग्र	व	मा	दि	घ	ग्र	व	मा	दि	घ	ग्र	व	मा	दि	घ	ग्र	व	मा	दि	घ
सू		४	0	0	चं		४ शुभिर्हरंत			[illegible]		७	३	२०	बु	२	८	३	२०
च.	.	१०			[illegible]		६ स्तुष्टा ॥			[illegible]		३	३	२०	श	१	६	२६	४०
भौ		५	१०		[illegible]		[illegible]	१०		[illegible]		८	२६	४०	गु	२	११	२६	४०
बु	...	११	१०		श	१	४	२०		गु		४	२६	४०	रा	१	१०	२०	.
श.		६	२०		गु	२	७	२०		रा		.१०	२०	.	शु	३	३	२०	.
गु	१		२०		रा	१	८			शु	१	६	२०		सू	...	११	१०	..
रा		९			शु	२	११			सू		५	१०		चं	२	४	१०	..
शु	१	२			सू		१०			च	१	१	१०		भौ	१	३	३	२०

शनेः					गुरोः					राहोः					शुक्रस्य				
ग्र	व	मा	दि	घ	ग्र	व	मा	दि	घ	ग्र	व	प्रा	दि	घ	ग्र	व	मा	दि	घ
श		११	३	२०	गु	३	४	३	२०	रा	१	४		..	शु	४	१	.	
गु	१	९	३	२०	रा	२	१	१०		शु	२	४		.	सू	१	२		
रा	१	१	१०		शु	३	८	१०		सू		८			च	२	११		..
शु	१	११	१०		सू	१		२०		च	१	८			भौ	१	६	२०	
सू	0	६	२०		च	२	७	२०	.	भौ	..	१०	२०		बु	३	३	२०	
च	१	४	२०		भौ	१	४	२६	४०	बु	१	१०	२०		श	१	११	१०	.
भौ		८	२६	४०	बु	२	११	२६	४०	श	१	१	१०		गु	३	८	१०	...
बु	१	६	२६	४०	श	१	९	३	२०	गु	२	१	१०	..	रा	२	४	..	.

योगिनी दशा

मङ्गला पिङ्गला धन्या भ्रामरी भद्रिका तथा ।
उल्का सिद्धा सङ्कटा च योगिन्योऽष्टौ प्रकीर्तिताः ॥
एकाभिवृद्ध्या वर्षाणि मंगलाप्रमुखासु च ॥

स्वामिनः

चन्द्रः सूर्यो गुरु र्भौमो बुधो मन्दः कविस्तमः ।

दशानयनम्

स्वर्क्षं पिनाकिनयनैः संयोज्यं वसुभिर्हरेत् ।
शेषेण योगिनी ज्ञेया शून्यपातेन सङ्कटा ॥

योगिनीदशाचक्रम्

दशा	मङ्गला	पिंगला	धन्या	भ्रामरी	भद्रिका	उल्का	सिद्धा	सङ्कटा
वर्षाणि	१	२	३	४	५	६	७	८
स्वामिनः	चं	सू	वृ.	म.	बु	श.	शु.	रा.

(अर्थ)

आठ योगिनी होती हैं उनके नाम यह हैं.—मङ्गला. पिङ्गला, धन्या, भ्रामरी, भद्रिका, उल्का, सिद्धा. तथा संकटा । मङ्गला आदि दशाओं में एक एक वर्ष क्रम से दशा बढ़ती जाती है जैसे मङ्गला का एक वर्ष, पिङ्गला के २ वर्ष, धन्या के ३ वर्ष इत्यादि । मङ्गला आदि दशाओं के स्वामी क्रम से यह हैं:—चन्द्रमा, सूर्य्य, बृहस्पति, मङ्गल, बुध, शनि, शुक्र, राहु ।

अपने नक्षत्र में ३ जोड़े, उसमें ८ का भाग देने से जो लब्धि मिले उसको छोड़ दे, जो शेष रहे वही पहिली दशा जाननी चाहिये । जैसे

एक शेष रहे तो मङ्गला, २ शेष रहे तो पिंगला इत्यादि। परन्तु जब शून्य शेष रहे तो पहिली दशा सङ्कटा की होती है॥ ऊपर लिखा हुआ चक्र देखने से पूर्वोक्त बाते अच्छे प्रकार समझ में आजावेंगी॥

योगिनी दशाया मन्तदशा चक्राणि—

मङ्गला		पिङ्गला		धन्या		भ्रामरी	
दशा	दिनानि	दशा	दिनानि	दशा	दिनानि	दशा	दिनानि
मं.	१०	पिं	४०	ध	६०	भ्रा.	१६०
पि.	२०	[illegible]	६०	भ्रा.	१२०	भ.	२००
ध.	३०	भ्रा.	८०	भ	१५०	उ	२४०
भ्रा.	४०	भ	१००	उ.	१८०	सि.	२८०
भ.	५०	उ.	१२०	सि.	२१०	सं.	३२०
उ.	६०	सि.	१४०	स	२४०	म.	४०
सि.	७०	स.	१६०	म	३०	पि.	८०
स.	८०	मं.	२०	पि	६०	ध.	१२०

भद्रिका		उल्का		सिद्धा		संकटा	
दशा	दिनादि	दशा	दिनानि	दशा	दिनानि	दशा	दिनानि
भ.	२५०	उ.	३६०	सि.	४९०	सं.	६४०
उ.	३००	सि.	४२०	स	५६०	म.	८०
सि.	३५०	सं.	४८०	मं.	७०	पि	१६०
सं.	४००	म.	६०	पि.	१४०	भ.	२४०
म.	५०	पि.	१२०	ध	२१०	भ्रा.	३२०
पि.	१००	ध.	१८०	भ्रा.	२८०	भ	४००
ध.	१५०	भ्रा.	२४०	भ.	३५०	उ.	४८०
भ्रा.	२००	भ.	३०	उ.	४२०	सि	५६०

(२) दशा फल प्रकरणम्

योगिनी दशा फलानि.

मङ्गला मङ्गलानन्दयशोद्रविणदायिनी ।
पिङ्गला तनुते व्याधिं मनसो दुःखसम्भ्रमौ ॥
धान्या धनसुहृद्बन्धु स्त्रसम्पत्तिनीकरी ।
भ्रामरी जन्मभूमिघ्नी भ्रामयेत्सर्वतोदिशम् ॥
भद्रिका सुखसम्पत्ति विलासवशदायिनी ।
उल्का राज्यधनारोग्यहारिणी दुःखदायिनी ॥
सिद्धा साधयते कार्यं नृणां चै सुखदा भवेत् ।
सङ्कटा सङ्कटव्याधिमरणक्लेशकारिणी ॥

(अर्थ)

मंगला दशा में मंगल आनन्द, यश, तथा धन मिलते हैं ॥

पिंगला दशा मे व्याधि, मन में दुःख तथा अस्थिरत्व होते हैं ॥

धान्या दशा में धन, मित्र, बान्धव, तथा स्त्रियों का लाभ होता है ॥

भ्रामरी दशा में जन्म भूमिका हरण होता है तथा वह दशा चारों ओर घुमाती है ॥

भद्रिका दशा में सुख, सम्पत्ति तथा विलास मिलते हैं ॥

उल्का दशा राज्य (रोजगार), धन, आरोग्य को हरने वाली तथा दुःख देने वाली होती है ॥

सिद्धा दशा मनुष्यों का कार्य्य सिद्ध करती है तथा सुख देने वाली होती है ॥

सङ्कटा दशा संकट, व्याधि, मृत्यु, तथा क्लेश करने वाली होती है ॥

महादशान्तर्दशा फलानि (सामान्यतः)

देशान्तरं च निजबन्धुवियोगदुःख
मुद्वेगरोगभयचौरभवाच पीडा ।
पूर्वस्थितस्य निखि[illegible] धनस्य नाशो
भानोर्दशा गमनकालइमे भवन्ति ॥१॥
हेमादिभूतिवरवाहनयानलाभाः
शत्रौ प्रतापबलवृद्धिपरम्परा च ।
इष्टान्नदानशयनासनभोजनानि
नूनं सदा शशि दशागमने भवन्ति ॥२॥
भूपालचौरभयवह्निकृता च पीडा
सर्वाङ्गरोगभयदुःखसुदुःखता च ।
चिन्ता ज्वरश्च बहुकष्टदरिद्रता च
नूनं सदा कुज दशागमने भवन्ति ॥३॥
दीनो नरो भवति बुद्धिविहीनचिन्ता
सर्वाङ्गरोगभयदुःखसुदुःखता च ।
पापानि बंधबहुकष्टदरिद्रयुक्तो
राहोर्दशागमनकालइमे भवन्ति ॥४॥
राज्याधिकारपरिवर्तितचित्तवृत्ति
र्धर्माधिकारपरिपालनसिद्धिवृद्धिः ।
सद्विग्रहोऽपि धनधान्यसमृद्धता च
नूनं सदा गुरुदशागमने भवन्ति ॥५॥
मिथ्यापवादवधबन्धनमर्थहानि
र्मित्रे च बन्धुवचनेषु च युद्धबुद्धिः ।
सिद्धं च कार्यमपि यत्र सदा विनष्टं
नूनं सदा शनि दशागमने भवन्ति ॥६॥

दिव्याङ्गनामदनसङ्गमकेलिसौख्यं
नानाविलासमभिरागमनोभिरामम् ।
हेमादिरत्न विभवागम ईशभक्ति
नूनं सदा बुधदशागमने नराणाम् ॥७॥
भार्यावियोगजनितं च शरीर दुःखं
द्रव्यस्य हानि रविकग्रपरम्परा च ।
रोगाश्च बन्धुकलहश्च विदेशिता च
केतोर्दशा गमन काल इमे भवन्ति ॥८॥
आरामवृद्धिरपि सर्वशरीरवृद्धिः
श्वेतातपत्रधनधान्यसमाकुलं च ।
आयुः शरीरसुतपौत्रसुखं नराणां
द्रव्यं च भार्गवदशागमने भवन्ति ॥९॥

(अर्थ)

जब सूर्य्य की दशा आती है तो मनुष्य को दूसरे देश में जाना पड़ता है, अपने भाइयो से विरोध होने से दुःख होता है, चित्त में उद्वेग होता है, रोग से भय होता है, चोरी हो जाने से दुःख होता है, पहिले से जो धन इकट्ठा हो उसका नाश हो जाता है ॥१॥

जब चन्द्रमा की दशा आती है तो सुवर्ण आदि सम्पत्ति तथा वाहन का लाभ होता है, प्रताप की वृद्धि होती है तथा शत्रुओं का नाश होता है, अन्नदान, अभीष्ट शयन, तथा अभीष्ट भोजन मिलते हैं ॥२॥

जब मंगल की दशा आती है तो राजा, चोर, अथवा अग्नि से भय होता है, सारे शरीर में रोग हो जाते हैं, बहुत दुःख होता है, मन में चिन्ता रहती है, ज्वर की बीमारी होती है, बहुत प्रकार का कष्ट होता है तथा दरिद्रता हो जाती है ॥३॥

जब राहु की दशा आती है तो मनुष्य दुःखी होता है, उसकी बुद्धि का नाश हो जाता है, चिन्ता से सारे व्याकुल रहता है, शरीर में रोग होता है, भय होता है, कई प्रकार के दुःख तथा पाप होते हैं, बन्धन होता है, मनुष्य बहुत से कष्टों से युक्त होता है तथा दरिद्री हो जाता है ॥४॥

जब बृहस्पति की दशा आती है तो मनुष्य को राज्य में अधिकार मिलता है, धर्म के काम में बृद्धि होती है, शरीर आरोग्य रहता है, तथा धन धान्य की समृद्धि होती है ॥ ५ ॥

जब शनि की दशा आती है तो मनुष्य को झूठे कलङ्क लगते हैं, बध तथा बन्धन होते हैं, द्रव्य की हानि होती है, मित्र तथा मित्र के वचनों में युद्ध करने की बुद्धि हो जाती है, जो काम सिद्ध हो जावे उसका भी नाश हो जाता है ॥ ६ ॥

जब बुध की दशा आती है तो मनुष्य को दिव्य स्त्रियों से सगम होने से सुख मिलता है, अनेक प्रकार के विलास होते हैं, चित्त प्रसन्न रहता है, सुवर्ण, रत्न, आदि विभव की प्राप्ति होती है तथा ईश्वर में भक्ति होती है ॥७॥

जब केतु की दशा आती है तो स्त्री वियोग होने से दुःख होता है, द्रव्य की हानि होती है, कष्ट पर कष्ट होता है, अनेक प्रकार के रोग होते हैं, भाइयों से झगड़ा होता है, तथा परदेश में वास होता है ॥८॥

जब शुक्र की दशा आती है तो उद्यान आदि बनते हैं, शरीर सुखी रहता है, छत्र, धन, धान्य की समृद्धि होती है, पुत्र पौत्रों से सुख मिलता है तथा द्रव्य का लाभ होता है ॥९॥

महादशा फलानि.

सूर्योत्कृष्टदशाकरोति सुतधीप्रज्ञाधिकारोच्छ्रय
ज्ञानार्थागमकीर्तिपौरुषसुखप्राप्तीश्वरानुग्रहान् ।
भानोः पापदशा करोति विफलोद्योगार्थहान्यामया
त्राजक्षोभमहीशकोपजनकारिष्टाग्निबाधोदयान् ॥१॥

चन्द्रोत्कृष्टदशा करोति जननीश्रेयस्तडागादिकं
क्षेत्रारामगृहासनद्विजवरश्रीशोभनान्दोलिकाम् ।
इन्दोः पापदशान्नहीनकृपणानन्तार्थनाशामय
प्रज्ञाहीनजुगुप्समातृमरणक्षोभार्ति शीतज्वरान् ॥२॥
भौमोत्कृष्टदशा करोति वसुधा प्राप्ति धनस्यागमान्
प्रज्ञास्वच्छमनःपराक्रमदधत्पारिक्षयान्भ्रातृजान् ।
पापो भौम उतार्तिदश्च कलहं चौराग्निबन्धव्रण
मक्षिक्षीणमहीशपीडनरुजः क्षोभक्षतिं दास्यति ॥३॥
राहूत्कृष्टदशा करोति सकलश्रेयोमहद्राज्यकृ
द्धर्मार्थागमपुण्यतीर्थचलनज्ञानप्रभावोच्छ्रयान् ।
राहोः पापदशाहिभीतिविपभी सर्वाङ्गरोगार्तिकृ
च्छस्त्राघातविरोधवृक्षपतनं नारातिपीडोदयान् ॥४॥
जीवोत्कृष्टदशा करोति विपुलग्रामाधिकारात्मज
श्रीसौभाग्यगुणाकराश्रितजनाद्यान्दोलिकावैभवान् ।
जैव्या पापदशा महीश्वरभयाद् व्याधिश्च धैर्यच्युतिं
धान्यानर्थमहीसुतार्तिजनकक्षोभाशनार्तिक्षयान् ॥५॥
मन्दोत्कृष्टदशा करोति विभवप्रज्ञानयज्ञादिक
क्षेत्रग्रामपुरादिनायकबहुव्यापारदक्षोत्सुकान् ।
मन्दः पापविपप्रयोगधनहृद्देहार्तिव्यर्थोदया
त्राजक्रोध विरुद्धकार्यविफलोद्योगाङ्गपीडोदयान् ॥६॥
सौम्योत्कृष्ट दशा करोति वसनानन्दादिधान्योच्छ्रयान्
श्रेय सौख्यगृहस्वबन्धुविजयप्राप्तीष्टवस्त्वागमान् ।
बौधी पापदशा विदेशगमनं क्षोभं स्ववन्धुक्षयं
प्रज्ञाहीनमतिं धनार्तिकलहक्षेत्रार्थनाशापदः ॥७॥

केतूत्कृष्टदशा करोति विजयं क्रूरक्रियार्थागमं
म्लेच्छक्ष्मापतिलब्धभाग्यविभवप्रारंभ शत्रु क्षयान् ।
केतोः पापदशातिकष्टविफलानर्थ क्रियाये।गह
च्छूलास्थिज्वरकम्पनद्विजजन द्वेषातिमूर्खक्रियाम् ॥८॥
शौक्री श्रेष्ठदशा करोति सुखसौभाग्जय होता धन को क्रू।ऽ
ऐश्वर्ययुतधर्मबुद्धिकनका राम जा से धन बढ़ते हैं।
शौक्री पापदशा कलत्रभयकृन्नीचाथ हा।
तिर्यग्जन्तुसमुत्थदोषविपुलस्त्रीवर्गरोगोद्भवान् ॥६॥

(अर्थ)

जब सूर्य्य की अच्छी दशा हो तो पुत्र होता है, अच्छे कामों में बुद्धि लगती है, ऊंचा अधिकार मिलता है, ज्ञान की प्राप्ति होती है, धन का लाभ होता है, यश फैलता है, पौरुषार्थ होता है, सुख मिलता है, तथा ईश्वर का अनुग्रह होता है।

जब सूर्य्य की पाप दशा होती है तो मनुष्य जो कुछ उद्योग करता है वह व्यर्थ हो जाते हैं, द्रव्य की हानि होती है, रोग होते हैं, राजा का कोप होता है, पिता को अरिष्ट होता है तथा अग्नि पीडा होती है ॥१॥

जब चन्द्रमा की श्रेष्ठ दशा आ ... तो मनुष्य को माता से श्रेय होता है, तालाव, खेत, उद्यान, घर आदि बनते हैं, लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

जब चन्द्रमा की खराब दशा आती है तो खाने को भोजन नहीं मिलता है, द्रव्य का नाश होता है, रोग होते हैं, बुद्धि नष्ट हो जाती है, माता की मृत्यु होती है तथा शीत ज्वर होता है ॥२॥

जब मङ्गल की श्रेष्ठ दशा आती है तो भूमि का लाभ होता है, धन की प्राप्ति होती है, चित्त स्वच्छ रहता है, पराक्रम होता है।

जब मङ्गल की पाप दशा आती है तो दुःख होता है, लोगों से

झगडा होता है, चोर भय तथा अग्नि भय होता है, बन्धन होता है अथवा चोट लगती है, आंखों में बीमारी होती है, राजा से दुःख मिलता है, रोग होता है ॥३॥

जब राहु की श्रेष्ठ दशा आती है तो कल्याण होता है, राज्य मिलता है, धर्म तथा [illegible] वृद्धि होती है, पवित्र तीर्थ में यात्रा होती है, ज्ञान तथा प्रभाव [illegible]

जब राहु की पाप दशा आती है तो सर्प भय अथवा विष भय होता है, सारे शरीर में रोग से दुख होता है, शस्त्र से चोट लगती है, लोगों से विरोध होता है, पेड़ से आदमी नीचे गिरता है, शत्रु खड़े होते हैं ॥४॥

जब वृहस्पति की श्रेष्ठ दशा आती है तो तो बहुत से ग्रामों का अधिकार मिलता है, लक्ष्मी, सम्पत्ति तथा गुणों की प्राप्ति होती है, आश्रित जन का उपकार होता है तथा विभव की प्राप्ति होती है।

जब वृहस्पति की पाप दशा हो तो राजा से भय होता है, व्याधि होती है, धैर्य छूट जाता है, भूमि तथा धन का नाश हो जाता है, पुत्र को रोग होता है, अशन में बाधा पडती है ॥५॥

जब शनैश्चर की श्रेष्ठ दशा आती है तो विभव, ज्ञान, यज्ञ आदि होते हैं, क्षेत्र, ग्राम नगर आदि का स्वामित्व मिलता है, अनेक प्रकार के व्यापार होते हैं।

जब शनैश्चर की पाप दशा आती है तो विषका प्रयोग होता है, धन की हानि होती है शरीर में पीडा होती है, उद्यम निष्फल होता है, राजकोप होता है, विपरीत कार्य होता है, तथा शरीर में पीडा होती है ॥६॥

जब बुध की श्रेष्ठ दशा आती है तो वस्त्र आदि मिलते हैं, धान्य का लाभ होता है कल्याण तथा आनन्द होते हैं, अपने घर का सुख मिलता है, अपने बांधवों का विजय होता है, तथा अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति होती है।

जब बुध की पाप दशा आती है तो पर देश में जाना पड़ता है, चित्त चलायमान होता है, अपने बांधवों का नाश होता है, बुद्धि की हानि हो जाती है, धन का नाश होता है, रोग होते हैं, लोगों से झगड़ा होता है, क्षेत्र तथा धन का नाश होता है, तथा आपत्तियां होती हैं ॥७॥

जब केतु की श्रेष्ठ दशा आती है तो विजय होता है, क्रूर कार्य्य करने से धन की प्राप्ति होती है, म्लेच्छ राजा से धन की प्राप्ति होती है, तथा शत्रु का नाश होता है।

जब केतु की पाप दशा आती है तो अति कष्ट मिलता है, जो कार्य्य किया जाय उसमें सफलता नहीं मिलती है, शूल रोग, हड्डियों में ज्वर, कम्प, ब्राह्मणों से द्वेष तथा मूर्खता के कर्म होते हैं ॥८॥

जब शुक्र की श्रेष्ठ दशा आती है तो सुख, सौभाग्य, तथा आठ प्रकार के ऐश्वर्य्य मिलते हैं, धर्म में बुद्धि रहती है, सुवर्ण, उपवन तथा घोड़ों का लाभ होता है, गायन आदि उत्सव होते हैं।

जब शुक्र की पाप दशा आती है तो स्त्री को भय होता है, नीच मनुष्य के द्वारा धन की हानि होती है, नीच जन्तु से दुःख होता है, तथा स्त्री को रोग होते हैं ॥९॥

लग्नेशादि दशा फलम्

लग्नेशस्य दशा बलं बहुधनं वित्तेशितुः पञ्चतां
कष्टं वेति सहोदरालयपतेः पापं फलं प्रायशः।
तुर्य स्वामिन आलयं किल सुताधीशस्य विद्या सुखं
रोगागारपते रराातिजभयं जायापतेः शोकताम् ॥१॥
मृत्युं मृत्युपतेः करोति नियतं धर्मेशितुः सत्क्रियां
वित्तं राजपतेर्नृपाश्रय मथो लाभं हि लाभेशितुः।
रोगं द्रव्यविनाशनं च बहुधा कष्टं व्ययेशस्य वै
पूर्वं रङ्गभृता मुदीरित मिदं तन्वादिभावेशजम् ॥२॥

केन्द्राधीश्वरकोणनायकदशा श्चान्तर्दशा· शोभना·
सामान्याश्च धनत्रिलाभभवना धीशग्रहाणां दशाः ।
षष्ठाष्टव्ययभावनायकदशा· कष्टा भवेयुः सदा
नेतु लग्न मवेक्ष्य तत्तदधिपात्तत्तद्दशाभुक्तिषु ॥३॥
अष्टस्य तुङ्गा दवरोहिसंज्ञा मध्या भवेत्सा सुहृदुच्चभांशे ।
आरोहिणी निम्नपरिच्युतस्य नीचारिभांशेष्वधमा भवेत्सा ॥४॥
भाग्यव्ययाधिपत्वेन रन्ध्रेशो न शुभप्रदः ।
स एव शुभसन्धाता लग्नाधीशोऽपि चेत्स्वयम् ॥५॥

(अर्थ)

जब लग्नेश की दशा आती है तो शरीर में बल होता है, बहुत धन मिलता है, जब धनेश की दशा आती है तो मृत्यु होती है अथवा कष्ट होता है, तृतीयेश की दशा का प्रायः खराब फल होता है, चतुर्थेश की दशा आने से घर बनता है, पचमेश की दशा आने पर विद्या से सुख मिलता है, षष्ठेश की दशा आने पर शत्रु भय होता है, सप्तमेश की दशा आने से शोक होता है ॥१॥

अष्टमेश की दशा आने से मृत्यु होती है, धर्मेश की दशा आने से अच्छे कार्य्य होते हैं, दशमेश की दशा आने से राजा के आश्रय से धन मिलता है, लाभेश की दशा आने से लाभ होता है, व्ययेश की दशा आने से रोग होते हैं, द्रव्य का नाश होता है, तथा बहुत प्रकार का कष्ट मिलता है ॥२॥

केन्द्र अथवा कोण के स्वामी की दशा अथवा अन्तर्दशा अच्छी होती है, २,३,११ स्थानों के स्वामियों की दशा सामान्य अर्थात् न अच्छी न बुरी होती है, ६,८,१२ स्थानों के स्वामियों की दशा सदा कष्ट देने वाली होती है, जातक के लग्न को देख कर पूर्वोक्त स्थानों के स्वामियों की दशा के भोग में यह फल कहने चाहिये ॥३॥

जो ग्रह अपने उच्च स्थान से उतर जावे उसकी दशा को अवरोहिणी कहते हैं, उसका फल मध्यम होता है। जब ग्रह अपने नीच स्थान से छूट जावे तो उसकी दशा को आरोहिणी कहते हैं उसका फल अधम होता है ॥४॥

भाग्य स्थान से बारहवें स्थान के स्वामी होने के कारण अष्टमेश का फल अच्छा नहीं होता है परन्तु यदि वही लग्नेश भी हो तो उसका फल शुभ होता है ॥५॥

दशान्तर्दशा फलानि.

धनाधिपः पापखगो यदिस्या
च्छन्यारभोगीन्द्रदिनेश्वराणाम् ।
अन्तर्दशायां धननाश माहुः
पापान्विते तद्भवने तथैव ॥१॥
पापग्रहाणा मपहारकाले
पापग्रहस्यैव दशान्तराले ।
भुक्त्यर्थमानात्मजसोदराणां
नाशं समायाति शुभैर्न दोषः ॥२॥
वित्ते शुभे शोभनखेचरेशे
तत्पाककाले धनलाभमेति ।
शुभ ग्रहाणा मपहारकाले
तथा भवेदात्मजवाग्विलासः ॥३॥
पापग्रहे विक्रमभावनाथे
पापान्विते पापवियच्चराणाम् ।
अन्तर्दशाया मनलास्त्रचौरै
र्दुःखं समायाति शुभ प्रदेऽपि ॥४॥
कलिप्रकोपानलचौरभूपै
र्दुःखं मनोजाब्य मतीव कष्टम् ।

सोऽन्त्येशपापग्रहदायकाले
शुभेक्षिते तादृश मत्र नास्ति ॥५॥
दुश्चिक्यभावाधिपदायकाले
सौम्येतराणा मपहारकाले ।
नाशं वदेत्त्वत्र सहोदराणां
भवेद्विरोधः सहजै र्विशेषात् ॥६॥
क्षेत्राधिपस्यैव शुभेतरस्य
पापग्रहाणा मपहारकाले ।
स्थानच्युतिं वन्धुविनाश मेति
नीचास्तगाना मपहारकेऽपि ॥७॥
वुद्धिभ्रमं कुत्सितभोजनं च
पापग्रहाणां हि सुतेशकाले ।
अन्तर्दशायां प्रवदेन्नराणां
शुभग्रहश्चेन्न तथा भवेत्तु ॥८॥
राजाग्निचौरैर्व्यसनं व्रणेश
दशाविपाके तु शुभेतराणाम् ।
अन्तर्दशाया मपि कष्टमेति
प्रमेहगुल्मक्षयपित्तरोगैः ॥९॥
दारेशपापग्रहदायकाले
स्त्रियाविरोधो मरणं च वध्वाः ।
विदेशयानं च पुरीषमूत्र
कृच्छ्रं भवेद्भूपतिकोपनं च ॥१०॥
रन्ध्रेशकाले फणिनाथ भौम
शनैश्चराणा मपहारकाले ।
आयुर्यशोवित्तविनाशनं च
दारात्मवन्धुव्रणसहोदराणाम् ॥११॥

स्थान च्युति र्बन्धुविरोधता च
विदेशयानं सहजैर्विरोधः ।
भवेच्छुभेशस्य दशाविपाके
शनैश्चराराहिदिनाधिपानाम् ॥१२॥
कारागृहप्राप्ति रनेकदुःखं
दुःस्वप्नशोकानलदग्धदेहम् ।
कर्मेश्वरस्योत्तरभुक्तिकाले
पापग्रहाणामपकीर्तिमेंति ॥१३॥
दशाविशेषेत्वथ लाभपस्य
भुक्त्यन्तरे द्रव्यविनाशनं च ।
रव्यारभोगीन्द्रशनैश्चराणां
कार्यार्थकृच्छ्रं क्षितिपालकोपात् ॥१४॥
व्ययेशदाये रविसूनुभुक्तौ
दिनेशभूम्यात्मजयोर्विरोधः ।
कलिक्षयौ मानधनक्षयौ च
राहोस्तुभुक्तावरिसपपीडा ॥१५॥
अन्योन्यषष्ठाष्टमदायकाले
स्थानच्युतिर्वा मरणं विशेषात् ॥१६॥
षष्ठाष्टमव्ययेशानां दशा कष्टप्रदायिनी ।
एषां भुक्तिर्हि कष्टा स्यान्मारकस्य दशा यदि ॥१७॥
यस्माद्व्ययगतो यस्तु तद्दशायां धनक्षयः ।
यस्मात्त्रिकोणगाः पापास्तत्रात्मसमनाशनम् ॥१८॥

(अर्थ)

जब धनेश पाप ग्रह हो, उसकी महादशा हो, उसमें शनैश्चर, मङ्गल, राहु, अथवा सूर्य्य की अन्तर्दशा हो तो धनका नाश होता है । इसी प्रकार जब धन स्थान पाप ग्रह से युक्त हो तब भी यही फल होता है ॥१॥

जब पाप ग्रह की महादशा में पाप ग्रह की अन्तर्दशा भी हो तो भोग, धन, आदर, पुत्र, तथा सहोदरों का नाश होता है। यदि शुभ ग्रह हों तो दोष नहीं होता है ॥२॥

जब धन स्थान में शुभ ग्रह हो अथवा धन स्थान का स्वामी शुभ ग्रह हो तो उसकी दशा में धन का लाभ होता है। जब उसमें शुभ ग्रह की अन्तर्दशा हो तो पुत्र तथा वाणी का विलास होता है ॥३॥

जब तृतीय स्थान का स्वामी पाप ग्रह हो, अथवा तृतीय स्थान पाप ग्रह से युक्त हो, उसकी महा दशा में पाप अथवा शुभ ग्रह की अन्तर्दशा हो तो अग्नि, अस्त्र अथवा चोर से दुःख मिलता है ॥४॥

जब तृतीयेश पाप ग्रह हो तो उसकी दशा में कलह तथा क्रोध होते हैं, अग्नि, चोर, अथवा राजा से दुःख मिलता है, चित्त जड हो जाता है, अत्यन्त कष्ट मिलता है। परन्तु जब उस पर शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो पूर्वोक्त दुष्ट फल नहीं होते हैं ॥५॥

जब तृतीयेश की महा दशा हो, पाप ग्रह की अन्तर्दशा हो तो सहोदरों का नाश होता है, विशेषतः भाइयों से वैर होता है ॥६॥

जब चतुर्थेश पाप ग्रह हो, उसकी महा दशा हो, उसमें पाप ग्रह की अन्तर्दशा हो तो मनुष्य स्थानभ्रष्ट होता है तथा उसके बाधवों का नाश होता है। इसी प्रकार से नीच ग्रह तथा अस्तङ्गत ग्रहों की अन्तर्दशा में भी यही फल होता है ॥७॥

जब पचमेश पाप ग्रह हो, उसकी दशा हो, पाप ग्रह की अन्तर्दशा हो तो बुद्धि में भ्रम हो जाता है, खाने को अच्छा भोजन नहीं मिलता है। परन्तु जब शुभ ग्रह हो तो पूर्वोक्त फल नहीं होता है ॥८॥

जब षष्ठेश की महादशा हो, उसमें पाप ग्रह की अन्तर्दशा हो तो राजा, अग्नि तथा चोरों के द्वारा दुःख होता है, प्रमेह, फोडा, क्षय, पित्त रोगों से कष्ट मिलता है ॥९॥

जब सप्तमेश पाप ग्रह हो तो उसकी दशा में स्त्री से विरोध होता है अथवा स्त्री की मृत्यु होती है, परदेश में जाना पड़ता है, मूत्रकृच्छ्र रोग होता है, तथा राजा का कोप होता है ॥१०॥

जब अष्टमेश की महादशा हो, उसमें राहु, मंगल, अथवा शनैश्चर की अन्तर्दशा हो तो आयु, यश, धन, स्त्री, मित्र, बाधव तथा सहोदरों का नाश होता है ॥११॥

जब शुभ ग्रह की दशा हो, उसमें शनैश्चर मंगल, राहु अथवा सूर्य्य की अन्तर्दशा हो तो स्थानहानि होती है, बाधवों से विरोध होता है, पर देश में जाना पड़ता है तथा भाइयों से विरोध होता है ॥१२॥

जब कर्मेश की महादशा हो, उसमें पाप ग्रह की अन्तर्दशा हो तो मनुष्य को कारागृह में जाना पडता है, अनेक प्रकार के दुःख मिलते हैं, दुःस्वप्न देखने में आते हैं, शोकरूपी अग्नि से देह जल जाता है ॥१३॥

जब लाभेश की महादशा हो, उसमें सूर्य्य, मंगल, राहु अथवा शनैश्चर की अन्तर्दशा हो तो द्रव्य का नाश होता है, काम करने में तथा द्रव्य उपार्जन करने में कष्ट होता है तथा राजा का कोप होता है ॥१४॥

जब व्ययेश की महादशा हो, उसमें शनि, सूर्य्य अथवा मंगल की अन्तर्दशा हो तो लोगों से विरोध होता है, कलह तथा क्षय होते हैं, आदर तथा धन का नाश होता है । यदि राहु की अन्तर्दशा हो तो शत्रु अथवा सर्प से भय होता है ॥१५॥

जब दो ऐसे ग्रहों की महादशा तथा अन्तर्दशा हो जो आपस में एक दूसरे से छठे अथवा अष्टम स्थान बैठे हों तो मनुष्य अपने स्थान से भ्रष्ट होता है अथवा उसकी मृत्यु होती है ॥१६॥

जब ६,८,१२ स्थानों के स्वामियों की दशा आवे तो कष्ट मिलता है । जब मारकेश ग्रह की महा दशा हो, पूर्वोक्त स्थानों के स्वामियों की अन्तर्दशा हो तब भी कष्ट मिलता है ॥१७॥

जब दो ऐसे ग्रहों की महादशा तथा अन्तर्दशा हो जो एक दूसरे से बारहवें स्थान में स्थित हों तो धन का नाश होता है। जब दो ऐसे ग्रहों की महादशा तथा अन्तर्दशा हो जो एक दूसरे से त्रिकोण में स्थित पाप ग्रह हों तो उस दशा में एक ऐसे मनुष्य का नाश होता है जो अपनी आत्मा के समान प्रिय हो ॥१८॥

दशातत्त्वम्

राहुयुतस्य दशा रिष्टदा ॥१॥
रन्ध्रगाङ्गेशस्य पाकेऽतिपीडा ॥२॥
दिग्बलोपेतस्य पाके महाप्रतिष्ठा स्वदिग्भागे ॥३॥
अन्योन्यषष्ठाष्टमगयोरन्तरे महाभयम् ॥४॥
पापपाके शुभान्तरे आदौ कष्टं ततः सुखम् ॥५॥
शुभपाके पापान्तरे आदौ सुखं ततो भयम् ॥६॥
क्रूरग्रहदशायां च क्रूरस्यान्तर्दशा यदा ।
शत्रुयोगे भवेन्मृत्यु र्मित्रयोगे च संशयः ॥७॥
मङ्गलस्य दशायां च शने रन्तर्दशा यदा ।
म्रियतेऽत्र चिरञ्जीवी का कथा स्वल्पजीविनाम् ॥८॥
क्रूरराशौ स्थितः पापः षष्ठे वानिधनेऽपिवा ।
सितेन रविणा दृष्टः स्वपाके मृत्युदो ग्रहः ॥९॥
लग्नस्याधिपतेः शत्रु र्लग्नस्यान्तर्दशागमः ।
करोत्यकस्मान्मरणं सत्याचार्येण भाषितम् ॥१०॥
दायेशात् ६।८।१२ स्थानस्थितस्यान्तर्दशा न शुभा ।
अन्यस्थानेषु शुभस्य पापस्य कष्टदा ॥११॥
शस्ता शुभस्य निजभोच्च सुहृद्गृहांशे
कर्माङ्गलाभसहजाम्बुत्रिकोणगस्य ।

नेष्टा खलस्य रिपुनीचखलास्तगस्य
मृत्यन्तशत्रुमदवित्तगमृत्युपस्य ॥१२॥
सुहृद्दशायां सुहृदन्तरस्था
शुभाशुभे वापि शुभस्य शस्ता ।
रिपौ रिपोः पापखगे खलस्य
नेष्टान्यमिश्रा च पुरोक्त मूह्यम् ॥१३॥
यद्द्रव्यं खचरस्य भावखगदृग्योगादि सर्वं फलं
योज्यं वृत्तिकृतिर्बलादिह दशाया नाथयोर्वैरदृक् । (?)
पापः पापदशां विशन्स च विपत्कर्ताथ तद्भङ्गद
स्तत्काले बलवान्खगः शुभसुहृद्दृष्टोष्टसद्वर्गगः ॥१४॥
शुभफलदशायां तादृगेवान्तरात्मा
बहु जनयति पुंसां सौख्यमर्थागमञ्च ।
कथितफलविपाकै स्तर्कयेद्वर्तमानां
परिणमति फलाप्तिः स्वप्नचिन्तास्ववीर्यैः ॥१५॥

(अर्थ)

जब ऐसे ग्रह की दशा हो जो राहु के साथ बैठा हो उस दशा में अरिष्ट होता है ॥१॥

जब लग्नेश अष्टम स्थान में हो तो उसकी दशा में बहुत दुःख होता है ॥२॥

जब ग्रह दिग्बल से युक्त हो तो उसकी दशा में बड़ी प्रतिष्ठा उसी दिशा में मिलती है जिसका वह स्वामी हो ॥३॥

जब दो ग्रह आपस में एक दूसरे से छठे अथवा आठवें स्थान में स्थित हों तो उनके दशान्तर में बड़ा भय होता है ॥४॥

जब पाप ग्रह की महा दशा हो, शुभ ग्रह की अन्तर्दशा हो तो आदि में कष्ट होता है अन्त में सुख होता है ॥५॥

जब शुभ ग्रह की महादशा हो, पाप ग्रह की अन्तर्दशा हो तो आदि में सुख होता है अन्त में भय होता है ॥६॥

जब क्रूर ग्रह की महादशा हो, उसमें क्रूर ग्रह की अन्तर्दशा हो, यदि वे दोनों आपस में शत्रु हों तो मृत्यु होती है, परन्तु जब वे दोनों आपस में मित्र हों तो जीवन मे सन्देह होता है ॥७॥

जब मंगल की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो चिरञ्जीवी मनुष्य की भी मृत्यु हो जाती है, अल्पजीवी मनुष्य का तो क्या कहना है ॥८॥

जब पाप ग्रह क्रूर राशि मे स्थित होकर छठे अथवा आठवें स्थान में हो, शुक्र अथवा सूर्य्य की उस पर दृष्टि हो तो अपनी दशा में मृत्यु करता है ॥९॥

जब लग्नेश की दशा में लग्नेश के शत्रु की अन्तर्दशा हो तो अकस्मात् मृत्यु हो जाती है ऐसा सत्याचार्य्य कहते हैं ॥१०॥

जिस ग्रह की महादशा हो उससे ६,८,१२ स्थानों में स्थित ग्रह की अन्तर्दशा शुभ नहीं होती है। शेष स्थानों मे स्थित शुभ ग्रह की महादशा तथा पाप ग्रह की अन्तर्दशा कष्ट देने वाली होती है ॥११॥

जब कर्म, लग्न, लाभ, पराक्रम, सुख तथा त्रिकोण में स्थित शुभ ग्रह हो और वह स्वगृही हो अथवा उच्च का हो अथवा मित्र के घर का अथवा मित्र के नवांश का हो तो उस ग्रह की दशा शुभ होती है। परन्तु जो ग्रह ८,१२,६,७,२, स्थानों में हो अथवा अष्टमेश हो अथवा शत्रु के घर का पाप ग्रह हो अथवा नीच का हो अथवा अस्तङ्गत हो उसकी दशा शुभ नहीं होती है ॥१२॥

जब मित्र ग्रह की महादशा में मित्र ग्रह की अन्तर्दशा हो अथवा शुभ ग्रह की महादशा में शुभ ग्रह की अन्तर्दशा हो तो वह शुभ होती है। परन्तु जब शत्रु ग्रह की महादशा में शत्रु ग्रह की अन्तर्दशा हो अथवा पाप ग्रह की महादशा में पाप ग्रह की अन्तर्दशा हो तो शुभ नहीं होता है। यदि शुभ

तथा पाप, ग्रह अथवा शत्रु तथा मित्र ग्रहों की दशा तथा अन्तर्दशा मिश्रित हो तो मिश्रित फल होता है ॥१३॥

जिस ग्रह की दशा तथा अन्तर्दशा हो, जिस भाव में वह ग्रह बैठा हो अथवा जिस ग्रह की उस पर दृष्टि हो, उस ग्रह का जैसा द्रव्य हो, जैसा धातु हो, जैसी प्रकृति हो, इन सब बातों को विचार कर उसकी दशा में वैसा ही फल कहना चाहिये।

जब पाप ग्रह की महादशा में पाप ग्रह की अन्तर्दशा हो तो बड़ी विपत्ति होती है। परन्तु उस समय में कोई बलवान् शुभ ग्रह मित्र के घर में बैठा हो अथवा मित्र ग्रह उसको देखे तो पूर्वोक्त विपत्ति का नाश हो जाता है ॥१४॥

जब शुभ ग्रह की दशा हो तो अन्तरात्मा प्रसन्न रहता है, मनुष्यों को नाना प्रकार के सुख मिलते हैं तथा द्रव्य की प्राप्ति होती है। एवं अशुभ दशा में आपत्ति होती है। पूर्वोक्त सुख तथा दुःख का तथा स्वप्न आदि का विचार करके दशा का फल कहना चाहिये ॥१५॥

अन्तर्दशा फलानि.

रवेरन्तरे देवपूज्यो यदैव तथा चन्द्रभौमौ शुभाः स्युस्तथैव।
रिपोर्भीति मर्थस्य हानिं सदैव प्रकुर्वन्ति चान्ये वियोगं तथैव ॥१॥
रजनिनाथदशान्तरगा यदा रविज राहु महीसुत केतवः।
भवति नैव सुखं दधते ग्रहा विजयलाभसुखानि तथेतरे ॥२॥
दिवाकरश्चाथ निशाकरश्च जीवोऽपि शं भूमिसुतान्तरस्थः।
कुर्वन्ति शेषा बहुकष्टहानिं रिपोर्भयं वित्तविनाशनञ्च ॥३॥
राहो रन्तर्दशायां यदि भवति गुरुर्भार्गवो वा बुधश्च
नित्यं सौख्यं धनाप्तिं वितरति बहुधा राजमानं तथैव।
भौमो राहुश्च केतुर्विधु रथ रविर्मन्दगामी तथैव
सर्वे दुःखं वियोगं मरण मथ भयं द्रव्यहानिं च दद्युः ॥४॥

वाचस्पते रन्तरगो गुरुश्चेद् बुधो रविभूमिसुतस्तथेन्दुः।
कुर्वन्ति सौख्यं धनधान्यवृद्धिं दद्युः सदा दुःख मतः परे ये ॥५॥
शनैश्चरस्यान्तरगो बुधश्च गुरुः कविश्चैव शुभं प्रदद्युः।
शेषास्तु सर्वे बहुदेहपीडां रिपोर्भयं वित्तविनाशनञ्च ॥६॥
चन्द्रात्मजस्यान्तरगोहि भौम इन्दुश्च केतुश्च स सैंहिकेयः।
शुभप्रदा नैव शुभप्रदः शनी रविर्गुरुर्दैत्यगुरुर्बुधश्च ॥७॥
केतो रन्तर्दशायां भवति च शुभदो देवपूज्यः सदैक.
केतुः शुक्रोऽर्कसूनू रविरथ च कुजः सैंहिकेयो बुधश्च।
एते दुःखं च शोकं नृपतिभयमथो द्रव्यहानिं विदेशं
नित्यं कुर्वन्ति चन्द्रो जनयति च सुखं दुःखसंमिश्रितञ्च ॥८॥
यदान्तरे दैत्यगुरो गुरुर्भवेच्छुभं तथा शुक्रबुधार्किभिस्तथा।
अर्थस्य हानिं कलहञ्च रोगं कुर्वन्ति चान्ये नृपतेर्भयं च ॥९॥

(अर्थ)

सूर्य की महादशा में बृहस्पति, चन्द्रमा, मंगल की अन्तर्दशा शुभ होती है। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा में, शत्रुभय, द्रव्य हानि तथा वियोग होते हैं ॥१॥

चन्द्रमा की महादशा में जब शनि, राहु, मङ्गल, केतु की अन्तर्दशा हो तो सुख नहीं मिलता है। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा में विजय, लाभ तथा सुख मिलते हैं ॥२॥

मंगल की महादशा में सूर्य, चन्द्रमा तथा बृहस्पति की अन्तर्दशा शुभ होती है। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा में अनेक प्रकार का कष्ट, हानि, शत्रुभय तथा धननाश होते हैं ॥३॥

राहु की महादशा में जब बृहस्पति, शुक्र अथवा बुध की अन्तर्दशा हो तो नित्य सुख, धन की प्राप्ति तथा राजा से सन्मान मिलते हैं। यदि

मंगल, राहु, केतु, चन्द्रमा, सूर्य अथवा शनैश्चर का अन्तर [illegible] [illegible]दुःख, वियोग, मृत्यु, भय तथा द्रव्यनाश होते हैं ॥४॥

वृहस्पति की महादशा में वृहस्पति, बुध, सूर्य, मंगल अथ[illegible]मा की अन्तर्दशा हो तो सुख मिलता है तथा धन धान्य की समृद्धि होती है। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा में दुःख मिलता है ॥५॥

शनि की महादशा में बुध, वृहस्पति अथवा शुक्र की अन्तर्दशा शुभ होती है। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा में शरीरपीडा, शत्रुभय तथा धननाश होते हैं ॥६॥

बुध की महादशा में मंगल, चन्द्रमा, केतु अथवा राहु की अन्तर्दशा अशुभ होती है। शनि, सूर्य, वृहस्पति, शुक्र अथवा बुध की अन्तर्दशा शुभ होती है ॥७॥

केतु की महादशा में केवल वृहस्पति की अन्तर्दशा सदा शुभ होती है। केतु, शुक्र, शनि, सूर्य, मंगल राहु, बुध की अन्तर्दशा में दुःख, शोक, राज भय, द्रव्य हानि, तथा विदेश गमन होते हैं। चंद्रमा की अन्तर्दशा में सुख दुःख मिश्रित होते हैं ॥८॥

शुक्र की महादशा में वृहस्पति, शुक्र, बुध, शनि की अन्तर्दशा शुभ होती है। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा में धनहानि, कलह, रोग तथा राजभय होते हैं ॥९॥

उच्चादिग्रहस्य दशाफलम्

मित्रातिमित्रे धनपुत्रलाभः
स्वोच्चे स्वभे राज्यपदादि लाभः।
त्रिकोणगे वस्त्रवराङ्गनाप्ति
र्बन्धो वधः स्यात्त्वधिशत्रुपाके ॥

(अर्थ)

जब मित्र अथवा अतिमित्र की दशा हो तो धन तथा पुत्र का लाभ होता है। जब ग्रह अपने उच्च का अथवा अपने घर का हो तो राज्य पद

आदि मि[illegible] हैं। जब ग्रह त्रिकोण में हो तो उसकी दशा में वस्त्र तथा सुन्दर स्त्री की सौख्य होती है। परन्तु जब अधिशत्रु की दशा आती है तो बन्धन तथा वध होते हैं ॥

वलिष्ठपापस्य दशाफलम्

पापस्य हि वलिष्ठस्य दशा मृत्यु प्रयच्छति ॥

(अर्थ)

जब बलवान् पाप ग्रह की दशा हो तो मृत्यु होती है ॥

मरण योगः

रवितनयस्य दशायां क्षितिजस्यान्तर्दशा यदा भवति ।
बहुकालजीविनामपि मरणं निःसंशयं वाच्यम् ॥

(अर्थ)

जब शनैश्चर की महादशा में मंगल की अन्तर्दशा हो तो बहुत काल तक जीवित रहने वाले मनुष्यों की भी मृत्यु निःसन्देह हो जाती है ॥

दशा फल समयः

राशित्रिभागे यतमे ग्रहः स्याद्दशात्रिभागेऽपि फलंतु तस्मिन् ।

(अर्थ)

राशि के तीन भाग १०।१० अंश के करने चाहिये। इन तीन भागों में जिस भाग मे ग्रह स्थित हो उसी भाग में दशा का फल भी देता है ॥

दशारिष्टभङ्गः

भाग्यव्ययाधिपत्वेन रन्ध्रेशोन शुभप्रदः ।
स एव शुभसन्धाता लग्नाधीशोऽपि चेत्स्वयम् ॥
दशायां वलवान्खेटः शुभैर्वा संनिरीक्षितः ।
सौम्याधिमित्रवर्गस्थो रिष्टभङ्गो भवेत्तदा ॥

(अर्थ)

भाग्य स्थान से व्यय स्थान का स्वामी होने के कारण अष्टमेश शुभ फल नहीं देता है, परन्तु यदि वही लग्नेश भी हो तो शुभ फल देता है ॥

दशा में जो बलवान् ग्रह हो, शुभ ग्रहों से दृष्ट हो, [illegible] अथवा अधिमित्र ग्रह के वर्ग में बैठा हो तो अरिष्ट का भङ्ग करता है।

दशा फल ज्ञानार्थं दीप्ताद्य वस्थाः

दीप्तः[1] स्वस्थश्च[2] मुदितः[3] शान्तो[4] हीनो[5]ऽतिदुःखितः[6] ।
विकलश्च[7] खलः[8] कोपी[9] नवधा खेचरो भवेत् ॥१॥
उच्चस्थः खेचरो दीप्तः[1] स्वस्थः[2] स्वे चातिमित्रभे ।
मुदितो[3] मित्रभे शान्तः[4] समभे हीन[5] उच्यते ॥२॥
शत्रुभे दुःखसंयुक्तो[6] विकलः[7] पापसंयुतः ।
खलः[8] पराजितो ज्ञेयः कोपी[9] स्यादर्कसंयुतः ॥३॥

(अर्थ)

ग्रह ९ प्रकार के होते हैं:—

(१) दीप्त, (२) स्वस्थ, (३) मुदित, (४) शान्त, (५) हीन, (६) अति दुःखित, (७) विकल, (८) खल, (९) कोपी ॥१॥

(१) जब ग्रह उच्च का हो तो उसे दीप्त कहते हैं ॥
(२) जब स्वक्षेत्री हो तो स्वस्थ कहलाता है।
(३) जब अतिमित्र के घर का हो तो मुदित कहलाता है।
(४) जब ग्रह मित्र भवन में हो तो शान्त कहलाता है।
(५) जब सम के घर में हो तो हीन कहलाता है।
(६) जब शत्रु के घर में हो तो दुःखित होता है।
(७) जब पाप ग्रह से युक्त हो तो विकल कहलाता है।
(८) जब युद्ध में पराजित हो तो खल कहलाता है।
(९) जब सूर्य्य युक्त हो तो कोपी कहलाता है ॥

दीप्तादिग्रहदशाफलानि.

पाके प्रदीप्तस्य[1] धराधिपत्य मुत्साहशौर्यं धनवाहनं च ।
स्त्रीपुत्रलाभं सुखबन्धुपूजां क्षितीश्वरान्मान मुपैति विद्याम् ॥१॥

स्वस्थस्य[२] खेटस्य दशाविपाके स्वस्थो नृपा ल्लब्धधनादिसौख्यम्
विद्यायशःप्रीतिमहत्त्वतां च दारार्थभूम्यात्मजधर्म मेति ॥१॥
मुदान्वितस्यापि[३] दशाविपाके वस्त्रादिभूगधसुतार्थधैर्यम् ।
पुराणधर्मश्रवणादिगान दानादि नानाम्बर भूषणाप्तिम् ॥३॥
दशाविपाके सुखधैर्यमेति शान्तस्य[४] भूपुत्रकलत्रमानम् ।
विद्याविनोदान्वितधर्मशास्त्रं वह्वर्थ देशाधिपपूज्यतां च ॥४॥
स्थानच्युतिर्बन्धुविरोधता च हीनस्य[५] खेटस्य दशाविपाके ।
जीवत्यसौ कुत्सितहीनवृत्त्या त्यक्तो जनैरोगनिपीडितः स्यात् ॥५॥
दुःखान्वितस्यापि[६] दशाविपाके नानाविधं दुःखमुपैति नित्यम् ।
विदेशगोबन्धुजनैर्विहीनश्चैारादिभूपैर्भयमभ्युपन्न. ॥६॥
वैकल्य[७] खेटस्य दशाविपाके वैकल्यतां याति मनोविकारम् ।
पित्रादिकानां मरणं विशेषात्स्त्री पुत्र यानाम्बर चौरपीडाम् ॥७॥
दशाविपाके कलहं वियोगं खलस्य[८] खेटस्य पितुर्वियोगम् ।
शत्रुं जनानां धनभूमिनाश मुपैति नित्यं स्वजनैश्च निन्द्यः ॥८॥
कोपान्वितस्यापि[९] दशाविपाके पापाः समायान्ति वहुप्रकारैः ।
विद्यायशःस्त्रीधनभूमिनाशं मूत्रादिकृच्छ्रं त्वथनेत्ररोगम् ॥९॥

(अर्थ)

(१) जब दीप्त ग्रह की दशा हो तो मनुष्य भूमि का स्वामी होता है, वह उत्साह, शूरता, धन तथा वाहनों से युक्त होता है, उसको स्त्री तथा पुत्र का लाभ होता है, सुख मिलता है, बान्धव उसकी पूजा करते हैं, राजा से सन्मान पाता है, तथा उसको विद्या की प्राप्ति होती है ॥

(२) जब स्वस्थ ग्रह की दशा आवे तो मनुष्य स्वस्थ चित्त रहता है, उसको राजा से धन आदि की प्राप्ति होती है, तथा सुख भी मिलता है, विद्या तथा यश में प्रीति होती है, बडा अधिकार मिलता है, स्त्री धन, भूमि, पुत्र, तथा धर्म की प्राप्ति होती है ॥

(३) जब मुदित ग्रह की दशा हो तो वस्त्र, पृथ्वी, सुगन्ध वाले पदार्थ, पुत्र, धन, धैर्य्य तथा पुराण सुनने को मिलते हैं, गायन तथा भूषणों की प्राप्ति होती है ॥

(४) जब शान्त ग्रह [illegible] दशा हो तो सु[illegible]था धैर्य मिलते हैं, भूमि, पुत्र तथा स्त्री से सत्कार मिलता है, [illegible] विद्या पढ़ने, धर्मशास्त्र के विचार में मन लगता है, बहुत द्रव्य की प्राप्ति हो[illegible] तथा लोगों में आदर होता है ॥

(५) जब हीन ग्रह की दशा आवे तो मनुष्य स्थान भ्रष्ट होता है, बान्धवों से विरोध होता है, निन्दित तथा हीन वृत्ति से आजीविका करता है, लोग उसका साथ छोड़ देते हैं तथा वह रोगों से पीडित होता है ॥

(६) जब दुःखित ग्रह की दशा आवे तो नित्य अनेक प्रकार के दुःख मिलते हैं, उस मनुष्य को परदेश में जाना पडता है, बान्धव लोग उसको छोड़ देते हैं, चोरी का भय अथवा राजा का भय उसे होता है ॥

(७) जब विकल ग्रह की दशा आवे तो मनुष्य का चित्त विकल हो जाता है अर्थात् अपने ठिकाने नहीं रहता है, पिता आदि की मृत्यु होती है, स्त्री, पुत्र वाहनों को पीडा होती है ॥

(८) जब खल ग्रह की दशा आती है तो लोगों से झगड़ा होता है, पिता से वियोग होता है, लोगों से शत्रुता होती है, धन तथा भूमि का नाश होता है, अपने इष्ट मित्र उसकी नित्य निन्दा करते हैं ॥

(९) जब कोपी ग्रह की दशा आवे तो अनेक प्रकार के दुःख होते हैं, विद्या, यश, स्त्री, धन तथा भूमि का नाश होता है, मूत्र कृच्छ्र तथा नेत्र रोग होते हैं ॥

गोचरादिफलभेदः

यवनो ग्रहचक्रस्य जन्मलग्नस्य नारदः ।
गोचरस्य भृगुर्ब्रूते फलं गर्गो दशादिभिः ॥

(अर्थ)

यवनाचार्य के मत से ग्रहचक्र का फल बलवान् है । नारद के मत से जन्म लग्न का फल बलवान् है । शुक्राचार्य के मत से गोचर का फल बलवान् है । गर्गाचार्य के मत से दशा फल बलवान् है ॥

(३) अष्टकवर्ग प्रकरणम्

अष्टकवर्गरीतिः

राशौ राशौ गोचरे खेचराणां मुक्तं पूर्वैर्यत्फलं जन्मराशेः ।
तन्मर्त्यानामेकमोत्पत्तिकानां भिन्नं भिन्नं दृश्यतेऽवश्यमेव ॥१॥
यस्मिन्राशौ शीतरश्मि-प्रसूतौ संस्थः प्रोक्तो जन्मराशिः स एव ।
एवं लग्नेनान्विताः सप्त खेटास्ते किं न स्युः प्राणिनां जन्मभानि ॥२॥
पुंसामतोऽष्टौ किल राशयः स्युः शुभाशुभान्यत्र फलानि तेभ्यः ।
ततश्च रेखामिलनान्तरालात्स्पष्टं फलं चाष्टकवर्गमुक्तम् ॥३॥
स्थानानि यानि प्रतिपादितानि शुभानि चान्यान्यशुभानि नूनम् ।
तयोर्वियोगादधिकं फलं यत्स्वराशितो यच्छति तद्ग्रहेन्द्रः ॥४॥
भुजङ्ग वेदा नव सागराश्च नवाग्नयः सागर सायकाश्च ।
रसेषवो युग्मशरा नवत्रि तुल्याः क्रमेणाष्टकवर्गलेखा ॥५॥
विलग्ननाथाश्रितराशितोऽत्र भवन्ति रेखाः खलु यत्र यत्र ।
विलग्नतस्तत्र च तत्र राशौ संस्थापनीयाः सुधिया क्रमेण ॥६॥
क्लेशोऽर्थहानिर्व्यसनं समत्व शश्वत्सुखं नित्यधनागमश्च ।
सम्पत्प्रवृद्धि विपुलामलश्रीः प्रत्येकरेखाफलमामनन्ति ॥७॥
इत्येकखेटस्य हि सम्प्रदिष्टा रेखायुतिश्चाखिलखेटरेखाः ।
अष्टद्विसंख्यास्तु समास्ततोऽपि यथाधिकोना सदसत्फलान्ताः ॥८॥

(अर्थ)

प्राचीन आचार्य्यों ने जन्म राशि से प्रत्येक राशि में गोचर के अनुसार जो भिन्न भिन्न फल कहे हैं उसपर यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि जो मनुष्य एक ही राशि में उत्पन्न हों उनका फल पृथक् पृथक् कैसे देखने में आता है ॥१॥

जन्म समय जिस राशि में चन्द्रमा होता है उस राशि को जन्म-राशि कहते हैं। अब प्रश्न यह है कि जैसे ही चन्द्रमा एक ग्रह है वैसे ही लग्न को मिलाकर और भी सात ग्रह हैं, जिसी प्रकार चन्द्रमा से जन्मराशि मानी जाती है उसी प्रकार और ग्रहों की राशि से जन्मराशि क्यों नहीं मानी जानी चाहिये ॥२॥

इसलिए मनुष्य की आठ जन्मराशिया माननी चाहिये और उनके अनुसार शुभ तथा अशुभ फल कहने चाहिये । उन सब आठो राशियों का फल जोड़कर अष्टक वर्ग फल कहलाता है ॥३॥

अष्टक वर्ग में जो शुभ अथवा अशुभ स्थान रक्खे गए हैं उन दोनों को आपस में घटा कर जिसका फल अधिक शेष रहे वही फल ग्रह का अपनी राशि से जानना चाहिये ॥ ४ ॥

अष्टक वर्ग के विन्दुओं की सख्या इस प्रकार से हैः—

सूर्य्य ४८, चन्द्रमा ४९, मङ्गल ३९, बुध ५४, बृहस्पति ५६, शुक्र ५२, शनैश्चर ३९ ॥ ५ ॥

जिस राशि में लग्न का स्वामी वैठा हो उससे विन्दु गिने जाते हैं और भिन्न भिन्न राशियों में क्रम से रक्खे जाते हैं ॥६॥

विन्दुओं का फल इस प्रकार से हैः—यदि एक विन्दु हो तो क्लेश होता है, २ विन्दु हों तो द्रव्य की हानि होती है, ३ विन्दु हों तो दुःख होता है, ४ विन्दु हों तो सम अर्थात् न अच्छा न बुरा होता है, ५ विन्दु हो तो नित्य सुख मिलता है, ६ विन्दु हों तो नित्य धन का आगमन होता है, ७ विन्दु हों तो सम्पत्ति की वृद्धि होती है, ८ विन्दु हों तो प्रशस्त लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ॥७॥

इस प्रकार एक ग्रह के विन्दुओं का फल कहा है। एवं सम्पूर्ण ग्रहों के विन्दुओं का जोड़ करना चाहिये। यदि २८ विन्दु हों तो समफल होता है। २८ से न्यून हों तो अशुभ फल होता है। २८ से जितने अधिक विन्दु हों उतना ही अधिक शुभ फल होता है ॥८॥

अष्टकवर्गस्य सूक्ष्मत्वम्.

अथात्र गोचरे दुष्टस्थानसंस्थितेषु सूर्यचन्द्रादिकेषु यद्यपि व्रतो-
द्वाहौ नेष्टौ तथाप्येतेषु निषिद्धस्थानस्थेषु बहुविधकार्यमनिष्टम्।
तथाप्यष्टवर्गेणादित्यादीनां संशुद्धौ व्रतोद्वाहादिकं कर्तव्यम्।
गोचरशुद्धिस्थूलापेक्षयाष्टकवर्गशुद्धेरेव सूक्ष्मत्वात् ॥१॥
यथोदये चन्द्रमसः प्रकाशो दिगङ्गनानां मुखकैरवस्य।
तथाष्टवर्गग्रहलग्नशुद्धौ कार्यस्य पुंसां भवतीह सिद्धिः ॥२॥
सूर्याष्टवर्गे यःशून्यमासः संवत्सरं प्रति।
विवाहव्रतचूडादि मासेऽस्मिन्वर्जयेत्सदा ॥३॥
कलहो मासदुःखानि शून्यमासे भवन्ति हि ॥४॥

(अर्थ)

गोचर में सूर्य्य आदि ग्रह दुष्ट स्थानों में स्थित हों तो व्रतबन्ध तथा विवाह वर्जित हैं। और भी अनेक प्रकार के काम इन निषिद्ध स्थानों में वर्जित हैं। परन्तु यदि अष्टक वर्ग के अनुसार सूर्य्य आदि की शुद्धि हो तो विवाह आदि करने चाहियें। क्योंकि गोचर का फल स्थूल है, अष्टकवर्ग का फल सूक्ष्म है। कारण यह है कि गोचर में केवल चन्द्रमा से विचार होता है। अष्टक वर्ग में प्रत्येक ग्रह से विचार होता है इसलिये यह सूक्ष्म है ॥१॥

कालिदास कवि ने अपने बनाए हुए "ज्योतिर्विदाभरण" नामक ग्रन्थ में लिखा है कि जिस प्रकार चन्द्रमा के उदय होने से दिशाओं में प्रकाश होता है उसी प्रकार अष्टक वर्ग की शुद्धि होने से कार्य्य की भी सिद्धि होती है ॥२॥

सूर्य्य के अष्टक वर्ग के अनुसार जिस मास में शून्य पड़ा हो उस मास में विवाह आदि काम वर्जित करने चाहिये ॥३॥

जिस महीने में शून्य पडा हो उस महीने में कलह तथा दुःख होते हैं ॥४॥

अष्टकवर्गाङ्काः

स्वादर्कः प्रथमायबन्धुनिधन द्व्याज्ञातपो द्यूनगो
वक्रात्स्वादिव तद्वदेव रविजाच्छुक्रात्स्मरान्त्यारिगः ।
जीवाद्धर्मसुतायशत्रुषु दशन्यायारिगः शीतगो
रेऽव्वेवान्त्यतप सुतेषु च बुधा ल्लग्नात्सवन्छवन्त्यगः ॥१॥

लग्नात्षट्त्रिदशायग सधनधी धर्मेषु चाराच्छशी
स्वात्सास्तादिषु साष्टसप्तसु रवेःषट्त्र्यायधीस्थोयमात् ।
धीत्र्यायाष्टमकण्टकेषु शशिजा ज्जीवाद्व्ययायाष्टग ।
केन्द्रस्थश्च सितात्तु धर्मसुखधीत्र्यायास्पदानङ्गगः ॥२॥

वक्रस्तूपचयेष्विनात्ससतनयेऽव्वाद्याधिकेषूदया
च्चन्द्राद्द्विग्विफलेषु केन्द्र निधन प्राप्त्यर्थगः स्वाच्छुभ ।
धर्मायाष्टमकेन्द्रगोऽर्कतनयाज्ज्ञाच्छट् त्रिधीलाभगः
शुक्राच्छड्व्ययलाभमृत्युषु गुरोः कर्मान्त्यलाभारिषु ॥३॥

द्व्याद्यायाष्टतप सुखेषु भृगुजात्सत्र्यात्मजेष्विन्दुजः
साज्ञास्तेषु यमारयो र्व्ययरिपुप्राप्त्यष्टगो वाक्पतेः ।
धर्मायारिसुतव्ययेषु सवितुः स्वात्साद्यकर्मत्रिगः
षट्स्वायाष्टसुखास्पदेषु हिमगोः साद्येषु लग्नाच्छुभः ॥४॥

दिक्स्वाद्याष्टमदायबन्धुषु कुजात्स्वात्सत्रिकेष्वङ्गिराः
सूर्यात्सत्रिनवेषु धीस्वनवदिग्लाभारिगो भार्गवात् ।
जायायाथ नवात्मजेषु हिमगो र्मन्दात्त्रिषड् धीव्यये
दिग्धीषट्स्वसुखायपूर्वनवगो ज्ञात्सस्मरश्चोदयात् ॥५॥

लग्नादायसुतलाभरन्ध्रनवगा सान्त्यः शशाङ्कात्सितः
स्वात्साज्ञे पुसुखत्रिधीनवदशा छिद्रातिग सूर्यजात् ।
रन्ध्रारिव्ययगो रवेर्नवदश प्राप्त्यष्टधीस्थो गुरो
र्ज्ञाद्वीन्यायनवारिगस्त्रिनवपट् पुत्रायसान्त्य· कुजात् ॥६॥
मन्दः स्वान् त्रिसुतायशत्रुषु शुभः साज्ञान्त्यगो भूमिजात्
केन्द्रायाष्टधनेष्विनादुपचयेष्वाद्ये सुखे चोदयात् ।
धर्मायारिदशान्त्यमृत्युषु बुधाच्चन्द्रात् त्रिषड् लाभगः
षष्ठायान्त्यगतः सितात्सुरगुरोः प्राप्त्यन्तधीशत्रुषु ॥७॥

(अर्थ)

पूर्वोक्त श्लोकों का अर्थ नीचे लिखे हुए चक्रों से स्पष्ट समझने में आ जावेगा ॥ सूर्य अपने स्थान से १,११,४, ८,२,१०,९, ७ स्थानों में शुभ बिन्दु देता है। इन से अन्य स्थानों में अशुभ रेखा देता है। एवं चन्द्रमा इत्यादि ॥ लग्न अपने स्थान से ३।६।१०।११ स्थानो में शुभ विन्दु देता है। जन्म लग्न में सूर्य अपने स्थान से ३।४।६।१०।११।१२ स्थानो में शुभ विन्दु देता है इत्यादि ॥

अष्टकवर्गे शुभाङ्काः

(एतद्भिन्ना अशुभाङ्का इति ज्ञेयम्)

रवेरष्टकवर्गाङ्काः ४८								चन्द्रस्याष्टकवर्गाङ्काः ४९							
सू	च	मं	बु	वृ	शु	श	ल	च	म	बु	वृ	शु	श	ल	सू
१	३	१	३	५	६	१	३	१	२	१	१	३	३	३	३
२	६	२	५	६	७	२	४	३	३	३	४	४	५	६	६
४	१०	४	६	९	१२	४	६	६	५	४	७	५	६	१०	७
७	११	७	९	११		७	१०	७	६	५	८	७	११	११	८
८		८	१०			८	११	१०	९	७	१०	९			[illegible]
९		९	११			९	१२	११	१०	८	११	१०			
१०		१०	१२			१०			११	१०	१२	[illegible]			
११		११				११				११					

भौमस्याष्टकवर्गाङ्काः ३९								[illegible]ङ्काः ५४							
म	बु	वृ	शु	श	ल	सू	च	बु	वृ	शु	श	ल	सू	च	मं
१	३	६	६	१	१	३	३	१	६	१	१	१	५	४	१
२	५	१०	८	४	३	५	६	३	८	२	२	२	६	५	२
४	६	११	११	७	६	६	११	५	११	३	४	४	९	६	४
७	१२	१२	१२	८	१०	१०		६	१२	४	७	६	११	८	७
८				९	११	११		९		५	८	९	१२	१०	८
१०				१०				१०		८	९	११		११	९
११				११				११		९	१०	१२			१०
								१२		११	११				११

गुरोरष्टकवर्गाङ्काः ५६

वृ	शु	श	ल	सू	च	मं	बु
१	२	३	१	१	२	१	१
२	५	५	२	२	५	२	२
३	६	६	४	३	७	४	४
४	९	१२	५	४	९	७	५
७	१०		६	७	११	८	६
८	११		७	८		१०	९
१०			९	९		११	१०
श्रा			१०	१०			११
			११	११			

शुक्रस्याष्टकवर्गाङ्काः ५२

शु	श	ल	सू	चं	म	बु	वृ
१	३	१	८	१	३	३	५
२	४	२	११	२	५	५	८
३	५	३	१२	३	६	६	९
४	८	४		४	९	९	१०
५	९	५		५	११	११	११
८	१०	८		८	१२		
९	११	९		९			
१०		११		११			
११				१२			

शुभ बिन्दु ..
इत्यादि॥ लग्न अपने स्थ

ा लग्न में सूर्य अपने स्थान म ...
...त्यादि॥

श	ल	सू	च	मं	बु	वृ	शु
३	१	१	३	३	६	५	६
५	३	२	६	५	८	६	११
६	४	४	११	६	९	११	१२
११	६	७		१०	१०	१२	
	९	८		११	११		
	१०	१०		१२	१२		
	११	११					

लग्नस्याष्टकवर्गाङ्काः ४९

ल	सू	च	मं	बु	वृ	शु	श
३	३	३	१	१	१	१	१
६	४	६	३	२	२	२	३
१०	६	१०	६	४	४	३	४
११	१०	११	१०	६	५	४	६
	११		११	८	६	५	१०
	१२			१०	७	८	११
				११	९	९	
					१०	११	
					११		

अष्टकवर्गोदाहरणम्

लग्नसहिताः सर्व एव ग्रहाअष्टभवन्ति। तेभ्य.सकाशादेकैकस्य चारवशाद्राशौ विचरतः शुभाशुभफल मष्टकवर्गं निरूप्यते। यत्र राशौ जन्मसमये पुरुषस्यादित्यः स्थित. सएव तस्य स्वस्थान मुच्यते। एव मन्येषामपि ग्रहाणां ज्ञेयम्। योयत्र व्यवस्थितः सएव तस्य स्थानम्। शुभस्थानानि विन्दूपलक्षितानि कार्याणि।

यान्यशुभानि रेखोपलक्षितानि। तत इष्टानिष्टयोर्विशेष मन्तरं कृत्वावशिष्टस्य फलस्य पक्तिरिति। यत्र विन्द्वष्टकंजातं तत्र शुभफलं सम्पूर्णम्। यत्र च षड्विन्दवस्तत्र पादोनम्। यत्र च विन्दुचतुष्टयं तत्राधंफलम्। यत्र द्वौविन्दू तत्र पाद फलम्। अशुभफलस्यैवं रेखाभि. कल्पना कार्या।
अङ्गारकस्याष्टकवर्ग उदाह्रियते

उदाहरणार्थ कुण्डली.
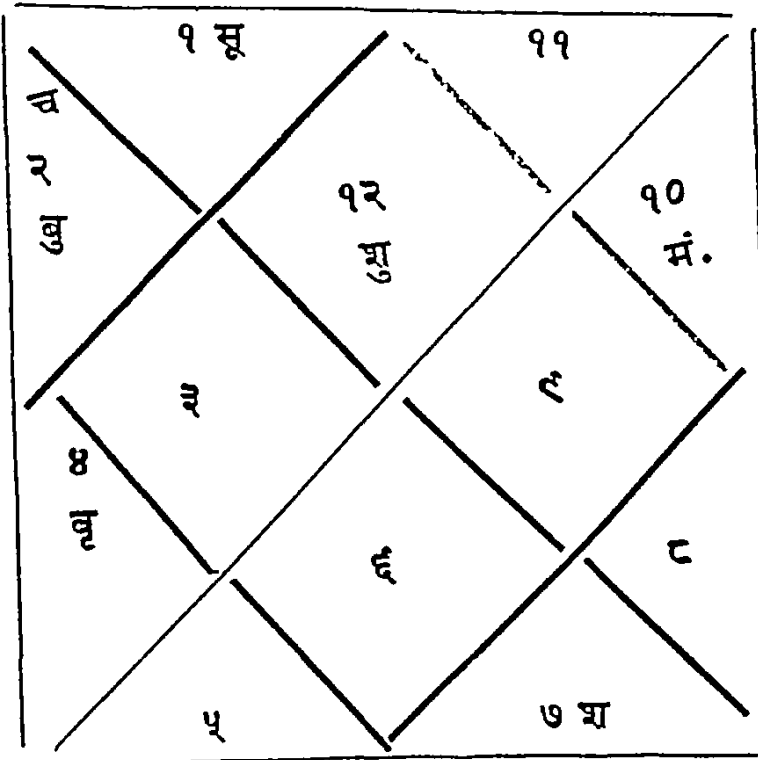
विन्दुरेखान्यासः
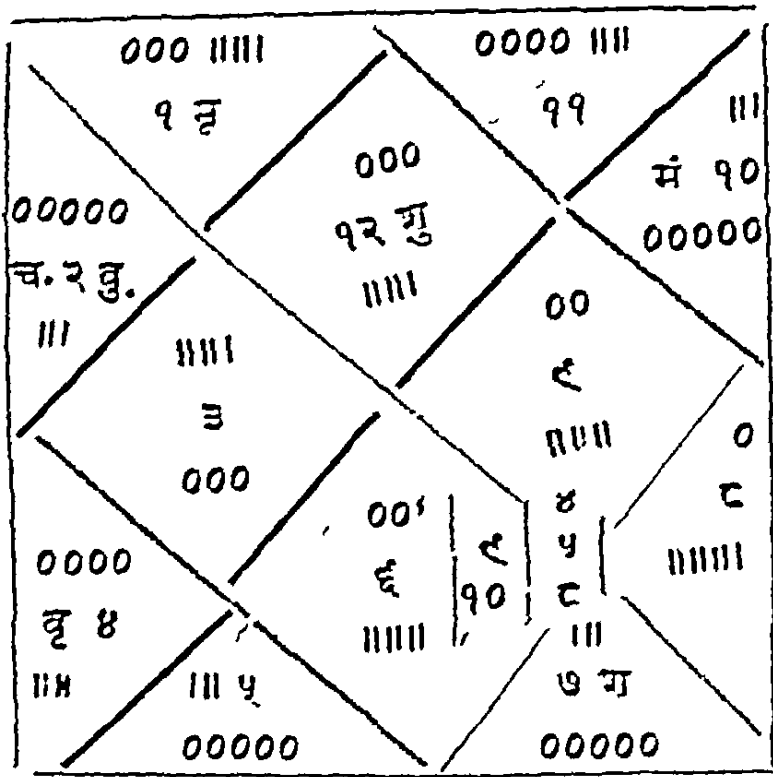
तत्र मेषे रेखापञ्चकं विन्दुत्रयञ्च जातम् । रेखात्रयं विन्दुत्रयं चापास्य द्वेरेखे जाते । तस्मादेवंविधयोगे जातस्य सदैव चारवशान्मेषस्थोऽङ्गारकोऽष्टभागद्वयेनाशुभः । तुलास्थो भौमः सदैव शुभ इत्यादि । एवं शुभाशुभान्यैकीकृत्याऽष्टौ फलानि भवन्ति । तेषां संशोधनं कृत्वा यदवशिष्यते तदादेश्यम् । यत्र रेखाचतुष्टयं विन्दुचतुष्टयञ्च भवति तत्र समं मध्यस्थो ग्रहो भवति । यत्र रेखाष्टकं तत्रातीवाशुभः । यत्र विन्द्वष्टकं तत्रातीव शुभः । एवं जन्मकालाक्रान्तराशिवशेन सर्वग्रहाणामष्टकवर्गः कार्यः ॥

एवं गुरोः सूर्यस्य च चार वशात्तत्र तत्र राशौ स्थितत्वात् शुभाशुभफलं ज्ञेयम् । गुरोर्वर्षविन्दवः सूर्यान्मासविन्दवः ।

गुर्वष्टकाद्वर्षविचारः सूर्याष्टकान्मासविचारश्चन्द्राष्टकाद्दिन दशाविचारः ।

खेटस्तस्य च [illegible] पूर्णं शुभं [illegible]
स्त्वन्दोर्वृद्धि [illegible] ज्ञेयं फल वि[illegible] [illegible]हिये। जहां ८ विन्[illegible] चस्त्र सुहृद्
भस्वत्रिकोणेस्तियः [illegible]ता स्त्रिखरिपु[illegible]ल में जो ग्रह [illegible]
दुष्टंमध्य फलं वि[illegible]थारिषु [illegible]ाना चाहिये। [illegible] निष्टमप्युत्कटं
शस्तं स्वल्पतरं खगस्[illegible] [illegible]यें भी जिस [illegible]ग्रतः ॥
[illegible]ति, ७ पी[illegible] ते हैं। ष्टहस्य[illegible]

सूर्य्य आदि ७ ग्रह [illegible] [illegible]र्ष का विचा[illegible] ८ हो जाते हैं। उनमें से भिन्न भिन्न राशि में जा[illegible] [illegible]ुभ अथवा अशुभ फल होता है उसका विचार अष्टक वर्ग में किया जाता है। मनुष्य के जन्म समय जिस राशि में सूर्य्य स्थित हो वही सूर्य्य का अपना स्थान कहलाता है। इसी प्रकार और ग्रहों का भी स्थान जानना चाहिये। जो ग्रह जहां पर स्थित हो वही उसका स्थान जानना चाहिये। जो शुभ स्थान हों उनमें विन्दु रखने चाहियें। जो अशुभ स्थान हों उनमें रेखा रखनी चाहियें। उन दोनों को आपस में घटाकर शुभ अथवा अशुभ जो अधिक शेष रहे उससे फल का विचार करना चाहिये। जहा ८ विन्दु हों वहा सम्पूर्ण शुभ फल जानना चाहिये। जहा ६ विन्दु हों वहां शुभ फल चौथाई कम जानना चाहिये। जहां ४ विन्दु हों वहा आधा शुभ फल जानना चाहिये। जहा दो विन्दु हों वहा चौथाई शुभ फल जानना चाहिये। अशुभ फल के स्थानों में रेखा रखनी चाहिये। उदाहरण के निमित्त मङ्गल का अष्टक वर्ग ऊपर लिखा है ॥

इस कुण्डली में मेष राशि में ५ रेखा और ३ विन्दु पड़े हैं। ५ में ३ घटाने से २ रेखा शेष रहीं। इसलिए जो मनुष्य ऐसे योग में उत्पन्न हो उसको मेष का मङ्गल चौथाई अशुभ होगा। तुला में स्थित मङ्गल सदा शुभ होगा इत्यादि ॥ पूर्वोक्त प्रकार से शुभ तथा अशुभों का फल जोड कर ८ फल होते हैं। उनको घटाकर जो शेष रहे वही फल जानना चाहिये। जहां ४ रेखा तथा ४ विन्दु हों वहां समफल जानना चाहिये। जहां ८ रेखा

हों वहां अत्यन्त अशुभ फल जानना चाहिये ... हों वहां अत्यन्त शुभफल जानना चाहिये । जन्मका ... जिस राशि में हो उसके अनुसार सब ग्रहों के अष्टक वर्ग ब...

इसी प्रकार बृहस्पति तथा सूर्य ... राशि में स्थित हों उसके अनुसार शुभ अथवा अशुभ फल है ... से वर्ष विन्दु होते हैं । सूर्य्य से मास विन्दु होते हैं । यदि व... करना हो तो बृहस्पति के अष्टक वर्ग से करना चाहिये । यदि मास का विचार करना हो तो सूर्य्य के अष्टक वर्ग से करना चाहिये । यदि दिन दशा का विचार करना हो तो चन्द्रमा के अष्टक वर्ग से करना चाहिये ॥

लग्न अथवा चन्द्रमा से ३,६,१०, ११ स्थानों में, अथवा अपने घर में, अथवा उच्च मे, अथवा मित्र के घर में अथवा अपने त्रिकोण में, जो ग्रह स्थित हो वह अष्टक वर्ग मे पूर्णफल देता है । परन्तु जो ग्रह अपचय अर्थात् १,२,४,५,७,८,६,१२ स्थानों में स्थित हो अथवा अपने नीच अथवा शत्रु के स्थान में हो तो पूर्ण शुभ फल नहीं देता है ॥

(४) गोचर प्रकरणम्

गोचरफलम्.

तृतीये दशमे षष्ठे सदा सूर्यः शुभावहः ।
प्रथमे दशमे षष्ठे तृतीये सप्तमे शशी ॥१॥
शुक्लपक्षे द्वितीयश्च पञ्चमो नवमः शुभः ।
त्रिषष्ठे दशमे भौमो राहुः केतुः शनिः शुभाः ॥२॥
षष्ठेऽष्टमे द्वितीये च चतुर्थे दशमे बुधः ।
द्वितीये पञ्चमे जीवः सप्तमे नवमे शुभ. ॥३॥
विहाय शुक्रो दशमं षष्ठं च सप्तमं शुभः ।
एकादशे ग्रहा. सर्वे सर्व कार्येषु शोभनाः ॥४॥

ग्रहाणां गोचरं ज्ञेयं फल विज्ञैः शुभाशुभम् ॥
सर्वे लाभगृहस्थिता स्त्रिखरिपुष्वर्को [illegible]र्कौ त्रिषट्
प्राप्तौ त्र्यायखमन्मथारिषु [illegible] खास्तारिवर्ज्यं भृगुः ।
धीधर्मास्तधनेषु [illegible] रिस्वाष्टाम्बुखस्थो बुध·
[illegible] विद्धोन चेत्स्यादृग्रहैः ॥५॥

[illegible] १२ धननाश ॥

३,१०,६ स्[illegible] ग्रह [illegible] शुभ होता है। १,१०,६,३,७ स्थानों [illegible]न्द्रमा शुभ होता है ॥१॥

शुक्र पक्ष मे २,५,६ स्थानों मे भी चन्द्रमा शुभ होता है। ३,६,१० [illegible]नों मे मंगल, राहु, केतु, तथा शनि शुभ होते हैं ॥२॥

६,८,२,४,१० स्थानों में बुध शुभ होता है। २,५,७,६ स्थानों में [illegible]ति शुभ होता है ॥३॥

[illegible] १०,६,७ स्थानों को छोड कर अन्य स्थानों में शुक्र शुभ होता है। ग्यारहवें स्थान में सब ग्रह सब कार्यो में शुभ होते हैं ॥४॥

लाभ स्थान में सब ग्रह शुभ होते हैं, ३,६,१० स्थानों में सूर्य शुभ होता है, ३,६,११ स्थानों में मंगल तथा शनि शुभ होते हैं, ३,११,१०, ७, ६ स्थानों में चन्द्रमा शुभ होता है, १०,७,६ स्थानों को छोड कर शेष स्थानों में शुक्र शुभ होता है। ५,६,७,२ स्थानों में बृहस्पति शुभ होता है, ६,२,८,४,१० स्थानों में बुध शुभ होता है—परन्तु जब अन्य ग्रहों से विद्ध न हो ॥

गोचरे प्रत्येकस्य फलम्

गतिर्भयं श्री र्व्यसनं च दैन्यं शत्रुक्षयो थान मतीव पीडा ।
कान्तिक्षयोऽभीष्ट वरिष्ठसिद्धिर्लाभो व्ययोऽर्कस्य फलं क्रमेण ॥१॥
सदन्न मर्थक्षय मर्थलाभं कुक्षिव्यथां कार्यविघातलाभौ ।
वित्तं रुजं राजभयं सुखं च लाभं च शोकं कुरुते मृगाङ्कः ॥२॥

पुत्र धर्मं धनम्भस्य चन्द्रस्योक्त मसत्फलम् ।
कलाक्षये परिज्ञेयं,कलावृद्धौ तु साधु तत् ॥३॥

भीतिं क्षतिं वित्त मरिप्रवृ ... मर्थप्रणाशं धनमर्थ नाशम् ।
शस्त्रोपघातं च रुजं च रोगं ल ... स्वयं भूतनयः करोति ॥४॥

बन्धं धनं वैरिभयं धनानि पी... ा से वर्ष ।बन्धु लाभम् ।
खेदं सुखं लाभ मथार्थ नाशं ... करना हो तेभसुनु ॥५॥

भीतिं वित्तं पीडनं वैरिवृद्धिं सौख्यं शोकं राजमान च रोगम् ।
सौख्य दैन्यं मानवृद्धिं च पीडां दत्ते जीवो जन्मराशेः सकाशात् ॥६॥

रिपुक्षयं वित्त मतीव सौख्यं वित्तं सुतप्रीति मरातिवृद्धिम् ।
शोकं धनानि वरवस्त्रलाभं पीडां स्वमर्थं च ददाति शुक्रः ॥७॥

भ्रंशं क्लेशं शंच शत्रु प्रवृद्धिं पुत्रासौख्य सौख्यवृद्धिं च दोषम् ।
पीडां सौख्यं निधनत्वं धनानि नानानर्थं भानुसूनुस्तनोति ॥८॥

हानिं नैःस्वं स्वं च वैरं च शोकं वित्तं वाद पीडन चापि पापम् ।
वैरं सौख्यं द्रव्यहानिं प्रकुर्याद्राहुः पुंसां गोचरे केतुरेवम् ॥९॥

(अर्थ ,

गोचर में सूर्य का फल १२ स्थानों में क्रम से यह है —१ गति, २ भय, ३ श्री, ४ दुःख, ५ दैन्य, ६ शत्रु नाश, ७ गमन ८ अति पीड़ा, ९ कान्तिक्षय, १० अभीष्ट सिद्धि, ११ लाभ, १२ व्यय ॥

चन्द्रमा का फल यह है:—१ अच्छा अन्न, २ धन नाश, ३ धन लाभ, ४ कुक्षिव्यथा, ५ कार्य्य में विघ्न, ६ लाभ ७ धन, ८ रोग, ९ राजभय, १० सुख, ११ लाभ, १२ शोक ॥

४,८,१२ स्थानों में स्थित चन्द्रमा का अशुभ फल कहा गया है। यदि क्षीण चन्द्रमा हो तो यह फल होता है। यदि पूर्ण चन्द्रमा हो तो उसका फल पूर्वोक्त स्थानों में भी शुभ होना है ॥

मङ्गल का फल यह है:—१ भय, २ चोट, ३ धन, ४ शत्रु वृद्धि, ५ धननाश, ६ धन, ७ [illegible]नाश, ८ शस्त्र से चोट, ९ रोग, १० रोग, ११ लाभ, १२ [illegible] ३।४।६।८

बुध [illegible] में कोई ग्र[illegible] है:—१ वन्धन, २ धन, ३ शत्रुभय, ४ धन की प्राप्ति, ५ पा[illegible]प्ति, ७ पीडा, ८ धन लाभ, ९ खेद, १० सुख, ११ लाभ, १२ धननाश ॥

बृहस्पति का फल यह है:—१ भय, २ धन, ३ पीड़ा, ४ शत्रु वृद्धि, ५ सुख, ६ शोक, ७ राजमान, ८ रोग, ९ सुख, १० दुःख, ११ मान वृद्धि, १२ पीड़ा ॥

शुक्र का फल यह है.—१ शत्रु नाश, २ धन, ३ अत्यन्त सुख, ४ धन, ५ पुत्र प्रीति, ६ शत्रु वृद्धि, ७ शोक, ८ धन की प्राप्ति, ९ वस्त्र का लाभ, १० पीडा, ११ धन, १२ धन ॥

शनि का फल यह है:—१ स्थान हानि, २ क्लेश. ३ शुभ, ४ शत्रु वृद्धि, ५ पुत्रदुःख, ६ सुखवृद्धि, ७ दोष, ८ पीडा, ९ सुख, १० धनहानि, ११ धन प्राप्ति, १२ अनेक प्रकार के अनर्थ ।

राहु का फल यह है.— १ हानि, २ निर्धनता, ३ धन, ४ वैर, ५ शोक, ६ धन, ७ विवाद, ८ पीड़ा, ९ पाप, १० वैर, ११ सुख, १२ द्रव्य हानि ॥ केतु का फल राहु के समान है ॥

गोचरे बेधप्रकरणम्

सूर्यो रसान्त्ये खयुगेऽग्निनन्दे शिवाक्षयो भौमशनी तमश्च ।
रसाङ्कयो र्लाभशरे गुणान्त्ये चन्द्रोम्बराब्धो गुणनन्दयोश्च ॥१॥
लाभाष्टमे चाद्यशरे रसान्त्ये नगद्वयेज्ञो द्विशरेऽब्धिरामे ।
रसाङ्कयो र्नागविधो खनागे लाभव्यये देवगुरुः शराब्धो ॥२॥
द्व्यन्त्ये नवाशेऽद्रिगुणे शिवाष्टौ शुक्रः कुनागे द्विनगेऽग्निरूपे ।
वेदाम्बरे पञ्चनिधो गजेषौ नन्देशयो र्भानुरसे शिवाग्नौ ॥३॥

क्रमाच्छुभो विद्ध इति ग्रहः स्यात्पितुः सुतस्यात्र न वेध माहुः ।
दुष्टोऽपि खेटो विपरीत वेधाच्छुभो द्विकोणे शुभदः सितोऽब्जः॥४॥
स्वजन्मराशेरिह वेध माहु रन्ये ग्रहाधिष्ठितभमथ नुः सः ।
हिमाद्रि विन्ध्यान्तर एववेधो न सर्व देशे नूतनयः करो ग्रपोक्ति ॥५॥
न ददाति शुभं किञ्चिद् गोचरे वेधसंस्थित,
तस्माद्वेधं विचार्याथ कथ्यते तच्छुभाशुभम् ॥६॥
वामवेधविधानेन शोभनस्त्वशुभोऽपि वै ।
अतस्तान्द्विविधान्वेधान्विचार्याथ वदेत्फलम् ॥७॥
अज्ञात्वा विविधान्वेधान्यो ग्रहज्ञः फलं वदेत् ।
स मृषावचनाभाषी हास्यं याति नरै: सदा ॥८॥

(अर्थ)

(१) सूर्य (जन्म राशि से) ६।१०।३।११ स्थानों मे शुभ होता है यदि १२।४।६।५ स्थानों म शनि को छोड़ कर और कोई ग्रह न हो ।

अर्थात् ६।१२,१०।४, ३।६, ११।५ स्थानों का परस्पर वेध होता है ॥

(पिता पुत्र का वेध नहीं होता है । अर्थात् सू.श.का, च.बु. का,श. सू. का, तथा बु. चं. का वेध नहीं होता है ।)

इनके सिवाय अनुक्तस्थान अशुभ हैं.

इसी का उलटा वामवेध कहलाता है और वह शुभ होता है.

जैसे १२ वां सूर्य अनुक्त है इसलिये अशुभ है.

परन्तु १२ वा सूर्य हो तथा शनि को छोड कर छठा कोई ग्रह हो तो बारहवां सूर्य भी शुभ होता है. एवं और ग्रहों का भी वेध जानना चाहिये.

(२।३।४) म. श. रा. ६-११-३ स्थानों में शुभ होते हैं यदि ६-५-१२ स्थानों में कोई ग्रह न हो ।

(५) चद्रमा १०।३।११।१।६।७ स्थानों में शुभ होता है यदि ४।९।८।५।१२।२ स्थानों में कोई ग्रह न हो ।

(६) बुध २।४।६।८।१०।११ स्थानों में शुभ होता है यदि ५।३।९।१८।१२ स्थानों में कोई ग्रह न हो ।

(७) बृहस्पति ५।२।९।७।११ स्थानों में शुभ होता है यदि ४।१२।१०।३।८ स्थानों में कोई ग्रह न हो ।

(८) शुक्र १।२।३।४।५।८।९।१२।११ स्थानों में शुभ होता है यदि ७।१।१०।९।५।१२।६।३ स्थानों में कोई ग्रह न हो ॥

चन्द्रफलम् (गोचरे)

आद्ये चन्द्रः श्रियं कुर्यान्मनस्तोषं द्वितीयके ।
तृतीये धनसम्पत्तिं चतुर्थे कलहागमम् ॥१॥
पञ्चमे ज्ञानवृद्धिं च षष्ठे सम्पत्तिमुत्तमाम् ।
सप्तमे राजसन्मानं मरणं चाष्टमे तथा ॥२॥
नवमे धर्मलाभं च दशमे मानसेप्सितम् ।
एकादशे सर्वलाभं द्वादशे हानि मेव च ॥३॥

(अर्थ)

चन्द्रमा का पृथक् फलः—(१) लक्ष्मी (२) मन में सन्तोष (३) धन सम्पत्ति (४) कलह (५) ज्ञानवृद्धि (६) उत्तम सम्पत्ति (७) राज सन्मान (८) मृत्यु (९) धर्म लाभ (१०) अभीष्टसिद्धि (११) सब प्रकार का लाभ (१२) हानि ॥

शनि चरण विचारः

जन्माङ्गरुद्रेषु (१।६।११) सुवर्णपादं
द्विपञ्चनन्दे (२।५।९) रजतस्य पादम् ।
त्रिसप्तदिक् (३।७।१०) ताम्रपदं वदन्ति
वेदार्कसाष्टे (४।८।१२) ष्विहलोहपादम् ॥१॥

लोहे धनविनाशः स्यात्सर्वसौख्यं च काञ्चने ।
ताम्रे च समता ज्ञेया सौभाग्यं रजते भवेत् ॥२॥

(अर्थ)

जब शनि १,६,११ स्थानों में हो तो सुवर्ण पाद कहलाता । जब २,५,६ स्थानों में हो तो रजत (चांदी) पाद कहलाता है । जब ३,७,१० स्थानों में हो तो ताम्र पाद कहलाता है । जब ४,८,१२ स्थानों मे हो तो लोह पाद कहलाता है ॥१॥

जब लोहपाद हो तो धन का नाश होता है । जब सुवर्ण पाद हो तो सब प्रकार का सुख मिलता है । जब ताम्र पाद हो तो समता होती है अर्थात् न भला न बुरा । जब चांदी का पाद हो तो अच्छा भाग्य होता है ॥२॥

सार्द्धसप्तवर्षदशायाम्नेः

द्वादशे जन्मगे राशौ द्वितीये च शनैश्चरः ।
सार्द्धानि सप्त वर्षाणि तदा दुःखैर्युतो भवेत् ॥१॥
रिःफरूपधनभेषु भास्करिः
संस्थितो भवति यस्य जन्मभात् ।
लोचनोदरपदेषु संस्थितिः
कथ्यते रविजलोकजैर्जनैः ॥२॥

(अर्थ)

जब अपनी जन्म राशि से १२,१,२ स्थानों में शनैश्चर हो तो साढ़े साती कहलाती है और इसमें मनुष्य को दुःख मिलता है । हर एक राशि में शनैश्चर २½ वर्ष रहता है इसलिये ३ राशियों में ७½ वर्ष रहेगा ॥१॥

जब शनैश्चर बारहवें स्थान में हो तो २½ वरस तक उसकी दृष्टि कहलाती है । जब जन्म राशि में हो तो २½ वर्ष तक उसका भोग कहलाता है । जब द्वितीय स्थान में हो तो उसको लात कहलाती है ॥

गोचरे पापग्रहाणां फलानि.

द्विजन्मनि पञ्चमसप्तमगा
श्चतुरष्टमद्वादशधर्मयुताः ।
धनधान्यप्राणहिरण्यहरा
रविराहुशनैश्चरभूमिसुताः ॥

(अर्थ)

जब मनुष्यों के जन्म लग्न से ५,७,४,८,१२,९ स्थानों में सूर्य्य, राहु, शनैश्चर अथवा मङ्गल हों तो धन, धान्य, प्राण तथा सुवर्ण का नाश होता है ॥

(५) दिनदशाप्रकरणम्

दशा वाहनम्

जन्मभाद्दिनभं यावद् गणनीय मनुक्रमात् ।
नवभिस्तु हरेद्भागं शेषं वाहन मुच्यते ॥१॥
खरोऽश्वोदन्तिमहिषौ जम्बुकः सिंहवायसौ ।
मयूरश्च तथा हंसो वाहनं नवधा मतम् ॥२॥
खरे च कलहं विद्या दश्वे वुद्धि विंदेशके ।
गजे लाभं विजानीयान्महिषे व्याधिजं भयम् ॥३॥
जम्बूके च भयं घोरं सिंहे च विजयं स्मृतम् ।
काके चिन्ता विनिर्दिष्टा मयूरे सुखसम्पदः ॥
हंसे जयं विजानीया यात्राकाले विशेषतः ॥४॥

(अर्थ)

अपने जन्म नक्षत्र से दिन नक्षत्र तक गिनती करे और उसमें ९ का भाग दे जो शेष बचे वही वाहन होता है ॥१॥

वाहन ९ होते हैं:—(१) गधा, (२) घोडा, (३) हाथी, (४) महिष, (५) सियार, (६) सिंह, (७) कौआ, (८) मयूर, (९) हंस ॥२॥

(१) जब गधा वाहन हो तो झगड़ा होता है ।

(२) जब घोड़ा वाहन हो तो परदेश जाने की वुद्धि होती है ॥

(३) जब हाथी वाहन हो तो लाभ होता है ।

(४) जब महिष वाहन हो तो व्याधिभय होता है ॥

(५) जब सियार वाहन हो तो वडा भय होता है ।

(६) जब सिंह वाहन हो तो विजय होता है ॥

(७) जब काक वाहन हो तो चिन्ता होती है ।

(८) जब मयूर वाहन हो तो सुखसम्पत्ति होती है ।

(९) जब हंस वाहन हो तो जय होता है ।

वाहन का विचार विशेषतः यात्रासमय में करना चाहिये ॥

दिनदशा

जन्मतारा चतुर्गुण्या तिथिवारसमन्विता ।
नवभिस्तु हरेद्भागं शेषं दिनदशोच्यते ॥१॥
रविणा शोकसन्तापौ शशाङ्के क्षेमलाभकौ ।
भूमिपुत्रे तु मृत्युः* स्याद् वुधे प्रज्ञाविवर्द्धनम् ॥२॥
गुरौ वित्तं भृगौ सौख्यं शनौ पीडा न संशयः ॥
राहुणा घातपातौ च केतौ मृत्यु* र्दशाफलम् ॥३॥

*मृत्यु शब्दार्थः

व्यथा दुःखं भयं लज्जा रोगः शोकस्तथैव च ।
मरणञ्चापमानञ्च मृत्यु रष्टविधः स्मृतः ॥४॥

(अर्थ)

जन्म नक्षत्र को चौगुना करे, उसमें तिथि तथा वार मिलादे (तिथि शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से गिननी चाहिये), ९ का भाग दे, जो शेष रहे वह दिन दशा होती है ॥१॥

जब सूर्य्य की दशा आवे तो उसका फल शोक तथा सन्ताप है । जब

चन्द्रमा की दशा हो तो कुशल तथा लाभ होते हैं। जब मङ्गल की दशा हो तो मृत्यु होती है (मृत्यु का अर्थ नीचे लिखा है)। जब बुध की दशा हो तो बुद्धि बढ़ती है। जब बृहस्पति की दशा हो तो धन की प्राप्ति होती है। जब शुक्र की दशा हो तो सुख मिलता है। जब शनि की दशा हो तो पीडा होती है। जब राहु की दशा हो तो चोट लगती है या आदमी किसी ऊंचे स्थान से गिरता है। जब केतु की दशा हो तो मृत्यु होती है॥ (मृत्यु शब्द का अर्थ नीचे लिखा है)॥

मृत्यु शब्द का अर्थ

मृत्यु ८ प्रकार की होती है:—व्यथा, दुःख, भय, लज्जा, रोग, शोक, मरण तथा अपमान॥

चन्द्रावस्थाः

षष्ठिघ्नं गतभं भुक्तं घटीयुक्तं युगाहतम्।
शराब्धिहृल्लब्धतोऽर्कं शेषेऽवस्थाः क्रियाद्विधोः॥१॥
षष्ठिघ्नं चन्द्रनक्षत्रं तत्कालघटिकान्वितम्।
वेदघ्न मिषुवेदाप्त मवस्था भानु भाजिताः॥२॥
प्रवास नाशौ मरणं जयश्च हास्यं रतिक्रीडित सुप्त भुक्ताः।
ज्वराख्य कम्प स्थिरता अवस्था मेषात्क्रमान्नामसदृक्फलाः स्युः॥३॥
प्रत्येकराशौ द्वादशावस्थाः। मेषस्थे चन्द्रे प्रथमा प्रवासावस्था।
वृषस्थे चन्द्रे प्रथमा नाशावस्था। इत्यादयः॥४॥
राशौराशौ द्वादशेन्दोरवस्थाःप्रोक्ताःकैश्चित्सूरिभिःशेषिताद्याः।
यात्रोद्वाहाद्येषु कार्येषु नूनं संज्ञातुल्यं तत्फलं चिन्तनीयम्॥५॥
विहाय राशिं चन्द्रस्य भागाद्विघ्नाः शरोद्धृताः।
लब्धं गता अवस्थाः स्युर्भोग्यायाः फल मादिशेत्॥६॥
दिनप्रवेशेऽस्ति विधु रवस्थायां तु यादृशि।
तदवस्थातुल्यमसौ फलं दत्ते न संशयः॥७॥

नाक्षत्रचन्द्रमसो गता युगगुणा बाणाब्धिभिर्भाजिता
यातास्ताः क्रमशो बुधै निंगदिता मेषात्प्रवासादिकाः ॥८॥

(अर्थ)

गत नक्षत्र को ६० से गुणा करे, इसमें वर्तमान नक्षत्र की भुक्त घटी युक्त कर के ४ से गुणा करे, ४५ से भाग देने से जो लब्धि मिले यदि वह १२ से अधिक हो तो उसमें १२ का भाग देने से चन्द्रमा की अवस्था मेष राशि से होती है ॥१॥

चन्द्र नक्षत्र को ६० से गुणा करे, तत्काल की घड़ियों को इसमें युक्त करे, ४ से गुणन करे, ४५ से भाग दे, लब्धि में १२ का भाग देने से चन्द्रमा की अवस्था निकल आती है।

चन्द्रमा की १२ अवस्था मेष से यथाक्रम यह हैं:—

(१) प्रवास, (२) नाश, (३) मरण, (४) जय, (५) हास्य, (६) रति, (७) क्रीडित, (८) सुप्त, (९) भुक्त (१०) ज्वर, (११) कम्प, (१२) स्थिरता॥ इन अवस्थाओं का फल अपने नाम सदृश है। नाश से द्रव्य नाशका अर्थ है, क्रीडित से सुख का अर्थ है, भुक्त से देह पीड़ा का अर्थ है, कम्प से हानि का अर्थ है, स्थिरत्ता से सुख का अर्थ है ॥ ३ ॥

प्रत्येक राशि में १२ अवस्था होती हैं। जब मेष का चन्द्रमा हो तो पहिली अवस्था प्रवास होती है। जब वृष का चन्द्रमा हो तो पहिली अवस्था नाश होती है। एव जब मीन का चन्द्रमा हो तो पहिली अवस्था स्थिरता होती है इत्यादि समझ लेना चाहिये ॥४॥

प्रत्येक राशि में चन्द्रमा की १२ अवस्था होती हैं। यात्रा, विवाह आदि कार्य्यों मे इनका विचार करना चाहिये। नाम के समान इनका फल जानना चाहिये॥

चन्द्रमा की राशि को छोडकर अंशों को दूना करे, ५ से भाग दे, जो

लब्धि मिले वह गत अवस्था हैं, जो शेष रहे वह भोग्य अवस्था है उसके फल का विचार करना चाहिये ॥ ६ ॥

दिन प्रवेश में चन्द्रमा जैसी अवस्था में हो उसी के अनुसार वह उस दिन फल देता है इसमें सन्देह नहीं है ॥ ७ ॥

चन्द्रमा की गत घड़ियों को ४ से गुणा करे, ४५ से भाग दे, जो लब्धि मिले वह मेष राशि से प्रवास आदि गत अवस्था होती हैं ॥ ८ ॥

चन्द्रमा की अवस्था जानने की सरल रीति यह है। एक राशि सवा दो नक्षत्रों की होती है। जैसे 'अश्विनी भरणी कृत्तिका पादो मेषः' अर्थात् अश्विनी, भरणी, कृत्तिका का एक चरण मिल कर मेष राशि होती है। मान लो कि अश्विनी नक्षत्र ६० घड़ी है, भरणी ६० घडी है, कृत्तिका का एक चरण १५ घड़ी है। सब मिल कर ९ चरण हुए तथा १३५ घड़ियां हुई। एक राशि में १२ अवस्थाएं होती हैं। इसलिये १३५ में १२ का भाग देने से ११। लब्धि हुई। अतः ११। घड़ी की एक अवस्था हुई। इस लिये मेष राशि में ११। घडी तक प्रवास अवस्था हुई। २२॥ तक नाश अवस्था हुई। ३३॥। तक मरण अवस्था हुई। ४५ तक जय अवस्था हुई। ५६। तक हास्य अवस्था हुई। (यहा तक अश्विनी नक्षत्र रहा)। तदुपरान्त (अश्विनी शेष तथा भरणी की ७॥ घड़ी तक) रति अवस्था हुई। १८॥। तक क्रीडित, ३० तक सुप्त, ४१। तक भुक्त, ५२॥ तक ज्वर, (भरणी का शेष तथा कृत्तिका ३॥। तक) कम्प, १५ घड़ी तक स्थिर एव एक राशि की १२ अवस्था पूरी हो गई। एवं वृष इत्यादि में जानना चाहिये ॥

(६) फलपाकादिसमयप्रकरणम्

ग्रहाणा बलसमयः

प्राग्रात्रिभागेऽतिवली शशाङ्कः
शुक्रो निशार्धेऽवनिजो दिनान्ते।
प्रातर्बुधो मध्यदिने च सूर्यः
सर्वत्र जीवोऽर्कसुतो दिनान्ते ॥१॥

(अर्थ)

रात्रि के प्रथम भाग में चन्द्रमा, आधी रात में शुक्र, दिन के अन्त में मङ्गल, प्रातःकाल में बुध, दो पहर में सूर्य, सर्व काल में बृहस्पति, तथा दिन के अन्त में शनैश्चर बलवान् होते हैं ॥

ग्रहाणां फलपाकसमयः

राशिप्रवेशे सूर्यारौ मध्ये शुक्रबृहस्पती ।
प्रान्त्येतु शनिशीतांशू फलदः सर्वदा बुधः ॥

(अर्थ)

सूर्य तथा मङ्गल राशि में प्रवेश करने के समय अपना फल दिखलाते हैं। शुक्र तथा बृहस्पति मध्य में फल देते हैं। शनि तथा चन्द्रमा अन्त में फल देते हैं। बुध सर्वदा फल देता है ॥

गन्तव्यराशेः पुरा फलदाः

सूर्यारसौम्यास्फुजितोऽक्षनाग
सप्ताद्रिपक्षान्विधुरग्निनाड़ीः ।
तमोयमेज्यास्त्रिरसाश्विमासान्
गन्तव्यराशेः फलदाः पुरस्तात् ॥

(अर्थ)

सूर्य दूसरी राशि में जाने से ५ दिन पहिले, मंगल ८ दिन पहिले, बुध सात दिन पहिले, शुक्र ७ दिन पहिले, चंद्रमा तीन घडी पहिले, राहु ३ महीने पहिले, शनि ६ महीने पहिले, बृहस्पति २ महीने पहिले फल देते हैं ॥

---

(७) चक्रप्रकरणम्

सुदर्शनचक्रम्.
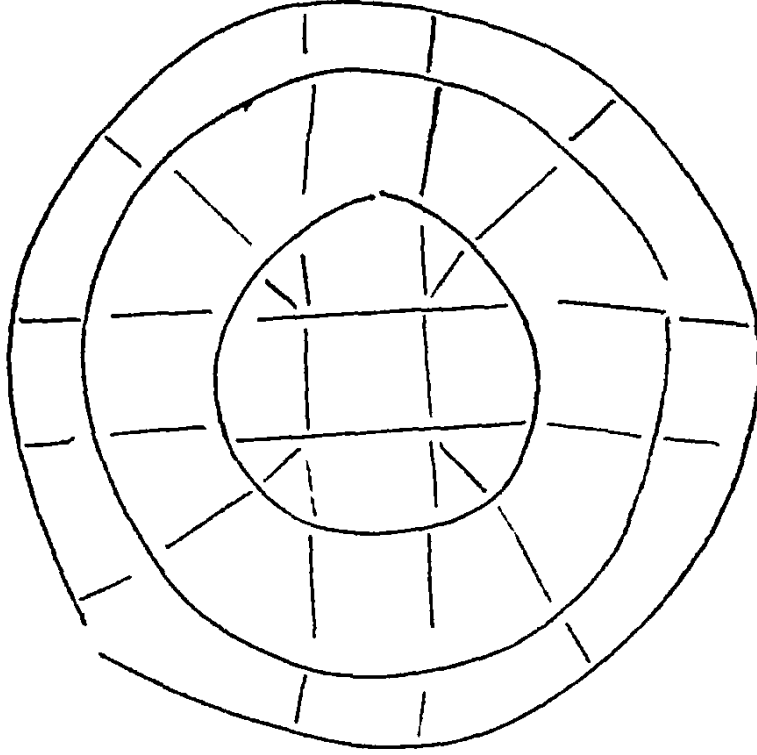
सुदर्शनं द्वादशारं जन्मभेन्द्वर्कराशित. ।
केन्द्रकोणाष्टगो राहुः पापा अन्ये शुभा मुदे ॥१॥
सुदर्शनं द्वादशारं वृत्तत्रयसमन्वितम् ।
पूर्ववृत्ते जन्मलग्नाद्भावाः खेचरसंयुताः ॥२॥
तदूर्ध्ववृत्ते चन्द्राच्च भावाः खेटसमन्विताः ।
तदूर्ध्ववृत्ते सूर्याच्च भावा लेख्याः सखेचराः ॥३॥
वृत्तत्रयेऽपि ये खेटा यत्र भावे व्यवस्थिताः ।
ते तत्र तत्र संलेख्यास्तस्माद्भावान्निरीक्षयेत् ॥४॥
यद्यद्वृत्ते तु यद्भावात्केन्द्रकोणाष्टगस्तमः ।
पापा वा यत्र बहव स्तत्तद्भावविनाशनम् ॥५॥

यत्र भावे सैंहिकेयोऽवश्यं तद्भावहानिदः ।
यस्माद्भावात्केन्द्रकोणाष्टमे सौम्यः शुभप्रदः ।
तदा तद्भाववृद्धिः स्यात् त्रिवृत्तेऽपि शुभग्रहाः ॥६॥
तन्वाद्यं वर्षं मासार्धद्वयं कथ्यमान्प्रवर्तयेत् ।
विरिष्फारि शुभैः पापैस्त्रिषडाये च वै शुभम् ॥७॥

(अर्थ)

सुदर्शनचक्र १२ कोठे का होता है, जन्म लग्न, चन्द्रराशि तथा सूर्य्य राशि से आरम्भ करके ३ वृत्त १२ कोठों के बनाने चाहिये । जब राहु अथवा पाप ग्रह केन्द्र कोण अथवा अष्टम स्थान में हो तो दुःख देते हैं यदि शुभ ग्रह हों तो हर्ष देते हैं ॥ १ ॥

सुदर्शनचक्र १२ कोठों का होता है । उसमें ३ वृत्त होते हैं । पहिले वृत्त में जन्म लग्न से १२ भाव ग्रह सहित लिखने चाहिये ॥२॥

उसके ऊपर दूसरे वृत्त में चन्द्रराशि को लग्न मानकर १२ भाव ग्रह सहित लिखने चाहिये । उसके ऊपर के वृत्त में सूर्य्य राशि को लग्न मानकर ग्रह सहित भाव लिखने चाहिये ॥ ३ ॥

तीनों वृत्तों में जो ग्रह जिस भाव में स्थित हों वे वहां लिखने चाहिये । उससे भावों का विचार करना चाहिये ॥ ४ ॥

जिस जिस वृत्त में जिस भाव से केन्द्र, कोण अथवा अष्टम स्थानों में राहु अथवा बहुत पाप ग्रह हों उस भाव का नाश होता है ॥५॥

जिस भाव में राहु बैठा हो उस भाव की अवश्य हानि करता है । जिस भाव से केन्द्र कोण अथवा अष्टम स्थान में शुभ ग्रह हो उसका शुभ फल होता है । जिस भाव में तीनों वृत्तों में शुभ ग्रह हों उस भाव की वृद्धि होती है ॥ ६ ॥

लग्न आदि स्थानों से वर्ष, मास, पक्ष, दिन, आदि की कल्पना करे । १२,६ स्थानों को छोड़ कर शेष स्थानों में शुभ ग्रह हों, ३,६,११ स्थानों में पाप ग्रह हों तो शुभ फल होता है ॥ ७ ॥

कोटचक्रम्
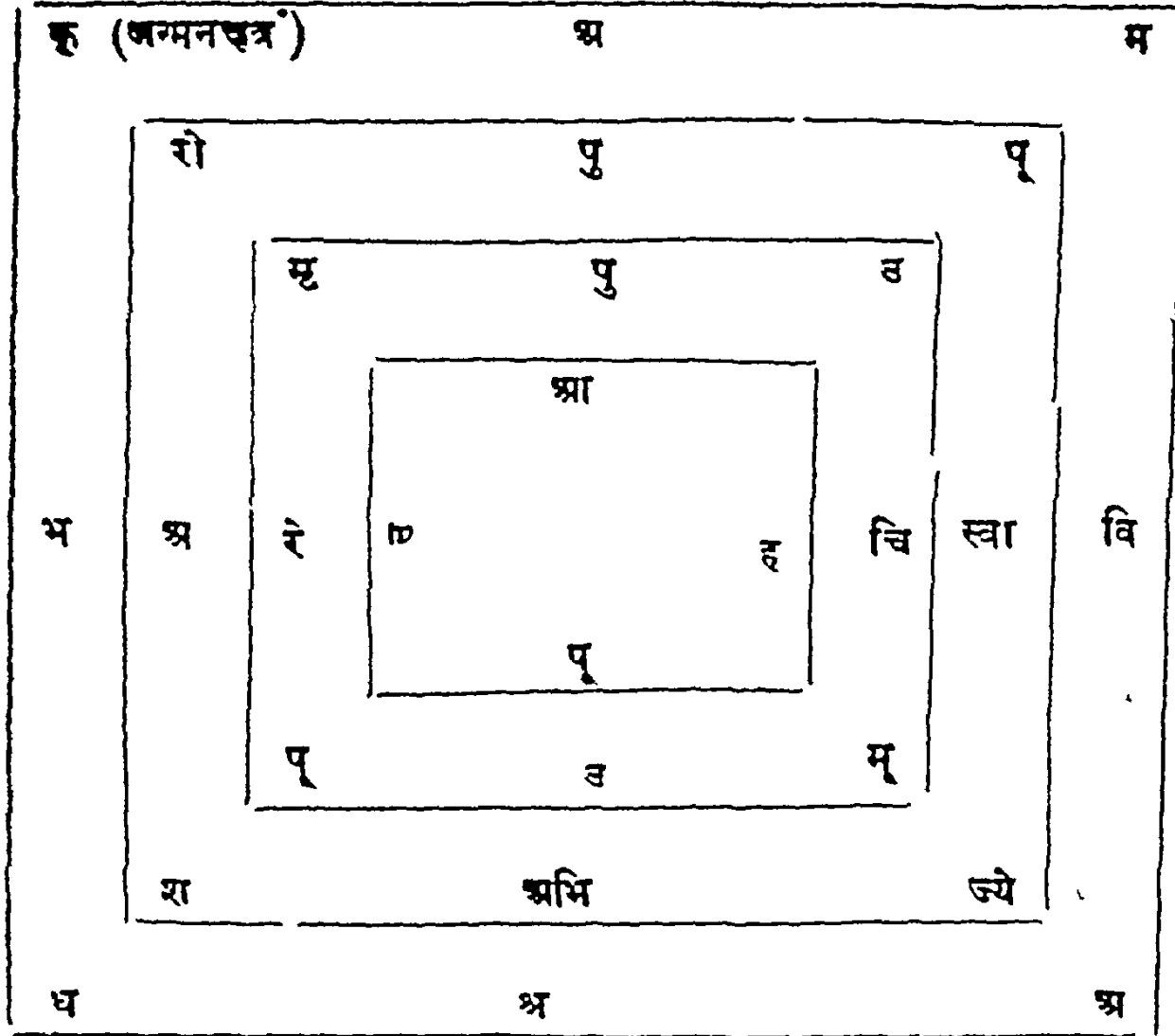
जन्मनक्षत्रतोगणना। यथात्रोदाहरणेजन्मनक्षत्रं कृत्तिका।

तत्र जन्मनक्षत्रस्वामी कोटेशः।

यथात्र जन्म नक्षत्रं कृत्तिकायाः प्रथमः पादः = मेषराशिः = स्वामी भौमः। अतः कोटेशो भौमः॥

वर्गेशः कोटपालः।

वर्गेशा यथा—

अवर्गस्यसूर्यः। कवर्गस्य भौमः। चवर्गस्य शुक्रः।
टवर्गस्यबुधः। तवर्गस्यबृहस्पतिः। पवर्गस्य शनिः।
यशवर्गयोश्चन्द्रः॥

अकचटतपयशवर्गा रविकुजसितसौम्यजीवसौराणाम् ।
चन्द्रस्य निर्दिष्टास्तैः स्युः प्रथमोद्भवैर्वर्णैः ॥
सूर्यारशुक्रज्ञसुरेज्यसौर चन्द्रागवस्त्वादिक वर्गपालाः ॥
अवर्गेशोभानुः कुजभृगुबुधेज्यार्क तनयाः
कचादीना मीशा यरलवमुखक्षान्त मुडुपतिः ॥
यथा मेष राशेरकार नाम्न अवर्गः । तदीशः सूर्यः ।
अतः कोटपालः सूर्य. ।

पञ्चाङ्गे ग्रहस्पष्टं दृष्ट्वा ३।२०।,६।४० इत्यादिकेन को ग्रहः कस्मिन्नक्षत्रेऽस्तीतिज्ञायते । तत्र तत्र ग्रहा लेख्याः ।
पापग्रहा यदान्तःस्था दुर्गभङ्गाय कीर्तिताः ।
मध्येमध्या वहिर्यातुर्भङ्गदाश्च शुभाः शुभाः ॥
कोटेशः कोटमध्यस्थः कोटपालो वहिः स्थितः ।
तदा कोटभयं नास्ति विपरीतस्तु विघ्नदः ॥

अस्य नाम्नैवयुद्धसमयेऽस्य विचारः। साम्प्रतिकाचाराद्रोग-विचारोऽनेनक्रियते ॥

(अर्थ)

जन्म नक्षत्र का स्वामी कोटेश होता है। जैसे जन्मनक्षत्र कृत्तिका है, "अश्विनी भरणी कृत्तिकापादे मेष" इस रीति से कृत्तिका नक्षत्र में मेष राशि हुई। मेष राशिका स्वामी मंगल है। इसलिये कोटेश मगल हुआ ॥

वर्गेश कोटपाल होता है।

वर्गेश इस प्रकार से होते हैं:—अ वर्ग का स्वामी सूर्य्य, क वर्ग का मङ्गल, च वर्ग का शुक्र, ट वर्ग का बुध, त वर्ग का बृहस्पति, प वर्ग का शनि, य श वर्गों का चन्द्रमा ॥

अ, क, च, ट, त, प, य, श, वर्गों के स्वामी क्रम से सूर्य्य, मङ्गल, शुक्र, बुध, बृहस्पति, शनि तथा चन्द्रमा हैं ॥

अ वर्ग आदि वर्गों के स्वामी सूर्य्य, मङ्गल, शुक्र, बुध, बृहस्पति, शनि, चन्द्रमा तथा राहु हैं॥

अ वर्ग का स्वामी सूर्य्य है क, च, आदि वर्गों के स्वामी मङ्गल, शुक्र, बुध, बृहस्पति, शनि हैं।

य, र, ल, व से ह तक का स्वामी चन्द्रमा है॥

जैसे कोई मनुष्य मेष राशि है। उसका नाम अकार से प्रारम्भ होता है। इसलिये उसका अ वर्ग हुआ, अ वर्ग का स्वामी सूर्य्य है। इसलिये कोटपाल सूर्य्य हुआ।

पञ्चाङ्ग में ग्रह स्पष्ट देखकर ३।२०, ६।४० इत्यादि रीति से कौन ग्रह किस नक्षत्र में है यह जाना जा सकता है। इस रीति से जो ग्रह जिस नक्षत्र में हो उसके ऊपर लिखना चाहिये॥

जब पाप ग्रह भीतर हों तो दुर्ग का भङ्ग होता है। मध्य में हो तो मध्यम होते हैं। यदि वे बाहर को आने वाले हो तो दुर्ग का भङ्ग होता है। यदि शुभ ग्रह हों तो शुभ होता है॥

जब कोटेश कोट के मध्य में स्थित हो तथा कोटपाल बाहर स्थित हो तो कोटभय नहीं है। यदि इसके विपरीत हो तो विघ्न होता है॥

इसका विचार विशेषतः युद्ध में करना चाहिये। परन्तु साम्प्रत में रोगी के रोग का विचार भी इससे किया जाता है॥

सूर्यकालानलचक्रम्
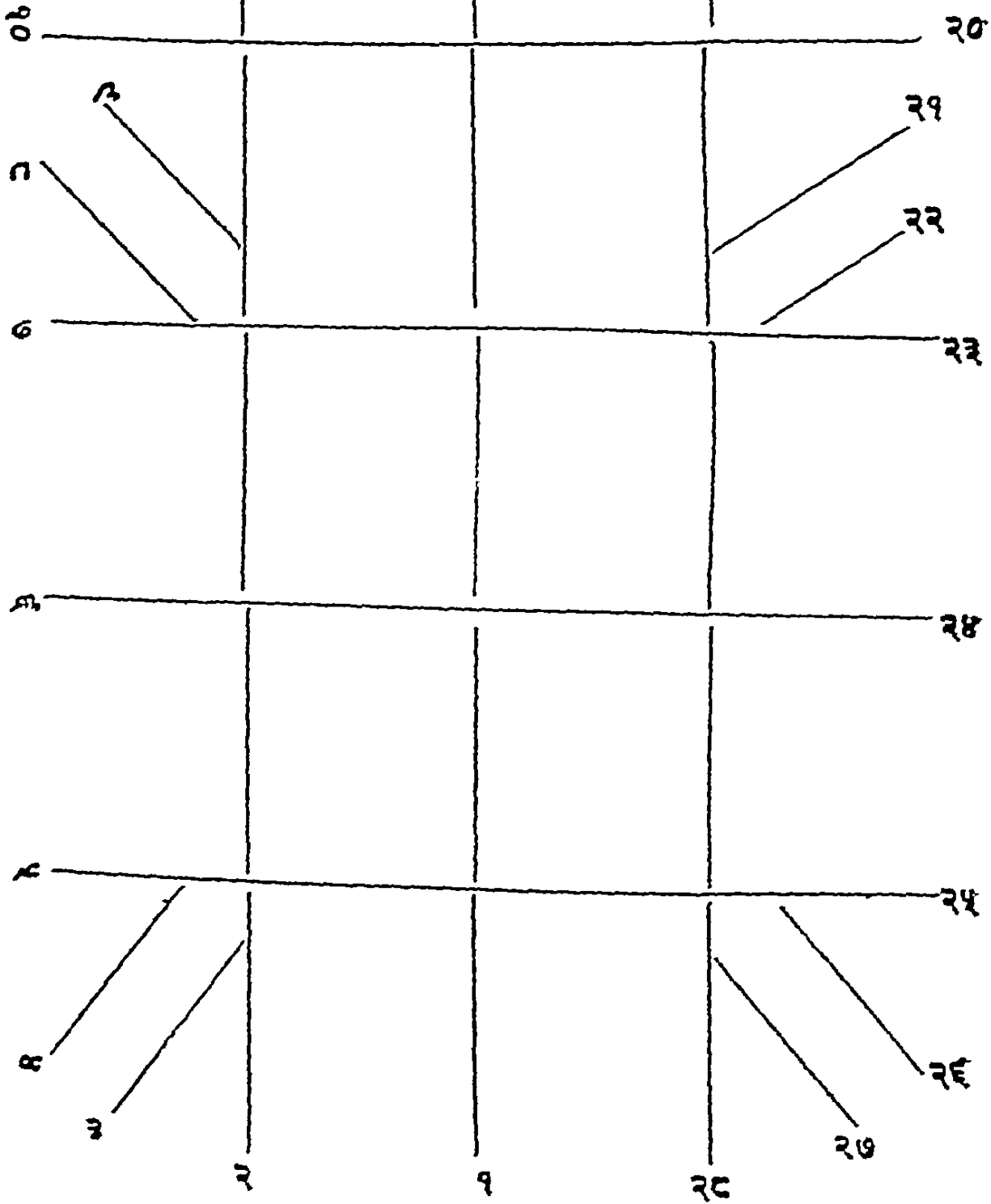
सूर्यकालानलं चक्रं स्वरशास्त्रोदितं हि यत् ।
तदहं विशदं वक्ष्ये चमत्कृतिकरं परम् ॥१॥
त्रिशूलकाग्राः सरलाश्च तिस्रः किलोर्ध्वरेखाः परिकल्पनीयाः।
रेखात्रयं मध्यगतं च तत्र द्वे द्वे च कोणोपरिगे विधेये ॥२॥
त्रिशूलकोणान्तरगान्यरेखा तदग्रयोः शृङ्गयुगं विधेयम् ।
मध्ये त्रिशूलस्य च दण्डमूलात्सव्येन भान्यर्कभतोऽभिजिच्च ॥३॥
स्वनामभं यत्र गतं च तत्र प्रकल्पनीयं सदसत्फलं हि ।
तलस्थऋक्षत्रितये क्रमेण चिन्ता वधश्च प्रतिबन्धकानि ॥४॥
शृङ्गद्वये रुक् च भवेद्धि भङ्गं शूलेषु मृत्युं परिकल्पनीयम् ।
शेषेषु धिष्ण्येषु जयश्च लाभोऽभीष्टार्थसिद्धिर्बहुधा नराणाम् ॥५॥
श्रीसूर्यकालानल चक्रमेतद् गदे च वादे च रणे प्रयाणे ।
प्रयत्नपूर्वं ननु चिन्तनीयं पुरातनानां वचनं प्रमाणम् ॥६॥

(अर्थ)

अब स्वर शास्त्र में कहे हुए सूर्य्यकालानल चक्र का वर्णन किया जाता है जो बड़े चमत्कार का है । त्रिशूल के आगे की ओर ३ सीधी रेखा खींचनी चाहियें । ३ रेखा मध्य में खींचनी चाहियें । दो दो कोण उनपर बनाने चाहियें । त्रिशूल और कोणों के बीच में एक रेखा और खींचनी चाहिये । त्रिशूल के आगे दो शृंग बनाने चाहियें । त्रिशूल के मध्य में दण्ड के मूल से बांई ओर को सूर्य्य नक्षत्र से नक्षत्र लिखने चाहियें । अभिजित् नक्षत्र भी गिनना चाहिये । अपने नाम का नक्षत्र जहां पर पड़े उस स्थान का अच्छा अथवा बुरा फल जैसा हो उसका विचार करना चाहिये । नीचे के ३ नक्षत्रों में चिन्ता, वध, तथा रुकावट होते हैं । दो शृंगों में रोग तथा भङ्ग होते हैं । शूलों में मृत्यु होती है । शेष नक्षत्रों में जय, लाभ तथा अभीष्ट सिद्धि होती है । रोग में, विवाद में, युद्ध में, अथवा यात्रा में इस सूर्य्यकालानल चक्र का यत्न पूर्वक विचार करना चाहिये । प्राचीन मुनियों का वचन इस बात में प्रमाण है ॥

डिम्भ चक्रम्.

डिम्भाख्यचक्रं रविभाच्च भानां त्रयंन्यसेन्मूर्ध्निमुखेत्रयंच ।
द्वे स्कन्धयोर्द्वे भुजयोर्द्वयञ्च पाणिद्वये वक्षसि पञ्चभानि ॥
नाभौचलिङ्गे च तथैकमेकं जान्वोर्भषट्कं परिकल्पनीयम् ॥
पादद्वये भद्वितयं क्रमेण मुनिप्रवर्यैः फलमुक्तमत्र ॥
मस्तके राज्यसौख्यञ्च वक्त्रे मिष्टान्नभोजनम् ।
स्कन्धयोः सुखभोगौच भुजयोर्विभवो भवेत् ॥
हृदये च धनाध्यक्षोजङ्घयोर्दुःखभाजनम् ।
नाभौदरिद्रतामेति गुह्ये च पारदारिकः ॥

(अर्थ)

सूर्य नक्षत्र से जन्म नक्षत्र पर्यन्त गिनती करे। पहिले ३ नक्षत्र सिर पर (फल राज्यसुख), फिर तीन नक्षत्र मुखमें (फल मिष्टान्नभोजन), फिर २ नक्षत्र दोनों कन्धों पर (फल सुखभोग), फिर दो नक्षत्र भुजाओं पर (फल-विभव), फिर दो नक्षत्र हाथों पर, फिर ५ नक्षत्र हृदय में (फल-धनाध्यक्ष), फिर १ नक्षत्र नाभि पर (फल-दरिद्रता), फिर एक नक्षत्र गुह्य में (फल-परस्त्रीगमन), फिर ६ नक्षत्र जानुपर (फल दुःख), फिर दो नक्षत्र पैरों में ॥ (इसी प्रकार और ग्रहों के भी नराकार चक्र बनते हैं) ॥

(८) पारिशिष्ट प्रकरणम्

स्वप्नद्वारा दशाज्ञानम्

लग्नांशगे ऽर्केतनुगेऽपिवास्मिन्दुःस्वप्नमीक्षेत यथार्कबिम्बम् ।
रक्ताम्बरं वह्निमथापिचन्द्रे शुभ्राश्वरत्नाम्बरवज्रपुष्पम् ॥१॥
स्त्रियः सुरूपाश्चकुजेसुवर्णरक्ताम्बरस्रङ्मणिविद्रुमाणि ।
बुधे हयस्वर्गविधर्मवार्ता गुरौरतिं धर्मकथां सुरेक्षाम् ॥२॥
सद्बन्धुसङ्गं च सिते जलानां पारेगतिं देवरतिं विलासम् ।
शना वरण्यादिगतिञ्च नीचैः सङ्गं च राहौ शिखिनीत्थमेव ॥३॥

(अर्थ)

जब सूर्य्य लग्न में अथवा लग्न के नवांश मे हो तो स्वप्न में सूर्य्य बिम्ब, लालवस्त्र तथा अग्नि दिखलाई देती हैं। जब चन्द्रमा हो तो सफेद घोड़ा, लाल वस्त्र, वस्त्र, पुष्प, पुष्प, रूपवती स्त्रिया देखने में आती हैं। जब मङ्गल हो तो सुवर्ण, लाल वस्त्र, लाल माला, मणि, मूंगा देखने में आते हैं। जब बुध हो तो घोडा, स्वर्ग में जाना, धर्म की बाते देखने मे आती हैं। जब बृहस्पति हो तो क्रीडा, धर्म की कथा, देवताओं के दर्शन, अच्छे बान्धवों से सङ्गम देखने में आते हैं। जब शुक्र हो तो नदी आदि का तैरना, देवताओं में प्रीति तथा विलास देखने में आते हैं। जब शनि हो तो वन आदि में जाना तथा नीचों से सङ्ग देखने में आते हैं॥

राहु तथा केतु का फल शनि के समान है॥

धर्मप्रशसा

धर्मेण हन्यते व्याधिर्धर्मेण हन्यते ग्रहः।
धर्मेण हन्यते शत्रुर्यतोधर्मस्ततो जयः॥ १॥
देवब्राह्मणवन्दनाद् गुरुवचःसम्पादनात्प्रत्यहं
साधूना मपि भाषणा च्छ्रुतिरवश्रेयः कथा कारणात्।
होमादध्वरदर्शनाच्छुचिमनो भावाज्जपाद्दानतः
कुर्वन्ति कदाचिदेव पुरुषस्यैवं ग्रहाः पीडनम्॥ २॥
पापिष्ठा ये दुराचारा देवब्राह्मणनिन्दका.।
अपथ्यभोजिनस्तेषामकालमरणं ध्रुवम्॥ ३॥
धर्मिष्ठा ये सदाचारा देवब्राह्मणपूजकाः।
ये पथ्यभोजनरतास्तेसर्वेदीर्घजीविनः॥ ४॥

(अर्थ)

धर्म से व्याधि का नाश होता है, धर्म से ग्रह दब जाता है, धर्म से शत्रु का नाश होता है,जिस ओर धर्म हो उसी ओर जय होती है॥१॥

जो मनुष्य देवता तथा ब्राह्मणों को नमस्कार करते हैं, अपने गुरु का वचन पूरा करते हैं, साधु लोगों से बोल चाल करते हैं, वेद की ध्वनि सुनते हैं, पुराणों की कथाएं सुनते हैं, होम करते हैं, यज्ञ के स्थान का दर्शन करते हैं, स्वच्छ चित्त से जप तथा दान करते हैं, उन मनुष्यों को ग्रह पीड़ित नहीं करते हैं ॥२॥

जो मनुष्य पापी होते हैं, बुरे आचरण वाले होते हैं, देवता तथा ब्राह्मणों की निन्दा करते हैं, पथ्य भोजन नहीं करते, उनकी मृत्यु अकाल में होती है ॥३॥

जो मनुष्य धर्मात्मा होते हैं, अच्छे आचरण वाले होते हैं, देवता तथा ब्राह्मणों की पूजा करते हैं, तथा पथ्य भोजन करते हैं, वे चिरकाल तक जीते हैं ॥४॥

ग्रहाणां जपसंख्या

रवेः सप्तसहस्राणि चन्द्रस्यैकादशैवतु ।
भौमे दशसहस्राणि बुधेचाष्टसहस्रकम् ॥
एकोनविंशतिर्जीवे शुक्र एकादशैवतु ।
त्रयोविंशच्छनौ चैव राहोरष्टादशैवतु ॥
केतौ सप्तसहस्राणि जपसंख्या प्रकीर्तिता ॥
पुनश्च—कलौ संख्या चतुर्गुणा

(अर्थ)

ग्रहों की जपसंख्या इस प्रकार है.—

सूर्य ७,०००

चन्द्रमा ११,०००

मङ्गल १०,०००

बुध ८,०००

बृहस्पति १९,०००

शुक्र ११,०००
शनि २३,०००
राहु १८,०००
केतु ७,०००
कोई आचार्य्य कहते हैं कि कलियुग में चौगुना जप करना चाहिये ॥

ग्रहाणां दानानि

येखेचरागोचरतोऽष्टवर्गाद्दशाक्रमाद्वाप्यशुभाभवन्ति ।
दानादिना ते सुतरां प्रसन्ना स्तेनाधुनादानविधिं प्रवक्ष्ये ॥
माणिक्य गोधूम सवत्सधेनु कौसुम्भवासो गुड हेमताम्रम् ।
आरक्तकं चन्दन मम्बुजं च वदन्ति दानं हि विरोचनाय ॥१॥
सद्वंशपात्रस्थिततण्डुलांश्च कर्पूरमुक्ताफलशुभ्रवस्त्रम् ।
युग्योपयुक्तं वृषभंच रौप्यं चन्द्राय दद्याद्घृतपूर्णकुम्भम् ॥२॥
प्रवालगोधूममसूरिकाश्च वृषोऽरुणश्चापि गुड· सुवर्णम् ।
आरक्तवस्त्रं करवीरपुष्पं ताम्रं च भौमाय वदन्ति दानम् ॥३॥
वृषंच नीलं कलधौतकांस्यं मुद्गाज्यगारुत्मतसर्वपुष्पम् ।
दासींच दन्तं द्विरदस्य नूनं वदन्ति दानं विधुनन्दनाय ॥४॥
शर्कराच रजनी तुरङ्गमः पीतधान्यमपि पीतमम्बरम् ।
पुष्परागलवणं सकाञ्चनं प्रीतये सुरगुरोः प्रदीयते ॥५॥
चित्राम्बरं शुभ्रतुरङ्गमं च धनुश्च वज्रं रजतं सुवर्णम् ।
सतण्डुलानुत्तमगन्धयुक्तान्वदन्तिदानं भृगुनन्दनाय ॥६॥
माषाश्चतैलंविमलेन्द्रनीलं तिला· कुलत्थामहिषीचलोहम् ।
कृष्णाच धेनुः प्रवदन्ति नूनं तुष्ट्यै च दानं रविनन्दनाय ॥७॥
गोमेदरत्नं च तुरङ्गमश्च सुनीलचैलामलकम्बलेच ।
तिलाश्च तैलं खलु लोहमिश्रं स्वर्भानवेदानमिमं वदन्ति ॥८॥
वैडूर्यरत्नं सतिलंच तैलं सुकम्बलश्चापि मदो मृगस्य ।
शस्त्रं च केतोः परितोषहेतोश्छागस्य दानं कथितं मुनीन्द्रैः ॥९॥

(अर्थ)

जो ग्रह गोचर से अथवा अष्टवर्ग से अथवा महादशा वा अन्तर्दशा आदि से अशुभ सूचक हों वे दान आदि से प्रसन्न होते हैं। इस कारण दानविधि लिखी जाती है ॥

सूर्य का दानः—मणि, गेहूं, वत्ससहित धेनु, लाल वस्त्र, गुड, सोना, तावा, लाल चन्दन तथा कमल ॥१॥

चन्द्रमा का दानः—अच्छी बांस की टोकरी में रक्खे हुए चावल, कपूर, मोती, सफेद वस्त्र, जोतने लायक बैल, चादी, तथा घी से भरा हुआ कुम्भ ॥२॥

मगल के दान की सामग्री यह है.—मूगा, गेहू, मसूर, लाल वृषम, गुड, सुवर्ण, लाल वस्त्र, कनेर के फूल तथा तावा ॥३॥

बुध के दान की वस्तु यह हैं·—नीला बैल, सोना, कांसा, मूंग, आज्य, गारुत्मत, सब प्रकार के फूल, दासी, तथा हाथी दात ॥४॥

बृहस्पति के दान में यह चीजें दी जाती हैं:—शक्कर, हल्दी, घोडा, पीलाधान्य, पीलावस्त्र, पुष्पराग, नमक, तथा सोना ॥५॥

शुक्र के दान में निम्न लिखित पदार्थ दिये जाते हैं·—छींट, सफेद घोड़ा, हीरा, चांदी, सोना, तथा उत्तम तण्डुल ॥६॥

शनि के प्रसन्न होने के लिये इन चीजों का दान दिया जाता है:—उर्द, तेल, इन्द्रनील, तिल, कुलत्थ, महिषी, लोह, तथा काली धेनु, ॥७॥

राहु के दान की ये चीजे हैं·—गोमेद, घोडा, नीला वस्त्र, काला कम्वल, तिल, तेल तथा लोहा ॥८॥

केतु के प्रसन्न करने के लिये दान की चीजें यह हैं·—वैडूर्य्य, तिल, तेल, कम्बल, कस्तूरी, शस्त्र तथा छाग (काला बकरा) ॥९॥

सूचना

मणि आदि रत्न, हाथी, घोडा आदि पशु, दासी, हाथी दात,

कस्तूरी इत्यादि दान की सामग्री राजा, महाराजा, सेठ साहूकारों के लिये हैं। साधारण मनुष्यों के लिये अन्न, वस्त्र, धातु आदि हैं। परिमाण कुछ नहीं है। वित्तानुसार देना चाहिये॥

ग्रहाणां दानकालः

बुधस्य घटिकाः पञ्च सौरेर्मध्याह्नमेक्च।
राहुकेत्वोश्च रात्रौ च जीवेन्द्वोश्चैव सन्ध्ययोः॥
उदये भृगुरव्योश्च भौमस्य घटिकाद्वये।
समे काले न कर्तव्यं दातॄणां प्राणनाशनम्॥

(अर्थ)

ग्रहों के दान का समय इस प्रकार हैः—

बुध का दान (प्रातः) ५ घडी दिन बीतने पर करना चाहिये, शनि का दान मध्याह्न में करना चाहिये, राहु तथा केतु का दान रात में करना चाहिये, वृहस्पति तथा चन्द्रमा का दोनों सन्ध्याओं के समय करना चाहिये, सूर्य्य तथा शुक्र का दान सूर्योदय के समय करना चाहिये, मंगल का दान २ घड़ी बीतने पर करना चाहिये। सब ग्रहों का दान एक समय न करना चाहिये। एक समय दान करने से दाता के प्राणों का नाश होता है॥

ग्रहाणां तुष्ट्यै धार्यपदार्थाः

धार्यं तुष्ट्यै विद्रुमं भौमभान्वो
रूप्यं शुक्रेन्द्वो र्हाटकं चेन्दुजस्य।
मुक्ता सूरेर्लोहमर्कात्मजस्य
लाजावर्तः कीर्तितः शेषयोश्च॥
माणिक्यं तरणेः सुजात्य ममलं मुक्ताफलं शीतगो
र्माहेयस्य च विद्रुमं मरकतं सौम्यस्य गारुत्मतम्।
देवेज्यस्य च पुष्परागमसुराचार्यस्य वज्रं शनै
र्नीलं निर्मलमन्ययोश्च गदिते गोमेदवैदूर्यके॥

(अर्थ)

मंगल तथा सूर्य्य को सन्तुष्ट करने के निमित्त मूंगा धारण करना चाहिये, शुक्र तथा चन्द्रमा के निमित्त चांदी, बुध के निमित्त सुवर्ण, बृहस्पति के निमित्त मोती, शनि के निमित्त लोहा, राहु, केतु, के निमित्त लाजावर्त धारण करना चाहिये ॥ (साधारण मनुष्यों के लिये)

सूर्य्य के निमित्त अच्छी जाति का निर्मल मणि, चन्द्रमा के लिये मोती, मंगल के लिये मूंगा, बुध के लिये मरकत मणि (पन्ना), बृहस्पति के लिये गारुत्मत, (पन्ना), शुक्र के लिये पुष्पराज (पुखराज), शनि के लिये हीरा, राहु के निमित्त नीला तथा निर्मल गोमेद (पीलारत्न), केतु के निमित्त वैदूर्य्य (लाजावर्त) धारण करना चाहिये ॥ (द्रव्यपात्रों के लिये)

ग्रहदोषशान्त्यर्थं स्नानौषधयः

सिद्धार्थ लोध्र रजनीद्वय भद्र मुस्ता
चान्द्रं रजः सफलिनी सुरमा विमिश्रैः ।
स्नानं कुरुष्व खगदोषनिवारणाय
सर्वे ग्रहा दिनकरप्रमुखाः शुभाः स्युः ॥

(अर्थ)

सिद्धार्थ (सरसों), लोध्र (लोधा), दोनों प्रकार की हल्दी, भद्र (देवदारु) मुस्ता (नागरमोथा), कपूर, इन्द्रपुष्पी, और सुरमा के जल में मिला कर ग्रहों के दोष निवारण के निमित्त स्नान करना चाहिये, ऐसा करने से सूर्य्य आदि सब ग्रह शुभ फल देने वाले हो जाते हैं ॥

ग्रहाणां दक्षिणाः

धेनुः शङ्खोऽरुणरुचिवृषः काञ्चनं पीतवस्त्रं
श्वेतश्चाश्वः सुरभिरसिता कृष्णलोहं महाजः ।
सूर्यादीनां मुनिभिरुदिता दक्षिणास्तु ग्रहाणां
स्नानैर्दानैर्हवन वलिभिस्तेऽत्र तुष्यन्ति यस्मात् ॥

(अर्थ)

सूर्य्य आदि ग्रहों की दक्षिणा इस प्रकार है:—

धेनु, शङ्ख, लाल वृषभ, सोना, पीला वस्त्र, सफेद घोड़ा, काली रङ्ग की धेनु, लोहा, बड़ा बकरा ॥ स्नान, दान, होम तथा बलि से ग्रह प्रसन्न हो जाते हैं ॥

श्रीदेवीदत्तज्योतिर्वित्संगृहीतानुवादिते सुगमज्योतिषे दशाध्यायस्तृतीयः ॥

सुगमज्योतिषम्

—:०:—

वर्षफलाध्यायश्चतुर्थः

---

(१) ताजिकप्रयोजनप्रकरणम्.

ताजिकप्रयोजनम्.

जातकशास्त्रात्सदसज्ज्ञानं बह्वायाससाध्यम् । जन्मकालीन-स्पष्टग्रहानङ्गीकृत्य दृष्टिपड्वलेष्टकष्टवलानि सर्वग्रहाणामायु-र्वर्षाणि चानीय ततो दशा मन्तर्दशां च निर्णीय जातकशास्त्रो-दित सदसत्फलं वाच्यम् । तत्रापि इष्टकष्टवलाश्रयगुणकानयने सच्छेदगणितस्य दशाप्रवेशे जन्मकालकलियातवत्सरस्येत्यादि गणितस्य च ज्ञानं सिद्धान्तविदामेव न यादृशानां तादृशानाम् । अन्यच्च । एव मत्यायासेनानीतास्वपि दशासु फल विवेकः कर्तु मशक्यः । आयुर्वर्षाणां दश वा पञ्चदश वा विंशति र्वेत्यादीनां बहूनां वर्षाणां सत्त्वात्तत्तद्ग्रहसम्बन्धि शुभाशुभदशाफलं तावत्कालमध्ये नैकरूपं सम्भवति । अन्तर्दशायामपि वर्षाणां पञ्चकं षट्कंवा एकैकस्य समायाति । तत्रापि नैकरूप मन्तर्दशा फलम्।विदशासुपदशासु च कस्यचिदल्पवर्षत्वं कस्यचिद्बहुवर्षत्वं समायाति । तत्रापि नैकरूपफलता वक्तुं शक्यते । तस्माद्बहा—यासेनापि जातकफलं स्थूलकालफलदमस्ति । ताजिकेतु वर्षमध्ये सर्वेषां ग्रहाणां दशाः समायान्ति । अन्तर्दशा त्वल्पदिनाद्या समायाति । तत्र मासप्रवेशफल मत्यन्तसूक्ष्मतरं समायाति । अतः सदसत्फलज्ञान ताजिकशास्त्रादेव नितान्तकान्तम् ॥

(अर्थ)

जातकशास्त्र के द्वारा भले अथवा बुरे फल का ज्ञान बड़े कष्ट से होता है। जन्म समय के ग्रह स्पष्ट को अङ्गीकार करके दृष्टि, षड्बल, इष्ट कष्ट बल, तथा सब ग्रहों के आयु के वर्षों को निकाल कर दशा अन्तर्दशा का निर्णय करके जातक शास्त्र के अनुसार भला या बुरा फल बतलाया जाता है। तिस पर भी इष्ट कष्ट बलका गुणक निकालने में, दशा प्रवेश के समय में जन्म-काल के समय व्यतीत कलियुग के वर्ष इत्यादि गणित करके उन्हीं लोगों को ज्ञान हो सकता है जो सिद्धान्तवेत्ता हों। सामान्य मनुष्य की गति नहीं है। इसके सिवाय बहुत कष्ट से जो दशा निकाली जावें उनका फल निकालना अति कठिन है। आयु के १०, १५, अथवा २० आदि वर्ष होने के कारण प्रत्येक ग्रह का शुभ अथवा अशुभ फल उस काल के मध्य में एकसा नहीं होता है। अन्तर्दशा में भी एक एक ग्रह के ५ अथवा ६ वर्ष आते हैं। उनमें भी एकसा फल ५ या ६ वर्ष नहीं रह सकता। इसी प्रकार विदशा तथा उपदशा में भी होता है। किसी ग्रह के वर्ष कम आते हैं किसी के बहुत आते हैं। उनमें भी एकसा फल नहीं बतलाया जा सकता है। इस कारण जातक का फल यद्यपि बहुत कष्ट से निकालाजाय तथापि स्थूल फल निकलता है। परन्तु ताजिक अर्थात् वर्षफल के द्वारा एक वर्ष के भीतर सब ग्रहों की दशाएं निकल आती हैं। अन्तर्दशा भी थोड़े थोड़े दिनों की निकल आती है। उसमें भी मास प्रवेश का फल अत्यन्त सूक्ष्म निकल आता है। इस कारण ताजिक शास्त्र से भला अथवा बुरा फल अधिक सूक्ष्म निकल आता है। (यही कारण है कि वर्षफल में लोग अधिक ध्यान देते हैं)॥

(२) वर्षानयनप्रकरणम्.

वर्षानयनरीतिः

(१) गताब्दवृन्दैर्मु निघ्नाभ्रचन्द्रै र्निघ्नै र्न भैा व्योमगजैः सुभक्तैः ।
त्रिधा फलं वारघटीपलानि स्वजन्मवारादियुतानि चेष्टम् ॥
(२) त्रिस्थापितो जन्मगताब्दवृन्दकःक्रमात्सपादार्धकसार्धकीकृतः ।
समन्वितो जन्मदिनादिकेन वर्षप्रवेशस्य घटीमितिः स्यात् ॥
(३) अब्दाः स्वांघ्र्यन्विता वारा अब्दार्धं घटिकाः स्मृताः ।
पला. स्युः सार्धमब्दादेः ॥
(४) गताः समाः पादयुताः प्रकृतिघ्न (२१) समा गणात् ।
सवेदाप्तघटीयुक्ता जन्मवारादिसंयुताः ।
अब्दप्रवेशे वारादि सप्ततष्टेऽत्र निर्दिशेत् ॥
(५) प्रतिवर्षं ध्रुवाङ्काः १।१५।३१।३०। गतवर्षै गुण्याः ।
स्वजन्मवारघटीपलविपलयुता वर्षेष्टम् ॥

(अर्थ)

(१) गत वर्षों को १००७ मे गुणन करे, उसमें ८०० का भाग दे, तो वर्ष प्रवेश के वार घटी तथा पल निकल आते हैं। उनमें अपने जन्मवार तथा इष्ट घटी पल जोड़ने से वर्ष का इष्ट काल निकल आता है ॥

इष्ट काल निकल आने पर १३६ पृष्ठ के अनुसार लग्न निकालना चाहिये ॥

(२) गत वर्षों को ३ स्थानों में स्थापित करे। उसका क्रमसे सवैया, आधा तथा ड्योढा करे। उसमें जन्म दिन का वार तथा जन्मकाल का इष्ट जोड देने से वर्ष प्रवेश का इष्टकाल निकल आता है ॥

वर्ष सवाया अर्ध करि पुनि ड्योढा करि देय ।
वार घटी पल जोड के वर्ष ध्रुवा कहि देय ॥
वर्ष सवैया, आधा, ड्योढा ॥

(३) गतवर्षों में चौथाई जोड़ देने से वार निकल आता है। गत वर्षों का आधा करने से घड़ियां निकल आती हैं। गत वर्ष का ड्योढ़ा करने से चखा अथवा पल निकल आते हैं॥

(४) गत वर्षों में चतुर्थांश जोड़ देने से वारांक निकलता है। फिर गतवर्ष को २१ से गुणा करके ४० से भाग देने से घटी पल विपल निकलते हैं। उनमें जन्मवार घटी पल जोड देने से वर्ष प्रवेश का ध्रुवा निकल जाता है॥

वाराङ्क ७ से अधिक हो तो ७ से भाग देना चाहिये॥ (शून्य से शनिवार जानना चाहिये)

(५) १।१५।३१।३० को गत वर्षों से गुणा करे। गुणन फल में जन्म वार इष्ट घटी पल विपल जोडने से वर्ष का ध्रुवा होता है॥

पूर्ववर्षादग्रिमवर्षज्ञानम्.

वारे रूपं (१) तिथै। रुद्रा (११) घटिकासु शरेन्दवः (१५)।
चखासु च रदा (३२) ज्ञेया वर्षाद्वर्षं भवेद्ध्रुवम्॥
(योगे १०।नक्षत्रे १०।लग्ने ३॥ योज्यम्)

(अर्थ)

पूर्व वर्ष के वार में १, घड़ियों में १५, चखाओं में ३२, जोड़ने से अगले वर्ष का ध्रुव निकल आता है। (तिथि में ११, योग में १०, नक्षत्र में १०, लग्न में $३\frac{१}{२}$ जोड़े जाते हैं)॥

जन्मलग्नाद्वर्षलग्नज्ञानम्.

गताब्दास्त्रिनिघ्ना हृताः शून्यरामै
रवाप्तं फलं च त्रिनिघ्नेषु युक्तम्।
ततो भानुभिर्भक्तशेषेण युक्तं
निजे जन्मलग्ने भवेदब्दलग्नम्॥
यथा. गताब्दाः ५१। जन्म लग्नं ७।

```
         ५१
          ३
     ─────────
३० ) १५३ ( ५
     १५०
     ─────────
       ३

                    १५३
                   * ५
                 ─────────
             १२ ) १५८ ( १३
                  १२
                 ─────────
                  ३८
                  ३६
                 ─────────
                   २
```

∴ ७+२=९ वर्षलग्नम्.

(अर्थ)

गत वर्षों को ३ से गुणा करे, गुणनफल को दो स्थानों में स्थापित करे, एक स्थान में ३० का भाग दे, जो फल मिले उसको दूसरे स्थान में स्थित गुणन फल में जोडदे, उसमें १२ का भाग दे, जो शेष रहे उसको जन्म लग्न में जोड़ दे तो वर्ष का लग्न निकल आता है॥ उदाहरण ऊपर लिखा है॥

सूचना—जन्म समय जिस राशि के जितने अंशों में सूर्य हो वर्ष प्रवेश भी उसी राशि के उतने अंशों में होता है। कभी कभी एक दिन का अन्तर पडजाता है। परन्तु जो वार निकले उसमें अन्तर नहीं होता है॥

मुन्था.

(१) गतवर्षे जन्मलग्न युते द्वादशभिर्हृते। मुंथा स्फुटा स्यात्॥

यथा. ५५+५=६०, ६०÷१२=०

∴ मुंथा=मीन राशिः

(२) सैकागताब्दा विहृता पतङ्गैस्तच्छेषभागे मुथहा स्फुटा स्यात्॥

यथा. ५५+१=५६; ५६÷१२=४; शेष ८.

ज. ल. ५.∴ मुंथा=मीन राशिः

(३) स्वजन्मलग्नात्प्रतिवर्ष मेकैकराशिभ्रमतो मुथा स्यात् ॥
ज. ल. ५.·.५६ वर्षे = मीन राशिः

(४) प्रत्यहं शरलिप्ताभिर्वर्द्धते सानुपाततः ।
सार्द्धमंशद्वयंमास मित्याहुः केऽपि सूरयः ॥

(अर्थ)

(१) गतवर्ष में जन्म लग्न जोड कर १२ का भाग देने से शेष राशि पर मुन्था निकल आती है ।

(२) गताब्द में एक जोड कर १२ का भाग देने से जो शेष निकले वह मुन्था का स्थान (तनु, धन आदि) है ।

(३) अपने जन्म लग्न से प्रति वर्ष मुन्था एक एक राशि घूमती है ॥

(४) प्रति दिन मुन्था पांच पांच कला वढ़ती है । अथवा एक मास में २॥ अंश वढ़ती है । अर्थात् एक वर्ष में एक राशिका भोग करती है ॥

(एक राशि = ३० अंश; १ अंश = ६० कला ॥)

त्रिराशिपाः

त्रिराशिपाः सूर्यसितार्किशुक्रा दिने निशीज्येन्दु बुधक्षमाजाः ।
मेषाच्चतुर्णां हरिभाद्विलोमं नित्यं परेऽब्जार्किकुजेज्यचन्द्राः ॥

त्रिराशिपचक्रम्

राशयः	मे	वृ	मि	कर्क	सि	कन्या	तु	वृश्चि	ध	म	कु	मी.
दिवा	सू	शु	श	शु	वृ	चं	वु	म	श	म	वृ	च.
रात्रौ	वृ	च	वु	म.	सू	शु	श	शु	श	मं	वृ	चं.

(अर्थ)

त्रिराशि के स्वामियों का चक्र ऊपर लिखा है ॥ (जो वर्ष लग्न हो उसका स्वामी त्रिराशिप है। दिन रात में पृथक् स्वामी होते हैं) ॥

वर्षे पञ्चाधिकारिणः

(लघुपञ्चवर्गी)

जन्मलग्नपति रब्दलग्नपो मुथहापतिरतस्त्रिराशिपः ।
सूर्यराशिपति रह्नि चन्द्रमाधीश्वरो निशि विमृश्य पञ्चकम् ॥

(अर्थ)

पञ्चवर्गी में यह पांच चीजें होती हैं:—(१) जन्मलग्न का स्वामी (२) वर्ष लग्न का स्वामी (३) मुन्थापति (४) त्रिराशीश (५) दिन में सूर्य राशि का स्वामी, रात में चन्द्र राशि का स्वामी ॥

पञ्चाधिकारिणामर्थः

वर्षलग्नेश्वरो भूपः सेनानीश्चन्द्रसूर्यपः ।
मुथहाधिपतिर्मन्त्री पुरेशो जन्मलग्नपः ॥
रसमस्यादिधातूनां पतिस्त्रिराशिकेश्वरः ।
बलवद्भिरिमैस्तेभ्यः शुभं हीने तदन्यथा ॥

(अर्थ)

वर्ष लग्न का स्वामी राजा होता है। चन्द्र अथवा सूर्य राशि का स्वामी सेनापति होता है। मुन्था का स्वामी मन्त्री होता है। जन्म लग्न का स्वामी पुरेश होता है। त्रिराशिपति रस मस्य आदि धातुओं का स्वामी होता है। यदि यह बलवान् हों तो शुभ होता है। यदि बल हीन हों तो अशुभ होता है ॥

हद्देगाः

मेषेद्व तर्कांग्निशरेषुभागा जीवास्फुजिज्ज्ञारशनैश्चराणाम् ।
वृषेऽग्नयष्णनागशरानलांशाः शुक्रज्ञजीवार्किकुजेशहद्दाः ॥१॥

युग्मे षडङ्गेषुनगाङ्गभागाःसौम्यास्फुजिज्जीवकुजार्कि हद्दाः ।
कर्केद्रितर्काङ्ग नगाब्धिभागाः कुजास्फुजिज्ज्ञेज्यशनैश्चराणाम् ॥२॥
सिंहेङ्गभूताद्रिरसाङ्गभागाः सुरेज्यशुक्रार्कि बुधारहद्दाः ।
स्त्रियोनगाशाब्धिनगाक्षिभागाःसौम्योशनोजीवकुजार्किनाथाः३
तुलेरसाष्टाद्रिनगाक्षिभागाः कोणज्ञजीवास्फुजिदारनाथाः ।
कीटेनगाब्ध्यष्टशराङ्गभागाभौमास्फुजिज्ज्ञेज्यशनैश्चराणाम् ॥४॥
चापेरवीष्वम्बुधिपञ्चवेदाजीवास्फुजिज्ज्ञार शनैश्चराणाम् ।
मृगेनगाद्र्यष्टयुगश्रुतीनां सौम्येज्यशुक्रार्कि कुजेशहद्दाः ॥५॥
कुम्भे नगाङ्गाद्रिशरेषुभागाः शुक्रज्ञजीवारशनैश्चराणाम् ।
मीनेऽर्कवेदानलनन्दपक्षाः सितेज्यसौम्यार शनैश्चराणाम् ॥६॥

हद्देशचक्रम्. (अग्रयोग ३०)

मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कु	मी.
वृ	शु	वु	मं	वृ	वु	श	म	वृ	वृ	शु	शु
६	८	६	७	६	७	६	७	१२	७	७	१२
शु	वु	शु	शु	शु	शु	वृ	शु	शु	वृ	वु	वृ
६	६	६	६	५	१०	८	४	५	७	६	४
वु	वृ	वृ	वु	श	वृ	वृ	वु	वु	शु	वृ	वु
८	८	५	६	७	४	७	८	४	८	७	३
म	श	मं	वृ	वृ	म	शु	वृ	मं	श	म	मं
५	५	७	७	६	७	७	५	५	४	५	९
श	मं	श	श	मं	श	म	श	श	मं	श	श
५	३	६	४	६	२	[illegible]	६	४	४	५	२

(अर्थ)

हद्देश ऊपर लिखे हुए चक्र से समझ में आजावेंगे ॥

पञ्चवर्गीबलम्
(बृहत्पञ्चवर्गी)

त्रिंशत्स्वभे विंशतिरात्मतुङ्गे हद्देऽक्षचन्द्रादशकं द्रेष्काणे।
मुसल्लहे पञ्चलवाः प्रदिष्टा विंशोपका वेदलवैः प्रकल्प्याः॥
स्वस्वाधिकारोक्तबलं सुहृद्भे पादोनमर्द्धं समभेऽरिभेऽङ्घ्रिः।
एवं समानीय बलं तदैक्ये वेदोद्धृतेहीनबलः शरोनः॥

	स्व.	मित्र	सम.	शत्रु
गृह	३०	२२।३०	१५।०	७।३०
उच्च	२०			
हद्दा	१५	११।१५	७।३०	३।४५
द्रेष्काण	१०	७।३०	५।०	२।३०
नवांश	५	३।४५	२।३०	१।१५

(अर्थ)

जब ग्रह अपने घर का हो तो ३० विश्वा बल पाता है। जब अपने उच्च का हो तो २० विश्वा बल पाता है। जब अपने हद्दा का हो तो १५ विश्वा बल पाता है। जब अपने द्रेष्काण का हो तो १० विश्वा बल पाता है। जब अपने नवांश का हो तो ५ विश्वा बल पाता है॥

मित्र के घर में चौथाई कम, सम के घर में आधा, शत्रु के घर में चौथाई बल पाता है। इस प्रकार सब बलों को जोड कर ४ का भाग देने से बल निकल आता है। यदि ५ विश्वा से कम हो तो ग्रह बलहीन होता है॥

बलिष्ठग्रहस्य लक्षणम्.

लग्नाम्बुद्यूनकर्माणि केन्द्रमुक्तं च कण्टकम् ।
चतुष्टयं चात्र खेटो वली लग्ने विशेषतः ॥१॥
लग्नकर्मास्ततुर्याय सुताङ्कस्थो वली ग्रहः ।
यथादिमं विशेषेण सत्रिवित्तेषु चन्द्रमाः ॥२॥
कुजः सत्रिषु पृच्छायां सूतौ चान्यत्र चिन्तयेत् ॥
भावानवेत्थं शस्ताः स्यू रिष्फाष्टरिपवोऽशुभाः ॥३॥

(अर्थ)

१,४,७,१० स्थानों को केन्द्र अथवा कण्टक कहते हैं । इन चारों स्थानों में स्थित ग्रह वलवान् होता है । इनमें भी जो ग्रह लग्न में हो वह विशेष वलवान् होता है ॥१॥

१,१०,७,४,११,५,६, स्थानों में स्थित ग्रह विशेष वलवान् होता है। इन स्थानों में भी पर से पूर्व पूर्व स्थान विशेष वलवान् होते हैं। इन पूर्वोक्त स्थानों में तथा ३, २, स्थानों में चन्द्रमा वलवान् होता है । पूर्वोक्त लग्न आदि ७ स्थान तथा तीसरे स्थान में मङ्गल वलवान् होता है । इस वात का विचार जन्म में तथा अन्यत्र करना चाहिये । ये ६ भाव शुभ होते हैं । ६,८,१२ स्थान अशुभ होते हैं ॥

हर्षवलम्.

नन्दत्रिपड्लग्नभवर्क्षपुत्र व्ययाङ्गनाद्धर्षपदं स्वभोच्चम् ।
त्रिभं त्रिभं लग्नभतः क्रमेण स्त्रीणां नृणां रात्रि दिनेषु तेषाम् ॥

(१) लग्न राशितः ९ सूर्यः । ३ चन्द्रः । ६ भौमः । लग्ने बुध. । ११ गुरुः । ५ भृगुः । १२ शनिः । हर्षदा वोध्याः ।

(२) स्वराशिस्थाः स्वोच्चस्था रव्यादयो हर्षदाः ।

(३) लग्नात् १।२।३ स्थानेषु स्त्रीग्रहाः
लग्नात् ४।५।६ स्थानेषु पुंग्रहाः
लग्नात् ७।८।९ स्थानेषु स्त्रीग्रहाः
लग्नात् १०।११।१२ स्थानेषु पुंग्रहाः
} हर्षदाः

बुधसूर्यसुतौ नपुंसकाख्यौ
शशिशुक्रौ युवती नराश्च शेषाः ॥

(४) दिने वर्षप्रवेशश्चेत्पुंग्रहा हर्षदाः। रात्रौ चेत्तदा स्त्री ग्रहाः॥
एवं प्रत्येकस्य हर्षबलं =५ विश्वाः
उपर्युक्तचतुर्बलयुक्तो ग्रहः पूर्णहर्षफलदः=२० विश्वाः॥

(अर्थ)

(१) लग्न से नवां सूर्य, तीसरा चन्द्रमा, छठा मङ्गल, लग्न का बुध, ग्यारहवां बृहस्पति, पांचवां शुक्र, तथा बारहवां शनैश्चर हर्षबली होते हैं॥

(२) सूर्य आदि ग्रह अपनी राशि के अथवा अपने उच्च के हर्ष बली होते हैं॥

(३) लग्न से १,२,३ स्थानों में स्त्री ग्रह,—
४,५,६ स्थानों में पुरुष ग्रह,—
७,८,९ स्थानों में स्त्री ग्रह,—
१०,११,१२ स्थानों में पुरुष ग्रह—हर्षबली होते हैं॥

(बुध तथा शनि नपुंसक ग्रह होते हैं, चन्द्रमा तथा शुक्र स्त्रीग्रह हैं। शेष ग्रह पुरुष होते हैं। परन्तु ताजक में बुध तथा शनि स्त्रीग्रह माने जाते हैं)॥

(४) यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो तो पुरुष ग्रह हर्षबली होते हैं। यदि रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो स्त्री ग्रह हर्षबली होते हैं॥

इस प्रकार से प्रत्येक का हर्षबल ५ विश्वा होता है, यदि पूर्वोक्त चारों प्रकार से कोई ग्रह वर्ष में पूरा बल पावे तो २० विश्वा पूरा हर्षबल पाता है॥

वर्षेश निर्णयः

बलीय एषां तनु मीक्ष्यमाणः सवर्षपो लग्न मनीक्ष्यमाणः।
नैवाब्दपो ह्यग्रतिरेकतः स्या द्बलस्य साम्ये विदुरेव भावाः॥

दृगादिसाम्येऽप्यथ निर्बलत्वे वर्षाधिपः स्यान्मुथहेश्वरस्तु ।
पञ्चापिचेन्नो तनुमीक्ष्यमाणा वीर्याधिकोऽब्दस्य विभुर्विचिन्त्यः॥
बलादिसाम्ये रविराशिपोऽह्नि निशीन्दुराशीडिति केचिदाहुः ॥

(अर्थ)

पूर्वोक्त पांचों अधिकारियों में से जो ग्रह बलवान् हो तथा जिसकी लग्न पर दृष्टि हो (ताजिक में दृष्टि दूसरी रीति से होती है । वह नीचे लिखी है । दृष्टि में भी शत्रु दृष्टि से ३।११ दृष्टि बलवती होती है । उससे भी ९।५ अधिक बलवती होती है) वह वर्षेश होता है । परन्तु यदि वह लग्न को न देखे तो वर्षेश नहीं हो सकता है । यदि दो अथवा तीन ग्रह बल पाए हों तथा लग्न को देखें तो जिसकी दृष्टि लग्न पर अधिक बलवती हो वह वर्षेश होता है। यदि पांचों बलहीन हों अथवा पाचों की दृष्टि समान हो तो मुन्था का स्वामी वर्षेश होता है। यदि पांचों में से कोई भी लग्न को न देखे तो जो अधिक बली हो वह वर्षेश होता है। यदि बल आदि समान हो तो दिन में सूर्य राशि का स्वामी तथा रात में चन्द्र राशि का स्वामी वर्षेश होता है ॥ (चन्द्रमा वर्षेश बहुत कम होता है) बल का विचार पञ्चवर्गी बल से करना चाहिये ॥

(३) दृष्टिप्रकरणम्

ग्रहाणां दृष्टिः (ताजिके)

मित्रं तृतीयपञ्चमनवमैकादशगतोऽपियो यस्य ।
धनरिपुमृतिरिष्फेषु समो ग्रहः स्यादिति ज्ञेयम् ॥
शत्रुस्तथैकतुर्ये जायास्थाने तथा दशमे ।
ताजिकहिल्लाजकमतेनैतात्कथितमस्माभिः ॥

ग्रहात् ३।५।९।११ स्थानेषु स्थितो मित्र ग्रहः (भवति)

,, २।६।८।१२ स्थानेषुस्थितः समोग्रहः

,, १।४।७।१० स्थानेषु स्थितः शत्रुग्रहः

न्यायपञ्चाङ्कगः खेटो ज्ञेयः सौहार्दसंयुतः ।
यस्माच्च केन्द्रगः शत्रुः शेषकेषु समो भवेत् ॥

५।९ पूर्णदृष्टिः (प्रत्यक्षस्नेहा)
३।११ मित्रदृष्टि (गुप्तस्नेहा)
४।१० शत्रुदृष्टिः (गुप्तवैरा)
७ अतिशत्रुदृष्टिः
एकस्थो ग्रहः परम शत्रुः } (प्रत्यक्ष वैरा)

अन्य स्थानेषु ताजिके दृष्टिर्नास्ति ।
तृतीयैकादशे दृष्टि स्तदा प्रोक्ता महोत्तमा ।
नवपञ्चमयोर्दृष्टि र्बली प्रोक्ता महाशुभा ॥

(अर्थ)

३,५,९,११ स्थानों में स्थित ग्रह मित्र होता है
२,६,८,१२ स्थानों में स्थित ग्रह सम होता है
१,४,७,१० स्थानों में स्थित ग्रह शत्रु होता है ॥

अपने स्थान से ३।११।५।९ स्थानों में स्थित ग्रह मित्र होता है। अपने स्थान से केन्द्र गत ग्रह शत्रु होता है, शेष स्थानों में स्थित ग्रह सम होता है ॥

५,९ स्थानों में पूर्ण दृष्टि होती है। इसको प्रत्यक्ष स्नेह नाम की दृष्टि कहते हैं और यह बलवती होती है।

इससे दूसरी दृष्टि ३,११ स्थानों में होती है जिसे मित्र दृष्टि कहते हैं इसका नाम गुप्त स्नेह दृष्टि है ॥

४, १० स्थानो में शत्रु दृष्टि होती है। इसको गुप्त वैर नाम से कहते हैं ॥

सातवें स्थान में अतिशत्रु दृष्टि होती है।

जो ग्रह एकही स्थान में हो वह परम शत्रु कहलाता है।

इन दोनों को प्रत्यक्ष वैर वाली दृष्टि कहते हैं ॥

पूर्वोक्त स्थानों को छोड़ कर शेष स्थानों में दृष्टि ताजिकशास्त्र में नहीं मानी जाती है ॥

३,११ स्थानों की दृष्टि बड़ी उत्तम होती है, ६,५ स्थानों की दृष्टि बहुत बलवती होती है ॥

चक्रेवामदृगुच्यते बलवती.

तत्र लग्नात् षष्ठपर्यन्तं दक्षिणभागः (पूर्वार्धोवा)
सप्तमाद्द्वादशपर्यन्तं वामभागः (परार्धोवा)
वाम स्थाने स्थितस्य ग्रहस्य दृष्टि "वामदृक्"

उदाहरणम्.
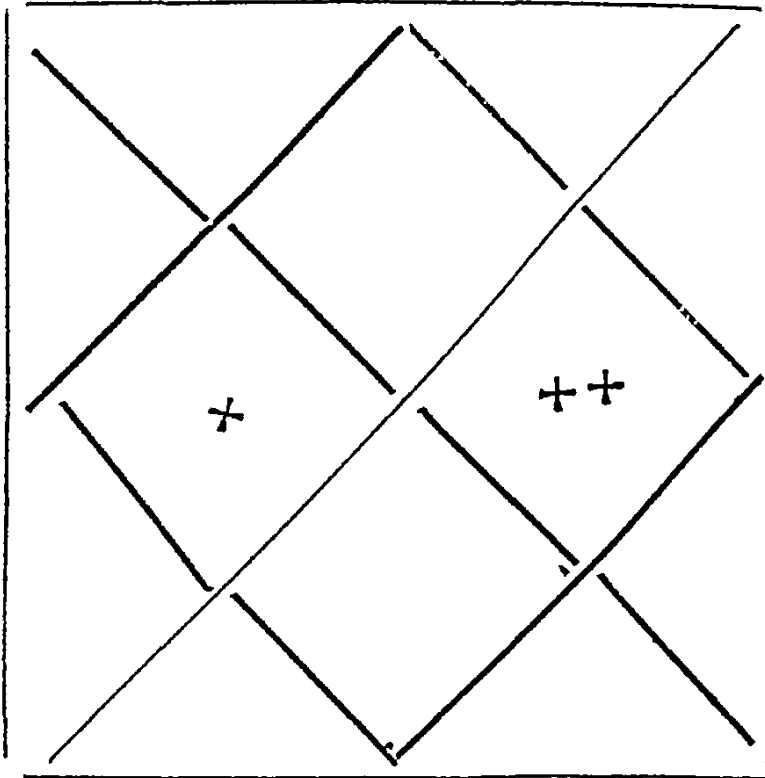
अत्र चतुर्थस्थानस्थितस्य ग्रहस्य दृष्टिर्दशमस्थान स्थितग्रहोपरि बलहीना । परं च दशमस्थग्रहस्य चतुर्थस्थग्रहोपरि दृष्टि वाम-दृष्टित्वात्प्रबलतरा ।

"परार्धखगदृक् प्राग्जाधंदृक्तोऽधिका".

ग्रन्थांतरमतम्.

३।४।५ वामा । ६।१०।११ दक्षिणा । यतो ग्रहाः प्राङ्मुखा व्रजन्ति भचक्रस्य पश्चिमाभिमुखत्वात् । उदित मर्धं वामा । अनुदित मर्धं दक्षिणा ।

चक्राद्यंतदले दृष्टि ग्रंहाणां वामदक्षिणा ।
ज्ञेया ताभ्यां वले प्रौढा वामदृष्टे स्तु दक्षिणा ॥

(अर्थ)

लग्न से छठे स्थान पर्य्यन्त दक्षिण भाग अथवा पूर्वार्द्ध कहलाता है । ७ से १२ पर्य्यन्त वाम भाग अथवा परार्द्ध कहलाता है ॥

वाम भाग में जो ग्रह स्थित हो उसकी दृष्टि वाम दृष्टि कहलाती है ॥

जैसे कोई ग्रह चौथे स्थान में स्थित हो, दूसरा ग्रह दशम स्थान में स्थित हो तो चतुर्थ स्थान वाले ग्रह की दृष्टि दशम स्थान वाले ग्रह के ऊपर वलहीन है । परन्तु दशम स्थान वाले ग्रह की दृष्टि चौथे स्थान वाले ग्रह के ऊपर अधिक वलवान् है क्योंकि वह वाम दृष्टि है । जैसा कि शास्त्र में कहा है "परार्द्ध में स्थित ग्रह की दृष्टि पूर्वार्द्ध में स्थित ग्रह की दृष्टि से अधिक वल वाली होती है" ॥

दूसरे आचार्य कहते हैं कि ३।४।५ वामदृष्टि है । ६।१०।११ दक्षिण दृष्टि है । भचक्र के पश्चिमाभिमुख होने से सब ग्रह पूर्वाभिमुखजाते हैं । जो आधा भाग उदित हुआ है वह वाम है । जो उदित नहीं हुआ है वह दक्षिण है । चक्र के आदि में ग्रहों की वाम दृष्टि होती है । अन्त में दक्षिण दृष्टि होती है । उन दोनों में से वाम दृष्टि से दक्षिण दृष्टि अधिक वलवती होती है ॥

(४) फलविचारप्रकरणम्

वर्षप्रवेशे पञ्चाङ्गफलम्

नन्दा भद्रा जया पूर्णा शुभदास्तिथयो मताः ।
द्वादश्याद्याश्च रिक्ता च नशुभा वर्षवेशने ॥१॥
सोमो बुधो गुरुः शुक्रो वाराश्चत्वार उत्तमाः ।
भौमार्कशनिवाराश्च वर्षे हानिभयप्रदाः ॥२॥
अश्विनी मृगशीर्षं च हस्तः पुष्यः पुनर्वसुः ।
स्वाती च रेवती चैव वर्षवेशे शुभावहाः ॥३॥
कृत्तिका रोहिणी चार्द्रा ज्येष्ठा मूलाख्यतारका ।
श्रवणं चानुराधा च मध्य पूर्वोत्तरात्रयम् ॥४॥
भरणी च मघा चित्रा विशाखा शतत रका ।
धनिष्ठाश्लेपिका प्रोक्ता वर्षवेशेऽति निन्दिताः ॥५॥
विरुद्ध योगे विष्ट्यां च वर्षवेशो न शोभनः ॥६॥

(अर्थ)

नन्दा, भद्रा, जया, पूर्णा तिथि वर्ष प्रवेश में शुभ फल देने वाली होती हैं। द्वादशी आदि तिथियां तथा रिक्ता तिथियां वर्ष प्रवेश में अशुभ फल देने वाली होती हैं ॥१॥

चन्द्र, बुध, बृहस्पति, शुक्र ये चार वार वर्ष प्रवेश में उत्तम हैं। मङ्गल, रवि तथा शनि वार वर्ष प्रवेश में हानि तथा भय देने वाले हैं ॥२॥

अश्विनी, मृगशिर, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, स्वाती तथा रेवती नक्षत्र वर्ष प्रवेश में शुभ हैं ॥३॥

कृत्तिका, रोहिणी, आर्द्रा, ज्येष्ठा, मूल, श्रवण, अनुराधा, तीनों पूर्वा तथा तीनों उत्तरा ये नक्षत्र वर्ष प्रवेश में मध्यम हैं, ॥४॥

भरणी, मघा, चित्रा, विशाखा, शततारका, धनिष्ठा, तथा अश्लेषा नक्षत्र वर्ष प्रवेश में अत्यन्त निन्दित हैं ॥५॥

जिसका वर्ष प्रवेश निन्दित योग अथवा भद्रा में हो तो शुभ नहीं होता है ॥६॥

लग्नफलम्

शुभग्रहयुते सौम्ये वर्षस्वामिदृशा युते ।
रोगोद्वेगापदां नाश सुतदारादिसम्पदः ॥
क्रूरवर्षे क्रूरयुते क्रूरस्यापि दृशा युते ।
रोगोद्वेगो भयं दुःखं ज्वरो हानिर्दरिद्रता ॥

(अर्थ)

जब वर्ष प्रवेश के समय शुभ ग्रह से युक्त लग्न हो, अथवा शुभ ग्रह अथवा वर्ष स्वामी की दृष्टि से वह युक्त हो, तो रोग उद्वेग तथा आपत्तियों का नाश होता है, पुत्र स्त्री आदि का सुख होता है। जब वर्ष लग्न क्रूर हो अथवा क्रूर ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो तो रोग, उद्वेग, भय, दुःख, ज्वर, हानि तथा दारिद्र्य होते हैं ॥

वर्षे जगल्लग्नफलम्.

मेषार्कप्रवेशलग्नस्य नाम जगल्लग्नमिति वदन्ति ॥१॥

जन्मोदयाद्भाग्वदजप्रवेश लग्नं हि यद्भावगतं शुभान्वितम् ।
तद्भाववृद्धिं प्रकरोति तस्मिन्वर्षे नृणां पापयुतं तदन्यथा ॥२॥
जन्मोदये देहसुखं धने च लाभ स्तृतीये च कुटुम्बवृद्धिः ।
तुर्ये सुहृत्सौख्य मथात्मजाप्तिःपुत्रे च षष्ठेऽरि पराजयः स्यात् ॥३॥
स्त्री सौख्याप्ति र्भवति मदने मृत्युरुग्भीश्च रन्ध्रे
धर्मार्थाप्तिस्तपसि दशमे वित्तसौख्यास्पदाप्तिः ।
लाभे लाभ सुखधनचयो दुःखदारिद्र्यमन्ते
पुंसां मेषे प्रविशति रवौ जन्मलग्नाद्विलग्ने ॥४॥
एतत्फलं सौम्ययुते ज्ञेयम्। पाप युते विपरीतम्। मिश्रे मिश्रम्॥५॥

(अर्थ)

मेषार्क प्रवेश के समय जो लग्न हो उसको जगल्लग्न कहते हैं ॥१॥

जन्म लग्न से जिस लग्न में सूर्य का प्रवेश मेषार्क में हो वह भाव शुभ युक्त हो तो उस भाव की वृद्धि उस वर्ष में होती है। यदि वह भाव पाप युक्त हो तो उस भाव की हानि होती है ॥२॥

यदि वह भाव जन्म लग्न हो तो देह में सुख होता है। धनस्थान हो तो लाभ होता है। तृतीय स्थान हो तो कुटुम्ब की वृद्धि होती है। चैाथा हो तो मित्र से सुख मिलता है। पञ्चम स्थान हो तो पुत्र की प्राप्ति होती है। छठा हो तो शत्रु का पराजय होता है। सप्तम हो तो स्त्री का सुख मिलता है। अष्टम हो तो मृत्यु तथा रोग भय होता है। नवम हो तो धर्म तथा धन की प्राप्ति होती है। दशम हो तो धन, सुख तथा स्थान की प्राप्ति होती है। लाभ स्थान हो तो लाभ, सुख तथा धनका संग्रह होता है। द्वादश स्थान हो तो दुःख तथा दारिद्र्य होते हैं। यह विचार जब सूर्य मेष राशि मे प्रवेश करता है, उस समय के लग्न में जन्म लग्न से विचारा जाता है ॥ ३।४ ॥

जब मेषार्क प्रवेश का लग्न सौम्य ग्रह से युक्त हो तब यह फल जानना चाहिये। यदि पाप ग्रह से युक्त हो तो इसका विपरीत फल होता है। यदि सौम्य तथा पाप ग्रह मिश्रित हों तो मिश्रित फल होता है ॥५॥

वर्षे सामान्यतः शुभाशुभफलम्.

जन्माब्दाङ्गपरन्ध्रपाब्दमुथहा नाथा बलाढ्या स्तदा
रम्यं वर्ष मुशन्ति सर्व मतुलं सौख्यं यशोऽर्थागमः।
षष्ठाष्टान्त्यगता नचेदिह पुनस्ते दुःखभीतिप्रदा
निर्वीर्या यदि वर्ष मेतदशुभं वाच्यं शुभेक्षां विना ॥

(अर्थ)

जब जन्म लग्न का स्वामी, वर्ष लग्न का स्वामी, अष्टमेश, तथा मुन्थेश बलवान् हों, ६,८,१२ स्थानों में न हों तो सारा वर्ष अच्छा होता है। उस

वर्ष में सुख, यश तथा धन की प्राप्ति होती है। यदि वे ६।८।१२ स्थानों में हों तो दुःख तथा भय देने वाले होते हैं। यदि वे बलरहित हों तथा शुभ ग्रह की उन पर दृष्टि न हो तो वर्ष अशुभ होता है॥

सामान्यतो भावविचारः

योभावः स्वामिसौम्याभ्यां दृष्टो युक्तोऽयमेधते।
पापदृग्युते नाशो मिश्रैर्मिश्रफलं वदेत्॥१॥
भावनाथो यदा पश्येद्भावं कार्यकरः स्मृतः।
आक्रान्तोऽपिच यः पश्येत्परतः कार्यसिद्धिकृत्॥२॥
नीचस्थो रिपुगेहस्थो ग्रहो भावविनाशकृत्॥
स्वोच्चगश्च ग्रहोऽवश्यं भाववृद्धिकरः स्मृतः॥३॥
षष्ठाष्टव्ययभावविचारे वैपरीत्यम् (सत्याचार्यः)॥
अष्टमस्थाः सौम्या मृत्यु हानिं कुर्वन्ति। पापा मृत्युवृद्धिं कुर्वन्ति। द्वादशे सौम्या व्ययहानिं क्रूराव्ययवृद्धिं कुर्वन्ति। षष्ठे सौम्याः शत्रुवृद्धिं क्रूराः शत्रु हानिं कुर्वन्तीति ताजिकमतम्॥४॥
यस्मिन्भावे भावनाथेन युक्तो लग्नस्वामी तस्य भावस्य वृद्धिम्।
कुर्यान्नूनं मृत्युनाथेन युक्तो यस्मिन्भावे तस्य हानिं सदैव॥५॥
वर्द्धितः स्वोच्चगो वापि राशिपो लग्नपोऽथवा।
शुभं तद्वत्सरे तस्य कुर्याद्युक्तोऽथवा ग्रहः॥६॥
विलग्नात्पञ्चमं तस्मात्पुण्यभं च ततस्तनुः।
स्थानत्रये यदा सौम्याः सुखसम्पत्तदा भवेत्॥७॥
स्वोच्चे लग्ने श्रियं तुर्ये सौख्यं योपिद्द्युने भवेत्।
व्योम्नि राज्यं ग्रहं सम्यग्विचार्य फलमादिशेत्॥८॥

(अर्थ)

जो भाव अपने स्वामी अथवा सौम्य ग्रह से युक्त अथवा (मित्र दृष्टि से) दृष्ट हो उस भाव की वृद्धि होती है। जो भाव पाप ग्रह से दृष्ट

अथवा युक्त हो उस भाव का नाश होता है। यदि सौम्य तथा पाप ग्रह से मिश्रित हो तो फल भी मिश्रित होता है ॥१॥

जिस भाव का स्वामी अपने भावको (मित्र दृष्टि से) देखे उस भाव के कार्य्य की सिद्धि होती है। यद्यपि वह भावेश पाप ग्रह से युक्त होकर भी देखे तब भी कार्य्य की सिद्धि दूसरे मनुष्य के द्वारा होती है ॥२॥

जो ग्रह अपने नीच का हो अथवा शत्रु के घर का हो वह भाव का नाश करता है। परन्तु जो ग्रह अपने उच्च का हो वह भाव की वृद्धि अवश्य करता है ॥ ३ ॥

(सत्याचार्य्य का मत है कि ६,८,१२ स्थानों में विपरीत विचार करना चाहिये)

अष्टम स्थान के सौम्य ग्रह मृत्यु की हानि करते हैं। पाप ग्रह मृत्यु की वृद्धि करते हैं। द्वादश स्थान में सौम्य ग्रह व्यय की हानि करते हैं। परन्तु क्रूर ग्रह व्यय की वृद्धि करते हैं। छठे स्थान में सौम्य ग्रह शत्रु की वृद्धि करते हैं। क्रूर ग्रह शत्रु की हानि करते हैं। यह ताजिक शास्त्र का मत है ॥४॥

लग्न का स्वामी जिस भाव में उसभाव के स्वामी से युक्त होकर बैठा हो उस भाव की वृद्धि होती है। परन्तु अष्टमेश से युक्त होकर लग्नेश जिस स्थान में बैठे उस स्थान की सदा हानि होती है ॥ ५ ॥

यदि लग्नेश अथवा राशीश उदयी हो अथवा अपने उच्च का हो अथवा दोनों एक साथ बैठे हों तो उस वर्ष में शुभ होता है ॥६॥

जिस वर्ष में लग्न, पञ्चम, तथा धर्मस्थान इन तीनों स्थानों में सौम्य ग्रह बैठे हों उस वर्ष में सुख तथा सम्पत्ति की प्राप्ति होती है ॥७॥

जब लग्न में उच्च का ग्रह पड़ा हो तो लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। यदि चतुर्थ स्थान में उच्च का ग्रह बैठा हो तो सुख मिलता है। यदि

सप्तम स्थान में उच्च का ग्रह बैठा हो तो स्त्री की प्राप्ति होती है। यदि दशम स्थान में उच्च का ग्रह बैठा हो तो राज्य की प्राप्ति होती है। अच्छे प्रकार से विचार करके फल बतलाना चाहिये ॥८॥

वर्षेशफल पूर्णादि

वलपूर्णेऽब्दपे पूर्णं फलं मध्ये च मध्यमम् ।
अधमे दुःखरोगादि भयानि विविधाः शुचः ॥१॥
अब्दाधिपो व्ययषडष्टमभिन्नसंस्थो
लब्धोदयोऽब्दजनुपोः सदृशो बलेन ।
निःशेष मुत्तमफलं विदधाति काये
नैरुज्यराज्यबललब्धिमतीव सौख्यम् ॥२॥

(अथ)

जब वर्षेश पूर्णबल वाला हो तो पूर्णफल मिलता है। यदि मध्यम बल वाला हो तो मध्यम फल मिलता है। यदि अधमबल वाला हो तो दुःख, रोग, भय, तथा अनेक प्रकार के शोक होते हैं ॥१॥

जब वर्षेश १२, ६, ८ स्थानों को छोड़कर किसी शेष स्थान में बैठा हो, उदित हो, वर्ष तथा जन्म में उभयत्र बल पाया हो, तो पूर्ण उत्तमफल, शरीर में नीरोगता, राज्य, बल, लाभ, तथा अत्यन्त सुख देता है ॥२॥

वर्षे लग्नेशफलम्

यदि लग्नेश सूर्यो दुःखं व्याकुलत्वपरवशते ।
यदि सोमस्तु परान्नभुक् कुलतानाश्रयो विगतधातुः ॥१॥
भौमे लग्नाधिपतौ सर्वविरोधी विवादकृद्रोगी ।
सौम्ये च पतौ विद्या बुद्धि प्रभृतीनि जायन्ते ॥२॥
गुरुसितयोश्च पत्यो रतिसुखानि पूर्णानि सर्वाणि ।
मन्दपतित्वे कलहो रोगविकाराशुभानि च स्युः ॥३॥

(अर्थ)

जब वर्ष में लग्नेश सूर्य्य हो तो दुःख, व्याकुलता तथा परवशता होती हैं। यदि लग्नेश चन्द्रमा हो तो मनुष्य परान्न भोजन करता है, अपने कुल के लोगों से उसको आश्रय नहीं मिलता है तथा धातुक्षीण हो जाते हैं। यदि मङ्गल हो तो मनुष्य सबसे विरोध तथा विवाद करता है, रोगी भी रहता है। यदि बुध हो तो विद्या बुद्धि आदि की वृद्धि होती है। यदि बृहस्पति अथवा शुक्र हो तो अत्यन्त सुख प्राप्त होता है। यदि शनि हो तो कलह, उद्वेग, विकार तथा अशुभ होते हैं॥

द्विजन्माख्ययोगः

वर्षलग्नजनुर्लग्ने भवेताञ्च यदा समे।
द्विजन्माख्यस्तदा योगः कष्ट मृत्यु प्रदायकः॥

(अर्थ)

जिस बरस में जन्म लग्न तथा वर्ष लग्न एक ही हों उस बरस द्विजन्मा योग होता है। उसका फल कष्ट अथवा मृत्यु है॥

वर्षे पदसञ्ज्ञा

यद्राशिगो ग्रहः सूतौ सराशिस्तत्पदाभिध।
बली जन्मोत्थसौख्याय वर्षे तद्दुःखदोऽन्यथा॥१॥
यत्र भावे शुभफलो दुष्टोवा जन्मनि ग्रहः।
वर्षे तद्भावगस्तादृक् तत्फलं यच्छति ध्रुवम्॥२॥

(अर्थ)

जन्म समय जिस राशि में जो ग्रह हो उस राशि को उस ग्रह का पद कहते हैं। यदि वह वर्ष में बलवान् हो तो सुख होता है अन्यथा दुःख होता है॥१॥

जन्म में जो ग्रह जिस भाव में शुभ फल अथवा दुष्ट फल देने वाला हो वर्ष में भी उसी भाव में हो तो वैसा ही अच्छा अथवा बुरा फल देता है ॥ २ ॥

वर्षस्य पूर्वापरभागे शुभाशुभज्ञानम्.

ये जन्मकाले बलिनोऽब्दवेशे
चेद्दुर्बलास्तैरशुभं समान्ते ।
विपर्यये पूर्वमनिष्टमुक्तं
तुल्यं फलं स्यादुभयत्र साम्ये ॥१॥
ये जन्मनि स्युः सबला विवीर्या
वर्षे शुभं प्राक् चरमे त्वनिष्टम् ।
दद्यु विलोमं विपरीततायां
तुल्यं फलं स्यादुभयत्र साम्ये ॥२॥

(अर्थ)

जो ग्रह जन्मकाल में बलवान् हो परन्तु वर्ष में बलहीन हो तो वर्ष के अन्त में अशुभ होता है । यदि इसके विपरीत हो तो वर्ष के पूर्व भाग में अनिष्ट होता है । यदि जन्म तथा वर्ष में उभयत्र समान हो तो पूर्व तथा अन्त दोनों भागों में समान फल होता है ॥१॥

जो ग्रह जन्म में बलवान् हों परन्तु वर्ष में बलहीन हों तो वर्ष के पूर्व भाग में शुभ तथा अन्त भाग में अशुभ फल देते हैं । यदि इसके विपरीत हो तो विपरीत फल देते हैं । यदि उभयत्र समान हों तो समान फल देते हैं ॥२॥

(५) योगप्रकरणम्

दिग्दर्शनं षोडशयोगानाम्.

इक्कवालेन्दुवाराख्या वित्थशालस्ततः परम् ।
ईसराफश्च नक्तं च यमया मणऊ ततः ॥

कम्बूलं गैरिकम्बूलं खल्लासरक रद्दके ।
ततो दुःफालि कुत्थश्च दुत्थ दव्वीर तम्बिरौ ॥
कुत्थश्च दुरितश्चैते योगाः षोडश कीर्तिताः ॥

(अर्थ)

षोडश योगों के नाम यह हैं:—

(१) इक्कबाल (२) इन्दुवार (३) इत्थशाल (४) ईसराफ (५) नक्त (६) यमया (७) मणऊ (८) कम्बूल (९) गैरिकम्बूल (१०) खल्लासर (११) रद्द (१२) दुःफालिकुत्थ (१३) दुत्थदव्वीर (१४) तम्बीर (१५) कुत्थ (१६) दुरित अथवा दुरफ ॥

फलानि.

इत्थशालः स्वयं कर्ता यमया नक्त मन्यतः ।
ईसराफः स्वयं हर्ता मणऊ चान्यहस्ततः ॥
खल्लासरैः फलाभाव इति वर्षे विचिन्तयेत् ।
उत्तमोत्तमकम्बूल मुत्तमोत्तमकार्यकृत् ॥
यदीत्थशालः खचरैश्च सौम्यैः कृतोऽब्दलग्ने परिपूर्णकश्च ।
धत्ते तदासौ विविधान्विलासान् धनागमं कान्तिविवर्धनंच ॥

(अर्थ)

इत्थशाल योग का फल यह है कि वह स्वयं काम करता है । यमया तथा नक्त योग दूसरों के द्वारा काम कराते हैं । ईसराफ योग स्वयं काम बिगाडता है । मणऊ योग दूसरे के हाथ से काम बिगड़वाता है । खल्लासर योग में कुछ फल नहीं मिलता है । इन बातों का विचार वर्ष फल में करना चाहिये । उत्तम प्रकार का कम्बूल उत्तम कामों को कराता है ॥

जिस वर्ष में सौम्य ग्रहों का पूर्ण इत्थशाल हो उस वर्ष अनेक प्रकार के भोग विलास, धन की प्राप्ति तथा कान्ति की वृद्धि होती हैं ॥

ग्रहाणां दीप्तांशकाः

तिथ्यर्काग्नगाङ्कशैलखचराः सूर्यादिदीप्तांशकाः ॥
(सू. १५। चं. १२। मं. ८। बु. ७। बृ. ६ । शु. ७। श. ६)

(अर्थ)

सूर्य के १५, चन्द्रमा के १२, मंगल के ८, बुध के ७, बृहस्पति के ६, शुक्र के ७, शनि के ६ दीप्तांशक होते हैं ॥

षोडशयोगलक्षणानि.

(१) इक्कवालः

चेत्कण्टके (१।४।७।१०) पणफरे च (२।५।८।११) खगाःसमस्ताः
स्यादिक्कवाल इति राज्यसुखाप्तिहेतु. ॥

(२) इन्दुवारः

आपोक्लिमे (३।६।९।१२) यदि खगाः सकिलेन्दुवारो
नस्याच्छुभं क्वचन ताजकशास्त्रगीतः ॥

(३) इत्थशालः (मुन्थशिलः)

शीघ्रोऽल्पभागैर्घनभागमन्देऽग्रस्थे निजं तेज उपाददीत ।
स्यादित्थशालोऽयमथोविलिप्ता लिप्तार्धहीनोयदि पूर्णमेतत् ॥
लग्नेश कार्याधिपयोर्यथैष योगस्तथा कार्य मुशन्ति सन्तः ॥
लग्नेश कार्याधिपतत्सहाया यत्रस्युरस्मिन्पतिसौम्यदृष्टे ।
तदा बलाढ्यं कथयन्ति योगं विशेषत. स्नेहदृशापिसन्तः ॥

(४) ईसराफः

शीघ्रग्रहो मन्दखगा यदाग्रे
प्रयान्ति रूपान्तरभागकेन ।
तदेसराफ कथितो महद्भिः
कष्टप्रदोऽसौ मुशरीफकोवा ॥

(५) नक्तम्

लग्नेशकार्याधिपयोर्नदृष्टि र्मिथोऽथ तन्मध्यगतोऽपि शीघ्रः।
आदाय तेजो यदि पृष्ठसंस्थान्यसेदथान्यत्रहि नक्त मेतत् ॥

(६) यमया

अन्तः स्थितो मध्यगतिस्तु पश्ये द्वीप्तांशकै द्वावथ शीघ्रतस्तु।
नीत्वा महो यच्छति मन्दगाय कार्यस्य सिद्धयै यमया प्रदिष्टः॥

(७) मणऊ

वक्रः (मं.) शनिर्वा यदि शीघ्र खेटात्पश्चात्पुरस्तिष्ठति तुर्य दृष्ट्या।
एकर्क्षसप्तर्क्षभुवा दृशावा पश्यन्नथांशैरधिकोनकैश्चेत्।
तेजो हरेत्कार्यपदेत्थशाली स्थितोपिवासौ मणऊ शुभोन ॥

(८) कम्बूलम्

लग्नकार्येशयोरित्थ शालेऽत्रेन्दुरित्थशालतः।
कम्बूलं श्रेष्ठ मध्यादि भेदैर्नानाविधं स्मृतम् ॥
मिथःस्वगेहोच्चगतौ प्रधानं मध्यं स्वगेहारिगृहादिगौ च।
नीचारिगेहावधमं निरुक्तं कंबूलकं चेदथ संग्रहज्ञैः॥
रात्रीश्वरश्चेद्द्विखगेन सार्धं करोति नूनं यदि चेत्थशालम्।
कम्बूलकोऽसौ कथितस्त्रिभेदैः सम्पूर्णमध्याधमकैर्महद्भिः॥

(९) गैरिकम्बूलम्

यस्याधिकारः स्वर्क्षादिः शुभोवाप्यशुभोपिच।
केनाप्यदृश्यमूर्तिश्च स शून्याध्वग इष्यते॥
लग्नकार्येशयोरित्थ शाले शून्याध्वग शशी।
उच्चादिपदशून्यत्वान्नेत्थशालोऽस्य केनचित् ॥
यद्यन्यर्क्षं प्रविश्यैव स्वर्क्षोच्चस्थेत्थशालवान्।
गैरिकम्बूलमेतत्तु पदोनेनाशुभं स्मृतम् ॥

(१०) खल्लासरः

शून्येऽथनीन्दु रूमयो र्नेत्थशालो न वा युतिः ।
खल्लासरो न शुभदः कम्बूलफलनाशनः ॥

(११) रद्द

वक्रेणकुमणिकराभिगामिनास्तं प्राप्तंनव्ययरिपुनाशगामिना च ।
क्रूरेण क्रमिततमस्सदेत्थशालं तद्रद्दं हरति फलं प्रहर्षिणीयम् ॥

(१२) दुःफालिकुत्थः

मन्द. स्वगेहे यदिवा निजोच्चे त्रैराशिके वापि निजे प्रकुर्यात् ।
योगं चरेणानधिकारिणा चेद्दुःफालिकुत्थः शुभकृन्निरुक्तः ॥

(१३) दुत्थदव्वीरः

लग्नेश कार्याधिपती निर्बलौ योगकारकौ ।
तयोरेकः स्वगेहोच्चादिस्थे नान्येन योगकृत् ।
दुत्थतम्बीर योगोऽन्य साहाय्यात्कार्यकारकः ॥

(१४) तम्बीरः

बली राश्यन्तगोऽन्यर्क्ष गामी दीप्तांशकैर्म्महः ।
दत्तेऽन्यस्मै कार्यकर स्तम्बीरो लग्नकार्ययोः ॥

(१५) कुत्थः

खेटः स्वीयगृहादिकण्टकगत. प्राग्लग्नसंलग्नदृक्
सद्भिर्दृष्टयुतश्च पापयुतिदृक्सं वर्जितोऽभ्युद्गमः ।
मार्गी कालबलान्वित. सबलवान् सम्यक्फलावाप्तिदः
कालज्ञैर्बलवीक्षणाय गदितो योगोहि कुत्थाभिधः ॥

(१६) दुरफः (दुरितोवा)

लग्नात्षष्ठाष्टमेन्त्येऽनृजु रविगृहगो नीचगो वक्रगामी
क्रूरैर्युक्तोऽस्तगो वा यदि न मुथशिली क्रूरनीचारिभस्थैः ।

क्षुद्दृष्ट्या क्रूरदृष्टो व्ययरिपुमृतिगैरित्थशालं विधित्सुः
कुर्वन्वानिर्वलोयः स्वगृहनगभगोराहुपुच्छास्यवर्ती ॥

एते सर्वे इत्थशालस्यैव भेदाः

तं तं विशेषं प्रतिपद्यमानो निरूपितः षोडशधेत्थशालः।
यथा चतुर्विंशतिभेदशाली स्यात्केशवश्चक्रगदादिभेदैः ॥

(अर्थ)

(१) यदि केन्द्र (१.४,७ १०) तथा पणफर (२,५,८,११) स्थानों में सम्पूर्ण ग्रह हों तो इक्कवाल योग होता है। इसका फल राज्य तथा सुख की प्राप्ति है ॥

(२) यदि सब ग्रह आपोक्लिम (३,६,६,१२) स्थानों में हों तो इन्दुवार योग होता है। इसका फल ताजक शास्त्र मे शुभ नही लिखा है ॥

(३) चन्द्रमा, सूर्य्य, बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति तथाशनैश्चर की चाल एक राशि में क्रमशः २$\frac{1}{4}$ दिन, ३० दिन, ३० दिन, ३० दिन, ४५ दिन, ३६० दिन तथा ६०० दिन होती है ॥

चन्द्रमा, सूर्य्य, बुध, शुक्र, मंगल, शीघ्रा ग्रह कहलाते हैं। बृहस्पति तथा शनैश्चर मन्दी ग्रह कहलाते हैं। इन ग्रहों में भी शनि से बृहस्पति शीघ्री है, बृहस्पति से मंगल शीघ्री है, मगल से सूर्य्य, बुध तथा शुक्र शीघ्री हैं। इन तानों से भी चन्द्रमा अधिक शीघ्री है। जो ग्रह अधिक चले उसे शीघ्री कहते हैं। जिसकी चाल कम हो वह मन्दी है ॥

पूर्वोक्त प्रकार से शीघ्री तथा मन्दी ग्रहों को समझ कर प्रत्येक ग्रह के तात्कालिक अंश तिथि पत्र देख कर लिखने चाहिये ॥

जब शीघ्री ग्रह के कम अश हों, तथा मन्दी ग्रह के अधिक अश हों तथा शीघ्री ग्रह से मन्दी ग्रह आगे स्थित हो तो शीघ्री ग्रह मन्दी ग्रह को अपना तेज देता है। मन्दी ग्रह के अधिक अंशों में शीघ्री ग्रह के कम अंशों

को घटाना चाहिये। यदि घटा कर अन्तर फल पूर्वोक्त दीप्तांशकों के भीतर आवे तो इत्थशाल योग होता है ॥

यदि दोनों का अन्तर ३० कला (आधा अंश) से न्यून हो तो पूर्ण इत्थशाल होता है ॥

जिस भाव का विशेष विचार करना हो उस भाव के स्वामी का लग्नेश के साथ इत्थशाल होता है अथवा नहीं इस बात का विचार करना चाहिये। सारांश यह है कि लग्नेश का धनेश, पराक्रमेश इत्यादि बारहों भावों के स्वामियों के साथ इत्थशाल हो सकता है। परन्तु प्रत्येक भाव के स्वामी के साथ इत्थशाल विचार करने में यह मुख्य बात है कि दोनो में से एक लग्नेश अवश्य होना चाहिये नहीं तो इत्थशाल नहीं हो सकता है। इसी इत्थशाल योग का दूसरा नाम मुत्थशिल भी है। (इस बात का स्मरण रहे कि लग्नेश का षष्ठेश, अष्टमेश तथा द्वादशेश के साथ इत्थशाल विपरीत फल देता है। अर्थात् रोग वृद्धि, मृत्यु वृद्धि तथा व्यय वृद्धि करता है। किन्तु इन भावों के साथ ईसराफ योग अच्छा होता है क्योकि वह रोग हानि, मृत्यु हानि तथा व्यय हानि करता है) ॥

लग्नेश तथा कार्येश का जैसा इत्थशाल योग हो वैसे ही कार्य का भी शुभ अथवा अशुभ फल होता है ॥

लग्नेश, कार्येश, लग्नेश का मित्र तथा कार्येश का मित्र, यह चारों जिस राशि में हों वह राशि अपने स्वामी अथवा शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो इत्थशाल योग बलवान् होता है। यदि स्नेह दृष्टि हो तो और भी विशेष फल होता है ॥ (यदि वे शत्रु के घर में, पाप ग्रह से दृष्ट अथवा युक्त हों तो शुभ फल कम हो जाता है) ॥

उदाहरण—वृश्चिक लग्न है। उस पर मङ्गल (मन्दीग्रह) बैठा है। उसके १६ अंश हैं। दशम स्थान राज्य स्थान है। वहा सिंह राशि है। उसका स्वामी सूर्य्य (शीघ्री ग्रह) है। उसके अंश २ हैं। इन दोनों को घटाने से १४ शेष रहे। सूर्य के दीप्तांशक १५ हैं। अतः दीप्तांशको के

भीतर है। इसलिये इत्थशाल अथवा मुत्थशिल योग हुआ। अतः राज्य प्राप्ति होगी ऐसा कहना चाहिये।

यदि दोनों की परस्पर शुभ दृष्टि भी हो तो विशेष फल होता है॥

दीप्तांशक शीघ्रीग्रह के लेने चाहिये॥

(४) जब शीघ्र गति वाला ग्रह मन्द गति वाले ग्रह से एक अंश भी अधिक हो तो ईसराफ योग होता है। इसी का दूसरा नाम मूसरिफ भीहै। यह योग कष्ट देने वाला होता है तथा इत्थशाल योग का उलटा है॥ (यदि दोनों पाप ग्रह हों तो कार्य का नाश करते हैं, यदि शुभ ग्रह हों तो अशुभ फल नहीं होता है)॥

(५) लग्नेश तथा कार्य्येश इन दोनों की परस्पर दृष्टि न हो तथा इन दोनों के मध्य में कोई अन्य ग्रह शीघ्र गति वाला आ जावे तो वह मध्यस्थ ग्रह पीछे स्थित ग्रह से तेज लेकर आगे स्थित ग्रह को देता है। इसे नक्त योग कहते हैं॥

(६) लग्नेश तथा कार्येश इन दोनो की परस्पर दृष्टि न हो तथा दोनों के बीच में एक मन्द गति वाला ग्रह बैठा हो तो यमया योग होता है॥ इसमें कार्य की सिद्धि होती है॥

(७) जब शीघ्री ग्रह से मंगल अथवा शनैश्चर पीछे अथवा आगे स्थित होकर चतुर्थ स्थान दृष्टि से अथवा एक स्थान दृष्टि से अथवा सप्तम स्थान दृष्टि से अधिक ऊन अंशों से देखता हो तो मणऊ योग होता है। इसका फल शुभ नहीं होता है॥

(८) जब लग्नेश तथा कार्य्येश का परस्पर इत्थशाल हो तथा उन दोनों में से किसी एक के साथ चन्द्रमा भी इत्थशाल करे तो कम्बूल योग होता है। यदि दोनों स्वगृही अथवा उच्च के हों तो उत्तम कम्बूल होता है। यदि एक स्वगृही दूसरा शत्रु गृही हो तो मध्यम कम्बूल होता है। यदि दोनों नीच अथवा शत्रुगृही हों तो अधम कम्बूल योग होता है। (इसके १६ भेद होते हैं)॥

(९) जो ग्रह स्वगृही, अपने उच्च का, अपनी हद्दा का, अपने द्रेष्काण का, अपने नवांश का शुभ फलों का अधिकार वाला न हो तथा अशुभ का भी अधिकार वाला न हो अर्थात अपने नीच घर तथा अपने शत्रु के घर वाला, अशुभ फलों का देने वाला न हो, तथा किसी शुभ ग्रह से अथवा पाप ग्रह से देखा न जावे तो वह शून्य मार्गी कहा जाता है ॥

जब लग्नेश तथा कार्य्येश का इत्थशाल हो तथा चन्द्रमा शून्यमार्गी हो, चन्द्रमा के साथ लग्नेश तथा कार्य्येश इन में से किसी एक का इत्थशाल योग न हो। ऐसा चन्द्रमा यदि राशि के अन्त में होकर आगे की राशि में प्रवेश करे। जिस राशि में प्रवेश करे वह राशि जिस ग्रह का अपना घर अथवा अपना उच्च स्थान हो वह ग्रह यदि इसी राशि में स्थित हो और उसी ग्रह के साथ चन्द्रमा इत्थशाल करे तो वह गैरिकम्बूल होता है। जो अन्य राशि में स्थित चन्द्रमा उसी राशि में स्थित स्वगृह आदि अधिकारों से रहित ग्रह के साथ इत्थशाल करे तो अशुभ फल देने वाला होता है ॥

(१०) जब चन्द्रमा शून्य मार्गी हो (ऊपर ९ देखो) और लग्नेश तथा कार्य्येश किसी के साथ इत्थशाल न करे अथवा लग्नेश कार्येश किसी के साथ चन्द्रमा न हो तो खल्लासर योग होता है। यह शुभ फल देने वाला नहीं है तथा कम्बूल के फल का नाश करता है ॥

(११) जब निर्बल अर्थात् वक्री ग्रह, अस्तङ्गत ग्रह, अथवा ६ ८,१२ स्थानों में स्थित क्रूर ग्रह, (नीच ग्रह, शत्रुगृही ग्रह) का किसी भाव के स्वामी के साथ इत्थशाल हो तो रद्द योग होता है। यह सब फल को हर लेता है ॥

(१२) जब मन्द गति वाला ग्रह अपने घर का हो उच्च का हो अथवा अपने द्रेष्काण, हद्दा, तथा नवांश में हो और शुभ अधिकार से रहित शीघ्री ग्रह के साथ इत्थशाल करे तो दुःफालि कुत्थ योग होता है। इसका फल शुभ है ॥

(१३) जब लग्नेश तथा कार्य्येश दोनों निर्बल हों (अस्त, नीच, शत्रु राशि के हों), उनमें से एक अपने घर वाले अथवा उच्च आदि बल वाले किसी तीसरे ग्रह के साथ इत्थशाल करे तो दुत्थ दब्वीर योग होता है। यह योग दूसरे के द्वारा कार्य्य सिद्ध कराता है॥

(१४) जब लग्नेश तथा कार्येश का इत्थशाल न हो और उनमें से एक ग्रह बलवान् (अपने घर का, उच्च का इत्यादि) होकर राशि के अन्त में हो और दूसरी राशि में जाने को तत्पर हो तो वह अपना तेज दूसरे को देता है। इसको तम्बीर योग कहते हैं और यह कार्य्य करने वाला होता है॥

(१५) जो ग्रह अपने घर का, (अपने उच्च, नवांश, हद्दा, द्रेष्काण का) हो अथवा केन्द्र में हो, लग्न में हो अथवा लग्न को देखता हो, अथवा अच्छे ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त हो, पाप ग्रहो की (१।४।७।१०) दृष्टि अथवा उनके योग से वर्जित हो, उदयी हो, मार्गी हो, काल बल से युक्त हो वह ग्रह बलवान् होता है और अच्छा फल देने वाला होता है। ("सायंच सितेन्दु भौमाः। यदोदयंते पररात्रिभागे जीवार्कजावह्निनरा सवीर्याः। अन्येनिशि" ॥ अर्थात् शुक्र, चन्द्रमा, मङ्गल यदि उदित हों तो सायङ्काल में बलवान् होते हैं। वृहस्पति तथा शनैश्चर अर्धरात्रि के उपरान्त बली होते हैं। पुरुष संज्ञक ग्रह अर्थात् सूर्य, मङ्गल, वृहस्पति दिनमें बलवान् होते हैं। चन्द्र, बुध, शुक्र, शनि, रात्रि में बली होते हैं॥ "स्थिरर्क्षेच बलेन युक्ता." अर्थात् स्थिर राशि (वृष, सिंह वृश्चिक, कुम्भ) में स्थित ग्रह बलवान् होते हैं। "स्त्रियश्चतुर्थात्पुरुषावियद्भाद् भषट्कगा ओजभगाः पुमांसः। समे परे स्युर्बलिनो विमृश्य विशेषमेतेषुफलं निगद्यम्" ॥ अर्थात् स्त्रीसंज्ञक ग्रह ४ से ६ पर्यन्त, पुरुषसंज्ञक ग्रह १० से ३ पर्यन्त बली होते हैं। विषमराशि में पुरुषग्रह, समराशि में स्त्री ग्रह बली होते हैं॥ सबसे बलवान् लग्नस्थग्रह, उसके अभाव में केन्द्रस्थ ग्रह, उसके अभाव में पणफरस्थ (२।५।८।११) ग्रह बलवान् होता है॥ आपोक्लिम

(३।६।६।१२) का ग्रह सबसे निर्बल होता है इसलिये यहां नहीं बतलाया गया है) ॥ ग्रहों का बल विचारने के लिये यह कुत्थ योग होता है ॥

(१६) जो ग्रह लग्न से ६।८।१२ स्थानों में स्थित हो, वक्री हो, शत्रु गृही हो, नीच राशि का हो, (अपने घर तथा उच्च आदि का न हो), वक्राभिलाषी तथा क्रूर ग्रहों से युक्त हो, अस्तङ्गत हो, पाप ग्रह नीच ग्रह तथा शत्रु क्षेत्री ग्रहों से इत्थशाल करता हो, क्रूर ग्रहों से क्षुत दृष्टि (१।४।७।१०) से देखा जाता हो, १२।६।८ स्थानों में स्थित ग्रहों से इत्थशाल करने वाला हो, अपने घर से सातवें स्थान में स्थित हो (जैसे मेष राशि मङ्गल का घर है, उससे सातवीं तुला राशि है । यदि तुला राशि में मङ्गल हो तो बलहीन होगा), तथा जो ग्रह राहु के पुच्छ तथा मुख में हो (अथवा जो ग्रह लग्न को न देखे) वह ग्रह बलहीन होता है । इसको दुरफ अथवा दुरित योग कहते हैं ॥ (सूर्य से द्वादश स्थान में स्थित, तथा तुला के उत्तरार्ध और वृश्चिक के पूर्वार्ध में स्थित, तथा क्षीण चन्द्रमा बलहीन होता है॥)

ये सब योग इत्थशाल योग के ही भेद हैं ।

जैसे विष्णु भगवान् एक ही हैं परन्तु, शङ्ख, चक्र गदा आदि भेदों से उनके २४ भेद होते हैं । इसी प्रकार ये पूर्वोक्त योग सब इत्थशाल योग के ही भेद हैं ॥

(६) वर्षेशादिफलप्रकरणम्

वर्षेशफलम्.

सूर्येऽब्दपे बलिनि राज्यसुखात्मजार्थं
लाभः कुलोचितपदं परिवारसौख्यम् ।
पुण्यिर्यशोगृहसुखं विविधा प्रतिष्ठा
शत्रुर्विनश्यति फलं जनिखेटयुक्त्या ॥१॥
मध्ये रवौ फलमिदं निखिलं तु मध्यं
स्वल्पं सुखं स्वजनतोऽपि विवाद माहुः ।

स्थानच्युतिर्न च सुखं कृशता शरीरे
भीतिर्नृपान्मुथशिलो न शुभो यदि स्यात् ॥२॥
सूर्ये बलेन रहितेऽब्दपतौ विदेश
यानं धनक्षयशुचोऽरिभयं च तन्द्रा।
लोकापवादभय मुग्ररुजोऽतिदुःखं
पित्रादितोऽपि न सुखं सुतमित्रभीतिः ॥३॥
वीर्यान्विते शशिनि वित्तकलत्रपुत्र
मित्रालयस्य विविधं सुखमाहुरार्याः।
स्रग्गन्धमौक्तिकदुकूलसुखानि भूति
र्लाभः कुलोचितपदस्य नृपैः सखित्वम् ॥४॥
वर्षाधिपे शशिनि मध्यफले फलानि
मध्यान्यमूनि रिपुता सुतमित्रवर्गे।
स्थानान्तरे गति रथो कृशता शरीरे
श्लेष्मोद्भवश्च यदि पापकृतेसराफः ॥५॥
नष्टेऽब्दपे शशिनि शीतकफादिरोगं
चौर्यादिभी स्वजनविग्रहमप्युशन्ति।
दूरे गतिः सुतकलत्रसुखाप्तयश्च
स्यान्मृत्युतुल्य मतिहीनबले शशाङ्के ॥६॥
भौमेऽब्दपे बलिनि कीर्तिजयारिनाश
सेनापतित्वरणनायकताप्रतिष्ठाः।
लाभः कुलोचितधनस्य नमस्यता च
लोकेषु मित्रसुतवित्तकलत्रसौख्यम् ॥७॥
मध्येऽब्दपेऽवनिसुते रुधिरस्रुतिश्च
कोपाधिकः शकटशस्त्रहतिः क्षतिश्च।
स्वामित्व मात्मगणतो बलगौरवं च
मध्यं फलं निखिल मुक्तफलं विचिन्त्यम् ॥८॥

हीनेऽब्दपेऽसृजि भयं रिपुतस्कराग्ने
र्लोकापवादभय मात्मधियो विनाशः ।
कार्यस्य हानिररतिरोगभयं विदेश
यानं क्षयोऽप्यनयतो गुरुदग्धभावे ॥९॥
सौम्येऽब्दपे वलवति प्रतिवादलेख्य
सच्छास्त्रसद्व्यवहृतौ विजयोऽर्थलाभः ।
ज्ञानं कलागणितवैभवं गुरुत्वं
राजाश्रयेण नृपता नृपमन्त्रिता वा ॥ १० ॥
अब्दाधिपे शशिसुते खलु मध्यवीर्ये
स्यान्मध्यमं निखिलमेतदथाध्वयानम् ।
वाणिज्यमर्थात्मजमित्रसौख्यं
सौम्येत्यशालवशतोऽपरथा न सम्यक् ॥११॥
सौम्येऽब्दपेऽधमवले वलवुद्धिहानि
धर्मक्षय. परिभवो निजवाक्यदोषात् ।
विक्षेपतो विपदतीव मृषैव साक्ष्यं
हानिः परव्यवहृतेः सुतवित्तमित्रैः ॥१२॥
जीवेऽब्दपे वलयुते परिवारसौख्यं
धर्मो गुणग्रहिलता धनकीर्तिपुत्राः ।
विश्वास्यता जगति सन्मतिविक्रमाप्ति
र्लाभो निधेर्नृपतिगौरवमप्यरिघ्नम् ॥१३॥
अब्दाधिपे सुरगुरौ किल मध्यवीर्ये
स्यान्मध्यमं फलमिदं नृपसङ्गमश्च ।
ज्ञानं च शास्त्रपरताप्यशुभेसराफे
दारिद्र्य मर्थविलयश्च कलत्रपीडा ॥ १४ ॥
जीवेऽब्दपेऽधमवले धनधर्मसौख्य

हानिस्त्यजन्ति सुतमित्रजनाः सभार्याः ।
लोकापवादभय माकुलत निकृष्ट
वृत्ति स्तनौ कफरुजो रिपुभीः कलिश्च ॥१५॥
शुक्रेऽब्दपे वलिनि नीरुजता विलास
सच्छास्त्ररत्नमधुराशनभोगतोषाः ।
क्षेमप्रतापविजया वनिताविलासो
हास्यं नृपाश्रयवशेन धनं सुखंच ॥१६॥
अब्दाधिपे भृगुसुते खलुमध्यवीर्ये
स्यान्मध्यमं निखिल मेतद्थाल्पवृत्तिः ।
गुप्तं च दुःख मखिलं सुनिवद्धवृत्तिः
पापारिवीक्षितयुते विपदोऽर्थनाशः ॥१७॥
शुक्रेऽब्दपेऽधमवले मनसोऽतितापो
लोकोपहासविपदो निजवृत्तिनाशः ।
द्वेषः कलत्रसुतमित्रजनेषु कष्टा
दन्नाशनं च विफलक्रियया न सौख्यम् ॥ १८ ॥
मन्देऽब्दपे वलिनि नूतनभूमिवेश्म
क्षेत्राप्ति रर्थनिचयो यवनावनीशात् ।
आरामनिर्मितजलाशयसौख्यमङ्ग
पुष्टिः कुलोचितपदाप्तिगुणाग्रणीत्वे ॥१९॥
अब्दाधिपे रविसुते खलु मध्यवीर्ये
स्यान्मध्यमं निखिलमन्नभुजिस्तु कष्टात् ।
दासोष्ट्रमाहिपकुलान्यरतिस्तु लाभः
पापं फल भवति पापयुगीक्षणेन ॥२०॥
मन्दे वलेन रहितेऽब्दपतौ क्रियाणां
वन्ध्यत्व मर्थविलयो विपदोऽरिभीतिः ।
स्त्रीपुत्रमित्रजनवैरकदन्नभुक्तः
सौम्येत्थशालयुजि सौख्यमपीषदाहुः ॥२१॥

(अर्थ)

जब सूर्य्य वर्षेश हो तथा बलवान् हो तो राज्य, सुख, पुत्र, तथा धन का लाभ होता है, अपने कुल के अनुसार पदवी मिलती है, परिवार से सुख मिलता है, शरीर पुष्ट होता है, यश होता है तथा गृह से सुख मिलता है, अनेक प्रकार की प्रतिष्ठा प्राप्ति होती है तथा शत्रु का नाश होता है। यदि जन्म में भी सूर्य बलवान् हो तो पूर्ण फल मिलता है ॥१॥

जब वर्षेश सूर्य्य मध्यम बल वाला हो तो पूर्वोक्त सूर्य्य का फल मध्यम होता है, सुख कम मिलता है, आपसी लोगों से झगडा होता है, स्थान से च्युति होती है, सुख नहीं मिलता है, शरीर कृश होता है, राजा से भय होता है, यदि शुभ इत्थशाल हो तो पूर्वोक्त बुरे फल कम हो जाते हैं ॥२॥

जब वर्षेश सूर्य्य बलहीन हो तो परदेश में यात्रा होती है, धन का नाश, शोक, शत्रुभय, आलस्य, लोकापवाद का भय, उग्र रोग, अति दुःख होते हैं, पिता आदि से सुख नहीं मिलता है तथा पुत्र और मित्र से भय होता है ॥३॥

जब चन्द्रमा वर्षेश होकर बलवान् पड़े तो धन, स्त्री, पुत्र, मित्र, घर से अनेक प्रकार के सुख मिलते हैं, माला, सुगन्ध, मोती, वस्त्रों से सुख मिलता है, सम्पत्ति मिलती है, अपने कुल के अनुसार पदवी का लाभ होता है तथा राजाओं से मित्रता होती है ॥४॥

जब वर्षेश चन्द्रमा मध्यम बल वाला हो तो पूर्वोक्त फल मध्यम होते हैं, पुत्र तथा मित्र से शत्रुता होती है, दूसरे स्थान में जाना पड़ता है, शरीर दुर्बल हो जाता है, यदि पाप ग्रह का इसराफ हो तो कफ रोग की उत्पत्ति भी होती है ॥५॥

जब वर्षेश चन्द्रमा बलहीन हो तो शीत, कफ आदि रोग होते हैं, चोर आदि का भय होता है, आपसी लोगों से झगड़ा होता है, दूर देश में जाना पड़ता है, पुत्र तथा स्त्री से सुख मिलता है, यदि चन्द्रमा बहुत ही बलहीन हो तो मृत्यु के समान कष्ट होता है ॥६॥

जब वर्षेश मंगल बलवान् हो तो यश, जय तथा शत्रु नाश होते हैं, मनुष्य सेनापति होता है, संग्राम में अग्रणी होता है, लोगों में प्रतिष्ठा होती है, अपने कुल के अनुसार धन का लाभ होता है, लोग आदर करते हैं, मित्र, पुत्र, धन, तथा स्त्री का सुख मिलता है ॥७॥

जब मंगल वर्षेश होकर मध्यम बल वाला हो तो शरीर से रुधिर निकलता है, क्रोध अधिक होता है, गाड़ी अथवा हथियार से चोट लगती हैं, अथवा घाव होता है, अपने लोगों में प्रभुता मिलती है, बल तथा आदर की प्राप्ति होती हैं, पूर्वोक्त सब फल मध्यम होते हैं ॥८॥

जब वर्षेश मंगल बलहीन हो तो शत्रु, तस्कर अथवा अग्नि का भय होता है, लोग कलङ्क लगाते हैं, अपनी बुद्धि का नाश होता है, जो काम मनुष्य करे उसमें विघ्न हो जाते हैं, रोग का अत्यन्त भय होता है, परदेश में जाना पड़ता है, यदि बृहस्पति की दृष्टि उस पर न हो तो क्षयरोग भी होता है ॥९॥

जब बुध वर्षेश होकर बलवान् हो तो मनुष्य को लिखने से, अच्छे शास्त्र पढ़ने से, अच्छे व्यवहार से धन का लाभ तथा विजय होता है, कला, गणित अथवा वैद्यक का ज्ञान होता है, लोगों में प्रतिष्ठा होती है, राजा की सहायता से राज्य मिलता है, अथवा मनुष्य राजा का मन्त्री होता है ॥१०॥

जब वर्षेश बुध मध्यम बल वाला हो तो पूर्वोक्त फल मध्यम होते हैं तथा मार्ग में चलना पड़ता है, व्यापार करने से लाभ होता है, पुत्र तथा मित्र से सुख मिलता है, यदि अच्छा इत्थशाल हो तो पूर्वोक्त फल होते हैं अन्यथा अशुभ फल मिलते हैं ॥११॥

जब वर्षेश बुध बलहीन हो तो बल तथा बुद्धि की हानि होती है, धर्म का नाश होता है, अपने वचन के दोष से अनादर सहना पड़ता है, चित्त में विक्षेप होने से बड़ी आपत्ति होती है, झूठी गवाही देनी पड़ती है, दूसरे किसी मनुष्य के कारण पुत्र, धन, तथा मित्र की हानि होती है ॥१२॥

जब वर्षेश बृहस्पति बलवान् हो तो परिवार से सुख मिलता है, धर्म में चित्त लगता है, दूसरे के गुणों को ग्रहण करने की इच्छा होती है, धन, यश, तथा पुत्र का लाभ होता है, संसार के लोग उस मनुष्य पर विश्वास करते हैं, अच्छी बुद्धि तथा पराक्रम की प्राप्ति होती है, निधि का लाभ होता है, राजा से आदर मिलता है, तथा शत्रु का नाश होता है ॥१३॥

जब बृहस्पति वर्षेश होकर मध्यम बल वाला हो तो पूर्वोक्त फल मध्यम होते हैं, राजा से समागम होता है, पाण्डित्यता होती है, शास्त्र में प्रीति होती है, परन्तु यदि अशुभ ईसराफ योग हो तो दारिद्रय, धन का नाश तथा स्त्री को पीड़ा होती है ॥१४॥

जब बृहस्पति वर्षेश हो तथा बलहीन हो तो धन, धर्म तथा सुख की हानि होती है, अपने पुत्र, मित्र तथा स्त्री उस मनुष्य को छोड़ देते हैं, लोगों से कलङ्क लगने का भय होता है, चित्त व्याकुल रहता है, अत्यन्त कष्ट से निर्वाह होता है, शरीर में कफ रोग होता है, शत्रु से भय होता है, तथा लोगों से झगड़ा होता है ॥१५॥

जब वर्षेश शुक्र बलवान् हो तो शरीर में रोग नहीं होते हैं, अनेक प्रकार के भोग विलास मिलते हैं, अच्छे शास्त्र को पढ़ने में प्रीति होती है, रत्न, मीठे भोजन भोग तथा सन्तोष होते हैं, कल्याण होता है, प्रताप तथा विजय प्राप्त होते हैं, स्त्री के साथ भोग विलास तथा हास्य प्राप्त होते हैं, राजा के सहार से धन तथा सुख मिलते हैं ॥१६॥

जब शुक्र वर्षेश हो तथा मध्यम बल वाला हो तो पूर्वोक्त फल मध्यम होते हैं, आजीविका कम होती है, गुप्त दुःख होता है, किफायत से चलना पड़ता है, यदि पाप ग्रह अथवा शत्रु ग्रहों से शुक्र दृष्ट अथवा युक्त हो तो अनेक प्रकार की आपत्तियां होती हैं तथा धन का नाश होता है ॥१७॥

जब वर्षेश शुक्र बलहीन हो तो चित्त में अत्यन्त सन्ताप होता है, लोगों में हंसी होती है, आपत्तियां होती हैं, अपनी आजीविका का नाश

होता है, स्त्री, पुत्र, मित्रों से द्वेष भाव होता है, कष्ट से भोजन मिलते हैं, जो काम किया जाय उसमें फल प्राप्ति न होने से सुख नहीं मिलता है ॥१८॥

जब शनैश्चर वर्षेश होकर बलवान् हो तो नई भूमि, नये घर अथवा क्षेत्र की प्राप्ति होती है, म्लेच्छ राजा के द्वारा धन संग्रह होता है, उद्यान तथा जलाशय बनाने से सुख मिलता है, शरीर पुष्ट होता है, अपने कुल के अनुसार पदवी की प्राप्ति होती है, गुणी लोगों में सबसे पहले गिनती होती है ॥ १९ ॥

जब वर्षेश शनैश्चर मध्यम बलवाला हो तो सब पूर्वोक्त फल मध्यम होते हैं, कष्ट से भोजन के निमित्त अन्न मिलता है, दास, ऊंट, भैंसा से प्रीति होती है तथा लाभ होता है, यदि पाप ग्रह से शनैश्चर युक्त अथवा दृष्ट हो तो अशुभ फल होता है ॥२०॥

जब शनैश्चर वर्षेश हो तथा बलहीन हो तो मनुष्य जो कुछ काम करे वह निष्फल होता है, धन का नाश होता है, आपत्तिया होती हैं, शत्रु भय होता है. स्त्री पुत्र तथा मित्रों से विरोध होता है, खाने का अच्छा अन्न नहीं मिलता है, यदि अच्छे ग्रह के साथ इत्थशाल हो तो थोड़ा सुख भी मिलता है ॥ २१ ॥

मुन्थाफलम्

शत्रु क्षयं मानसतुष्टिलाभं प्रतापवृद्धिं नृपतेः प्रसादम् ।
शरीरपुष्टिं विविधैः धमांश्च ददाति वित्तं मुथहा तनुस्था ॥१॥
उत्साहतोऽर्थागमनं यशश्च स्वबन्धुसन्माननृपाश्रयौच ।
मिष्टान्नभोगोवलपुष्टिसौख्यं स्यादर्थभावे मुथहा यदाब्दे ॥२॥
पराक्रमाद्वित्तयशःसुखानि सौन्दर्यसौख्यं द्विजदेवपूजा ।
सर्वोपकारस्तनुपुष्टिकीर्ती नृपाश्रयश्चेन्मुथहा तृतीया ॥३॥
शरीरपीडा रिपुभीः स्ववर्गवैरं मनस्तापनिरुद्यमत्वे ।
स्यान्मुन्थहायां सुखभावगायां जनापवादामयवृद्धिदुःखम् ॥४॥

यदीन्थिहा पञ्चमगाव्द्वेशे सद्बुद्धिसौख्यात्मजवित्तलाभाः ।
प्रतापवृद्धिर्विविधा विलासा देवद्विजार्चा नृपतेः प्रसादः ॥५॥
कृशत्व मङ्गेषु रिपूदयश्च भयं रुजस्तस्करतो नृपाद्वा ।
कार्यार्थनाशो मुथहारिगाचेद् दुर्बुद्धिवृद्धिः स्वकृतेऽनुतापः ॥६॥
कलत्रबन्धुव्यसनारिभीतिरुत्साहभङ्गो धनधर्मनाशः ।
यु नोपगा चेन्मुथहा तनोः स्याद् जामनोमोहविरुद्धचेष्टा ॥७॥
भयंरिपोस्तस्करतो विनाशो धर्मार्थयोर्दुर्व्यसनामयौच ।
मृत्युस्थिताचेन्मुथहानराणां वलक्षयः स्याद्गमनं सुदूरे ॥८॥
स्वामित्वमर्थापगमोनृपेभ्यो धर्मोत्सवः पुत्रकलत्रसौख्यम् ।
देवद्विजार्चा परमं यशश्च भाग्योदयोभाग्यगतेन्थिहायाम् ॥९॥
नृपप्रसादं स्वजनोपकारं सत्कर्मसिद्धिं द्विजदेवभक्तिम् ।
यशोऽभिवृद्धिं विविधार्थलाभं दत्तेऽम्बरस्थामुथहापदाप्तिम्॥१०
यदीन्थिहा लाभगता विलास सौभाग्यनैरुज्यमनःप्रसादाः ।
भवन्ति राजाश्रयतो धनानि सन्मित्रपुत्राभिमताप्तयश्च ॥११॥
व्ययोऽधिको दुष्टजनैश्च सङ्गो रुजा तनौ विक्रमतोऽर्थसिद्धिः ।
धर्मार्थहानिर्मुथहा व्ययस्था यदा तदा स्याज्जनतोऽपि वैरम् ॥१२॥

(अर्थ)

जब मुन्था लग्न में हो तो शत्रु का नाश होता है, चित्त में सन्तोष होता है, प्रताप की वृद्धि होती है, राजा की प्रसन्नता होती है, शरीर पुष्ट होता है, अनेक प्रकार के उद्यम होते हैं, तथा धन की प्राप्ति होती है ॥१॥

जब वर्ष में मुन्था धनस्थान में हो तो उत्साह पूर्वक धनकी प्राप्ति होती है, लोगों में यश होता है, अपने वान्धवों में आदर मिलता है, राजा का आश्रय मिलता है, मिष्टान खाने में आता है, शरीर वलवान् तथा पुष्ट होता है तथा सुख मिलता है ॥ २ ॥

जब मुन्था तीसरे स्थान में हो तो पराक्रम से धन, यश तथा सुख

मिलते हैं, सुन्दरता तथा सुख मिलते हैं, ब्राह्मण तथा देवताओं का पूजन होता है. सब लोगों का उपकार होता है, शरीर में पुष्टि होती है, तथा यश फैलता है, राजा से सहायता मिलती है ॥ ३ ॥

जब मुन्था सुख स्थान में हो तो शरीर में पीड़ा, शत्रु भय, आपसी मे झगड़ा, चित्त में सन्ताप, उद्यम का अभाव, लोगों में बदनामी, रोगों की वृद्धि तथा दुःख होते हैं ॥ ४ ॥

जब मुन्था पञ्चम स्थान में हो तो अच्छी बुद्धि पुत्र तथा धन का लाभ, प्रताप की वृद्धि, अनेक प्रकार के भोग विलास, देवता तथा ब्राह्मणों की पूजा तथा राजा की प्रसन्नता प्राप्त होते हैं ॥५॥

जब मुन्था शत्रु स्थान में हो तो शरीर कृश हो जाता है, शत्रु खड़े होते हैं, रोग, तस्कर, अथवा राजा से भय होता है, कार्य्य तथा धन का नाश होता है, दुष्ट बुद्धि बढ़ती है, अपने किये हुए पर पछताना पड़ता है ॥ ६ ॥

जब मुन्था सप्तम स्थान में हो तो स्त्री तथा बान्धवों से दुःख मिलता है, शत्रु भय होता है, उत्साह भङ्ग हो जाता है, धन तथा धर्म का नाश होता है, रोग होते हैं, चित्त में मोह हो जाता है, तथा उलटे काम के करने में रुचि होती है ॥७॥

जब मुन्था अष्टम स्थान में स्थित हो तो शत्रु भय होता है, चोर के द्वारा नाश होता है, धर्म तथा धन का नाश होता है, बुरे कामों के करने में रुचि होती है, रोग होता है, बल का नाश होता है तथा बहुत दूर जाना पड़ता है ॥८॥

जब मुन्था भाग्य स्थान में स्थित हो तो लोगों में प्रभुता, राजा से धन का लाभ, धर्म में उत्सव, पुत्र तथा स्त्री से सुख, देवता तथा ब्राह्मणों की पूजा, बड़ा यश तथा भाग्योदय होते हैं ॥ ९ ॥

जब मुन्था राज्य स्थान में हो तो राजा प्रसन्न होता है, आपसी लोगों

का उपकार होता है, अच्छे कामो में सिद्धि प्राप्त होती है, ब्राह्मण तथा देवताओं में भक्ति होती है, यश की वृद्धि होती है, अनेक प्रकार से धन का लाभ होता है तथा अच्छी पदवी मिलती है ॥ १० ॥

जब मुन्था लाभ स्थान में हो तो भोग विलास, सौभाग्य, रोगों की हानि, चित्त की प्रसन्नता, राजा के आश्रय से धन की प्राप्ति, अच्छे मित्र तथा पुत्र की प्राप्ति और मनोरथों की सिद्धि होती है ॥११॥

जब मुन्था व्यय स्थान में हो तो अधिक व्यय होता है, दुष्टों के साथ सङ्ग होता है, शरीर में रोग होता है, पराक्रम से धन की प्राप्ति होती है, धर्म तथा धन का नाश होता है, तथा लोगों से विरोध होता है ॥१२॥

मुन्थाफलं सामान्यतः

वर्षलग्नात्सुखास्तान्त्य रिपुरन्ध्रेष्वशोभना ।
पुण्यकर्मायगा स्वाम्यं दत्तेऽन्यत्रोद्यमाद्धनम् ॥

(अर्थ)

वर्ष लग्न से ४,७,१२,६,८ स्थानों में स्थित मुन्था अशुभ होती है, ९,१०,११ स्थानों में स्थित मुन्था स्वामित्व को देती है, शेष स्थानों में स्थित मुन्था उद्यम करने से धन को देती है ॥

सूर्यादिगृहस्थमुन्थाफलम्.

यदीन्थिहा सूर्यगृहे युताचेत्सूर्येण राज्यं नृपसङ्गमं च ।
दत्ते गुणानां परमामवाप्तिं स्थानान्तरस्येति फलं दृशोऽपि ॥१॥
चन्द्रेण युक्तेन्दुगृहेऽथदृष्टा चन्द्रेण वा धर्मयशोऽभिवृद्धिम् ।
नैरुज्य सन्तोष मतिप्रवृद्धिं ददाति पापेक्षणतोऽतिदुःखम् ॥२॥
कुजेन युक्ता कुजभे कुजेन दृष्टा च पित्तोष्णरुजं करोति ।
शस्त्राभिघातं रुधिरप्रकोपं सौरीक्षिता सौरिगृहे विशेषात् ॥३॥
बुधेन शुक्रेण युतेक्षितापि तद्भेऽपिवा स्त्रीमतिलाभसौख्यम् ।
धर्मं यशश्चाप्यतुलं विधत्ते कष्टं च पापेक्षणयोगतः स्यात् ॥४॥

युक्तेक्षिता वा गुरुणा गुरोर्भे यदीन्थिहा पुत्रकलत्रसौख्यम् ।
ददाति हेमाम्बररत्नभोगं शुभेत्थशालादिह राज्यलाभः ॥५॥
शनेर्गृहे तेन युतेक्षिता वा यदीन्थिहा वातरुजं विधत्ते ।
मानक्षयं वह्निभयं धनस्य हानिं च जीवेक्षणतः शुभाप्तिः ॥६॥

(अर्थ)

जब मुन्था सूर्य के घर में हो अथवा सूर्य से युक्त अथवा दृष्ट हो तो राजा से सङ्गम होता है, गुणों की प्राप्ति होती है, तथा स्थानान्तर होता है ॥१॥

जब मुन्था चन्द्रमा से युक्त हो अथवा चन्द्रमा के घर में हो अथवा चन्द्रमा से दृष्ट हो तो धर्म तथा यश की वृद्धि होती है, शरीर रोगरहित होता है, चित्त में सन्तोष होता है, बुद्धि बढ़ती है, यदि पाप ग्रह से दृष्ट हो तो अति दुःख मिलता है ॥२॥

जब मुन्था मङ्गल से युक्त हो, अथवा मङ्गल के घर में हो, अथवा मङ्गल से दृष्ट हो तो पित्त रोग होता है, शस्त्र से चोट लगती है, रुधिर का प्रकोप होता है, यदि शनैश्चर से दृष्ट हो अथवा शनैश्चर के घर में हो तो पूर्वोक्त फल अधिक हो जाते हैं ॥३॥

जब मुन्था बुध अथवा शुक्र से युक्त हो अथवा दृष्ट हो अथवा उनके घर की हो तो स्त्री, मति, लाभ सुख, धर्म तथा यश मिलते हैं, यदि पाप ग्रह की दृष्टि हो अथवा पाप ग्रह का योग हो तो कष्ट मिलता है ॥४॥

जब मुन्था बृहस्पति से युक्त अथवा दृष्ट हो अथवा बृहस्पति के घर की हो तो पुत्र तथा स्त्री से सुख मिलता है, सुवर्ण, वस्त्र तथा रत्नों का भोग मिलता है। यदि शुभ इत्थशाल योग हो, तो राज्य का लाभ होता है ॥ ५ ॥

यदि मुन्था शनैश्चर के घर की हो अथवा शनैश्चर से युक्त अथवा दृष्ट हो तो वात रोग, मान हानि, अग्नि भय होते हैं तथा धन का नाश होता है, यदि बृहस्पति की उस पर दृष्टि हो तो शुभ फल की प्राप्ति होती है ॥६॥

राहोर्मुखपुच्छं फलच

भोग्या राहोर्लवास्तस्य मुखं पृष्ठं गता लवाः ।
ततः सप्तमभं पुच्छं विमृश्येति फलं वदेत् ॥१॥
तमोमुखे चेन्मुथहा धनाप्तिं यशः सुखं धर्मसमुन्नतिश्च ।
सितेज्ययोगेक्षणतः पदाप्तिं सुवर्ण रत्नाम्बरलब्धयश्च ॥२॥
तत्पृष्ठभागे न शुभप्रदा स्यात्तत्पुच्छभागाद्रिपुभीतिकष्टम् ।
पापेक्षणादर्थसुखस्य हानिश्चेज्जन्मनीत्थं गृहवित्तनाशः ॥३॥

(अर्थ)

राहु के जो भोग्य अंश होते हैं उनको राहु का मुख कहते हैं। जो अंश भुक्त हो गये हों उनको पृष्ठ कहते हैं। जिस राशि पर राहु स्थित हो उससे सातवीं राशि को (अर्थात् जहा केतु हो) पुच्छ कहते हैं। इन सब बातों का विचार करके फल कहना चाहिये ॥

राहु सदा वक्री ग्रह है अर्थात् उलटी चाल चलता है। जैसे और ग्रह एक से ३० अंश तक भोग करते हैं राहु उसका उलटा अर्थात् ३० से १ अंश तक भोग करता है। जैसे राहु वृष राशि के ८ अंशों पर है तो ८ अंश मुख संज्ञक हैं और जो २२ अंश भुक्त हो गये हैं उनको पृष्ठ कहते हैं, वृष राशि से वृश्चिक राशि सातवीं होती है इसलिए वृश्चिक राशि पुच्छ होगी ॥१॥

जब मुन्था राहु के मुख में हो तो धन की प्राप्ति, यश, सुख तथा धर्म की वृद्धि होती है। यदि शुक्र अथवा बृहस्पति से युक्त अथवा दृष्ट हो तो अच्छे पद की प्राप्ति होती है सुवर्ण, रत्न, तथा वस्त्रों का लाभ होता है ॥ २ ॥

राहु के पृष्ठ में मुन्था हो तो शुभ फल नहीं मिलता है। यदि राहु के पुच्छ में हो तो शत्रु, भय तथा कष्ट होते हैं। यदि पाप ग्रह की दृष्टि हो तो धन तथा सुख की हानि होती है। यदि जन्म में भी ऐसा ही हो तो गृह तथा धन का नाश होता है ॥३॥

पुनरपिविशेषफल मुन्थायाः

क्रूरैर्दृष्ट. क्षुतदृशा यो भावो मुथहात्र चेत् ।
शुभं तद्भावजं नश्येदशुभं चापि वर्धते ॥१॥
शुभस्वामियुक्तेक्षितावीर्ययुक्सेन्थिहास्वामिसौम्यैस्थशालंप्रपन्ना।
शुभंभावजं वर्धयन्नाशुभं सान्यथात्वेऽन्यथा भावऊह्यो विमृश्य ॥२॥
जनुर्लग्नतोऽस्तान्त्यषण्मृत्युबन्धु स्थिताऽद्रे हता क्रूरखेटैस्तुसाचेत् ।
विनश्येत्सयत्रेन्थिहा भाव एवं शुभस्वामिदृष्टौ न नाशः शुभंच ॥३॥
यदोभयत्रापि हता भावो नश्येत्स सर्वथा ।
उभयत्र शुभत्वेतु भावोसौ वर्द्धतेतराम् ॥४॥
वर्षेऽप्यनिष्टगेहस्था यद्भावे जनुषि स्थिता ।
क्रूरोपघातात्तं भावं नाशयेच्छुभयुक्शुभा ॥५॥

(अर्थ)

जिस भाव को पापग्रह क्षुतदृष्टि (अर्थात् अशुभ दृष्टि १।४।७।१०) से देखते हों और उस भाव में मुन्था भी हो तो उस भाव के शुभ फल का नाश होता है तथा अशुभ फल की वृद्धि होती है ॥१॥

यदि मुन्था शुभग्रह अथवा अपने स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट हो अथवा बलवान् हो अथवा शुभग्रह तथा अपने स्वामी के साथ इत्थशाली हो तो उस भाव के शुभ फल को बढ़ाती है तथा अशुभ फल नहीं देती है, अन्यथा इसका विपरीत फल जानना चाहिये ॥२॥

जन्म लग्न से ७,१२,६,८,४ स्थानों में मुन्था स्थित हो, क्रूर ग्रहों से युक्त हो तो जिस भाव में वह मुन्था स्थित हो उस भाव का नाश करती है। यदि मुन्था शुभ ग्रह अथवा अपने स्वामी से दृष्ट हो तो उस भाव का नाश नहीं होता है और शुभ फल मिलता है ॥ ३ ॥

जब जन्म तथा वर्ष में उभयत्र अनिष्ट स्थान में मुन्था स्थित हो, पाप ग्रह से युक्त हो तो उस भाव का अशुभ फल होता है, यदि उभयत्र मुन्था शुभ हो तो उस भाव की अत्यन्त वृद्धि होती है ॥ ४ ॥

यदि वर्ष में अनिष्ट स्थान में (४,६,७,८,१२ स्थानों में) मुन्था वैठी हो तो जिस भाव में जन्म में पड़ी हो पाप ग्रह से युक्त होने से उस भाव का नाश करती है। यदि शुभ ग्रह से युक्त हो तो शुभ फल देती है ॥ ५ ॥

मुन्थेश फलानि

यदा सवीर्यो मुथहाधिनाथो लग्नाधिपो जन्मविलग्नपो वा ।
केन्द्रत्रिकोणायधनस्थितास्ते सुखार्थहेमाम्बरलाभदाः स्युः ॥१॥
षष्ठेऽष्टमेऽन्त्ये भुवि वेन्थिहेशोऽस्तगोऽथवक्रोऽशुभदृष्टयुक्तः ।
क्रूराच्चतुर्थास्तगतश्च भव्यं नस्याद्रुजं यच्छति वित्तनाशम् ॥२॥
यद्यष्टमेशेन युतोऽथ दृष्टः क्षुताख्यदृष्ट्या न शुभस्तदापि ।
योगद्वयेऽस्मिन्निधनं यदैक योगस्तदा मृत्युसमत्वमाहुः ॥३॥

(अर्थ)

जब मुन्थेश, वर्षलग्नेश अथवा जन्मलग्नेश बलवान् हो कर केन्द्र, त्रिकोण, धन अथवा लाभ स्थान में स्थित हो तो सुख धन, सुवर्ण तथा वस्त्र की प्राप्ति होती है ॥१॥

यदि मुन्था का स्वामी, ६,८,१२,४ स्थानों में अस्तङ्गत, वक्री, अथवा पाप ग्रह से दृष्ट अथवा युक्त हो, क्रूर ग्रह से ४,७ स्थानों में स्थित हो तो कुशल नहीं होती है, रोग होता है तथा धन का नाश होता है ॥२॥

यदि मुन्थेश अष्टमेश से युक्त अथवा दृष्ट अथवा क्षुत (१।४।७।१०) दृष्टि से युक्त हो तब भी शुभ नहीं होता है। इन दोनों योगों में मृत्यु होती है। यदि दोनों में से एक योग हो तो मृत्यु के समान कष्ट होता है ॥३॥

ताजिके भावफलानि

सूर्यारमन्दास्तनुगा ज्वरार्तिं धनक्षयं पापयुगिन्दुरित्थम् ।
शुभान्वितः पुत्रकलत्रसौख्यं जीवज्ञशुक्रा धनराज्यलाभम् ॥१॥
चन्द्रजजीवास्फुजितो धनस्था धनागमं राज्यसुखं प्रदद्युः ।
पापा धनस्था धनहानिदाः स्युर्नृपाद्भयं कार्यविघातमार्किः ॥२॥

दुश्चिक्यगाः खलखगा धनधर्मराज्य
लाभप्रदा बलयुताः क्षितिलाभदाःस्युः ।
सौम्याःसुखार्थसुतमानयशोविलास
लाभाय हर्षमतुलं किल तत्र चन्द्रः ॥३॥
चन्द्रःसुखेखलयुतोव्यसनंरुजंचपुष्टः शुभेनसहितः सुखमातनोति ।
सौम्याःसुखंविविधमत्रखलाः सुखार्थं
नाशं रुजो व्यसनमप्यतुलं भयंच ॥४॥
पुत्रवित्त सुखसंचयं शुभाः पुत्रगो भृगुसुतोऽतिहर्षदः ।
पुत्रमित्रधनबुद्धिहारकास्तस्करामयकलिप्रदाः खलाः ॥५॥
षष्ठे पापा वित्तलाभ सुखाप्तिं भौमोऽत्यन्तं हर्षदः शत्रुनाशम् ।
सौम्याभीतिं वित्तनाशं कलिं च चन्द्रोरोगं पापयुक्तः करोति ॥६॥
सपापः शशी सप्तमे व्याधिभीतिं
खलाः स्त्रीविनाशंकलिं मृत्युभीतिम् ।
शुभाःकुर्वतेवित्तलाभंसुखाप्तिंयशोराज्यमानोदयंबन्धुसौख्यम् ॥७
चन्द्रोऽष्टमे निधनदः खलखेटयुक्तः
पापाश्च तत्र मृतितुल्यफला विचिन्त्याः ।
सौम्याः स्वधातुवशतो रुजमर्थहानिं
मानक्षयं मुथशिले शुभजे शुभं च ॥८॥
तपसि सोदरभीः पशुपीडनं खलखगेऽतिमुदो रविरत्रचेत् ।
शुभखगा धनधर्मविवृद्धिदाः खलखगे च शुभान्यपरे जगुः ॥९॥
गगनगो रविजः पशुवित्तहा रविकुजौ व्यवसायपराक्रमैः ।
धनसुखानि परे च धनात्मजा नृपसङ्गसुखानि वितन्वते ॥१०॥
लाभेधनोपचयसौख्ययशोऽभिवृद्धि
सन्मित्रसङ्गबलपुष्टिकराश्च सर्वे ।
क्रूरा बलेन रहिताः सुतवित्तबुद्धि
नाशं शुभास्तु तनुतांस्वफलस्य कुर्युः ॥११॥

पापा व्यये नेत्ररुजं विवादं हानिं धनानां नृपतस्करादेः।
सौम्या व्ययं सद्व्यवहारमार्गे कुर्युः शनिर्हर्षविवृद्धिमत्र ॥१२॥

(अर्थ)

जब लग्न में सूर्य्य, मङ्गल अथवा शनि हों तो ज्वर पीड़ा होती है तथा धन का नाश होता है। पाप युक्त चन्द्रमा का भी यही फल है। यदि चन्द्रमा शुभ ग्रह से युक्त हो तो पुत्र तथा स्त्री से सुख मिलता है। यदि बृहस्पति, बुध अथवा शुक्र लग्न में हों तो धन का लाभ, राज्य तथा सुख मिलते हैं ॥१॥

जब धन स्थान मे चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति अथवा शुक्र हों तो धन की प्राप्ति होती है तथा राज्य मे सुख मिलता है। जब धन स्थान में पाप ग्रह हो तो धन की हानि होती है। जब शनैश्चर धन स्थान में हो तो राज भय होता है तथा कार्य्य में विघ्न होता है ॥ २ ॥

जब तीसरे स्थान मे पाप ग्रह हों तो धन, धर्म, तथा राज्य का लाभ होता है। यदि पाप ग्रह बलवान् हों तो भूमि का लाभ होता है। यदि सौम्य ग्रह हों तो सुख, धन, पुत्र, आदर, यश तथा भोग विलास का लाभ होता है। यदि चन्द्रमा इस स्थान पर हो तो अत्यन्त हर्ष होता है ॥३॥

जब सुख स्थान में चन्द्रमा पाप ग्रह से युक्त होकर बैठे तो दुःख तथा रोग होते हैं। परन्तु यदि चन्द्रमा बलवान् होकर शुभ ग्रह सहित हो तो सुख देता है। यदि कोई सौम्य ग्रह इस स्थान में बैठे हों तो अनेक प्रकार का सुख मिलता है। यदि पाप ग्रह हों तो सुख तथा धन का नाश होता है, रोग होते हैं, तथा बड़ा भय होता है ॥ ४ ॥

जब पञ्चम स्थान में शुभ ग्रह हों तो पुत्र, धन, तथा सुख का लाभ होता है। पञ्चम स्थान में शुक्र बड़े हर्ष को देता है। यदि पञ्चम स्थान में पाप ग्रह हों तो पुत्र, मित्र, धन तथा बुद्धि का नाश होता है, चोरी, रोग तथा कलह होते हैं ॥ ५ ॥

जब छठे घर में पाप ग्रह हों तो धन का लाभ होता है तथा सुख की प्राप्ति होती है। इस स्थान में मङ्गल अत्यन्त हर्ष को देता है तथा शत्रु का नाश करता है। यदि शुभ ग्रह इस स्थान में हो तो भय, धन का नाश तथा कलह होते हैं। यदि पाप युक्त चन्द्रमा इस स्थान पर हो तो रोग होते हैं ॥६॥

यदि सप्तम स्थान में पाप ग्रह से युक्त चन्द्रमा हो तो रोग का भय होता है। यदि पाप ग्रह हों तो स्त्री का नाश, कलह तथा मृत्यु भय होते हैं। यदि शुभ ग्रह हों तो धन का लाभ, सुख की प्राप्ति, यश, राज्य, सन्मान तथा बान्धवों से सुख देते हैं ॥७॥

यदि अष्टम स्थान में पाप ग्रह से युक्त चन्द्रमा हो तो मृत्यु होती है। यदि पाप ग्रह उस स्थान मे हों तो उनका फल मृत्यु के समान होता है। यदि सौम्यग्रह हों तो अपने धातु के वश मे रोग करते हैं तथा द्रव्य की हानि होती है, मान हानि भी होती है। यदि शुभ इत्थशाल पड़े तो शुभ भी होता है ॥ ८ ॥

यदि नवम स्थान में पाप ग्रह हो तो सहोदर से भय होता है, पशुओं को पीडा होती है। यदि इस स्थान में सूर्य्य हो तो अत्यन्त हर्ष होता है। यदि शुभ ग्रह हो तो धन तथा धर्म की वृद्धि होती है। कोई आचार्य्य कहते हैं कि इस स्थान मे पाप ग्रह का फल भी शुभ होता है ॥ ९ ॥

यदि दशम स्थान में शनि हो तो पशु तथा धन का नाश होता है। यदि सूर्य्य तथा मङ्गल हों तो उद्यम तथा पराक्रम के द्वारा धन तथा सुख मिलते हैं। शेष ग्रह धन, पुत्र, राजसङ्गम तथा सुख देते हैं ॥१०॥

लाभ स्थान में सब ग्रह धन संग्रह, सुख, यश की वृद्धि, अच्छे मित्र के साथ संगम, बल तथा पुष्टि को देते हैं। यदि क्रूर ग्रह बलहीन होकर इस स्थान में बैठे हो तो पुत्र, धन, तथा बुद्धि का नाश करते हैं। यदि शुभ ग्रह बलहीन हों तो उनका शुभ फल न्यून हो जाता है ॥११॥

यदि व्यय स्थान में पाप ग्रह हों तो नेत्रों में रोग, झगड़ा, राजा अथवा तस्कर के द्वारा धन हानि कराते हैं। यदि सौम्य ग्रह हों तो अच्छे कामों में व्यय कराते हैं। यदि शनैश्चर इस स्थान में हो तो हर्ष की वृद्धि होती है ॥१२॥

(७) राजयोगप्रकरणम्

वर्षे राजयोगाः

तुर्येशोऽम्बुगतो बली त्वलिशुभैर्युक्तोक्षितो राज्यदः
केन्द्राप्तित्रिसुताङ्कगः सुरगुरु जन्माङ्गपो वेश्मगः ॥१॥
युवतिधामपतिस्तनुगोबली गुरुयुतेक्षित मूर्ति रिहोद्भवम्।
(नृपं करोति) ॥

मेषूरणेस्वोच्चगतः पतङ्गः कर्कोदये वाक्पतिरिन्दुरर्थे ॥२॥ (राज्यदाः)
कर्कोदये वाक्पति राज्यइन्दुः समूथशाली नृपतिः स्वमेऽर्कः ॥
वर्षेश्वरो लाभगतोऽर्कगोऽर्को मेषूरणे चन्द्रकृतेत्थशालः ॥३॥
सर्वेशुभाः केन्द्रगतास्त्रिलाभारिस्थाः खलावीर्ययुतानृपः स्यात् ॥४॥
लग्नेश्वरेशः शुभखेचरश्चेच्छशाङ्कलग्नाधिपती नभःस्थौ ।
स्ववीर्ययुक्तौ शुभवीक्षितोऽन्तो वर्षे तदास्यात्खलु राज्यलाभः ॥५॥
हिमांशुकर्माधिपलग्ननाथा मेषूरणस्थाः शुभवीक्षिताश्च ।
स्वोच्चादिभस्थाः शुभखेचराश्चेत्तदा प्रकुर्युर्भुवराज्यसम्पदम् ॥६॥
हर्षस्थिते कर्मपतौ शुभग्रहे स्वतुङ्गराश्यादिगते तयोदिते ।
शुभेक्षिते केन्द्रधन त्रिकोणगे राज्यस्य लाभोऽस्ति शुभैर्विलग्नगैः॥७॥
लग्नेश्वरः स्वर्क्षगतो विलग्ने स्वतुङ्गनाथेन निजोच्चगेन ।
दृष्टस्तदा तत्र यथेष्टराज्य लाभो भवेद्भूमिपतेः क्रमेण ॥८॥
स्वोच्चस्थितो लग्नगतः शुभग्रहः शेषैस्त्रिकोणायगतैर्बलान्वितैः ।
अचिन्तिता राज्यपदाप्ति रुन्नतिःस्याद्दलिपकास्वर्क्षगृहादिसंस्थैः ॥९॥

मीनोदये भार्गवजीवसंयुते लाभे कुजे राज्यपदाप्तिमादिशेत्।
वृषोदयेसौम्यहिमांशुभार्गवैःकेन्द्रेगुरौस्युःखलुराज्यसम्पदः॥१०॥
लग्नेश्वरेस्वर्क्षगते विलग्ने स्वोच्चे कुजेस्यात्खलु राज्यलाभः।
केन्द्रस्थिते शीतकरे वलाढ्ये शुभैर्युते क्रूरविवर्जिते च।
शुद्धेऽपिवास्यात्खलुराज्यलाभश्चन्द्रेऽवलेनीचगतेनराज्यम्॥११॥
धर्माधिनाथे सवलेऽर्थनाथे युते शुभैर्लग्नगतैरदृष्टैः।
क्रूरैर्गजान्तां विपुलांच लक्ष्मीं भुनक्ति जन्तुः शुभकर्मयुक्तः॥१२॥
धर्मे रतिः काञ्चनलाभयुक्तः प्रीतिः स्ववर्गे धनधान्ययुक्तः।
वली च भौमो धनभावसंस्थो भवेदकस्मादतुलश्च तेजः॥१३॥
यदावनीशो निजभागवर्ती स्वोच्चं गतो मित्रशुभैश्च दृष्टः।
ददाति लक्ष्मीं गजरत्नहेम प्रवालकाढ्यां सतत नरेभ्यः॥१४॥
त्रिराशिनाथो यदि भूमिपुत्रः स्वतुङ्गभागे निजभागगोवा।
लग्नत्रिकोणायगतो ददाति महासुखं सर्ववलोपपन्नम्॥१५॥
स्वोच्चं गते देवपुरोहिते च त्रिराशिनाथे निजवर्गसंस्थे।
परस्परालोकनमत्र याते ददाति पुत्रान्विपुलां च लक्ष्मीम्॥१६॥
यदीन्दुसौम्येज्यसुरारिपूज्याः स्वोच्चंगताः स्वांशगतायदिस्युः।
लग्नात्त्रिकेन्द्रायगताः स्वमित्रैर्दृष्टाश्चयुक्तानिजवीर्ययुक्ताः॥१७॥
गजाश्वरत्नाम्वरदेशलाभं स्त्रीपुत्रलाभं विविधं च सौख्यम्।
यच्छन्ति खेटाः परमर्दनं च कुर्वन्ति सर्वे वलिनो नरांश्च॥१८॥
भाग्याधिपःस्वोच्चमुपागतोवलीरवीन्दुवाचस्पतिभिर्निरीक्षितः।
भाग्योदयः स्याद्धनधान्यलाभो नृपप्रसादो नियतं नराणाम्॥१९॥
यदार्कपुत्रो वलवान्स्वतुङ्ग संस्थोऽप्यतुङ्गे भृगुजो वलाढ्यः।
नूनं तदा म्लेच्छजनप्रसादाद्भुनक्ति राज्यं विपुलाञ्च लक्ष्मीम्॥२०॥
यदा सवीर्यो मुथहाधिनाथो लग्नाधिपो जन्मविलग्नपोवा।
केन्द्रत्रिकोणायधनस्थितास्ते सुखार्थहेमाम्वरलाभदाःस्युः॥२१॥

नृपात्मजानामिहराज्यलाभोऽन्येषां प्रतिष्ठावसुलब्धयः स्युः ॥२२॥

जनने जननेत्रगोचरा. खचराः स्वस्वगृहोच्चसंस्थाः।
अरिभं प्रविहाय हायने यदि ते स्युः सकलार्थसिद्धिदाः ॥२३॥

(अर्थ)

जब चतुर्थेंश चतुर्थ स्थान में बलवान् हो अथवा बलवान् शुभ ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो राज्य की प्राप्ति होती है। यदि बृहस्पति केन्द्र, लाभ, अथवा ९,५,६ स्थानों में बैठा हो अथवा जन्मलग्नेश स्वगृही हो तो राज्य की प्राप्ति होती है ॥१॥

यदि सप्तमेश बलवान् होकर लग्न में बैठा हो, बृहस्पति से युक्त अथवा दृष्ट हो तो वर्ष में राज योग होता है ॥

जब दशम स्थान में उच्च का सूर्य्य हो, कर्क लग्न में बृहस्पति हो, धन स्थान में चन्द्रमा हो तो राज योग होता है ॥२॥

जब कर्क लग्न में बृहस्पति हो, राज्य स्थान में चन्द्रमा हो, इत्थशाल योग पड़ा हो, सूर्य्य अपने घर का हो तो राजयोग होता है। शनि वर्षेश होकर लाभ स्थान मे हो, सूर्य दशम स्थान में हो, चन्द्रमा से इत्थशाल करे तो राजयोग होता है ॥३॥

जब सब शुभ ग्रह केन्द्र में हों, पाप ग्रह ३,११,६ स्थानों में बलवान् होकर बैठे हों तो राज योग होता है ॥४॥

जब लग्नेश शुभ ग्रह हो, चन्द्रमा तथा लग्नेश दशम स्थान में हों, वे बलवान् हों तथा शुभ ग्रह से दृष्ट हों तो उस वर्ष राज्य का लाभ होता है ॥५॥

जब चन्द्रमा, कर्मेश तथा लग्नेश दशम स्थान में बैठे हों, शुभ ग्रहों से दृष्ट हों तथा शुभ ग्रह अपने उच्च आदि स्थानों में स्थित हों तो निश्चय से राज्य सम्पत्ति की प्राप्ति होती है ॥६॥

जब कर्मेश शुभ ग्रह हो, हर्ष बल पाया हो अथवा अपने उच्च राशि आदि में स्थित हो, उदित हो, शुभ ग्रह से दृष्ट हो, केन्द्र, धन अथवा

त्रिकोण में स्थित हो तथा लग्न में शुभ ग्रह हों तो राज्य लाभ होता है ॥७॥

जब लग्नेश स्वगृही होकर लग्न में बैठा हो, उसको उस लग्नेश का जो उच्च स्थान हो उसका स्वामी अपने उच्च में बैठ कर देखता हो तो राज्य लाभ होता है ॥८॥

शुभ ग्रह अपने उच्च का होकर लग्न में बैठा हो, शेष शुभ ग्रह बलवान् होकर त्रिकोण अथवा लाभ में बैठे हों तो अकस्मात् राज्य पद की प्राप्ति होती है। यदि वे ग्रह स्वगृही आदि हों तो थोडी उन्नति होती है ॥९॥

जब मीन लग्न में शुक्र तथा बृहस्पति हों, लाभ स्थान में मंगल हो तो राज्य पद की प्राप्ति होती है। जब वृष लग्न में बुध, चन्द्रमा तथा शुक्र हों, केन्द्र में बृहस्पति हो तो राज्य सम्पत्ति मिलती है ॥१०॥

जब लग्नेश स्वगृही होकर लग्न में बैठा हो, तथा मंगल उच्च का हो तो राज्य लाभ होता है। जब चन्द्रमा बलवान् होकर केन्द्र में बैठा हो, शुभ ग्रहों से युक्त तथा क्रूर ग्रहों से रहित हो, अथवा अकेला हो, तो राज्य लाभ होता है। परन्तु जब चन्द्रमा बलहीन हो अथवा नीच का हो तो राज्य नहीं मिलता है ॥११॥

जब धर्मेश बलवान् हो तथा धनेश शुभ ग्रहों से युक्त हो, पाप ग्रहों से दृष्ट न हो तो मनुष्य गजान्त लक्ष्मी का भोग करता है, धर्म में उसकी प्रीति होती है, सुवर्ण का लाभ होता है, अपने लोगों के साथ प्रीति होती है, धन तथा धान्य से युक्त होता है ॥१२॥

जब मंगल बलवान् होकर धन स्थान में स्थित हो तो अकस्मात् भारी तेज होता है ॥१३॥

जब मंगल स्वगृही हो, अपने उच्च का हो, मित्र ग्रह अथवा शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो हाथी, रत्न, सुवर्ण, मूंगा, आदि से युक्त लक्ष्मी को देता है ॥१४॥

जब त्रिराशीश मंगल अपने उच्च का अथवा स्वगृही होकर लग्न, त्रिकोण, अथवा लाभ स्थान में हो तो बड़ा सुख मिलता है ॥१५॥

जब बृहस्पति अपने उच्च का हो, त्रिराशिपति स्वगृही हो, तथा दोनों की परस्पर दृष्टि हो तो पुत्र तथा लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ॥१६॥

जब चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति, शुक्र, अपने उच्च के अथवा अपने घर के हों, लग्न से तृतीय, केन्द्र अथवा लाभ स्थान में हों, अपने मित्रों से दृष्ट अथवा युक्त हों तथा बलवान् हों तो हाथी, घोड़ा, रत्न, वस्त्र, देश, स्त्री, पुत्र, तथा अनेक प्रकार के सुख का लाभ होता है। ये बलवान् ग्रह शत्रु का नाश करते हैं तथा मनुष्यों को बलवान् बनाते हैं ॥१७।१८॥

जब भाग्येश अपने उच्च का हो, बलवान् हो, सूर्य्य, चन्द्रमा, बृहस्पति से दृष्ट हो तो मनुष्यों का भाग्योदय होता है, धन धान्य का लाभ होता है, तथा राजा की प्रसन्नता होती है ॥१९॥

जब शनैश्चर बलवान् हो अथवा अपने उच्च का हो अथवा शुक्र बलवान् हो तो म्लेच्छ जन के द्वारा राज्य तथा लक्ष्मी का भोग मिलता है ॥२०॥

जब मुन्थेश, लग्नेश अथवा जन्मलग्न का स्वामी बलवान् होकर केन्द्र, त्रिकोण, लाभ, अथवा धन स्थान में स्थित हो तो सुख, धन, सुवर्ण, तथा वस्त्र का लाभ होता है ॥२१॥

इन पूर्वोक्त राजयोगों से केवल उन्हीं लोगों को राज्य लाभ हो सकता है जो राजवंश में उत्पन्न हों, अन्य लोगों को प्रतिष्ठा मिलती है तथा धन का लाभ होता है ॥२२॥

जिसके जन्मकाल में ग्रह स्वगृही हों, अपने उच्च के हों तथा उदयी हों, शत्रु स्थान को छोड़ कर शेष किसी स्थान में पड़े हों यदि वर्ष में भी ऐसे ही पड़े हों तो सम्पूर्ण कामनाएं सिद्ध होती हैं ॥२३॥

राजयोगभङ्गः

व्यये शशाङ्को यदि तत्र सौरिः षष्ठे भृगुर्हानिकरः समन्तात् ।
धनाश्वरत्नादिमहाद्भुतानां स्वचित्तवैकल्यकरोह्यकस्मात् ॥१॥
धर्माधिपे वा वित्तले च वित्त नाथे विलग्ने शुभदृष्टिहीने ।
क्रूरैर्युते नाश मुपैति लक्ष्मीः सुसञ्चिता शक्रसुरक्षितापि ॥२॥
नीचस्थिताश्चास्तमिताश्च पापा नृपालयोगं दलयन्त्यलं ते ॥३॥
नीचोपगा वैरिगृहोपयाता पापैर्युता वास्तगता ग्रहेन्द्राः ।
हरन्ति राज्यं विपुलं नराणां तदा सुखं नाल्पतरं हि वर्षे ॥४॥
दुष्टवर्गोपगाः पापाः सौम्याश्चेद्बलवर्जिताः ।
अपाकुर्वन्ति ते राज्यं कष्टं कुर्वन्ति देहिनाम् ॥५॥
अस्तं गतौ नीचमुपागतौ वा क्रूरारिसम्पीडितमूर्तिकौ वा ।
देवेड्यशुक्रौ मनुजाधिपत्यं सुखार्थलाभं हरतो नराणाम् ॥६॥
सूतौ व्योमचरो ग्रहः सयदिचेत्तद्व्यदाधिष्ठितो
नीचश्चास्त मुपागत शुभहरः प्रोक्तोऽब्दवेशे बुधैः ।
सौम्याश्चेत्पतिताश्रयाः खलखगाः केन्द्राश्रिता चक्रिणो
निर्वीर्या यदि वा तदाब्दसमये लक्ष्मीः परिक्षीयते ॥७॥
जनौ व्ययेशो दशमे च वर्षे स्वस्वामिसौम्येक्षणयोगहीनः ।
खेशारिदुष्टर्क्षयुतः श्रियं हरे त्तृष्णेव धैर्यं पुरुषस्य लोके ॥८॥
पञ्चाधिकारिष्वपि नैव केन्द्र त्रिकोणलाभक्रमगो बलीयान् ।
परेऽपि दुष्टाश्रयगा विवीर्यास्तदा भवेद्भूरिसुखार्थनाशः ॥९॥
अब्देन्थिहेशादिखगाः बलैश्चे वृतेक्षिता अस्तगनीचगावा ।
सौम्या वलोना नृपयोगभङ्गं तदा वदेद्वित्तसुखक्षयं च ॥१०॥
इत्थं जन्मनि वर्षे च योगकर्तुर्बलाबलम् ।
विमृश्य कथये द्राज योगं तद्भङ्ग मेव च ॥११॥

(अर्थ)

जब द्वादश स्थान में चन्द्रमा हो तथा उसके साथ शनैश्चर भी बैठा हो, छठे स्थान में शुक्र हो तो धन, अश्व, रत्न आदि पदार्थों की सब प्रकार से हानि होती है। अकस्मात् चित्त विकल हो जाता है ॥१॥

जब धर्म स्थान का स्वामी बलहीन हो, धनेश लग्न में हो तथा उस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि न हो, क्रूर ग्रहों से युक्त हो, तो चिरकाल से सञ्चय की हुई लक्ष्मी का भी नाश होता है यद्यपि इन्द्र भी उसकी रक्षा करने वाला हो ॥२॥

जब पाप ग्रह नीच के होकर पड़े अथवा अस्तङ्गत हों तो राजयोग का भंग हो जाता है ॥३॥

जिस वर्ष में ग्रह नीच के हों अथवा शत्रु भवनी हो अथवा पाप ग्रहों से युक्त हों उस वर्ष में राज्य (रोजगार) का हरण होता है तथा थोड़ा भी सुख नहीं मिलता है ॥४॥

जब पाप ग्रह अशुभ षड्वर्ग में पड़े हों तथा शुभ ग्रह बलहीन हों तो राज्यहरण होता है तथा मनुष्यों को कष्ट मिलता है ॥५॥

जब बृहस्पति तथा शुक्र अस्तङ्गत हों अथवा नीच राशि में हों अथवा क्रूर ग्रह से दबाये हुए हों तो राज्य सुख तथा धन का नाश होता है ॥६॥

जन्म समय में नीच अथवा अस्त, जैसा ग्रह हो, यदि वर्ष प्रवेश के समय में भी वैसा ही बैठा हो, तो वर्ष में शुभ फल का नाश करता है, अथवा जब सौम्यग्रह आश्रय हीन हों तथा पापग्रह केन्द्र में बैठे हों, वक्री अथवा बलहीन हो तो लक्ष्मी का नाश होता है ॥ ७ ॥

जन्म समय का द्वादशेश यदि वर्ष में दशम स्थान में पड़े तथा अपने स्वामी से अथवा शुभ ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट न हो, दशमेश के शत्रु अथवा दुष्ट ग्रह से युक्त हो तो लक्ष्मी का नाश करता है जैसे तृष्णा मनुष्य के धैर्य्य का नाश करती है ॥ ८ ॥

जब पञ्चाधिकारियों में से कोई भी ग्रह केन्द्र, त्रिकोण, अथवा लाभ स्थान में वलवान् होकर न वैठा हो, शेष ग्रह दुष्ट ग्रहों के साथ अथवा दुष्ट ग्रहों से दृष्ट हों तथा वलहीन हों तो सुख तथा धन का नाश होता है ॥९॥

जब वर्षेश, मुन्थेश आदि ग्रह पाप ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हों, अस्तङ्गत अथवा नीच के हों, सौम्य ग्रह वलहीन हों तो राजयोग भग हो जाता है, धन तथा सुख का नाश होता है ॥ १० ॥

इस प्रकार जन्म में अथवा वर्ष प योग करने वाले ग्रहों के वलावल का विचार करके राजयोग अथवा राजयोग भंग कहना चाहिये ॥११॥

(८) अरिष्ट प्रकरणम्

अरिष्टयोगाः

लग्नेशेऽष्टमगेऽष्टेशे तनुस्थे वा कुजेक्षिते ।
ज्ञजीवयोरस्तगयोः शस्त्राघातो विपन्मृतिः ॥१॥
अब्दलग्नेशरन्ध्रेशौ व्ययाष्टहिवुकोपगौ ।
मुथहासंयुतौ मृत्यु प्रदौ तद्धातुकोपतः ॥२॥
जन्मलग्नाधिपोऽवीर्यो मृतीशोऽब्देऽस्तगोयदा ।
सूर्यदृष्टो मृतिं दत्ते कुष्ठं कण्डूं तथापदः ॥३॥
अस्तगौ मुथहा लग्न नाथौ मन्देक्षितौ यदा ।
सर्वनाशो मृतिः कष्ट माधिव्याधिभयं रुजः ॥४॥
क्रूरा वीर्याधिकाः सौम्या निर्वला रिपुरन्ध्रगाः ।
तदाधिव्याधिभीतिः स्यात्कलिर्हानिस्तथा विपत् ॥५॥
निर्वलौ धर्मवित्तेशौ दुष्टखेटास्तनौ स्थिताः ।
लक्ष्मीश्चिरार्जितानश्येद्यदिशक्रोऽपि रक्षिता ॥६॥
नीचे चन्द्रेऽस्तगाः सौम्या वियोगः स्वजनैः सह ।
शरीरपीडा मृत्युर्वा साधिव्याधिभयं महत् ॥७॥

अब्दलग्नं जन्मलग्न राशिभ्या मष्टमं यदा ।
कष्टं महाव्याधिभयं मृत्यु पापयुतेक्षणात् ॥८॥
जन्मन्यष्टमगः पापो वर्षलग्ने रुगाधिदः ।
चन्द्राब्दलग्नपौ नष्ट वलैाचेत्स्याचदामृतिः ॥६॥
व्ययाम्बुनिधनारिस्था जन्मेशाब्दपमुन्थहाः ।
एकर्क्षगास्तदा मृत्युः पापक्षुतदृशा ध्रुवम् ॥ १० ॥

(अर्थ)

जब लग्नेश अष्टम स्थान में हो तथा अष्टमेश लग्न में हो, अथवा मङ्गल की उस पर दृष्टि हो, बुध तथा वृहस्पति अस्तङ्गत हों तो शस्त्र से चोट लगती है तथा विपत्ति से मृत्यु होती है ॥१॥

जब वर्ष लग्नेश तथा अष्टमेश १२,८,४ स्थानों में हों तथा मुन्था से युक्त हों तो अपने धातु के कोप से मृत्यु करते हैं ॥ २ ॥

जब जन्म लग्न का स्वामी वल रहित हो तथा वर्ष में अष्टमेश सप्तम स्थान में हो, उस पर सूर्य्य की दृष्टि हो ता कोढ़ अथवा खुजली के रोग होते हैं तथा आपत्तिया होती हैं ॥ ३ ॥

जब मुन्थेश तथा लग्नेश अस्तगत हों तथा शनैश्चर की उनपर दृष्टि हो तो सर्वनाश होता है, मृत्यु होती है, कष्ट होता है, आधि व्याधि का भय होता है तथा अनेक प्रकार के रोग होते हैं ॥४॥

जब पाप ग्रह अधिक वलवान् हों तथा शुभ ग्रह वलहीन हो कर छठे अथवा आठवें स्थान में हों तो आधि व्याधि का भय होता है, लोगों से झगडा होता है, हानि तथा विपत्ति होती हैं ॥५॥

जब नवमेश तथा धनेश वलहीन हों, दुष्ट ग्रह लग्न में वैठे हों, तो वहुत दिनों से संग्रह की हुई लक्ष्मी का नाश होता है यद्यपि इन्द्र भी रक्षा करने वाला हो ॥६॥

जब चन्द्रमा नीच का हो, शुभ ग्रह अस्तङ्गत हों तो आपसी लोगों से वियोग होता है, शरीर में पीडा होती है अथवा मृत्यु होती है तथा आधि व्याधि का भय होता है ॥ ७ ॥

जब जन्म लग्न अथवा जन्मराशि से वर्ष लग्न अष्टम हो तो कष्ट होता है, बड़े रोग का भय होता है, यदि पाप ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो तो मृत्यु होती है ॥ ८ ॥

जो पाप ग्रह जन्म ा अष्टम स्थान में हो, वही यदि वर्ष में लग्न में बैठा हो तो रोग करता है, यदि चन्द्रमा तथा वर्ष लग्नेश बलहीन हों तो मृत्यु होती है ॥९॥

जब जन्मलग्नेश, वर्षेश तथा मुन्थेश एक ही साथ १२,४,८,६ स्थानों में बैठे हों तथा पाप ग्रहों का उन पर अशुभ दृष्टि हो तो मृत्यु होती है ॥१०॥

अरिष्टभङ्गः

लग्नाधिपो बलयुतः शुभेक्षितयुतोऽपिवा ।
केन्द्र त्रिकोणगोऽरिष्ट नाशयेत्सुखवित्तदः ॥१॥

गुरुः केन्द्रे त्रिकोणे वा पापादृष्टः शुभेक्षित ।
लग्नचन्द्रेन्थिहारिष्टं विनाश्यार्थसुखंदिशेत् ॥२॥

त्रिषष्ठलाभोपगतैरसौम्यैः
केन्द्रत्रिकोणोपगतैश्च सौम्यैः ।
रत्नाम्बरस्वर्णयशःसुखाप्ति
र्नाशोऽप्यरिष्टस्य तनोश्च पुष्टिः ॥ ३ ॥
यदा सवीर्यो मुथहाधिनाथो
लग्नाधिपो जन्मविलग्नपोवा ।
केन्द्रत्रिकोणायधनस्थितास्ते
सुखार्थहेमाम्बरलाभदाः स्युः ॥४॥

(अर्थ)

जब लग्नेश बलवान् हो, अथवा शुभ ग्रह से दृष्ट अथवा युक्त हो तथा केन्द्र अथवा त्रिकोण में बैठा हो, तो अरिष्ट का नाश करता है, सुख तथा धन को देता है ॥१॥

जब बृहस्पति केन्द्र अथवा त्रिकोण में हो, पाप ग्रह की उस पर दृष्टि न हो परन्तु शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो लग्न चन्द्रमा तथा मुन्था के अरिष्ट का नाश करके धन तथा सुख को देता है ॥ २ ॥

जब ३, ६, ११ स्थानों में पाप ग्रह हों, केन्द्र तथा त्रिकोण में सौम्य ग्रह हों तो रत्न, वस्त्र, सुवर्ण, यश, तथा सुख की प्राप्ति होती है, अरिष्ट का नाश होता है, तथा शरीर पुष्ट होता है ॥ ३ ॥

जब मुन्थेश, लग्नेश, अथवा जन्म लग्नेश बलवान् होकर केन्द्र, त्रिकोण लाभ अथवा धन स्थानों में स्थित हो तो सुख, धन, सुवर्ण तथा वस्त्र का लाभ होता है ॥ ४ ॥

(९) दशाप्रकरणम्

विविधादशाः

बली यदा हीनबलो ग्रहः स्यात्तदा तु हीनांशदशा विधेया ।
सर्वग्रहालोकनलब्धवीर्ये तनौ तसीराख्यदशा प्रदिष्टा ॥१॥
लग्नस्य सबलत्वे हि भावपूर्वा तु सा स्मृता ।
कालहोरा दशा कार्या सवीर्येऽब्दे चतत्पतौ ॥२॥
हद्दाख्या वर्षलग्नस्य हद्देशे बलसंयुते ।
अब्दे चन्द्रबलोपेते कुर्यान्नैसर्गिकीं दशाम् ॥३॥
सवीर्ये जन्मराशीशे मुद्दा गौरीमतेन तु ।
बलसाम्ये तु सर्वेषां तसीराख्या प्रकीर्तिता ॥ ४ ॥
सवीर्ये चन्द्रराशीशे बलरामाख्यका मता ॥५॥
सुगमत्वात्प्रायो मुद्दादशैव गृह्यते ।

(अर्थ)

जब हीन बलवाला ग्रह बलवान् हो तो हीनांश दशा निकालनी चाहिये, जब लग्न में सब ग्रहों की दृष्टि हो तो तसीर दशा निकालनी चाहिये ॥१॥

जब लग्न बलवान् हो तो भावतसीर दशा निकालनी चाहिये, जब वर्षेश बलवान् हो तो कालहोरा दशा निकालनी चाहिये ॥ २ ॥

जब वर्ष लग्न का हद्देश बलवान् हो तो हद्दादशा निकालनी चाहिये, जब वर्ष मे चन्द्रमा बलवान् हो तो नैसर्गिक दशा निकालनी चाहिये ॥३॥

जब जन्म राशि का स्वामी बलवान् हो तो गौरी मत से मुद्दा दशा निकालनी चाहिये, जब सब का बल समान हो तो तसीर दशा निकालनी चाहिये ॥ ४ ॥

जब चन्द्र राशीश बलवान् हो तो बलराम दशा निकालनी चाहिये ॥५॥

(सुगम होने के कारण प्रायः मुद्दा दशा निकाली जाती है ॥ यही दशा यहा पर रख दी गई है। शेष दशाए कठिनता के कारण छोड दी गई हैं।)

मुद्दादशा गौरीमतादशा वा

जन्मनक्षत्रतः प्रोक्ता दशा गौरीमताख्यका ।
सूर्येन्दुकुजराहूवीज्य शनिज्ञकेतुभार्गवाः ॥ १ ॥
दशेशा वह्निभाज्ज्ञेयाः क्रमात्त्रिःपरिवर्तनात् ।
स्युर्दशादिवसास्तेषां धृतिस्त्रिंशतिमूर्छनाः ॥ २ ॥
वेदेषवोलागकृता मुन्यक्षाः क्षितिसायकाः ।
मूर्छनाः षष्ठि रेतेभ्यो द्वादशांशेन मासजाः ॥ ३ ॥
षडंशतुल्या स्त्वेतासां नाडिकाद्याः फलं दशाः ॥४॥

(अर्थ)

गौरीमता अथवा मुद्दा दशा जन्म नक्षत्र से गिनी जाती है। दशा के स्वामी इस क्रम से होते हैं:—

सूर्य्य, चन्द्रमा, मगल, राहु, बृहस्पति, शनि, बुध, केतु, शुक्र ॥१॥

कृत्तिका नक्षत्र से गिनती करने से ३ वार लौटाने से दशा के स्वामी निकल आते हैं। इन ग्रहों की दशा के दिन इस प्रकार से हैं:—सूर्य्य के १८ दिन, चन्द्रमा के ३० दिन, मंगल के २१ दिन, राहु के ५४ दिन, बृहस्पति के ४८ दिन, शनि के ५७ दिन, बुध के ५१ दिन केतु के ०१ दिन, शुक्र के ६० दिन। इनका बारहवा भाग करने से मास दशा निकल आती है। उसका छठा भाग करने से दिन दशा की घडी आदि निकल आती हैं ॥२।३।४॥

मुद्दादशानयनम्

जन्मभसंख्यायां गताब्दान्योजयेत्। द्व्यूना नवोद्धृताः
शेषे सूर्यादिदशा. ॥ १ ॥
जन्मर्क्षसंख्यासहिता गताब्दाद्वगूनिता नन्दहृतावशेषाः।
आचंकुराजीशबुकेशुपूर्वा ग्रहा दशास्वामिन इत्थ मव्दे ॥२॥
वेदा नागाः शराः सप्त दिग्रसाङ्क शरारसाः।
सूर्यादीनाञ्च गुणका स्तैर्निघ्ना स्वदशामिति. ॥ ३ ॥
षष्ठ्याप्तान्तर्दशा तस्य जायतेऽतिपरिस्फुटा।
मासप्रवेशे मासप्रवेशदिननक्षत्राज्ज्ञेया दिनप्रवेशे दिनप्रवेश
स्पष्टलग्ननक्षत्राज्ज्ञेया। यथामेषे१३।२०पर्यन्तमश्विनीनक्षत्रमेव ४
गौरीमतोक्तस्य दशाक्रमस्य दशादिमा या भवशादुपेता।
साभुक्तभोग्यर्क्षघटीविनिघ्नासर्वर्क्षनाडीविहृतादिनाद्यम् ॥१॥
द्विधा यदाप्तं त्विह भोग्ययुक्तं तस्य ग्रहस्यैव लिखेदधस्तात्।
दशाप्रमाणं परतो ग्रहाणां यथास्थमग्रे विलिखेदधोऽधः ॥२॥
प्रान्तेपुनर्भुक्तघटीसमुत्थं दिनाद्य माद्यस्य लिखेत्खगम्या ॥३॥

उदाहरणम्

कस्यापि रोहिणी जन्म नक्षत्रम्। सा रोहिणी दशाचक्रे चन्द्राध. स्था। अतः प्रथमवर्षे चन्द्रस्य दशा। द्वितीय वर्षे

भौमस्य। तृतीय वर्षे राहोर्दशा। एव मग्रेऽपि ज्ञेयम्। अथास्य जन्मनि रोहिणीनक्षत्रस्य भुक्त घटिकाः ४०, भोग्य घटिकाः २०, तत्राष्टम वर्ष प्रवेशे शुक्र दशा जाता। तस्यादिनानि ६०, भोग्य २० घटीगुणितानि १२००, सर्वर्क्ष घटी ६० भक्तानि जातानि शुक्रदशादिनानि, तत्राष्टम वर्षे आदौ शुक्रदशा भोग्य दिन मिता २०, ततोरवेः १८, ततश्चंद्रस्य ३०, भौमस्य २१, राहोः ५४, गुरोः ४८, शनेः ५७, ज्ञस्य ५१, केतोः २१, पुनः प्रान्ते शुक्र दशा भुक्तदिनमिता ४० ज्ञेया॥

(अर्थ)

जन्म नक्षत्र की संख्या में गत वर्षों को जोड दे। उसमें २ घटा कर शेष में ६ का भाग देने से सूर्य्य आदि ग्रहों की दशा निकल आती हैं॥

(१ शेष रहे तो सूर्य्य की दशा, २ शेष रहे तो चन्द्रमा की दशा इत्यादि)॥१॥

जन्म नक्षत्र में गत वर्षों को जोड कर योग फल में २ घटा कर शेष में ६ का भाग देने से आ, चं, कु, रा, जी, श, बु. के शु ग्रहों की दशा होती है॥२॥

सूर्य्य आदि ग्रहों के गुणक ये हैं:—४,८,५,७,१०,६,६,५,६। इन से गुणन करने से अपनी दशा का परिमाण निकल आता है॥३॥

उसमें ६० का भाग देने से अन्तर्दशा स्पष्ट निकल आती है। मास प्रवेश में मास प्रवेश के दिन नक्षत्र से दशा जाननी चाहिये। दिन प्रवेश में दिन प्रवेश के स्पष्ट लग्न नक्षत्र से दशा जाननी चाहिये। जैसे मेष राशि में १३। २० पर्य्यन्त अश्विनी नक्षत्र होता है॥४॥

गौरीमत दशा में नक्षत्र वश से जो पहिली दशा आवे उसको भुक्त तथा भोग्य नक्षत्र की घड़ियों से गुने, सर्वर्क्ष की घडियों से भाग दे, जो लब्धि हो उसमें भोग्य जोड़ने से उसी ग्रह के नीचे लिखे इसी प्रकार से और ग्रहों के नीचे भी लिखे॥३॥

"उदाहरण"

जैसे किसी मनुष्य का जन्म नक्षत्र रोहिणी है। दशा चक्र में रोहिणी नक्षत्र चन्द्रमा के नीचे है। इसलिये पहिले बरस चन्द्रमा की दशा जाननी चाहिये। दूसरे वर्ष मंगल की, तीसरे वर्ष राहु की इत्यादि जानना चाहिये। रोहिणी नक्षत्र की भुक्त घड़ी जन्म समय में ४० हैं भोग्य घड़ी २० हैं। आठवें वर्ष के प्रवेश में शुक्र की दशा है। इसके दिन ६० को भोग्य घड़ी २० से गुणने से १२०० हुए, सर्वर्क्ष घड़ी ६० से भाग देने से शुक्र दशा के दिन निकले। आठवें बरस के आदि में शुक्र की दशा २० दिन, तब सूर्य्य की दशा १८ दिन, तब चन्द्रमा की दशा ३० दिन, मंगल २१ दिन, राहु ५४ दिन, बृहस्पति ४८ दिन, शनि ५७ दिन, बुध ५१ दिन केतु २१ दिन, तथा अन्त में शुक्र की दशा ४० दिन जाननी चाहिये॥

सुद्दादशाचक्रम्.

सू.	चं	मं	रा	बृ	श	बु	के	शु	ग्रहाः
कृ उ उ	रो ह श्र	मृ चि ध	आ स्वा श	पु वि पू	पु अ उ	अ ज्ये रे	म मू अ	पू पू भ	नक्षत्राणि
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	६०	दिनानि
१॥	२॥	१।॥	४॥	४	४।॥	४।	१।॥	५	दिनानि द्वादशांशाः
३	५	३॥	९	८	९॥	८॥	३॥	१०	घटिका एक दिने

पापवर्षे भवेद् दुःखं शुभ वर्षे सुखालयः॥

(अर्थ)

ऊपर लिखे हुए चक्र से दशा समझ में आजावेगी। जो वर्ष पाप ग्रह का हो उसमें दुःख होता है। जो शुभ ग्रह का हो उसमें सुख मिलता है॥

मुद्दादशाया मन्तर्दशाचक्रम्

सू	चं.	मं.	रा.	वृ	श.	वु.	के	शु
दिनानि १८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	६०
गुणकाः ४	८	५	७	१०	६	६	५	६
सूर्यान्तरम्	चन्द्रांतरम्	भौमान्तरम्	राह्वन्तरम्	जीवान्तरम्	शन्यन्तरम्	वुधान्तरम्	केत्वन्तरम्	शुक्रान्तरम्
सू	चं.	म.	रा.	वृ	श.	वु	के	शु
१।१२	४।०	१।४५	६।१८	८।०	५।४२	७।३६	१।४५	६।०
चं.	मं.	रा	वृ	श	वु.	के	शु	सू
२।२४	२।३०	२।२७	९।०	४।४८	८।३३	४।१५	२।६	४।०
मं.	रा	वृ	श	वु.	के	शु	सू	चं
१।३०	३।३०	३।३०	५।२४	७।१२	४।४५	५।६	१।२४	८।०
रा	वृ	श	वु	के	शु	सू	चं.	मं.
२।६	५।०	२।६	८।६	४।०	५।४२	३।२४	२।४८	५।०
वृ	श	वु	के	शु	सू	च	म.	रा
३।०	३।०	३।९	४।३०	४।४८	३।४८	६।४८	१।४५	७।०
श	वु.	के	शु	सू	च	म.	रा	वृ
२।४८	४।३०	१।४५	५।२४	३।१२	७।३६	४।१५	२।२७	१०।०
वु.	के	शु	सू	च.	मं.	रा	वृ	श
२।४२	२।३०	२।६	३।३६	६।२४	४।४५	५।५७	३।३०	६।०
के	शु	सू	च	म	रा	वृ	श	वु
१।३०	३।०	१।२४	७।१२	४।०	६।३६	८।३०	२।६	९।०
शु	सू	चं.	मं.	रा.	वृ	श	वु	के
२।४८	२।०	२।४८	४।३०	५।३६	९।३०	५।६	३।९	५।०

वर्षे सूर्यादीनां चतुर्विधदशाफलानि.

(पञ्चाल्पो हीनवीर्यः स्याद्धिको मध्य उच्यते ।
दशा (१०) धिको वली प्रोक्तः पञ्चवर्गीवलादिकम् ॥)

नृपतित्वं प्रधानत्वं तेजोहस्त्यश्ववाहनम् ।
स्वदशायां फलं चैव दत्ते पूर्णवलो रवि ॥१॥
व्यापारं तु पुरग्रामाद् द्रव्यलाभसुखानि च ।
स्वदशायां फलं चैव दत्ते मध्यवलो रविः ॥२॥
रोगं घातं भयं शोकं भृत्यवंधनविग्रहैः ।
नानानर्थान्महाशोकं दत्ते नष्टवलो रविः ॥३॥
तेजोभ्रंशं तथा घातं नैस्वं बन्धुषु विग्रहम् ।
स्वदशायां फलं चैव दत्ते निम्नवलो रविः ॥४॥
पदप्राप्तिं नृपाद्राज्यं स्त्रीलाभं सुखसम्पदम् ।
स्थानप्राप्तिं मनःसौख्यं दत्ते पूर्णवलः शशी ॥५॥
वाणिज्यं सफलं कुर्यात्स्वगेहेऽपि महासुखम् ।
ज्ञातिप्राधान्यमैश्वर्यं दद्यान्मध्यवलः शशी ॥६॥
देहे मान्द्यं सुहृद्द्वेषं महाग्लानिं धनक्षयम् ।
मित्रवैरं मनस्तापं दत्तेऽधमवलः शशी ॥७॥
तेजोहानिं महाक्लेशं शीतज्वरकरं परम् ।
कुर्यान्नष्टवलश्चन्द्रो दौःस्थ्यं पापं समाचरन् ॥८॥
कुजः पूर्णवलो दद्यात्संग्रामे विजयश्रियम् ।
दण्डनाथपदप्राप्तिं सेनानायकमेव च ॥९॥
मध्यवीर्यः कुजः कुर्यात्तेजस्वित्वं जयं रणे ।
राज्यतंत्रस्थपत्यं च राज्यं वा लभ्यमेव च ॥१०॥
हीनवीर्यः कुजः कुर्याद्द्वन्द्वं क्लेशं महागदम् ।
देहघातं तु वैकल्यं रक्तस्रावं मुखात्तथा ॥११॥

विवादं विग्रहं युद्धं मर्कटाच्च महाभयम् ।
स्वदशायां फलं चैव दत्ते नष्टबलः कुजः ॥१२॥
सेवया सुखसम्पत्ति धर्नलाभो महद्यशः ।
स्वबुद्ध्या राज्यलाभं च कुर्यात्पूर्णबलो बुधः ॥१३॥
धर्मसिद्धिन्तु कर्माप्ति मतुला मुन्नतिं तथा ।
पठनाल्लेखनाद् द्रव्यं दद्यान्मध्यबलो बुधः ॥१४॥
देशा द्देशान्तर प्राप्तिं घातं बन्धुकुलक्षयम् ।
बन्धन बुद्धिदोषेण दद्यान्नष्टबलो बुध· ॥१५॥
माननाशं महाकष्ट धनहानि महद्भयम् ।
कलिं गेहे तथाऽकीर्तिं दद्याद्धीनबलो बुधः ॥१६॥
मण्डलस्वामितां तेजो नरेन्द्रत्व मथापिवा ।
धनमैश्वर्यमारोग्यं दद्याज्जीवो बलाधिकः ॥१७॥
विज्ञानशास्त्राधिगम माचार्यत्वं नृपात्सुखम् ।
सौख्यं राज्याधिकारञ्च दद्यान्मध्यबलो गुरुः ॥१८॥
देहे रोगं मनस्ताप दारिद्र्यं धर्मनाशनम् ।
पराभवं रिपोर्भीति दद्यान्न्यूनबलो गुरुः ॥१९॥
धननाशं स्थाननाशमाधिव्याधिसमुद्भवम् ।
दन्तपीडां करोत्येव वर्षे नष्टबलो गुरुः ॥२०॥
राजलक्ष्मी कलत्रञ्च पुत्रमित्रस्त्रभोग्यताम् ।
तद्दशाया फलञ्चैव दत्ते पूर्णबलो भृगुः ॥२१॥
दण्डेशं सर्वशास्त्रज्ञं स्वपक्षाच्च महद्धनम् ।
स्वदशायां फलञ्चैव कुर्यान्मध्यबल सित· ॥२२॥
भ्रमणं निष्फला सेवा स्त्रीपक्षादसुखं भवेत् ।
स्वदशायां फलञ्चैव दद्यादल्पबल· सितः ॥२३॥
पुत्रशोकं गृहभ्रंशं पथि मृत्युं धनक्षयम् ।
स्वदशाया फल चैव दत्ते नष्टबलो भृगुः ॥२४॥

अटन देशभूपत्वं भिन्न देशाधिनाथताम् ।
स्वदशायां फलञ्चैव दत्ते पूर्णवलः शनिः ॥२५॥
कोशगुप्तिं सरोष्ट्राणां दुर्गमार्गादिरक्षणम् ।
स्वदशायां फलञ्चैव दत्ते मध्यवलः शनिः ॥२६॥
वियोगं विग्रहं व्याधिं सीकरान्मरुतो मृतिम् ।
स्वदशायां फलञ्चैव दत्तेऽधम वलः शनिः ॥२७॥
नीचसेवा गृहोद्वेगं तथा चैाराद्धनक्षयम् ।
स्वदशायां फलञ्चैव दत्ते नष्टवलः शनिः ॥२८॥

(अर्थ)

(वर्षेश के फल में तीन प्रकार का वल लिखा है। यहां दशा प्रकरण में चार प्रकार का वल है। पञ्च वर्गी वल में ५ विश्वा से कम वल हो तो हीन वल होता है। ५ से १० तक मध्य वल होता है। १० से २० तक पूर्ण वल होता है। पाच से भी कम नष्ट वली होता है। "त्रिंशत्स्वभे" इत्यादि ५१० पृष्ठ में छपा है। उच्च वल निकालने का रीति यह है। "तत्सप्तम नीच मनेन हीनो ग्रहोऽधिकश्चे द्सभाद्विशोध्यः। चक्रात्तदं-शाङ्कलवो वलं स्यात्" अर्थात् जिस ग्रह का उच्च वल निकालना हो उसके नीच मे उसको घटावे। जो ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में घटा दे। शेष के अंश करके ९ से भाग दे। जो लब्धि कलादिक निकले वही उच्च वल है। यथा सूर्य का नीच ६।१० स्पष्ट सूर्य ९।७३०।६ हीन किया तो ३।२७।३०।६ वचा इसके अंश ८७।३०।६ हुए। ९ से भाग दिया तो ९।४३ सूर्य का उच्च वल हुआ॥)

जव वर्ष में सूर्य्य पूर्ण वल वाला हो तो मनुष्य राजा होता है, अपने कुल में प्रधान होता है, उसका तेज वढ़ता है, हाथी घोड़े उसको सवारी के लिये मिलते हैं। सूर्य्य अपनी दशा में फल देना है ॥१॥

जव सूर्य्य मध्यम वल वाला हो तो व्यापार में सिद्धि होती है, नगर तथा ग्राम से द्रव्य का लाभ तथा सुख मिलता है ॥२॥

जब सूर्य्य नष्ट बली हो तो रोग, चोट, भय, शोक, भृत्य का बन्धन, झगड़ा तथा अनेक अनर्थ होने से महा शोक देखने में आते हैं ॥३॥

जब सूर्य्य निन्दित बल वाला हो तो तेज का नाश होता है, चोट लगती है, धन की हानि होती है, बान्धवों से वैर होता है ॥४॥

जब चन्द्रमा पूर्ण बली हो तो राजा से पद की प्राप्ति होती है, राज्य मिलता है, स्त्री लाभ होता है, सुख तथा सम्पत्ति मिलती है, स्थान की प्राप्ति होती है, चित्त में सुख होता है ॥५॥

जब चन्द्रमा मध्यम बली हो तो व्यापार में सफलता होती है, अपने घर में बड़ा सुख मिलता है, बान्धवों में प्रधानता मिलती है, तथा ऐश्वर्य्य मिलता है ॥६॥

जब चन्द्रमा अधम बल वाला हो तो शरीर दुर्बल होता है, मित्रों से द्वेष होता है, ग्लानि होती है, धन का नाश होता है, मित्रों से वैर होता है, चित्त में सन्ताप होता है ॥७॥

जब चन्द्रमा नष्ट बली हो तो तेज की हानि होती है, महा क्लेश होता है, शीतज्वर होता है, दुष्ट स्थान मिलता है तथा मनुष्य पाप करता है ॥८॥

जब मंगल पूर्ण बली हो तो संग्राम में विजय होता है, दण्ड नाथ का पद मिलता है, तथा मनुष्य सेना नायक होता है ॥९॥

जब मंगल मध्यम बल वाला हो तो मनुष्य तेजस्वी होता है, संग्राम में उसको जय मिलता है, राज्यतन्त्र का अधिकार मिलता है अथवा राज्य मिलता है ॥१०॥

जब मङ्गल हीन बल वाला हो तो भङ्ग, क्लेश, महा रोग होते हैं, चोट लगती है, चित्त में विकलता होती है, तथा मुख से रुधिर निकलता है ॥११॥

जब मंगल नष्ट बली हो तो लोगों से विवाद, (झगड़ा) युद्ध, तथा वानर से भय होता है ॥१२॥

जब बुध पूर्ण बली हो तो सेवा से सुख सम्पत्ति मिलती है, धन का

लाभ होता है, वडा यश होता है, अपनी वुद्धि से राज्य का लाभ होता है ॥१३॥

जव वुध मध्यम वली हो तो धर्म की सिद्धि होती है, कर्म की प्राप्ति होती है, वड़ी उन्नति होती है, लिखने पढ़ने से धन मिलता है ॥१४॥

जव वुध नष्ट वली हो तो एक देश से दूसरे देश में जाना पडता है, चोट लगती है, वान्धवो के कुल का नाश होता है, अपनी वुद्धि के दोष से वन्धन होता है ॥१५॥

जव वुध वलहीन हो तो मान नाश होता है, बड़ा कष्ट मिलता है, धन की हानि होती है, वडा भय होता है, घर में झगडा होता है, और लोगों में वदनामी होती है ॥१६॥

जव वृहस्पति अधिक वल वाला हो तो मनुष्य मण्डल का स्वामी होता है, अथवा राजा होता है, तेजस्वी होता है, धन ऐश्वर्य तथा आरोग्य की प्राप्ति होती है ॥१७॥

जव वृहस्पति मध्यम वल वाला हो तो ज्ञान तथा शास्त्र की प्राप्ति होती है, आचार्य्य का पद मिलता है, राजा से सुख मिलता है, सुख तथा राज्य का अधिकार भी मिलता है ॥१८॥

जव वृहस्पति न्यून वल वाला हो तो देह में रोग, चित्त में सन्ताप, दारिद्रय, धर्म का नाश, पराभव, तथा शत्रु भय होते हैं ॥१९॥

जव वृहस्पति नष्ट वल वाला हो तो धन नाश, स्थान नाश, आधि, व्याधि, तथा दन्त रोग होते हैं ॥२०॥

जव शुक्र पूर्ण वली हो तो राज लक्ष्मी, स्त्री पुत्र, मित्र तथा धन का भोग मिलता है ॥२१॥

जव शुक्र मध्यम वली हो तो मनुष्य दण्डपति (मजिस्ट्रेट आदि), सव शास्त्रों का जानने वाला होता है, तथा अपने पक्ष से बहुत धन उसको मिलता है ॥२२॥

जब शुक्र अल्पबली हो तो मनुष्य इधर उधर घूमता है, सेवा निष्फल होती है, स्त्री पक्ष से दुःख मिलता है ॥२३॥

जब शुक्र नष्टबली हो तो पुत्रशोक, घर से बाहर निकलना, मार्ग में मृत्यु तथा धन नाश होते हैं ॥ २४ ॥

जब शनैश्चर पूर्णबली हो तो मनुष्य इधर उधर घूमता है, देश का राजा होता है, भिन्न देशों का स्वामी होता है ॥ २५ ॥

जब शनैश्चर मध्यम बलवाला हो तो मनुष्य कोष अर्थात् खज़ाने की रक्षा करने वाला, अथवा गधे और ऊंटों की रक्षा करने वाला, अथवा किला या मार्ग की रक्षा करने वाला होता है ॥ २६ ॥

जब शनैश्चर अधम बलवाला हो तो लोगों से वियोग, अथवा झगड़ा, व्याधि तथा शीत वायु से मृत्यु होती है ॥ २७ ॥

जब शनैश्चर नष्ट बली हो तो नीच की सेवा, घर मे उद्वेग, तथा चोर के द्वारा धन नाश होते हैं॥ २८ ॥

शुभा अन्तर्दशाः

चन्द्रार जीवा १ बुध जीव शुक्रा २
दिवाकरेन्दू ३ रविजज्ञ शुक्राः ४ ।
रवीन्दु शुक्रा ५ बुध जीव मन्दा ६
जीवज्ञ शुक्रा ७ रवितः क्रमात्स्युः ॥
एव मन्तर्दशायाञ्च पाचकाः शुभदा ग्रहाः ।
अन्येत्वशुभदा ज्ञेया एवञ्च विदशाफलम् ॥

(अर्थ)

(१) सूर्य की महा दशा में, चन्द्रमा, मंगल तथा बृहस्पति की अन्तर्दशा
(२) चन्द्रमा की महा दशा में बुध, बृहस्पति तथा शुक्र की अन्तर्दशा
(३) मंगल की महा दशा में सूर्य तथा चन्द्रमा की अन्तर्दशा
(४) बुध की महा दशा में शनि, बुध तथा शुक्र की अन्तर्दशा

(५) वृहस्पति की महा दशा में सूर्य, चन्द्रमा तथा शुक्र की अन्तर्दशा
(६) शुक्र की महा दशा में बुध, बृहस्पति तथा शनि की अन्तर्दशा
(७) शनि की महा दशा में वृहस्पति, बुध तथा शुक्र की अन्तर्दशा

शुभ फल देने वाली होती हैं। इसी प्रकार विदशा का भी फल जानना चाहिये। शेष ग्रहों की अन्तर्दशा अशुभ फल देने वाली होती हैं॥

सूर्यादीना दशान्तर्दशा फलम्.

रवि मुद्द फलम्.

सूर्ये राजकुलाद्भीतिः पीडा स्यात्पित्तसम्भवा।
विपत्तयश्च बन्धूनां वित्तानां व्यय एव च॥१॥
शान्तिं रिपुप्रतापानां नैरुज्यं धनसम्पदः।
कुरुतेऽन्तर्गतश्चन्द्रो दशायां चण्डरोचिषः॥२॥
कुजो विजय मत्युग्रं हेमरत्नं नृपात्सुखम्।
चान्द्रिश्शत्रुकुलाद्भीतिं कुष्ठपामादिकान्गदान्॥३॥
दारिद्र्यपापव्यसनं रोगेभ्योऽपिपरिच्युतिम्।
विलासं विविधं धर्म क्रिया तत्परमालसम्॥४॥
पित्तज्वरं च रोगादीन्देहत्यागं च भार्गवः।
मातृपितृभयञ्चैव वित्तानां व्यय मेव च॥५॥
शनि नृपाद्भयं दैन्यं वैरिवृद्धिं धनक्षयम्।
अर्थनाशोऽन्य देशेषु गमनं गौरवाल्पता॥
शत्रु राज कुलाद्भीति रनर्थो बहुधा भवेत्॥६॥

चन्द्र मुद्दम्.

चान्द्र्यां श्रीसुतभूलाभो वस्त्राभरणसंयुतिः।
स्वपक्ष वैरं कन्याया जन्म निद्रारतिस्तथा॥१॥
इन्दोर्दशायां मार्तण्डे विजयारोग्यसम्पदः।
भौमं चौरात्कोशनाशो रक्तपित्तादिका गदाः॥२॥

चन्द्रजे वित्ततुरग लाभो वित्तसुखानि च ।
धनालङ्कारहस्त्यश्व मकस्मात्सुरपूजिते ॥३॥
स्त्रीसुखञ्च सुसङ्गश्च शुक्रेऽलङ्कारलब्धयः ।
रोगव्यसनशोकाश्च बन्धुतोऽभिभवश्शनौ ॥४॥
वह्निशोकभयं घोरं बन्धूद्वेगो धनक्षयः ।
स्त्रिया लाभः स्त्रिया हानिः केतावन्तर्गते विधौ ॥५॥

भौम मुद्दम्

भौमे शत्रु विमर्दश्च विग्रहो बान्धवैः सह ।
रक्तपित्तकृता पीडा परस्त्रीभिस्समागमः ॥१॥
भानो भौमदशान्तःस्थे प्रचण्डः साहसी जयी ।
चन्द्रे सुखसुहृद्वृद्धि मणिमौक्तिकसञ्चयः ॥२॥
बुधे पित्तोद्भवा पीडा नाशो वैरिभयं महत् ।
गुरौ भूपतिमित्रत्व सुहृत्त्वासक्तचित्तता ॥३॥
शुक्रे रणाद्भयं व्याधि व्यसनानि धनक्षय- ।
शनौ दिने दिने दुःख मसह्यव्यसनागम ॥४॥
कर्मार्थनाशउद्वेगो बन्धुचौरादिकम्भयम् ।
स्वनाशो देहपीडा च केतावन्तर्गते कुजे ॥५॥

बुध मुद्दम्

बौध्यां बन्धुसमायोगो मित्रधर्म समागमः ।
प्रीति जनस्य विपुला देहपीडा त्रिदोषजा ॥१॥
चान्द्रे दशाया मुष्णांशोर्दन्तिस्वर्णाम्बरासयः ।
चन्द्रे विचर्चिका कुष्ठ राजरोगादिकं भयम् ॥२॥
भौमे क्लेशश्शिरोरोगो बन्धुवैरं महद्भयम् ।
गुरौ रोगादिभिर्युक्तो भृगो राज्यसुगन्धिमान् ॥३॥

शनौ पापसुखासक्त प्रचण्डो मदनोद्धतः ।
वन्धुनाशो मनस्तापो देहत्यागो धनक्षयः ॥
सुहृद्वन्धुसुतैर्द्वन्द्वः केतौ मित्रकलि र्भवेत् ॥४॥

गुरु मुद्दम्.

जैव्या मानधनप्राप्ति र्देवब्राह्मणपूजनम् ।
कर्णरोग स्तथा वैरं स्वजनैश्च कलि र्भवेत् ॥१॥
सुखी गुरुक्षेमवांश्च सूर्ये जीवदशा गते ।
चन्द्रे वहुविधा लब्धि र्निर्जितारिर्महीसुते ॥२॥
शूरोऽपि सेवी चण्डश्च परितापी सुखी कुजे ।
पित्रोर्भक्तिः सुहृद्युक्तो नीरुक्सुखयुतो वुधे ॥
शुक्रे चिन्ता हृति श्शत्रु ब्राह्मणाश्रयजीवनम् ॥३॥
पराङ्गनादिसंसक्त श्शनौ सुखधनैर्हतः ।
वन्धुद्वेषो मृषावाद· स्वामिभिस्तु निराश्रयः ॥४॥

शुक्र मुद्दम्.

शौक्र्या स्त्रीसङ्गमो लाभो वस्त्राभरणसंयुत· ।
कौशल्य स्महती कीर्ति र्धन लाभश्च जायते ॥१॥
रवौ सितदशान्त स्थे वन्धनश्चोदरामयः ।
कामलस्मौलिदशन नखरोगः कलानिधौ ॥२॥
भौमे ह्युपद्रवो भूमि नाशः पित्तरुजोऽस्नरुक् ।
वुधे धनर्द्धि र्भूलाभ सुखवित्तेष्टलाभकः ॥३॥
जीवे धनसुखं देशसम्पत्तिः शीलधर्मकौ ।
वृद्धाङ्गनारति· सौरे रिपुसाम्याधिकारिता ॥ ४ ॥
मृतेर्भयकृतः शोको दु·ख प्राप्तिर्नसंशयः ।
अग्निदाहो ज्वरो घोरः कन्याजन्म स्त्रियाश्च्युतिः ॥५॥

शनि मुद्दम्.

शनैश्चर्यां देहपीडा पुत्रदारैश्च विग्रहः ।
तन्द्रा श्रमोबुद्धिनाशो विदेशगमनंभवेत् ॥ १ ॥
पुत्रार्थमित्रस्त्रीनाशा दशायाम्भास्करेशनेः ।
स्त्रीहानिर्बन्धुविश्लेषः कलिर्मृत्युः सुधाकरे ॥ २ ॥
भैामे दुःखं रुजोदेश त्यागो वहुविधैर्यता ।
वुधे सुखं सुभगता सत्कारश्च जयोधनम् ॥३॥
जीवे समुचितं सौख्यं पुरग्रामगणेशता ।
अनेककामिनी मित्र यशोवित्तानि भार्गवे ॥४॥
वन्धूद्वेगो महादुःख मर्थनाशो महद्भयम् ।
अग्निदाहो ज्वरो घोरः कन्याजन्माङ्गनासुखम् ॥५॥

राहु मुद्दम्

स्वर्भानौ जायते दुःखं वन्धूनामात्मनोरुजः ।
देशान्तरेषु गमन धननाशोऽपि विग्रहः ॥ १ ॥
राहोर्दशायां भार्याया विपत्तिर्वान्धवक्षयः ।
अर्थनाशोऽन्यदेशेषु गमनञ्चौरवाल्पता ॥ २ ॥
अशुभंवान्यजं दैन्यं व्याधिं भीतिं सुतक्षयम् ।
करोति सिंहिकासूनोभानुरन्ददंशाङ्गतः ॥ ३ ॥
वह्निशोकभयं घोरं वन्धूद्वेगं धनक्षयम् ।
करोति सिंहिकासूनोर्विधुरन्तदंशांगतः ॥ ४ ॥
कामार्थनाशमुद्वेगं वन्धुचैारादिकंभयम् ।
करोतिसिंहिकासूनो भूमिजोऽन्तदंशांगतः ॥ ५ ॥
वन्धुनाशं मनस्तापं देशत्यागं धनक्षयम् ।
करोति वहुदुःखानि राहोरन्तर्गतो वुधः ॥ ६ ॥
वन्धुद्वेषं मृषावादं सम्यग्वन्धुनिराश्रयम् ।
करोतिसिंहिकासूनो गुरुरन्तदंशाङ्गतः ॥ ७ ॥

वन्धुद्वेषं महादुःखमर्थनाशं महद्भयम् ।
शरीरेक्लेशमाप्नोति राहोरन्तर्गते सिते ॥ ८ ॥
मृतिं भयकृत शोक दुःखप्राप्ति न संशयः ।
करोति सिंहकासूनो श्शनिरन्तदशांगतः ॥ ६ ॥

केतु मुद्दम्

केतोर्दशायास्याद्वादो द्रव्यपुत्रक्षयौ तथा ।
शत्रु राजकुलाद्भीतिरनर्थो वहुधा भवेत् ॥ १ ॥
अग्निदाहो ज्वरोघोर कन्याजन्म स्त्रियश्च्युतिः ।
केतो रन्तर्गते सूर्ये राज्ञा सह कलि र्भवेत् ॥ २ ॥
अर्थनाशोऽर्थलाभश्च सुखं दुःखं च जायते ।
स्त्रीलाभश्च स्त्रिया हानिः केतोरन्तर्गते विधौ ॥ ३ ॥
प्रजया सह सम्वाद श्चौरवह्न्यरिज भयम् ।
स्वनाशो देहपीडाच केतोरन्तर्गते कुजे ॥ ४ ॥
चौरैर्वा शत्रुभिर्युद्धं देहत्यागोऽभिजायते ।
देहपीडा ज्वरस्तीव्र केतोरन्तगतेवुधे ॥५॥
द्विजेन्द्रैः सहसम्प्रीतिर्नृपपूज्यैरमपिभिः ।
कुलस्त्रीषु सुतोत्पत्तिः केतोरन्तर्गते गुरौ ॥ ६ ॥
केतोरन्तर्गते शुक्रे विप्रैः सह कलिर्भवेत् ।
वातपित्तकृता पीडा गोत्रजैः सह विग्रहः ॥ ७ ॥
विदेशगमनं दुःखं केतोरन्तर्गते शनौ ।
सुहृद्बन्धुसुतैर्द्वन्द्वो भूनिमित्तं कलिर्भवेत् ॥
इष्टैश्च रणसम्वादो राहौ केत्वन्तरङ्गते ॥ ८ ॥

सूचना

अत्र स्वदशाफलमेव स्वान्तर्दशाफलं ज्ञेयम् ।
यत्र ग्रहाणां नामानुक्तं तत्राधःश्लोकेन पूर्वोक्त ग्रहा
दग्रिमग्रहफलं ज्ञेयमिति विशेषः ॥

(अर्थ)

मुद्दा दशा तथा अन्तर्दशाओं का फल.

(१) सूर्य्य की अन्तर्दशा का फल :—

जब सूर्य्य की दशा अथवा अन्तर्दशा हो तो राजा से भय, पित्त का रोग, बान्धवों की विपत्ति, तथा व्यय होते हैं ॥ १ ॥

जब सूर्य्य की दशा में चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो शत्रु के प्रताप की शान्ति हो जाती है, नीरोगता तथा धन सम्पत्ति होती हैं ॥२॥

जब मङ्गल की अन्तर्दशा हो तो बड़ा विजय होता है, सुवर्ण, रत्न, की प्राप्ति होती है, राजा से सुख मिलता है। जब बुध की अन्तर्दशा हो तो शत्रु से भय होता है, कोढ़ तथा खुजली आदि रोग होते हैं, दारिद्र्य, पाप, दुःख, तथा रोग होते हैं ॥ ३ ॥

जब बृहस्पति की अन्तर्दशा हो तो अनेक प्रकार के भोग विलास तथा धर्म के कामों में चित्त तत्पर रहता है ॥ ४ ॥

जब शुक्र की अन्तर्दशा हो तो पित्त ज्वर आदि रोग, देहत्याग, मातृ पितृ भय, तथा धन नाश होते हैं ॥ ५ ॥

जब शनि की अन्तर्दशा हो तो राजा से भय, दुःख, शत्रु वृद्धि तथा धन नाश होते हैं। जब राहु की अन्तर्दशा हो तो धन का नाश, परदेश गमन, तथा अल्पगौरव होते हैं। जब केतु की अन्तर्दशा हो तो शत्रु अथवा राजा से भय तथा अनेक प्रकार के अनर्थ होते हैं ॥६॥

(२) चन्द्रमा की अन्तर्दशा का फल.—

जब चन्द्रमा की एकान्तरी दशा हो तो स्त्री पुत्र, तथा भूमि का लाभ होता है, वस्त्र तथा आभूषणों की प्राप्ति होती है, अपने पक्ष वालों से वैर होता है, कन्या जन्म होता है, नींद बहुत आती है ॥१॥

जब सूर्य्य की अन्तर्दशा हो तो विजय आरोग्य तथा सम्पत्ति होती

हैं। जब मङ्गल की अन्तर्दशा हो हो चोर के द्वारा खजाने का नाश होता है और रक्तपित्त आदि रोग होते हैं ॥ २ ॥

जब बुध की अन्तर्दशा हो तो धन तथा अश्व का लाभ होता है, और सुख मिलता है। जब बृहस्पति की अन्तर्दशा हो तो धन, अलङ्कार, हस्ती तथा अश्व का अकस्मात् लाभ होता है ॥ ३ ॥

जब शुक्र की अन्तर्दशा हो तो स्त्री का सुख मिलता है, सज्जनों से सङ्गति होती है, तथा आभूषण की प्राप्ति होती है। जब शनि की अन्तर्दशा हो तो रोग, शोक, दुःख, तथा बान्धवों से पराभव होते हैं ॥ ४ ॥

जब राहु की अन्तर्दशा हो तो अग्नि भय, शोक, बान्धवों से उद्वेग तथा धननाश होते हैं। जब केतु की अन्तर्दशा हो तो स्त्री का लाभ होता है तथा स्त्री की हानि भी होती है ॥ ५ ॥

(३) <u>मङ्गल की अन्तर्दशा का फल</u> —

जब भौम की एकान्तरी दशा हो तो शत्रुओं का नाश होता है, बान्धवों के संग लड़ाई होती है, रक्तपित्त रोग होता है, तथा परस्त्रीसंग होता है ॥१॥

जब सूर्य्य की अन्तर्दशा हो तो मनुष्य बडा क्रोधी, साहसी तथा विजयी होता है। जब चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो सुख तथा मित्रों की वृद्धि होती है, मणि और मोती का संचय होता है ॥२॥

जब बुध की अन्तर्दशा हो तो पित्त विकार होता है, नाश होता है तथा शत्रु से बडा भय होता है। जब बृहस्पति की अन्तर्दशा हो तो राजा के संग मित्रता होती है तथा मैत्री मे चित्त आसक्त रहता है ॥३॥

जब शुक्र की अन्तर्दशा हो तो युद्ध से भय होता है, व्याधि होती है, दुःख होता है तथा धन का नाश होता है। जब शनि की अन्तर्दशा हो तो प्रतिदिन दुःख होता है, तथा ऐसा दुःख होता है जो असह्य हो ॥४॥

जब राहु की अन्तर्दशा हो तो कर्म तथा धन का नाश होता है,

चित्त में उद्वेग होता है, बान्धव तथा चोरों से भय होता है। जब केतु की अन्तर्दशा हो तो धन का नाश होता है तथा देह में पीड़ा होती है ॥५॥

(४) बुध की अन्तर्दशा का फल:—

जब बुध की एकान्तरी दशा हो तो बान्धवों से संगम होता है, मित्र तथा धर्म से भी समागम होता है, लोगों से प्रीति होती है तथा शरीर में वात पित्त कफ रोग से पीड़ा होती है ॥१॥

जब सूर्य्य की अन्तर्दशा हो तो हाथी सुवर्ण, तथा वस्त्र की प्राप्ति होती है। जब चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो खुजली, कोढ़, राजरोग आदि का भय होता है ॥२॥

जब मंगल की अन्तर्दशा हो तो क्लेश होता है, सिर में रोगहोता है, बान्धवों से वैर तथा बड़ा भय होता है। जब बृहस्पति की अन्तर्दशा हो तो अनेक प्रकार के रोग होते हैं। जब शुक्र की अन्तर्दशा हो तो राज्य मिलता है ॥३॥

जब शनि की अन्तर्दशा हो तो मनुष्य पाप में आसक्त होता है, क्रोधी होता है, तथा काम के मद से उद्धत होता है ॥ जब राहु की अन्तर्दशा हो तो बान्धवों का नाश, चित्त में सन्ताप, शरीर का त्याग, तथा धन नाश होते हैं। जब केतु की अन्तर्दशा हो तो मित्र, बान्धव तथा पुत्रों से कलह होता है ॥४॥

(५) बृहस्पति की अन्तर्दशा का फल:—

जब बृहस्पति की एकान्तरी दशा हो तो आदर तथा धन की प्राप्ति होती है, देवता तथा ब्राह्मणों की पूजा होती है, कानों में रोग होता है, तथा आपसी लोगों से झगड़ा होता है ॥१॥

जब सूर्य्य की अन्तर्दशा हो तो मनुष्य सुखी तथा कुशल युक्त होता है। जब चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो अनेक प्रकार का लाभ होता है। जब मंगल की अन्तर्दशा हो तो शत्रुओं का नाश होता है, मनुष्य

बड़ा शूर होता है, सेवा करने वाला होता है, क्रोधी होता है, शत्रुओं को सन्ताप देने वाला होता है, तथा सुखी होता है ॥२॥

जब बुध की अन्तर्दशा हो तो माता पिता की भक्ति होती है, मित्रों से संयोग होता है, मनुष्य रोग रहित तथा सुख से युक्त होता है। जब शुक्र की अन्तर्दशा हो तो चिन्ता होती है, हानि होती है, शत्रु अथवा ब्राह्मण के आधीन जीवन होता है ॥३॥

जब शनि की अन्तर्दशा हो तो परस्त्री से संगम होता है, सुख तथा धन की हानि होती है। जब राहु की अन्तर्दशा हो तो बान्धवों से द्वेष, होता है, तथा झूठा कलंक लगता है। जब केतु की अन्तर्दशा हो तो मनुष्य आश्रयहीन होता है ॥४॥

(६) शुक्र की अन्तर्दशा का फल:—

जब शुक्र की एकान्तरी दशा हो तो स्त्रियों से समागम होता है, लाभ होता है, वस्त्र तथा आभूषणों की प्राप्ति होती है, चातुर्य, बड़ा यश, तथा धन लाभ होते हैं ॥१॥

जब सूर्य्य की अन्तर्दशा हो तो बन्धन तथा उदर रोग होते हैं। जब चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो कामल रोग होता है, सिर, दांत तथा नाखूनों में रोग होता है ॥२॥

जब मंगल की अन्तर्दशा हो तो उपद्रव, भूमि का नाश, पित्त तथा रुधिर विकार होते हैं। जब बुध की अन्तर्दशा हो तो धन का संचय, भूमि का लाभ, सुख, धन तथा अभीष्ट लाभ होते हैं ॥३॥

जब बृहस्पति की अन्तर्दशा हो तो धन सुख, तथा सम्पत्ति की प्राप्ति होती है, अच्छा आचरण तथा धर्म के कार्य्य होते हैं। जब शनि की अन्तर्दशा हो तो वृद्ध स्त्री से प्रीति होती है, तथा शत्रु के समान अधिकार मिलता है ॥४॥

जब राहु की अन्तर्दशा हो तो मृत्यु, भय, शोक, तथा दुःख होते

हैं। जब केतु की अन्तर्दशा हो तो अग्निदाह, बड़ा ज्वर, कन्या का जन्म तथा स्त्रीनाश होते हैं ॥५॥

(७) शनि की अन्तर्दशा का फलः—

जब शनि की एकान्तरी दशा हो तो देह में पीडा, पुत्र तथा स्त्री से झगडा, आलस्य, खेद, बुद्धिनाश तथा परदेश में गमन होते हैं ॥१॥

जब सूर्य्य की अन्तर्दशा हो तो पुत्र, धन, मित्र तथा स्त्री का नाश होता है। जब चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो स्त्रीहानि, बान्धवों से वियोग, कलह तथा मृत्यु होते हैं ॥२॥

जब मंगल की अन्तर्दशा हो तो दुःख, रोग, देशत्याग, तथा अनेक प्रकार की अधीरता होती है। जब बुध की अन्तर्दशा हो तो सुख, सत्कार, विजय तथा धन की प्राप्ति होती है। जब बृहस्पति की अन्तर्दशा हो तो सुख मिलता है, नगर अथवा ग्राम का प्रभुत्व मिलता है। जब शुक्र की अन्तर्दशा हो तो अनेक स्त्रियों से संगम होता है, मित्र यश तथा धन की प्राप्ति होती है ॥४॥

जब राहु की अन्तर्दशा हो तो बान्धवों से उद्वेग, बडा दुःख, धन नाश, तथा बड़ा भय होता है। जब केतु की अन्तर्दशा हो तो अग्निदाह, ज्वर, कन्या जन्म, तथा स्त्रीसुख होते हैं ॥५॥

(८) राहु की अन्तर्दशा का फलः—

जब राहु की एकान्तरी दशा हो तो बान्धवों से दुःख होता है, अपने शरीर में रोग होते हैं, परदेश में जाना पडता है, धन का नाश होता है तथा झगड़ा होता है ॥१॥ स्त्री पर विपत्ति पडती है, बान्धवों का नाश होता है, धन का नाश होता है, परदेश में जाना पडता है, तथा आदर कम हो जाता है ॥२॥

जब सूर्य्य की अन्तर्दशा हो तो अशुभ होता है, दूसरे के द्वारा दुःख होता है, व्याधिभय तथा पुत्रनाश होते हैं ॥३॥

जब चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो अग्नि से शोक होता है, बड़ा भय होता है, बान्धवों से दुःख मिलता है, तथा धननाश होता है ॥४॥

जब मंगल की अन्तर्दशा हो तो काम (कामदेव अथवा अभिलाषा) तथा धन का नाश होता है, चित्त में उद्वेग होता है, बान्धव अथवा चोर आदि का भय होता है ॥५॥

जब बुध की अन्तर्दशा हो तो बान्धवों का नाश, चित्त में सन्ताप, देशत्याग, धननाश तथा अनेक प्रकार के दुःख होते हैं ॥६॥

जब बृहस्पति की अन्तर्दशा हो तो बान्धवों से द्वेष होता है, मिथ्या कलङ्क लगता है, तथा वह मनुष्य बान्धवों से आश्रय हीन होता है ॥७॥

जब शुक्र की अन्तर्दशा हो तो बान्धवों से द्वेष, बडा दुःख, धन नाश, बडा भय तथा शरीर में क्लेश होते हैं ॥८॥

जब शनि की अन्तर्दशा हो तो मृत्युभय, शोक, तथा दुःख होते हैं ॥९॥

(९) केतु की अन्तर्दशा का फल.—

जब केतु की एकान्तरी दशा हो तो लोगों से झगड़ा होता है, धन नाश तथा पुत्र नाश होता है, शत्रु अथवा राजकुल से भय होता है, तथा अनेक प्रकार के अनर्थ होते हैं ॥१॥

जब सूर्य्य की अन्तर्दशा हो तो अग्निदाह, बड़ा ज्वर, कन्या जन्म, स्त्री की हानि तथा राजा के साथ कलह होते हैं ॥२॥

जब चन्द्रमा की अन्तर्दशा हो तो धन का नाश तथा धन का लाभ भी होता है, सुख होता है दुःख भी होता है, स्त्री का लाभ होता है तथा स्त्री की हानि भी होती है ॥३॥

जब मंगल की अन्तर्दशा हो तो सन्तान के साथ झगड़ा होता है, चोर, अग्नि तथा शत्रु का भय होता है, द्रव्य नाश होता है और शरीर में पीड़ा होती है ॥४॥

जब बुध की अन्तर्दशा हो तो चोर अथवा शत्रुओं के साथ युद्ध होता है, देहत्याग होता है, शरीर में पीड़ा होती है, तीव्र ज्वर आता है ॥५॥

जब बृहस्पति की अन्तर्दशा हो तो राजपूज्य तथा क्रोधी ब्राह्मणों से प्रीति होती है, अच्छे कुलवाली स्त्री से पुत्र की उत्पत्ति भी होती है ॥६॥

जब शुक्र की अन्तर्दशा हो तो ब्राह्मणों से झगड़ा होता है, वात पित्त का रोग होता है, अपने गोत्र में उत्पन्न लोगों से झगड़ा होता है॥७॥

जब शनि की अन्तर्दशा हो तो परदेश में जाना पड़ता है तथा दुःख होता है। जब राहु की अन्तर्दशा हो तो मित्र बान्धव तथा पुत्रों के साथ भूमि के निमित्त झगडा होता है, तथा इष्ट मित्रों के साथ लड़ाई होती है ॥८॥

सूचना—

इस दशाफल में जो ग्रह की अन्तर्दशा का फल है वही उसकी दशा का फल भी जानना चाहिये। जहां श्लोंको में ग्रहों का नाम नहीं है वहां पूर्वार्ध में पहिले ग्रह का तथा उत्तरार्ध में दूसरे ग्रह का फल जानना चाहिये ॥

वर्षयोगिनीदशा

गताब्दे स्वजन्मभसंख्यां योजयेत्। तत्त्रियुतं कार्यम्।
अष्टतष्टे शेषा दशा ॥

स्वामिनः	चं.	सू.	बृ	मं.	बु.	श.	शु.	रा.
दशाः	म.	पि.	ध.	भ्रा.	भ.	उ.	सि	स.
दिनानि	१०	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०

(अर्थ)

गत वर्षों में जन्म नक्षत्र की संख्या जोड़ देनी चाहिये और उसमें ३ मिलाना चाहिये, योग फल में ८ का भाग देने से जो शेष रहे वही पहिली दशा होती है। दशा का चक्र ऊपर लिखा है।

दशान्तर्दशा फल विचारः

सौम्यग्रहस्यैवदशां प्रविष्टा त्वन्तर्दशा सौम्यभवा तदा स्यात्।
कार्यार्थसिद्धिर्मनसश्चतुष्टिर्मित्राप्तिपुत्रादिसुखं तथैव ॥१॥
क्रूरस्य पाके यदि पापपाकः प्रोद्वेगचिन्ता भयकोपवादः।
मृषापवादो गदकादिकञ्च लोकैर्विरोधं स्वपरैरतीव ॥ २ ॥
शुभस्यमध्ये यदि पापकस्य दशातदा दुःख मनोऽधिमोहाः।
परस्परं ताडनबन्धनानि भवन्ति पुंसां व्यसनानि वापि ॥३॥
क्रूरग्रहस्यापि दशाविभागे सौम्यस्य चेत्स्यादसुखं च तन्द्रा।
आलस्यबुद्धिं व्यसनानि चैवं विचार्य मासे प्रवदेत्फलानि ॥४॥
जन्मनि वर्षे वायोग्रहःस्वगृहे स्वोच्चेस्वमित्रदृग्गादौ सौम्ययुतदृष्टो वाभवति तस्यदशाशोभना। नीचारिगृहास्तगतपतितभवनाधीश (८।६।१२) दशा निन्द्या। चन्द्रः ४।८।२।१।६एष्वशुभः ॥५॥

(अर्थ)

जब शुभ ग्रह की महादशा में शुभ ग्रह की अन्तर्दशा हो तो कार्य्यं तथा अर्थ की सिद्धि होती है, चित्त में सन्तोष होता है, मित्र की प्राप्ति होती है तथा पुत्र आदि से सुख मिलता है ॥१॥

जब पाप ग्रह की महादशा में पाप ग्रह की अन्तर्दशा हो तो चित्त में उद्वेग (घबराहट), चिन्ता, भय, क्रोध, झगड़ा, झूठा कलङ्क, रोग आदि तथा अपने तथा पराये लोगों से झगडा होता है ॥२॥

यदि शुभ ग्रह की दशा में पाप ग्रह की अन्तर्दशा हो तो दुःख, मोह, ताड़न, बन्धन तथा आपत्तिया होती हैं ॥३॥

जब क्रूर ग्रह की दशा में सौम्य ग्रह की अन्तर्दशा हो तो दुःख, आलस्य, तथा व्यसन होते हैं ॥४॥

जन्म में या वर्ष में जो ग्रह स्वगृही हो, अथवा अपने उच्च का हो, अथवा मित्र के घर का अथवा मित्र की द्रेष्‍काण आदि का हो, अथवा सौम्य ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो, उसकी दशा शुभ होती है। जो ग्रह नीच का अथवा शत्रु के घर का अथवा अस्तका अथवा ८,६,१२ स्थानों का स्वामी हो, उस ग्रह की दशा अशुभ होती है। ४,८,२,१,६ स्थानों में चन्द्रमा अशुभ होता है। ५॥

त्रिपताक चक्रम्।

रेखात्रयं तिर्यगथोर्ध्वसंस्थ
मन्योन्यविद्धाग्रगमेककोणात्।
स्मृतं बुधैस्तत्त्रिपताकचक्रं
प्राङ्मध्यरेखाग्रगवर्षलग्नात् ॥ १ ॥
न्यसेद्भचक्रं किल तत्र सैकां
याताब्दसंख्यां विभजेन्नभोगैः।
शेषोन्मितेजन्मगचन्द्रराशे
स्तुल्ये च राशौ विलिखेच्छशाङ्कम् ॥२॥
परे चतुर्भाजितशेषतुल्ये
स्थाने स्वराशौ खचराश्चलेख्याः ॥ ३ ॥
स्वर्भानुविद्धे हिमगौ तु कष्टं
तापोऽर्कविद्धे रुगिनात्मजेन।
महीजविद्धे तु शरीरपीडा
शुभैश्च विद्धे जयसौख्यलाभः ॥४॥

$\frac{\text{गताब्द}+१}{९}$ + जन्मराशि = शशांकं लिखेत्।

$\frac{\text{गताब्द}}{४}$ + जन्म स्थानाङ्क सू. मं. बु. बृ. शु. श
= लग्नं त्रिपताक चक्रे।

$\frac{\text{गताब्द}}{४}$ राहुकेत्वङ्काद्धीनः कार्यः।

(अर्थ)

वर्णलग्नम्.
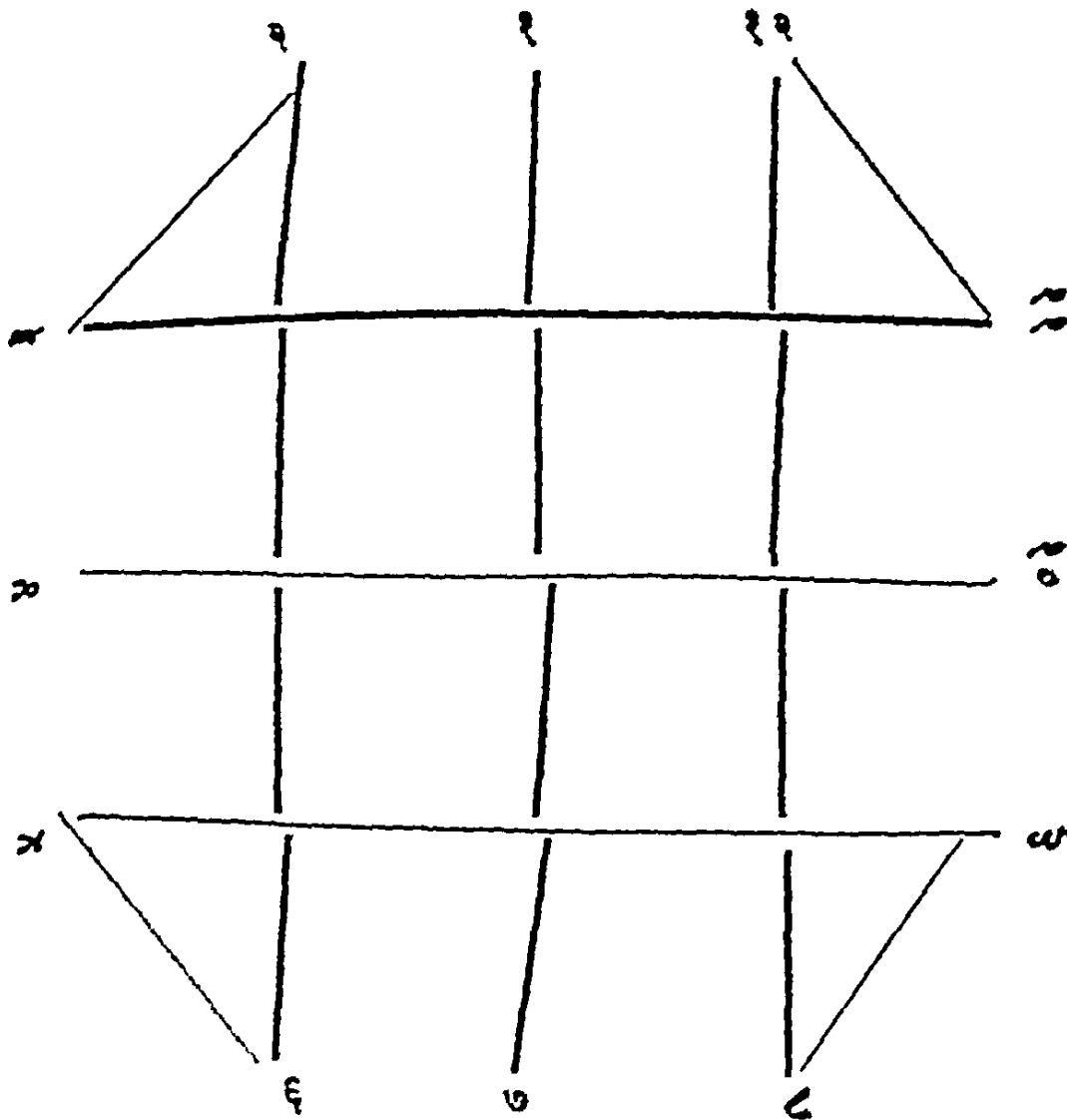
३।६, ३।४, १२।५, ११।६, १०।७, ६।८, १२।११, १।१०, २।६, ३।८, ४।७, ५।६ में रेखा खींच देनी चाहिये।

३ रेखा तिरछी तथा ३ रेखा खड़ी खींचनी चाहिये। एक कोण से दूसरे कोण तक भी रेखा खींचनी चाहिये, इसको त्रिपताक चक्र कहते हैं। मध्य में साम्हने ऊपर की ओर को जो रेखा है उसको वर्ष लग्न मानना चाहिये ॥ १ ॥

उसमें राशिचक्र लिखना चाहिये। गतवर्ष की संख्या में १ जोड़कर ६ का भाग देने से जो शेष रहे उसको जन्म राशि के चन्द्रमा में जोड़ दे जो योग फल हो उसके तुल्य स्थान मे चन्द्रमा को लिखे ॥ २ ॥

गत वर्ष में ४ का भाग दे जो अङ्क शेष बचे उसको जन्म के सूर्य आदि के अङ्क में जोड दे जो फल मिले उस स्थान में सूर्य आदिको लिखदे। राहु केतु में शेष अङ्क घटावे ॥ ३ ॥

जब चन्द्रमा पर राहु का वेध हो तो कष्ट होता है, जब सूर्य्य का वेध हो तो सन्ताप होता है, शनि का वेध हो तो रोग होता है, मङ्गल का वेध हो तो शरीर में पीडा होती है, यदि शुभ ग्रहों का वेध हो तो जय तथा सुख का लाभ होता है ॥४॥

मासप्रवेशोदिनप्रवेशश्च.

तत्कालेऽर्को जन्मकाल रविणा स्याद्यतः समः।
एकैकराशि वृद्ध्याचेत्तुल्योंशाद्यैर्यदारविः।
तदा मासप्रवेशोद्यु प्रवेशश्चेत्कलासमः ॥ १ ॥
अपरे मासलग्नेशं मासाधिपति मूचिरे।
दिनेशं दिनलग्नेशं तथा प्रोचुर्विचक्षणाः।
मासयत्तशयोर्वाच्यं फलं वर्षेशवद्बुधैः ॥२॥
लग्नेश मासेश समेश मुन्था धीशाः षडष्टोपगताः सपापाः।
दृष्टाःखलैः शत्रु दृशात्र मासे व्याध्यादिविद्विड्भयदुःखदाःस्यु. ॥३॥

केन्द्रत्रिकोणायगतास्तु लग्न मासाब्दपा वीर्ययुता नराणाम् ।
नैरुज्य शत्रु क्षय राज्य लाभ मानोदयात्यद्भुतकीर्तिदाः स्युः ॥४
त्रिकोणकेन्द्रायगताः शुभाश्चेच्चन्द्राच्चनोर्वाबलिनः खलास्तु ।
षट्त्र्यायगास्तत्र दिने सुखानि विलास मानार्थ यशोयुतानि ॥५॥
षडष्टरिष्फोपगता दिनाब्द मासेन्थिहेशाः खलखेटयुक्ताः ।
गदप्रदा मानयशोहराश्च केन्द्रत्रिकोणायगताः सुखाप्त्यै ॥६॥
छिद्रादशे खला हानिं व्यये सौम्याः शुभव्ययम् ।
कर्तरी पापजा रोगं करोति शुभजा शुभम् ॥७॥
लग्नेऽष्टमेवा क्षीणेन्दुर्मृत्युदः पापदृग्युतः ।
रोगो वा ग्रहणं वापि रिपुतः शस्त्रभी रपि ॥ ८ ॥
चन्द्रे सभौमे निधनारिसंस्थे नृणां भयं शस्त्रकृतं रिपोर्वा ।
पापैः सुखस्थैः पतनं गजाश्व यानाच्चनौस्याद्बहुलाच्च पीडा ॥६॥
शुभा द्यूने विजयदा द्यूताद्यं सुखावहाः ।
नवमे धर्मभाग्यार्थ राजगौरवकीर्तिदाः ॥१०॥

(अथ)

जिस समय सूर्य के अंश आदि जन्म कालीन सूर्य के समान हों उसी समय मास प्रवेश होता है। प्रत्येक मास में एक एक राशि की वृद्धि होती जाती है। जिस समय सूर्य की कला समान हों उस समय दिन प्रवेश होता है ॥१॥ मास लग्न का स्वामी मासाधिपति होता है। दिन लग्न का स्वामी दिनेश होता है। वर्षेश के समान उनका फल जानना चाहिये ॥२॥

जब लग्नेश मासेश, वर्षेश, मुन्थेश ६।८ स्थानों में पाप ग्रह सहित हों, खल ग्रह उनको शत्रु दृष्टि से देखें तो उस मास में व्याधि, शत्रु भय तथा दुःख देते हैं ॥३॥

जब लग्नेश मासेश वर्षेश बलवान् होकर केन्द्र, त्रिकोण अथवा लाभ में हों तो मनुष्य रोग रहित होता है, उसके शत्रु का नाश होता है, राज्य लाभ, आदर तथा यश होते हैं ॥ ४ ॥

जब चन्द्रमा अथवा लग्न से त्रिकोण, केन्द्र, अथवा लाभ स्थान में शुभ ग्रह बलवान् होकर बैठे हों तथा पाप ग्रह ६।३।११ स्थानों में हो तो उस दिन सुख भोग विलास, सन्मान, धन तथा यश की प्राप्ति होती है ५॥

जब दिनेश, वर्षेश, मासेश, मुन्थेश पाप ग्रह से युक्त होकर ६।८।१२ स्थानों में हों तो रोग कारक, सन्मान तथा कीर्ति को हरने वाले होते हैं, यदि वे केन्द्र, त्रिकोण अथवा लाभ में हों तो सुख मिलता है ॥ ६॥

२।१२ स्थानों में खल ग्रह हानि करते हैं, व्ययस्थान में सौम्य ग्रह शुभ काम में व्यय कराते हैं। यदि पाप ग्रहों की कर्तरी हो तो रोग होता है। शुभ ग्रहों की कर्तरी हो तो शुभ होता है ॥७॥

जब लग्न अथवा अष्टम स्थान में क्षीण चन्द्रमा हो, उस पर पाप ग्रह की दृष्टि हो अथवा वह पाप ग्रह से युक्त हो तो मृत्यु, रोग, शस्त्रभय होते हैं अथवा शत्रु पकड़ लेता है ॥८॥

जब मंगल सहित चन्द्रमा ८।६ स्थानों में स्थित हो तो मनुष्यों को शस्त्र अथवा शत्रु से भय होता है। यदि चतुर्थ स्थान में पाप ग्रह हों तो मनुष्य हाथी घोड़े की सवारी से गिरता है तथा शरीर में बहुत पीड़ा होती है ॥९॥

यदि सप्तम स्थान में शुभ ग्रह हों तो उस दिन जुआ खेलने में जीत होती है, दूसरे स्थान में शुभ ग्रह हों तो सुख मिलता है, यदि नवम स्थान में शुभ ग्रह हों तो धर्म, भाग्य, धन, राजगौरव तथा कीर्ति देते हैं ॥१०॥

श्री देवीदत्तज्योतिर्वित्संगृहीतानुवादिते सुगमज्योतिषे वर्षफलाध्यायश्चतुर्थः ॥

सुगमज्योतिषम्

संस्काराध्यायः पञ्चमः

(१) गुणदोषप्रकरणम्

शुभकार्येषु वर्ज्यदोषाः

तिथिनक्षत्रवाराणां दुष्टयोगान्परस्परम् ।
व्यतीपातादिदुर्योगांस्त्रिप्रदर्शार्कसंक्रमान् ॥१॥
जन्मर्क्षतिथिमासांश्च तिथ्यर्धं त्ववमं दिनम् ।
पापैर्भुक्तं युतं भोग्यं विद्धं लत्तितमृक्षकम् ॥२॥
त्र्यहं प्राग्ग्रहणात्सप्त दिनानि ग्रहणोत्तरम् ।
ग्रस्तास्ते तु त्र्यहं पूर्वं त्र्यहं ग्रस्तोदये परम् ॥३॥
गण्डान्तं त्रिविधं दुष्टक्षीणेन्दू पापकर्तरीम् ।
पापहोरा खले वारे यामार्धं कुलिकादिकान् ॥४॥
चन्द्रं पापयुतं लग्न मंशं वा कुनवांशकम् ।
जन्मराशि विलग्नाभ्यामष्टमं लग्नमेव च ॥५॥
दिनमेकं तु मासान्ते नक्षत्रान्ते घटीद्वयम् ।
घटीमेकां तु तिथ्यन्ते लग्नान्ते घटिकार्धकम् ॥६॥
विषाख्या नाडिका भानां पात मेकार्गलं तथा ।
दग्धाहं क्रान्तिसाम्यं च लग्नेशं रिपुमृत्युगम् ॥७॥
दिनार्धे च रजन्यर्धे सन्धौ च पलविंशकम् ।
मलमासं कवीज्यास्तं बाल्यवार्धकमेव च ॥८॥
जन्मेशास्तं मनोभङ्गं सूतकं मातुरार्तवम् ।
रोगोत्पाताद्यरिष्टानि शुभेष्वेतानि वर्जयेत् ॥९॥
होलिकाप्राग्दिनाष्टकम् (वर्ज्य मिति केचित्) ॥१०॥

सर्वस्मिन्विधुपापयुक्तनुलवा वह्नि निशाह्नोर्घटी
त्र्यंशं वै कुनवांशकं ग्रहणतः पूर्वं दिनानां त्रयम् ।
उत्पातग्रहतोऽद्र्यहाश्च शुभदोत्पातैश्च दुष्टं दिनं
षण्मास ग्रहभिन्नभं त्यज शुभे योद्धं तथोत्पातभम् ॥११॥
नेष्टं ग्रहर्क्षं सकलार्द्धपादग्रासे क्रमात्तर्कगुणेन्दुमासान् ।
पूर्वपरस्तादुभयोस्त्रिघस्राग्रस्तेऽस्तमेवाभ्युदितेऽर्धखण्डे ॥१२॥
जन्मर्क्षमासतिथयो व्यतिपात भद्रा
वैधृत्यमापितृदिनानि दिनक्षयवृद्धी ।
न्यूनाधिमासकुलिकप्रहरार्धपात
विष्कम्भवज्रघटिकात्रयमेव वर्ज्यम् ॥१३॥
वर्जयेत्सर्वकार्येषु हस्तार्कं पञ्चमीतिथौ ।
भौमाश्विनीं च सप्तम्यां षष्ठ्यां चन्द्रैन्दवं तथा ॥१४॥
बुधानुराधामष्टम्यां दशम्यां भृगुरेवतीम् ।
नवम्यां गुरुपुष्यं चैकादश्यां च रोहिणीम् ॥१५॥
शुक्लपक्षः शुभः प्रोक्तः कृष्णश्चान्त्यत्रिकं विना ॥१६॥

(अर्थ)

शुभ कार्य्यों में नीचे लिखे हुए दोष वर्जित हैं:—तिथि नक्षत्र तथा वारों से परस्पर बने हुए दुष्टयोग, व्यतीपात आदि दुष्टयोग, भद्रा, अमावास्या, सूर्य्यसंक्रान्ति, ॥१॥ जन्मनक्षत्र, जन्मतिथि, जन्ममास, आधीतिथि, अवम दिवस, पाप भुक्त अथवा पाप युक्त अथवा पाप भोग्य अथवा पाप विद्ध अथवा लत्तावाला नक्षत्र ॥२॥ ग्रहण से पहिले के ३ दिन, ग्रहण के पश्चात् ७ दिन, ग्रस्तास्त से पहिले के ३ दिन, ग्रस्तोदय से पीछे के ३ दिन ॥३॥ तीन प्रकार का गण्डान्त (तिथि गण्डान्त, नक्षत्र गण्डान्त, लग्न गण्डान्त), दुष्ट (४, ८, १२ स्थानों का) चन्द्रमा अथवा क्षीण चन्द्रमा, पाप ग्रहों का कर्त्तरीयोग (जब लग्न से दूसरे तथा बारहवें स्थानों में ग्रह हों तो इसे कर्त्तरी कहते हैं)

रविवार, मङ्गलवार अथवा शनिवार को पाप ग्रह की होरा, यामार्द्ध, कुलिक आदि दुष्टयोग,॥४॥ पापयुक्त चन्द्रमा अथवा पापयुक्तलग्न अथवा पाप युक्त लग्न का नवांश, जन्म राशि अथवा जन्म लग्न से अष्टम लग्न ॥५॥ मास के अन्त का एक दिन, नक्षत्र के अन्त की दो घडियां, तिथि के अन्त की एक घडी, लग्न के अन्त की आधी घडी, ॥६॥ नक्षत्रों की विष संज्ञक नाडियां, पात, एकार्गल, दग्धदिवस, क्रान्तिसाम्य, जब लग्नेश छठे अथवा आठवें स्थान में हो ॥७॥ दोपहर अथवा आधीरात की सन्धि के २० पल, मलमास, शुक्र बृहस्पति का अस्त, बाल्य, वृद्धत्व ॥८॥ जन्मेश का अस्त, चित्तभंग, सूतक, माता का रजो दर्शन, रोग अथवा उत्पात आदि अरिष्ट ॥९॥ कोई आचार्य कहते हैं कि होली से पहिले के आठ दिन भी वर्जित हैं ॥१०॥

पाप युक्त चन्द्रमा, पापयुक्त लग्न, अथवा पाप युक्त लग्न का नवांश, मध्याह्न अथवा अर्द्धरात्रि के २० पल, निन्दित नवांश, ग्रहण से पहिले के ३ दिन, उत्पातग्रह से ७ दिन, अथवा उत्पातों से दुष्ट दिवस, जिस नक्षत्र में ग्रहण हुआ हो वह नक्षत्र ६ महीने तक, युद्ध अथवा उत्पात नक्षत्र, सब शुभ कार्यों में वर्जित करने चाहिये ॥११॥ जिस नक्षत्र में ग्रहण पड़ा हो वह नक्षत्र वर्जित करना चाहिये, यदि खग्रास हो तो वह नक्षत्र ६ महीने तक वर्जित करना चाहिये, यदि आधा ग्रहण हो तो ३ महीने तक वर्जित करना चाहिये, यदि चौथाई ग्रहण हो तो एक महीने तक वर्जित करना चाहिये, यदि ग्रस्तोदय अथवा ग्रस्तास्त हो तो ग्रहण से ३ दिन पहिले तथा ३ दिन पीछे के वर्जित करने चाहिये ॥१२॥ जन्म नक्षत्र, जन्ममास, जन्मतिथि, व्यतीपात, भद्रा, वैधृति, अमावास्या, श्राद्ध दिन, तिथिक्षय, अथवा तिथि की वृद्धि, न्यून मास, अधिमास, कुलिक, प्रहरार्द्ध, पात, तथा विष्कम्भ, वज्र योगों की ३ घड़ियां वर्जित करनी चाहिये ॥१३॥

पंचमी तिथि को हस्त नक्षत्र तथा रविवार, सप्तमी तिथि को अश्विनी

नक्षत्र तथा मङ्गलवार, षष्ठी तिथि को मृगशिर नक्षत्र तथा सोमवार, अष्टमी तिथि को अनुराधा नक्षत्र तथा बुधवार, दशमीतिथि को रेवती नक्षत्र तथा शुक्रवार, नवमी तिथि को पुष्य नक्षत्र तथा बृहस्पतिवार, एकादशी तिथि को रोहिणी नक्षत्र, सब कार्यों में वर्जित करने चाहिये ॥ १४॥ ॥१५॥

शुक्लपक्ष सब शुभ कार्यों के लिये शुभ है, कृष्णपक्ष १३, १४, ३० को छोड़कर शेष शुभ है ॥१६॥

विवाहे विशेषः

उत्पातान्सहपातदग्धतिथिभि दुष्टांश्च योगांस्तथा
चन्द्रेज्योशनसामथास्तमयनं तिथ्याः क्षयर्द्धी तथा।
गण्डान्तं च सविष्टि संक्रमदिनं तन्वंशपास्तं तथा
तन्वंशेशविधूनथाष्टरिपुगान्पापस्यवर्गं तथा ॥१॥
सेन्दुक्रूरखगोदयांश सदयास्ताशुद्धिचण्डायुधान्
खार्जूरं दशयोगयोगसहितं जामित्रलत्ताव्यधम्।
बाणोपग्रहपापकर्तरि तथा तिथ्यृक्षयोगोत्थितं
दुष्टं योग मथार्धयामकुलिकाद्यान्वारदोषानपि ॥२॥
क्रूराक्रान्तविमुक्तभं ग्रहणभं यत्क्रूरगन्तव्यभं
त्रेधोत्पातहतं च केतुहतभं सन्ध्योदितं भं तथा।
तद्वच्च ग्रहभिन्नयुद्धगतभं सर्वानिमान्सन्त्यजे
दुद्वाहे शुभकर्मसंग्रहकृतान्लग्नस्य दोषानपि ॥३॥

(अर्थ)

उत्पात, पात, दग्धतिथि, दुष्टयोग, चन्द्रमा, बृहस्पति तथा शुक्र का अस्त, अयन संक्रान्ति, तिथि का क्षय अथवा तिथि की वृद्धि, गण्डान्त, भद्रा, संक्रान्ति का दिन, लग्नेश अथवा लग्न नवांशेश का अस्त, लग्नेश, लग्न नवांशेश अथवा चन्द्रमा का छठे अथवा आठवें स्थान में होना, पाप ग्रह का षड्वर्ग, क्रूर ग्रह सहित चन्द्रमा, ग्रह के उदय अथवा अस्त की अशुद्धि,

चण्डायुध, मार्जूर, दश योग, जामित्र, लत्ता, बाण, उपग्रह, पातकर्तरी, तिथि नक्षत्र योग में उत्पन्न दुष्ट योग, अर्द्धयाम, कुलिक आदि वारदोष, क्रूरग्रह से आक्रान्त अथवा विमुक्त नक्षत्र, ग्रहण नक्षत्र, जिस नक्षत्र में क्रूर ग्रह जाने को तैयार हो, उत्पात युक्त नक्षत्र, केतु से हत नक्षत्र, सन्ध्या में उदित नक्षत्र, जो नक्षत्र युद्ध में हार गया हो अथवा पाप ग्रह से विद्ध हो, इन सब बातों को तथा शुभ कार्य्यों में वर्जित दोषों को विवाह में वर्जित करना चाहिये ॥

गृहप्रवेशादिषु वर्ज्यानि

गृहप्रवेशे यात्रायां विवाहे च यथाक्रमम् ।
भौमाश्विनी शनौ ब्राह्मं गुरौ पुष्यं च वर्जयेत् ॥

(अर्थ)

जब मङ्गलवार को अश्विनी नक्षत्र हो तो गृह प्रवेश वर्जित है। जब शनिवार को रोहिणी नक्षत्र हो तो यात्रा वर्जित है। जब बृहस्पति वार को पुष्य नक्षत्र हो तो विवाह वर्जित है ॥

पञ्चाङ्ग शुद्धिः

तिथिवारर्क्षयोगानां करणस्य च मेलनम् ।
पञ्चाङ्ग मस्य संशुद्धिः पञ्चाङ्गः स उदाहृतः ॥
यस्मिन्पञ्चाङ्गदोषोऽस्ति तस्मिंल्लग्न निरर्थकम् ॥

(अर्थ)

तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण इन पांच चीजों को मिलाकर पञ्चाङ्ग कहते हैं। इन पांचों चीजों की शुद्धि को पञ्चाङ्ग शुद्धि कहते हैं। यदि पञ्चाङ्ग शुद्धि न हो तो लग्न शुद्धि करना व्यर्थ है ॥

लग्न शुद्धि

लोकोक्तितश्चन्द्रबलं प्रधान शास्त्रेषु मुख्यं खलु लग्नमेव ॥१॥
लग्नादेकादशे सर्वे लग्नपुष्टिकरा ग्रहाः ।
तृतीये चाष्टमे सूर्यः सूर्यपुत्रश्च शोभनः ॥२॥

चन्द्रो धने तृतीये च कुजः षष्ठे तृतीयके ।
बुधेज्यौ नवषड् द्वित्रिचतुः पञ्चदशे स्थितौ ॥३॥
शुक्रोद्वित्रि चतुः पञ्च धर्मं कर्मं तनुस्थितः ।
राहुर्दशाष्ट षट् पञ्च त्रिनवद्वादशे शुभः ॥४॥

(अर्थ)

लोग कहते हैं कि चन्द्रमा का बल प्रधान है परन्तु शास्त्रों के अनुसार लग्नबल ही प्रधान है ॥ १ ॥

लग्न से ग्यारहवें स्थान में सब ग्रह शुभ होते हैं। ३,८ स्थानों में सूर्य अथवा शनि शुभ होते हैं ॥ २ ॥धन अथवा तृतीय स्थान में चन्द्रमा शुभ होता है। ३,६ स्थानों में मङ्गल शुभ होता है। ९,६,२,३,४,५,१० स्थानो मे बुध तथा बृहस्पति शुभ होते हैं ॥ ३ ॥ २,३,४,५, ९,१०,१ स्थानों में शुक्र शुभ होता है। १०,८,६,५,३,९,१२ स्थानों में राहु शुभ होता है ॥ ४ ॥

सर्वकार्येषु ग्रहस्थितिः

सर्वेषु शुभकार्येषु नेष्टाः खेटा व्ययाष्टगाः ।
लग्ने पापा रिपौ सौम्या पापाः केन्द्रत्रिकोणगाः ॥१॥
सौम्याः केन्द्रत्रिकोणस्थाः पापास्तु त्रिषडायगाः ।
ते सर्वे लाभदाः खेटाः श्रेष्ठाः स्युः सर्वकर्मणि ॥२॥
भावः स्वपतिना सौम्यैर्दृष्टो युक्तो बलाधिकः ।
पूर्णं फलं निजं धत्ते व्यस्तं पापैर्युतेक्षितः ॥३॥
लग्नं क्रूरयुतं त्याज्यं मङ्गलेष्वखिलेष्वपि ॥४॥
भृगु.षष्ठाह्वयोदोषः। कुजाष्टमोमहान्दोषः। षडष्टेन्दुर्महान्दोषः ॥५॥
लग्नाधीशेनीचगे शत्रुगेवा रन्ध्रे चास्तं सङ्गते वक्रगेवा ।
तल्लग्नं वै सन्त्यजेत्सर्वकार्यं कुर्यात्कार्यं चेत्तदा मृत्युभीतिः ॥६॥

(अर्थ)

सब शुभ कार्यों में ८,१२ स्थानों में स्थित ग्रह शुभ नहीं होते हैं, लग्न में पाप ग्रह, छठे स्थान में सौम्यग्रह, केन्द्र तथा त्रिकोण में पाप ग्रह शुभ नहीं होते हैं ॥ १ ॥

केन्द्र अथवा त्रिकोण में सौम्यग्रह, ३, ६ ११ स्थानों में पाप ग्रह, शुभ होते हैं, ॥ २ ॥ जो भाव अपने स्वामी अथवा शुभ ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त हो वह अधिक बलवाला होता है तथा पूर्ण फल देता है। यदि पाप ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो इसका विपरीत फल देता है ॥ ३ ॥

सम्पूर्ण शुभ कार्यों में क्रूर ग्रह से युक्त लग्न छोड़ देना चाहिये ॥ ४ ॥ छठा शुक्र, आठवां मङ्गल, छठा अथवा आठवां चन्द्रमा महादोषों में हैं ॥ ५ ॥

जब लग्नेश नीच का हो, अथवा शत्रु भवनी हो, अथवा अष्टम स्थान में हो, अथवा अस्तङ्गत हो, अथवा वक्री हो तो ऐसे लग्न को सब कार्यों में छोड़ देना चाहिये, यदि कार्य्य करे तो मृत्यु का भय होता है ॥ ६ ॥

लग्न प्रशंसा

विहाय लग्नं यत्किञ्चित्क्रियते कर्म वै नरैः ।
तत्फलं विलयं याति ग्रीष्मे कुसरितो यथा ॥१॥
न तिथिर्न च नक्षत्रं न योगं नैन्दवं बलम् ।
लग्नमेकं प्रशंसन्ति गर्गनारदकश्यपाः ॥२॥
स्वामिना बलिना दृष्टः सबलैश्च शुभग्रहैः ।
न दृष्टो न युतः पापैः सलग्नः सबलः स्मृतः ॥३॥

(अर्थ)

लग्न का विचार छोड कर जो कुछ काम किया जावे वह सब निष्फल होता है जैसे ग्रीष्म ऋतु में छोटी नदियां सूख जाती हैं ॥ १ ॥

तिथि, नक्षत्र, योग, अथवा चन्द्रमा का बल कोई पदार्थ नहीं हैं, गर्ग नारद, तथा कश्यप मुनि केवल लग्न की प्रशंसा करते हैं॥ २॥ जो लग्न अपने बलवान् स्वामी से अथवा बलवान् शुभ ग्रहों से दृष्ट हो, पाप ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट न हो वह लग्न बलवान् होता है॥ ३॥

लग्नज्ञानमतिकठिनम्

त्रुटेः सहस्रभागो यो लग्नकालः स उच्यते।
ब्रह्मापि तं न जानाति किं पुनः प्राकृतो जनः॥

(अर्थ)

एक त्रुटि का हजारहवां भाग लग्नकाल कहलाता है। ब्रह्मा भी उसको नहीं जानता है, साधारण आदमी का क्या ठिकाना है॥

चन्द्रविचारः

पापेन्दू लग्नगौ त्याज्यौ सर्वेण सर्वकर्मसु।
अक्षीणं कर्कगोऽजस्थं केऽप्याहुर्लग्नगं शुभम्॥१॥
अशुभोऽपि शुभश्चन्द्रो गुरुणा लोकितो युतः।
स्वर्क्षोच्चगः शुभांशेवा स्वाधिमित्रांशके तथा॥२॥
अपि सौम्यग्रहैर्युक्तं गुणैः सर्वैः समन्वितम्।
व्ययाष्टरिपुगे चन्द्रे लग्नदोषः ससंज्ञितः॥३॥
तल्लग्नं वर्जयेद्यत्नाज्जीवशुक्रसमन्वितम्।
उच्चगे नीचगे वापि मित्रगे शत्रुराशिगे॥४॥
अपि सर्वगुणोपेतं दम्पत्योर्निधनप्रदम्।
शशाङ्के पापसंयुक्ते दोषः संग्रहकारकः॥५॥

(अर्थ)

लग्न में स्थित पाप ग्रह तथा चन्द्रमा सब कार्यों मे वर्जित करने चाहिये। किन्हीं आचार्यों का मत है कि जब पूर्ण चन्द्रमा कर्क, वृष अथवा मेष राशि का लग्न मे बैठा हो तो शुभ है॥ १॥

यदि चन्द्रमा पर बृहस्पति का दृष्टि हो अथवा वह बृहस्पति से युक्त हो तो अशुभ भी चन्द्रमा शुभ होता है। जब चन्द्रमा अपने उच्च का हो अथवा शुभ नवांश में हो अथवा अपने अधिमित्र के घर का अथवा अधिमित्र के नवांश का हो तो शुभ होता है ॥ २ ॥

यद्यपि लग्न सौम्य ग्रहों से युक्त हो तथा सब गुणों से युक्त हो तथापि चन्द्रमा ६,८,१२ स्थानों में हो तो लग्न दोष कहलाता है ॥ ३ ॥ उस लग्न को यत्न से वर्जित करना चाहिये यद्यपि वह बृहस्पति, शुक्र से युक्त हो, उच्च का हो, चाहे नीच का हो मित्र के घर का हो अथवा शत्रु के घर का हो ॥ ४ ॥ चाहे सब गुणों से युक्त हो तथापि वर कन्या का मृत्यु कारक है। जब चन्द्रमा पाप ग्रह से युक्त हो तो स ग्रह कारक नाम दोष होता है ॥ ५ ॥

लग्नदोषपरिहारः

बुधो दशसहस्राणि शुक्रो दशशतानि च।
लक्षमेकं तु दोषाणां गुरुर्लग्ने व्यपोहति ॥१॥
त्रिकोणे केन्द्रे वा मदनरहिते दोषशतकं
हरेत्सौम्यः शुक्रो द्विगुणमपि लक्षं सुरगुरुः ॥२॥
भवे वाग्रे केन्द्रेऽङ्गप उत लवेशो यदि तदा
समूहं दोषाणां दहन इव तूलं शमयति ॥३॥
यत्रैकादशगे सूर्ये दोषा नाशं ययुस्तदा।
स्मरणाच्च रुद्रस्य पापं जन्मशतोद्भवम् ॥४॥
काव्ये गुरौ वा सौम्ये वा यदा केन्द्रत्रिकोणगे।
नाशं यान्त्यखिला दोषाः पापा इव हरेः स्मृतेः ॥५॥

(अर्थ)

जब लग्न में बुध हो तो दस हजार दोष शान्त होते हैं, जब शुक्र हो तो एक हजार दोष शान्त होते हैं, जब लग्न में बृहस्पति हो तो एक

लाख दोष शान्त हो जाते हैं ॥ १ ॥ जब त्रिकोण में अथवा सप्तम स्थान को छोड कर शेष किसी केन्द्र में बुध बैठा हो तो एक सौ दोषों को नाश करता है, यदि शुक्र बैठा हो तो दो सौ दोषों को शान्त करता है, यदि वृहस्पति बैठा हो तो एक लाख दोषों को शान्त करता है ॥ २ ॥

जब ग्यारहवें स्थान में अथवा केन्द्र में लग्नेश अथवा लग्न नवांशेश बैठा हो तो सब दोषो के समूह को ऐसा शान्त करता है जैसा कि अग्नि रूई को जलाती है ॥ ३ ॥

जब ग्यारहवा सूर्य्य हो तो सब दोष ऐसे शान्त हो जाते हैं जैसे रुद्र के स्मरण करने से एक सौ जन्म के पाप नाश हो जाते हैं ॥ ४ ॥

जब केन्द्र अथवा त्रिकोण में शुक्र, वृहस्पति, अथवा बुध हों तो सम्पूर्ण दोष ऐसे नाश हो जाते हैं जैसे कि हरि के स्मरण करने से पाप नाश हो जाते हैं ॥५॥

अयोगे सुयोग.

अयोगे सुयोगोऽपि चेत्स्यात्तदानी
मयोगं निहत्यैष सिद्धिं तनोति ।
परे लग्नशुद्ध्या कुयोगादिनाशं
दिनार्द्धोत्तरं विष्टि पूर्वं च शस्तम् ॥

(अर्थ)

जब एक ही दिन में एक अच्छा योग हो दूसरा बुरा योग हो तो अच्छा योग बुरे योग का नाश करके सिद्धि करता है । किन्ही आचार्य्यों का मत है कि जब लग्न की शुद्धि हो तो कुत्सित योग का नाश हो जाता है तथा दोपहर के वाद भद्रा का भी दोष नहीं रहता है ॥

रवियोगाः

सूर्यभाद्वेदगोतर्क दिग्विश्वनखसम्मिते ।
चन्द्रर्क्षे रवियोगाः स्यु र्दोषसंघविनाशकाः ॥

(अर्थ)

जब सूर्य के नक्षत्र से चन्द्रमा का नक्षत्र, चौथा, पांचवां, छठा, दसवां, ग्यारहवां, अथवा बीसवां हो तो रवियोग होता है वह सब दोषों समूहों का नाश करता है ॥

गुणदोषतारतम्यम्

गुणस्य दोषस्य च तारतम्यं
विचारणीयं विदुषा प्रयत्नात् ।
कश्चिद्गुणो दोषशतं निहन्ति
दोषो गुणाना मपि हन्ति लक्षम् ॥१॥
दोषाणाञ्च गुणानाञ्च तारतम्यं विचार्यते ।
बलाबलविभागेन पश्चात्कालं समादिशेत् ॥२॥
गुणो वा यद्दि वा दोषो दुर्बलो नष्टतां व्रजेत् ।
सएव पुनरुत्कृष्टवीर्यवान्स्यात्फलप्रदः ॥३॥

(अर्थ)

गुण तथा दोषों में कौन अधिक है इस बात का विचार पण्डित को बड़े प्रयत्न से करना चाहिये क्योंकि कोई गुण ऐसा होता है जो सौ दोषों का नाश करता है (जैसे एक बूंद गंगा जल) तथा कोई दोष ऐसा होता है जो लाख गुणों का नाश करता है (जैसे एक बूंद मदिरा का) ॥१॥

गुण तथा दोषों का बलाबल विचार कर समय का निर्णय करना चाहिये ॥२॥

चाहे गुण हो चाहे दोष हो यदि वह निर्बल हो तो नष्ट हो जाता है, परन्तु यदि उत्कृष्ट बल वाला हो तो फल देता है ॥३॥

तिथ्यादिगुणाः

तिथिरेकगुणा प्रोक्ता नक्षत्रं च चतुर्गुणम् ।
वारश्चाष्टगुणः प्रोक्तः करणं षोडशान्वितम् ॥१॥

द्वात्रिंशल्लक्षणो योगस्तारा षष्टि गुणा स्मृता ।
चन्द्रः शतगुणः प्रोक्तो लग्नं कोटिगुणं स्मृतम् ॥२॥

(अर्थ)

तिथि का फल एक गुना होता है, नक्षत्र का चौगुना होता है, वार का अठगुना होता है, करण का सोलह गुना होता है, योग का ३२ गुना होता है, तारा का ६० गुना होता है, चन्द्रमा का सौ गुना होता है, लग्न का फल करोड़ गुना होता है ॥

मासादिशुद्धिफलम्.

मासशुद्धौ सुखं भोगो धनारोग्यं च सत्तिथौ ।
कार्यसिद्धिः सुनक्षत्रे करणे शोभने धनम् ॥१॥
इष्टावाप्तिः शुभे योगे वाञ्छिताप्तिः शुभे विधौ ।
शुभवारे सर्वसम्पत्सौमनस्यं शुभे क्षणे ॥२॥
लग्ने शस्ते महानन्दः स्वेशे वीर्यसमुन्नतिः ॥
लग्न संग्रहवीर्यैस्युः सर्वे समुदिता गुणा ॥३॥

(अर्थ)

यदि मास की शुद्धि हो तो सुख तथा भोग मिलते हैं, यदि अच्छी तिथि हो तो धन तथा आरोग्य मिलते हैं, यदि अच्छा नक्षत्र हो तो कार्य्य की सिद्धि होती है, यदि अच्छा करण हो तो धन की प्राप्ति होती है ॥१॥ यदि शुभ योग हो तो इष्ट वस्तु की प्राप्ति होती है, यदि चन्द्रमा शुभ हो तो अभीष्ट सिद्धि होती है, यदि शुभ वार हो तो सब प्रकार की सम्पत्तियां मिलती हैं, यदि शुभ मुहूर्त हो तो चित्त प्रसन्न रहता है ॥२॥ यदि लग्न अच्छा हो तो बड़ा आनन्द होता है, यदि लग्नेश शुभ हो तो पराक्रम बढ़ता है, यदि लग्न बलवान् हो तो सब गुणों का उदय होता है ॥३॥

कार्यविशेषे ग्रहबलम्

उद्वाहे चोत्सवे जीवः सूर्यो भूपालदर्शने ।
सङ्ग्रामे धरणीपुत्रो विद्याभ्यासे बुधो बली ॥१॥

यात्रायां भार्गवः प्रोक्तो दीक्षायां च शनैश्चरः ।
चन्द्रमाः सर्वकार्येषु प्रशस्तो गृह्यते बुधैः ॥२॥

(अर्थ)

विवाह तथा उत्सव में बृहस्पति का बल लेना चाहिये, राजदर्शन में सूर्य्य का बल, संग्राम में मङ्गल का बल, विद्या सीखने में बुध का बल, यात्रा में शुक्र का बल, दीक्षा में शनैश्चर का बल, सब कार्यों में चन्द्रमा का बल लेना चाहिये ॥१॥२॥

जन्मराशिनामराश्योः प्राधान्यम्

देशे ग्रामे गृहे युद्धे सेवायां व्यवहारके ।
नामराशेः प्रधानत्वं जन्मराशिं न चिन्तयेत् ॥१॥
विवाहे सर्वमाङ्गल्ये यात्रादौ ग्रहगोचरे ।
जन्मराशेः प्रधानत्वं नामराशिं न चिन्तयेत् ॥२॥

(अर्थ)

देश, ग्राम, गृह, युद्ध, सेवा, तथा व्यवहार में नाम राशि को प्रधान जानना चाहिये, जन्मराशि का विचार नहीं करना चाहिये ॥१॥ विवाह, सब मङ्गल के कार्य, यात्रा तथा ग्रह गोचर में, जन्मराशि प्रधान है नाम राशि का विचार नहीं करना चाहिये ॥२॥

(कभी कभी ऐसा होता है कि लोगों का नाम जन्म राशि के अनुसार कुछ और ही होता है परन्तु व्यवहार में नाम और ही होता है। ऐसे विषय में यह विचार है)

स्त्रीणां राशिशुद्धौ विशेषः

स्त्रीणां विधोर्बलं मुशन्ति विवाह गर्भ
संस्कारयो रितरकर्मसु भर्तुरेव ॥ १ ॥
स्त्रीणां सर्वक्रिया कार्या विशुद्ध्या स्वामिनः सदा ।
स्वशुद्ध्या स्वामिशुद्ध्या च गर्भाधानादिकाः क्रियाः ॥२॥

विवाहकार्यं कुसुमप्रतिष्ठा (रजोदर्शनम्)
गर्भप्रतिष्ठा वनिताविशुद्धौ ।
अन्यानि कार्याणि धवस्य शुद्धौ
पत्यौ विहीने प्रमदाविशुद्धया ॥ ३ ॥

(अर्थ)

विवाह तथा गर्भाधान संस्कार में स्त्रियो का चन्द्रबल विचारना चाहिये, शेष कामो में पति का चन्द्रबल विचारना चाहिये ॥१॥ स्त्रियों के सब काम पति की शुद्धि से करने चाहिये, गर्भाधान आदि काम स्त्री तथा उसके पति की शुद्धि से करने चाहिये ॥१॥

विवाह, रजोदर्शन, गर्भाधान, स्त्री की शुद्धि से करने चाहिये, शेष-कार्य्य पति की शुद्धि से करने चाहिये, यदि स्त्री का पति न हो तो स्त्री की शुद्धि से करने चाहिये ॥२॥

द्वादशश्चन्द्रः क्वचिच्छुभः

उत्सवे चाभिषेकेच जनने व्रतवन्धने ।
पाणिग्रहेच यात्रायां चन्द्रो द्वादशगः शुभः ॥

(अर्थ)

उत्सव, अभिषेक, जन्म, व्रतवन्ध, विवाह तथा यात्रा में बारहवां चन्द्रमा शुभ होता है ॥ (पहिले कहा गया है कि ४।८।१२ स्थानों का चन्द्रमा सब शुभ कार्यों में वर्जित है । यह उसका अपवाद है)

चन्द्रतारावलम्

शुक्र पक्षे वली चन्द्रः कृष्णे तारा वलीयसी ॥

(अर्थ)

शुक्र पक्ष में चन्द्रमा वलवान् होता है, कृष्णपक्ष में तारा वलवती होती है ॥

जन्मनक्षत्राद्वर्ज्यनक्षत्राणि

जन्माद्यं दशमं कर्म संघातर्क्षं च षोडशम् ।
अष्टादशं सामुदायं त्रयोविंशं विनाशनम् ॥
मानसं पञ्चविंशर्क्षं वर्जयेच्छुभकर्मसु ॥

(अर्थ)

पहिला नक्षत्र जन्म नक्षत्र कहलाता है, दसवां नक्षत्र कर्म संज्ञक है, सोलहवां नक्षत्र संघात कहलाता है, अठारहवां नक्षत्र समुदाय कहलाता है, तेईसवां नक्षत्र विनाश नक्षत्र कहलाता है, पचीसवां नक्षत्र मानस कहलाता है। सब शुभ कार्यों में इन नक्षत्रों को वर्जित करना चाहिये ॥

क्षीणश्चन्द्रः

कृष्णाष्टमीदलादूर्ध्वं यावच्छुक्लाष्टमी भवेत् ।
तावत्क्षीणशशी ज्ञेयः सम्पूर्णस्तदनन्तरम् ॥

(अर्थ)

कृष्णपक्ष की अष्टमी से शुक्लपक्ष की अष्टमी तक क्षीण चन्द्रमा कहलाता है, उसके अनन्तर अर्थात् शुक्लपक्ष की अष्टमी से कृष्णपक्ष की अष्टमी तक पूर्ण चन्द्रमा कहलाता है ॥

विवाहादौ निर्ग्रहस्थानम्

सप्तमं शुद्ध मुद्वाहे यात्राया मष्टमं तथा ।
दशमंच गृहारम्भे चतुर्थं सन्निवेशने ॥
अन्नप्राशने खशुद्धम् ।
अष्टमं सर्वत्र शुद्धम् । (ग्राह्यम्)

(अर्थ)

विवाह में सप्तम स्थान, यात्रा में अष्टम स्थान, गृहारम्भ में दशम स्थान, गृहप्रवेश में चतुर्थ स्थान, अन्न प्राशन में दशम स्थान, सब कार्यों में अष्टम स्थान, शुद्ध अर्थात् ग्रहरहित होने चाहिये ॥

(२) गर्भाधानादिप्रकरणम्

षोडशसंस्काराः

गर्भाधानं पुंसवनं सीमन्तो जातकर्म च ।
नामक्रिया निष्क्रमणोऽन्नाशनं वपनक्रिया ॥१॥
कर्णवेधो व्रतादेशो वेदारम्भक्रियाविधिः ।
केशान्तः स्नान मुद्वाहो विवाहाग्निपरिग्रहः ।
त्रेताग्निसंग्रहश्चेति संस्काराः षोडश स्मृताः ॥२॥

(अर्थ)

१६ संस्कारों के नाम यह हैं :—

(१) गर्भाधान (२) पुंसवन (३) सीमन्त (४) जातकर्म (५) नामकर्म (६) निष्क्रमण (७) अन्नप्राशन (८) चूडाकर्म (६) कर्णवेध (१०) व्रतबन्ध (११) वेदारम्भ (१२) केशान्त (१३) समावर्तन (१४) विवाह (१५) अग्न्याध्यान (१६) त्रेताग्नि संग्रह ॥

गुरुमङ्गललघुमङ्गले

चूडाकेशान्तसीमन्तविवाहोपनयनान्बुधाः ।
गुरुमङ्गलमित्याहुस्तदन्यल्लघुमङ्गलम् ॥

(अर्थ)

चूडाकर्म, केशान्त, सीमन्त, विवाह तथा उपनयन संस्कारों को गुरु मङ्गल कहते हैं, शेष संस्कारों को लघु मङ्गल कहते हैं ॥

प्रथमरजोदर्शनविचारः

आद्यंरजः शुभं माघ मार्गराधेषफाल्गुने ।
ज्येष्ठश्रावणयोः शुक्ले सद्वारे सत्तनौ दिवा ॥१॥
श्रुतित्रयमृदुक्षिप्रध्रुवस्वातौ सिताम्बरे ।
मध्यं च मूलादितिभे पितृमिश्रे परेष्वसत् ॥ २ ॥

भद्रानिद्रासंक्रमदर्शरिक्ता संध्याषष्ठीद्वादशीवैधृतेषु ।
रोगेऽष्टम्यांचन्द्रसूर्योपरागे पाते चाद्यंनोरजोदर्शनंसत् ॥३॥

(अथ)

माघ, मार्गशीर्ष, वैशाख, कार्तिक, फाल्गुन, ज्येष्ठ, श्रावण मासों में, शुक्ल पक्ष में, शुभ वार में, शुभ लग्न में, दिन के समय, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मृदु, क्षिप्र, ध्रुव, स्वाती नक्षत्रों में, सफेद वस्त्र पहिना हो, तो प्रथम रजो दर्शन शुभ है। मूल, पुनर्वसु, मघा, मिश्र नक्षत्रों में मध्यम है, शेष मास, नक्षत्र आदियों में अशुभ है ॥१॥ २ ॥

भद्रा, निद्रा, संक्रान्ति, अमावास्या, रिक्तातिथि, सन्ध्या समय, षष्ठी, द्वादशी, वैधृति, अष्टमी, चन्द्रग्रहण तथा सूर्य्य ग्रहण के समय, पात में, तथा जब स्त्री रोगिणी हो, प्रथम रजोदर्शन शुभ नहीं है ॥

गर्भाधानम्

गण्डान्तं त्रिविधं त्यजेन्निधनजन्मर्क्षेच मूलान्तकं
दास्रं पौष्णमघोपरागदिवसा न्पातं तथा वैधृतिम् ।
पित्रोः श्राद्धदिनं दिवाच परिघाद्यर्धं स्वपत्नीगमे
भान्युत्पातहतानि मृत्युभवनं जन्मर्क्षतः पापभम् ॥१॥
भद्राषष्ठी पर्व रिक्ताश्च सन्ध्या
भौमार्कार्कीनाद्यरात्रीश्चतस्रः ।
गर्भाधानं त्र्युत्तरेन्द्वर्क मैत्र
ब्राह्मस्वातीविष्णुवस्त्रम्बुपेसत् ॥ २ ॥
केन्द्रत्रिकोणेषु शुभैश्च पापै
स्त्र्यायारिगै पुंग्रहदृष्टलग्ने।
ओजांशकेऽब्जेपिच युग्मरात्रौ
चित्रादितीज्याश्विषु मध्यमं स्यात् ॥ ३ ॥

वलान्वितावर्कसितौस्वभांशे पुंसां यदा चोपचयेभवेताम् ।
तथाङ्गनानां शशिभूमिजौवा तदाभवेद्गर्भसमुद्भवश्च ॥४॥
स्त्रीणां विधौचोपचये कुजेन दृष्टेऽपिगर्भग्रहणस्ययोगः ।
पुंसां तथा गोष्पतिनाप्रदृष्टे स्त्रीपुंसयोर्योगमतोऽन्यथान॥५॥

(अर्थ)

तीन प्रकार का गण्डान्त, जन्मनक्षत्र तथा वैनाशिक नक्षत्र, मूल, भरणी, अश्विनी, रेवती, मघा, ग्रहणदिवस, पात, वैधृति, माता पिता का श्राद्ध दिवस, दिनका समय, परिघ, उत्पात हत नक्षत्र, जन्मराशि से अष्टम राशि, तथा पाप नक्षत्र गर्भाधान में वर्जित हैं ॥ १ ॥

भद्रा, षष्ठी, पर्व, रिक्ता, सन्ध्या, मंगल, रवि, शनिवार, पहिली चार रात्रियां, गर्भाधान में वर्जित हैं। तीनों उत्तरा, मृगशिर, हस्त, अनुराधा, रोहिणी, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्रों में गर्भाधान शुभ है ॥२॥

केन्द्र, त्रिकोण में शुभ ग्रह हों, ३,६, ११ स्थानों मे पाप ग्रह हों, लग्न को पुरुष ग्रह देखता हो, विषम नवांश में चन्द्रमा हो, तथा समरात्रि हो तो गर्भाधान शुभ है। चित्रा, पुनर्वसु, पुष्य, अश्विनी नक्षत्रों में गर्भाधान मध्यम है ॥३॥

जव पुरुष के सूर्य, शुक्र, अपने नवांश में अथवा उपचय स्थान में वलवान् होकर वैठे हो, स्त्री के चन्द्रमा तथा मङ्गल भी उसी प्रकार बैठे हों, तव गर्भ धारण होता है ॥ ४ ॥

जव स्त्री के उपचय स्थान में चन्द्रमा को मंगल देखे तथा पुरुष के चन्द्रमा को वृहस्पति देखे तो गर्भ धारण का योग होता है अन्यथा नहीं ॥ ५ ॥

पुंसवनम्

मूलादित्यशशाङ्कपुष्यहरिभे हस्ते च पुंवासरे
लग्ने कुम्भनृयुग्मसिंहगुरुभे नन्दे सभद्रेतिथौ ।

मासे युग्मतृतीयकेऽथ धवले पक्षे शुभे रात्रिपे
कुर्यात्पुंसवनं च वृद्धिसुखदं केन्द्रत्रिकोणे शुभे ॥

(अर्थ)

मूल, पुनर्वसु, मृगशिर, पुष्य, श्रवण, हस्त नक्षत्रों में, पुरुष वारों में, कुम्भ, मिथुन, सिंह, धन, मीन लग्नों में, नन्दा, भद्रा तिथियों में, दूसरे अथवा तीसरे महीने में, शुक्लपक्ष में, चन्द्रमा की शुद्धि में, केन्द्र त्रिकोण में जब शुभ ग्रह हों, ऐसे मुहूर्त में पुंसवन करने से वृद्धि तथा सुख मिलते हैं। पृ ६२२ भी देखना चाहिये ॥

सीमन्तः

चतुर्थे सावने मासि षष्ठे वाप्यथवाष्टमे ।
अरिक्तापर्वदिवसे कुजजीवार्कवासरे ॥१॥
सीमन्ते तिष्यहस्तादिति हरि शशभृत्पौष्णविध्युत्तराख्याः॥२॥
सीमन्तलग्नादेकोऽपि क्रूरो व्ययसुताष्टसु ।
हन्ति सीमन्तिनीं नारीं तद्गर्भं वा न संशयः ॥३॥

(अर्थ)

चौथे, छठे, अथवा अष्टम (सावन) मास में, रिक्ता पर्व तिथियों को छोड़कर, मंगल, बृहस्पति, रवि वारों में, पुष्य, हस्त, पुनर्वसु, श्रवण, मृगशिर, रेवती, रोहिणी, तीनों उत्तरा नक्षत्रों मे सीमन्त शुभ है ॥१॥२॥ यदि सीमन्त लग्न से १२,५,८ स्थानों में एक भी क्रूर ग्रह हो तो सीमन्तिनी स्त्री का अथवा गर्भ का नाश होता है ॥३॥

सकृदेव पुंसवनादि संस्काराः

सकृच्च संस्कृता नारी सर्वगर्भेषु संस्कृता ॥

(अर्थ)

यदि एक गर्भ में भी स्त्री के पुंसवन आदि संस्कार हो जावें तो सब गर्भों में संस्कार किये के समान हो जाता है ॥

जातकर्म

जन्मतोऽनन्तरं कार्यं जातकर्म यथाविधि।
दैवादतीतकालं चे दतीते सूतके भवेत् ॥१॥
मृदुध्रुवचरक्षिप्रभेष्वेषामुदयेऽपिच।
गुरौ शुक्रेऽथवा केन्द्रे जातकर्म च नामच ॥ २ ॥

(अर्थ)

जन्म के उपरान्त ही जातकर्म यथाविधि करना चाहिये, यदि दैव वशात् उस समय न हो सके तो जब जननाशौच व्यतीत हो तब करना चाहिये ॥१॥

मृदु, ध्रुव, चर, क्षिप्र, नक्षत्रों में, जब बृहस्पति अथवा शुक्र केन्द्र में हों तब जातकर्म तथा नामकर्म करना चाहिये ॥२॥

(षष्ठी महोत्सव षोडश संस्कारों में नहीं है। परन्तु शास्त्रोक्त है। पुराणों में इसका वर्णन है। यह जन्म से छठे दिन सायङ्काल होता है। इसके करने से बालक की आयु की वृद्धि होती है) ॥

नामकर्म

तज्जातकर्मादि शिशोर्विधेयं
पर्वाख्यरिक्तोनतिथौ शुभेऽह्नि।
एकादशे द्वादशकेऽपि घस्रे
मृदुध्रुवक्षिप्रचरोडुषुस्यात् ॥१॥

असम्भवेऽष्टादशे एकोनविंशे दिने शतरात्रे व्युष्टे अयने संवत्सरे गते वा भवति ॥२॥

मुख्यकाले कुर्वन् विप्रादिः पुण्यतिथिनक्षत्रचन्द्रानुकूल्यादि गुणादरं न कुर्यात्। अतिक्रमेतु आवश्यकम् ॥३॥

वैधृतिव्यतीपातसंक्रातिग्रहणदिनामावास्याभद्रासु प्राप्तकाले नामकर्मादि शुभकर्म न कार्यम्। अत्र मलमासगुरुशुक्रास्तादिदोषो नास्ति। अपराह्णे रात्रौच न कार्यम् ॥४॥

अर्थ ।

पर्व, रिक्ता तिथियों को छोड कर, शुभ वार में, एकादश अथवा द्वादश दिवस में, मृदु, ध्रुव, क्षिप्र, चर नक्षत्रों मे जातकर्म अथवा नामकर्म संस्कार करने चाहिये ॥१॥

यदि ग्यारहवें अथवा बारहवें दिन किसी कारण से नाम कर्म न हो सके तो अठारहवें अथवा उन्नीसवें दिन अथवा १०० दिन बीतने पर अथवा छः महीने में अथवा साल भर में करना चाहिये ॥२॥

यदि मुख्य समय में नाम कर्म किया जाय तो शुभ तिथि, नक्षत्र, चन्द्रमा की शुद्धि आदि गुणों का विचार न करे, यदि मुख्यकाल व्यतीत हो जाय तो तिथि आदि की शुद्धि की आवश्यकता है ॥३॥

मुख्य काल में भी यदि वैधृति, व्यतीपात, संक्रान्ति, ग्रहण, अमावास्या, भद्रा आ पड़ें तो नामकर्म आदि शुभ कर्म नहीं करने चाहियें। इसमें मलमास, शुक्रास्तादि दोषों का विचार नहीं है। अपराह्न तथा रात्रि में नामकर्म न करना चाहिये ॥४॥

अवकहडाचक्रम्

चू चे चो लाश्विनी प्रोक्ता ली लू ले लो भरण्यथ ।
अइ उए कृत्ति काम्या दो वावी वू तु रोहिणी ॥१॥
वे वो का की मृगशिरः कघाङा छा तथार्द्रका ।
के को हाही पुनर्वसु हू हे हो डा तु पुष्यभम् ॥२॥
डी डू डे डो तु आश्लेषा मामी मूमे मघा स्मृता ।
मोटा टीटू पूर्व फल्गु टेटो पाप्युत्तरं तथा ॥३॥
पूषाणाढा हस्तनारा पेपो रा री तु चित्रका ।
रू रे रोता स्मृता स्वाती ती तू ते तो विशाखका ॥४॥
नानी नूनेऽनुराधर्क्षं ज्येष्ठा नो या यि यू स्मृता ।
ये यो भा भी मूल नारा पूर्वाषाढा भू धा फ ढा ॥५॥

भे भो जा ज्युत्तराषाढा जू जे जो खा भिजिद्भवेत् ।
खी खू खे खो श्रवणभं गागी गू गे धनिष्ठका ॥६॥
गो सासी सू शतभिषक्से सो दा दी तु पूर्वभा ।
दु थ झा ञो त्तराभद्रं दे दो चा ची तु रेवती ॥७॥

(अर्थ)

अभिजित् नक्षत्र को मिलाकर सब २८ नक्षत्र होते हैं। एक एक नक्षत्र के ४, ४, चरण होते हैं, इसलिये २८ नक्षत्रों के ११२ चरण हुए। प्रत्येक नक्षत्र के चरण अक्षरों में बांटे गये हैं। जैसे चू, चे, चो ला अश्विनी इत्यादि। इसका अभिप्राय यह है कि यदि अश्विनी नक्षत्र के प्रथम चरण में जन्म हो तो चूडामणि राशिनाम रखना चाहिये इत्यादि ॥ यदि किसी का चूडामणि राशि नाम हो तो जन्म नक्षत्र अश्विनी होगा इत्यादि ॥

(हरएक मनुष्य को इतना कण्ठस्थ नहीं रह सकता है। इसलिये राशि पहिचानने के निमित्त इसका संक्षेप इस प्रकार से प्रचलित है:—अलमेष। बव वृष। कछ मिथुन। डह कर्क। मट सिंह। पठ कन्या। रत तुला। नज वृश्चिक। भध धन। खग मकर। गस कुम्भ। दचमीन ॥ इसको याद करने से स्थूल रीति से बहुत काम निकल जाता है ॥)

चतुर्विधनामानि

तत्रनामानि चतुर्विधानि

(१) अमुकदेवताभक्त इत्याकारकं देवतातानाम प्रथमम् ।

(२) मासनामानि

चैत्रादिमासनामानि वैकुण्ठोऽथजनार्दनः ।
उपेन्द्रो यज्ञपुरुषो वासुदेवस्तथा हरिः ॥
योगीशः पुंडरीकाक्षः कृष्णोऽनन्तोऽच्युतस्तथा ।
चक्रीतिद्वादशैतानि क्रमादाहुर्मनीषिणः ॥

(३) नाक्षत्रनाम

(क) अश्वयुत इत्यादि

(ख) अथवा केचित् चूचेचोला श्विनी प्रोक्ता इत्यादिना चूड़ामणि रित्यादि नाम कुर्वन्ति ।

(ग) नक्षत्रदेवतासम्बद्धम् । यथा कृत्तिकाजातस्य 'अग्नि शर्मा' । शाङ्खायनाः कातीयाश्चैवं कुर्वन्ति । नाक्षत्रनामै चाभिवादनीयं गुप्तं चामौञ्जीबन्धनात् माता पितरावेव जानीयाताम् ।

(४) व्यावहारिक नाम । तच्च कवर्गादिषु तृतीय चतुर्थ पञ्चम वर्णं हकारान्यतम वर्णाद्यावयकं यरलवान्यतमवर्णयुतं ऋलृवर्णरहितं विसर्गान्त पित्रादिपुरुषत्रयान्यतमवाचकं शत्रुवाचकभिन्न तद्धितप्रत्ययरहितं कृत्प्रत्ययान्तं युग्माक्षरं पुंसा मयुग्माक्षरं स्त्रीणां कार्यम् । अक्षरमत्र स्वरः । व्यञ्जनेषु न नियमः । द्व्यक्षरं प्रतिष्ठाकामश्चतुरक्षरं ब्रह्मवर्चसकामः । अन्त्यलकाररेफं वर्जयेत् ॥

(अर्थ)

नाम ४ प्रकार के होते हैं :—

(१) देवता का नाम—जैसे अमुक देवता का भक्त ।

(२) मासनाम—चैत्र आदि मासों के नाम यह हैं :—

(१) वैकुण्ठ (२) जनार्दन (३) उपेन्द्र (४) यज्ञपुरुष (५) देव (६) हरि (७) योगीश (८) पुण्डरीकाक्ष (९) कृष्ण (१०) अनन्त (११) अच्युत (१२) चक्री ॥

(३) नक्षत्र नाम :— (क) अश्वयुत इत्यादि ।

(ख) अथवा चू, चे, चो, ला अश्विनी इत्यादि ।

(ग) नक्षत्र देवता सम्बन्धी ।

यथा—जो बालक कृत्तिका नक्षत्र में उत्पन्न हो उसका नाम अग्निशर्मा। शाङ्खायान तथा कातीय शाखावाले इसी प्रकार से नाम रखते हैं। नक्षत्र नाम ही से अभिवादन करना चाहिये। मौञ्जी बन्धन पर्य्यन्त यह नाम गुप्त रहता है, केवल माता पिता इस नाम को जानते हैं॥

(४) व्यवहार का नाम :—कवर्ग आदि वर्गों में तीसरा, चौथा पांचवां वर्ण तथा हकार मे से कोई वर्ण जिसके आदि में हो, य, र, ल, व में से किसी अक्षर से युक्त, ऋ, लृ, अक्षरों से रहित, अन्त में विसर्ग वाला, पिता आदि तीन पुरुषों में से किसी का वाचक न हो, शत्रु के नाम से भिन्न, तद्धित प्रत्यय जिसके अन्त में न हो, कृदन्त प्रत्यय जिसके अन्त में हो, पुरुषों का युग्म अक्षर वाला, स्त्रियों का अयुग्म अक्षर वाला नाम होना चाहिये। यहां अक्षर का अभिप्राय स्वर से है, व्यञ्जनों का कोई नियम नहीं है। जो मनुष्य प्रतिष्ठा चाहे उसको २ अक्षर का नाम रखना चाहिये, जो ब्रह्मवर्चस चाहे उसको ४ अक्षर का नाम रखना चाहिये, अन्त में लकार अथवा रेफ वर्जित करना चाहिये॥

अन्नप्राशनम्

रिक्तानन्दाष्टवर्जं हरिदिवसमथो सौरिभौमार्कवारान्
लग्नं जन्मर्क्षलग्नाष्टमगृहलवगं मीनमेषालिकंच।
हित्वाषष्ठात्समे मास्यथ मृगदृशां पञ्चमादोजमासे
नक्षत्रैः स्यात्स्थिराख्यैः समृदुलघुचरै र्बालकान्नाशनं सत्॥१॥
केन्द्र त्रिकोण सहजेषु शुभैः ख शुद्धे
लग्ने त्रिलाभरिपुगैश्च वदन्ति पापैः।
लग्नाष्ट षष्ठ रहितं शशिनं प्रशस्तं
मैत्राम्बुपानिलजनुर्भ मसच्च केचित्॥२॥
क्षीणेन्दुपूर्णचन्द्रेज्यज्ञभौमार्कार्कि भार्गवैः।
त्रिकोण व्यय केन्द्राष्ट स्थिते रुक्कं फलं ग्रहैः॥३॥

भिक्षाशी यज्ञकृद्दीर्घजीवी ज्ञानी च पित्तरुक् ।
कुष्ठी चान्नक्लेश वात व्याधिमान्भोगभागिति ॥४॥
(रविवारो ग्रन्थान्तरानुसारेण ग्राह्यः) (पृ-६२३ द्रष्टव्यम्)

(भाषा)

रिक्ता, नन्दा, अष्टमी तथा द्वादशी तिथियों को, तथा शनि, मंगल, रवि वारों को, जन्म लग्न से अष्टम लग्न तथा मीन, मेष, वृश्चिक लग्नों को छोड कर, पुत्र का छठे मास से सम मास में, तथा कन्या का पंचम मास से विषम मास में, स्थिर, मृदु, लघु, चर नक्षत्रों में अन्न प्राशन शुभ है ॥१॥

केन्द्र, त्रिकोण, सहज स्थानों में शुभ ग्रह हों, दशम शुद्ध हों, ३,११,६ स्थानों में पाप ग्रह हों, लग्न, ६,८ स्थानों में चन्द्रमा न हो तो शुभ है । कोई आचार्य्य अनुराधा, शतभिषा, स्वाती नक्षत्रों को भी अशुभ बतलाते हैं ॥२॥

यदि क्षीण चन्द्रमा, पूर्ण चन्द्रमा, वृहस्पति, बुध, मङ्गल, सूर्य्य, शनि, शुक्र, त्रिकोण, व्यय, केन्द्र, अष्टम स्थानों में हों तो उनका फल यह है:—

भिक्षा मागने वाला, यज्ञ करने वाला, दीर्घजीवी, ज्ञानी, पित्त रोग वाला, कुष्ठी, अन्न क्लेश वाला, वात व्याधि वाला तथा भोगी ॥३॥ ॥४॥
(किन्हीं ग्रन्थों में रविवार उक्त है) (पृ- ६२३ भी देखना चाहिये) ॥

कर्णवेधः

वर्षे तृतीये पञ्चमेवा । पृ-६२२ द्रष्टव्यम् ॥
हित्वैतांश्चैत्रपौषावमहरिशयनं जन्ममासं च रिक्तां
युग्माब्दं जन्मतारा मृतुमुनिवसुभिः सम्मिते मास्यथोवा ।
जन्माहात्सूर्यभूपैः परिमितदिवसे ज्ञेज्यशुक्रेन्दुवारे
ऽथोजाब्दे विष्णुयुग्मादितिमृदुलघुभैः कर्णवेधः प्रशस्तः ॥१॥

संशुद्धे मृतिभवने त्रिकोण केन्द्र
श्यायस्थैः शुभखचरैः कवीज्यलग्ने ।
पापाख्यै ररिसहजायगेह संस्थै
र्लग्नस्थे त्रिदशगुरौ शुभावहः स्यात् ॥ २ ॥

(अर्थ)

तीसरे अथवा पांचवे वर्ष करना चाहिये ॥ पृ-६२२ भी देखना चाहिये ॥

चैत्र पौष मासों को, अवमतिथि, तथा चातुर्मास, जन्म मास, रिक्ता तिथि, समवर्षों को तथा जन्म नक्षत्र को छोड कर, ६,७,८ मासों में अथवा जन्म दिन से बारहवें अथवा सोलहवें दिन, बुध, बृहस्पति, शुक्र, चन्द्र वार को, विषम वर्ष में, श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मृदु, लघु, नक्षत्रों में कर्णवेध शुभ है ॥१॥

अष्टम स्थान शुद्ध हो, त्रिकोण, केन्द्र, ३,११ स्थानों में शुभ ग्रह हों, बृहस्पति अथवा शुक्र लग्न में हों, पाप ग्रह ३,६,११, स्थानों में हों, लग्न में बृहस्पति हो तो शुभ है ॥२॥

चूडा कर्म

चूडा वर्षात् तृतीयात्प्रभवति विषमेऽष्टार्क रिक्ताद्यषष्ठी
पर्वोनाहे विचैत्रोदगयनसमये ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानाम् ।
वारे लग्नांशयोश्चास्वभनिधनतनौ नैधने शुद्धियुक्ते
शाक्रोपेतै विमैत्रैर्मृदुचरलघुभै रायषट्त्रिस्थपापैः ॥१॥
क्षीणचन्द्रकुजसौरिभास्करै
र्मृत्यु शस्त्र मृति पङ्गुता ज्वराः ।
स्युः क्रमेण बुधजीवभार्गवैः
केन्द्रगैश्च शुभमिष्टतारया ॥२॥
पञ्चमासाधिकेमातु गर्भे चौलं शिशोर्न सत् ।
पञ्चावर्षाधिकस्येष्टं गर्भिण्यामपि मातरि ॥३॥

ताराद्दौष्टयेऽब्जेत्रिकोणोच्चगेवा
क्षौरं सत्स्यात्सौम्यमित्रस्ववर्गे ।
सौम्येभेऽब्जे शोभने दुष्टतारा
शस्ता ज्ञेया क्षौरयात्रादिकृत्ये ॥४॥
ऋतुमत्याः सूतिकायाः सुनोरचौलादि नाचरेत् ।
ज्येष्ठापत्यस्य न ज्येष्ठे कैश्चिन्मार्गेऽपिनेष्यते ॥५॥
तारा शुद्ध क्षौरम् ॥६॥ (पृ-६२३ द्रष्टव्यम्)

(अर्थ)

तीसरे वर्ष से विषम वर्ष में, अष्टमी, सप्तमी, रिक्ता, प्रतिपदा, षष्ठी, पर्व को छोड कर, चैत्र मास को छोड कर उत्तरायण में, बुध, चन्द्र, शुक्र, बृहस्पति वार को, लग्नेश अथवा लग्न का नवांशेश अष्टम में न हो, अष्टम शुद्ध हो, ज्येष्ठा, अनुराधा नक्षत्र को छोडकर, मृदु, चर, लघु नक्षत्रों में, ३, ६, ११, स्थानों में जब पाप ग्रह हो तब चूडा कर्म शुभ है ॥१॥

यदि क्षीण चन्द्र, मङ्गल, शनि, सूर्य्य, केन्द्र में हों तो क्रम से मृत्यु, शस्त्र से मृत्यु, लूलापन, तथा ज्वर होते हैं, यदि केन्द्र में बुध, बृहस्पति, शुक्र हों तथा तारा अच्छी हो तो शुभ होता है ॥२॥

यदि बालक की माता के पेट में ५ महीने से अधिक का गर्भ हो तो चूडा कर्म शुभ नहीं है। यदि बालक की अवस्था ५ वर्ष से अधिक हो तो माता के गर्भिणी होने पर भी चूडाकर्म करना चाहिये ॥३॥

यदि दुष्ट तारा हो परन्तु चन्द्रमा त्रिकोण में अथवा उच्च का हो अथवा सौम्य ग्रह, मित्र ग्रह अथवा अपने वर्ग का हो तो क्षौर शुभ है। यदि चन्द्रमा शुभ हो तो दुष्ट तारा का दोष क्षौर तथा यात्रा आदि कार्य्यों में नहीं है ॥४॥

जिस की माता रजोवती हो अथवा हाल ही में जिसकी माता का बच्चा हुआ हो (अर्थात् १० दिन के भीतर) उस बालक का चूड़ाकर्म न करना चाहिये।

ज्येष्ठ पुत्र का ज्येष्ठ के महीने में भी न करना चाहिये। कोई आचार्य कहते हैं कि मार्गशीर्ष में भी नहीं करना चाहिये ॥ ५ ॥
चूडा कर्म में तारा की शुद्धि देखनी चाहिये ॥६॥ (पृ-६२३ भी देखनाचाहिये)

अक्षरारम्भः

गणेशविष्णुवाग्रमाः प्रपूज्य पञ्चमाब्दके
तिथौ शिवार्कदिग्द्विषट् शरत्रिके रवावुदक् ।
लघुश्रवोऽनिलान्त्यभादितीशतक्षमित्रभे
चरोनसत्तनौ शिशोर्लिपिग्रहः सतां दिने ॥

(अर्थ)

गणेश, विष्णु, सरस्वती, लक्ष्मी का पूजन करके पाचवें वरस में, चतुर्दशी, सप्तमी, दशमी, द्वितीया, षष्ठी, पञ्चमी, तृतीया तिथि को, उत्तरायण में, लघु, श्रवण, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा, अनुराधा नक्षत्रों में, चर लग्न को छोड कर शुभ लग्न में, अच्छे वार में, बालक को अक्षरारम्भ कराना चाहिये ॥

विद्यारम्भः

(पञ्चमवर्षे उदगयने कुम्भादित्यविवर्जिते ।)
मृगात्कराच्छ्रुतेस्त्रयेऽश्विमूलपूर्विकात्रये
गुरुद्वयेऽर्कजीवविित्सितेऽह्निषट् शरत्रिके ।
शिवार्कदिग्द्विकेतिथौ ध्रुवान्त्य मित्रभेपरैः
शुभैरधीतिरुत्तमा त्रिकोणकेन्द्रगैः स्मृता ॥

(अर्थ)

(पांचवे वरस, उत्तरायण में, कुम्भ का सूर्य छोड कर विद्यारम्भ करना चाहिये ॥)

मृगशिर आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, मूल, तीनों पूर्वा, पुष्य, अश्लेषा नक्षत्रों में, बृहस्पति बुध, शुक्र, वार को, ६,५,३ १४,७,१०, २ तिथियो में, किन्हीं आचार्यों

के मत से ध्रुव, रेवती, अनुराधा नक्षत्रों में, त्रिकोण तथा केन्द्र में शुभ ग्रह होने पर विद्यारम्भ शुभ है ॥

(३) उपनयनप्रकरणम्

उपनयनकालः

गर्भाष्टमेऽष्टमे वाब्दे ब्राह्मणस्योपनायनम् ।
राज्ञामेकादशे सैके विशामेके यथाकुलम् ॥१॥
आषोडशको विप्रो नोपनीयः कदाचन ।
क्षत्रियो विंशते रूर्ध्वं न वैश्यः पंचविंशतिः ॥२॥
अत ऊर्ध्वं त्रयोप्येते यथाकाल मसंस्कृताः ।
सावित्रीपतिता व्रात्या व्रात्यस्तोमादृते क्रतोः ॥३॥

(अर्थ)

ब्राह्मण का उपनयन गर्भाष्टम अथवा अष्टम वर्ष में करना चाहिये । क्षत्रिय का ग्यारहवें वर्ष में, वैश्य का बारहवें वर्ष अथवा सब का अपने कुल के अनुसार करना चाहिये ॥१॥

१६ वर्ष के उपरान्त ब्राह्मण का, २० वर्ष के उपरान्त क्षत्रिय का, २५ वर्ष के उपरान्त वैश्य का उपनयन कदापि नहीं करना चाहिये ॥२॥

यदि यथोचित समय में इन तीनों वर्णों का संस्कार न किया जावे तो वे सावित्री पतित तथा व्रात्य अर्थात् संस्कार हीन हो जाते हैं, व्रात्यस्तोमयज्ञ किये विना उनका उपनयन नहीं हो सकता है ॥३॥

गुरुसूर्यशुद्धि.

शस्ते शशिनि सुरेज्ये सवितरि शस्ते च मेखलाबंधः ॥

वटु जन्मराशेः

१।३।६।१०	स्थानेषु गोचरे स्थितो	गुरुः पूज्यः
२।५।७।९।११	„	गुरुः शुद्धः
४।८।१२	„	गुरुर्वर्ज्यः
१।२।५।७।९	„	रविः पूज्यः
३।६।१०।११	„	रवि. शुभः
४।८।१२	„	रविर्वर्ज्यः

(अर्थ)

जब बृहस्पति, सूर्य तथा चन्द्रमा की शुद्धि हो तब मेखलाबन्धन अर्थात् व्रतबन्ध हो सकता है। बटु की जन्म राशि से गोचर में

१।३।६।१०। स्थानो में स्थित बृहस्पति पूज्य है।

२।५।७।६।१० स्थानों में स्थित बृहस्पति शुद्ध है।

४।८।१२ स्थानो में स्थित बृहस्पति वर्जित है।

१।२।५।७।६ स्थानों में स्थित सूर्य पूज्य है।

३।६।१०।११ स्थानो मे स्थित सूर्य शुभ है।

४।८।१२ स्थानों में स्थित सूय वर्जित है।

गुरुशुद्धिः

बटु कन्या जन्म राशेस्त्रिकोणायद्विसप्तमः।
श्रेष्ठो गुरुः खषट्त्र्याद्ये पूजयान्यत्र निन्दितः॥
स्वोच्चे स्वभे स्वमैत्रे वा स्वांशे वर्गोत्तमे गुरुः।
रिष्फाष्टतुर्यगोऽपीष्टो नीचारिस्थः शुभोऽप्यसन्॥

(अर्थ)

बटु अथवा कन्या की जन्म राशि से त्रिकोण, लाभ, द्वितीय अथवा सप्तम स्थान का बृहस्पति श्रेष्ठ है। १०।६।३।१ स्थानों का बृहस्पति पूजा करने से शुभ हो जाता है। शेष अर्थात् ४।८।१२ स्थानों में निन्दित है। यदि बृहस्पति अपने उच्च का, अपनी राशिका, अपने मित्र के घर का, अपने नवांश अथवा वर्गोत्तम का हो तो ४।८।१२ स्थानों में भी शुभ है। परन्तु यदि नीचस्थ अथवा शत्रु गृही हो तो शुभ स्थानों में भी अशुभ है॥

उच्चस्थादि गुरौ शुभम्

झषचापकुलीरस्थो जीवोऽप्यशुभगोचरः।
अतिशोभनतां दद्याद्विवाहोपनयनादिषु॥

(अर्थ)

यदि वृहस्पति धन, मीन अथवा कर्क राशि का हो, गोचर में चाहे अशुभ भी हो तब भी विवाह, उपनयन आदि में अत्यन्त शुभ फल देता है ॥

वृहस्पति पूजा

व्रते जन्मत्रिखारिस्थो जीवोऽपीष्टोऽर्चनात्सकृत् ।
शुभोऽतिकाले तुर्याष्टव्ययस्थो द्विगुणार्चनात् ॥
व्रतकाले तु संप्राप्ते शुद्धिर्यस्य न जायते ।
कृत्वार्चां शक्तितः पश्चाद्विधेयं मौञ्जिबन्धनम् ॥

(अर्थ)

यदि १।३।१०।६ स्थानों में वृहस्पति हो तो पूजा करने से व्रत बन्ध में शुभ फल मिलता है। यदि अतिकाल हो गया हो तथा ४।८।१२ स्थानों में हो तो द्विगुण पूजन करने से शुभ होता है ॥ जब व्रतबन्ध के समय शुद्धि न हो तो यथाशक्ति पूजन करके व्रतबन्ध करना चाहिये ॥

अष्टकवर्ग शुद्धिः

अष्टवर्गविशुद्धेषु गुरुशीतांशुभानुषु ।
व्रतोद्वाहौ च कर्तव्यौ गोचरे न कदाचन ॥

(अर्थ)

जब वृहस्पति सूर्य तथा चन्द्रमा अष्टक वर्ग में शुद्ध हों तब व्रतबन्ध अथवा विवाह करना चाहिये। गोचर की शुद्धि से नहीं ॥

नव वर्ज्याः

व्याघातं परिघं वज्रं व्यतीपातोऽथवैधृतिः ।
गंडातिगंडशूलं च विष्कम्भं नव वर्जयेत् ॥
कर्णवेधे विवाहे च व्रते पुंसवने तथा ॥

(अर्थ)

कर्ण वेध, विवाह, व्रत बन्ध तथा पुंसवन में निम्न लिखित ६ योग वर्जित करने चाहियें:—

व्याघात, परिघ, वज्र, व्यतीपात, वैधृति, गण्ड, अतिगण्ड, शूल तथा विष्कम्भ ॥

विद्धत्ववर्ज्यम्

प्राशनेऽन्नस्य चूडायां विद्धमृक्षं परित्यजेत् ॥
चक्रे सप्त शलाकाख्ये सर्वकर्माणि निश्चितम् ।
वर्जयित्वा विवाहं च कुर्याद्वेधस्य निर्णयम् ॥

(अर्थ)

अन्नप्राशन तथा चूडा कर्म में विद्ध नक्षत्र को छोड़ देना चाहिये। विवाह को छोड़ कर अन्यत्र सब शुभ कर्मो में सप्त शलाका चक्र से वेध का निर्णय करना चाहिये।

अनध्यायाः

शुचि शुक्र पौष तपसां
दिगश्विरुद्रार्कसंख्यसिततिथयः ।
भूतादि त्रितयाष्टमि
संक्रमणं च व्रतेष्वनध्यायाः ॥१॥
अर्कतर्कत्रितिथिषु प्रदोषः स्यात्तदग्रिमैः ।
रात्र्यर्धसार्धप्रहर याममध्यस्थितैः क्रमात् ॥२॥
चतुर्दशीद्वयं चैव प्रतिपच्चाष्टमी तथा ।
पक्षयो रुभयो रेक मनध्यायाष्टकं विदुः ॥३॥
अष्टकासु च सर्वासु युगमन्वन्तरादिषु ।
अनध्यायं प्रकुर्वीत तथा चोपपदादिषु ॥४॥

(अर्थ)

आषाढ़ शुक्ल दशमी, ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया, पौष शुक्ल एकादशी, माघ शुक्ल द्वादशी, चतुर्दशी, पौर्णमासी (कृष्णपक्ष में अमावस्या), प्रतिपदा, अष्टमी, संक्रान्ति दिन, व्रत बन्ध में अनध्याय हैं ॥ १ ॥

द्वादशी के दिन अर्धरात्रि से पूर्व त्रयोदशी, षष्ठी के दिन डेढ पहर से पूर्व सप्तमी, तृतीया के दिन एक पहर से पूर्व चतुर्थी प्रवृत्त हो तो प्रदोष हो जाता है। वह व्रत बन्ध में वर्जित है ॥ २ ॥

चतुर्दशी, पौर्णमासी (अथवा अमावास्या), प्रतिपदा, अष्टमी, दोनों पक्षों में आठ अनध्याय हैं ॥३॥

अष्टका, युगादि, मन्वन्तरादि, तथा उपपदादि तिथियों में अनध्याय हैं ॥४॥

वर्ज्यकालः

कृष्णे प्रदोषेऽनध्याये शनौ निश्यपराह्णके ।
प्राक्सन्ध्या गर्जिते नेष्टो व्रतबन्धो गलग्रहे ॥

(अर्थ)

कृष्ण पक्ष में, प्रदोष में, अनध्याय में, शनि वार को, रात्रि में, अपराह्न में, गलग्रह में, तथा जब पहले दिन सन्ध्या के समय मेघ गर्जन हुआ हो तो व्रतबन्ध करना शुभ नहीं है ॥

मन्वाद्यो युगादयश्च

मन्वाद्यास्त्रितिथी मधौतिथिरवी ऊर्जे शुचौ दिक् तिथी
ज्येष्ठेन्त्ये च तिथिस्त्विषे नव तपस्यश्वाः सहस्ये शिवाः ।
भाद्रेऽग्निश्च सितेत्वमाष्टनभसः कृष्णे युगाद्याः सिते
गोऽग्नी बाहुलराधयो र्मदनदर्शौ भाद्र माघासिते ॥

(अर्थ)

चैत्र शुक्ल की तृतीया, पचमी, कार्तिक शुक्ल की १५।१२, आषाढ शुक्ल की १०।१५, ज्येष्ठ तथा फाल्गुन शुक्ल की १५, आश्विन शुक्ल नवमी, माघ शुक्ल ७, पौष शुक्ल एकादशी, भाद्र शुक्ल ३, श्रावण कृष्ण की अमावास्या तथा अष्टमी मन्वादि तिथि हैं ॥ कार्तिक शुक्ल ९, वैशाख शुक्ल तृतीया, भाद्र कृष्ण त्रयोदशी तथा माघ कृष्ण ३० युगादि हैं ॥

सोपपदास्तिथयः

सिता ज्येष्ठे द्वितीया च आश्विने दशमी सिता ।
चतुर्थी द्वादशी माघे एताः सोपपदाः स्मृताः ॥

(अर्थ)

ज्येष्ठ शुक्ल द्वितीया, आश्विन शुक्ल दशमी, माघमास की चतुर्थी तथा द्वादशी तिथियों को सोपपदा कहते हैं ॥

गलग्रहाः

त्रयोदश्यादि चत्वारि सप्तम्यादिदिनत्रयम् ।
चतुर्थी चैकतः प्रोक्ता अष्टावेते गलग्रहाः ॥

(अर्थ)

त्रयोदशी, चतुर्दशी, पौर्णमासी (अथवा कृष्ण पक्ष में अमावास्या), प्रतिपदा, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, चतुर्थी इन आठों तिथियों का नाम गल ग्रह है ॥

कृष्णाष्टम्यूर्ध्वं निषेधः

कृष्णाष्टम्यूर्ध्वं तिथिषु व्रतबन्धस्त्वनिष्टदः ॥

(अर्थ)

कृष्ण पक्ष में अष्टमी तिथि के उपरान्त व्रतबन्ध करने से अनिष्ट होता है ॥

शुभ मासाः

माघादिमासषट्केतु मेखलाबन्धनं शुभम् ॥
मृगकुम्भगते भानौ मध्यमं मीनमेषयोः ।
उत्तमं गोयमस्थेऽर्के मध्यमं ह्यौपनायनम् ॥

(अर्थ)

माघ आदि छः महीनों में व्रत बन्ध करना शुभ है । मकर कुम्भ के सूर्य में मध्यम है । मीन मेष के सूर्य में उत्तम है । वृष मिथुन के सूर्य में व्रतबन्ध करना मध्यम है ॥

ज्येष्ठापत्यस्य ज्येष्ठमासो वर्ज्यः

व्रतबंधं विवाहं च चूडां कर्णस्य वेधनम् ।
ज्येष्ठपुत्रदुहित्रोश्च ज्येष्ठमासे न कारयेत् ॥

(अर्थ)

ज्येष्ठ पुत्र अथवा ज्येष्ठ कन्या का विवाह, कर्णवेध, (तथा ज्येष्ठ पुत्र का) चूडा कर्म, व्रतबन्ध ज्येष्ठ मास में नहीं करना चाहिये ॥

वेदक्रमाच्छुभनक्षत्राणि

वेदक्रमाच्छशिशिवाहिकरत्रिमूल
पूर्वासु पौष्णकरमैत्रमृगादितीज्ये ।
श्रावेषु चाश्विवसुपुष्यकरोत्तरेश
कर्णं मृगान्त्यलघुमैत्रजनादितौ सत् ॥

(अर्थ)

मृगशिर, आर्द्रा, अश्लेषा, हस्त, चित्रा, स्वाती, तीनों पूर्वाओं में ऋग्वेद वालों का, रेवती, हस्त, अनुराधा, मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, रोहिणी, तीनों उत्तराओं में यजुर्वेदियों का, अश्विनी, धनिष्ठा, पुष्य, हस्त, तीनों उत्तरा, आर्द्रा, श्रवण में सामवेदियों का, मृगशिर, रेवती, पुष्य, अश्विनी, हस्त, अनुराधा, धनिष्ठा, पुनर्वसु नक्षत्रों में अथर्व शाखा वालों का व्रतबन्ध शुभ है ॥

उपनयन मुहूर्तः

क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वा
रौद्रेऽर्कविद्गुरुसितेन्दुदिने व्रतं सत् ।
द्वित्रीषुरुद्ररविदिक्प्रमिते तिथौ च
कृष्णादिमत्रिलवकेऽपि न चापराह्णे ॥

(अर्थ)

क्षिप्र, ध्रुव, अश्लेषा, चर, मूल, मृदु, तीनों पूर्वा, आर्द्रा नक्षत्रों में, सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र वारों में, २।३।५।११।१२।१० तिथियों में, कृष्ण

पक्ष के प्रथम त्रिभाग में (अर्थात् पञ्चमी पर्यन्त) व्रतबन्ध करना शुभ है, परन्तु अपराह्न में नहीं करना चाहिये ॥

तारा

सप्त पञ्च त्रितारा नेष्टाः ।

(अर्थ)

३।५।७ तारा वर्जित हैं ॥

शाखेशाः (वर्णेशाश्च)

विप्राधीशौ भार्गवेज्यौ कुजार्कौ
राजन्यानामोषधीशो विशांच ।
शूद्राणां ज्ञश्चान्त्यजानां शनिःस्या
च्छाखेशाः स्युर्जीवशुक्रारसौम्याः ॥
शाखेशवारतनुवीर्यमतीव शस्तं
शाखेशसूर्यशशिजीवबले व्रतं स्यात् ।
जीवे भृगौ रिपुगृहे विजितेच नीचे
स्याद्वेदशास्त्रविधिना रहितो व्रतेन ॥

(अर्थ)

ब्राह्मणों के स्वामी बृहस्पति तथा शुक्र हैं, क्षत्रियों के स्वामी मङ्गल तथा सूर्य हैं, वैश्यों का स्वामी चन्द्रमा है, शूद्रों का स्वामी बुध है, अन्त्यजों का स्वामी शनि है । ऋक् शाखा का स्वामी बृहस्पति, यजु. शाखा का शुक्र, सामशाखा का मङ्गल, अथर्व शाखा का स्वामी बुध हैं ॥

व्रतबन्ध में शाखेश का वार तथा शाखेश का लग्नबल अति उत्तम होता शाखेश, सूर्य, चन्द्रमा, बृहस्पति का बल मिलने पर व्रतबन्ध करना शुभ है । जब बृहस्पति तथा शुक्र शत्रु के घर में हों, अथवा ग्रह युद्ध में पराजित हों अथवा नीचराशि में हों तो वटु श्रौत स्मार्त कर्मों से हीन होता है ॥

जन्मनक्षत्रादयः

जन्मर्क्षमासलग्नादौ व्रते विद्याधिकोव्रती ।
आद्यगर्भेऽपि विप्राणां क्षत्रादीनां मनादिमे ॥

(अर्थ)

जन्म नक्षत्र, जन्म मास, जन्म लग्न, जन्म तिथि आदि में व्रत बन्ध करने से वटु अधिक विद्यावान् होता है। इसका दोष ब्राह्मणों के ज्येष्ठ पुत्र के लिये नहीं हैं। क्षत्रिय वैश्यों के ज्येष्ठ पुत्र के लिये वर्जित है तदनन्तर दोष नहीं है ॥

उपनयन लग्नम्

कवीज्यचन्द्रलग्नपा रिपौ मृतौ व्रतेऽधमाः ।
व्ययेऽब्जभार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खलाः ॥
व्रतबन्धेऽष्टषड्रिष्फ वर्जिताः शोभनाः शुभाः ।
त्रिषडाये खलाः पूर्णो गोकर्कस्थो विधुस्तनौ ॥
मेखलाबन्धकार्येच्च सर्वथा पञ्चमं गृहम् ।
शुभयुक्तं प्रशंसन्ति तदालोकितमेववा ॥

(अर्थ)

व्रतबन्ध लग्न में शुक्र, वृहस्पति, चन्द्रमा तथा लग्नेश छठे तथा आठवें स्थान में अधम होते हैं। चन्द्रमा तथा शुक्र व्यय स्थान में, पाप ग्रह लग्न, अष्टम तथा पञ्चम स्थान में अधम फल देते हैं ॥ ८।६।१२ स्थानों को छोड़ कर शेष स्थानों में स्थित शुभ ग्रह शुभ फल देते हैं। ३।६।११ स्थानों में पाप ग्रह शुभ फल देते हैं। वृष, कर्क राशियों का चन्द्रमा यदि पूर्ण हो कर लग्न में बैठा हो तो शुभ फल देता है ॥ व्रत बन्ध में पञ्चम स्थान शुभ युक्त अथवा शुभ दृष्ट होना चाहिये ॥

नवांशफलम्

क्रूरो जडो भवेत्पापः पटुःषट्कर्मकृद्वटुः ।
यज्ञार्थभाक् तथा मूर्खोऽर्क्याद्यंशे तनौ क्रमात् ॥

(अर्थ)

व्रतबन्ध लग्न में यदि सूर्य का नवांश हो तो वटु क्रूर बुद्धि होता है। यदि चन्द्रमा का नवांश हो तो जड़ बुद्धि होता है। मङ्गल का हो तो पापी, बुध का हो तो चतुर, बृहस्पति का हो तो षट्कर्म कर्ता (अध्यापन, अध्ययन, यजन, याजन, दान, प्रतिग्रह), शुक्र का हो तो यज्ञ करने वाला, शनि का हो तो मूर्ख होता है ॥

केन्द्रस्थ ग्रह फलम्

राजसेवी वैश्यवृत्तिः शस्त्रवृत्तिश्च पाठकः ।
प्राज्ञोऽर्थवान् म्लेच्छसेवी केन्द्रे सूर्यादिखेचरैः ॥

(अर्थ)

यदि केन्द्र में सूर्य हो तो वटु राजा की सेवा करने वाला होता है, चन्द्रमा हो तो वैश्य वृत्ति वाला, मङ्गल हो तो शस्त्र वृत्ति वाला, बुध हो तो पढ़ाने वाला, बृहस्पति हो तो पण्डित, शुक्र हो तो धनवान्, शनि हो तो म्लेच्छों की सेवा करने वाला होता है ॥

क्रूर युत सौम्यग्रहफलम्

शुक्रे जीवे तथा चन्द्रे सूर्यभौमार्किसंयुते ।
निर्गुणः क्रूरचेष्टः स्यान्निर्घृणः सद्युते पटुः ॥

(अर्थ)

यदि शुक्र, बृहस्पति, अथवा चन्द्रमा, सूर्य से युक्त हों तो वटु निर्गुण होता है, मङ्गल के साथ हों तो वटु क्रूर चेष्टा वाला होता है, शनि के साथ हों तो वटु घृणा रहित होता है। यदि शुभ ग्रह से युक्त हों तो चतुर होता है ॥

मातरिगर्भिण्याम्

चूडाकर्मविषये द्रष्टव्यम् (पृ. ६१७) ॥

(अर्थ)

यदि वटु की माता गर्भवती हो तो चूड़ा कर्म विषय में (पृष्ठ ६१७) देखना चाहिये ॥

मातूरजोदर्शने शान्तिः

नान्दीश्राद्धोत्तरं मातुः पुष्पे लग्नान्तरे नहि ।
शान्त्या चौलं व्रतं पाणि ग्रहः कार्योऽन्यथा नसत् ॥

(अर्थ)

यदि नान्दीश्राद्ध करने के उपरान्त वटु, वर अथवा कन्या की माता रजस्वला हो जावे तथा दूसरा लग्न नहीं मिलता हो तो शान्ति करके चूड़ा कर्म, व्रतबन्ध अथवा विवाह करने चाहियें, अन्यथा शुभ नहीं होता है ॥

मेघगर्जने

व्रतेह्नि पूर्वसंध्यायां वारिदो यदि गर्जति ।
तद्दिनं स्यादनध्यायं व्रतं तत्र न कारयेत् ॥ १ ॥
नान्दीश्राद्धं कृतंचेत्स्यादनध्यायस्तु कालिकः ।
तदोपनयनं कार्यं वेदारम्भं न कारयेत् ॥ २ ॥

(अर्थ)

यदि व्रतबन्ध के पहिले दिन सायङ्काल को मेघ गर्जन हो तो व्रतबन्ध का दिन अनध्याय हो जाता है, उस दिन व्रतबन्ध न करावे ॥

यदि नान्दी श्राद्ध कर लिया हो और कालिक अनध्याय आपड़े तो उपनयन करना चाहिये परन्तु वेदारम्भ न कराना चाहिये ॥

चैत्र माहात्म्यम्

शुद्धिर्न विद्यते यस्य प्राप्ते वर्षेऽष्टमेयदि ।
चैत्रे मीनगते भानौ तस्योपनयनं शुभम् ॥१॥
नष्टे शुक्रे तथा जीवे दुर्बले चन्द्रभास्करे ।
तत्रोपनयनं कार्यं चैत्रे मीनगते रवौ ॥ २ ॥
गोचराष्टकवर्गाभ्यां गुरुशुद्धिर्न लभ्यते ।
तत्रोपनयनं कार्यं चैत्रे मीनगते रवौ ॥३॥

(अर्थ)

अष्टम वर्ष के प्रवेश होने पर जिस वटु को गोचरादि शुद्धि न हो उसका व्रतवन्ध चैत्र के महीने में जब मीन का सूर्य हो शुभ है ॥१॥

शुक्र तथा बृहस्पति अस्त हो जावे, चन्द्रमा सूर्य बल हीन क्यों न हों तथापि चैत्र मास में जब मीन का सूर्य हो व्रतवन्ध करना चाहिये ॥२॥

गोचर तथा अष्टक वर्ग के अनुसार बृहस्पति की शुद्धि न भी मिले तो चैत्र मास में जब मीन का सूर्य हो व्रतवन्ध करना चाहिये ॥३॥ (चैत्र मास का इतना माहात्म्य है) ॥

पुनः संस्कारार्हः

ताराचन्द्रानुकूलेऽपि ग्रहाब्देषु शुभेष्विह ।
पुनर्वसौ व्रती विप्रः पुनः संस्कार मर्हति ॥१॥
देवेज्यशुक्रयोरस्ते पुनर्वसौ गलग्रहे ।
उपनीतस्त्वनध्याये पुनः संस्कार मर्हति ॥२॥
निशि प्रदोषेऽनध्याये मन्दे कृष्णे गलग्रहे ।
मधुं विनाचोपनीत· पुनः संस्कार मर्हति ॥ ३ ॥

(अर्थ)

यदि शुभ वर्ष हो, नक्षत्र चन्द्रमा अनुकूल हों तथापि पुनर्वसुके दिन जिसका व्रतवन्ध किया जावे उसका फिर संस्कार करना चाहिये ॥१॥

बृहस्पति शुक्र के अस्त में, पुनर्वसु नक्षत्र में, गल ग्रह में, अनध्याय में जिसका व्रतवन्ध हो उसका फिर संस्कार करना चाहिये ॥ २ ॥

यदि रात्रि में, प्रदोष में, अनध्याय के दिन, शनि वार को, कृष्णपक्ष में (अतिकृष्ण में), गलग्रह में व्रत वन्ध किया जावे तो फिर नये सिरे संस्कार करना पडता है। परन्तु यदि चैत्र में पूर्वोक्त दोषो में भी व्रतवन्ध किया जावे तो नये सिरे संस्कार की आवश्यकता नहीं है ॥३॥

केशान्तः समावर्तनं च

केशान्तः षोडशे वर्षे चौलोक्तदिवसे शुभः ।
व्रतोक्तदिवसादौहि समावर्तन मिष्यते ॥

(अर्थ)

सोलहवें वर्ष में चूडा कर्म में कहे हुए नक्षत्रादि में केशान्त संस्कार (अर्थात् व्रत बन्ध के उपरान्त पहली हजामत) शुभ है। जो दिन व्रतबन्ध में उक्त हैं उन्हीं में समावर्तन शुभ है॥

छुरिकाबन्धः (क्षत्रियाणाम्)

विचैत्रव्रतमासादौ विभौमास्ते विभूमिजे।
छुरिकाबन्धनं शस्तं नृपाणां प्राग्विवाहतः॥

(अर्थ)

चैत्र को छोड कर व्रतबन्धोक्त मासो में, मङ्गल वार तथा भौमास्त को छोड कर क्षत्रियों का छुरिकाबन्धन विवाह से पूर्व करना चाहिये॥

सप्तशलाका चक्रं विवाहादन्यत्र

(अर्थ)

विवाह को छोड़ कर अन्यत्र व्रतबन्ध आदि में सप्त शलाका चक्र का विचार करना चाहिये। विद्ध नक्षत्र वर्जित है। जन्म नक्षत्र तथा व्रत बन्ध मुहूर्त के नक्षत्र का वेध देखना चाहिये। जैसे पुष्य ज्येष्ठा का परस्पर वेध होता है ॥

युतिः (कूर्माचले विशेषतः प्रसिद्धा)

शनि राहु कुजा दित्या यदा जन्मर्क्ष संस्थिताः ।
विवाहिता च याकन्या साकन्या विधवा भवेत् ॥ (शी. बो.)
"यस्मिन्नृक्षे स्थितः खेट स्तदृक्षं युतिसंज्ञकम्"

इत्याशयेन यदि जन्मराशौ विशेषतो जन्मनक्षत्रे यस्मिन्वर्षे मासेवा पापग्रह स्तिष्ठति तदा तस्य युतिदोष इति निगद्यते। तत्र विवाहादीनि मंगलानि न क्रियन्ते। आवश्यके पादवेधं वर्जयन्ति ॥

(अर्थ)

युति कूर्माचल में विशेषत. प्रसिद्ध है। शीघ्रबोध में लिखा है कि जब शनि, राहु, मङ्गल, सूर्य जन्म नक्षत्र में स्थित हो तो यदि कन्या का विवाह किया जावे तो वह विधवा हो जावे। जिस नक्षत्र में ग्रह स्थित हो उसको युति कहते हैं इत्यादि आशय से जन्म राशि में विशेषतः जन्म नक्षत्र में जिस वर्ष अथवा जिस मास में पाप ग्रह स्थित हो उसे युति दोष कहते हैं। इस युति दोष मे विवाह आदि शुभ कार्य नहीं किये जाते हैं। आवश्यक में पादवेध वर्जित करते हैं ॥

वर्षमासाशुद्धिः

चतुर्थाष्टद्वादशस्थगुरोः संज्ञा "बर्षाशुद्धिः"।
चतुर्थाष्ट द्वादशस्थ सूर्यस्य संज्ञा "मासाशुद्धिः" ॥

(अर्थ)

जब ४।८।१२ स्थानों में बृहस्पति हो तो वर्ष की अशुद्धि (कूर्माचल में "वर्ष अपैट", कहलाती है।४।८।१२ स्थानों में सूर्य हो तो मास अशुद्धि (कूर्माचल में मास अपैट) कहलाती है ॥

(४) विवाहप्रकरणम्

वरस्य गुणा दोषाश्च.

कुलं शीलं वपु विंद्या वयो वित्तं सनाथता ।
गुणाः सप्त वरे यस्मिं स्तस्मै कन्या प्रदीयते ॥१॥
सत्यं तपो ज्ञान महिंसता च
विद्याप्रियत्वं च सुशीलता च ।
एतानि यो धारयते सविद्वान्
न केवलं यः पठते सविद्वान् ॥२॥
अन्धो मूकः क्रियाहीन अपस्मारी नपुंसकः ।
दूरस्थः पतितः कुष्ठी दीर्घरोगी वरो नसत् ॥३॥
अत्यासन्ने नातिदूरे नात्याढ्ये नातिदुर्बले ।
वृत्तिहीने च मूर्खे च षट्सु कन्या नदीयते ॥४॥
मूर्ख निर्धन शूराणां मोक्षमार्गानुगामिनाम् ।
त्रिगुणाधिकवर्षाणां न देया जातु कन्यका ॥५॥
अपरीक्ष्य वरं कन्या निर्गुणाय ददातियः ।
कुलं तस्यैव तच्छाक संतप्तं वै निकृन्तति ॥६॥

(अर्थ)

विवाह में वर के गुण तथा दोष इस प्रकार हैं:—

कुल, शील, शरीर, विद्या, अवस्था, धन तथा सनाथता यह सात गुण जिस वर में हों उसको कन्या देनी चाहिये ॥१॥

सत्य, तप, ज्ञान, अहिंसा, विद्या में प्रीति, अच्छा चाल चलन जिस में हों वह विद्वान् है; केवल पुस्तकों के पढ़ने से विद्वान् नहीं होता है ॥२॥

जो वर अन्धा, गूंगा, कर्महीन, मृगी रोग वाला, नपुंसक, दूर देश में रहने वाला, जाति से पतित, कोढ़ी तथा दीर्घ रोगी हो वह अच्छा नहीं है ॥३॥

बहुत समीप रहने वाला, बहुत दूर रहने वाला, अत्यन्त धनाढ्य, अत्यन्त दरिद्री, आजीविका से रहित तथा मूर्ख इन छः प्रकार के वरों को कन्या नहीं देनी चाहिये ॥ ४ ॥

जो मनुष्य मूर्ख हों, धन हीन हों, शूर हों, मोक्ष मार्ग में लगे हो, तथा कन्या की अवस्था से तेगुने से अधिक वर्षों की अवस्था वाले हों, उनको कन्या कभी नहीं देनी चाहिये ॥५॥

जो मनुष्य विना वर की परीक्षा किये हुए निर्गुण वर को कन्या देता है उस कन्या के शोक के सन्ताप से उसका कुल नाश को प्राप्त होता है ॥ ६ ॥

कन्याया गुणा दोषाश्च

ललाटविपुला कुब्जा निर्लज्जाऽसत्यभाषिणी ।
व्याधिग्रस्ता च हीनाङ्गी स्थूलदीर्घा कलिप्रिया ॥
अन्धा च वधिरा कन्या दश दोषान्विवर्जयेत् ॥१॥
हंसस्वरां मेघवर्णां मधुपिङ्गललोचनाम् ।
तादृशीं वरयेत्कन्यां गृहस्थः सुख मेधते ॥२॥
अव्यङ्गाङ्गीं सौम्यनाम्नीं हंसवारणगामिनीम् ।
तनु लोम केश दशनां मृद्वङ्गीमुद्वहेत्स्त्रियम् ॥३॥
वधूं सुलक्षणोपेतां प्रसन्नास्यां कुलोद्भवाम् ।
कन्यकां वृणुयाद्रूपवती मव्यङ्गविग्रहाम् ॥४॥

(अर्थ)

कन्या के गुण तथा दोष इस प्रकार से हैं :—

जिस कन्या का माथा बहुत चौडा हो, जो कुवड़ी हो, जो लज्जा हीन, झूठ बोलने वाली, रोग से ग्रस्त, अङ्ग हीन, बहुत मोटी अथवा बहुत लम्बी, झगड़ालू, अन्धी, तथा बहिरी हो, ऐसी दस दोषवाली कन्या को वर्जित करना चाहिये ॥ १ ॥

बोलने में जिसका स्वर हंस के समान हो, शरीर का वर्ण निर्मल हो, शहद के समान जिसके पीले नेत्र हों, ऐसी कन्या को वरण करने से गृहस्थी को सुख मिलता है ॥ २ ॥

जिस कन्या का कोई अंग टेढ़ा न हो, जिसका नाम सुनने में अच्छा हो, जिसकी चाल हंस या हाथी के समान हो, जिसके बाल कड़े न हों, दांत बड़े न हों, जिसके अंग कोमल हों ऐसी कन्या के साथ विवाह करना चाहिये ॥३॥

जिस कन्या में सामुद्रिक शास्त्र के अनुसार अच्छे लक्षण पाये जाते हों, जिसका मुख प्रसन्न हो, जो अच्छे कुल में उत्पन्न हुई हो, रूपवती हो, जिसका शरीर व्यङ्ग नहो, ऐसी कन्या को वरण करना चाहिये ॥४॥

वाग्दानतः पुरा विचार्याणि

सापिण्ड्यं गोत्रशुद्धिं च शीलं सामुद्रिकाणि च ।
जातकादिममेलं च वीक्ष्यं वाग्दानतः पुरा ॥१॥

(अर्थ)

वाग्दान से पहले नीचे लिखी हुई बातों का विचार कर लेना चाहिये :—

सपिण्डता, गोत्र शुद्धि, शील, सामुद्रिक, तथा ज्योतिष शास्त्र में कहे हुए नाडी वेध, षट्काष्टक आदि ॥

पंच दोषा वर्ज्याः

पञ्च पाणिग्रहे दोषा वर्जनीयाः प्रयत्नतः ।
दारिद्र्यं मृत्युवैधव्यौ पौंश्चल्यमनपत्यता ॥१॥

(अर्थ)

विवाह में पांच महा दोष यत्न पूर्वक वर्जित करने चाहियें । वे ये हैं :—(१) दारिद्रय (२) मृत्यु (३) वैधव्य (४) व्यभिचार (५) सन्तान का अभाव ॥ (वैधव्य के विषय में पृष्ठ २६८ देखना चाहिये) ॥

कोई इन पांच दोषों का अर्थ इस प्रकार से करते हैं:—

(१) युति (४) यामित्र वेधौच तथा (२) सप्तशलाकजः।
(१) इन्दोरष्टमग. पापः (५) खर्जूरश्चापि पञ्चमः ॥

भार्याभर्तृविनाशयोगाः

लग्ने पापा व्यये पापाः पाताले चाम्बरे तथा।
भार्या भर्तृविनाशाय भर्ता भार्यां विनाशयेत् ॥१॥
लग्ने व्यये च पाताले यामित्रे चाष्टमे कुजे।
भार्या भर्तृविनाशाय भर्ता भार्यां विनाशयेत् ॥२॥
भौमतुल्यो यदा भौमः पापो वा तादृशो भवेत्।
उद्वाहः शुभदः प्रोक्त श्चिरायुः पुत्रवर्धनः ॥३॥
नचन्द्रात्सप्तमः पापो न लग्नात्सप्तमो ग्रहः।
यद्येकोऽपि भवेत्तत्र दम्पत्यो रेकनाशकृत् ॥४॥ (मुहूर्तेऽपि)
षष्ठे च भवने भौमः सप्तमे राहुसम्भवः।
अष्टे शनैश्चरं विद्यात्तस्य भार्या न जीवति ॥५॥
शुक्र. खलान्तरगतः सखलः सिताद्वा
पापा. सुखास्तमृतिगा रमणीहराः स्युः।
लग्नव्ययाम्बुनिधनास्तकुजो मिथोऽत्र.
क्षीणा मदाष्टमखगो विधवात्वकारी ॥६॥
यामित्रे च यदा सौरि र्लग्ने वा हिबुकेऽपिवा।
नवमे द्वादशे चैव भौम दोषो नविद्यते ॥७॥

(अर्थ)

जब वर तथा कन्या दोनों के लग्न, व्यय, चतुर्थ तथा दशमस्थान में पाप ग्रह हों तो स्त्री पति का नाश करती हैं तथा पति स्त्री का नाश करता है ॥१॥

जब १,१२,४,७,८ स्थानों में मङ्गल हो तो स्त्री पति का नाश करती है तथा पति स्त्री का नाश करता है (इसको मंगली कहते हैं) ॥२॥

जब वर कन्या दोनों का मंगल समान हो अथवा कोई पापग्रह मंगल के समान हो तो विवाह शुभ होता है, दीर्घ आयु करने वाला तथा पुत्रों की वृद्धि करने वाला होता है ॥३॥

चन्द्रमा से सप्तम स्थान में कोई पाप ग्रह नहीं होना चाहिये, लग्न से सप्तम स्थान में भी कोई ग्रह नहीं होना चाहिये । यदि एक भी हो तो वर कन्या दोनों में से एक का नाश करता है ॥४॥ (विवाह लग्न में भी)

जिस मनुष्य के छठे घर में मंगल हो, सप्तम स्थान में राहु हो, अष्टम स्थान में शनैश्चर हो उसकी स्त्री नहीं जीती है ॥५॥

यदि शुक्र दो पाप ग्रहों के मध्य में हो अथवा शुक्र पापग्रह सहित हो अथवा शुक्र से ४,७,८ स्थानों में पाप ग्रह हो तो स्त्री का नाश होता है । १,१२,४,८, स्थानों में मंगल दोनों का नाश करता है । स्त्रियों के ७,८ स्थानों में स्थित ग्रह वैधव्य करने वाला होता है ॥६॥

जब ३,६,४,८,१२ स्थानों में शनैश्चर हो तो मंगल का दोष नहीं रहता है ॥७॥

श्वशुरादि विचारः

श्वश्रूः सितोऽर्कः श्वशुरस्तनुस्तनू
जामित्रपः स्याद्दयितो मनः शशी ।
एतद्बलं सम्प्रतिभाव्य तान्त्रिक
स्तेषां फलं सम्प्रवदेद्विवाहन ॥१॥
सूर्यात्पतिः स्त्री च विधो स्तथारा
द्वित्तं सुतो ज्ञाच्च सुखं गुरोश्च ।
धर्मः सितादर्कसुतश्च वेश्म
ब्रूयात्समुद्वाहविधौ स्वयुक्त्या ॥१॥

वैधव्यं निधने चिन्त्यं शरीर जन्मलग्नभाक् ।
सप्तमे पतिसौभाग्यं पञ्चमे प्रसवस्तथा ॥३॥
स्त्री पुंसोस्तुफलंतुल्यं जातके किन्तु सप्तमे ।
सौभाग्यं चन्द्रलग्नाच्च वपुराकृतिरुच्यते ॥४॥
लग्नं देहो भृगुः श्वश्रूः श्वशुरोऽर्को मनः शशी ।
भर्ता कान्ता कलत्रेश स्तद्बलात्तत्सुखं वदेत् ॥५॥
पतिं सूर्याद्विधोः कान्ता धनं भौमात्सुतं बुधात् ।
सुखं जीवाद्भृगोर्धर्मं वेश्मार्के र्युक्तितो वदेत् ॥६॥
सुखं स्वोच्चादिके ज्ञेयं दुःख नीचास्तगादिभिः ।
(स्वामिसद्दृष्टियोगात्तेषां सुखं तद्बलैव्यंयेऽन्यत्) ॥७॥

(अर्थ)

शुक्र से सास, सूर्य से ससुर, लग्न से शरीर, सप्तमेश से पति, चन्द्रमा से चित्त का विचार करना चाहिये । विवाह के समय इनका बल अच्छे प्रकार से विचार कर ज्योतिषी फल को कहे ॥१॥

विवाह के समय सूर्य से पति, चन्द्रमा से स्त्री, मङ्गल से धन, बुध से पुत्र, बृहस्पति से सुख, शुक्र से धर्म, शनि से घर का विचार करना चाहिये ॥२॥

अष्टम स्थान से वैधव्य का, जन्म लग्न से शरीर का, सप्तम स्थान से पति का सौभाग्य, पञ्चम स्थान से सन्तान का विचार करना चाहिये ॥३॥

जातक में स्त्री पुरुष दोनों का फल समान है, परन्तु स्त्री की जन्म पत्री में सप्तम स्थान से सौभाग्य का विचार, चन्द्रमा से शरीर का, लग्न से आकृति का विचार करना चाहिये ॥४॥

लग्न से शरीर का, शुक्र से सास का, सूर्य से ससुर का, चन्द्रमा से

मनका, सप्तमेश से पति अथवा स्त्री का विचार करना चाहिये। पूर्वोक्त ग्रहों के विचार से पूर्वोक्त स्थानों का सुख दुःख जानना चाहिये ॥५॥

सूर्य से पति का, चन्द्रमा से स्त्री का, मंगल से धन का, बुध से पुत्र का, बृहस्पति से सुख का, शुक्र से धर्म का, शनि से घर का विचार युक्ति पूर्वक करे ॥६॥

यदि ग्रह अपने उच्च आदि के हों तो सुख जानना चाहिये। यदि नीच अस्त आदि के हों तो दुःख जानना चाहिये। यदि पूर्वोक्त स्थानों पर भावेश अथवा शुभ ग्रह बैठा हो अथवा उनकी दृष्टि हो तो शुभ फल होता है अन्यथा अशुभ फल होता है ॥७॥

जीव चन्द्र सूर्य भौम बल विचारः

जीवो जीवप्रदाता च जन्मदाता च चन्द्रमाः।
तेजोदाता भवेत्सूर्यो भूमिदाता महीसुत ॥१॥
जीवहीना मृता कन्या सूर्यहीनो मृतो वरः
चन्द्रे हीने गता लक्ष्मीः स्थानहानिः कुजं विना ॥२॥

(अर्थ)

बृहस्पति जीव प्रदान करने वाला है, चन्द्रमा जन्म प्रदान करने वाला है, सूर्य तेज का प्रदान करने वाला है, मङ्गल भूमि का प्रदान करने वाला है, ॥१॥

जिस कन्या का बृहस्पति हीनबली हो वह नहीं जीती है। जिस वर का सूर्य हीन बली हो वह नहीं जीता है। चन्द्रमा हीन बली होने पर लक्ष्मी नहीं रहती है। मङ्गल के हीन बली होने पर स्थान हानि होती है ॥२॥ इसका विचार ग्रह साम्य तथा लग्न निश्चय में करना चाहिये ॥

स्त्रीणां जन्मनि गुरुफलम्.

नष्टात्मजा धनवती विधवा कुशीला
पुत्रान्विता हतधवा सुभगा विपुत्रा।

स्वामिप्रिया विगतपुत्रधवा धनाढ्या
वन्ध्या भवेत्सुरगुरौ क्रमशोऽभिजन्म ॥

(अर्थ)

स्त्रियों की जन्म कुण्डली में बृहस्पति का फल यथाक्रम यह है:—

(१) लग्न में हो तो सन्तान का नाश होता है। (२) दूसरे स्थान में हो तो धनवती होती है (३) तीसरे स्थान में तो विधवा होती है (४) कुत्सित स्वभाव वाली (५) पुत्र युक्त (६) पति हीन (७) सौभाग्यवती (८) पुत्रहीन (९) पति की प्यारी (१०) पुत्र पति से रहित (११) धनाढ्य (१२) वन्ध्या अर्थात् बांझ ॥

ज्येष्ठनक्षत्र वर्ज्यम्

भामिनीजन्मनक्षत्राद् द्वितीयं यदि भर्तृभम्।
न शुभं पतिनाशाय कथितं ब्रह्मयामले ॥१॥
सेव्याधमर्णयुवतीनगरादिभं चेत्
पूर्वंहि भृत्यधनिभर्तृपुरादि सद्भात्।
सेवाविनाश धननाशन भर्तृनाश
ग्रामादिसौख्यहृदिदं क्रमशः प्रदिष्टम् ॥२॥

(अर्थ)

यदि स्त्री के जन्म नक्षत्र से पति का जन्म नक्षत्र दूसरा हो तो शुभ नहीं होता है। ब्रह्मयामल नामक ग्रन्थ में उसका फल पतिनाश लिखा है ॥१॥

पहिला नक्षत्र स्वामी का हो दूसरा सेवक का हो तो सेवा का नाश होता है, पहिला नक्षत्र ऋण देने वाले का हो दूसरा नक्षत्र ऋण लेने वाले का हो तो धन का नाश होता है, पहिला नक्षत्र कन्या का हो दूसरा नक्षत्र वर का हो तो पति का नाश होता है, पहिला नक्षत्र नगर का हो दूसरा नक्षत्र नगर वासी का हो तो नगर अथवा ग्राम सम्बन्धी सुख का नाश होता है ॥२॥

जन्मपत्री मेलनाय वर्णादयः

वर्णो वश्यं तथा तारा योनिश्च ग्रहमैत्रकम् ।
गणमैत्रं भकूटं च नाडी चैते गुणाधिकाः ॥

गुणाः

वर्णः	१
वश्यम्	२
तारा	३
योनिः	४
ग्रहमैत्री	५
गणमैत्री	६
भकूटम् (षडष्टकम्)	७
नाडी (नाडीवेध)	८
	३६ गुणाः

(अर्थ)

(१) वर्ण (२) वश्य (३) तारा (४) योनि (५) ग्रह मैत्री (६) गण मैत्री (७) भकूट (षडष्टक) (षट्काष्टक) (८) नाडी वेध। यह आठ एक से एक गुण में अधिक हैं। सब गुणों का जोड ३६ है ॥

(१) वर्ण ज्ञानम्.

मीनालिकर्कटा विप्रा नृपाः सिंहाजधन्विनः ।
कन्यानक्रवृषा वैश्याः शूद्रा युग्मतुलाघटाः ॥१॥
वरस्य वर्णतोऽधिका वधूर्न शस्यते बुधैः ॥२॥
एको गुणः सदृग्वर्णे तथा वर्णोत्तमे वरे ।
हीनवर्णे वरे शून्यं केऽप्याहुः सदृशेऽर्धकम् ॥३॥
सद्वर्णे एको गुणः । अन्यथा गुणाभावः ॥४॥

(अर्थ)

मीन, वृश्चिक, कर्क राशि ब्राह्मण हैं। सिंह, मेष, धन, राशि क्षत्रिय हैं। कन्या, मकर, वृष राशि वैश्य हैं। मिथुन, तुला, कुम्भ, राशि शूद्र हैं ॥२॥

वर से उच्च वर्ण वाली कन्या श्रेष्ठ नहीं है ॥२॥

समान वर्ण में अथवा जब वर उत्तम वर्ण वाला हो १ गुण मिलता है। जब वर हीन वर्ण वाला हो तो शून्य गुण मिलता है। कोई समान में आधा गुण कहते हैं ॥३॥

अच्छे वर्ण में १ गुण अन्यथा शून्य गुण मिलता है ॥४॥

(२) वश्यम्.

युग्मं कुम्भस्तुला कन्या प्राग्दलं धनुषो द्विपात् (मनुष्यः)।
परार्धं धनुषश्चैव पूर्वार्धं मकरस्य च ॥
केसरी वृषभाख्यश्च मेषश्चैते चतुष्पदाः।
नक्रोत्तरदलंमीनो जलचारी प्रकीर्तितः ॥
कर्कः कीटकसंज्ञश्च वृश्चिकश्च सरीसृपः।
(सर्वेपिसिंहस्यवशे विनालिं ज्ञेयं नराणां व्यवहारतोऽन्यत्) ॥
सिंहं विना वशाः सर्वे द्विपदानां चतुष्पदाः।
भक्ष्या जलचरास्तेषां भयस्थाने सरीसृपाः ॥
सख्यं वैरं च भक्ष्यं च वश्य माहुस्त्रिधा बुधाः
वैरभक्ष्ये गुणाभावो द्वयोः सख्ये गुणद्वयम् ॥
वश्यवैरे गुणस्त्वेको वश्यभक्ष्ये गुणार्धकम् ॥

(अर्थ)

मिथुन, कुम्भ, तुला, कन्या, धन का पूर्वार्ध, द्विपद अर्थात मनुष्य राशि हैं। धन का उत्तरार्ध, मकर का पूर्वार्ध, सिंह, वृष, मेष चतुष्पद अर्थात चौपाये हैं। मकर का उत्तरार्ध तथा मीन जलचारी हैं। कर्क की कीटक संज्ञा है। वृश्चिक का नाम सरीसृप है ॥

वृश्चिक के विना सिंह के सब वश्य हैं। शेष सब मनुष्यों के व्यवहार से जानना चाहिये। सिंह को छोड कर सब चतुष्पद द्विपदों के वश में हैं। जलचर द्विपदों के भक्ष्य हैं। सरीसृप से उनको भय होता है॥

वश्य तीन प्रकार का होता है (१) सख्य (२) वैर (३) भक्ष्य। वैर, भक्ष्य में गुण नहीं मिलता है। दोनों की मित्रता में दो गुण मिलते हैं। वश्य वैर में एक गुण मिलता है। वश्य भक्ष्य में आधा गुण मिलता है॥

(३) तारा

कन्यर्क्षाद्वरभं यावत्कन्याभं वरभादपि।
गणयेन्नवहृच्छेषे त्रीष्वद्रिभ मसत्स्मृतम्॥१॥
जन्म सम्पद्विपत्क्षेम प्रत्यरिः साधको वधः।
मैत्रातिमैत्रं ताराःस्युः स्वनामसदृशं फलम्॥२॥
एकतो लभ्यते तारा शुभा चैवाशुभान्यतः।
तदा सार्धं गुणश्चैव ताराशुद्धौ मिथस्त्रयः॥
उभयोर्न शुभा तारा तदा शून्यं समादिशेत्॥३॥

(अर्थ)

कन्या के नक्षत्र से वर नक्षत्रक तक तथा वर के नक्षत्र से कन्या के नक्षत्र तक गिने, उसमें ९ का भाग दे, जो ३,५,७ बचें तो अशुभ तारा होती है॥

ताराओं के नाम यह हैं:—(१) जन्म (२) सम्पत् (३) विपत् (४) क्षेम (५) प्रत्यरि (६) साधक (७) वध (८) मैत्र (९) अतिमैत्र॥

एक ओर से शुभ तारा मिले, दूसरी ओर से अशुभ तारा मिले तो डेढ गुण मिलता है। दोनों ओर से तारा शुद्ध हो तो तीन गुण मिलते हैं। यदि दोनों ओर से शुभ तारा न हो तो शून्य मिलता है॥

(४) योनिः

अश्विन्यम्बुपयो (शतभिषा) र्हयो निगदितः स्वात्यर्कयोः कासरः
सिंहो वस्वजपाद्भयोः (पूभा) समुदितो याम्यान्त्ययोः कुञ्जरः।

मेषो देवपुरोहितानलभयोः कर्णाम्बुनोर्वानरः (श्र. पूषा)
स्याद्वैश्वाभिजितो (उषा) स्तथैव नकुल श्चान्द्राब्जयोन्यो रहिः ॥
ज्येष्ठा मैत्रभयोः कुरङ्ग उदितो मूलार्द्रयोः श्वा तथा
मार्जारोऽदिति सार्पयो रथमघा योन्यो (पूफा) स्तथैवोन्दुरुः ।
व्याघ्रो द्वीशभचित्रयो रपिच गौ रर्यम्ण बुध्न्यर्क्षयो (उफा, उभा)
र्योनिः पादगयोः परस्परमहावैरं भयोन्योस्त्यजेत् ॥
अष्टाविंशतिताराणां योनयश्च चतुर्दश ।
मैत्रं चैवातिमैत्रं च विवाहे नरयोषितोः ॥ (गृह्णीयात्)
सहृद्वैरेच वैरेच स्वभावे च यथाक्रमम् ।
मैत्रे चैवातिमैत्रे च खेन्दुद्वित्रिचतुर्गुणाः (०।१।२।३।४)॥

(अर्थ)

नक्षत्र	योनि	महावैर योनि
अश्विनी	अश्व	भैंस
भरणी	हाथी	सिंह
कृत्तिका	मेष	वानर
रोहिणी	सर्प	नकुल
मृगशिर	सर्प	नकुल
आर्द्रा	कुत्ता	हरिण
पुनर्वसु	बिडाल	चूहा
पुष्य	मेप	वानर
अश्लेषा	बिडाल	चूहा
मघा	चूहा	बिडाल
पूफा	चूहा	बिडाल
उफा	गाय	व्याघ्र
हस्त	भैंस	अश्व

चित्रा	व्याघ्र	गाय
स्वाती	भैंस	अश्व
विशाखा	व्याघ्र	गाय
अनुराधा	हरिण	कुत्ता
ज्येष्ठा	हरिण	कुत्ता
मूल	कुत्ता	हरिण
पूषा	वानर	मेष
उषा	नकुल	सर्प
श्रवण	वानर	मेष
अभिजित्	नकुल	सर्प
धनिष्ठा	सिंह	हाथी
शतभिषा	अश्व	भैंस
पूभा	सिंह	हाथी
उभा	गाय	व्याघ्र
रेवती	हाथी	सिंह

२८ नक्षत्रों की १४ योनि होती हैं। वर कन्या के विवाह में मैत्री अति-मैत्री ग्रहण करनी चाहिये। परस्पर महा वैर वर्जित करना चाहिये॥

महावैर में	०	गुण
वैर में	१	गुण
स्वभाव में	२	गुण
मैत्री में	३	गुण
अति मैत्री में	४	गुण

(५) ग्रह मैत्री

(संज्ञाध्याये पृ. १०५) (जन्मराशेर्नतुजन्मलग्नस्य),

अन्योन्यमित्रं यस्तंस्यात्सममित्रं तु मध्यमम्।

उदासीनं कनिष्ठं स्यान्मृतिदं शात्रवं स्मृतम् ॥१॥

शत्रुमित्रं च विज्ञेयं दम्पत्योः कलहप्रदम् ।
अन्योन्यसमशत्रुत्वं दम्पत्योर्निधनप्रदम् ॥२॥
ग्रहमैत्रं सप्तविधं गुणाः पञ्च प्रकीर्तिताः ।
तत्रैकाधिपतित्वेतु मित्रत्वेगुणपञ्चकम् ॥३॥
चत्वारः सममित्रत्वे द्वयोः साम्ये त्रयोगुणाः ।
मित्रवैरे गुणश्चैकः समवैरे गुणार्धकम् ॥४॥
परस्परं खेटवैरे गुणं शून्यं विनिर्दिशेत् ॥५॥

राश्योरेकाधि पतित्वे राशिपत्योर्मित्रत्वेचपंच गुणाः । राशिपयोः समत्वशत्रुत्वेऽर्धो गुणः । राशिपतिसमत्वमित्रत्वे चत्वारः । शत्रुत्वमित्रत्वे एकः । द्वयोः समत्वे त्रयः । द्वयोः शत्रुत्वे गुणाभावः ॥६॥

(अर्थ)

ग्रहों का समत्व, मित्रत्व, शत्रुत्व संज्ञाध्याय पृ. १०५ में दिया है देखना चाहिये । वर कन्या की जन्म राशि से इसका विचार होता है न कि जन्म लग्न से ॥

(१) यदि राशीश परस्पर मित्र हों तो शुभ है । (२) एक ओर सम अन्यत्र मित्र हो तो मध्यम है। (३) दोनों ओर सम हो तो अधम है । (४) दोनों ओर शत्रु हो तो मृत्युदायक है । (५) शत्रु मित्र हों तो स्त्री पुरुष के बीच कलह हो । (६) समशत्रु होने पर स्त्री पुरुष कीं मृत्यु होती है (७-एकाधिपत्य अति शुभ है) ॥

ग्रह मैत्री सात प्रकार की होती है । गुण पांच होते हैं । एकाधिपति अथवा परस्पर मैत्री होने पर पाच गुण होते हैं । सममित्र में चार गुण मिलते हैं । उभयतः सम होने पर तीन गुण मिलते हैं । मित्र वैर में एक गुण मिलता है । समवैर में आधा गुण मिलता है । परस्पर ग्रहों के वैर होने पर शून्य मिलता है ॥

राशियों का एक ही स्वामी हो अथवा राशीश मित्र हों तो पांच गुण

मिलते हैं। राशीश समशत्रु हों तो आधा गुण मिलता है। सममित्र में चार गुण मिलते हैं। शत्रु मित्र में एक गुण मिलता है। दोनों ओर सम होने पर तीन गुण मिलते हैं। दोनों ओर शत्रुता होने पर शून्य गुण मिलता है॥

(६) गणमैत्रम्

अनुराधा मृगोऽश्वस्तु श्रवणोऽदितिपुष्यके।
स्वाती हस्तो रेवती च नव देवगणाः स्मृताः॥१॥
पूर्वात्रयं रोहिणी च उत्तरात्रय मेव च।
आर्द्रा तु भरणी चैव नवैते मानुषा गणाः॥२॥
अश्लेषा शतभिङ्मूल विशाखा कृत्तिका मघा।
चित्रा ज्येष्ठा धनिष्ठा च नवैते राक्षसा गणाः॥३॥
स्वगणे परमा प्रीति र्मध्यमाऽमरमर्त्ययोः।
मर्त्यराक्षसयोर्वैरममरासुरयोरपि॥४॥
राशीशयोः सुहृद्भावे मित्रत्वे चांशनाथयोः।
गणादिदोषेऽप्युद्वाहः पुत्रपौत्रप्रवर्धनः॥५॥
षड्गुणा गणसादृश्ये पञ्च स्युः सुरमानुषे।
नार्यां देवो नरः पुंसश्चत्वारो वा गुणास्त्रयः॥६॥
देवराक्षसयोः शून्यं तथैव नररक्षसोः।
पुंसो रक्षोगणो यत्र नार्यां देवोऽथवा नरः॥
गुणौ द्वौ क्रमशश्चैको गुणो ग्राह्योऽन्यथा नहि॥७॥
नादेवो मनुजा वधू रिह रसा स्तद्वैपरीत्येशराः
षट् साम्येऽसपपूरुषः सुरवधू रत्रैककोऽन्यत्रखम॥८॥

गणैक्ये षड्गुणा। नरो देवो नृगणा कन्यात्रापि षट्। वैपरीत्ये पंच। नरो राक्षस. कन्या देवगणा अत्रैकः। वैपरीत्ये गुणाभावः। मनुष्यराक्षसत्वेऽपि गुणाभावः॥९॥

(अर्थ)

अनुराधा, मृगशिर, अश्विनी, श्रवण, पुनर्वसु, पुष्य, स्वाती, हस्त रेवती ये नौ नक्षत्र देवगण हैं।

तीनों पूर्वा, रोहिणी, तीनों उत्तरा, आर्द्रा तथा भरणी ये नौ नक्षत्र मनुष्यगण हैं।

अश्लेषा, शतभिषा, मूल, विशाखा, कृत्तिका, मघा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा ये नौ नक्षत्र राक्षसगण हैं॥

अपने गण में परम प्रीति होती है। देवगण मनुष्यगण में मध्यम प्रीति होती है। मनुष्य राक्षसों में तथा देवता राक्षसों में वैर होता है॥

यदि राशियों के स्वामी मित्र हों, अथवा नवांश के स्वामी मित्र हों तो गण आदि के दोष में भी विवाह होता है तथा पुत्र पौत्र की वृद्धि होती है॥

समान गण होने पर छः गुण मिलते है। देव मनुष्य में पांच गुण मिलते हैं। स्त्री का देव गण हो, पुरुष का मनुष्य गण हो तो चार अथवा तीन गुण मिलते हैं। देव राक्षस में, अथवा मनुष्य राक्षस में शून्य गुण मिलता है। पुरुष का राक्षस गण हो, स्त्री का देव अथवा मनुष्य गण हो तो क्रम से दो तथा एक गुण मिलते हैं अन्यथा गुण नहीं मिलता है॥

पुरुष देवगण हो, स्त्री मनुष्य गण हो तो छः गुण मिलते हैं। इसके विपरीत में पांच गुण मिलते हैं। समता में छः गुण मिलते हैं। पुरुष राक्षस गण हो, स्त्री देवगण हो तो एक गुण, अन्यथा शून्यगुण मिलता है॥

एक गण होने पर छः गुण मिलते हैं। वर देव गण हो, कन्या मनुष्य गण हो तब भी छः गुण मिलते हैं। विपरीत में पांच गुण मिलते हैं। वर राक्षस गण हो, कन्या देवगण हो तो एक गुण मिलता है। विपरीत में शून्य गुण मिलता है। मनुष्य राक्षस में भी शून्य गुण मिलता है॥

(७) भकूटम् (षट्काष्टकम्)

मृत्युः षडष्टके ज्ञेयोऽपत्य हानिर्नवात्मजे ।
द्विर्द्वादशे निर्धनत्वं तयोरन्यत्र सौख्यकृत् ॥
एकराशौ महा प्रीतिश्चतुर्थे दशमे सुखम् ।
तृतीयैकादशे वित्तं सुप्रजा समसप्तके ॥

षट्काष्टक चक्रम्

राशयः	मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कु	मी
षष्ठ	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५
मि० श०	श	मि	श	मि	श	मि	श	मि	श	मि	श	मि
अष्टम	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७
मि० श०	मि	श	मि	श	मि	श	मि	श	मि	श	मि	श

गुणाः

सत्कूटे सप्त । दुःकूटे ग्रहमैत्रीसत्त्वे चत्वारः । अन्यथा एकः । चरणैक्ये गुणाभावः ॥

(अर्थ)

वर कन्या की जन्म राशि से गिनती करनी चाहिये । यदि एक से दूसरी ६।८ में पड़े तो षडष्टक होता है उसका फल मृत्यु है । ५।९ को नवात्मज कहते हैं उसका फल सन्तानहानि है । २।१२ को द्विर्द्वादश कहते हैं उसका फल निर्धनत्व है । इन स्थानों को छोड़ कर अन्यत्र शुभ है । एक राशि में बड़ी प्रीति होती है । ४।१० में सुख मिलता है । ३।११ में धन मिलता है । सम सप्तम में अच्छी सन्तति होती है ॥

इसमें से भी विशेषत षडष्टक ही वर्जित किया जाता है। षड़ष्टक में भी मित्रषडष्टक ग्रहण करते हैं। शत्रुषडष्टक ही वर्जित करते हैं। चक्र में देखने से षडष्टक भली भांति समझ में आ जावेगा। जैसे मीन राशि का ५।७ से षडष्टक होगा। मीन का स्वामी बृहस्पति है। सिंह का स्वामी सूर्य है। इस लिये १२ का ५ से मित्रषडष्टक हुआ। परन्तु ७ का स्वामी शुक्र है। बृ. शु. आपस में शत्रु हैं। इसलिये १२ का ७ से शत्रुषडष्टक है॥

अच्छे कूट में सात गुण मिलते हैं। दुष्ट कूट में यदि ग्रह मैत्री हो तो चार गुण मिलते हैं। अन्यथा एक गुण मिलता है। एक चरण होने पर शून्य गुण मिलता है॥

(८) नाडी वेधः

ज्येष्ठा रौद्रार्यमाम्भःपतिभयुगयुगं दास्रभं चैक नाडी
पुष्येन्दुत्वाष्ट्र मित्रान्तक वसु जलभं योनि बुध्न्ये च मध्या।
वाय्वग्नि व्याल विश्वोडुयुग युग मथो पौष्णभं चापरास्या
दम्पत्यो रेकनाड्यां परिणयन मसन्मध्यनाड्यांहि मृत्युः॥

नाडीवेध चक्रम्

आदि	अ १	आ ६	पुन ७	उफा १२	ह १३	ज्ये १८	मू १९	श २४	पूभा २५
मध्य	भ २	मृ ५	पुष्य ८	पूफा ११	चि १४	अनु १७	पूषा २०	ध २३	उभा २६
अंत्य	कृ ३	रो ४	अश्ले ९	म १०	स्वा १५	वि १६	उषा २१	श्र २२	रे २७

गुणाः

नाडीभेदेऽष्टौ गुणाः । नाड्यैक्यं सर्वथा त्याज्यम् ॥

(अर्थ)

अश्विनी से लेकर २७ नक्षत्रों के ३ भाग ऊपर लिखे हुए चक्र के अनुसार किये जाते हैं। प्रत्येक भाग में ९।९ नक्षत्र आते हैं। इन तीन भागों को आदि नाडी, मध्य नाडी अन्त्य नाडी तथा कहते हैं। यदि वर कन्या का दोनों जन्म नक्षत्र एक नाडी में आपड़े तो नाडी वेध कहलाता है इसका फल मृत्यु है और इसमें विवाह अशुभ है ॥

नाडी पृथक् पृथक् होने पर आठ गुण मिलते हैं। एक नाड़ी सर्वथा त्याज्य है ॥

सर्वगुणयोगः

अत्र सर्व गुण मेलनेन विंशति गुणसम्भवे मध्यम् । विंशत्यधिक गुणत्वेऽतिशुभम् । विंशत्यूनत्वेऽत्वशुभम् ॥१॥

गुणैः षोडशभिर्निन्द्यं मध्यमं विंशतिस्तथा ।
श्रेष्ठं त्रिंशद्गुणं यावत्परतस्तूत्तरोत्तरम् ॥२॥
सद्भकूटे इति ज्ञेयं दुष्टकूटेऽथ कथ्यते ।
निन्द्यं गुणै विंशतिभिर्मध्य माणाधिके मतम् ॥
तत्परैः पञ्चभिः श्रेष्ठं तत श्रेष्ठतरं गुणैः ॥३॥

(अर्थ)

वर्ण आदि सब मिलाकर ३६ गुण होते हैं। प्रत्येक में कितने गुण होते हैं यह बात ऊपर कही गई है। यदि सब मिलाकर २० गुण हों तो मध्यम है। यदि २० गुण से अधिक हों तो अतिशुभ है। यदि २० गुण से कम हों तो अशुभ है ॥१॥

१६ गुण हों तो निन्दित है। २० गुण हों तो मध्यम है। तदुपरान्त ३० गुण तक श्रेष्ठ है। ३० गुण से जितना अधिक हो उतना ही श्रेष्ठ है॥२॥

यह बात तब की है जब अच्छा भकूट हो। परन्तु जब दुष्ट भकूट हो तो २० गुण मिलने पर निन्दित है। २५ गुण मिलने पर मध्यम है। ३० गुण मिलने पर श्रेष्ठ है। तदुपरान्त जितने अधिक गुण हों उतना ही श्रेष्ठ है ॥३॥

वर्ग कूटः

अकचटतपयशवर्गाः खगेश मार्जार सिंह शुनाम्।
सर्पाखुमृगावीनां (मेष) निजपञ्चमवैरिणा मष्टौ ॥१॥
स्ववर्गात्पंचमः शत्रुश्चतुर्थो मित्रसंज्ञकः।
उदासीनस्तृतीयस्तु वर्गभेदस्त्रिधोच्यते ॥२॥
स्ववर्गे परमा प्रीति र्मित्रे प्रीतिश्च कथ्यते।
उदासीने प्रीतिरल्पा शत्रुवर्गे मृतिस्तथा ॥३॥

(अर्थ)

स्वर व्यञ्जन सब अक्षर आठ वर्गों में बाटे गये हैं। गरुड आदि भी आठ वर्ग हैं ॥

गरुड सर्प का, श्वान मेष का, चूहा बिल्ली का, मृग सिंह का, आपस में वैर है ॥

वर्ग भेद तीन प्रकार का है। अपने वर्ग से पंचम शत्रु होता है, चतुर्थ मित्र होता है, तीसरा उदासीन अर्थात् न शत्रु न मित्र होता है ॥

अपने वर्ग में अत्यन्त प्रीति होती हैं, मित्र वर्ग में भी प्रीति होती है, उदासीन में अल्प प्रीति होती है, शत्रु वर्ग में मृत्यु होती है ॥

(१) अवर्ग का स्वामी गरुड (वैरी सर्प)
(२) कवर्ग का स्वामी मार्जार (बिलाव) (वैरी मूषक)
(३) चवर्ग का स्वामी सिंह (वैरी मृग)
(४) टवर्ग का स्वामी श्वान (कुत्ता) (वैरी मेष)
(५) तवर्ग का स्वामी सर्प (वैरी गरुड़)

(६) पवर्ग का स्वामी मूषक (वैरी मार्जार)
(७) यवर्गका स्वामा मृग (वैरी सिंह)
(८) शवर्ग का स्वामी मेष (मेढा) (वैरी श्वान)

जैसे वर का नाम अम्बादत्त है कन्या का नाम देवकी है।

अम्बादत्त का अवर्ग अर्थात् गरुड वर्ग है। देवकी का तवर्ग अर्थात् सर्प वर्ग है। यह दोनों आपस में एक दूसरे से पांचवें हैं इसलिये इन में शत्रुता है इसका फल मृत्यु है। (यदि मृत्यु न भी हो तो इनके आपस में कभी प्रीति न होगी। रात दिन कलह रहेगा। स्वामी भृत्य के विषय में तथा नगर अथवा ग्राम वास में भी यह वर्ग मिलाये जाते हैं॥)

साम्योपयोगिसंग्रहः।

नाडीदोषस्तु विप्राणां वर्णदोषश्च क्षत्रिये।
गणदोषश्च वैश्येषु योनिदोषस्तु पादजे॥१॥
आदिनाडी पतिं हन्ति मध्यनाडी च कन्यकाम्।
अन्त्यनाडी द्वयोर्हन्त्री नाडीवेधं विवर्जयेत्॥२॥
नाडीकूटं तु संग्राह्यं कूटानां तु शिरोमणिम्।
ब्रह्मणा कन्यकाकण्ठे सूत्रत्वेन विनिर्मितम्॥३॥
एकनक्षत्रजातानां नाडीदोषो न विद्यते।
अन्यर्क्षनाडीवेधेषु विवाहो वर्जितः सदा॥४॥
राश्यैक्ये चेद्भिन्नमृक्षं द्वयोः स्या
न्नक्षत्रैक्ये राशियुग्मं तथैव।
नाडीदोषो नो गणानां च दोषो
नक्षत्रैक्ये पादभेदे शुभं स्यात्॥५॥
मैत्र्यां राशिस्वामिनो रंशनाथ
द्वन्द्वस्यापि स्याद्गणानां न दोषः।
खेटारित्वं नाशयेत्सद्भकूटं
खेटप्रीतिश्चापि दुष्टभकूटम्॥६॥

प्रोक्ते दुष्टभकूटके परिणय स्त्वेकाधिपत्ये शुभोऽ
थो राशीश्वर सौहृदेऽपि गदितो नाडयृक्षशुद्धिर्यदि ।
अन्यर्क्षांऽशपयोर्वलित्वसखिते नाडयृक्षशुद्धौ तथा
ताराशुद्धिवशेन राशिवशता भावो निरुक्तो बुधैः ॥७॥

(अर्थ)

ब्राह्मणों को नाडी दोष, क्षत्रियों को वर्ण दोष, वैश्यों को गण दोष, शूद्रों को योनि दोष विशेषतः वर्जित करना चाहिये ॥ १ ॥

आदि नाडी पति को मारती है, मध्य नाडी कन्या को मारती है, अन्त्य नाडी दोनें को मारती है। नाडी वेध को वर्जित करना चाहिये ॥२॥

नाडी वेध सब कूटों का शिरोमणि है। ब्रह्मा जी ने कन्या के गले के लिये इसको सूत्र बनाया है ॥३॥

जो वर कन्या एक नक्षत्र में उत्पन्न हों उनको नाडी दोष नहीं होता है। यदि और नक्षत्रों में नाडी वेध हो तो विवाह सर्वदा वर्जित है ॥४॥

यदि वर कन्या दोनों की एक राशि हो तो नक्षत्र पृथक् होना चाहिये। यदि दोनों का नक्षत्र एक ही हो तो राशि पृथक् होनी चाहिये। यदि दोनें का नक्षत्र एक ही हो तो चरण का भेद होना चाहिये। ऐसा होने पर नाडी तथा गण का दोष नहीं रहता है किन्तु शुभ होता है ॥ ५ ॥

वर कन्या के राशि स्वामी अथवा नवांश स्वामी आपस में मित्र हों तो गण का दोष नहीं रहता है। अच्छा भकूट ग्रहों की शत्रुता के दोष को नाश करता है। एव ग्रहों की मित्रता दुष्ट भकूट के दोष को नाश करती है ॥६॥

यदि दुष्ट भकूट हो परन्तु नाडी नक्षत्र शुद्ध हो तो निम्न लिखित परिहारों में विवाह शुभ है:—(१) दोनों की राशियों के स्वामी एक हों (२) अथवा राशियों के स्वामी परस्पर मित्र हों (३) नवांश के स्वामी बली हों

अथवा आपस में मित्र हों (४) अथवा वर कन्या की तारा परस्पर शुद्ध हो (५) अथवा स्त्री की राशि पुरुष राशि के वश्य हो ॥७॥

ग्रहसाम्यविधौ कूर्माचलीया प्रथा

(१) नाडीवेधं विचारयन्ति.

(२) षट्काष्टकं विचारयन्ति.

तत्रापि मित्रषट्काष्टक गृह्णन्ति। शत्रुषट्काष्टकमेव वर्ज-यन्ति।

(३) केचिद्ग्रहमैत्रीं तारां च विचारयन्ति.

(४) वर्णवश्याद्योऽल्पगुणत्वान्न विचार्यन्ते.

नाडीवेधाद्योगाद्देव विंशतिगुणाधिक्यं सम्पद्यते.

(५) अतः परं विशेषोऽयम्.

<u>वरस्य</u>—यथा लग्ना त्तथा शुक्रात्.

<u>कन्यायाः</u>—यथा लग्ना त्तथा चन्द्रात्.

(१।४।७।८।१२ स्थानेषु पापग्रहा विचार्या इत्यर्थः)

वरस्य सर्वे मिलित्वा कन्याया न्यूना नस्युः।

कन्यायाः ७।८ स्थाने
वरस्य २।७ ,,
उभयोः पंचमं } विशेषेण विचार्याणि.

(सूर्यात् ६ पिता. भौमात् ३ भ्राता. चंद्रात् ७ पतिः)

शुक्रः खलान्तरगतः सखलः सिताद्वा (इत्यादि) ॥

(अर्थ)

(१) नाडी वेध का विचार होता है

(२) षट्काष्टक का विचार करते हैं। परन्तु कोई कोई मित्र षट्काष्टक को ग्रहण करते हैं केवल शत्रु षट्काष्टक वर्जित करते हैं।

(३) कोई कोई ग्रहमैत्री तथा तारा का विचार भी करते हैं।

(४) वर्ण वश्य आदियों का विचार नहीं करते हैं क्योंकि उनमें अल्प गुण होते हैं। केवल नाडी वेध, षट्काष्टक, ग्रहमैत्री आदि में २० से अधिक गुण मिल जाते हैं।

(५) विशेषता यह है :—

वर के—लग्न तथा शुक्र से

कन्या के—लग्न तथा चन्द्रमा से

१।४।७।८।१२ स्थानों के पाप ग्रहों का विचार करते हैं। वर के सब पाप ग्रह मिला कर कन्या के पाप ग्रहों से कम न होने चाहियें।

कन्या का	७।८	स्थान	विशेष कर विचारा जाता है।
वर का	२।७	,,	
दोनों का	५	,,	

सूर्य से नवें स्थान में पिता का, मङ्गल से तीसरे में भ्राता का, चन्द्रमा से सप्तम में पति का विचार किया जाता है।

पाप मध्य गत शुक्र अथवा पापयुत शुक्र भी पाप ग्रह गिना जाता है॥

अन्यत्र सर्वदेशेषु प्रथा.

(१) भौम तुल्यो यदा भौम· (मंगलीति कथ्यते)

(२) वर्णादि गुण विचारः

(३) नाडी वेधं षट्काष्टकं च विचारयन्ति

(४) केचिन्नवात्मज द्विर्द्वादशादिकं च विचारयन्ति

(अर्थ)

(१) मङ्गली विचार

(२) वर्ण आदि ८ बातों का विचार

(३) नाड़ी वेध षडष्टक का विशेष विचार।

(४) कोई कोई नव पञ्चम, द्विर्द्वादश आदि का भी विचार करते हैं॥

मूलादि विचारः

श्वश्रू विनाश महिजौ सुतरां विधत्तः
कन्यासुतौ निऋतिजौ श्वशुरं हतश्च ।
ज्येष्ठाभजाततनया स्वधवाग्रज च
शक्राग्निजा भवति देवरनाशकर्त्री ॥१॥
द्वीशाद्यपादत्रयजा कन्या देवरसौख्यदा ।
मूलान्त्यपादसार्पाद्य पादजाते तयोः शुभे ॥२॥

(अर्थ)

जो वर कन्या अश्लेषा नक्षत्र म उत्पन्न हों वे सास का नाश करते हैं। जो मूल में उत्पन्न हों वे ससुर का नाश करते हैं। जो कन्या ज्येष्ठा नक्षत्र में उत्पन्न हो वह अपने जेठ का नाश करती है । जो कन्या विशाखा में उत्पन्न हो वह अपन देवर का नाश करती है ॥ १ ॥

विशाखा के प्रथम तीन चरणों मे उत्पन्न हुई कन्या देवर को सुख देने वाली होती है । मूल के चतुर्थ चरण में उत्पन्न हुए वर कन्या श्वशुर को सुख देने वाले होते हैं । अश्लेषा के प्रथम चरण में उत्पन्न वर कन्या सास को सुख देने वाले होते हैं ॥ २ ॥

अश्वत्थ विवाहः

जन्मोत्थं च विलोक्य बालविधवा योगं विधाय व्रतं
सावित्र्या उत पैप्पलं हि सुतया दद्यादिमां वा रहः ।
सल्लग्नेऽच्युतमूर्तिपिप्पलघटैः कृत्वा विवाहं स्फुटं
दद्यात्तां चिरजीविनेऽत्र न भवे द्दोषः पुनर्भूभवः ॥

(अर्थ)

जन्मलग्न से बालविधवा योग देखकर लड़की को सावित्री का अथवा पिप्पल का व्रत एकान्त में करावे अथवा विष्णुप्रतिमा विवाह अथवा पिप्पल अथवा घट के साथ विवाह अच्छे लग्न में कराकर फिर उस कन्या

का विवाह चिरंजीवी वर के साथ करे। इसमें पुनर्भू दोष अर्थात् दूसरे विवाह का दोष नहीं होता है ॥

विष कन्या

सूर्यभौमार्किवारेषु भद्रातिथिशताभिधे।
अश्लेषा कृत्तिका चेत्स्या त्तत्र जाता विषाङ्गना ॥

सूर्यवार	×	द्वितीया	×	शतभिषा	}	=विषाङ्गना.
मंगलवार	×	सप्तमी	×	अश्लेषा	}	
शनिवार	×	द्वादशी	×	कृत्तिका	}	

सावित्र्यादिव्रतं कृत्वा वैधव्यविनिवृत्तये।
अश्वत्थादिभिरुद्वाह्य दद्यात्तां चिरजीविने ॥

(अर्थ)

(१) रविवार द्वितीया तिथि, शतभिषा नक्षत्र
(२) मङ्गलवार, सप्तमी तिथि, अश्लेषा नक्षत्र
(३) शनिवार, द्वादशी तिथि, कृत्तिका नक्षत्र

पूर्वोक्त तिथिवार नक्षत्रों के संयोग में जो कन्या उत्पन्न हो उसको विषाङ्गना कहते हैं। उसका फल वैधव्य है। ऐसी कन्या को सावित्री व्रत कराना चाहिये। अश्वत्थ आदि विवाह करके ऐसे वर के साथ उसका विवाह करना चाहिये जिसके ग्रह चिरायु वाले हों ॥

गुरु सूर्य शुद्धिः

स्त्रीणां गुरुबलं श्रेष्ठं पुरुषाणां रवेर्बलम्।
द्वयोश्चन्द्रबलं श्रेष्ठ मिति गर्गेण भाषितम् ॥१॥
जन्मत्रिदशमारिस्थः पूजया शुभदो गुरुः।
विवाहे च चतुर्थाष्ट द्वादशस्थो मृतिप्रदः ॥२॥
चतुर्थे चाष्टमे चैव द्वादशस्थे दिवाकरे।
वरः पंचत्व माप्नोति कृते पाणिग्रहोत्सवे ॥३॥

झष चाप कुलीरस्थो जीवोऽप्यशुभगोचरः ।
अतिशोभनतां दद्या द्विवाहोपनयनादिषु ॥४॥

(अर्थ)

विवाह में स्त्रियों का बृहस्पति का बल देखना चाहिये, पुरुष का सूर्य्य का बल लेना चाहिये । दोनों का चन्द्र बल लेना चाहिये । यह गर्ग मुनि का वचन है ॥१॥

१, ३, १०, ६ स्थानों में स्थित बृहस्पति पूजा करने से शुभ फल दायक हो जाता है । परन्तु ४, ८, १० स्थानों में स्थित बृहस्पति विवाह में मृत्यु को देता है ॥२॥

यदि ४, ८, १२ स्थानों में सूर्य हो तो विवाह करने पर वर की मृत्यु होती है ॥३॥

मीन, धन अथवा कर्क राशि का बृहस्पति गोचर में यद्यपि अशुभ भी हो तथापि विवाह उपनयन आदि शुभ कार्यों में अत्यन्त शुभ फल देता है ॥४॥

गुरु सूर्य शान्तिः

अनिष्टस्थानगे सूर्ये शुभराशिः पुरो भवेत् ।
त्रयोदशदिनं त्यक्त्वा शेषस्थं शुभ मादिशेत् ॥
अशुभस्थानगे सूर्ये दद्याद्धेनुं सदक्षिणाम् ।
हाटकं वसनं पीतं दद्याद्दुष्टे बृहस्पतौ ॥

(अर्थ)

यदि गोचर में सूर्य अशुभ स्थान में हो तो सक्रान्ति से १३ दिन छोड़ कर विवाह आदि करने से अशुभ फल नहीं रहता है ॥

यदि सूर्य अशुभ स्थान में हो तो गोदान करे । यदि बृहस्पति अशुभ स्थान में हो तो सुवर्ण सहित पीत वस्त्र का दान करे ॥

सहोदर संस्कार विचारः

एकमातृजयो रेक वत्सरेऽपत्ययोर्द्वयोः ।
न संस्कारः समानः स्यान्मातृभेदे विधीयते ॥

(अर्थ)

(यमलों को छोड़ कर) दो सहोदरों का समान संस्कार एक ही वर्ष में नहीं होता हैं। यदि दोनों की भिन्न माता हों तो हो सकता है ॥

त्रिज्येष्ठं वर्ज्यम्

आद्यगर्भसुतकन्ययोर्द्वयो र्जन्ममासभतिथौ करग्रहः ।
नोचितोऽथ विबुधैः प्रशस्यते चेद्द्वितीयजनुषोः सुतप्रदः ॥१॥
ज्येष्ठ द्वन्द्वं मध्यमं संप्रदिष्टं त्रिज्येष्ठं चेन्नैव युक्तं कदापि ।
केचित्सूर्यं वह्निगंप्रोज्झयचाहुर्नैवान्योन्यंज्येष्ठयोःस्याद्विवाहः।२।

(अर्थ)

सब से बड़े लडके अथवा सबसे बडी लडकी का जन्म मास, जन्म नक्षत्र अथवा जन्म तिथि में विवाह करना उचित नहीं है। परन्तु यदि द्वितीय तृतीय आदि पुत्र अथवा पुत्री हों तो कोई दोष नहीं है ॥१॥

दो ज्येष्ठ मध्यम हैं, तीन ज्येष्ठ सर्वथा वर्जित हैं। कोई आचार्य कहते हैं कि कृत्तिका नक्षत्र का सूर्य छोड कर शेष भाग ज्येष्ठ मास का शुभ है। ज्येष्ठ पुत्र तथा ज्येष्ठ कन्या का परस्पर विवाह नहीं होता है ॥२॥

(ज्येष्ठ पुत्र, ज्येष्ठ कन्या, ज्येष्ठ मास इनके मिलने से द्विज्येष्ठ अथवा त्रिज्येष्ठ बन जाते हैं) ॥

त्रिमङ्गल वर्ज्यम्.

कुले ऋतुत्रयादर्वाङ् मण्डनान्नतु मुण्डनम् ।
प्रवेशान्निर्गमो नेष्टो न कुर्यान्मङ्गलत्रयम् ॥

(अर्थ)

एक कुल में (तीन पीढ़ी भीतर) ६ महीने के भीतर विवाह के उपरान्त उपनयन, चूडा न करे, वधू प्रवेश के उपरान्त लडकी का विवाह न करे तथा तीन मङ्गल कार्य न करे ॥

संवत्सर परिवर्तने.

ऋतुत्रयस्य मध्ये चेदन्याब्दस्य प्रवेशनम् ।
तदाह्य कोदरस्यापि विवाहस्तु प्रशस्यते ॥

(अर्थ)

यदि ६ महीने से पहिले ही सम्वत्सर बदल जावे तो ६ महीने का विचार नहीं होता है ॥

षण्मासवर्जनम्

सुतपरिणयात्षण्मासान्तः सुताकरपीडनं
नच निजकुले तद्वद्वा मंडनादपि मुण्डनम् ।
नच सहजयोर्द्वये भ्रात्रोः सहोदरकन्यके
नच सहजसुतोद्वाहोऽब्दार्धे शुभे न पितृक्रिया ॥

(अर्थ)

पुत्र के विवाह के उपरान्त कन्या का विवाह छः महीने भीतर तीन पीढ़ी में नहीं हो सकता है। एव विवाह के उपरान्त छः महीने भीतर उपनयन नहीं हो सकता है। दो सहोदर भाइयों के साथ दो सहोदर कन्याओं का विवाह नहीं हो सकता है। दो सहोदर भाइयों का विवाह छः महीने भीतर नहीं हो सकता है। शुभ काम करने के उपरान्त छः महीने पर्यन्त श्राद्ध आदि पितृ कर्म नहीं होता है ॥३॥

प्रतिकूलादिविचारः

वध्वा वरस्यापि त्रिपूरुषे कुले नाशं व्रजेत्कश्चन निश्चयोत्तरम् ।
मासोत्तरं तत्र विवाह इष्यते शान्त्याथवा सूतकनिर्गमे परैः ॥१॥
चूडा व्रतं चापि विवाहतो व्रता च्चूडा न चेष्टा पुरुषत्रयान्तरे।
वधू प्रवेशाच्च सुता विनिर्गमः षण्मासतो वाब्दविभेदतः शुभः॥२॥

(अर्थ)

यदि वाग्दान के पश्चात् कन्या अथवा वर के कुल में तीन पीढ़ी भीतर किसी की मृत्यु हो जावे तो एक महीने के उपरान्त अथवा आशौच पूरा होने पर शान्ति करके विवाह हो सकता है ॥१॥

विवाह के उपरान्त छः महीने भीतर तीन पीढ़ी में व्रतवन्ध नहीं हो सकता है। तथा व्रतवन्ध के उपरान्त छः महीने भीतर चूडा कर्म नहीं हो सकता है। वधू प्रवेश के पीछे छः महीने भीतर कन्या विदा नहीं हो सकती है। छः महीने उपरान्त अथवा सम्वत्सर बदल जाने से शुभ होता है ॥ २ ॥

कन्या वरण मुहूर्तः

विश्व स्वाती वैष्णव पूर्वात्रय मैत्रै
वंस्वाग्नेयैर्वा करपीडोचित ऋक्षैः ।
वस्त्रालङ्कारादिसमेतैः फलपुष्पैः
सन्तोष्यादौ स्या दनु कन्यावरण हि ॥

(अर्थ)

उत्तराषाढ़ा, स्वाती, श्रवण, तीनों पूर्वा, अनुराधा, धनिष्ठा, कृत्तिका अथवा विवाहोक्त नक्षत्रों में वस्त्र, अलङ्कार, फल पुष्पों से कन्या वरण (सगाई) करना चाहिये ॥

वर वरण मुहूर्तः

धरणिदेवोऽथवा कन्यका सोदरः
शुभ दिने गीतवाद्यादिभिः संयुतः ।
वरवृतिं वस्त्रयज्ञोपवीतादिना
ध्रुवयुतैर्वह्निपूर्वात्रयै राचरेत् ॥

(अर्थ)

ब्राह्मण अथवा कन्या का भाई शुभ दिन में गाना वजाना साथ लेकर वस्त्र यज्ञोपवीत आदि साथ लेकर वर का वरण करे (तिलक चढ़ावे)। ध्रुव संज्ञक, कृत्तिका, तीनों पूर्वा नक्षत्र शुभ हैं ॥

दर्श श्राद्ध दिन वर्जनम्

विवाहमारभ्य चतुर्थिमध्ये श्राद्धं दिनं दर्शदिनं यदिस्यात् ।
वैधव्य माप्नोति तदा तु कन्या जीवेत्पतिश्चेदनपत्यता स्यात् ॥

(अर्थ)

विवाह के उपरान्त चतुर्थी कर्म के भीतर श्राद्ध का दिन अथवा अमावास्या न होनी चाहिये। यदि हो तो कन्या विधवा होती है। यदि विधवा न भी हो तो संतान रहित होती है ॥

युग्माब्द विचारः

अब्देषु युग्मेषु च कन्यकानां स्वजन्मवर्षाच्छुभदो विवाहः।
अयुग्मवर्षेषु शुभो नराणां विपर्यये दुःखगदप्रदः स्यात् ॥

(अर्थ)

कन्या विवाह सम वर्षों में, पुत्र का विवाह विषम वर्षों में शुभ फलदायक होता है। विपरीत वर्षों में करने से दुःख तथा रोग होते हैं ॥

विवाहे मासाः

मिथुन कुम्भ मृगालि वृषाजगे
मिथुनगेऽपि रवौ त्रिलवे शुचेः।
अलिमृगाजगते करपीडन
भवति कार्तिक पौष मधुष्वपि ॥
मीन चैत्र च वर्जयेत् ॥

(अर्थ)

मिथुन, कुम्भ, मकर, वृश्चिक, वृष, मेष राशियों पर जब सूर्य हो तब विवाह करना शुभ है। मिथुन के सूर्य में आषाढ शुक्ल प्रतिपदा से दशमी पर्यन्त, वृश्चिक के सूर्य में कार्तिक में, मकर के सूर्य में पौष में, मेष के सूर्य मे चैत्र मे भी विवाह हो सकता है।

जब मीन का सूर्य हो चैत्र मास हो तो विवाह वर्जित है ॥ (चातुर्मास अर्थात् हरिशयन वर्जित है।)

विवाह नक्षत्रादयः

निर्वेधैः शशिकरमूलमैत्रपित्र्य
ब्राह्मान्त्योत्तरपवनैः शुभो विवाहः।

रिक्तामारहिततिथौ शुभेऽह्नि वैश्व
प्रान्त्यांघ्रिः श्रुतितिथिभागतोऽभिजित्स्यात् ॥

(अर्थ)

(पञ्च शलाका) वेध से रहित मृगशिर, हस्त, मूल, अनुराधा, मघा, रोहिणी, रेवती, तीनों उत्तरा, स्वाती नक्षत्रों में, रिक्ता (४।९।१४) अमावास्या को छोड़ कर अन्य शुभ तिथि में, शुभवार में, विवाह करना श्रेष्ठ है। उत्तराषाढा का चतुर्थ चरण तथा श्रवण का प्रथम चरण अभिजित् नक्षत्र होता है ॥

कर्तरी

लग्नात्पापावृज्वनृजू व्ययार्थस्थौ यदा तदा ।
कर्तरी नाम सा ज्ञेया मृत्यु दारिद्र्य शोकदा ॥

(अर्थ)

जब लग्न से व्यय तथा धन स्थान में पाप ग्रह हों, व्ययस्थान में मार्गी पाप ग्रह हो तथा धन स्थान में वक्री पाप ग्रह हो तो कर्तरी योग होता है। इसका फल मृत्यु, दारिद्र्य तथा शोक है ॥

सग्रह दोषः

चन्द्रे सूर्यादिसंयुक्ते दारिद्र्यं मरणं शुभम् ।
सौख्यं सापत्न्यवैराग्ये पापद्वययुते मृति ॥

(अर्थ)

जब चन्द्रमा सूर्य से युक्त हो तो दारिद्र्य, मङ्गल से युक्त हो तो मरण, बुध से युक्त हो तो शुभ, बृहस्पति से युक्त हो तो सुख, शुक्र से युक्त हो तो सापत्न, शनि से युक्त हो तो वैराग्य, यदि दो पाप ग्रहों से युक्त हो तो मृत्यु करता है। (इसका नाम सग्रह दोष है) ॥

लग्नाष्टक चन्द्राष्टकच

जन्मलग्नभयोर्मृत्यु राशौ नेष्टः करग्रहः ।
एकाधिपत्ये राशीश मैत्रे वा नैव दोषकृव ॥१॥

मीनोक्षकर्कालिमृगस्त्रियोऽष्टम
लग्नं यदा नाष्टमगेहदोषकृत् ।
अन्योन्यमित्रत्ववशेन सा वधू
र्भवेत्सुतायुर्गृहसौख्यभागिनी ॥२॥

(अर्थ)

अपने जन्म लग्न अथवा जन्म राशि से अष्टम लग्न में विवाह करना शुभ नहीं है । परन्तु जब जन्म लग्न अथवा जन्म राशि का स्वामी तथा विवाह लग्न का स्वामी एक ही हो अथवा दोनों की आपस में मित्रता हो तो दोष नहीं है ॥ १ ॥

जो अष्टम स्थान में १२।२।४।८।१०।६ राशियां हों तो अष्टम लग्न का दोष नहीं है । ग्रहों के परस्पर मित्रता होने से कन्या को पुत्र, आयु, गृह तथा सुख का भोग मिलता है ॥२॥ (अष्टमेश लग्न में हो तो शुभ नहीं है) ॥

जामित्र दोषः

लग्नाच्चन्द्रान्मदनभवनगे
खेटे न स्यादिह परिणयनम् ॥

(अर्थ)

लग्न अथवा चन्द्रमा से सप्तम स्थान में कोई ग्रह हो तो विवाह नहीं हो सकता है ॥

गण्डान्तः

त्रिविधा गण्डान्ताश्च (पृ. १८६) वर्ज्याः ।

(अर्थ)

जातकाध्याय (पृ १८६) में कहे हुए तीन प्रकार के गण्डान्त वर्जित करने चाहियें ॥

तारा

जनुःसप्तपञ्चत्रितारा नेष्टाः (पृ. ५६) ।

(अर्थ)

३।५।७ तारा वर्जित हैं । (पृ. ५६) देखो ॥

लत्ता

ज्ञराहुपूर्णेन्दुसिताः स्वपृष्ठे भं सप्तगोजातिशरैर्मितं हि ।
संलत्तयन्तेऽर्कशनीज्यभौमाः सूर्याष्टतर्काग्निमितं पुरस्तात् ॥

बु. ७
रा. ९
पूर्ण चं. २२
शु॰ ५
} स्वपृष्ठे.

सू. १२
श. ८
वृ. ६
मं. ३
} पुरस्तात्.

रवेर्लत्ता हरेद्वित्तं कुजस्य कुरुते मृतिम् ।
वृहस्पतेर्बन्धुनाशं शनेः कुर्यात्कुलक्षयम् ॥
वुधस्य कुरुते त्रासं लत्ता राहोर्विनाशयेत् ।
शुक्रस्य दुःखदा नित्यं त्रासदा तु कलानिधेः ॥

देशविशेषेण वर्जनम्.

लत्तां मालवके देशे पातं कौशलके तथा ।
एकार्गलं तु काश्मीरे वेधं सर्वत्र वर्जयेत् ॥

(अथ)

जिस नक्षत्र में बुध स्थित हो उससे पिछले सातवें नक्षत्र पर लत्ता दोष करता है। एवं राहु पिछले नवें नक्षत्र पर, पूर्ण चन्द्र पिछले बाईसवें नक्षत्र पर, शुक्र पिछले पांचवें नक्षत्र पर लत्ता दोष करता है अथवा लात मारता है। सूर्य अपने आगे के बारहवें नक्षत्र पर, शनि आगे के आठवें नक्षत्र पर, वृहस्पति आगे के छठे नक्षत्र पर, तथा मंगल आगे के तीसरे नक्षत्र पर लत्तादोष करते हैं॥

सूर्य की लत्ता धन का नाश करती है, मंगल की मृत्यु करती है, वृहस्पति की बन्धु नाश करती है, शनि की लत्ता कुलक्षय करती है, बुध

की लत्ता त्रास करती है, राहु की लत्ता नाश करती है, शुक्र की लत्ता नित्य दु:ख देती है, चन्द्रमा की त्रास देती है ॥

मालव देश में लत्ता का, कौशल देश में पात का, काश्मीर देश में एकार्गल का, सब देशों में वेध का विचार करना चाहिये ॥

पातः (चंडीशश्चंडायुधोवा)

हर्षणवैधृतिसाध्यव्यतिपातकगंडशूलयोगानाम् ।
अन्ते यन्नक्षत्रं पातेन निपातितं तत्स्यात् ॥
(चन्द्रनक्षत्रे यदि एतद्योगस्य समाप्तिर्भवति तदा पात दोष इत्यर्थः)
पातेन पतितो ब्रह्मा पातेन पतितो हरिः ।
पातेन पतितो रुद्रस्तस्मात्पातं विवर्जयेत् ॥

(अर्थ)

हर्षण, वैधृति, साध्य, व्यतीपात, गण्ड, शूल योगों के अन्त में जो नक्षत्र हो वह पात दोष से दूषित होता है । (यदि किसी चन्द्र नक्षत्र में इन में से कोई योग समाप्त हो तो पात दोष होता है) इसी पात को चण्डीश अथवा चण्डायुध भी कहते हैं ॥

पात के कारण ब्रह्मा विष्णु तथा रुद्र का पतन हुआ इस लिये पातको वर्जित करना चाहिये ॥

यामित्रम्

चतुर्दशं च नक्षत्रं यामित्रं लग्नभात्स्मृतम् ।
शुभयुक्तं तदिच्छन्ति पापयुक्तं च वर्जयेत् ॥

(अर्थ)

लग्न से चौदहवां नक्षत्र यामित्र कहलाता है, यदि वह शुभ युक्त हो तो ग्रहण किया जाता है पापयुक्त हो तो वर्जित किया जाता है ॥

क्रान्तिसाम्यम्

पञ्चास्याजौ गोमृगौ तौलिकुम्भौ
कन्यामीनौ कर्कलीचापयुग्मे ।

तत्रान्योन्यंचन्द्रभान्वोनिरुक्तं
क्रान्तेः साम्यं नो शुभं मङ्गलेषु ॥१॥
शस्त्राहतोऽग्निदग्धोवा नागदष्टोऽपिजीवति ।
क्रान्तिसाम्यकृतोद्वाहो न जीवति कदाचन ॥२॥
वैधृति व्यतिपातौ यौ क्रान्तिसाम्येऽर्कचन्द्रयोः ।
सत्कर्मारम्भणं तत्र व्यसनं मरणं विदुः ॥३॥

(अर्थ)
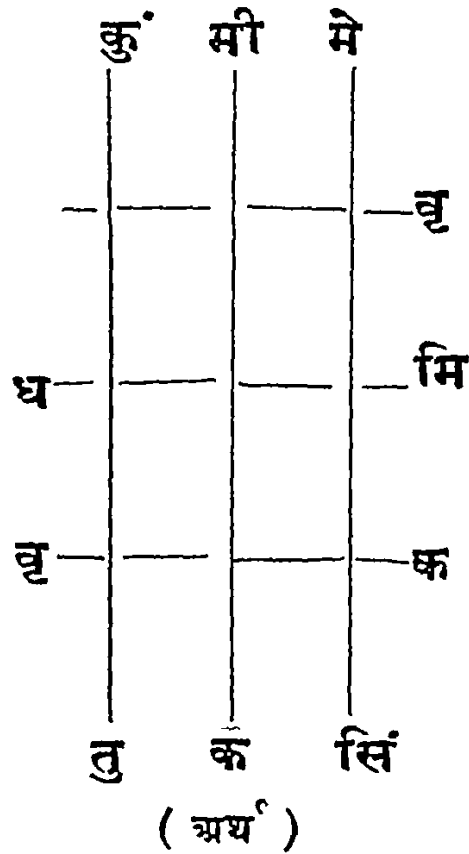
क्रान्ति साम्य चक्र में समझ लेना चाहिये, यदि इसमें सूर्य चन्द्रमा का परस्पर वेध हो तो मंगल कार्यों में शुभ नहीं है ॥ जैसे वृष का सूर्य हो मकर का चन्द्रमा हो तो क्रान्ति साम्य हो जावेगा ।

शस्त्र से मारा हुआ अथवा अग्नि से दग्ध अथवा नाग से डंसा हुआ मनुष्य जी सकता है परंतु क्रांति साम्य में विवाह किया हुआ मनुष्य नहीं जीता है ॥

सूर्य चन्द्रमा के क्रांति साम्य में वैधृति व्यतीपात योग होते हैं। उन में अच्छे कर्मों का आरंभ करने से दुःख तथा मृत्यु फल है॥

खार्जूर (एकार्गल वा)

व्याघात गण्ड व्यतिपात पूर्व शूलान्त्यवज्र परिघातिगंडे।
योगे विरुद्धेत्वभिजित्समेतः खार्जूरमर्काद्विषमे शशीचेत्॥

विवाह व्रतबन्धादौ वर्ज्यम्

विवाहे प्रथमे क्षौरे सीमन्ते कर्णवेधने।
व्रतेऽन्नप्राशनेचैवखार्जूरपरिवर्जयेत्॥

(अर्थ)

जिस दिन व्याघात, गंड, व्यतीपात, विष्कम्भ, शूल, वैधृति, वज्र, परिघ अतिगंड अशुभ योग हों तथा सूर्य के नक्षत्र से विषम नक्षत्र पर चन्द्रमा हो तो खार्जूर दोष होता है इसी को एकार्गल भी कहते हैं। यहां नक्षत्रों की गिनती अभिजित् सहित होती है। यदि चन्द्रमा सम नक्षत्र पर हो तो दोष नहीं होता है॥

विवाह, प्रथम क्षौर, सीमन्त, कर्णवेध, व्रतबंध, अन्नप्राशन में खार्जूर वर्जित करना चाहिये॥

युतिदोषः

यस्मिन्भवने चन्द्रस्तस्मिन्यदि जायते ग्रहः कश्चित्।
युतिरिति दोषस्तु तदा शुभयुक्तः केचिदिच्छन्ति॥ १॥
यस्मिन्नृक्षे स्थितः खेटस्तदृक्षं युतिसंज्ञकम्।
तस्मिन्विवाहिता कन्या पुंश्चली जायते ध्रुवम्॥२॥

(अर्थ)

जिस घर में चन्द्रमा हो उसी घर में यदि कोई और भी ग्रह हो तो युति दोष होता है। कोई कहते हैं कि शुभ ग्रह का दोष नहीं होता है॥१॥

जिस नक्षत्र में कोई ग्रह हो उसे युति कहते हैं। उसमें विवाह करने से कन्या व्यभिचारिणी होती है॥२॥

उपग्रह

शराष्टदिक्शक्रनगातिधृत्यस्तिथिधृतिश्चप्रकृतेश्च पञ्च ।
उपग्रहाः सूर्यभतोऽब्जताराः शुभानदेशे कुरुवाह्लिकानाम् ॥

(अर्थ)

यदि सूर्यनक्षत्र से चन्द्रनक्षत्र ५।८।१०।१४।७।१६।१५।१८।२०। २२।२३।२४।२५ वां हो तो उपग्रह दोष होता है। यह दोष कुरु तथा वाह्लीक देशों में वर्जित है॥

दग्धयोगदोषः

शशाङ्कसूर्यर्क्षयुतेऽर्भशेषे खं भूयुगाङ्गानिदशेशतिथ्यः ।
नागेन्दवोऽङ्केन्दुमिता नखाश्चेद्भवन्तिचैते दशयोगसंज्ञाः ॥

फलम्.

वाताभ्राग्निमहीपचौरमरणं रुग्वज्र वादाः क्षतिः ॥

(अर्थ)

अश्विनी नक्षत्र से चन्द्र नक्षत्र तक तथा सूर्य नक्षत्र तक गिन कर दोनों को आपस में जोड कर २७ का भाग देने से यदि ०।१।४।६।१०। ११।१५।१८।१६।२० में से कोई अङ्क शेष रहे तो दश योग दोष होता है॥

यदि शून्य शेष रहे तो वायु भय, १ शेष रहे तो मेघ भय, ४ शेष रहे तो अग्नि भय, ६ शेष रहे तो राज भय, १० शेष रहे तो चौर भय, ११ शेष रहे तो मृत्यु भय, १५ शेष रहे तो रोग भय, १८ शेष रहे तो वज्र भय, १६ शेष रहे तो अपयश का भय, २० शेष रहे तो हानि भय होता है॥

मर्मादिवेधाः

मर्मकंटकवेधंच शल्यंछिद्रं यो न जानाति ।
नार्हति विवाहदीक्षा लग्नं दातु स दैवज्ञः ॥१॥
लग्ने पापे मर्मवेध कंटको नवपञ्चके ।
चतुर्थे दशमे शल्यं छिद्रं भवति सप्तमे ॥२॥

मरणं मर्मवेधेस्यात्कंटके च कुलक्षयः ।
शल्येच नृपतेर्भीतिः पुत्रनाशश्च छिद्रके ॥३॥

(अर्थ)

जो ज्योतिषी मर्म, कंटक वेध, शल्य, छिद्र को नहीं जानता है वह विवाह लग्न निश्चय करने के योग्य नहीं है ॥

लग्न में पाप ग्रह हो तो मर्म वेध होता है, ६।५ में पाप ग्रह हो तो कंटक वेध होता है, ४।१० में पाप ग्रह हो तो शल्य वेध होता है, सप्तम में पाप ग्रह हो तो छिद्र वेध होता है ॥

मर्म वेध का फल मृत्यु है, कंटक का फल कुलक्षय है, शल्य में राज भीति होती है, छिद्र में पुत्र नाश होता है ॥

ग्रहणोत्पातभम्

यस्मिन्धिष्ण्येमहोत्पातोग्रहणं वा भवेद्यदि ।
तस्मिन्धिष्ण्ये शुभंकर्म षण्मासं वर्जयेद्बुधः ॥

(अर्थ)

जिस नक्षत्र में महा उत्पात अथवा ग्रहण हुआ हो उस नक्षत्र में छः महीने तक सब शुभ कर्म वर्जित हैं ॥

विवाहे पञ्चशलाकाचक्रम्
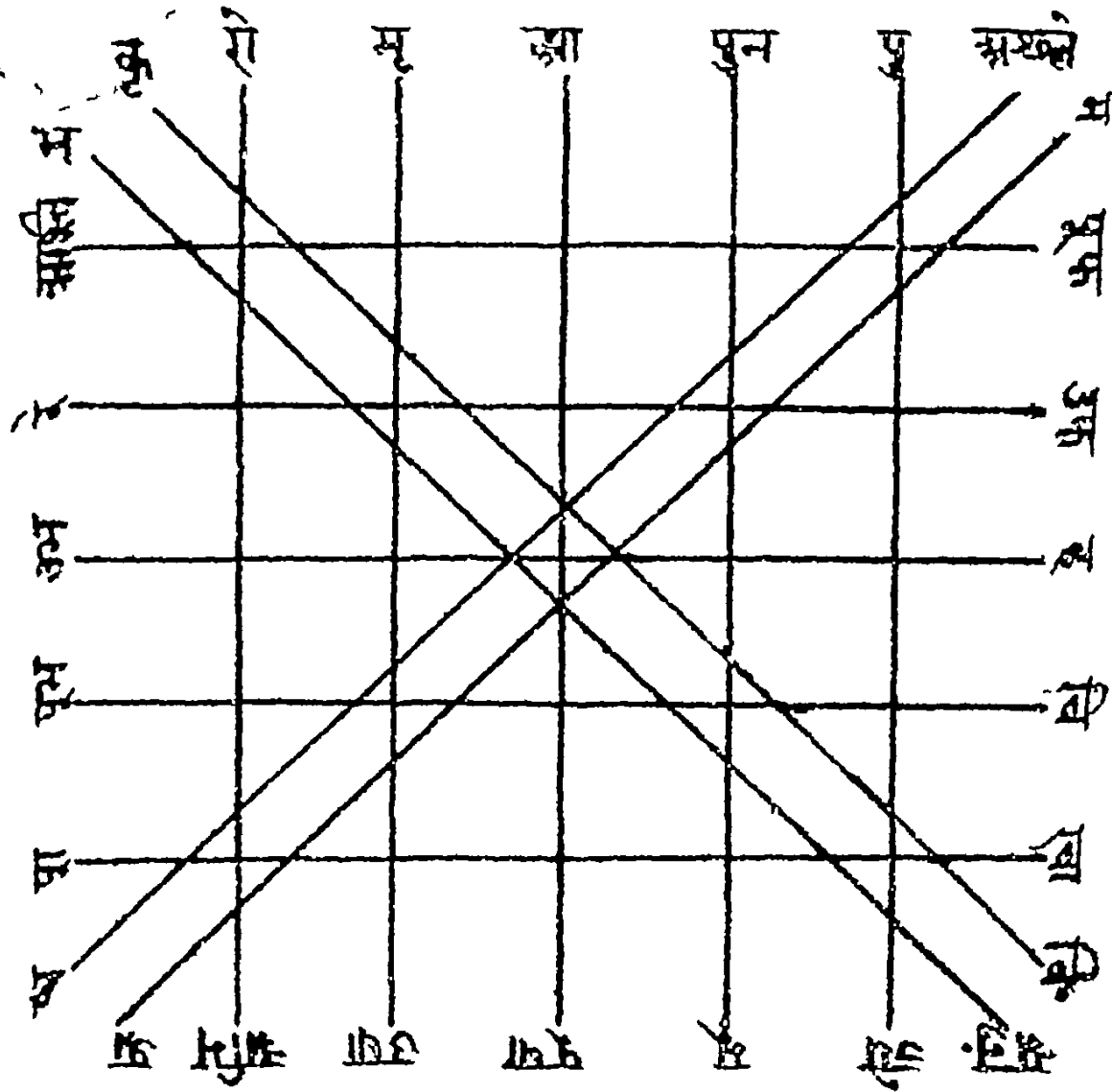
विवाहे पञ्चशलाका चक्रम्

पञ्चोर्ध्वाः स्थापयेद्रेखाः पंच तिर्यङ्मुखास्तथा ।
द्वयोश्च कोणयो र्द्वे द्वे चक्रं पञ्चशलाककम् ॥१॥
ईशाने कृत्तिका देया क्रमादन्यानि भानि च ।
ग्रहास्तेषु प्रदातव्या ये च यत्र प्रतिष्ठिताः ॥२॥
एकरेखास्थिति वेधो दिननाथादिभिर्ग्रहैः ।
विवाहे तत्र मासं तु न जीवति कदाचन ॥
खेटे तत्र गते तुरीय चरणा द्योर्वा तृतीयद्वयो. ॥३॥
वधू प्रवेशने दाने वरणे पाणिपीडने ।
वेधः पंचशलाकाख्योऽन्यत्र सप्तशलाककः ॥४॥
रविवेधे च वैधव्यं कुजवेधे कुलक्षयम् ।
बुधवेधे भवेद्वन्ध्या प्रव्रज्या गुरुवेधत ॥
अपुत्रा शुक्रवेधे च सौरे चन्द्रे च दुःखिता ।
परपुरुषता राहो केतोः स्वच्छन्दचारिणी ॥५॥

(अर्थ)

पाच खडी रेखा तथा पाच तिरछी रेखा लिखे । दो दो रेखा कोणों में दे तो पंच शलाका चक्र बनता है । ईशान में कृत्तिका लिखकर अभिजित् सहित सब नक्षत्रों को क्रम से लिखे । जो ग्रह जिस नक्षत्र पर हों उनको लिखे । सूर्य आदि ग्रह जब एक रेखा में हों तो वेध होता है । चौथे चरण का प्रथम चरण के साथ, द्वितीय चरण का तृतीय चरण के साथ वेध होता है । यदि वेध में विवाह करे तो वर कन्या एक महीना भी जीवित नहीं रहते हैं । शुभ ग्रह का वेध हो तो नक्षत्र चरण त्यागना चाहिये । पाप ग्रह का वेध हो तो सम्पूर्ण नक्षत्र वर्जित करना चाहिये । वधू प्रवेश, (कन्या) दान, वरण तथा विवाह में पंच शलाका चक्र का विचार करना चाहिये, अन्यत्र सप्त शलाका चक्र का विचार होता है ॥

सूर्य का वेध हो तो कन्या विधवा होती है। मंगल का वेध हो तो कुल क्षय होता है। बुध के वेध में कन्या वांझ होती है। बृहस्पति के वेध में कन्या प्रव्रज्या ग्रहण करती है। शुक्र के वेध में संतान नहीं होता है। शनि तथा चन्द्रमा के वेध में दुःख होता है। राहु के वेध में कन्या परपुरुष से व्यभिचार करती है। केतु के वेध मे कन्या स्वच्छन्दचारिणी होती है॥

वाणपञ्चकम्

रस गुण शशि नागाब्ध्याढ्य सङ्क्रान्तियातां—
शकमिति रथतष्टाङ्कैर्यदा पञ्चशेषाः।
रुगनल नृप चौरा मृत्यु सञ्ज्ञश्च वाणो
नवहृत शरशेषे शेषकैक्ये स शल्यः॥ १॥
रात्रौ चौररुजौ दिवा नरपतिर्वह्निः सदा सन्ध्ययो
र्मृत्युश्चाथ शनौ नृपो विदि मृति र्भौमेऽग्निचौरौ रवौ।
रोगोऽथ व्रत गेह गोप नृप सेवायानपाणिग्रहे
वर्ज्याश्च क्रमतो बुधै रुगनलक्ष्मापालचौरामृतिः॥२॥

(अर्थ)

सूर्य के गत अंशों को पांच स्थानों में पृथक् पृथक् स्थापित करो। उनमें क्रम से ६।३।१।८।४ का योग करो। योग फल में ९ का भाग दो। जिस स्थान में पांच शेष रहे वहां क्रम से रोग, अग्नि, नृप, चौर, तथा मृत्यु वाण होते हैं। जैसे आदि में पांच शेष रहे तो रोग वाण, द्वितीय में पांच शेष रहे तो अग्नि वाण, तृतीय में पांच शेष रहे तो नृप वाण, चतुर्थ में पाच शेष रहे तो चौर वाण, पंचम स्थान में पांच शेष रहे तो मृत्यु वाण होता है। पाचों स्थानों के शेष अङ्कों को जोड़ कर नौ का भाग देने से यदि पाच शेष रहे तो लोह सहित वाण होता है॥१॥

रात्रि में चौर तथा रोग वाण, दिन में नृप वाण, सर्व काल में अग्नि वाण, दोनों सन्ध्याओं में मृत्यु वाण वर्जित करने चाहियें।

शनिवार को नृप वाण, बुध वार को मृत्यु वाण, मङ्गल को अग्नि तथा चौर वाण, रविवार को रोग वाण वर्जित करने चाहियें।

यज्ञोपवीत में रोग वाण, घर के छावने में अग्नि वाण, राजा की सेवा में नृप वाण, यात्रा में चौर वाण, तथा विवाह में मृत्यु वाण वर्जित करने चाहियें ॥२॥

विवाहलग्ने रेखाः

लत्ता पातो युतिर्वेधो जामित्रं वाणपञ्चकम्।
एकार्गलोपग्रहश्च क्रान्तिसाम्यं तथैव च ॥
दग्धातिथिस्तु विज्ञेया दश दोषा महाबलाः।
एतान्दोषान्परित्यज्य लग्नं संशोधयेद्बुधः ॥

(अर्थ)

(१) लत्ता (२) पात (३) युति (४) वेध (५) जामित्र (६) वाण (७) एकार्गल (८) उपग्रह (९) क्रान्ति साम्य (१०) दग्धा तिथि। यह दस दोष बड़े बलवान् हैं। इनको छोड़ कर विवाह का लग्न ठहराना चाहिये॥ (इनमें से भी प्रथम पांच अवश्य वर्जनीय हैं। दूसरे पांच आवश्यक में ग्रहण करते हैं) (तिथि पत्रों में विवाहलग्नों पर रेखा दी रहती हैं। वे दो प्रकार की होती हैं। एक तो खड़ी (।) जिसका अर्थ शुभ है। दूसरी टेढ़ी (S) जिसका अर्थ अशुभ है। सब रेखाओं का जोड़ मिला कर दस होता है। यह रेखाएं लत्ता आदि दस दोषों को यथाक्रम शुभ अथवा अशुभ सूचित करती हैं)

लत्तादि दोषापवादः

एकार्गलोपग्रह पात लत्ता
जामित्र कर्तंयुर्दयास्त दोषाः।
नश्यन्ति चन्द्रार्कबलोपपन्ने
लग्ने यथार्काभ्युदये तु दोषाः ॥

(अर्थ)

जब सूर्य चन्द्रमा के बल से युक्त लग्न हो तो एकार्गल, उपग्रह, पात, लत्ता, जामित्र, कर्तरी, उदय तथा अस्त दोषों का ऐसा नाश हो जाता है जैसे कि सूर्योदय होने पर अन्धकार का ॥

लग्ने ग्रहाणा शुभाशुभस्थानानि

व्यये शनिः खेऽवनिजस्तृतीये
भृगुस्तनौ चन्द्रखला न शस्ताः ।
लग्नेट् कविग्लौश्च रिपौ मृतौ ग्लौ
र्लग्नेट् शुभाराश्च मदे च सर्वे ॥१॥
त्र्यायाष्टषट्सु रविकेतुतमोऽर्कपुत्रा
स्त्र्यायारिग· क्षितिसुतो द्विगुणायगोऽब्जः ।
सप्तव्ययाष्टरहितौ ज्ञगुरू सितोऽष्ट
त्रिधूनषड्व्ययगृहान्परिहृत्य शस्तः ॥२॥

(अर्थ)

विवाह लग्न से बारहवा शनि, दशम मंगल, तीसरा शुक्र, लग्न में चन्द्रमा तथा पाप ग्रह शुभ नहीं है। लग्नेश, शुक्र तथा चन्द्रमा छठे शुभ नहीं हैं। चन्द्रमा, लग्नेश, शुभ ग्रह तथा मङ्गल अष्टम स्थान में शुभ नहीं हैं। सप्तम स्थान मे कोई ग्रह शुभ नहीं है ॥१॥

३।११।८।६ स्थानोंमें सूर्य, केतु, राहु तथा शनि श्रेष्ठ हैं। ३।११।६ में मंगल, २।३।११ मे चन्द्रमा, ७।१२।८ स्थानों को छोड़ कर शेष स्थानों में बुध तथा वृहस्पति, ८।३।७।६।१२ स्थानों को छोड कर शेष स्थानों में शुक्र शुभ हैं ॥२॥

दोष परिहारः

पापौ कर्तरिकारकौ रिपुगृहे नीचास्तगौ कर्तरी
दोषो नैव सितेऽरिनीचगृहगे तत्पष्ठदोषोऽपिन ।

भौमेऽस्ते रिपुनीचगे नहि भवेद् भौमोऽष्टमो दोषकृ
न्नीचे नीचनवांशके शशिनि रि. फाष्टारि दोषोऽपिन ॥१॥
अब्दायनर्तुतिथिमासभपक्षदग्ध
तिथ्यन्धकाणवधिराङ्गमुखाश्च दोषाः ।
नश्यन्ति विद्गुरुसितेष्विह केन्द्रकोणे
तद्वच्च पापविधुयुक्तनवांशदोषः ॥२॥
केन्द्रे कोणे जीव आये रवौ वा
लग्ने चन्द्रे वापि वर्गोत्तमे वा ।
सर्वे दोषा नाश मायान्ति चन्द्रे
लाभे तद्वद् दुर्मुहूर्तांशदोषाः ॥३॥
त्रिकोणे केन्द्रे वा मदनरहिते दोषशतकं
हरेत्सौम्यः शुक्रो द्विगुणमपि लक्षं सुरगुरुः ।
भवे दाये केन्द्रेऽङ्गप उत लवेशो यदि तदा
समूहं दोषाणां दहन इव तूलं शमयति ॥४॥

(अर्थ)

कर्त्तरी योग कारक क्रूर ग्रह अपने शत्रु राशि वा नीच राशि अथवा अस्त के हों तो कर्त्तरी का दोष नहीं होता हैं। यदि शुक्र शत्रु राशि का अथवा नीच का होकर छठे घर में हो तो छठे शुक्र का दोष नहीं। मंगल अस्त का अथवा शत्रु राशि का अथवा नीच राशि का हो तो अष्टम मंगल का दोष नहीं। चन्द्रमा नीच का अथवा नीच नवांशक का हो तो ६।८।१२ स्थानों में स्थित होने का दोष नहीं ॥१॥

यदि बुध बृहस्पति शुक्र केन्द्र अथवा त्रिकोण में हों तो वर्ष, अयन, ऋतु, मास, नक्षत्र, पक्ष, दग्ध तिथि, अन्ध, काण, वधिर आदि लग्न दोषों का तथा पापग्रह युक्त चन्द्रमा का अथवा पाप युक्त नवांश का दोष भी नाश हो जाता है ॥२॥

केन्द्र (सप्तम स्थान को छोड कर) अथवा त्रिकोण में वृहस्पति हो अथवा लाभ स्थान में सूर्य हो अथवा चन्द्रमा वर्गोत्तम होकर लग्न में हो (अथवा लग्न से चन्द्रमा उपचय अर्थात् ३।६।१०।११ स्थानों में हो) तो सव दोषों का नाश हो जाता है, दुष्ट मुहूर्त निषिद्ध नवांशों का दोष भी नष्ट हो जाता है ॥३॥

यदि सप्तम स्थान को छोड़ कर केन्द्र अथवा त्रिकोण में वुध हो तो १०० दोषों का नाश करता है। यदि शुक्र हो तो २०० दोषों का नाश करता है। यदि वृहस्पति हो तो एक लाख दोषों को शान्त करता है। लग्नेश अथवा लग्न नवांशेश ११।१।४।१० स्थानों में हो तो दोषों के समूह को ऐसा जलाता है जैसा कि अग्नि रुई को ॥४॥

विंशोपकाः

द्वौ द्वौ ज्ञभृग्वोः पञ्चेन्दौ रवौ सार्धत्रयो गुरौ ।
रामा मन्दागुकेत्वारे सार्धैकैकं विंशोपकाः ॥

(अर्थ)

पूर्वोक्त शुभ स्थानों में यदि वुध शुक्र हों तो २।२ विंशोपक वल पाते हैं। चन्द्रमा ५ वल पाता है। सूर्य ३॥ विश्वा वल पाता है। वृहस्पति ३ विश्वा वल पाता है। शनि, राहु, केतु, मंगल प्रत्येक १॥, १॥ विंशोपक वल पाते हैं ॥

दश विंशोपकाधिक लग्नं शुभम्

लग्नं शुभं विवाहे स्याद्दशविंशोपकाधिकम् ॥

(अर्थ)

विवाह में १० विश्वा से अधिक लग्न शुभ होता है ॥

षट् धिष्ण्यानि.

जन्मभं दशमं कर्म सङ्घातर्क्षंच षोडशम् ।
अष्टादशं सामुदायं त्रयोविंशद्विनाशनम् ।
मानसं पञ्चविंशर्क्षं नाचरेच्छुभकर्मसु ॥

एतेषु षट्सु पापग्रहाधिष्ठितेषु पीडा भवेत् ।
तच्छान्त्यै दानजपहोमादिकं कार्यम् ॥

(अर्थ)

(१) जन्म नक्षत्र, (२) जन्म नक्षत्र से दसवा कर्म नक्षत्र, (३) सोलहवां संघात, (४) अठारहवां सामुदाय, (५) तेईसवा विनाश, (६) पच्चीसवां मानस नक्षत्र कहलाते हैं। शुभ कर्मों में यह ६ नक्षत्र वर्जित हैं॥ वैनाशिक नक्षत्र विशेषतः वर्जित है॥ कोई कहते हैं कि बाइसवां वैनाशिक है॥

(यदि पूर्वोक्त छः नक्षत्रों में कोई पाप ग्रह बैठा हो तो उसकी शान्ति के निमित्त दान, जप, होम आदि करने चाहिये)

वर्षाधिक्य विषये.

रवीज्यचन्द्रशुद्धिश्च दशवर्षाणि कारयेत् ।
अत ऊर्ध्वं रजस्कन्या तस्माद्दोषो नविद्यते ॥१॥
दशवर्षव्यतिक्रान्ता कन्या शुद्धिविवर्जिता ।
तस्यास्तारेन्दुलग्नाना शुद्धौ पाणिग्रहो मतः ॥२॥
सर्वत्रापि शुभं दद्याद् द्वादशाब्दात्परं गुरुः ।
पञ्चषष्ठाब्दयोरेव शुभगोचरता मता ॥३॥

(अर्थ)

कन्या की १० वर्ष की अवस्था होने तक सूर्य, बृहस्पति तथा चन्द्रमा की शुद्धि का विचार करे। तदुपरान्त कन्या रजोवती कहलाती है। इस लिये सूर्य आदि की शुद्धि का विचार न करे ॥१॥

जब कन्या १० वर्ष से अधिक अवस्था वाली हो जावे तो बृहस्पति आदि की शुद्धि का विचार न करे। तारा चन्द्रमा तथा लग्न की शुद्धि में उसका विवाह कर दे ॥२॥

बारह वर्ष की अवस्था के उपरान्त बृहस्पति सब स्थानों में शुभ है। शुभ गोचर का विचार केवल पांचवें अथवा छठे वर्ष में होता है ॥३॥

शनिरिक्ताफलम्

शनैश्चरदिने प्राप्ते यदि रिक्तातिथिर्भवेत् ।
तस्मिन्विवाहिता कन्या पतिसम्पत्तिवर्द्धिनी ॥

(अर्थ)

यदि शनि वार तथा रिक्ता तिथि के दिन कन्या का विवाह किया जावे तो पति की सम्पत्ति की वृद्धि होती है ॥

मघादिपादा वर्ज्याः

मघायाः प्रथमे पादे मूलस्य प्रथमे तथा ।
रेवत्याश्च चतुर्थांशे विवाह प्राणनाशनः ॥

(अर्थ)

मघा के प्रथम चरण में, मूल के प्रथम चरण में, रेवती के चौथे चरण में विवाह करना प्राणों का नाश करता है ॥

पुष्यनक्षत्र विवाहे निन्दितम्

कीर्तितो मुनिभिः सर्वैः पुष्यः सर्वार्थसाधकः ।
इति सत्यपि चोद्वाहे निन्दितः सर्वदा बुधैः ॥

(अर्थ)

यद्यपि मुनि लोगों ने पुष्य नक्षत्र की बड़ी प्रशंसा की है और कहा है कि यह नक्षत्र सब कामों को सिद्ध करने वाला है तथापि विवाह में पुष्य नक्षत्र वर्जित है ॥

विवाहात्पूर्वं दलन कण्डनादि दिनम्

विधो र्बल मवेक्ष्य वा दलनकण्डनं वारकं
गृहाङ्गणविभूषणा न्यथ च वेदिकामण्डपान् ।
विवाहविहितोडुभि र्विरचयेत्तथोद्वाहतो
न पूर्व मिदमाचरेत्त्रिनवषण्मिते वासरे ॥

(अर्थ)

चन्द्रमा का बल देख कर विवाहोक्त नक्षत्रों में कूटना, पीसना, लीपना,

पोतना, चित्रकारी, मंडप आदि बनाना चाहिये। परन्तु विवाह से पूर्व ३।६।६ वें दिन में आरंभ न करे॥

विवाहानन्तरं प्रथमाब्दे वधूनिवासः

उद्वाहात्प्रथमे ज्येष्ठे यदि पत्युर्गृहे वसेत्।
पत्युर्ज्येष्ठं तदा हन्ति पौषेतु श्वशुरं तथा॥१॥
श्वश्रूं साषाढमासेतु अधिमासे स्वकं पतिम्।
आत्मानं तु क्षये मासि तातं तातगृहे मधौ॥२॥

(अर्थ)

यदि विवाह के उपरान्त कन्या पहिले जेठ के महीने में पति के घर में रहे तो पति के जेठे भाई की मृत्यु होती है। पौष में ससुर की मृत्यु होती है। आषाढ़ में सास की मृत्यु होती है। अधि मास में उसके पति की मृत्यु होती है। क्षय मास में उसकी अपनी मृत्यु होती है। चैत के महीने में यदि अपने पिता के घर रहे तो पिता की मृत्यु होती है॥

(५) वधूप्रवेश द्विरागमन प्रकरणम्

वधू प्रवेशः

समाद्विपञ्चाङ्कदिने विवाहा
द्वधूप्रवेशोऽष्टिदिनान्तराले।
शुभः परस्ताद्विषमाब्दमास
दिनेऽक्षवर्षात्परतो यथेष्टम्॥१॥
ध्रुव क्षिप्र मृदु श्रोत्र वसु मूल मघानिले।
वधूप्रवेशः सन्नेष्टो रिक्तारार्के बुधे परैः॥२॥

(अर्थ)

विवाह से १६ दिन के भीतर सम दिनों में अथवा ७।५।६ वें दिनों में वधू प्रवेश शुभ है। यदि १६ दिन के भीतर न हो सके तो विषम वर्ष, विषम मास, विषम दिनों में शुभ है। यदि पाच वर्ष से अधिक हो जावें तो जब चाहे तब करे॥१॥

ध्रुव, क्षिप्र, मृदु, श्रवण, धनिष्ठा, मूल, मघा, स्वाती नक्षत्रों में, रिक्ता तिथि, रवि भौम वारों को छोड़ कर शेष तिथि वारों में वधू प्रवेश शुभ है। कोई आचार्य कहते हैं कि बुध वार भी वर्जित है ॥२॥

द्विरागमनम्

चरेद्थौजहायने घटालिमेषगे रवौ
रवीज्यशुद्धियोगतः शुभग्रहस्य वासरे।
नृयुग्ममीनकन्यका तुलावृषे विलग्नके
द्विरागमं लघुध्रुवे चरेऽस्रपे मृदूडुनि ॥

(अर्थ)

विषम वर्ष (१।३।५) में, ११।१।८ राशि के सूर्य में, सूर्य, तथा बृहस्पति की शुद्धि मिलने पर, शुभ ग्रहों के वार में, ३।१२।६।७।२ लग्नों में, लघु, ध्रुव, चर, मूल, तथा मृदु नक्षत्रों मे द्विरागमन करना श्रेष्ठ है ॥

शुक्र विचारः

दैत्येज्योह्यभिमुखदक्षिणे यदिस्याद्
गच्छेयुर्न हि शिशुगर्भिणीनवोढाः।
बालश्चेद्व्रजति विपद्यते नवोढा
चेद्वन्ध्या भवति च गर्भिणीत्वगर्भा ॥१॥

पित्र्येगृहेचेत्कुचपुष्पसम्भव स्तदानदोषःप्रतिशुक्र सम्भवः।
भृग्वङ्गिरोवत्सवसिष्ठकश्यपात्रीणांभरद्वाजमुनेः कुले तथा ॥२॥

उदेति यस्यां दिशि यत्र याति
गोलभ्रमाद्वाथ ककुब्भसंस्थे।
त्रिधोच्यते सन्मुख एव शुक्रो
यत्रोदितस्तां तु दिशं न यायात् ॥३॥

अस्तं गते गुरौ शुक्रे सिंहस्थे वा बृहस्पतौ।
दीपोत्सववलेनैव कन्या भर्तृगृहं व्रजेत् ॥४॥

उपचयगते जीवे भृगौ केन्द्रमुपागते ।
शुद्धे लग्ने शुभाक्रान्ते गन्तव्यं भर्तृमन्दिरे ॥५॥
पौष्णादि वह्निभावङ्घ्रिं यावत्तिष्ठति चन्द्रमाः ।
तावच्छुक्रो भवेदन्धः सम्मुखे दक्षिणे हितः ॥६॥

(अर्थ)

यदि शुक्र सन्मुख तथा दक्षिण में हो तो बालक, गर्भवती स्त्री तथा नूतन विवाहिता स्त्री यात्रा न करे । यदि बालक जावे तो विपत्ति पड़े, नूतन विवाहिता स्त्री जावे तो वांझ हो, गर्भवती स्त्री जावे तो उसका गर्भ-पात हो ॥१॥

जो पिता के घर में कुच निकल आवे तथा रजोदर्शन होने लगे तो सन्मुख शुक्र का दोष नहीं है । भृगु, अंगिरा, वत्स, वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि भरद्वाज गोत्र वालों को सन्मुख शुक्र का दोष नहीं है ॥ २ ॥

सन्मुख शुक्र तीन प्रकार का होता है (१) जिस दिशा में शुक्र का उदय हो (२) उत्तर दक्षिण गोल भ्रमण से जिस दिशा में शुक्र जावे (३) अथवा कृत्तिका आदि नक्षत्रों के वश से जिस दिशा में हो । पूर्वोक्त दिशाओं को जाने वाले को शुक्र सन्मुख होगा । जिस दिशा में उदय हो उस दिशा को यात्रा न करे ॥ ३ ॥

जब बृहस्पति अथवा शुक्र अस्त हो गये हों अथवा सिंहस्थ बृहस्पति हो (कन्या का रजोदर्शन पिता के घर में होने लगा हो) अच्छा मुहूर्त न मिले तो दीपावली के दिन कन्या पति के घर को जावे ॥४॥

बृहस्पति उपचय में हो, शुक्र केन्द्र में हो, लग्न शुभ हो तथा शुभ ग्रह से युक्त हो तब स्त्री पति के घरको यात्रा करे ॥५॥

जब चन्द्रमा रेवती से लेकर कृत्तिका के प्रथम चरण के बीच में रहता है तब शुक्र अन्धा हो जाता है । इसमें सन्मुख अथवा दक्षिण शुक्र का दोष नहीं है ॥ ६ ॥

श्रीदेवीदत्तज्योतिर्वित्संगृहीतानुवादिते सुगमज्योतिषे संस्काराध्यायः पञ्चमः ॥

सुगमज्योतिषम् ।

मुहूर्ताध्यायः षष्ठः

—:०:—

(१) साधारण मुहूर्त प्रकरणम्

यत्र नोक्ता तिथिस्तत्र ग्राह्या रिक्तामभां विना ।
वारोऽपि यत्र न प्रोक्तस्तत्रार्कार्किकुजान्विना ॥१॥

चर मृदु क्षिप्र ध्रुव मूल विशाखा मघासु सकुजे शुभवारे भूकर्षणं हितम् ॥२॥

सूर्यत्यक्तनक्षत्रात् त्र्यष्टनवाष्टसु अशुभं शुभमशुभं शुभ मिति हल चक्रम् ॥३॥

अत्रैव नक्षत्रे शनिभौमभिन्नवारे बीजवापः सस्यारोपणं धान्यच्छेदश्च ॥४॥

धान्यानां मर्दनं ज्येष्ठा मूल मघा श्रवण रेवती रोहिण्य नुराधा फल्गुनी द्वये शुभम् ॥५॥

क्षिप्र ध्रुव चर मृदु मूलेषु ज्ञगुरुशुक्रेषु चरभिन्नलग्ने धान्य संग्रहः शुभः ॥६॥

नवान्नं स्याच्चरक्षिप्र मृदुभे सत्तनौ शुभम् ।
विना नन्दा विषघटी मधुपौषार्किभूमिजान् ॥७॥

वस्त्र भूषण विधि ध्रुवाश्विनी
हस्तपञ्चक (हस्तात्पञ्च) पुनर्वसुद्वये ।
पौष्णवासवभयोश्च सत्तिथौ
मन्द भौम रवि वासरान्विना ॥८॥

अनुक्तेऽपीष्टं वस्त्रं विप्राज्ञोत्सवलब्धिषु ॥९॥

सूचीकर्मा नुराधाश्वि चित्रा मृग पुनर्वसौ ।
वस्त्रं क्षाल्यं धारणोक्ते काले बुधदिनं विना ॥१०॥

भोजनं भाजने रौप्य स्वर्ण कांस्यादि निर्मिते ।
कुर्यादमृतयोगेषु चर क्षिप्र मृदु ध्रुवै. ॥११॥
स्याद्भूषणानां घटनं चर क्षिप्र मृदु ध्रुवैः ।
शुभ वारे रत्नवतां मिश्रभेऽपि रवौ कुजे ॥१२॥
सेवा कार्या क्षिप्र मैत्र ध्रुवैर्ज्ञेज्यार्क भार्गवे ।
मन्देऽपि चेत्सेवकर्क्षं स्वामिभान्न द्वितीयकम् ॥१३॥
राज्ञां विलोकनं क्षिप्र श्रुतिद्वयमृदुध्रुवे ।
विपणिः स्यान्मृदु क्षिप्र ध्रुवै रिक्ताकुजान्विना ॥१४॥
क्रयः कार्योऽश्विनी स्वाती श्रवश्चित्राशतान्त्यभे ।
विक्रयो भरणी पूर्वात्रयाश्लेषासु मिश्रभे ॥१५॥
नाना पशु*क्रिया हस्त पुष्यार्द्रामृगमिश्रभे ।
पुनर्वसौ धनिष्ठाश्वि पूर्वा ज्येष्ठा शतान्त्यभे ॥१६॥
त्यक्त्वाभौमेन्दुशनीन् श्रुति चित्रा ध्रुवाणि च ।
अमारिक्ताष्टमीश्चापि गति*क्रय मुखाः शुभाः ॥१७॥
द्रव्यं लघुचरे योज्य वृद्ध्यर्थ चरलग्नके ।
ऋणं भौमे न गृह्णीयाद् वृद्धियोगेऽर्कसंक्रमे
धनिष्ठापञ्चके हस्त द्विपुष्कर त्रिपुष्करे ॥१८॥
भौमादिषु ऋणच्छेदं कुर्याच्च धन संग्रहम् ।
बुधे धनं न प्रदेयं संग्रहस्तु बुधे शुभः ॥१९॥
वारे गृह्य मृणं तु संक्रमदिने वृद्धौ करेऽर्कह्निय
त्तद्वंशेतु भवेद्दणं नच बुधे देयं कदाचिद्धनम् ॥२०॥
(शन्यर्कारैस्त्रिपादर्क्षे—वि. उफा. पूभा. पुन. कृ. उषा.—
भद्रा तिथ्यां (२।७।१२) त्रि पुष्करः ।
मृग चित्रा धनिष्ठासु तत्तिथ्याहि द्वि पुष्कर. ॥) ॥२१॥

मिश्रक्रूरेषु तीक्ष्णेषु स्वात्यां द्रव्यं न लभ्यते ।
दत्तं प्रयुक्तं निक्षिप्तं नष्टं चेत्याह नारदः ॥२२॥
जलाशयानां खननं मघा पुष्य ध्रुवे मृगे ।
पूर्वाषाढानुराधान्त्य धनिष्ठाशतहस्तभे ॥
जलराशिगते चन्द्रे लग्नस्थे च बुधे गुरौ ॥२३॥
क्षौरं चौलोक्त नक्षत्र वारादिषु शुभं जगु. ।
श्मश्रुकर्म भवेन्नैव नवमे दिवसे क्वचित् ॥२४॥
क्षौरं मृते रतं दर्शे वर्जयेच्च जिजीविषुः ।
क्षौरं नकुर्युरभ्यक्त भुक्त स्नात विभूषिताः ॥२५॥
प्रयाण समरारम्भे न रात्रौ नच सन्ध्ययोः ।
श्राद्धाह प्रतिपद्रिक्ता व्रताह्नि च न वैधृतौ ॥२६॥
प्रशस्तं जन्म नक्षत्र सर्वकर्मसु शोभनम् ।
क्षौर प्रयाण भैषज्य विवादेषु न शोभनम् ॥२७॥
षष्ठीममां पूर्णिमां च चतुर्दशींतथाष्टमीम् ।
तैलाभ्यङ्गे मैथुने च वर्जयेत्क्षौरकर्मणि ॥२८॥
क्षौरं नैमित्तिकं कार्यं निषेधे सत्यपि क्वचित् ।
यज्ञे मृतौ बन्धमोक्षे नृपविप्राज्ञयापि च ॥२९॥
राजकार्यनियुक्तानां नराणां रूपजीविनाम् ।
श्मश्रुलोमनखच्छेदे नास्ति कालविशोधनम् ॥३०॥
प्राग्वयस्कैः सपितृकै नंकार्यं मुण्डनं सदा ।
मुण्डनस्य निषेधेऽपि कर्तनं तु विधीयते ॥३१॥
उदङ्मुखः प्राङ्मुखोवा वपनं कारयेत्सुधीः ॥
मुण्डनं पिण्डदानं च प्रेतकर्म च सर्वशः ।
न जीवपितृकः कुर्याद्गुर्विणीपतिरेव च ॥३२॥

क्षिप्र ध्रुवान्त्य चर मैत्र मघासु शस्तं
स्याच्छान्तिकं सह च मङ्गलपौष्टिकाभ्याम् ।
खेऽर्के विधौ सुखगते तनुगे गुरौ नो
मौढ्यादिदुष्टसमये शुभदं निमित्ते ॥३३॥
सूर्यभात्त्रित्रिभे चान्द्रे सूर्यविच्छुक्रपङ्गवः ।
चन्द्रारेज्यागुशिखिनो नेष्टा होमाहुतिः खले ॥३४॥
सैका तिथिर्वारयुता कृताप्ता
शेषे गुणेऽभ्रे भुवि वह्निवासः ।
सौख्याय होमे शशियुग्मशेषे
प्राणार्थनाशो दिवि भूतले च ॥३५॥
ग्रहणोद्वाह गण्डान्ते तथा दुर्गोत्सवेऽपि च ।
तदाग्निचक्रं नालोक्यं ग्रहशान्तौ विचारयेत् ॥३६॥
व्रतबन्धे विवाहे च नवरात्रे च नित्यके ।
कुलदेवार्चने धीमान्नो कुर्यादग्निचिन्तनम् ॥३७॥
विवाह चूडा व्रतबन्ध गोचरे उत्पात शान्ति ग्रहणे युगादौ ।
दुर्गाविधाने सततंप्रसूतौ नैवाग्नि चक्रं परिशोधनीयम् ॥३८॥
विवाहे व्रतबन्धे च यजने मधुसूदने ।
दुर्गाया पुत्रजन्मादौ अग्निचक्रं न दृश्यते ॥३९॥
दुर्गभङ्गे गृहे वापि विवादे शत्रु विग्रहे ।
शान्तिकेच नृपक्रोधे चक्रं तत्र निरीक्षयेत् ॥४०॥
व्यन्त्यादिति ध्रुव मघानिलसार्पधिष्ण्ये
रिक्ते तिथौ चरतनौ विकवीन्दुवारे ।
स्नानं रुजा विरहितस्य जनस्य शस्तं
हीने विधौ सखलगैर्भवकेन्द्रकोणे ॥४१॥

व्ययाष्टशुद्धोपचये लग्नगे शुभदृग्युते ।
चन्द्रे त्रिषड्दशायस्थे सर्वारम्भः प्रसिद्ध्यति ॥४२॥
रविवारः षष्ठ्याद्यामाश्च रदधावने (वर्ज्याः) ।
पूर्णिमा दर्श संक्रांति चतुर्दश्यष्टमीषु च ।
नरश्चाण्डालयोनौ स्यात्तैलस्त्री मांस सेवनात् ॥४३॥
रविवारश्च तैलाभ्यङ्गे निषिद्धः ॥
सप्तम्यां न स्पृशेत्तैलम् ॥४४॥
दीक्षा कालः । ग्रहणे च महातीर्थे नास्ति कालस्य निर्णयः ॥
पुरश्चरण कालः । ग्रहणे च महातीर्थे न काल मवधारयेत् ॥४५॥
रवि संक्रान्ति वारेषु ग्रहणेषु शशिक्षये ।
व्रतेषु चैव षष्ठीषु न स्नाया दुष्ण वारिणा ॥४६॥
स्नाने चाभ्यञ्जने चैव दन्तधावन मैथुने ।
तिथिस्तात्कालिकी ग्राह्या तथा मरणजन्मनो ॥४७॥
नन्दातिथिष्वभ्यङ्गो वर्ज्यः । रिक्तासु क्षौरं वर्ज्यम् ।
जयासु मांसं वर्ज्यम् । पूर्णासु स्त्री वर्ज्या ।
रविवारेऽभ्यङ्गो भौमवारे क्षौरं बुधे योषिच्च वर्ज्या ॥४८॥
चित्रा हस्त श्रवणेषु तैलं वर्ज्यम् । विशाखा प्रतिपत्सु
क्षौरं वर्ज्यम् । मघा कृत्तिका त्र्युत्तरासु स्त्री न सेव्या ॥४९॥
मसूरं द्वादश्यां वृन्ताकं त्रयोदश्यां वर्ज्यम् ॥५०॥

(अथ)

इस साधारण मुहूर्त प्रकरण में जहा तिथि न कही हो वहा रिक्ता तथा अमावास्या को छोड़ कर शेष तिथियां ग्रहण करनी चाहियें । जहां वार न कहा गया हो वहा रविवार, मङ्गलवार, शनिवार को छोड़ कर शेष वारों को ग्रहण करना चाहिये ॥

भूकर्षण (हलजोतना)

चर, मृदु, क्षिप्र, ध्रुव, मूल, विशाखा, मघा नक्षत्रों में, मंगल तथा शुभवार में शुभ है ॥

हलचक्र

जिस नक्षत्र को सूर्य्य छोड़ दे उससे ३ नक्षत्र अशुभ होते हैं, ८ नक्षत्र शुभ होते हैं, ९ नक्षत्र अशुभ होते हैं, ८ नक्षत्र शुभ होते हैं ॥

वीजवोना, धान के पौधे लगाना, तथा धान काटना ।

पूर्वोक्त नक्षत्रों में शनि तथा मंगल छोड़कर शेष वारों में ये काम शुभ हैं ॥

धान्य मर्दन ।

ज्येष्ठा, मूल, मघा, श्रवण, रेवती, रोहिणी, अनुराधा, पूर्वाफल्गुनी, उत्तराफल्गुनी नक्षत्रों में शुभ है ॥

धान्यसग्रह ।

क्षिप्र, ध्रुव, चर, मृदु, मूल नक्षत्रों में, बुध, बृहस्पति, शुक्रवारो में, चर लग्न को छोड़ कर शेष किसी (अर्थात् स्थिर अथवा द्विस्वभाव) लग्नों में शुभ है ॥

नवान्न ।

चर, क्षिप्र, मृदु, नक्षत्रों में, शुभ ग्रह युक्त लग्न में, नन्दा तिथि तथा विष घटी छोडकर, चैत, पौष मासों को छोड़ कर, शनि तथा मंगलवार को छोड़ कर, अन्यत्र शुभ है ॥

वस्त्र अथवा आभूषण पहिनना ।

ध्रुव, अश्विनी, हस्त से ५ नक्षत्र, पुनर्वसु, पुष्य, रेवती धनिष्ठा नक्षत्रो में, अच्छी तिथि में, शनि, मंगल तथा रविवार को छोड़ कर अन्य वारो में शुभ है ।

जब ब्राह्मण की आज्ञा हो अथवा उत्सव में वस्त्र मिले तो अनुक्त तिथि-वार नक्षत्रों में भी शुभ है ॥

सूची कर्म (सीना)

अनुराधा, अश्विनी, चित्रा, मृगशिर, पुनर्वसु नक्षत्रों में शुभ है ॥

कपड़ा धोना

वस्त्र धारण के लिये जो ऊपर समय बतलाया गया है उसी में बुधवार को छोड कर शुभ है ॥

नया वर्तन

सोना, चांदी, कांसा, आदि के बने हुए पात्र में भोजन करना चर, क्षिप्र, मृदु, ध्रुव नक्षत्रो में तथा अमृतयोग में शुभ है ॥

आभूषण बनवाना

चर, क्षिप्र, मृदु, ध्रुव, नक्षत्रों में तथा शुभवार में शुभ है। जब रत्न जटित आभूषण हों तो मिश्र नक्षत्रों में, रविवार अथवा मंगलवार को भी शुभ है ॥

सेवा (नोकरी)

क्षिप्र, अनुराधा, ध्रुव नक्षत्रों में, बुध, बृहस्पति, रवि, शुक्र तथा शनिवारों में शुभ है। सेवक का नक्षत्र स्वामी के नक्षत्र से द्वितीय न हो ॥

राजदर्शन

क्षिप्र, श्रवण, धनिठा, मृदु, ध्रुव नक्षत्रों में शुभ है ॥

दूकान

मृदु, क्षिप्र, ध्रुव नक्षत्रों में, रिक्ता तिथि, तथा मंगलवार को छोड़ कर अन्यत्र शुभ है ॥

क्रय (खरीदना)

अश्विनी, स्वाती, श्रवण, चित्रा, शतभिषा तथा रेवती नक्षत्रो में शुभ है ॥

विक्रय (वेचना)

भरणी, पूर्वाषाढा, पूर्वाफल्गुनी, पूर्वाभद्रपदा, अश्लेषा, मिश्र नक्षत्रों में शुभ है॥

पशुओं का गमन अथवा क्रय विक्रय आदि

हस्त, पुष्य, आर्द्रा, मृगशिर, मिश्र, पुनर्वसु, धनिष्ठा, अश्विनी, तीनों पूर्वा, ज्येष्ठा, शतभिषा, रेवती नक्षत्रों में. मंगल, चन्द्र, शनि वारों को तथा श्रवण, चित्रा, ध्रुव नक्षत्रों को, अमावास्या, रिक्ता, अष्टमी, तिथियों को छोड़कर अन्यत्र शुभ है॥

रुपया जमा करना या सूद में देना

लघु, चर, नक्षत्रों में तथा चर लग्न में शुभ है॥

ऋण लेना

मंगलवार के दिन, वृद्धियोग में, सूर्य्यसंक्रान्ति के दिन, धनिष्ठा आदि ५ नक्षत्रों में, अर्थात् पञ्चकों में, हस्त, द्विपुष्कर तथा त्रिपुष्कर योगों में ऋण नहीं लेना चाहिये। द्विपुष्कर, त्रिपुष्कर योग संज्ञाध्याय (पृष्ठ ४८) में देखने चाहियें॥ मंगलवार के दिन, सूर्य्य संक्रान्ति के दिन, वृद्धियोग में, हस्तनक्षत्र में, रविवार के दिन, ऋण नहीं लेना चाहिये। यदि कोई ले तो उसके वंश में सदा ऋण बना रहता है॥

धन संग्रह तथा ऋणच्छेद (कर्ज बेवाकी)

पूर्वोक्त मंगलवार आदि में करना चाहिये। बुधवार के दिन धन नहीं देना चाहिये परन्तु बुधवार के दिन धन संग्रह शुभ है॥ बुधवार के दिन धन कभी नहीं देना चाहिये॥

रुपया जमाकरना, कर्ज़ देना
अथवा रुपये की चोरी होना

मिश्र, क्रूर, तीक्ष्ण, नक्षत्र, वारों में तथा स्वाती नक्षत्र में दिया हुआ अथवा जमा किया हुआ अथवा खोया हुआ द्रव्य नहीं मिलता है ऐसा नारद जी का वचन है॥

कुआ आदि खोदना।

मघा, पुष्य, ध्रुव, मृगशिर, पूर्वाषाढ़ा, अनुराधा, रेवती, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त नक्षत्रों में, जब चन्द्रमा जलराशि का हो तथा लग्न में जब बुध तथा बृहस्पति हों तो शुभ है॥

क्षौर (हजामत)

जो नक्षत्र वार आदि चूडा कर्म में उक्त हैं उन्हीं में नित्य क्षौर भी शुभ है। नवें दिन हज़ामत नहीं बनवानी चाहिये। जो आदमी जीवित रहना चाहे वह चतुर्दशी के दिन क्षौर, अमावास्या के दिन स्त्री संग वर्जित करे। तेल लगाकर अथवा भोजन के उपरान्त अथवा स्नान करके अथवा भूषण आदि पहिन के क्षौर न करना चाहिये।

यात्रा के समय, युद्ध के आरम्भ मे, रात्रि में, तथा प्रात. सन्ध्या अथवा सायं सन्ध्या के समय, श्राद्ध के दिन, प्रतिपदा तथा रिक्ता तिथि के दिन, व्रत के दिन, वैधृतियोग में क्षौर न करना चाहिये॥

सब कामों में जन्म नक्षत्र श्रेष्ठ है, परन्तु क्षौर, यात्रा, औषधि सेवन, तथा विवाद (बहिस) में जन्म नक्षत्र शुभ नहीं है। षष्ठी, अमावास्या, पौर्णमासी, चतुर्दशी तथा अष्टमी, तैलाभ्यङ्ग, मैथुन, तथा क्षौर कर्म में वर्जित हैं। यदि नैमित्तिक (किसी कार्य्य के वश से) क्षौर करना हो तो निषिद्ध दिन में भी करना चाहिये। जैसे यज्ञ में, पिता आदि की मृत्यु होने पर, बन्धमोक्ष में, राजा अथवा ब्राह्मण की आज्ञा से। जो लोग राजकार्य्य मे लगे हों (सरकारी नोकर हों) तथा जो लोग रूपजीवी हों (भांड, नट आदि) उनके दाढ़ी मोछ बनवाने में अथवा नाखून कटवाने में काल की शुद्धि का विचार नहीं करना चाहिये।

छोटे बच्चों को तथा जीवत्पितृक को मुण्डन नहीं करवाना चाहिये। जहां मुण्डन का निषेध हो वहां कर्तन (कैंची से बाल छटवाना) कराना चाहिये। उत्तर अथवा पूर्व को मुख करके क्षौर कराना चाहिये। जिसका पिता जीवित हो अथवा जिसकी स्त्री गर्भवती हो उसको मुण्डन, पिण्ड-

दान, तथा सब प्रकार के प्रेत कर्म नहीं करने चाहिये। (परन्तु यह वचन माता पिता के विषय में नहीं है) ॥

शान्तिक कर्म

क्षिप्र, ध्रुव, रेवती, चर, अनुराधा, मघा नक्षत्रों में शान्तिक कर्म, मङ्गल, पौष्टिक मुहूर्त शुभ हैं। दशम सूर्य्य हो, सुख स्थान में चन्द्रमा हो, लग्न में बृहस्पति हो तो शुभ है, परन्तु शुक्रास्तादि दुष्ट समय में शुभ नहीं है, यदि निमित्त वश किया जाय तो शुभ है ॥

होमाहुति

सूर्य्य नक्षत्र से चन्द्रमा का नक्षत्र ३, ३ करके गिनना। उसमें क्रम से सूर्य्य, बुध, शुक्र, शनि, चन्द्रमा, मङ्गल, बृहस्पति, राहु, केतु होते हैं। यदि खल ग्रह हो तो होमाहुति शुभ नहीं है ॥

वह्निवास

वर्तमान तिथि में १ जोड़कर तथा वार की संख्या जोड़कर ४ से भाग दे। यदि ३ अथवा शून्य शेष रहे तो वह्निवास भूलोक में होता है, वह होम में सुख देने वाला होता है। यदि १ या २ शेष रहे तो क्रम से स्वर्ग में तथा भूतल में वह्निवास होता है, उसमें प्राण तथा अर्थ का नाश होता है ॥

अग्निचक्र

ग्रहण, विवाह, गण्डान्त, दुर्गोत्सव में अग्नि चक्र का विचार नहीं करना चाहिये, परन्तु ग्रहशान्ति में विचार करना चाहिये ॥१॥

व्रतबन्ध, विवाह, नवरात्र, नित्य कर्म, कुल देवता के पूजन में अग्नि चक्र का विचार नहीं करना चाहिये ॥२॥

विवाह, चूडाकर्म, व्रतबन्ध, गोचर, उत्पात, शान्ति, ग्रहण, युगादि, दुर्गाविधान, तथा जन्म समय में अग्निचक्र का शोधन नहीं करना चाहिये ॥३॥

विवाह, व्रतबन्ध, यज्ञ, विष्णु की पूजा, दुर्गा की पूजा, पुत्र जन्म आदि में अग्नि चक्र का विचार नहीं किया जाता है ॥४॥

दुर्गभङ्ग, गृह, विवाद, शत्रु वैर, शान्ति तथा राजा के क्रोध में, अग्नि चक्र का विचार होता है ॥५॥

रोगनिर्मुक्त स्नान

रेवती, पुनर्वसु, ध्रुव, मघा, स्वाती अश्लेषा, नक्षत्रों को छोड कर, रिक्तातिथि, तथा चर लग्न में, शुक्र तथा चन्द्रवार को छोड़कर, चन्द्रमा जब हीन हो, पाप ग्रह ग्यारहवें स्थान में, केन्द्र, अथवा कोण में हों, तब रोग रहित मनुष्य को स्नान कराना शुभ है ॥

सर्वारम्भ

जब १२,८, उपचय (३।६।११) स्थान शुद्ध हों, लग्न में शुभ ग्रह हों अथवा शुभ ग्रह की दृष्टि हो, ३,६,१०,११ स्थानों में चन्द्रमा हो तो सर्वारम्भ शुभ होता है ॥

दन्तधावन

षष्ठी, प्रतिपदा, अमावास्या, तथा रविवार वर्जित हैं ॥

तेल लगाना, स्त्री सङ्ग तथा मांस भोजन

पौर्णमासी, अमावास्या, संक्रान्ति, चतुर्दशी, अष्टमी के दिन यदि मनुष्य तेल, स्त्री तथा मांस का सेवन करे तो चाण्डाल योनि में उत्पन्न होता है। सप्तमी तथा रविवार भी तैलाभ्यङ्ग में वर्जित हैं ॥

दीक्षा पुरश्चरण

सूर्य चन्द्र ग्रहण में अथवा महातीर्थ में कालाकाल का निर्णय न करना चाहिये ॥

गर्म पानी से स्नान

रविवार, संक्रान्ति, ग्रहण, अमावस्या, व्रत, षष्ठी तिथि, इतने दिन गर्मपानी से स्नान न करना चाहिये ॥

तात्कालिकी तिथि

स्नान, अभ्यञ्जन, दन्तधावन, मैथुन, जन्म, तथा मरण में तात्कालिकी तिथि लेनी चाहिये ॥

वर्जित

नन्दा तिथियों में अभ्यङ्ग (उवटन), रिक्ता तिथियों में क्षौर, जया तिथियों में मांस, पूर्णा तिथियों में स्त्री सेवन वर्जित करना चाहिये।

रविवार को अभ्यङ्ग भौमवार को क्षौर, बुध को स्त्री सेवन वर्जित करना चाहिये।

चित्रा, हस्त, श्रवण नक्षत्रों में तेल, विशाखा तथा प्रतिपदा के दिन क्षौर, मघा, कृत्तिका तीनों उत्तराओं में स्त्री सेवन, द्वादशी तिथि को मसूर की दाल, तथा त्रयोदशी में वृन्ताक (बैंगन) वर्जित हैं॥

रोगोत्पत्तौ नक्षत्रफलम्.

अश्विन्यांरोगोत्पत्तौएकाहंनवदिनानि पंचविंशतिर्दिनानिवा पीडा।

भ. ११।२१ दिनानि. मासंवा. मृत्युर्वा.
कृ. १०।६।२१ ,,
रो. १०।६।७।३ ,,
मृ ५।६।३० ,,
आ १०।३० ,, मृत्युर्वा
पुन ७।६ ,, ,,
पु ७ ,, ,,
अ २०।३०।६ ,, ,,
म ४५।३०।२० ,, ,,
पू १५।३०।६० ,, ,, एकवर्षंवा
उ ७।१५।२७ ,,
ह ८।६।७।१५ ,, मृत्युर्वा
चि ८।१०।११।१५,, ,,
स्वा १० दिनानि. ,, १।१।३।४।५ मासंवा
वि मासं. पक्षः, ८।२० दिनानिवा
अ १०।२८ दिनानि

ज्ये २१ दिनानि. मासं. पक्षः, मृत्युर्वा
मू ६।२०। दिनानि. पक्षः ,,
पू २०।१५ दिनानि ,, २।३।६ मासं वा
उ २०।४५।३० ,,
श्र २५।१०।११।६० ,,
ध १०।१५।३०।१३ ,,
श १२।११ दिनानि
पू १० दिनानि २।३ मासं वा मृत्युर्वा
उ ७।१०।१५।४५ दिनानि
रे. १०।२८ दिनानि

(अर्थ)

जब अश्विनी नक्षत्र में रोग उत्पन्न हो तो एक दिन, नौ दिन अथवा पचीस दिन पीडा होती है इत्यादि चक्रमें स्पष्ट है। अथवा नक्षत्रों के तारों की जितनी संख्या हो (१०५३) उतने ही दिन रोग भी रहता है ॥

रोगोत्पत्तौ मृत्युयोग'

रौद्राहिशक्राम्बुपयाम्यपूर्वा
द्विदैववस्वग्निषु पापवारे।
रिक्ताहरिस्कन्ददिने च रोगे
शीघ्रं भवेद्रोगिजनस्य मृत्युः ॥

(अर्थ)

यदि आर्द्रा, अश्लेषा, ज्येष्ठा, उत्तराषाढा, भरणी, तीनों पूर्वा, विशाखा, धनिष्ठा, कृत्तिका नक्षत्रों में, पापवारों में, रिक्ता, द्वादशी, षष्ठी तिथि के दिन रोग उत्पन्न हो तो रोगी को शीघ्र मृत्यु होती है ॥

(२) वास्तु प्रकरणम्.

गृहारम्भे वेधविचारः

(चतुर्विंशत्यङ्गुलोहस्तश्चतुःकरोदंडः)

जालन्धरे हस्त संख्या पर्वते दंडकाः स्मृताः ।
मध्यदेशे क्रोशसंख्या द्वीपान्तरे तुयोजनम् ॥१॥
आदावुदीच्या विन्यस्य पश्चाद्याम्यां तु विन्यसेत् ।
तद्गृह पीड्यते तत्र पुत्रदारादिनाशनम् ॥२॥
यदाग्नेय्यां भवेन्नीच मुच्चं वायव्यएव च ।
नवेधो जायते तत्र व्यासस्य वचनं यथा ॥३॥
दश दंडविपर्यन्तं वेधयेत् पूर्वनीचकम् ।
उत्तरे द्वादशं याव न्नीचस्थानस्थितस्यतु ॥४॥
उच्चस्थं वापि नीचस्थं सदा याम्यगृहं त्यजेत् ॥५॥
गृहोच्छ्रायाद्द्विगुणिता त्यक्ता भूमिर्वहिः स्थिता ।
अदर्शने नदीपारे दूरेवा समभूमिषु ।
नवेध्यन्ते गृहाः सर्वे यत्रोक्तविदिशिस्थिताः ॥६॥
वीथ्यन्तरे नवेधस्तु नवेधो मार्गमध्यतः ।
भित्त्यन्तरे नदोषः स्यान्न दोषो वृक्षमध्यगे ॥
न दोषो नीचजातेश्च नदोषः फलवृक्षके ॥७॥

(अर्थ)

२४ अङ्गुल का एक हस्त होता है, ४ हस्तों का एक दण्ड होता है ॥ जालन्धर देश में हस्त संख्या, पर्वत में दण्ड संख्या, मध्यदेश में क्रोश संख्या, अन्य द्वीपों में योजन संख्या से वेध होता है ॥१॥

यदि आदि में उत्तर दिशा में घर बन गया हो पीछे दक्षिणदिशा में घर बने तो वह दक्षिण दिशा वाला घर वेध युक्त होता है, पुत्र स्त्री आदि का नाश करने वाला होता है ॥२॥

जब आग्नेय दिशा में नीचा हो, वायव्य दिशा में ऊंचा हो तो वेध नहीं होता है ऐसा व्यास जी का वचन है ॥३॥

पूर्व दिशा में नीच स्थान में स्थित घर का १० दण्ड पर्य्यन्त वेध होता है, उत्तर में नीच स्थान में स्थित घर का १२ दण्ड पर्य्यन्त वेध होता है ॥४॥

दक्षिण की ओर का घर चाहे ऊचा हो चाहे नीचा हो सदा वर्जित करना चाहिये ॥५॥

जब घर की ऊचाई से दुगुनी भूमि बाहर को छूटी हो, अथवा जहां से घर पर दृष्टि न पड़े, अथवा बीच में नदी पड़ जावे, अथवा बहुत दूर हो, अथवा समभूमि हो, अथवा विदिशाओं में घर हो, तो वेध नहीं होता है ॥ ६ ॥

यदि बीच में गली पड जावे तो वेध नहीं होता है, बीच में मार्ग पड़े तो वेध नहीं होता है, बीच में दीवाल पडने से भी वेध नहीं होता है, नीच जाति के घर का वेध नहीं होता है, फलका वृक्ष बीच में हो तब भी दोष नहीं होता है ॥७॥

गृहारम्भः

भौमार्करिक्तामाद्यूने चरोनेऽङ्गे विपञ्चके ।
व्यन्त्याष्टस्थैः शुभैर्गेहारम्भ स्त्र्यायारिगैः खलैः ॥१॥
ध्रुवमृदु वरुण स्वाति वस्वर्क पुष्यै (गृहारम्भं कुर्यात्) ।
गृहेश तत्स्त्री सुख वित्तनाशोऽर्केन्द्वीज्य शुक्रे विबलेऽस्तनीचे ॥२॥
जीवार्क विच्छुक्र शनैश्चरेषु लग्नारि जामित्र सुखत्रिगेषु ।
स्थितिः शतं स्याच्छरदां सितार्को रेज्ये तनुव्यङ्ग सुतेशतेद्वे ॥३॥
लग्नाम्बरायेषु भृगुज्ञभानुभिः केन्द्रे गुरौ वर्ष शतायु रालयम् ।
बन्धौगुरुर्व्योम्नि शशीकुजार्कजौलाभेतदाशीतिसमायुरालयम् ॥४॥
स्वोच्चे शुक्रे लग्नगेवा गुरौ वेश्म गतेऽथवा ।
शनौ स्वोच्चे लाभगेवा लक्ष्म्या युक्तं चिरं गृहम् ॥५॥

पुष्यध्रुवेन्दुहरिसर्पजलैःसजीवैस्तद्वासरेणचकृतंसुतराज्यदं स्यात् ।
द्वीशाश्वितक्षवसुपाशिशिवैःसशुक्रैर्वारेसितस्यचगृहंधनधान्यदंस्यात्
सारैः करेज्यान्त्यमघांबु मूलैःकौजेह्निवेश्माग्निसुतार्तिदं स्यात् ।
सज्ञैः कदास्रार्यमतक्षहस्तैर्ज्ञस्यैववारे सुखपुत्रदं स्यात् ॥७॥
अजैकपादहिर्बुध्न्य शक्रमित्रानिलान्तकैः ।
समन्दैर्मन्दवारे स्याद्रक्षोभूतयुतं गृहम् ॥८॥
गुरु शुक्रार्क चन्द्रेषु स्वोच्चादिवलशालिषु ।
गुर्वर्केन्दुवलं लब्ध्वा गृहारम्भः प्रशस्यते ॥९॥
विवाहोक्तान्महादोषा नृते यामित्रशुद्धितः ।
रिक्ता कुजार्कवारौच चरलग्नं चरांशकम् ।
त्यक्त्वा कुजार्कयोश्चांशं कुर्याद्गेहं शुभाप्तये ॥१०॥
दत्ते दुःखं तृतीयर्क्षं पञ्चमर्क्षं यशःक्षयम् ।
आयुःक्षयं सप्तमर्क्षं कर्तृभाद्गृहभावधि ॥११॥
गृहसंस्थापनं सूर्ये मेषस्थे शुभदं भवेत् ॥
वृषस्थे धनवृद्धिः स्यान्मिथुने मरणं ध्रुवम् ॥१२॥
कर्कटे शुभदं प्रोक्तं सिंहे भृत्यविवर्धनम् ।
कन्या रोगं तुला सौख्यं वृश्चिके धनवर्धनम् ॥१३॥
कार्मुके च महाहानिर्मकरेस्याद्धनागमः ।
कुम्भेतु रत्नलाभः स्यान्मीने सद्मभयावहम् ॥
मीनचापमिथुनाङ्गनागते कारयेन्न गृहमेव भास्करे ॥१४॥
चित्रानुराधा मृग रेवतीषु स्वातौ च पुष्येच तथोत्तरासु ।
ब्राह्मे धनिष्ठा शततारकासु गेहादिकारम्भण मामनन्ति ॥१५॥
चित्रा शतभिषा स्वाती हस्तः पुष्यपुनर्वसू ।
रोहिणी रेवती मूलं श्रवणोत्तरफल्गुनी ॥१६॥

धनिष्ठाचोत्तराषाढा तथा भाद्रोत्तरान्विता ।
अश्विनी मृगशीर्षंच अनुराधा तथैव च ॥१७॥
वास्तुपूजनमेतेषु नक्षत्रेषु करोति यः ।
समाप्नोति नरो लक्ष्मी मिति प्राह पराशरः ॥१८॥
त्र्युत्तरेपिच रोहिण्यां पुष्ये मैत्रे करद्वये ।
धनिष्ठाद्वितये पौष्णे गृहारम्भः प्रशस्यते ॥१९॥
द्व्यङ्गे वा स्थिरभे च सौम्य सहिते लग्ने शुभै र्वीक्षिते—
सिंह विहीन लग्ने ॥२०॥

(अर्थ)

मङ्गलवार, रविवार, रिक्तातिथि, अमावास्या तथा प्रतिपदा को छोड कर, चर लग्न को छोड कर, (बाण) पञ्चक को छोड कर, जब शुभ ग्रह १२,८ स्थानों में नहीं, पाप ग्रह ३,६,११ स्थानों में हों तो गृहारम्भ शुभ है ॥ १ ॥

ध्रुव, मृदु, शतभिषा, स्वाती, धनिष्ठा, हस्त, पुष्य, नक्षत्र शुभ हैं ॥
जब सूर्य्य, चन्द्रमा, बृहस्पति, शुक्र बलहीन हों, अस्तङ्गत हों अथवा नीच के हों तो घर के स्वामी, उसकी स्त्री, सुख तथा धन का नाश होता है ॥ २ ॥

जब बृहस्पति, सूर्य्य, बुध, शुक्र, शनि, १,६,७,४,३ स्थानों में हों तो घर की स्थिति एक सौ बरस की होती है। यदि शुक्र, सूर्य्य, मङ्गल, बृहस्पति, १, ३, ६, ५ स्थानों में हों तो घर की आयु दो सौ बरस की होती है ॥ ३ ॥

जब लग्न, १०,११ स्थानों में शुक्र, बुध तथा सूर्य्य हों, केन्द्र में बृहस्पति हो तो घर की आयु सौ बरस की होती है। जब चतुर्थ स्थान में बृहस्पति हो, दशम स्थान में चन्द्रमा हो, लाभ स्थान में मंगल तथा शनि हो तो घर की आयु ८० वर्ष की होती है ॥ ४ ॥

जब शुक्र उच्च का होकर लग्न में बैठा हो, अथवा बृहस्पति चौथे स्थान में हो, अथवा शनि अपने उच्च का होकर लाभ स्थान में हो, तो घर लक्ष्मी से युक्त तथा चिरस्थायी होता है ॥ ५ ॥

पुष्य, ध्रुव, मृगशिर, श्रवण, अश्लेषा, पूर्वाषाढा नक्षत्रों में बृहस्पति हो तथा बृहस्पति वार भी हो तो पुत्र तथा राज्य की प्राप्ति होती है। विशाखा, अश्विनी, चित्रा, धनिष्ठा, शतभिषा, आर्द्रा, नक्षत्रों में शुक्र हो तथा शुक्र वार भी हो तो घर धन धान्य देने वाला होता है ॥६॥

हस्त, पुष्य, रेवती, मघा, पूर्वाषाढ़ा, मूल नक्षत्रों में मंगल हो तथा मङ्गल वार भी हो तो घर मे अग्नि भय होता है तथा पुत्र को पीडा होती है। रोहिणी, अश्विनी, उत्तरा फल्गुनी, चित्रा, हस्त, नक्षत्रों मे बुध हो तथा बुध वार भी हो तो सुख तथा पुत्र की प्राप्ति होती है ॥७॥

पूर्वा भाद्रपदा, उत्तरा भाद्रपदा, ज्येष्ठा, अनुराधा, स्वाती, भरणी नक्षत्रों में शनि हो तथा उसीका वार भी हो तो घर मे राक्षस तथा भूत होते हैं ॥ ८ ॥

जब बृहस्पति, शुक्र, सूर्य्य तथा चन्द्रमा अपने उच्च स्थान आदि में बलवान् हों, बृहस्पति, सूर्य्य, तथा चन्द्रमा का बल लेकर गृहारम्भ करना चाहिये ॥९॥

यामित्र के विना शेष विवाहोक्त महादोषों को, तथा रिक्तातिथि, रविवार तथा मंगल वार, चर लग्न अथवा चर लग्न का नवांशक, अथवा सूर्य्य तथा मंगल के नवांशक को छोड़ कर गृहारम्भ करना चाहिये ॥१०॥

घर बनाने वाले के नक्षत्र से गृहारम्भ के नक्षत्र तक गिनने से तीसरा नक्षत्र दुःख देता है, पांचवा नक्षत्र यश का नाश करता है, सातवां नक्षत्र आयु का क्षय करता है ॥११॥

जब सूर्य्य मेष का हो तो घर का स्थापन करना शुभ है, जब वृष का हो तो धन की वृद्धि होती है, जब मिथुन का हो तो मृत्यु होती है ॥१२॥

जब कर्क का हो तो शुभ होता है, सिंह का हो तो भृत्यों की वृद्धि होती है, जब कन्या का हो तो रोग होता है, तुला का हो तो सुख होता है, वृश्चिक का हो तो धन की वृद्धि होती है ॥१३॥

धन का हो तो बड़ी हानि होती है, मकर का हो तो धन की प्राप्ति होती है, कुम्भ का हो तो रत्न का लाभ होता है, मीन का हो तो भय होता है ॥

जब सूर्य्य मीन, धन, मिथुन तथा कन्या का हो तो नया घर न बनवाना चाहिये ॥१४॥

चित्रा, अनुराधा, मृगशिर, रेवती, स्वाती, पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्रों मे गृहारम्भ शुभ है ॥१५॥

चित्रा, शतभिषा, स्वाती, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, रोहिणी, रेवती, मूल, श्रवण, उत्तरफल्गुनी, धनिष्ठा, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा, अश्विनी, मृगशिर, अनुराधा नक्षत्रों में जो मनुष्य वास्तु पूजन करता है उसको लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ऐसा पाराशर कहते हैं ॥१६।१७।१८॥

तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुष्य, अनुराधा, हस्त, चित्रा, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती नक्षत्रों में गृहारम्भ शुभ है ॥१९॥

गृहारम्भ में द्विस्वभाव, अथवा स्थिर लग्न होना चाहिये, जिस में शुभ ग्रह बैठे हों अथवा जिस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो।

सिंह लग्न वर्जित करना चाहिये ॥२०॥

गृहारम्भे वृषचक्रशुद्धिः

(सूर्यभाद् दिनभ यावद् गणना)

शीर्षे	३	नक्षत्राणि.	फलं	दाहः
अग्रपादे	४	,,	,,	शून्यम्
पृष्ठपादे	४	,,	,,	स्थिरता
पृष्ठे	३	,,	,,	लक्ष्मीप्राप्तिः

दक्षिणकुक्षौ	४	नक्षत्राणि	फलं	लाभः
पुच्छे	३	,,	,,	स्वामिनाशः
वामकुक्षौ	४	,,	,,	दारिद्र्यम्
मुखे	३	,,	,,	पीडा
	२८			

प्रकारान्तरेण

सूर्यभात्	७	अशुभानि
	११	शुभानि
	१०	अशुभानि
	२८	

(अथ)

सूर्य नक्षत्र से दिन नक्षत्र पर्यन्त गिनती करनी चाहिये। फल ऊपर लिखा है॥

गृह प्रवेशः

सौम्यायने ज्येष्ठतपोन्त्यमाधवे
यात्रानिवृत्तौ नृपतेर्नवे गृहे।
स्याद्वेशनं द्वाःस्थमृदुध्रुवोडुभि
र्जन्मर्क्षलग्नोपचयोदये स्थिरे॥१॥

मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु मूलभे
वास्त्वर्चनं भूतबलिश्च कारयेत्।
त्रिकोणकेन्द्रायधनत्रिगैः शुभै
र्लग्नात्त्रिषष्ठायगतैश्च पापकैः॥२॥

षष्ठ्यष्टमीविष्णुदिनानि रिक्तां
विहाय चित्रोत्तररोहिणीश्च।

मृगान्त्यमैत्रे शनिवित्सितेज्ये
निवृत्य गेहं प्रविशेत्प्रयाणात् ॥३॥
स्थिरेऽङ्गेशे शुभे स्थं कोणकेन्द्रत्रिलाभगैः ।
पापैर्लाभत्रिषट्संस्थैः शुद्धे तुर्ये तथाष्टमे ॥४॥
क्रूरग्रहाधिष्ठितविद्धभं च विवर्जनीयं त्रिविधप्रवेशे ॥
कृत्वा शुक्रं पृष्ठतो वामतोऽर्कम् ॥५॥
रन्ध्रात्पुत्राद्धनाद्द्वारात्प चस्वर्के स्थिते क्रमात् ।
पूर्वाशादि मुखं गेहं विशेद्वामो भवेद्यतः ॥६॥

(अर्थ)

उत्तरायण में, ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन, वैशाख के महीनों में, मृदु, ध्रुव, नक्षत्रों में, स्थिर लग्न में, जन्म राशि अथवा जन्म लग्न से उपचय (३।६।१०।११) लग्न हो तो गृहप्रवेश शुभ है ॥१॥

मृदु, ध्रुव, क्षिप्र, चर, मूल, नक्षत्रों में, जब लग्न से त्रिकोण, केन्द्र, लाभ, धन, पराक्रम में शुभ ग्रह हों तथा ३, ६, ११ स्थानों में पाप ग्रह हों तो वास्तु पूजन तथा भूतबलि करना शुभ है ॥२॥

षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी, रिक्ता तिथियों को छोड़ कर, चित्रा, तीनों उत्तरा, रोहिणी नक्षत्रों को छोड़ कर, मृगशिर, रेवती, अनुराधा नक्षत्रों में, शनि, बुध, शुक्र, बृहस्पति वारों में, गृहप्रवेश करना चाहिये ॥३॥

जब लग्नेश स्थिर लग्न में हो, धन, कोण, केन्द्र, पराक्रम तथा लाभ स्थानों में शुभ ग्रह हों, ३, ६, ११ स्थानों में पाप ग्रह हों, चतुर्थ तथा अष्टम स्थान शुद्ध हों, ऐसे मुहूर्त में गृह प्रवेश शुभ है ॥४॥

जब क्रूर ग्रह से नक्षत्र विद्ध हो तो तीनों प्रकार का गृह प्रवेश (नया, पुराना, मरम्मत किया हुआ) वर्जित है। शुक्र पृष्ठ में होना चाहिये (पृ. ६८७ देखो) तथा सूर्य बांया होना चाहिये ॥५॥

जब ८,५,२,७, स्थानों से पंचम स्थान में सूर्य हो तो पूर्व आदि दिशा को मुख वाले घर में प्रवेश करना चाहिये। ऐसा करने से सूर्य्य पूर्व आदि दिशाओं में यथाक्रम वांया हो जाता है ॥६॥

गृहप्रवेशे कुम्भचक्रम्.

रविभाद्दिननक्षत्रपर्यन्तं गणना—

मुखे	१	अग्निदाहः
पूर्वे	४	वासशून्यम्
दक्षिणे	४	लाभः
पश्चिमे	४	लक्ष्मीः
उत्तरे	४	कलहः
गर्भे	४	नाशः
गुदे	३	स्थिरता
कण्ठे	३	स्थिरता
	२७	

(अर्थ)

सूर्य नक्षत्र से दिन नक्षत्र पर्यन्त गिनती करनी चाहिये। फल ऊपर लिखा है ॥

देवप्रतिष्ठादि मुहूर्तः

जलाशयारामसुरप्रतिष्ठा
सौम्यायने जीवशशाङ्कशुक्रे।
दृश्ये मृदुक्षिप्रचरध्रुवे स्यात्
पक्षे सिते स्वर्क्षतिथिक्षणेवा ॥
(यथा विष्णोः श्रवणभम्। शिवस्यार्द्रेत्यादयः) ॥१॥
रिक्तारवर्जे दिवसेऽतिशस्ता
शशाङ्कपापैस्त्रिभवाङ्गसंस्थैः।
व्यन्त्याष्टगैः सत्खचरैः ॥२॥

(अर्थ)

जलाशय, वगीचा, अथवा मन्दिर की प्रतिष्ठा उत्तरायण में, जब बृहस्पति, चन्द्रमा, शुक्र उदय हों अर्थात् अस्त न हों, मृदु, क्षिप्र, चर, ध्रुव नक्षत्रों में, शुक्ल पक्ष में, अपने नक्षत्र अपनी तिथि तथा अपने मुहूर्त में करने चाहिये (अपने नक्षत्र आदि से यह अभिप्राय है कि जैसे श्रवण नक्षत्र का स्वामी विष्णु है, आर्द्रा नक्षत्र का स्वामी शिव है, इसलिये विष्णु के मन्दिर की प्रतिष्ठा श्रवण नक्षत्र में, शिव के मन्दिर की प्रतिष्ठा आर्द्रा नक्षत्र में करनी चाहिये इत्यादि) ॥१॥

रिक्ता तिथि तथा मंगल वार को छोड़ कर, जब चन्द्रमा तथा पाप ग्रह ३,११,६ स्थानों में हों तथा शुभ ग्रह १२,८ स्थानों में न हों, ऐसे मुहूर्त में प्रतिष्ठा शुभ है ॥२॥

(३) यात्रा प्रकरणम्

सम्मुखचन्द्रादयः

कर्क वृश्चि. मी.
(उ)

मि. तु. कुं. (प) —————— (पू) मे. सिं. ध.

(द) वृष. कन्या. म.

मेषेचसिंहे धनुषीन्द्रभागे
तथोक्षकन्यामकरेषुयाम्याम् ।
द्वन्द्वे तुलायां घटभेप्रतीच्यां
तथोत्तरे कर्कझषालिगोऽब्जः ॥

यथा मेषे चन्द्रः । तर्हि पूर्वयात्रायां सम्मुखः
पश्चिम यात्रायां पृष्ठः
उत्तर यात्रायां दक्षिणः
दक्षिण यात्रायां वामः

पृष्ठे चन्द्रे भवेन्मृत्यु र्वामे चन्द्रे धनक्षयः
दक्षिणे चार्थलाभः स्यात्सम्मुखे सुखसम्पदः ॥

(अर्थ)

जब मेष, सिंह, धन का चन्द्रमा हो तो पूर्व दिशा को चन्द्रमा सम्मुख होता है, जब वृष, कन्या, मकर का चन्द्रमा हो तो दक्षिण दिशा को सम्मुख होता है, जब मिथुन, तुला, कुम्भ का चन्द्रमा हो तो पश्चिम को सम्मुख होता है, कर्क, वृश्चिक, मीन का चन्द्रमा हो तो उत्तर को सम्मुख होता है ॥

इसका अभिप्राय यह है । मानलो कि आज के दिन चन्द्रमा मेष राशि में है यदि पूर्व दिशा को यात्रा की जाय तो सम्मुख चन्द्रमा होगा, यदि आज के दिन पश्चिम दिशा को यात्रा की जाय तो पृष्ठ चन्द्रमा हो जायगा, यदि उत्तर दिशा को यात्रा की जाय तो दक्षिण चन्द्रमा होगा, यदि दक्षिण दिशा को यात्रा की जाय तो वाम चन्द्रमा होगा । इसी प्रकार से अन्यत्र समझना चाहिये ॥

फल

पृष्ठ चन्द्रमा में यात्रा करने का फल मृत्यु है । वाम चन्द्रमा का फल धन का नाश है । दक्षिण चन्द्रमा का फल धन लाभ है । सम्मुख चन्द्रमा का फल सुख तथा सम्पत्ति है ॥

(सम्मुख तथा दक्षिण चन्द्रमा शुभ हैं, पृष्ठ तथा वामे चन्द्रमा अशुभ हैं। अत्यन्त आवश्यकता में वाम चन्द्रमा स्वीकार हो सकता है परन्तु पृष्ठ चन्द्रमा कदापि नहीं।)

वारदोषाः (दिशाशूल वा)

चन्द्रे मन्दे नच प्राचीं न गच्छेद् दक्षिणां गुरौ।
न प्रतीचीं रवौ शुक्रे बुधे भौमे नचोत्तराम् ॥१॥
नाग्निकोणे गुरौचन्द्रे नैर्ऋत्ये नार्कशुक्रयोः।
मारुते न कुजे गच्छे दीशाने न कुजार्कजे ॥२॥
नवारदोषाः प्रभवन्तिरात्रौ
देवेज्यदैत्यज्यदिवाकराणाम्।
दिवाशशाङ्कार्कजभूसुतानां
सर्वत्र निन्द्यो बुधवारदोषः ॥३॥

(अर्थ)
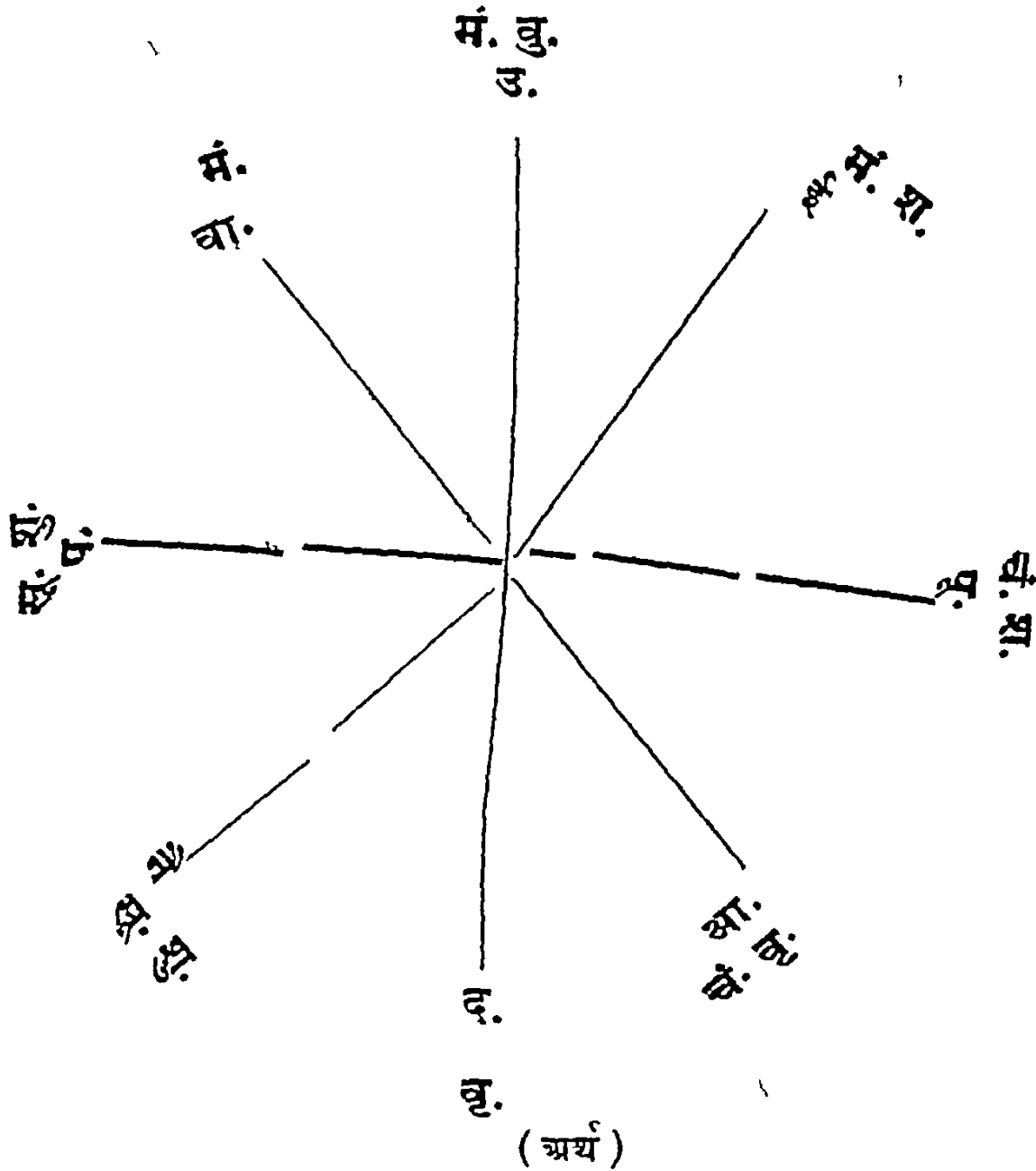
चन्द्र तथा शनिवार को पूर्व दिशा की यात्रा न करे, बृहस्पति वार को दक्षिण दिशा की यात्रा न करे, रविवार तथा शुक्रवार को पश्चिम की यात्रा न करे, बुध तथा मंगलवार को उत्तर की यात्रा न करे। (इसी को वारदोष अथवा दिशाशूल कहते हैं) ॥१॥

बृहस्पति तथा चन्द्र वार को आग्नेय कोण की यात्रा न करे, रवि तथा शुक्रवार को नैऋंत्य कोण की यात्रा न करे, मंगल वार को वायव्य की यात्रा न करे, मंगल तथा शनि वार को ईशान की यात्रा न करे ॥२॥

बृहस्पति, शुक्र तथा सूर्य्य का वारदोष रात्रि की यात्रा में नहीं होता है, चन्द्रमा शनि तथा मगल का वारदोष दिन में नहीं होता है, परन्तु बुधवार का दोष रात दिन में उभयत्र वर्जित है। (यह वचन आवश्यक में परिहार है। जहां तक सम्भव हो वारदोष रात दिन में उभयत्र वर्जित करना चाहिये) ॥३॥

योगिनी.

पूउआनैदपावाई दिक्षु प्रतिपदादितः।
योगिनी सम्मुखेत्याज्या द्यूते वादे रणे गमे ॥१॥
योगिनी सुखदा वामे पृष्ठे वाञ्छितदायिनी।
दक्षिणे धनहन्त्री च सम्मुखे मरणप्रदा ॥२॥
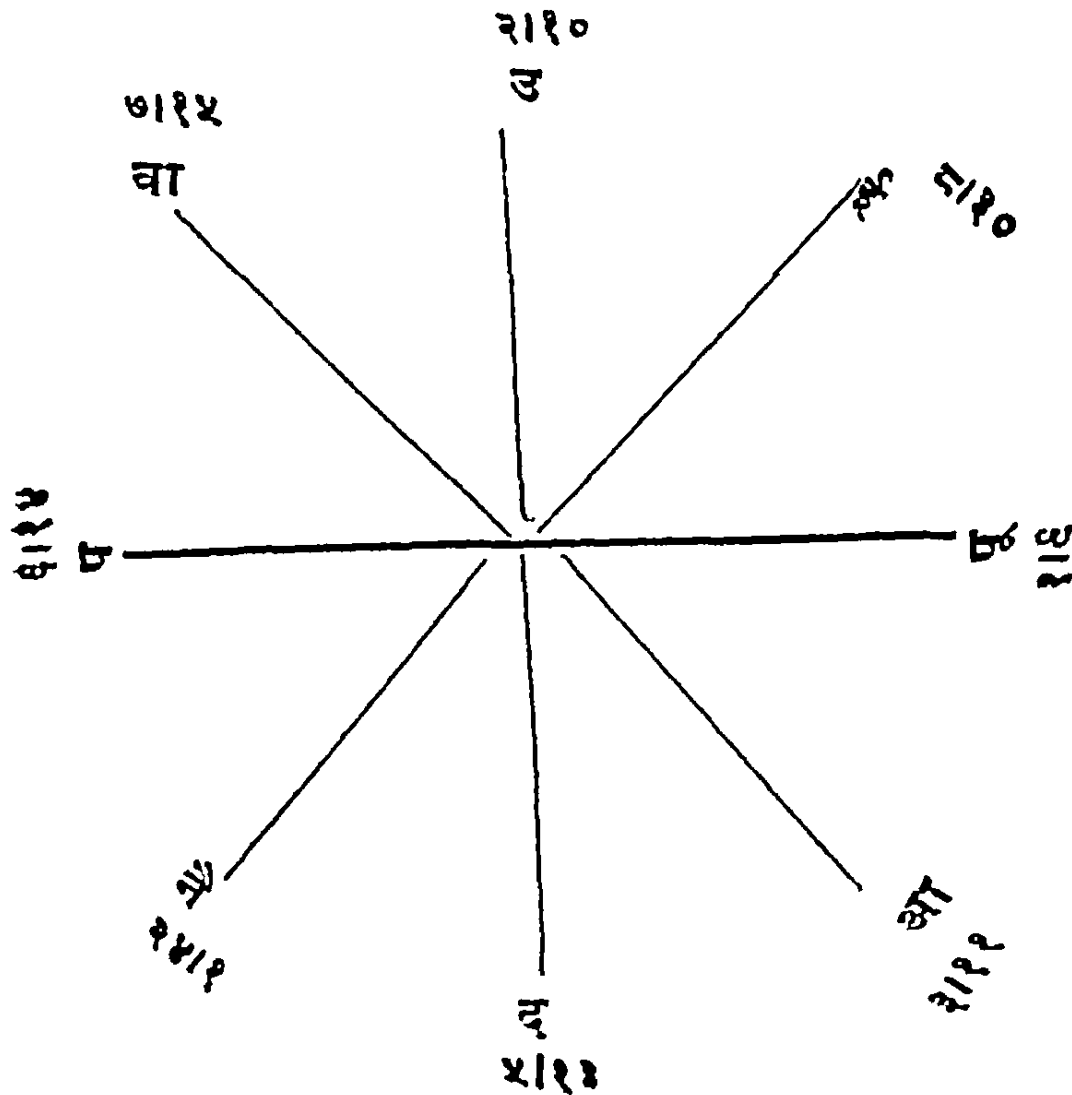
(अर्थ)

प्रतिपदा आदि तिथियों में पूर्व, उत्तर, आग्नेय, नैऋत्य, दक्षिण, पश्चिम, वायव्य, ईशान में यथाक्रम योगिनी होती है। (यह बात चक्र से स्पष्ट समझने में आजवेगी)। जुआ खेलने में, वहिस में, संग्राम में, यात्रा में सम्मुख योगिनी वर्जित है ॥१॥

योगिनी वाम में हो तो सुख मिलता है, पृष्ठ में हो तो अभीष्ट कार्य सिद्ध होते हैं, दक्षिण में हो तो धन का नाश होता है, सम्मुख हो तो मृत्यु होती है ॥२॥

काल पाशः (काल राहुः)

कौवेरीतो वैपरीत्येन कालो वारेऽर्काद्ये सम्मुखे तस्य पाशः।
रात्रावेतौ वैपरीत्येन गण्यौ यात्रायुद्धे सम्मुखे वर्जनीयौ ॥१॥
दक्षिणस्थः शुभ. कालः पाशो वामदिशि स्थितः ॥२॥
(कालात्पंचमे पाशः। रात्रौ पाशस्थाने कालः कालस्थानेपाशः)

(अर्थ)
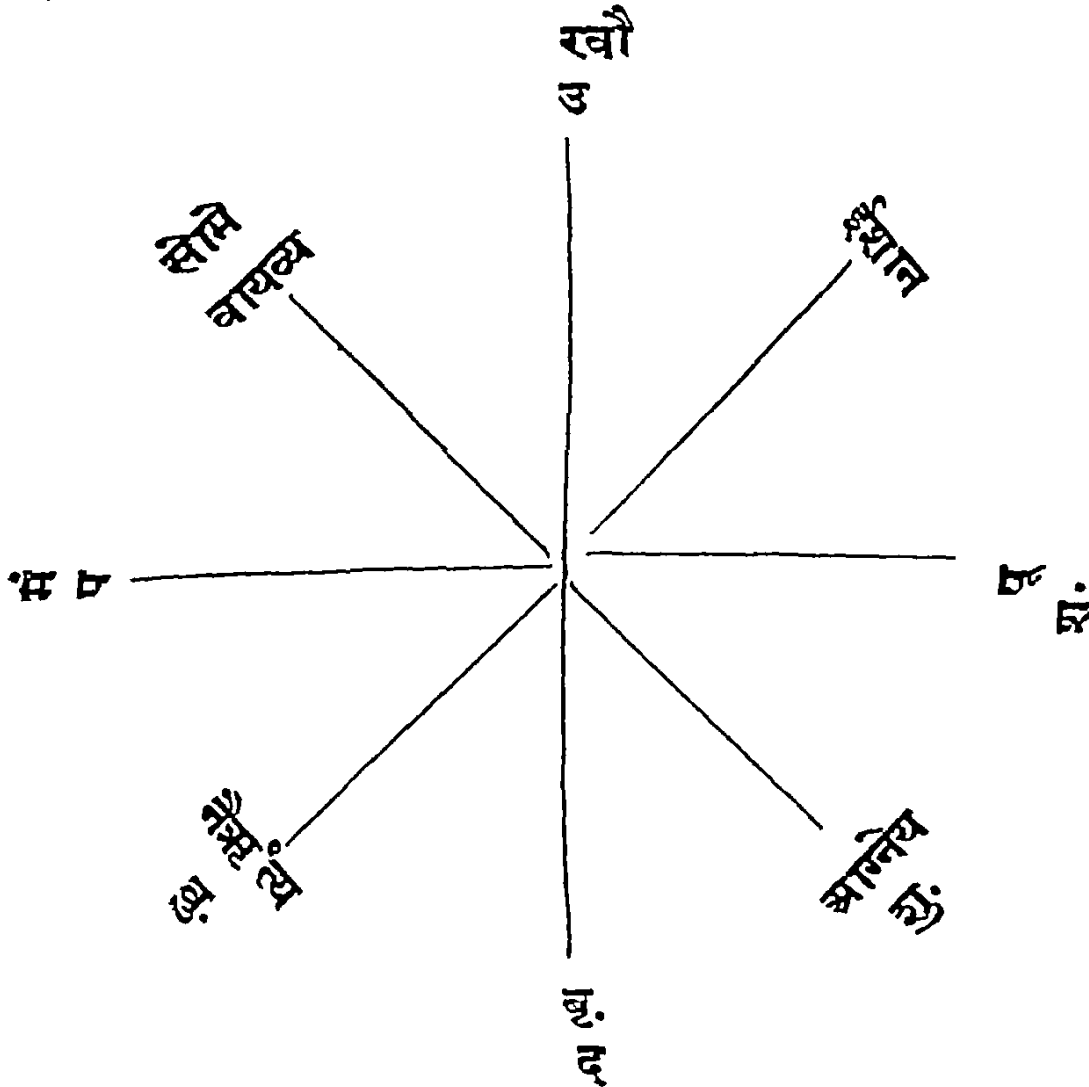
सूर्य्य आदि वारों को उत्तर आदि दिशाओं में बांई ओर गिनने से क्रमशः काल जानना चाहिये। उसी काल के सामने अर्थात् उससे पांचवां पाश होता है। रात्रि में इनको विपरीत गिनना चाहिये अर्थात् काल के स्थान में पाश तथा पाश के स्थान में काल। यात्रा तथा युद्ध में सम्मुख का काल अथवा पाश वर्जित करना चाहिये। काल दक्षिण की ओर शुभ होता है तथा पाश बांई ओर शुभ होता है ॥

लालाटिक योगः

प्राच्यां लग्नगतो ललाटग इनश्चन्द्रोऽरिपुत्रोपगो
वायव्यां यमदिश्यस्रग्दशमगो ज्ञोऽप्युत्तरस्यां सुखे।
ऐशान्यां त्रिघने गुरुर्दहनदिश्यायव्ययस्थो भृगु
र्वारुण्यां मदगोऽर्कजोऽष्टनवगो राहुस्त्यजेन्नैर्ऋतिम् ॥१॥
लालाटेऽग्निभयं करोति दिनकृत्कोशक्षयं लोहितः
सापत्नैर्विजयं शशाङ्कतनयः सेनाविमर्दं गुरुः।
मृत्युं भास्करनन्दनो नरपते व्याधिं तथा विप्ररा
डेतान्येव समस्तखेचरफलान्येकः सितो यच्छति ॥२॥
दिगीश्वरो ललाटस्थो यदि वा दिग्बलान्वितः।
वधबन्धप्रदो यातुः केन्द्रगस्तु जयार्थदः ॥३॥
दिगीशाः सूर्य शुक्रार राहुर्केन्दुज्ञसूरयः।
दिगीश्वरे ललाटस्थे यातुर्न पुनरागमः ॥४॥

(अर्थ)

लग्न का सूर्य्य पूर्व दिशा में, ५,६ स्थानों का चन्द्रमा वायव्य में, दशम स्थान का मंगल दक्षिण में, सुख स्थान का बुध उत्तर में, २,३ स्थानों का बृहस्पति ईशान में, ११,१२, स्थानों का शुक्र आग्नेय में,

सप्तम स्थान का शनि पश्चिम में, ८,९ स्थानों का राहु नैऋ त्य में, ललाट गत जानना चाहिये तथा वर्जित करना चाहिये ॥१॥

यदि सूर्य ललाट में हो तो अग्नि भय होता है, मंगल हो तो खजाने का नाश करता है, यदि बुध हो तो शत्रुओं से पराजय कराता है, यदि बृहस्पति हो तो सेवा का नाश करता है, यदि शनि हो तो मृत्यु करता है, यदि चन्द्रमा हो तो व्याधि करता है, यदि शुक्र हो तो पूर्वोक्त सब फलों को केवल वही देता है ॥२॥

दिशा का स्वामी ललाट में हो अथवा दिग्बल से युक्त हो (पृ०११३) तो यात्रा करने वाले का वध तथा बन्धन कराता है, यदि केन्द्र में हो तो जय तथा धन को देता है ॥३॥

सूर्य, शुक्र, मंगल, राहु, शनि, चन्द्रमा, बुध तथा बृहस्पति क्रम से पूर्व आदि दिशाओं के स्वामी हैं।

यदि यात्रा के समय दिशा का स्वामी ललाट में हो तो यात्रा करने वाला मनुष्य फिर लौट कर नहीं आता है ॥४॥

परिघदण्डः

भानि स्थाप्यान्यब्धिदिक्षु सप्त सप्तानलर्क्षतः ।
वायव्याग्नेयदिक्संस्थं पारिघं न विलङ्घयेत् ॥१॥
अग्नेर्दिशंनृपइयात्पुरुहूतदिग्भै रेवं प्रदक्षिणगताविदिशोथकृत्ये।
आवश्यकेपिपरिघंप्रविलङ्घ्यगच्छेच्छूलंविहाययदिदिक्तनुशुद्धिरस्ति
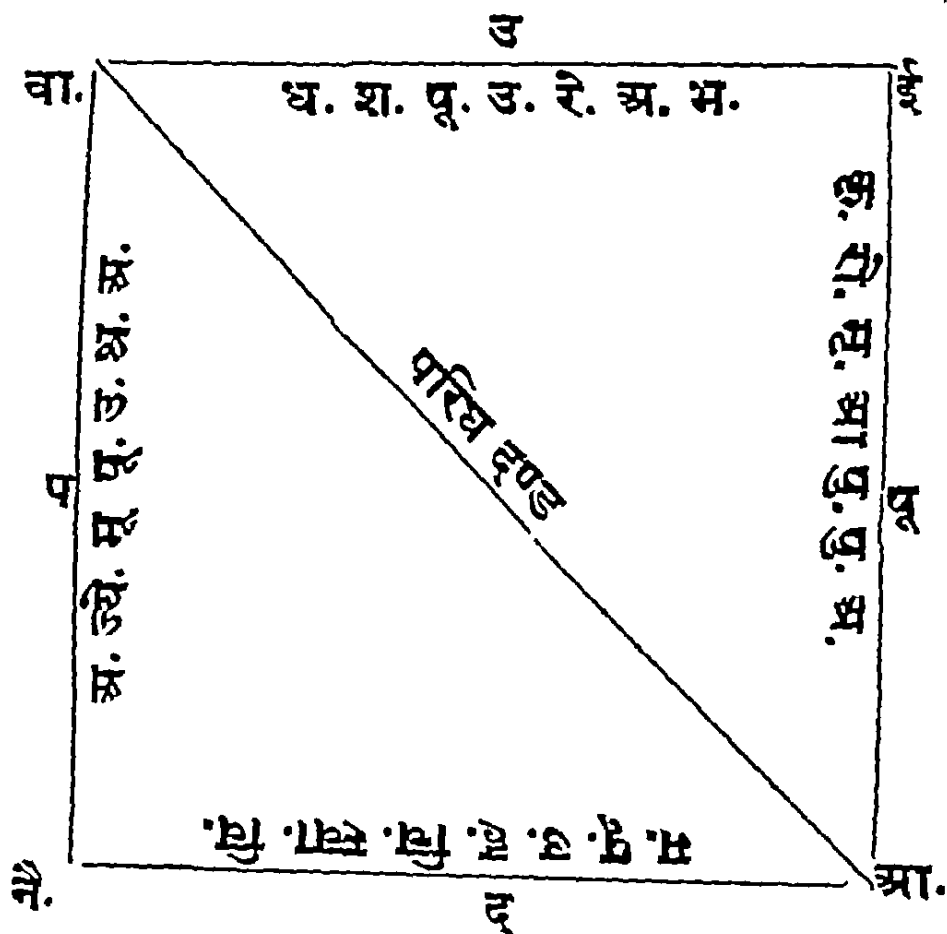
(अर्थ)

कृतिका नक्षत्र से ७,७ नक्षत्र क्रम से ४ दिशाओं में स्थापन करने चाहिये। वायव्य तथा आग्नेय कोण में परिघ दण्ड होता है, उसका उल्लङ्घन नहीं करना चाहिये।

पूर्व दिशा में कहे हुए नक्षत्रों में आग्नेय में यात्रा करे। इसी प्रकार विदिशा अपने दक्षिण में शामिल हैं। आवश्यक में परिघ दण्ड का उल्लङ्घन करे यदि दिशा शूल का दोष न हो, दिशा तथा लग्न की शुद्धि हो

(पूर्व में आग्नेय शामिल है, दक्षिण में नैर्ऋत्य शामिल है, पश्चिम में वायव्य शामिल है, उत्तर में ईशान शामिल है ॥)

घात नक्षत्राणि.

मघाकरस्वातिमैत्र मूलश्रुत्यम्बुपान्त्यभम् ।
याम्यब्राह्मेशसार्पं च मेषादेर्घातभं न सत् ॥

(अर्थ)

मेष राशि (वाले मनुष्य) को मघा, वृषको हस्त, मिथुन को स्वाती, कर्क को अनुराधा, सिंह को मूल, कन्या को श्रवण, तुला को उत्तराषाढ़ा, वृश्चिक को रेवती, धन को भरणी, मकर को रोहिणी, कुम्भ को आर्द्रा, मीन को अश्लेषा नक्षत्र, घात नक्षत्र हैं । ये शुभ नहीं हैं ॥

घात लग्नानि.

भूमिद्वयब्ध्यद्रिदिक्सूर्याङ्काष्टाङ्केशाग्निसायकाः ।
मेषादिघातलग्नानि यात्रायां वर्जयेत्सुधीः ॥

(अर्थ)

मेष राशि को मेष लग्न, वृष राशि को वृष लग्न, मिथुन राशि को कर्क लग्न, कर्क राशि को तुला, सिंह राशि को मकर, कन्या राशि को मीन, तुला को धन, वृश्चिक को वृश्चिक, धन को धन, मकर को कुम्भ, कुम्भ को मिथुन, मीन राशि को सिंह घात लग्न हैं । इनको यात्रा में वर्जित करना चाहिये ॥

घातवारा

नक्रे भौमो गोहरिस्त्रीषु मन्दश्चन्द्रो द्वन्द्वेऽर्कोऽजभेज्ञश्चकर्के ।
शुक्रः कोदण्डालिमीनेषु कुम्भे जूके जीवो घातवारा नशस्ताः ॥

(अर्थ)

मकर राशि वाले मनुष्य को मंगलवार, वृष, सिंह, कन्या राशि को शनि, कन्या राशि को चन्द्र, मेष को सूर्य्य, कर्क को बुध, धन, वृश्चिक तथा मीन को शुक्र, कुम्भ तथा तुला को बृहस्पति घात वार हैं । यात्रा में ये शुभनहीं हैं ॥

घाततिथयः

गोस्त्रीझषे घाततिथिस्तु पूर्णा भद्रा नृयुक्कर्कटकेऽथनन्दा ।
कौर्प्याजयोर्नक्रघटे च रिक्ता जयाधनुःकुम्भहरौ न शस्ताः ॥

(अर्थ)

वृष, कन्या, तथा मीन राशियों में पूर्णा तिथि, मिथुन, तथा कर्क में नन्दा तिथि, तुला, मेष, मकर, तथा कुम्भ में रिक्ता तिथि, धन, कुम्भ, तथा सिंह में जया तिथि, घात तिथि कहलाती हैं। ये यात्रा में शुभ नहीं हैं ॥

घातचन्द्रः

भूपञ्चाङ्कद्वयङ्गदिग्वह्निसप्त वेदाष्टेशार्काश्च घाताख्यचन्द्रः ।
मेषादीनां राजसेवाविवादे यात्रायुद्धाद्ये च नान्यत्र वर्ज्यः ॥१॥

अजाज्जन्मधीधर्मवित्तारिखत्रि
स्मरास्त्वष्टलाभान्त्यगो घातचन्द्रः ।
नृपद्वारयात्राचरोधागमादौ
विचिन्त्यो विवाहादिके नैव चिन्त्यः ।
तीर्थयात्रा विवाहान्न प्राशनोपनयनादिषु ।
माङ्गल्यसर्वकार्येषु घातचन्द्रं न चिन्तयेत् ॥

मे.	वृ.	मि.	कर्क.	सिं.	कन्या	तु.	वृ.	ध.	म	कुं.	मी
१	५	९	२	६	१०	३	७	४	८	११	१२
प्रथम	पंचम	नवम	द्वितीय	षष्ठ	दशम	तृतीय	सप्तम	चतुर्थ	अष्टम	एका-दश	द्वादश

(अर्थ)

मेष राशि का पहिला, वृष राशि का पांचवां, मिथुन राशि का नवां, कर्क राशि का दूसरा, सिंह राशि का छठा, कन्या राशि का दसवां, तुला राशि का तीसरा, वृश्चिक राशि का सातवां, धन राशि का

चौथा, मकर राशि का आठवां, कुम्भ राशि का ग्यारहवां, मीन राशि का बारहवां चन्द्रमा, घात चन्द्रमा कहलाता है। राज सेवा, विवाद, (वहित्र), यात्रा, युद्ध, (मृगया अर्थात् शिकार खेलना) आदि में वह वर्जित है अन्यत्र अर्थात् विवाह आदि में वर्जित नहीं है ॥

तीर्थ यात्रा, विवाह, अन्नप्राशन, उपनयन आदि मंगल कार्य्यों में घात चन्द्रमा का विचार नहीं करना चाहिये ॥

घातचन्द्रादयो यात्रायामेव वर्ज्याः

घातं तिथिं घातवारं घातनक्षत्र मेव च।
यात्रायां वर्जयेत्प्राज्ञोह्यन्यकर्म सुशोभनम् ॥

(अर्थ)

घात तिथि, घात वार, घात नक्षत्र का वर्जन केवल यात्रा में करना चाहिये, शेष कामों में शुभ हैं ॥

भद्रा.

भद्रा याने परित्याज्या.

(अर्थ)

यात्रा में भद्रा वर्जित है ॥

तारा.

जनुः सप्त पञ्चत्रितारा नेष्टाः ।

(अर्थ)

जन्म नक्षत्र से तीसरी, पांचवीं, सातवीं तारा अनिष्ट है। वह वर्जित करनी चाहिये ॥

वर्ज्यास्तिथयः (पर्व परिभाषाच)

न षष्ठी नच द्वादशी नाष्टमीनो
सिताद्या तिथिः पूर्णिमामा न रिक्ता ॥
षष्ठीं रिक्तां द्वादशीं च पर्वाणि च विवर्जयेत् ।

चतुर्दश्यष्टमी कृष्णा अमावस्या च पूर्णिमा ।
एतानि पञ्च पर्वाणि रविसंक्रान्तिगं दिनम् ॥

(अर्थ)

षष्ठी, द्वादशी, अष्टमी, शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा, पौर्णमासी, रिक्तातिथि यात्रा में वर्जित हैं ॥

षष्ठी, रिक्ता, द्वादशी, तथा पर्वों को वर्जित करना चाहिये । कृष्णपक्ष की चतुर्दशी तथा अष्टमी, अमावास्या, पौर्णमासी, तथा सूर्य्य संक्रान्ति इन पांचों को पर्व कहते हैं ॥

वर्ज्य नक्षत्राणि

नेष्टं प्रयाण मादिष्टं रोहिण्या मुत्तरात्रये ।
ज्येष्ठा शतभिषङ्मूले पूर्वासु त्रिविधासु च ॥१॥
कृतं प्रयाण मष्टासु (?) न कदाचिन्निवर्तते ॥
चित्रात्रयंमघाश्लेषे,तथार्द्रा भरणीद्वयम् ॥ (जन्मनक्षत्रञ्च)

(अर्थ)

रोहिणी, तीनों उत्तरा, ज्येष्ठा, शतभिषा, मूल, तीनों पूर्वा नक्षत्रों में यात्रा वर्जित है । यदि इन में यात्रा करे तो मनुष्य कभी लौट के नहीं आता है ॥

चित्रा, स्वाती, विशाखा, मघा, अश्लेषा, आर्द्रा, भरणी, कृत्तिका, तथा जन्म नक्षत्र यात्रा में निन्दित हैं ॥

वर्ज्य नक्षत्र वाराः

न पूर्वदिशि शाक्रभे (ज्ये.) न विधु सौरि वारे तथा
नचाजपाद्भे (पूभा) गुरौ यमदिशीनदैत्येज्ययोः ।
नपाशिदिशि (प.) धातृभे (रो.) कुजबुधे यमर्क्षं (भ.) तथा
नसौम्य (उ.) ककुभि व्रजेत्स्वजयजीवितार्थी बुधः ॥
गुरुवारेपश्चिमेच दिशं यामीं च वर्जयेत् ॥

(अर्थ)

जो मनुष्य अपना विजय तथा जीवन चाहे वह ज्येष्ठा नक्षत्र, चन्द्र तथा शनि वार के दिन पूर्व को, पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र तथा बृहस्पति वार के दिन दक्षिण दिशा को, रोहिणी नक्षत्र, शुक्रवार तथा रविवार के दिन पश्चिम दिशा को, भरणी नक्षत्र मंगल तथा बुध वार के दिन उत्तर दिशा को यात्रा न करे।

बृहस्पति वार तथा पञ्चकों में दक्षिण दिशा की यात्रा वर्जित है॥

शुभ नक्षत्राणि

हयादित्यमित्रेन्दुजीवान्त्यहस्त
श्रवोवासवैरेव यात्रा प्रशस्ता॥

(अर्थ)

अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिर, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा नक्षत्रों में यात्रा शुभ है॥

सर्वदिग्द्वारनक्षत्राणि.

मैत्रार्कपुष्याश्विनिभैर्निरुक्ता
यात्रा शुभा सर्वदिशासु तज्ज्ञैः॥

(अर्थ)

अनुराधा, हस्त, पुष्य, अश्विनी, नक्षत्र सर्व दिग्द्वारिक नक्षत्र कहलाते हैं। इन नक्षत्रों में सब दिशाओं की यात्रा शुभ है॥

पूर्वादि गमन कालः

उषः कालो विना पूर्वां गोधूलिः पश्चिमां विना।
विनोत्तरां निशीथः सद्याने याम्यां विनाभिजित्॥

(अर्थ)

पूर्व दिशा की यात्रा को छोड़ कर अन्यत्र उषः काल शुभ है। पश्चिम दिशा को छोड़ कर अन्यत्र गोधूलि शुभ है। उत्तर दिशा को छोड़ कर अन्यत्र अर्द्धरात्र शुभ है। दक्षिण दिशा को छोड़ कर अन्यत्र अभिजित् शुभ है॥

योग नक्षत्र शकुन मुहूर्त सिद्धिः

योगात्सिद्धिर्धरणिपतीना
मृक्षगणैरपि भूदेवानाम् ।
चौराणामपि शुभशकुनै
रुक्तमुहूर्तै रन्यमनुजानाम् ॥

(अर्थ)

राजाओं को योग से, ब्राह्मणों को नक्षत्रों से, चोरों को शकुनों से, शेष मनुष्यों को मुहूर्तों से यात्रा में सिद्धि होती है ॥

सहगमन विचारः

पितापुत्रौ न गच्छेतां न गच्छेत्सहजद्वयम् ।
नवस्त्रीभिर्न गन्तव्यं न गच्छेद्ब्राह्मणत्रयम् ॥

(अर्थ)

पिता तथा पुत्र एक साथ यात्रा न करें, दो सहोदर भाई भी एक साथ यात्रा न करें, ९ स्त्रियां अथवा ३ ब्राह्मण एक साथ यात्रा न करें ॥

विजया दशमी

इष मासि सिता दशमी विजया
शुभकर्मसु सिद्धिकरी मता ।
श्रवणर्क्षयुता सुतरां शुभदा
नृपतेस्तु गमे जयसन्धिकरी ॥

(अर्थ)

आश्विन शुक्ल की विजया दशमी सब शुभ कर्मों में सिद्धि देने वाली होती है। यदि उस दिन श्रवण नक्षत्र पड़े तो अधिक शुभ फल देने वाली होती है। यदि उस दिन राजा यात्रा करे तो विजय होता है अथवा शत्रु के साथ सन्धि (सुलह) होती है ॥

(सामान्यत. विजया दशमी के दिन जो लोग यात्रा करते हैं वे चन्द्रमा

की शुद्धि आदि का विचार नहीं करते हैं। ऐसी प्रथा है कि इस दिन यात्रा करने वाले मुहूर्त आदि का विचार नही करते हैं) ॥

स्थिरलग्नस्य निषेधः

चरलग्ने प्रयातव्यं द्विस्वभावे तथा नरैः ।
लग्ने स्थिरे न गन्तव्यं यात्रायां क्षेममीप्सुभिः ॥

(अर्थ)

चर अथवा द्विस्वभाव लग्न में यात्रा करनी चाहिये। जो मनुष्य अपनी कुशल चाहे उसको स्थिर लग्न में यात्रा नहीं करनी चाहिये ॥

कुम्भमीनलग्नयोर्निषेधः

कुम्भ कुम्भांशकौ त्याज्यौ सर्वदा गमने बुधैः ॥
मीने यात्रातिदुःखदा ।

(अर्थ)

यात्रा में कुम्भ लग्न अथवा कुम्भ लग्न का नवांश सदा वर्जित करना चाहिये। मीन लग्न में यात्रा करने से मार्ग में दुःख मिलता है ॥

सम्मुख शुक्र निषेधः

उदेति यस्यां दिशि यत्र याति
गोलभ्रमाद्वाथ ककुब्भसंघे ।
त्रिधोच्यते संमुख एव शुक्रो
यत्रोदितस्तातु दिशं न यायात् ॥

(अर्थ)

(पूर्व अथवा पश्चिम) जिस दिशा में उदय हो, अथवा जिस गोल (उत्तर गोल अथवा दक्षिण गोल) में हो, अथवा जिस दिशा में स्थित हो पूर्वोक्त तीन प्रकारों से शुक्र सम्मुख होता है। जिस दिशा में उदय हो उस दिशा में यात्रा न करे ॥

लग्न स्थितिः

केन्द्रे कोणे सौम्यखेटाः शुभाः स्यु
र्याने पापास्त्र्यायषट्खेषु चन्द्रः ।

नेष्टो लग्नान्त्यारिरन्ध्रे शनिःखे
ऽस्ते शुक्रो लग्नेट् नगान्त्यारिरन्ध्रे ॥

(अर्थ)

यात्रा के समय में ग्रह स्थिति इस प्रकार से होनी चाहियेः—केन्द्र तथा कोण में सौम्य ग्रह शुभ होते हैं। ३,११,६,१० स्थानों में पाप ग्रह शुभ होते हैं। लग्न, १२,६,८ स्थानों में चन्द्रमा शुभ नहीं होता है। दशम स्थान में शनैश्चर शुभ नहीं होता है। सप्तम स्थान में शुक्र शुभ नहीं होता है। ६,१२,६,८ स्थानों में लग्नेश शुभ नहीं होता है ॥

नवम दिनादि वर्ज्यम्

प्रवेशान्निर्गमं तस्मात्प्रवेशं नवमे तिथौ ।
नक्षत्रेऽपि तथा वारे नैव कुर्यात्कदाचन ॥
(ग्रन्थान्तरेषु नवममासाब्दौ च वर्ज्यावित्युक्तम्)

(अर्थ)

प्रवेश के उपरान्त नवे दिन नवीं तिथि, नवे नक्षत्र में यात्रा कभी न करनी चाहिये (कई ग्रन्थों मे नवां महीना तथा नवां बरस भी वर्जित लिखे हैं) ॥

शुभ शकुनानि.

विप्राश्वेभफलान्नदुग्धदधिगो सिद्धार्थपद्माम्बरं
वेश्या वाद्य मयूरचापनकुला बद्धैकपशुश्चामिषम् ।
सद्वाक्यं कुसुमेक्षु पूर्णकलशच्छत्राणि मृत्कन्यका
रत्नोष्णीष सितोक्ष मद्य ससुत स्त्री दीप्त वैश्वानराः ॥१॥
आदर्शाञ्जन धौतवस्त्र रजका मीनाज्य सिंहासन
शावं रोदनवर्जितं ध्वज मधुच्छागास्त्र गोरोचनम् ।
भारद्वाज नृयान वेद निनदा माङ्गल्य गीताङ्कुशा
दृष्टाः सत्फलदा· प्रयाणसमये रिक्तोघटः स्वानुगः ॥२॥

(अर्थ)

यात्रा के समय निम्न लिखित शकुन शुभ फल देने वाले होते हैं:—

ब्राह्मण, घोड़ा, हाथी, फल, अन्न, दूध, दही, गाय, सरसों, कमल, वस्त्र, वेश्या, बाजा, मोर, नीलकण्ठ, न्योला बंधा हुआ एक पशु, मांस, अच्छा वचन, पुष्प, ईख, पानी से भरा हुआ घडा, छत्र, मृत्तिका, कन्या, रत्न, पगडी, सफेद बैल, शराब, पुत्र सहित स्त्री, जली हुई अग्नि ॥१॥

आरसी, अंजन, धुला हुआ वस्त्र, धोबी, मछली, घी, सिंहासन, मुर्दा यदि उसके साथ रोने वाले आदमी न हों, ध्वजा, शहद, बकरा, अस्त्र, गोरोचन, भारद्वाज पक्षी, पालकी, वेद पाठ की ध्वनि, मंगल के गीत, अंकुश, खाली घड़ा यदि पीछे आता हो ॥२॥

अशुभ शकुनानि

वन्ध्या चर्म तुषास्थि सर्प लवणाङ्गारेन्धन क्लीव विट्
तैलोन्मत्त वसौषधारि जटिल प्रव्राट् तृण व्याधिताः ।
नग्नाभ्यक्त विमुक्त केश पतिता व्यङ्ग क्षुधार्ता असृक्
स्त्रीपुष्पं सरठः स्वगेहदहनं मार्जारयुद्धं क्षुतम् ॥१॥
काषायी गुड तक्र पङ्क विधवा कुब्जाः कुटुम्बे कलि
र्वस्त्रादेः स्खलनं लुलायसमरं कृष्णानि धान्यानि च ।
कार्पासं वमनं च गर्दभरवो दक्षेऽति रुट् गर्भिणी
मुण्डार्द्राम्बर दुर्वचोऽन्ध बधिरो दक्यो न दृष्टाः शुभाः ॥२॥

(अर्थ)

यात्रा के समय निम्न लिखित शकुन अशुभ फल देने वाले होते हैं:—

बांझ औरत, चमड़ा, भूसी, हड्डी, सांप, नमक, आग का कोयला, लकड़ी, हिजड़ा, विष्ठा, तेल, पागल, वसा (चर्बी), औषधि, शत्रु, जटाधारी योगी, तृण (घास), बेमार आदमी, नङ्गा, तेल लगाया हुआ, बाल बिखरा हुआ, जाति से पतित, अङ्गहीन, भूखा आदमी, रुधिर, रजोवती स्त्री का रुधिर, छिपकली, घर का जलना, बिल्लियों का युद्ध, छींक ॥१॥

गेरुआ वस्त्र पहिना हुआ योगी, गुड, छींक, कीचड, विधवा स्त्री, कूबड़ा आदमी, कुटुम्ब में कलह, वस्त्र आदि का गिरना, भैंसों का युद्ध, काले रङ्ग का अनाज, कपास, रद्द होना, गधे का शब्द दहिनी ओर को, अति क्रोध, गर्भिणी स्त्री, सिर मुंडा हुआ आदमी, गीला कपडा, दुष्टवाक्य, अन्धा, बहिरा तथा रजोवती स्त्री ॥२॥

आवश्यके परिहारः

आद्येऽपशकुने स्थित्वा प्राणानेकादश व्रजेत् ।
द्वितीयेषोडश प्राणा स्तृतीये नक्वचिद्व्रजेत् ॥

(अर्थ)

यदि पहिला अपशकुन देखने में आवे तो ठहर कर ११ श्वास लेकर तब चले, यदि दूसरा अपशकुन देखने में आवे तो १६ श्वास रोक कर तब यात्रा करे, यदि तीसरा अपशकुन देखने में आवे तो कभी यात्रा न करे ॥

क्रोशादूर्ध्वं शकुनादीना निष्फलत्वम्.

क्रोशादूर्ध्वं च शकुनं शुभं वा यदि वा शुभम् ।
मुनिभि र्निष्फलं प्रोक्तम् ।

(अर्थ)

एक कोस चले जाने के उपरान्त शुभ अथवा अशुभ शकुनों का फल नहीं होता है ॥

यात्राया विपत्तिकराः शब्दाः

क्व यासि तिष्ठ आगच्छ किन्ते तत्र गतस्य तु ।
अन्यशब्दाश्चयेऽनिष्टास्ते विपत्तिकराः स्मृताः ॥

(अर्थ)

"कहां जाता है", "ठहर जा", "यहां आ", "वहां जाकर क्या करेगा", इत्यादि शब्द, यात्रा के समय में विपत्ति करने वाले होते हैं ॥

यात्रायां भाव सञ्ज्ञाः

लग्नाद्भावाः क्रमाद्देह कोश धानुष्क वाहनम् ।
मन्त्रोऽरिर्मार्ग आयुश्च हृद्व्यापाराऽऽगम व्ययाः ॥

(अर्थ)

यात्रा में भावों की संज्ञा क्रम से यह हैं:—(१) देह, (२) कोष, (३) सेना, (४) वाहन, (५) मन्त्र, (६) शत्रु, (७) मार्ग (८) आयु, (९) हृदय, (१०) व्यापार (११) लाभ (१२) व्यय ॥

असमाप्ते महोत्सवादौ न गन्तव्यम्.

उद्वाहे व्रतबन्धे च प्रतिष्ठायां महोत्सवे ।
असमाप्ते न गन्तव्यं मृतके सूतकेऽपिच ॥

(अर्थ)

विवाह, व्रतबन्ध, प्रतिष्ठा, महाउत्सव, जनन अथवा मरण का आशौच जब तक समाप्त न हो जावे तब तक यात्रा नहीं करनी चाहिये ॥

सम्मुख चन्द्र माहात्म्यम्

करण भगण दोषं वार संक्रांति दोषं
कुलिक तिथिज दोषं याम यामार्ध दोषम् ।
शनि गुरु बुध दोषं राहु केत्वादिदोषं
हरति सकलदोषं चन्द्रमा· सम्मुखस्थः ॥

(अर्थ)

करण, भगण, वार, सक्रान्ति, कुलिक, तिथि, याम, यामार्द्ध, शनि, गुरु, बुध, राहु, केतु, इत्यादि के सम्पूर्ण दोषों को सम्मुख चन्द्रमा नाश करता है ॥

प्रस्थानम्.

सुमुहूर्ते स्वयं गमनासम्भवे यज्ञोपवीतादिना प्रस्थानम् ।
गेहाद्देहान्तरं गर्गः सीम्न सीमान्तरं भृगुः ।
बाणक्षेपं भरद्वाजो वसिष्ठो नगराद्बहिः ॥

(अर्थ)

यदि अच्छे मुहूर्त में मनुष्य स्वयं यात्रा न कर सके तो यज्ञोपवीत आदि द्वारा प्रस्थान रक्खे ॥

गर्ग मुनि के अनुसार एक घर से दूसरे घर प्रस्थान रखना चाहिये, भृगु मुनि के अनुसार सरहद से बाहर रखना चाहिये, भरद्वाज मुनि के अनुसार इतनी दूर रखना चाहिये जहा तक बाण पहुंच सके, वशिष्ठ मुनि के अनुसार नगर से बाहर प्रस्थान रखना चाहिये ॥

प्रस्थाने कृतेऽपि सदोषदिने यात्रा निषिद्धा.

प्रस्थानेऽपि कृते नैयान्महादोषान्विते दिने ।
जन्मर्क्षे चाष्टमे चन्द्रे वारे भौमे शनैश्चरे ।
प्रस्थितेऽपि न गन्तव्य मत्यन्तगर्हिते दिने ॥

(अर्थ)

प्रस्थान रखने पर भी बड़े दोष से युक्त दिन में यात्रा नहीं करनी चाहिये । जन्म नक्षत्र, अष्टम चन्द्रमा, मङ्गल अथवा शनिवार को अथवा अत्यन्त निन्दित दिन में प्रस्थान रखने पर भी यात्रा नहीं करनी चाहिये ॥

प्रस्थान दिन प्रमाणम्

सप्ताहमेव पूर्वस्यां प्रस्थानं पञ्च दक्षिणे ।
पश्चिमे त्रीणि शस्तानि सौम्यायां तु दिनद्वयम् ॥

(अर्थ)

पूर्व दिशा की यात्रा में ७ दिन, दक्षिण की यात्रा में ५ दिन, पश्चिम की यात्रा में ३ दिन, उत्तर की यात्रा में २ दिन तक प्रस्थान की अवधि है ॥

अत्यावश्यके मुहूर्तादयः

अष्टमो योऽभिजित्संज्ञः सएव कुतपः स्मृतः ।
तस्मिन्काले शुभा यात्रा विना याम्यां स्मृता बुधैः ॥१॥

विष्टि व्यतीपात कृतान्दोषानुत्पातखचरभवान् ।
मध्याह्नकृतोदिनकृत्सर्वानपनीय शुभकृत्स्यात् ॥२॥
ईषत्सन्ध्यामतिक्रान्तः किञ्चिदुद्भिन्नतारकः ।
विजयो नाम योगोऽयं सर्वकार्यार्थसाधकः ॥३॥
नक्षत्रलग्नादिवलं नचेत्स्यात्तदामुहूर्तं परिकल्पनीयम् ।
प्रत्यूषकालस्त्वभिजिन्मुहूर्तो गोधूलिको मंगलकृत्सदैव ॥४॥
कालहोरा वारवेलादयश्च द्रष्टव्याः ॥

(अर्थ)

अष्टम मुहूर्त जिसको अभिजित् अथवा कुतप कहते हैं उसमें यात्रा करने से शुभ होता है परन्तु उसमें दक्षिण दिशा की यात्रा वर्जित है ॥१॥

जब मध्याह्न के समय सूर्य अभिजित् मुहूर्त में होता है तब भद्रा, व्यतीपात तथा दुष्ट ग्रहों के दोष को शान्त करके शुभ फल देता है ॥२॥

जब किञ्चित् सन्ध्याकाल हो जावे तथा कोई कोई तारे दिखलाई देने लगें तो विजय नाम मुहूर्त होता है इसमें सब कार्य सिद्ध होते हैं ॥३॥

जब नक्षत्र लग्न आदि का बल न मिल सके तो उषः काल, अभिजित् तथा गोधूलि सदा शुभ होते हैं (उषः काल में पूर्व की, गोधूलि में पश्चिम की, तथा अभिजित् में दक्षिण की यात्रा वर्जित है) ॥४॥

जब इससे भी अधिक आवश्यकता हो तो काल होरा, वार वेला, (पृ०३६।४०) देखने चाहिये ॥५॥

श्री देवीदत्त ज्योतिर्विन्संगृहीतानुवादिते सुगमज्योतिषे मुहूर्ताध्यायः षष्ठः ॥

सुगमज्योतिषम्.

प्रश्नाध्यायः सप्तमः

(१) सामान्यतः प्रश्नप्रकरणम्

प्रष्टा कीदृक्

लग्नस्थे शशिनि शनौ केन्द्रस्थे ज्ञे दिनेशरश्मिगते ।
भौमज्ञयोः समदृशा लग्नचन्द्रेऽनृजुः प्रष्टा ॥१॥
लग्ने शुभग्रहयुते सरलः क्रूरान्वितो भवेत्कुटिलः ।
लग्नास्तयोः सौम्यदृशा विधुगुरुदृष्ट्या च सरलोऽयम् ॥२॥

(अर्थ)

लग्न में चन्द्रमा हो, केन्द्र में शनि हो, बुध सूर्य के साथ हो, मङ्गल बुध की लग्नस्थ चन्द्रमा पर समदृष्टि हो तो प्रश्नकर्ता कुटिल स्वभाव है ऐसा जानना चाहिये ॥१॥

लग्न में शुभ ग्रह हो तो प्रष्टा सरल है, यदि क्रूर ग्रह हो तो प्रष्टा कुटिल है ऐसा जानना चाहिये। लग्न सप्तम में सौम्य ग्रह की दृष्टि हो अथवा चन्द्रमा तथा बृहस्पति की दृष्टि हो तब भी प्रश्नकर्ता सरल स्वभाव जानना चाहिये ॥२॥

बहुप्रश्नविषये

आद्यं लग्नतो ज्ञानं चन्द्रस्थानाद्द्वितीयकम् ।
सूर्यस्थानात्तृतीयं स्यात्तुर्यं जीवग्रहाद्भवेत् ॥

(अर्थ)

यदि प्रश्न कर्ता एक साथ कई प्रश्न कर बैठे तो पहिले प्रश्न का उत्तर लग्न से निकालना चाहिये। दूसरे प्रश्न का उत्तर चन्द्रमा के स्थान से निकालना चाहिये। तीसरे प्रश्न का उत्तर सूर्य के स्थान से निकालना चाहिये। चौथे प्रश्न का उत्तर बृहस्पति से निकालना चाहिये ॥

जीवितजन्मपत्री

जन्माङ्करन्ध्रस्थपप्रश्नलग्नं
युतिश्च निघ्नाष्टमभावपेन ।
लग्नेशसंस्थर्क्षविभक्तशेषे
स्वोजे (विषमे) भवेज्जीवितजन्मपत्री ॥

(अर्थ)

कभी कभी लोग मरे हुए आदमी का जन्मपत्री लाकर ज्योतिषी को विचार के लिये दे देते हैं फिर उसका ठट्ठा उड़ाते हैं । जब ऐसा सन्देह हो तो जन्मलग्न, अष्टम लग्न, प्रश्न लग्न के अङ्कों को जोडकर अष्टमेश से गुणा करे । लग्नेश जिस राशि पर वैठा हो उसकी संख्या से भाग दे । यदि विषम अङ्क शेष रहे तो जीवित मनुष्य की जन्मपत्री जाननी चाहिये ॥

पुत्रकन्या जन्मपत्री ज्ञानम्

रव्यङ्क तन्वङ्क तमोऽङ्कयुक्तं
कुजाङ्कयुक्तं त्रिविभाजितश्च ।
शेषे समाङ्के भवतीह पुंस
ओजाङ्कशेषे यदिवा कुमार्याः ॥१॥
मूर्ताङ्कसूर्यराह्वङ्कान्सम्मील्य च त्रिभिर्भजेत् ।
विषमे हि रमायाः स्यात्समे पुंसश्च पत्रिका ॥२॥

(अर्थ)

कभी कभी लोग जांच के लिये एक जन्मपत्री लाकर साम्हने रखदेते हैं और कहते हैं कि बताओ यह पुत्र की है अथवा कन्या की । इसके लिये यह रीति है । सूर्य, लग्न, राहु तथा मङ्गल की राशियों के अंकों को जोड़कर तीन से भाग दे । यदि शेष सम अङ्क बचे तो पुत्र की, विषम अङ्क बचे तो कन्या की जन्मपत्री जाननी चाहिये ॥१४

लग्न, सूर्य, राहु के अङ्कों को जोडकर तीन का भाग दे । विषम शेष रहे तो कन्या की, सम हो तो पुरुष की जन्म पत्री जाननी चाहिये ॥२॥

प्रश्नोऽपि जातकसदृशः

यज्जातके निगदितं भुवि मानवानां
तत्प्राश्निकेऽपि सकलं कथयन्ति तज्ज्ञाः ।
प्रश्नोऽपि जन्मसदृशो भवति प्रभेदः
प्रश्नस्य चात्र जननस्य न किञ्चिदस्ति ॥

(अर्थ)

जो विचार जातक में कहा है वही विचार प्रश्न में भी करना चाहिये । प्रश्न भी जन्म के समान है । प्रश्न तथा जातक में कोई भेद नहीं है ॥

सामान्य रीतिः

यो यो भाव स्वामिदृष्टो युतोवा
सौम्यैर्वास्यात्तस्य तस्यास्ति वृद्धिः ।
पापैरेवं तस्य तस्यास्ति हानि
र्निर्देष्टव्यापृच्छतां जन्मतोवा ॥

(अर्थ)

जो जो भाव अपने स्वामी से दृष्ट अथवा युक्त हो अथवा सौम्य ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त हो उस भाव की वृद्धि होती है । एवं जो भाव पाप ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त हो उस भाव की हानि होती है । यह विचार प्रश्न में अथवा जन्म में करना चाहिये ॥

दीप्ताद्यवस्थाः

दीप्ताद्यवस्थाः संज्ञाध्यायोक्ताः (पृ० ११५) प्रश्नेऽपि विचार्याः ।

(अर्थ)

संज्ञाध्याय (पृ० ११५) में जो दीप्तादि अवस्था कही हैं उनका विचार प्रश्न में भी करना चाहिये ॥

सामान्यतो भावविचारः

इन्दुः सर्वत्र बीजाभो लग्नं च कुसुमप्रभम् ।
फलेन सदृशोंशश्च भावः स्वादुसमुद्भवः ॥

(अर्थ)

प्रश्न में सर्वत्र चन्द्रमा को वीज समझना चाहिये। लग्न को पुष्प समझना चाहिये। नवांश को फल समझना चाहिये। भाव को स्वाद समझना चाहिये ॥

चन्द्रस्य प्राधान्यम्

योगाः सर्वेऽप्यफलाश्चन्द्रमृते व्यक्तमेतच्च।

(अर्थ)

चन्द्रमा को छोड़ कर शेष सब योग निष्फल हैं ॥

असमर्था ग्रहाः

नीचस्थिता अस्तमिताश्च पापैर्युक्तास्तथा शत्रुजिता विरूक्षाः।
वलेन हीनास्त्वणवश्च नस्युः स्वकर्म कर्तुं खचराः समर्थाः ॥

(अर्थ)

जो ग्रह नीच के हों, अस्तंगत हो, पाप ग्रहों से युक्त हों, युद्ध में शत्रु से पराजित हों, जिनके अल्प अंश शेष रह गये हों तथा जो वलहीन हों ऐसे ग्रह थोडा भी कर्म करने को समर्थ नहीं होते हैं ॥

ग्रहाणा हर्षस्थानानि

लाभं गुरोर्ज्ञस्य विलग्नमिन्दो स्तृतीयमर्कस्य नभः शनेर्व्ययम्।
भौमस्य षष्ठं च भृगोः सुतर्क्षमाहु ग्रहाणां स्वगृहे च हर्षदम्॥१॥
कर्मवन्धुधने चन्द्रस्तुर्ये ज्ञश्चोदये रविः।
व्यूनं भौमस्य धर्मर्क्षं शनेः प्राहुश्च हर्षदम् ॥२॥
विलग्नलाभौ ससुतारिसप्तमौ नरग्रहाणां दिवसश्च हर्षदाः।
वन्धुस्वदुश्चिक्यनभस्तपोऽन्त्यमायोषिद्ग्रहाणारजनीचहर्षदाः ॥३॥

(अर्थ)

बृहस्पति का लाभ स्थान, बुध का लग्न, चन्द्रमा का तीसरा स्थान, सूर्य का दशम, शनिका व्यय, मङ्गल का छठा, शुक्र का पंचम तथा सब ग्रहों का अपना घर हर्ष स्थान हैं ॥१॥

१०।४।२ स्थानों में चन्द्रमा, चतुर्थ में बुध, लग्न में सूर्य, सप्तम में मंगल, धर्म मे शनि हर्ष दायक हैं ॥२॥

१।११।५।६।७ स्थानो में तथा दिन में पुरुष ग्रह हर्षवली होते हैं। ४।२।३।१०।६।८ स्थानों में तथा रात्रि में स्त्रीग्रह हर्षवली होते हैं ॥३॥

केन्द्रेषु किंविचार्यम्.

च्युतिर्विलग्नाद्धिबुकाच्च वृद्धि
र्मध्यात्प्रवासोऽस्तमयान्निवृत्तिः।

(अर्थ)

(१) लग्नात् च्युतिः। किसी वस्तु का गिरना अथवा पृथक् होना—जैसे मेघ से वर्षा गिरना अथवा वन्दी गृह से वन्दी का छूटना-इत्यादि बातों का विचार लग्न से करना चाहिये।

(२) हिबुकात् वृद्धि.। किसी वस्तु की वृद्धि का विचार चैाथे स्थान से करना चाहिये. जैसे. सन्तान अन्न, पशु आदि।

(३) मध्यात्प्रवासः। परदेश से लौट आने का विचार दशम स्थान से करना चाहिये।

(४) अस्तमयान्निवृत्तिः। किसी मनुष्य अथवा वस्तु के लौट आने का विचार सातवें घर से करना चाहिये। जैसे रोगी का रोग दूर होना, नष्ट वस्तु मिलेगी कि नहीं, कष्ट दूर होगा कि नहीं ॥

इन स्थानों में चर लग्न हो तो शीघ्र, स्थिर लग्न हो तो देरी में इत्यादि फल जानना चाहिये ॥

प्रश्नस्थानादि विचारः,

भावपृच्छायां भावमेव लग्नम्।
भूतप्रश्ने द्वादशात्. भविष्ये द्वितीयस्थानात् फलं वाच्यम्।
पशु षष्ठ स्थानात्

मित्रं चतुर्थस्थानात्
व्यापार· सप्तमस्थानात्
पाण्डित्य विवादश्च एकादशस्थानात्
स्मराद्गतिस्थानम्
रोगिगृहं सप्तमम्
द्यूनं व्याधि । दशमं रोगी
सप्तमाच्चौरज्ञानम् । हिबुकं द्रव्यस्थानम् ।
लग्नं कृषिक स्तुर्यं भूमि र्द्यूनं कृषिः ।

(अर्थ)

जिस भाव का प्रश्न हो उस भाव को लग्न समझना चाहिये । भूतकाल के प्रश्न का द्वादशस्थान से, भविष्य के प्रश्न का दूसरे स्थान से विचार करना चाहिये ।

पशु का विचार छठे स्थान से, मित्र का विचार चतुर्थ स्थान से, व्यापार अथवा झगड़े का विचार सप्तम स्थान से, बहिस का विचार ग्यारहवें स्थान से, गमन विचार अथवा गमन की दिशा का विचार सप्तम स्थान से, रोग अथवा व्याधि का विचार सप्तम स्थान से, रोगी का विचार दशम स्थान से, चोर का विचार सप्तम स्थान से, चोरे हुए द्रव्य का विचार चतुर्थ स्थान से, किसान का विचार लग्न से, खेत का विचार चतुर्थ स्थान से, कृषि का विचार सप्तम स्थान से करना चाहिये ॥

नष्ट वस्तु रूपादयः

लग्न लग्नेशयोर्यो वली तद्रूपं वस्तुनः (लघुत्वादि) ।
ह्रस्वादिलग्नाद्ध्रस्वादिरूपं वस्तुनः ।
लग्नद्रेष्काणाच्चौररूपम् ।
लग्नराशितश्चौरदेशस्यदिक् ।
लग्नेशाच्चौरावस्था जातिगुणादयः ।

लग्नेशनवांशतो वा चौरस्य वयःप्रमाणजातयो ज्ञेयाः ।
अंशकाज्ज्ञायते द्रव्यं द्रेष्काणैस्तस्कराः स्मृताः ।
राशिभ्यः कालदिग्देशा वयोज्ञातिश्च लग्नपात् ॥
द्विस्वाख्या केन्द्रगते रसम्भवे वा वदेद्विलग्नर्क्षात् ।
वलयुक्तग्रहाद्वस्तुनो वर्णादयः ।
१।७।१० स्थानस्थवलीग्रहतुल्यं चौररूपादि ।
चौरः स्त्री पुरुषोवा पृच्छाया मस्तपे स्त्रियो राशौ स्त्रीखेटे स्त्रीदृष्टे
चौरः स्त्री, व्यत्ययात्पुरुषः ॥
लग्नेशनवमांशतो वयःप्रमाणजातयो ज्ञेयाः ।
नष्टं यस्य समूर्तोंशो नष्टात्मा (नष्ट वस्तु स्वरूपं) चेन्दु भास्करौ ।
जायेशश्चौररूपः स्यादेभ्यः कुर्याद्विनिश्चयम् ॥
चौरस्याकारं स्मरपाद्वदेत् ।
लग्नतश्चन्द्रमा यत्र तत्र चौर गृहं वदेत् ।

(अर्थ)

लग्न तथा लग्नेश दोनों में से जो बलवान् हो उसी के अनुसार लघु स्थूल आदि वस्तु का रूप बतलाना चाहिये ।

ह्रस्व लग्न हो तो वस्तु ह्रस्व, दीर्घ हो तो दीर्घ इत्यादि ।

लग्न के द्रेष्काण से चोर का रूप बतलाना चाहिये ।

लग्न की राशि से चोर के देश की दिशा जाननी चाहिये ।

लग्नेश से चोर की अवस्था, जाति, गुण आदि बतलाने चाहिये ।

अथवा लग्नेश के नवांश से चोर की अवस्था, जाति आदि बतलाने चाहिये ।

नवांश से द्रव्य जाना जाता है । द्रेष्काण से तस्कर का रूप मालूम होता है । राशि से काल, दिशा, देश मालूम होते हैं । लग्नेश से अवस्था मालूम होती है ॥

केन्द्र में जो बलवान् ग्रह हो उससे दिशा बतलानी चाहिये। अथवा लग्न की राशि से बतलानी चाहिये। जो ग्रह बलवान् हो उससे वस्तु का वर्ण आदि कहे। १,७,१० स्थानों में जो बलवान् ग्रह हो उसके समान चोर का रूप जानना चाहिये।

जब ऐसा प्रश्न हो कि चोर स्त्री है अथवा पुरुष है तो यदि सप्तमेश स्त्री राशि में बैठा हो अथवा स्त्री ग्रह हो अथवा स्त्री ग्रह उसको देखे तो चोर स्त्री है अन्यथा पुरुष है, ऐसा कहना चाहिये। लग्नेश के नवांश से अवस्था,जाति आदि जानने चाहिये। जिसकी चोरी हुई हो वह लग्नेश है। नष्ट वस्तु का स्वरूप चन्द्रमा तथा सूर्य हैं। सप्तमेश चोर का रूप है। इन बातों से निश्चय करना चाहिये।

चोर का स्वरूप सप्तमेश से बतलाना चाहिये।

लग्न से चन्द्रमा जिस स्थान में हों वहां चोर का घर बतलाना चाहिये।

मे. वृष, मि. कर्क, म. ध. लग्न हों तो रात्रि समय जानना।

वृष कन्या मकर लग्न हों तो दक्षिण दिशा, इत्यादि।

मेष लग्न हो तो भूमि, वृष हो तो गोकुलादि स्थान इत्यादि।

चं. लग्नेश हो तो बालक, इत्यादि अवस्था जानना।

बृहस्पति शुक्र लग्नेश हों तो ब्राह्मण इत्यादि।

जो ग्रह केन्द्र में हो उससे नष्ट वस्तु की दिशा कहनी चाहिये। जैसे सूर्य केन्द्र में हो तो पूर्व इत्यादि। जब दो ग्रह केन्द्र में हों तो जो बलवान् हो उससे विचार करना चाहिये। जब कोई ग्रह नहीं हो तो लग्न से दिशा जाननी चाहिये। जितने नवांश बीत गये हों उतनी योजन दूर वस्तु गई हो ऐसा जानना चाहिये॥

ग्रहस्वरूप चक्रम्

चिन्तनीय विलग्नेशात्केन्द्रगाद्वा वलाधिकात् ॥

पृच्छक स्तनुपतिः कुनिनाथः प्रश्नपः खलु तयोः क्रमशश्च ।
जातिरूपगुणवर्णवयांसि प्रोच्चरेत्तदनुतत्फलमिष्टम् ॥

ग्रह	ऋतु	धात्वादि		रङ्ग	रत्न	वर्ण	चतुरस्रादि	कटुकादि	पुरुषादि	अवस्था	जाति	वस्तु	अङ्ग भूषण	अन्न	दिशा
सू	ग्री.	धातु	अस्थि	रक्त	मोती	क्षत्रिय	चौकोर	कटु	पु	वृद्ध	राजा	भूषण	शिरोभूषण	धान्य	पू
चं	वर्षा	मूल	रुधिर	श्वेत	चादी	वैश्य	स्थूल	लवण	स्त्री	मध्य	तपस्वी	धातु	शिभू	गेहूं	वा
मं	ग्री	धातु	मज्जा	रक्त	तावा	क्ष.	चौकोना	कटु	पु	युवा	सुनार	पात्र	बाहु भू.	कुलत्थ	द
बु	श	मूल	त्वक्	हरित	काच	शूद्र	गोल	कटु	स्त्री	शिशु	वनिया	पात्र	हस्त भू.	जौ	उ
बृ	हे	जीव	वसा	पीत	सुवर्ण	ब्राह्मण	गोल	मिष्ट	पु	वृद्ध	वैश्य	भूषण	कर्ण भू	धान्य	ई
शु	वस	जीव	वीर्य	श्वेत	चांदी	ब्रा.	खड	अम्ल	स्त्री	मध्य	वैश्य	धातु	बाहु भू.	धान्य	आ
श	शि	मूल	स्नायु	कृष्ण	नीलम	म्लेच्छ	दीर्घ	तीक्ष्ण	पु	वृद्ध	शूद्र	शस्त्र	चरण भू	मूंग	प.
रा				श्याम		म्लेच्छ	दीर्घ	तीक्ष्ण	स्त्री	वृद्ध	निषाद	शस्त्र	चरण भू	उर्द	नै

राशिस्वरूपम्

सर्वं फलं राश्यनुसारतः स्यात् (लग्नस्वरूपम्)

राशयः	पुरुषादि	चरादि	रङ्ग	गृहद्वार	दिशा स्वामी	रात्रि दिन	ह्रस्वादि	वर्ण	अङ्ग	क्रूर सौम्य विवेकः	पृष्ठोदयादि
मे.	पु	चर	रक्त	पूर्व	पू	रात्रि	ह्रस्व	च	शीर्ष	क्रू	पृष्ठोदय
वृष	स्त्री	स्थिर	शुभ्र	प	द	रा	ह्रस्व	वै	मुख	सौ	,,
मि.	पु	द्विस्वभाव	हरित	द	प	रा	मध्य	शू	हाथ	क्रू	शी
कर्क	स्त्री	च	गुलाबी	पू	उ	रा	म	ब्रा	हृदय	सौ	पृ
सिं	पु	स्थि	पीत	उ	पू	दिन	दीर्घ	च	उदर	क्रू	शी
कन्या	स्त्री	द्वि	चित्र	द	द	दि	दी	वै	कटि	सौ	शी
तु.	पु	च	काला	पू	प	दि	दी	शू	वस्ति	क्रू	शी
बृश्चिक	स्त्री	स्थि	पीत	पू	उ	दि	दी	ब्रा	गुह्य	सौ	शी.
ध.	पु	द्वि	लाखी	द	पू	रा	दी	च	ऊरू	क्रू	पृ
म.	स्त्री	च	कबुंर	उ	द	रा	म	वै	जानु	सौ	पृ
कुं	पु	स्थि	न्यौला	पू	प	दि	ह्र	शू	जघन	क्रू	शी
मी.	स्त्री	द्वि	का सा मलिन	द	उ	दि	ह्र	ब्रा	पाद	सौ	उभयोदय

द्रेष्काण रूपाणि

कट्यां सितवस्त्रवेष्टितः कृष्ण शक्त इवाभिरक्षितुम् ।
रौद्रः परशुं समुद्यतं धत्ते रक्तविलोचनः पुमान् ॥१॥

रक्ताम्बरा भूषणभक्ष्यचिन्ता कुम्भाकृतिर्वाजिमुखी तृषार्ता ।
एकेन पादेन च मेषमध्ये द्रेष्काणरूप यवनोपदिष्टम् ॥२॥
क्रूरः कलाज्ञः कपिलः क्रियार्थी भग्नव्रतोऽभ्युतदण्डहस्तः ।
रक्ताणि वस्त्राणि बिभर्ति चण्डी मेषे तृतीयः कथितस्त्रि भागः ॥३॥
कुञ्चितलूनकचा घटदेहा दग्धपटा तृषिताशनचिन्ता ।
आभरणान्यभिवाञ्छति नारी रूप मिदं प्रथमे वृषभस्य ॥४॥
क्षेत्रधान्यगृहधेनुकलाज्ञो लाङ्गलेषु शकटे कुशलश्च ।
स्कन्ध मुद्वहति गोपतितुल्यं क्षुत्परोऽजवदनो मलवासाः ॥५॥
द्विपसमकायः पाण्डुरदंष्ट्रः शरभसमाङ्घ्रिः पिङ्गलमूर्तिः ।
अविमृगलोभव्याकुलचित्तो वृष भवनस्य प्रान्तगतोऽयम् ॥६॥
सूच्याश्रयं समभिवाञ्छति कर्म नारी
रूपान्विता भरणकार्यकृतादरा च ।
हीनप्रजोच्छ्रितभुजर्तुमती त्रिभाग
माद्यं तृतीयभवनस्य वदन्ति तज्ज्ञाः ॥७॥

उद्यानसंस्थः कवची धनुष्मान्शूरोऽस्त्रधारी गरुडाननश्च ।
क्रीडात्मजालङ्कृरणार्थचिन्तां करोति मध्ये मिथुनस्यराशेः ॥८॥
भूषितो वरुणवद्बहुरत्नो बद्धतूणकवचः सधनुष्कः ।
नृत्यवादितकलासु च विद्वान् काव्य कृन्मिथुनराश्यवसाने ॥९॥
पत्रमूलफलभृद्द्विपकायः कानने मलयगः शरभाङ्घ्रिः ।
क्रोडतुल्यवदनो हयकण्ठः कर्किणः प्रथमरूप मुशन्ति ॥१०॥
पद्मार्चिता मूर्धनि भोगियुक्ता स्त्री कर्कशा रण्यगता विरौति ।
शाखां पलाशस्य समाश्रिता च मध्येस्थिता कर्कटकस्यराशेः ॥११॥

भार्याभरणार्थं मर्णवं नौस्थो गच्छति सर्पवेष्टितः ।
हैमैश्च युतो विभूषणैश्चिपिटास्यो ऽन्त्यगतश्च कर्कटे ॥१२॥
शाल्मले रुपरि गृध्रजम्बुकौ वानरश्च मलिनाम्बरान्वितः ।
रौति मातृपितृवियोजित. सिंहरूपमिदमाद्यमुच्यते ॥१३॥
हयाकृति. पाण्डुरमाल्यशेखरो विभर्ति कृष्णाजिनकम्बलं नरः ।
दुरासदः सिंहइवात्तकार्मुको नताग्रनासो मृगराजमध्यमः ॥१४॥
ऋक्षाननो वानरतुल्यचेष्टो विभर्ति दण्डाफलमामिषञ्च ।
कूर्ची मनुष्यः कुटिलैश्च केशैर्मृगेश्वरस्यान्त्यगतस्त्रिभागः ॥१५॥
पुष्पप्रपूर्णेन घटेन कन्या मलप्रदग्धाम्बरसंवृताङ्गी ।
वस्त्रार्थसंयोगसमीष्टमाना गुरोः कुलं वाञ्छति कन्यकाद्य. ॥१६॥

पुरुषः प्रगृहीत लेखनिः श्यामो वस्त्रशिरा व्ययायकृत् ।
विपुलञ्च विभर्ति कामुकं रोम (?) व्याप्ततनुश्च मध्यमः ॥१७॥

गौरी सुधौताग्रदुकूलगुप्ता समुच्छ्रिता कुम्भकटच्छुहस्ता ।
देवालयं स्त्री प्रयता प्रवृत्ता वदन्ति कन्यान्त्यगतंत्रिभागम् ॥१८॥

वीथ्यन्तरापणगतः पुरुषस्तुलावा
नुन्मानमानकुशल. प्रतिमानहस्तः ।
भाण्डं विचिन्तयति तस्य च मूल मेत
द्रूपं वदन्ति यवनाः प्रथमं तुलायाः ॥१९॥

कलशं परिगृह्य विनिष्पतितुं समभीप्सति गृध्रमुख· पुरुषः ।
क्षुधितस्तृषितश्च कलत्रसुतान्मनसैति धनुर्धरमध्यगतः ॥२०॥

विभीषयंस्तिष्ठति रत्नचित्रितो वने मृगान्काञ्चनतूणवर्मभृत् ।
फलामिषं वानररूपभृन्नरस्तुलावसानो यवनैरुदाहृतः ॥२१॥

वस्त्रैर्विहीना भरणैश्च नारी महासमुद्रात्समुपैति कूलम् ।
स्थानच्युता सर्पनिवद्धपादा मनोरमा वृश्चिकराशिपूर्वः ॥२२॥

स्थानसुखान्यभिवाञ्छति नारी भर्तृकृते भुजगावृतदेहा ।
कच्छपकुम्भसमानशरीरा वृश्चिकमध्यमरूपमुशन्ति ॥२३॥
पृथुलचिपिटकूर्मतुल्यवक्त्रः श्वमृगवराहशृगालभीपकारी ।
भवति च मलयाकरप्रदेशं मृगपतिरन्त्यगतस्य वृश्चिकस्य ॥२४॥
मनुष्यवक्त्रोऽश्वसमानकायो धनुर्विगृह्यायतमाश्रमस्थः ।
क्रतूपयोज्यानि तपस्विनश्च ररक्ष (?) पूर्वो धनुषस्त्रिभागः ॥२५॥
मनोरमा चम्पकहेमवर्णा भद्रासने तिष्ठति मध्यरूपा ।
समुद्ररत्नानि विवर्धयन्ती मध्यत्रिभागो धनुषः प्रदिष्टः ॥२६॥
कूर्ची नरो हाटकचम्पकाभो वरासने दण्डधरो निषण्णः ।
कौशेयकान्युद्धहतेऽजिनश्च तृतीयरूपं नवमस्य राशेः ॥२७॥
रोमचितो मकरोपमदंष्ट्रः सूकरकायसमानशरीरः ।
योक्त्रक जालक बन्धनधारी रौद्रमुखो मकरप्रथमस्तु ॥२८॥
कलास्वभिज्ञाब्जदलायताक्षी श्यामा विचित्राणि च मार्गमाणा ।
विभूषणालङ्कृत लोहकर्णा योषा प्रदिष्टा मकरस्य मध्ये ॥२९॥
किन्नरोपमतनुः सकम्बल स्तूणचापकवचैः समन्वितः ।
कुम्भ मुद्वहति रत्नचित्रितं स्कन्धगं मकरराशिपश्चिमः ॥३०॥
स्नेहमद्यजलभोजनागम व्याकुलीकृतमनाः सकम्बलः ।
सूक्ष्मकोशवसनोऽजिनान्वितो गृध्रतुल्यवदनो घटादिगः ॥३१॥
दग्धे शकटे सशाल्मले लोहान्याहरतेऽङ्गना वने ।
मलिनेन पटेन संवृता भाण्डैर्मूर्ध्नि गतैश्च मध्यम ॥३२॥
श्यामः सरोमश्रवणः किरीटी त्वक्पत्रनिर्यासफलैर्बिभर्ति ।
भाण्डानि लोहव्यतिमिश्रितानि सञ्चारयत्यन्तगतो घटस्य ॥३३॥
सुरभाण्डमुक्तामणिशङ्खमिश्रैर्व्याक्षिप्तहस्तः सविभूषणश्च ।
भार्याविभूषार्थमपां निधानं नावाप्लवत्यादिगतो झषस्य ॥३४॥

अत्युच्छ्रितध्वजपताकमुपैतिपोतंकूलंप्रयातिजलधेःपरिवारयुक्ता.
वर्णेनचम्पकमुखीप्रमदात्रिभागोमीनस्यचैषकथितोमुनिभिर्द्वितीयः
श्वभ्रान्तिके सर्पनिवेष्टिताङ्गो वस्त्रैर्विहीनः पुरुषस्त्वटव्याम् ।
चौरानलव्याकुलितान्तरात्माविक्रोशतेऽन्त्योपगतो झषस्य ॥३६॥

(अर्थ)

राशि	द्रेष्काण	स्वरूप
मेष	प्रथम	कमर में सफेद वस्त्र पहिना हुआ, काला रंग वाला, रक्षा करने से समर्थ, भयानक, लाल नेत्र वाला, कुल्हाड़ी कंधे पर लिया हुआ पुरुष ।
	द्वितीय	लाल रंग के वस्त्रों को पहिनी हुई, आभूषण तथा भोजन की चिन्ता करने वाली, घड़े के समान आकार वाली, घोड़े के समान मुख वाली, प्यासी, एक पैर वाली स्त्री ।
	तृतीय	क्रूर स्वभाव, अनेक कलाओं का जाननेवाला, भूरे रंग के बाल वाला, काम करने में तत्पर, नियम भंग करने वाला, हाथ में डंडा लिये हुए, लाल वस्त्र पहिना हुआ, क्रोधी पुरुष ।
वृष	१	जिसके सिर के बाल कटे तथा घुंघरेलू, हों घड़े के समान शरीर वाली, जला हुआ वस्त्र पहिनी हुई, प्यासी, भोजन की चिन्तावाली, भूषणों की इच्छा करती हुई, स्त्री ।
	२	खेती, अन्न, घर, गाय का काम करने वाला, कारीगर, हल जोतने तथा गाढ़ी चलाने में चतुर, बैल के समान गर्दन वाला, भूखा, बकरे के समान मुंह वाला, मैला वस्त्र पहिना हुआ पुरुष ।

	३	हाथी के समान शरीर वाला, सफेद दांत वाला, बाघ के समान पैर वाला, पीला रङ्ग वाला, बकरे तथा मृग के लोभ में व्याकुल चित्त वाला पुरुष।
मिथुन	१	सिलाई, कसीदा आदि काम करने वाली, रूपवती, आभरणों का आदर करने वाली, संतान रहित, लम्बे हाथ वाली, ऋतुमती स्त्री।
	२	बगीचे में स्थित, कवच पहिना हुआ, धनुषधारी, शूर, अस्त्र धारण किया हुआ, गरुड के समान मुख वाला, खेल, पुत्र, आभूषण तथा धन की चिन्ता करने वाला पुरुष।
	३	भूषणों से युक्त, वरुण के समान बहुत रत्नों से युक्त, तूण तथा कवच बांधा हुआ, धनुर्धारी, नाचने गाने बजाने में चतुर, कविता करने वाला पुरुष।
कर्क	१	पत्र, मूल फलों को धारण करने वाला, हाथी के समान शरीर वाला, वन में विहार करने वाला, बाघ के समान पैर वाला, वराह के समान मुख वाला, घोड़े की सी गर्दन वाला पुरुष।
	२	सिर पर कमल का फूल रक्खी हुई, सर्प से युक्त, कर्कश स्वभाव वाली, जङ्गल में जाकर रोने वाली, पलाश वृक्ष की शाखा पर बैठी हुई स्त्री।
	३	स्त्री के पोषण के निमित्त समुद्र में नाव पर बैठा हुआ, सर्प से वेष्टित, सुवर्ण के आभूषणों से युक्त, चिपटा मुख वाला पुरुष।
सिंह	१	माता पिता के वियोग से रोता हुआ, सेमल के पेड़ पर बैठा हुआ, मैला वस्त्र पहिना हुआ, एक गीध, एक गीदड तथा एक वानर को पास बैठाया हुआ पुरुष।

२　　घोडे का सा स्वरूप वाला, गुलाबी रंग के फूलों की माला सिर पर धारण किया हुआ, काला चर्म तथा कम्बल धारण किया हुआ, सिंह के समान जिसके पास जाने में डर लगे, धनुष धारण किया हुआ, चिपटे नाक वाला पुरुष ।

३　　भालू की सी सूरत वाला, वानर के समान चपल, दण्ड फल तथा मास लिये हुए, दाढी वाला, टेढ़े वाल वाला पुरुष ।

कन्का　१　　पुष्पों से भरी हुई टोकरी को ली हुई, मैला तथा जला हुआ वस्त्र पहिती हुई, वस्त्र तथा धन को चाहती हुई, गुरु के कुल में जाने की इच्छा करने वाली कन्या ।

२　　हाथ में कलम लिया हुआ, काला रङ्ग वाला, सिर में वस्त्र डाला हुआ, आमदनी और खर्च का हिसाव करने वाला, वडा धनुष धारण किया हुआ, सारे शरीर में वाल वाला पुरुष ।

३　　गोरे रङ्ग की, साफ धुला हुआ दुपट्टा पहिनी हुई, लंबे कद की, हाथ में घडा ली हुई, पवित्र हो कर देवता के मन्दिर को जाने को तयार स्त्री ।

तुला　१　　वाजार में दूकान खोला हुआ, तराजू हाथ में लिया हुआ, तोलने में चतुर, वर्तन का मूल्य वतलाने वाला पुरुष ।

२　　गीध के समान मुख वाला, कलश हाथ में ले कर गिरने को तयार, भूखा और प्यासा, मनसे स्त्री पुत्रों की याद करता हुआ पुरुष ।

३　　रत्न धारण किया हुआ, वन में मृगों को डराता

हुआ, सुवर्ण, तूणीर तथा कवच धारण किया हुआ, फल तथा मांस धारण किया हुआ, वानर के समान स्वरूप वाला पुरुष।

वृश्चिक १ वस्त्र तथा आभूषणों से रहित, समुद्र के किनारे पर आती हुई, स्थान हीन, सर्प से पैर बंधी हुई, मनोहर स्त्री।

२ पति के निमित्त स्थान तथा सुख को चाहने वाली, कछुवा अथवा कुम्भ के समान शरीर वाली, स्त्री।

३ मोटा, चिपटा तथा कछुए के समान मुख वाला, कुत्ता मृग वराह तथा सियार को डराने वाला, वन की रक्षा करने वाला पुरुष।

धन १ घोड़े के समान शरीर वाला, धनुष लेकर आश्रम में बैठा हुआ, यज्ञ के उपयोगी पात्रों की तथा तपस्वियों की रक्षा करनेवाला पुरुष।

२ चित्त को हरने वाली, चम्पक पुष्प अथवा सुवर्ण के समान रंग वाली, भद्रासन में बैठी हुई, सामान्य रूप वाली, समुद्र के रत्नों को बनाती हुई स्त्री।

३ दाढ़ीवाला, सुवर्ण अथवा चम्पा पुष्प के समान वर्ण-वाला, श्रेष्ठ आसन पर बैठा हुआ, डंडा हाथ में लिया हुआ, रेशमी वस्त्र पहिना हुआ, मृगचर्म पास रक्खा हुआ पुरुष।

मकर १ सर्वाङ्ग में बालों से भरा हुआ, मगर के समान दाढ़ वाला, वराह के समान शरीर वाला, डोरी तथा जाल लिया हुआ, भयानक मुख वाला पुरुष।

२ कलाओं में चतुर, कमल के समान नेत्र वाली, श्यामवर्ण वाली अथवा षोडश वार्षिकी, अनेक प्रकार की विचित्र वस्तुओं को ढूंढ़ती हुई, आभूषणों से अलंकृत स्त्री।

	३	किन्नर के समान शरीरवाला, कम्बल धारण किया हुआ, तूणीर, धनुष तथा कवच से युक्त, रत्नों से चित्रित कुम्भ को कन्धे पर रक्खा हुआ मनुष्य ।
कुम्भ	१	स्नेह (घी आदि), मद्य, जल तथा भोजन के मिलने की चिन्ता से युक्त, कम्बल सहित, पतले रेशमी वस्त्र तथा अजिन से युक्त, गीध के समान मुख वाला पुरुष ।
	२	जली हुई गाड़ी पर वन में सीमल की लकड़ी रख कर, लोहा इकट्ठा करती हुई, मैला वस्त्र पहिनी हुई, सिर पर वर्तन रक्खी हुई स्त्री ।
	३	काला रंग वाला, कानों में बाल जमा हुआ, मुकुट पहिना हुआ, त्वचा, पत्र, गोंद, फलों को धारण करता हुआ, लोह युक्त पात्रों को धारण करने वाला पुरुष ।
मीन	१	माला, वर्तन, मोती, मणि, शङ्ख को हाथ में लिया हुआ, आभूषण सहित, स्त्री को भूषित करने के निमित्त नाव पर सवार होकर समुद्र में जाता हुआ पुरुष ।
	२	चम्पा पुष्प के समान वर्ण वाली, परिवार से युक्त, समुद्र के किनारे ऊंची पताका वाले जहाज पर जाने वाली स्त्री ।
	३	खड्ड के समीप, सर्प से वेष्टित अङ्गवाला, वस्त्र रहित, चोर तथा अग्नि से व्याकुल चित्त वाला, वन में, रोता हुआ पुरुष ।

चर स्थिर द्विस्वभाव लग्न फलम्

लग्ने चरे विहितलाभरणाः पदार्थ
नाशो गदक्षय गमागम वन्धमोक्षाः ।
प्रदुर्भवन्ति परचक्र मुपैति शीघ्र
कल्याणवृद्धि कलहोपशमाश्च नस्युः ॥१॥

वृष सिंह वृश्चिक घटे विद्धि स्थानं गमागमौ नस्तः ।
न मृतं न चापि नष्टं न रोगशान्तिर्न चाभिभवः ॥२॥
द्व्यङ्गोदयैर्हृतधनाप्ति रभीष्टवस्तु
प्राप्तिश्चिरेण गमागम बन्धमोक्षाः ।
प्रष्टुर्भवन्ति परचक्र मुपैति वीर्यं
रोगी च जीवति कलिं च हिनोति भूपः ॥३॥
स्थिरोदये चन्द्रमसि स्थिरस्थे द्व्यङ्गेहिमांशौ द्वितनूदयेपि ।
चरोदये शीतकरे चरे तथा फलं विशेषात्प्रथमोदितंभवेत् ॥४॥

(अर्थ)

चर लग्न में प्रश्न हो (अथवा चन्द्रमा चर लग्न में हो) तो अभीष्ट वस्तु का लाभ, युद्ध, पदार्थनाश, रोग का नाश, आना जाना, बन्दी का मोक्ष ये बातें सिद्ध होती हैं तथा शत्रु की सेना शीघ्र समीप में आजाती हैं। परन्तु कल्याण की वृद्धि तथा कलह की शान्ति नहीं होती है ॥१॥

(स्थिर लग्न) वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ लग्न हों (अथवा चन्द्रमा स्थिर लग्न में हो) तो खोई हुई वस्तु अपने ही स्थान पर होती है, आना जाना नहीं होता है, रोगी नहीं मरता है, वस्तु का नाश नहीं होता है, रोग की शान्ति नहीं होती है, शत्रु से पराजय भी नहीं होता है ॥२॥

द्विस्वभाव लग्न हो (अथवा चन्द्रमा द्विस्वभाव लग्न में हो) तो चोरी हुई वस्तु की प्राप्ति, अभीष्ट लाभ, गमागम, बन्ध मोक्ष देरी में होते हैं, शत्रु की सेना बलवान् हो जाती है, रोगी अच्छा हो जाता है, राजा कलह को छोड़ देता है ॥३॥

यदि चन्द्रमा चर, स्थिर अथवा द्विस्वभाव लग्न में हो तो पूर्वोक्त फल होते हैं ॥४॥

कार्य सिद्धि योगाः

सौम्ये विलग्ने यदिवास्यवर्गे
शीर्षोदये (मि सिं. कन्या तु वृ. कुं.) सिद्धि मुपैति कार्यम् ।

अतो विपर्यस्त मसिद्धिहेतुः
कृच्छ्रेण संसिद्धिकरं विमिश्रम् ॥१॥
लग्नपतिर्यदि लग्नं कार्याधिपश्च वीक्ष्यते कार्यम् ।
लग्नाधीशः कार्यं कार्येश पश्यति विलग्नम् ॥२॥
लग्नेश कार्येशं विलोकते लग्नपं तु कार्येशः ।
शीतगुदृष्टो सत्या परिपूर्णा कार्यनिष्पत्तिः ॥३॥
लग्नमृते किमपि नो वाच्यम् ॥४॥

केन्द्रत्रिकोणेषु शुभस्थितेषु पापेषु केन्द्राष्टमवर्जितेषु ।
सर्वार्थसिद्धिं प्रवदेन्नराणां विपर्ययस्थेषु विपर्ययः स्यात् ॥५॥
शीतांशुशुक्रज्ञसुरार्चितानामेकोनिजोच्चं भवनं प्रपश्येत् ।
लग्ने तदा स्थानसुखार्थलाभान् समुन्नतिं चाशु समेति मर्त्यः ॥६॥
कोणस्थितः पूर्णतनुः शशाङ्को जीवेन दृष्टो यदिवा सितेन ।
क्षिप्रं प्रष्टुस्य करोति लब्धिं लाभोपयातो बलवात् सितश्च ॥७॥

गुरौ विलग्ने तपनेऽम्बरस्थे (१०)
प्रष्टा पुमान्सौख्यजयौ च लाभम् ॥८॥
युग्मे (३) सितेज्यौ शशिजो विलग्ने
मेषूरणे (१०) भूमिसुतो यदा स्यात् ।
प्रष्टा पुमान्वित्तजयौ च राज्यं
स्थितिं च सौख्यं लभते तदानीम् ॥९॥
लग्ने गुरौ स्थान सुखाम्बरार्थलाभः सुवृद्ध्यर्थसुखाप्ति रिन्दुजे ।
शुक्रे विलग्नेऽर्थ सुखास्पदाप्तिः सूर्ये भयं कार्य विनाश रुग्भयम् ॥१०
केन्द्र कोणे शुभास्त्र्यायषष्ठे खलाः ।
शीर्षलग्नं यदा कार्यसिद्धिस्तदा ॥११॥

लग्नेश्वरो लग्नगतः शुभग्रहैर्दृष्टो युतः स्याद्गदितोऽधिकारवान्
प्रष्टुर्निहन्यादखिलानुपद्रवान्शरीरदोषांश्च सुखार्थवित्तदः ॥१२॥

लग्नेश कार्येश्वरयोः समागमः फलत्यवश्यं शुभखेटयोर्द्वयोः ।
तयोश्चपापग्रहयोश्च सङ्गमः प्रष्टुर्भवेत्स्वल्पक कार्यसिद्धिः ॥१३॥

(अर्थ)

लग्न में सौम्य ग्रह बैठा हो अथवा सौम्य ग्रह की राशि हो अथवा सौम्य राशि हों अथवा शीर्षोदय राशि (३,५,६,७,८,११) लग्न में हो तो कार्य की सिद्धि होती है। इससे विपरीत होने पर सिद्धि नहीं होती है। यदि मिश्रित हों तो कष्ट से कार्य सिद्ध होता है ॥१॥

जब लग्नपति लग्न को देखता हो, कार्येश कार्य को देखता हो, लग्नेश कार्य को, कार्येश लग्न को, लग्नेश कार्येश को, तथा कार्येश लग्न को देखते हों, चन्द्रमा की दृष्टि हो तो कार्य की पूर्ण सिद्धि होती है ॥२॥३॥

बिना लग्न के विचार किये हुए कोई फल नहीं कहना चाहिये ॥४॥

यदि केन्द्र अथवा त्रिकोण में शुभ ग्रह हों, केन्द्र तथा अष्टम स्थान को छोड कर शेष स्थानों में पाप ग्रह हों, सब बातों में सिद्धि होती है, यदि इसके विपरीत ग्रह बैठे हों तो विपरीत फल होता है ॥५॥

चन्द्रमा, शुक्र, बुध, बृहस्पति में से एक ग्रह लग्न में बैठ कर अपने उच्च स्थान को देखता हो तो स्थान, सुख, अर्थ, लाभ तथा उन्नति की प्राप्ति होती है ॥६॥

यदि पूर्ण चन्द्रमा कोण पर बैठा हो तथा उस पर बृहस्पति अथवा शुक्र की दृष्टि हो, अथवा शुभ ग्रह बलवान् हो कर लाभ में बैठा हो तो नष्ट वस्तु की शीघ्र प्राप्ति होती है ॥७॥

बृहस्पति लग्न में हो, सूर्य दशम स्थान में हो तो सुख, जय तथा लाभ की प्राप्ति होती है ॥८॥

मिथुन में बृहस्पति तथा शुक्र हों, लग्न में बुध हो, दशम स्थान में मंगल हो तो धन, जय, राज्य, तथा सुख की प्राप्ति होती है ॥९॥

लग्न में बृहस्पति हो तो स्थान, सुख, वस्त्र, द्रव्य का लाभ होता है, बुध हो तो वृद्धि, धन तथा सुख की प्राप्ति होती है, शुक्र हो तो धन, सुख तथा पदवी की प्राप्ति होती है, सूर्य हो तो भय, कार्यनाश तथा रोग भय होते हैं ॥१०॥

जब केन्द्र तथा कोण में शुभ ग्रहों, ५,६,११ स्थानों में पाप ग्रह हों, शीर्षोदय लग्न हो तो कार्य सिद्ध होता है ॥११॥

जब लग्नेश लग्न में हो, शुभ ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त हो, तथा बलवान् हो तो सब उपद्रवों का तथा शरीर के दोषों का नाश होता है। सुख, अभीष्ट तथा धन की प्राप्ति होती है ॥१२॥

यदि लग्नेश तथा कार्येश दोनों शुभ ग्रह हों तथा एक साथ बैठे हों तो अवश्य शुभ फल मिलता है, यदि वे दोनों पाप ग्रह हों तथा एक साथ बैठे हों तो कार्य की अल्प सिद्धि होती है ॥१३॥

अर्धयोगादयः

कथयन्ति पादयोगं पश्यति सौम्यो नलग्नपो लग्नम् ।
लग्नाधिपं च पश्यति शुभग्रहश्चार्धं योगोऽत्र ॥१॥
एकः शुभग्रहो यदि पश्यति लग्नाधिपं विलग्नंवा ।
पादोनयोग माहुस्तदा बुधाः कार्यसंसिद्ध्यै ॥२॥

(अर्थ)

यदि सौम्य ग्रह लग्न को देखता हो परन्तु लग्नेश लग्न को न देखे तो चतुर्थांश कार्य सिद्धि का योग होता है। यदि शुभ ग्रह लग्नेश को देखे तो आधा योग कार्य सिद्धि का होता है ॥१॥

यदि एक शुभ ग्रह लग्नेश को तथा लग्न को भी देखे तो $\frac{3}{4}$ कार्य सिद्धि का योग होता है ॥ २ ॥

कार्यविघातयोगाः

लग्नस्थितं भूमिज मर्कपुत्रं पश्येद्यदा शत्रुग्रहस्तदा स्यात् ।
चौराद्भयंरोगभयविपत्तिः स्त्रीभिः कलिर्वाग्निभयाभिघातः ॥१॥

मन्दे विलग्नेऽर्ककुजेन्दुदृष्टे विरोधकार्यार्थविनाशरोगाः ।
राहौ विलग्ने शशिसूर्यभौमदृष्टेऽभिघातः कलहो भयं स्यात् ॥२॥
लग्नेव्ययेरन्ध्रगत शशाङ्कः पूर्णोऽपिनेष्टो धनकार्यविघ्नकृत् ।
बुधे विलग्ने शशिपापदृष्टेऽर्थाप्तिस्त्वनर्थोऽपि भवेद्दशायाः ॥३॥
क्रूर ग्रहा द्वादशधामसंस्थाः सर्वेऽथवा लाभगता बलाढ्याः ।
विलग्न यामित्र विनाशगावा सर्वार्थकार्यास्पदनाशदाःस्यु. ॥४॥
चेत्प्रश्नलग्नादरिकामनाश स्थिता खलावानतुपान्विताचा ।
प्रष्टुस्तदा द्रव्यविनाशहानिक्लेशामयादि प्रतिवादिचिन्ता ॥५॥
लग्नात्तधर्मंहिबुकात्मजरन्ध्रकर्म दुश्चिक्यगावाअशुभग्रहेन्द्राः ।
कार्याभिघातमशुभंसुखवित्तनाशंकुर्युर्विरोधकलहंपरिपृच्छकानाम्
लग्नाष्टवित्तात्मजकण्टकस्थाः पापानसौम्यैः सहितेक्षिताःस्युः ।
कार्याभिघातं जयवित्तनाशं नष्टार्थनाशं च भयं च कुर्युः ॥७॥

(अर्थ)

जब लग्न में मङ्गल अथवा शनैश्चर हो तथा उसको शत्रु ग्रह देखे तो चोर से भय, रोग से भय, विपत्ति, स्त्रियों मे कलह, अग्नि से भय तथा चोट लगने की डर होती है ॥१॥

जब लग्न में शनि हो और उस पर सूर्य मङ्गल अथवा चन्द्रमा की दृष्टि हो तो लोगों से वैर होता है, कार्य तथा धन का नाश होता है। रोग होता है। यदि लग्न में राहु हो और उसपर चन्द्रमा सूर्य तथा मङ्गल की दृष्टि हो तो चोट लगती है, झगडा तथा भय होता है ॥२॥

लग्न, व्यय तथा अष्टम स्थान में चन्द्रमा शुभ नहीं होता है यद्यपि वह पूर्ण भी हो, वह धन के कार्य में विघ्न करता है। यदि लग्न में बुध हो, उस पर चन्द्रमा अथवा पाप ग्रह की दृष्टि हो तो धन की प्राप्ति होती है परन्तु अनर्थ भी होता है ॥ ३ ॥

यदि बारहवें स्थान में सब क्रूर ग्रह हों अथवा बलवान् होकर लाभ

स्थान में हों, अथवा १,७,८, स्थानों में हों तो धन, कार्य तथा पदवी का नाश करते हैं ॥४॥

यदि प्रश्न लग्न से ६,७,८ स्थानों में पाप ग्रह हों अथवा लग्नेश से युक्त हों तो द्रव्य का नाश, हानि, क्लेश, रोग होते हैं तथा प्रतिवादी की चिन्ता होती है ॥५॥

जब पाप ग्रह १,७,६,४,५,८,१०,३ स्थानों में हों तो कार्य में विघ्न होता है, अशुभ होता है, सुख तथा धन का नाश होता है, लोगों से विरोध तथा कलह होते हैं ॥ ६ ॥

यदि पाप ग्रह ६,८,२,५,४,७,१० स्थानों मे हों शुभ ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त न हों तो कार्य में विघ्न होता है, जय तथा धन का नाश होता है, नष्ट धन की प्राप्ति नहीं होती है तथा भय होता है ॥७॥

अवधि ज्ञानम्

ग्रह· सर्वोत्तमबलो लग्नाद्यस्मिन्गृहेस्थितः ।
मासैस्तुतुल्यसंख्याङ्कै निर्वृत्तिं यातु रादिशेत् ॥१॥
चरांशस्थे ग्रहे तस्मिन्कालमेवं विनिर्दिशेत् ।
द्विगुणं स्थिरभागस्थे त्रिगुणं द्व्यात्मकांशके ॥२॥
यातुर्विलग्नाज्ज्ञामित्र भवनाधिपतिर्यदा ।
करोति वक्रमावृत्तेः कालं तं ब्रुवतेऽपरे ॥३॥
ग्रहो विलग्नाद्यतमे गृहेतु तेनाहता द्वादश राशयः स्युः ।
तावद्दिनान्यागमनस्य विद्यान्निवर्तनं वक्रगतैर्ग्रहैस्तु ॥४॥
यदालग्नगो नूनमायातिसौम्यस्तृतीयंतदाभ्येतिपान्थो यदीन्दुः।
विवाहस्मरं कंटकाद्ग्रिमर्क्षं व्रजेदागमस्तत्क्षणे ह्यन्यदेशात् ॥५॥
लग्नाद्बली तिष्ठति यत्र गेहेकश्चिद्ग्रहस्तद्ग्रहसम्मिताङ्काः ।
सूर्याहतास्तैर्दिवसैः समेति वक्री सचेत्तैः पुनरेव गन्ता ॥६॥
यदाङ्गनेशस्तनुमेति यद्वा लग्नाधिनाथेन कृतेत्थसालः ।
तदा प्रवासी स्वगृह समेति चरर्क्षयोगे सविशेषतश्च ॥७॥

यदा नवेशस्तनुमेति यद्वा लग्नाधिनाथेन कृतेत्थसालः ।
प्रष्टुस्तदा स्यादुगमनं च तत्र चरर्क्षयोगे सविशेषतः स्यात् ॥८॥
लग्नस्य योंशको देवि तस्य स्वामी तु यो ग्रहः ।
तद्वशात्कालविज्ञान मुदितांशकसंख्यया ॥९॥
ऋतुत्रयं वासरनायकस्य क्षणं शशाङ्कस्य दिनं कुजस्य ।
विदो ऋतु र्देवगुरोस्तु मासः पक्षो भृगोर्वत्सर मर्कसूनोः ।
अष्टौतु मासास्तुहिमांशुशत्रोः केतोस्तुमासत्रयमेवकालः ॥१०॥
चरलग्ने शीघ्रं, द्विस्वभावे विलम्ब, स्थिरे चिरकालेन ॥११॥
लग्नचन्द्रान्तरयो रन्तरालसंख्यया फलपाककालोवा ॥१२॥

(अर्थ)

सबसे उत्तम बल वाला ग्रह लग्न से जिस स्थान पर स्थित हो उसी स्थान की संख्या के समान महीनों में गया हुआ आदमी लौट आवेगा ॥१॥

चर नवांश में जब ग्रह हो तब पूर्वोक्त काल बतलाना चाहिये । स्थिर में उसका दोगुना तथा द्विस्वभाव में उसका तिगुना समय जानना चाहिये ॥२॥

कोई आचार्य कहते हैं कि जब लग्न से सप्तम स्थान का स्वामी वक्री होगा तब प्रवासी मनुष्य लौटेगा ॥३॥

लग्न से जिस घर पर ग्रह हो उससे १२ राशियों को गुणा करे जो गुणन फल हो उतने ही दिनों में आदमी परदेश से लौट आवेगा। वक्री ग्रह से लौटना बतलावे ॥४॥

जब सौम्य ग्रह लग्न से तीसरे स्थान पर पहुंचे तब परदेश से आदमी लौट आता है। जब चन्द्रमा केन्द्र से आगे बढ़े उसी समय परदेश से आदमी लौट आता है ॥५॥

लग्न से जिस घर में बलवान् ग्रह हो उस घर के अङ्क को १२ से गुणा करने से जो गुणन फल हो उतनेही दिन में मनुष्य लौट आता है। यदि वह ग्रह वक्री हो तो लौट कर फिर चला जावेगा ॥६॥

जब सप्तमेश लग्न में आवे अथवा लग्नेश के साथ इत्थशाल करे तब प्रवासी अपने घर आवेगा । चर लग्न हो तो विशेष योग होता है ॥७॥

जब नवमेश लग्न में आवे अथवा जब लग्नेश के साथ इत्थशाल योग करे तब प्रश्नकर्ता की यात्रा होगी । चर लग्न में विशेष योग होता है ॥८॥

लग्न के नवांश के स्वामी ग्रह से नीचे लिखी अवधि बतलानी चाहिये ॥९॥

सूर्य की अवधि ६ महीना है, चन्द्रमा की क्षण, मङ्गल की एक दिन' बुध की २ महीना, बृहस्पति को एक महीना, शुक्र का १५ दिन, शनि को एक बरस, राहु की ८ महीना, केतु की ३ महीना जाननी चाहिये ॥१०॥

चर लग्न में शीघ्र (४।५ दिन में), द्विस्वभाव में विलम्ब से (१०।१५ दिन में), स्थिर लग्न में बहुत देरी में अवधि बतलाना चाहिये ॥११॥

लग्न तथा चन्द्रमा के बीच में जितने घर हों उतने दिन में फल होगा ऐसा कहना चाहिये ॥१२॥

पुष्पनामग्रहणाल्लग्नज्ञानम्.

यथा प्रश्नकर्ता कस्यापि पुष्पस्य नाम वदेत् । पुष्पवर्णाद्राशिवर्णसदृश लग्नं स्थिरीकृत्य कुण्डली लेख्या । ततः फलानि वदेत् । स्थूलरीतिरियम् ॥

रक्तः श्वेतः शुकतनुनिभः पाटलो धूम्र पाण्डुश्चित्रः कृष्णः कनकसदृशः पिङ्गलः कर्बुरश्च । बभ्रुः स्वच्छः ॥

(अर्थ)

प्रश्न कर्ता से पूछे कि कोई पुष्प का नाम लो । उस पुष्प का जो वर्ण हो उस वर्ण वाली जो राशि हो उससे लग्न स्थिर करे । तदनुसार फल कहे । परन्तु यह बहुत स्थूल रीति है ।

राशियों का वर्ण निम्नलिखित प्रकार से है—

मेष का लाल, वृष का सफेद, मिथुन का हरा, कर्क का गुलाबी, सिंह का धुंए का सा, कन्या का चित्र विचित्र, तुला का काला, वृश्चिक

का सुनहरा, धन का पीला, मकर का चितकबरा, कुम्भ का नकुल के समान, मीन का स्वच्छ ॥

(२) मूक प्रश्न प्रकरणम्.

प्रश्नलग्नान्मानसी चिन्ता.

मेषे च द्विपदा चिन्ता वृषे चिन्ता चतुष्पदाम् ।
मिथुने गर्भचिन्ता च व्यवसायस्य कर्कटे ॥१॥
सिंहे च जीवचिन्ता स्यात्कन्यायां च स्त्रियास्तथा ।
तुलायां धनचिन्ता च व्याधिचिन्ता च वृश्चिके ॥२॥
चापे च धनचिन्ता स्यान्मकरे शत्रुचिन्तनम् ।
कुम्भे स्थानस्य चिन्ता स्यान्मीने चिन्ता च दैविकी ॥३॥

(अर्थ)

यदि प्रश्न के समय मेष लग्न हो तो प्रश्न कर्ता के मन में द्विपद अर्थात् मनुष्यों की चिन्ता हो। वृष लग्न में चौपायों की, मिथुन में गर्भ की, कर्क मे व्यवसाय की, सिंह में जीव की, कन्या मे स्त्री की, तुला मे धन की, वृश्चिक मे रोग की, धन मे धन की. मकर में शत्रु की, कुम्भ में स्थान की, मीन में देव सम्बन्धी चिन्ता जाननी चाहिये ॥

मूक प्रश्नः

रविभौमौ बलयुक्तौ केन्द्रे धातुप्रदौ शनीन्दुसुतौ ।
मूलकरौ शशिशुक्रौ सुरगुरवो जीवकारकाः प्रश्ने ॥१॥
मेषालिसिंहलग्नेहि कुजार्काभ्यां युतेक्षिते ।
धातुचिन्ता मृगकन्या कन्याकुम्भे युतेक्षिते ॥२॥
मन्दविद्भ्यां मूलचिन्ता कर्कमीनधनुस्तुले ।
वृषे च भृगुचन्द्रेज्यै दृष्टे जीवस्य चिन्तना ॥३॥
लग्न लाभपयोः स्वामी तयोर्यद्बलवान् शशी ।
तस्य भावस्य या चिन्ता प्रष्टुः सा हृदि वर्तते ॥४॥

एवं बलाधिकाच्चन्द्रा लग्ननाथो यतः स्थितः ।
दैवज्ञेन विनिर्णेयः प्रश्नस्तद्भावसम्भवः ॥५॥
अथवा केवल चन्द्रस्थानादेव ॥
अथवोच्चग्रहोयत्र स्थित स्तद्भावादेव ॥६॥
तनुलाभपयोश्चयोवली शशभृयत्र ततस्तु भावके ।
अनुयोगकृतो विचिन्तनं हृदि तद्भावगतस्य वस्तुनः ॥७॥
आत्मसमं लग्नगतैस्तृतीयगै र्भ्रातरं सुतं सुतगैः ।
माता तद्भगिनी वा चतुर्थगैः शत्रुगैः शत्रुः ।
जायासप्तमसंस्थै र्नवमं धर्माश्रितो नृपो दशमे ॥
(बलवद्भिर्ग्रहैस्तत्र संस्थै रित्यध्याहारः) ॥८॥
रवौ स्वभे भूपतिराज्यचिन्ता विधौजलक्षेत्रनिखातचिन्ता ।
कुजेऽरिभूपालभयस्य चिन्ता बुधे कृषिक्षेत्रखलायुधानाम् ॥९॥
चिन्ता गुरौ धर्मसुहृन्नृपाणां भृगौ स्वभेवा खिलसौम्यचिन्ता ।
शनैश्चरै स्वर्क्षगते नरस्य चिन्ताभवेद्द्वेशममहीपितृणाम् ॥१०॥
मार्गारिचिन्ताथ तनौ हिमांशौ
क्षेत्रार्थभोज्यस्य भवेद्धने च ।
विप्रप्रवासस्य तथा तृतीये
वृष्टेश्चतुर्थे च गृहाम्बयोश्च ॥११॥
सुते सुतानां च रिपौ गदानां
मदे युवत्या निधने मृतेश्च ।
मार्गप्रयाणस्य तपःस्थिते स्यात्
कर्मस्थिते क्षेत्रधूर्तादिचिन्ता ॥
लाभे शशाङ्के शुचिवस्तुवस्त्र
चिन्ता व्ययस्थे हृतवस्तुलब्धेः ॥१२॥
प्रष्टुः स्वचिन्ता सबले कुजेस्या
जीवे प्रिया रात्रिकरे जनन्याः ।

वंशस्य शुक्रे महजस्य सौम्ये
शनौ रिपूणां जनकस्य सूर्ये ॥१३॥
उदये यदि चरराशि द्रेष्काणे वा नवांशके लग्ने ।
यद्वाखेटेचरभेदगमाद्भ्रष्टे प्रवासचिन्ता स्यात् ॥१४॥

(अर्थ)

यदि केन्द्र में सूर्य अथवा मङ्गलबलवान् होकर बैठे हों तो धातु का प्रश्न जानना चाहिये। यदि शनि अथवा बुध हों तो मूल का प्रश्न जानना चाहिये। यदि चन्द्रमा, शुक्र अथवा बृहस्पति हो तो जीव प्रश्न जाननी चाहिये ॥१॥

मेष वृश्चिक अथवा सिंह लग्न हो, मङ्गल अथवा सूर्य से युक्त वा दृष्ट हो तो धातु की चिन्ता जाननी चाहिये। मकर, मिथुन, कन्या, कुम्भ लग्न हो, शनि अथवा बुध से युक्त अथवा दृष्ट हो तो मूल चिन्ता जाननी चाहिये। कर्क, मीन, धन, तुला, वृष लग्न हो, शुक्र, चन्द्रमा, बृहस्पति से युक्त अथवा दृष्ट हो तो जीवचिन्ता जाननी चाहिये ॥२॥३॥

लग्नेश अथवा लग्नेश से जिस स्थान में चन्द्रमा बैठा हो उसी भाव की चिन्ता प्रश्न करने वाले के मन में जाननी चाहिये ॥४॥

अथवा बलवान् चन्द्रमा से जिस स्थान में लग्नेश बैठा हो उस भाव का प्रश्न जानना चाहिये ॥५॥

अथवा जिस स्थान में चन्द्रमा बैठा हो उस स्थान का प्रश्न जानना चाहिये। अथवा उच्च ग्रह अथवा बलवान् ग्रह जिस स्थान में बैठा हो उस भाव का प्रश्न जानना चाहिये ॥६॥

लग्नेश तथा लग्नेश में से जो बलवान् हो उससे चन्द्रमा जिस भाव में हो उस भाव की चिन्ता प्रश्नकर्ता के हृदय में जाननी चाहिये ॥७॥

यदि लग्न में बलवान् ग्रह हो तो अपने विषय में प्रश्न जानना चाहिये, तीसरे स्थान में हो तो भाई के विषय में, पञ्चम स्थान में हो तो सन्तान के विषय में, चतुर्थ स्थान में हो तो माता अथवा मौसी के विषय में, छठे

स्थान में हो तो शत्रु के विषय में, सप्तम स्थान में हो तो स्त्री के विषय में, नवम स्थान में हो तो धर्म के विषय में, दशम स्थान में हो तो राजा के विषय में प्रश्न जानना चाहिये ॥८॥

यदि सूर्य अपने घर का हो तो राजा अथवा राज्य (नौकरी) की चिन्ता मन में हो, चन्द्रमा स्वगृही हो तो जल, क्षेत्र अथवा निखात (गड़ी हुई वस्तु) की चिन्ता हो, मङ्गल अपने घर का हो तो शत्रु भय अथवा राज भय की चिन्ता हो, यदि बुध अपने घर का हो तो खेती, खेत अथवा आयुधों की चिन्ता हो, यदि बृहस्पति स्वगृही हो तो धर्म, मित्र अथवा राजा के विषय में चिन्ता हो, यदि शुक्र स्वगृही हो तो अच्छी बातों की चिन्ता हो, यदि शनैश्चर अपने घर का हो तो घर, भूमि अथवा पितरों की चिन्ता जाननी चाहिये ॥९॥१०॥

यदि चन्द्रमा लग्न में हो तो मार्ग तथा शत्रु की चिन्ता हो, यदि धन स्थान में हो तो क्षेत्र, धन अथवा भोज्यपदार्थ की चिन्ता हो, यदि तीसरे स्थान में हो तो प्रवास की चिन्ता जाननी चाहिये यदि चतुर्थ स्थान में हो तो वृष्टि, घर अथवा माता के विषय में चिन्ता जाननी चाहिये ॥११॥

पञ्चम स्थान में हो तो सन्तान की, छठे स्थान में हो तो रोग की, सप्तम स्थान में हो तो स्त्री की, अष्टम स्थान में हो तो मृत्यु की, नवम स्थान में हो तो मार्ग अथवा यात्रा की, दशम स्थान में हो तो क्षेत्र, धूर्त आदि की चिन्ता, लाभ में हो तो स्वच्छ वस्तु अथवा वस्त्र की, बारहवे स्थान में हो चोरी हुई वस्तु के लाभ की चिन्ता जाननी चाहिये ॥१२॥

यदि मङ्गल बलवान् हो तो अपने विषय में चिन्ता जाननी चाहिये। यदि बृहस्पति बलवान् हो तो स्त्री की चिन्ता जाननी चाहिये। यदि चन्द्रमा बलवान् हो तो माता की चिन्ता जाननी चाहिये। यदि शुक्र बलवान् हों तो वश की चिन्ता जाननी चाहिये। यदि बुध बलवान् हो तो भाई की

चिन्ता जाननी चाहिये। यदि शनि बलवान् हो तो शत्रु की चिन्ता जाननी चाहिये। यदि सूर्य बलवान् हो तो पिता की चिन्ता जाननी चाहिये ॥१३॥

यदि लग्न में चर राशि हो अथवा लग्न में चर राशि का द्रेष्काण अथवा नवांशक हो अथवा चर राशि का कोई ग्रह दशम घर से आगे गया हो तो पूछने वाले को यात्रा की चिन्ता है ऐसा जानना चाहिये ॥१४॥

मुष्टि प्रश्नः

मेषे रक्तं वृषे पीतं मिथुने नीलवर्णकम्।
कर्के च पाण्डुरं ज्ञेयं सिंहे धूम्रं प्रकीर्तितम् ॥१॥
कन्यायां नीलमिश्रं तु तुलायां पीतमिश्रितम्।
वृश्चिके ताम्रमिश्रं च चापे पीत विनिश्चितम् ॥२॥
नक्रे कुम्भे कृष्णवर्णं मीने पीतं वदेत्सुधीः ॥३॥
(एव मेव लग्नेशवशाद्रूपादयो वाच्याः)

(अर्थ)

प्रश्न समय मेष लग्न हो तो वस्तु का रंग लाल होना है, वृष लग्न हो तो पीला, मिथुन हो तो नीला, कर्क हो तो गुलाबी सिंह हो तो धुआँ का जैसा रंग, कन्या में नीला, तुला में पीला, वृश्चिक में लाल, धन में पीला, मकर कुम्भ में कृष्ण वर्ण, मीन में पीला रंग जानना चाहिये ॥ इसी प्रकार लग्नेश के वश से वस्तु का रूप आदि बतलाना चाहिये ॥

(३) प्रश्नविशेष प्रकरणम्

तनुभावप्रश्न

यदि लग्ने लग्नपतिः सौम्ययुतो वा विलोकितः पापैः।
तत्प्रष्टुर्व्याकुलता शरीरदोषा विनश्यन्ति ॥

(अर्थ)

यदि लग्नेश लग्न में हो, सौम्य ग्रह से युक्त हो, अथवा पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो प्रश्न कर्ता के चित्त की व्याकुलता का तथा शरीर के दोषों का नाश हो जाता है ॥

धनलाभप्रश्नः

चन्द्र लग्न धनाधीशा दृष्टायुक्ताः परस्परम् ।
धन केन्द्र त्रिकोणस्थाः सद्योलाभकरामताः ॥ १ ॥
चतुर्थे सप्तमे चन्द्रे खे रवौ लग्नगे शुभे ।
प्रष्टुः सद्योऽर्थलाभः स्याल्लग्ने वा सुरमन्त्रिणि ॥२॥
लग्ने धने त्रिकोणे वा चन्द्रे वित्ते च लग्नपः ।
अन्योन्यंलोकिता युक्ता द्रुतं लाभप्रदा मताः ॥३॥
त्रिकोणकेन्द्रगाः सौम्याः सद्योलाभप्रदा मताः ।
केन्द्रत्रिकोणगा. पापा लाभे विघ्नकरा मताः ॥ ४ ॥

(अर्थ)

जब चन्द्रमा लग्नेश तथा धनेश आपस में एक दूसरे को देखते हों अथवा धन, केन्द्र त्रिकोण में एक साथ बैठे हों तो तत्काल लाभ होता है ॥१॥

जब चतुर्थ अथवा सप्तम स्थान में चन्द्रमा हो, दशम स्थान में सूर्य हो, लग्न में शुभ ग्रह हो तो तत्काल लाभ होता है ॥२॥

जब लग्न, धन अथवा त्रिकोण मे चन्द्रमा हो, धन स्थान में लग्नेश बैठा हो, अथवा परस्पर एक दूसरे को वे देखते हों तो शीघ्र लाभ होता है ॥३॥

यदि त्रिकोण अथवा केन्द्र मे सौम्य ग्रह हो तो तत्काल लाभ होता है। यदि पाप ग्रह हो तो लाभ होने में विघ्न होता है ॥४॥

गर्भिणीप्रश्नः

स्थिरलग्ने गर्भस्थितिः ।
तत्प्रश्नलग्ने रविजीवभौमा स्तृतीयशैले नवपञ्चमेच ।
गर्भःपुमान्वै ऋषिभिः प्रणीतश्चान्यग्रहे स्त्री विबुधैः प्रणीता ॥१॥
ओजर्क्षे (विषमराशौ) पुरुषांशके (विषमनवमांशे) सुबलिभि
र्लग्नार्क गुर्विन्दुभिः

पुंजन्मप्रवदेत्समांशकगते युग्मेषु वा योषितः ।
गुर्वर्कौ विषमे नरं शशि सितौ वक्रश्च (मं०) युग्मे स्त्रियं
द्व्यङ्गस्थावुधवीक्षिताश्च यमलौ कुर्वन्ति पक्षे स्वके ॥ २ ॥
विहाय लग्नं विषमर्क्षसंस्थः सौरो हि पुंजन्मकरो विलग्नात् ।
प्रोक्तग्रहाणा मवलोक्य वीर्यं वाच्यः प्रसूतौ पुरुषोऽङ्गनावा ॥३॥
पुंवर्गे लग्नगते पुंग्रहदृष्टे बलान्विते पुरुषः ।
युग्मे स्त्रीग्रहदृष्टे स्त्री वुधयुक्ते तु गर्भयुता ॥४॥
विषमस्थितेऽर्कपुत्रे सुतस्य जन्मान्यथाङ्गनायाश्च ॥५॥

(अर्थ)

यदि स्थिर लग्न हो तो गर्भस्थिति होती है ।

सूर्य, बृहस्पति तथा मङ्गल प्रश्न लग्न में अथवा ३,७,६,५ स्थानों में हों तो गर्भ में पुत्र होता है। यदि कोई और ग्रह हो तो कन्या होती है ॥१॥

जब विषम राशि हो तथा विषम नवांशक हो, उस पर लग्न, सूर्य, बृहस्पति तथा चन्द्रमा बलवान् होकर बैठे हों तो पुत्र का जन्म होता है । यदि सम राशि अथवा सम नवांशक में पूर्वोक्त ग्रह हों तो कन्या का जन्म होता है । बृहस्पति तथा सूर्य विषम राशि में हों तो पुत्र होता है, चन्द्रमा शुक्र तथा मंगल यदि सम राशि में हो तो कन्या का जन्म होता है । यदि द्विस्वभाव लग्न में वुध की दृष्टि हो तो यमल उत्पन्न होते हैं ॥२॥

यदि शनैश्चर लग्न को छोड कर विषम राशि में स्थित हो तो पुत्र का जन्म होता है । ग्रहों का बल देख कर पुत्र अथवा कन्या का जन्म बतलाना चाहिये ॥३॥

जब लग्न में पुरुष राशि हो अथवा बलवान् पुरुष ग्रह की उस पर दृष्टि हो तो पुत्र जन्म होता है । यदि सम राशि हो तथा स्त्री ग्रह की दृष्टि हो तो कन्या जन्म होता है। यदि लग्न वुधयुक्त हो तो स्त्री गर्भ युक्त होती है ॥४॥

यदि शनैश्चर विषम राशि में स्थित हो तो पुत्र का जन्म होता है, अन्यथा कन्या का जन्म होता है ॥५॥

विवाह प्रश्नः

विषमस्थितेऽर्के पुत्रे—
लभ्यावरस्य नारी समस्थितेऽतोऽन्यथा वामम् ॥१॥
विषमांशगतौ शशिभार्गवौ तनुगृहंबलिनौ यदि पश्यतः ।
रचयतोवरलाभमथोयदा युगलभांशगतौ युवतिप्रदौ ॥२॥
यदिभवतिसितातिरिक्तपक्षे तनुगृहतः समराशिगः शशाङ्कः ।
अशुभखचरवीक्षितोऽरिरन्ध्रेभवतिविवाहविनाशकारकोऽयम् ३

(अर्थ)

यदि शनैश्चर सम स्थान में स्थित हो तो वर को कन्या मिलती है, अन्यथा नहीं मिलती है ॥१॥

यदि चन्द्रमा तथा शुक्र विषम राशि अथवा विषम नवांश में बैठ कर लग्न को देखें तो कन्या को वर मिलता है। यदि युग्मराशि अथवा युग्म नवांश में बैठे हों तो वर को कन्या मिलती है ॥२॥

यदि कृष्ण पक्ष का चन्द्रमा लग्न से सम गृहों में बैठा हो तथा ६।८ स्थानों में बैठा हुआ पाप ग्रह से दृष्ट हो तो विवाह का नाश करने वाला योग है ॥३॥

सुतभावप्रश्नः

सुतभावपतिर्लग्ने लग्नपचन्द्रौसुतेऽथवा स्यात् (त्वरित' सुतलाभः) ॥१॥
द्विशरीरेच विलग्ने शुभयुतपुत्रेह्यपत्ययोगोऽस्ति ॥२॥
यदि लग्नपतिः पुंराशौचेत्स्यात्तदासुतोगर्भे ॥
लग्नपशशिनोः सुतस्थयोर्गर्भोभवत्येव ॥
सुतेशलग्नपौ समे सुता सुतोऽसमेत्रचेत् ॥३॥
लग्नाद्यतमे (यस्मिन्) स्थाने शुक्रस्तावन्तोवदेन्मासान् ।
यदि धर्मादूर्ध्वस्थस्तद्वदेत्पञ्चमस्थानात् ॥४॥

यावन्तोनवमांशा गतास्तावन्तोगर्भस्य मासा गताः ।
यावन्तोभोग्यास्तावद्भिरग्रत. प्रसवः ॥५॥

(अर्थ)

यदि पञ्चमेश लग्न में हो तथा लग्नेश और चन्द्रमा पञ्चम स्थान में हों तो शीघ्र पुत्रलाभ होता है ॥१॥

यदि द्विस्वभाव राशि लग्न में हो तथा पञ्चम स्थान में शुभ ग्रह बैठा हो तो दो सन्तानों का योग है ॥२॥

यदि लग्नेश पुरुष राशि में हो तो गर्भ में पुत्र होता है। लग्नेश तथा चन्द्रमा पञ्चम स्थान में हों तो अवश्य गर्भ होना है। यदि पञ्चमेश तथा लग्नेश सम राशि में हों तो कन्या होती है। यदि विषम राशि में हों तो पुत्र होता है ॥३॥

लग्न से जिस स्थान पर शुक्र हो उतने ही मास व्यतीत हुए जानना। यदि शुक्र धर्म स्थान से आगे बैठा हो तो पञ्चम स्थान से गिनती करनी चाहिये ॥४॥

जितने नवांश व्यतीत हुए हों उतने ही गर्भ के भी मास व्यतीत हुए जानना। जितने नवांश भोग्य हों उतने ही शेष मास जानने चाहियें ॥५॥

विवादप्रश्नः

क्रूरः खचरो लग्ने विवादपृच्छासु जयति विवदन्तम् ।
सर्वावस्थासु परं नीचेऽस्तेजयति न द्विषतः ॥

(अर्थ)

लग्न में क्रूर ग्रह हो तो विवाद में जय होता है। यदि सप्तम स्थान में नीच ग्रह हो तो जीत नहीं होती है ॥

षष्ठाष्टम द्वादशस्थ लग्नेशफलम्

लग्नेशोयदि षष्ठः स्वयमेव रिपुर्भवत्यात्मा ।
मृत्युकृदष्टमगोऽसौव्ययगः सततं व्ययं कुरुते ॥

(अर्थ)

यदि लग्नेश छठे स्थान में हो तो अपना ही आत्मा अपना शत्रु हो जाता है। यदि अष्टम स्थान में हो तो मृत्यु करता है। यदि व्यय स्थान में हो तो व्यय कराता है ॥

रोगप्रश्नः

एकः सौम्यो बली लग्ने त्रायते रोगपीडितम् ।
सौम्याधर्मारिलाभस्थास्तृतीयस्था गदापहाः ॥१॥
विलग्ने षष्ठपः पापो जन्मराशिनिरीक्षिते (?) ।
रोगिणस्तस्यमरणं निश्चयेन वदेद्बुधः ॥२॥
चतुर्थाष्टमगे चन्द्रे पापमध्यगतेऽपिवा ।
मृतिःस्याद्बलसंयुक्ते सौम्यदृष्ट्याचिरात्सुखम् ॥३॥
विधौ लग्ने स्मरे भानौ रोगी याति यमालयम् ॥४॥
शुभग्रहाः सौम्यनिरीक्षिताश्च
विलग्नसप्ताष्टमपञ्चमस्थाः ।
त्रिषड्दशायेच निशाकरःस्या
च्छुभंवदेद्रोगनिपीडितानाम् ॥ (विपरीते विपरीतफलम्) ॥५॥
रोगिप्रश्ने रोगगृहं सप्तमं गृह मुच्यते ।
शुभे तत्र शुभं वाच्य मशुभेत्वशुभं वदेत् ॥६॥
मन्दः पापसमेतो लग्नान्नवमे शुभैरदृष्टः ।
रोगार्तः परदेशे चाष्टमगो मृत्युकर एव ॥७॥

(अर्थ)

यदि एक सौम्य ग्रह बलवान् होकर लग्न में बैठा हो तो रोगी की रक्षा करता है। ९,६,११,३ स्थानों में सौम्य ग्रह बैठे हों तो रोग का नाश करते हैं ॥१॥

यदि षष्ठेश पाप ग्रह हो तथा लग्न में बैठा हो और जन्म राशि पर उस की दृष्टि हो तो रोगी की मृत्यु होती है ॥२॥

यदि चन्द्रमा ४,८ स्थानों में हो अथवा दो पाप ग्रहों के मध्य में हो, बलवान् हो तो रोगी की मृत्यु होती है। यदि सौम्य ग्रह की उस पर दृष्टि हो तो चिरकाल में सुख मिलता है ॥३॥

लग्न में चन्द्रमा हो, सप्तम स्थान में सूर्य हो तो रोगी की मृत्यु होती है ॥४॥

यदि शुभ ग्रह १,७,८,५ स्थानों में हों तथा शुभ ग्रह की उन पर दृष्टि भी हो, ३,६,१०,११, स्थानों में चन्द्रमा हो तो रोगियों का शुभ होता है (अन्यथा विपरीत फल होता है) ॥५॥

यदि रोगी के विषय में प्रश्न हो तो सप्तम स्थान से विचार करना चाहिये। यदि उस स्थान में शुभ ग्रह हो तो शुभ फल कहना चाहिये। यदि पाप ग्रह हो तो अशुभ फल कहना चाहिये ॥६॥

यदि शनैश्चर पाप ग्रह से युक्त होकर नवम स्थान में हो तथा शुभ ग्रह की उस पर दृष्टि न हो तो मनुष्य परदेश में रोग से पीडित होता है। यदि अष्टम स्थान में हो तो रोगी की मृत्यु करता है ॥७॥

अमुकसमीपे यामि समिलति नवेतिप्रश्नः

केन्द्रस्थितेबलयुते मिलति स्वगेहे
जायेश्वरे पणफरे (२।५।८।११) निकटे स्वगेहात्।
आपोक्लिमे (३।६।९।१२) न मिलतिक्वचिदन्यगेहे
संस्थःसयस्य मिलनाय गतो हि गन्ता ॥

(अर्थ)

यदि सप्तमेश बलवान् होकर केन्द्र में बैठा हो तो जिससे मुलाकात करने को जावें वह अपने घर में मिलता है। यदि सप्तमेश पणफर अर्थात २।५।८।११ स्थानों में हो तो अपने घर के समीप मिलता है। यदि सप्तमेश आपोक्लिम अर्थात ३।६।९।१२ स्थानों में हो तो वह मनुष्य किसी दूसरे के घर गया होगा और अपने घर पर नहीं मिलेगा ॥

प्रवासिन आगमप्रश्नः

धनसहजगतौ सितामरेज्यौ
कथयेदागमनं प्रवासिपुंसाम् ।
तनुहिबुकगताविमौहि तद्वद्
झटिति नृणां कुरुतो गृहप्रवेशम् ॥ १ ॥
गमागमौ तु न स्याता स्थिरराशौ विलग्नगे ॥२॥
जामित्रे त्वथवा षष्ठे ग्रह. केन्द्रेऽथ वाक्पतिः ।
प्रोषितागमनं विद्यात् त्रिकोणेज्ञे सितेऽपिवा ॥३॥
दूरगतस्यागमनं सुतधनसहजस्थितैः सौम्यैर्विलग्नर्क्षात् ॥४॥
चरे लग्ने चरे चन्द्रे द्विदेहेच चरांशके ।
गमागमौहि वक्तव्यौ स्थिरे लग्ने च नागमः ॥५॥
लग्नेश्वरे धर्मतृतायरन्ध्रगे
धनेऽथधा मार्गगतः प्रवासात् ।
चरोदये शीतकरे चरस्थे
शुभैस्त्रिकेन्द्रारिसुतार्थसंस्थैः ॥
पृष्ठोदयेऽभ्येत्यचिरात्प्रवासो ॥ ६ ॥
ग्रहैस्तृतीयात्मजवित्तषष्ठ
जायास्थितैर्वक्रग्रहैर्विशेषात् ।
केन्द्रे गुरौज्ञेऽथ सिते त्रिकोणे
ध्रुवं समभ्येत्यचिरात्प्रवासी ॥७॥
वक्रे मदेशे गमनान्निवर्तनं
मासैस्तुतुल्यैर्वलिनोग्रहात्तनोः ॥ ८ ॥
अष्टमस्थे निशानाथे कण्टकैः पापवर्जितैः ।
प्रवासी सुखमायाति सौम्यैर्लाभसमन्वितः ॥ ९ ॥

(अर्थ)

जब शुक्र तथा बृहस्पति १।३ स्थानों में हों तो प्रवासी लौट आवेगा ऐसा कहना चाहिये। यदि वे १।४ स्थानों में हों तो प्रवासी पुरुष शीघ्र घर आता है ॥१॥

यदि लग्न में स्थिर राशि हो तो आना जाना कुछ नहीं होता है ॥२॥

यदि ६।७ स्थानों में कोई ग्रह हो, केन्द्र में बृहस्पति हो, त्रिकोण में बुध अथवा शुक्र भी हो तो परदेश से आदमी लौट आवेगा ॥३॥

यदि ९।२।५ स्थानों में शुभ ग्रह हों तो दूरदेश से आदमी लौट आवेगा ॥४॥

यदि लग्न में चरराशि हो, चन्द्रमा चर राशि अथवा द्विस्वभाव राशि पर तथा चर नवांशक में हो तो प्रवासी लौट आवेगा। यदि स्थिर लग्न हो तो नहीं आवेगा ॥५॥

यदि लग्नेश ६।४।८।२ स्थानों में हो तो मनुष्य प्रवास से लौट कर रास्ते में होगा। जब चर लग्न हो तथा चन्द्रमा भी चर राशि पर हो, शुभ ग्रह तृतीय, केन्द्र, शत्रु, पुत्र, धन स्थान में हों अथवा पृष्ठोदय लग्न हो तो प्रवासी शीघ्र लौट आता है ॥६॥

३।५।२।६।७ स्थानों में विशेष कर वक्री ग्रह हों, केन्द्र में बृहस्पति अथवा बुध हो, त्रिकोण में शुक्र हो तो प्रवासी शीघ्र लौट आता है ॥७॥

यदि सप्तमेश वक्री ग्रह हो तो मनुष्य लौट आता है ॥८॥

अष्टम स्थान में चन्द्रमा हो, केन्द्र में पाप ग्रह न हों तो प्रवासी सुख से लौट आता है। यदि सौम्य ग्रह हो तो लाभ सहित लौटता है ॥९॥

गमनप्रश्नः

चरोदये शीतकरे चरे च सौम्यग्रहैः संयुतवीक्षितेवा।
यात्राभवेत्सौख्यजयार्थसिद्धि कल्याणदात्री निरुपद्रवाच ॥१॥

स्थिरोदये शीतकरे स्थिरस्थे सौम्यग्रहैः संयुतवीक्षितेच ।
प्रष्टुः प्रवासो न भवेत्स्वधाम्नः स्थितिप्रतिष्ठाशुभसिद्धयःस्युः ॥२॥

द्व्यङ्गोदयेद्व यङ्ग गते हिमांशौ पापैग्रहैर्द्वियुते न सौम्ये. ।
प्रष्टुर्निवृत्तिः परदेशयानात्क्लेशोऽर्थनाशोऽरिपुराद्भवेच्च ॥३॥

पृष्ठोदये स्थिरर्क्षेपि प्रतापं गमनं चिरात् ।
चरे क्षिप्रं भवेद्यानं सविघ्नं द्विननूदये ॥ ४ ॥

लग्नाधिनाथेन सुधाकरेणवा यदेत्थशालं कुरुते तपोऽधिपः ।
यात्रातदास्यादचिरेण धर्मगे लग्नेश्वरेवाहिमगौगतिर्भवेत् ॥५॥

धर्मेश्वरे लग्नगतेऽथलग्नपे केन्द्रे तृतीये गमनं तदा भवेत् ।
लग्नेऽथ लग्नेश्वरधर्मपावुभौ यदेत्थशालं कुरुते तदानीम् ॥६॥

पापे कलत्रे व्रजते यदर्थं तत्कार्यनाशाद्गमनं च नस्यात् ।
पापग्रहैः कर्मगतैर्नयात्रा स्याज्जयेष्टुबन्धेोनृपते निषेधात् ॥७॥

चतुर्थे दशमे वापि यदि सौम्यग्रहो भवेत् ।
तदा न गमनं क्रूरै स्तत्रस्थैर्गमनं भवेत् ॥८॥

लग्नान्मार्गाच्चुभवो व्योम्नः कार्यस्मराद्गतिस्थानम् ।
भूमेः कार्यं परिणति रेवं लग्ने शरीरसुखम् ॥९॥

दशमे शुभे च सिद्धिः कार्यस्यास्ते प्रयाति यत्स्थाने ।
तत्र शुभे च चतुर्थे परिणामः सुन्दरः कार्ये ॥१०॥

यदा नवेशस्तनुमेति यद्वा लग्नाधिनाथेन कृतेत्थशालः ।
प्रष्टुस्तदा स्याद्गमनं च तत्र चरर्क्षयोगे सविशेषतः स्यात् ॥११॥

त्रिकोणे कुजात्सौरिशुक्रज्ञजीवा
यदैकोऽपिवानोगमोऽर्काच्छशीवा ॥१२॥

(सप्तमाद्विचारः)

(अर्थ)

चर लग्न हो तथा चन्द्रमा भी चर राशि में हो, सौम्य ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो यात्रा होती है। उसमें सुख, जय, धन सिद्धि तथा कल्याण होते हैं तथा कोई उपद्रव नहीं होते हैं ॥१॥

स्थिर लग्न हो तथा चन्द्रमा भी स्थिर राशि पर हो, सौम्य ग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हों तो प्रश्न कर्ता की यात्रा नहीं होती है। अपने ही स्थान में रहने से उसे प्रतिष्ठा, शुभ तथा सिद्धि मिल जाती हैं ॥२॥

यदि द्विस्वभाव लग्न हो तथा द्विस्वभाव राशि पर चन्द्रमा हो, पाप-ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त हो, सौम्य ग्रहों से युक्त तथा दृष्ट न हो तो प्रश्न कर्ता परदेश न जावे तथा उसको क्लेश हो, और उसके द्रव्य का नाश हो ॥३॥

जो पृष्ठोदय लग्न हो (१।४।८।१०) अथवा स्थिर लग्न हो तो चिर काल में उलटा गमन हो; चर लग्न हो तो शीघ्र यात्रा हो, द्विस्वभाव लग्न हो तो विघ्न सहित यात्रा हो ॥४॥

नवमेश का जब लग्नेश अथवा चन्द्रमा के साथ इत्थशाल हो तो शीघ्र यात्रा होती है, अथवा जब लग्नेश अथवा चन्द्रमा नवम स्थान में हों तब यात्रा होती है ॥५॥

धर्मेश लग्न में हो, लग्नेश केन्द्र अथवा तृतीय स्थान में हो तो गमन होता है, लग्नेश धर्मेश दोनों लग्न में हो अथवा इत्थशाल करें तो यात्रा होती है ॥६॥

सप्तम स्थान में पाप ग्रह हो तो जिस काम के निमित्त यात्रा करने का विचार हो उस काम का नाश होने से यात्रा नहीं होती है। दशम स्थान में पाप ग्रह हों तो ज्येष्ठ भ्राता अथवा राजा के निषेध करने से यात्रा नहीं होती है ॥७॥

चतुर्थ अथवा दशम स्थान में जब सौम्य ग्रह हों तो यात्रा नहीं होती है। परन्तु जब उन स्थानों में क्रूर ग्रह हों तो यात्रा होती है ॥८॥

ह्रस्व, दीर्घ जैसा लग्न हो वैसा ही मार्ग भी जानना, दशमस्थान से कार्य, सप्तम स्थान से गमन का स्थान, चतुर्थ स्थान से कार्य का परिणाम, लग्न से शरीर का सुख विचारना चाहिये ॥९॥

दशम स्थान में शुभ ग्रह हो तो कार्यसिद्धि होती है, सप्तम स्थान में शुभ ग्रह हो तो जिस स्थान में जावे वहां शुभ हो, चतुर्थ स्थान में शुभ ग्रह हो तो कार्य का परिणाम अच्छा होगा ॥१०॥

जब नवमेश लग्न में पहुंचेगा अथवा लग्नेश के साथ इत्थशाल करेगा तब गमन होगा। जो लग्न लग्नेश, नवमेश चर राशि में हो तो यात्रा का विशेष योग होगा ॥११॥

यदि मङ्गल से त्रिकोण में शनि, शुक्र, बुध, बृहस्पति हों अथवा इनमें से एक भी हो, अथवा सूर्य से चन्द्रमा त्रिकोण में हो तो गमन नहीं होता है ॥ १२ ॥

(यात्रा का विचार सप्तमस्थान से होता है) ॥

नष्टधनलाभप्रश्नः

सप्तमे यदि शुभा न हतास्तिश्चेद्वलीहिमगुरुद्रुतमाप्तिः ।
चेत्कृशो द्रुत मनाप्तिकरश्चे दस्तगस्तनुपतिर्न हताप्तिः ॥१॥
दूरगतस्यागमनं सुतधनसहजस्थिते ग्रहै विलग्नात् ।
सौम्यैर्नष्टप्राप्तिं लब्धागमं गुरुसिताभ्याम् ॥२॥
स्थिरोदये स्थिरांशेवा वर्गोत्तमगतेऽपिवा ।
स्थितं तत्रैव तद्द्रव्यं स्वकीयेनैव चोरितम् ॥३॥
स्थिरे स्थिरांशे स्वजनै गृहान्तिके
चरे परेणापहृतं नचान्तिके ॥४॥
लग्नेश्वरे द्यूनगते विलग्ने जायेश्वरे नष्टधनस्य लाभः ।
अस्तेश्वरे केन्द्रगते स चौरस्तत्रैव नान्यत्र गतः पुराध्वनः ॥५॥
लग्नत्रिकर्मात्मजमित्रबन्धुलाभार्थगैः सौम्यखगैर्बलाढ्यैः ।
केन्द्रत्रिकोणाष्टमलाभवर्जितैः पापैर्भवेन्नष्टधनस्य लाभः ॥६॥

शीर्षोदये सौम्ययुतेऽथ पूर्णे चन्द्रे विलग्ने शुभदृष्टियुक्ते ।
लाभेऽथवा सौम्यखगे वलाढ्ये नष्टार्थलाभंत्वचिरेण विद्यात् ॥७॥
कोणस्थितः पूर्णतनुः शशाङ्को जीवेन दृष्टो यदिवा सितेन ।
क्षिप्रं प्रणष्टस्य करोति लब्धिं लाभोपयातो वलवाञ्छुभश्च ॥८॥

(अर्थ)

यदि सप्तम स्थान में शुभ ग्रह हो तो खोया हुआ धन नहीं मिलेगा। यदि चन्द्रमा वलवान् होकर वैठा हो तो शीघ्र मिल जावेगा। यदि क्षीण चन्द्रमा हो तो शीघ्र नहीं मिलेगा। यदि लग्नेश सप्तम स्थान में वैठा हो तो खोई हुई वस्तु नहीं मिलेगी ॥१॥

जव लग्न से २।३।५ स्थानों में शुभ ग्रह वैठे हों तो जो आदमी परदेश गया हो वह लौट आवेगा तथा गई हुई वस्तु भी मिल जावेगी। यदि वृहस्पति शुक्र वैठे हों तो परदेश से आदमी भी शीघ्र लौट आवेगा तथा खोई हुई वस्तु भी शीघ्र मिल जावेगी ॥२॥

जव स्थिर लग्न हो अथवा स्थिर नवांश हो अथवा वर्गोत्तम नवांश हो तो द्रव्य अपने ही घर में होगा तथा अपना ही आदमी चोर होगा ॥३॥

यदि स्थिर लग्न अथवा स्थिर नवांश हो तो चोरी हुई वस्तु अपने घर के समीप होगी तथा आपसी के लोग चोर होंगे। यदि चर लग्न अथवा चर नवांश हो तो चोरी हुई वस्तु किसी वाहरी आदमी के पास है तथा अपने घर से दूर है ऐसा जानना चाहिये ॥४॥

जव लग्नेश सप्तम स्थान में हो तथा सप्तमेश लग्न में हो तो नष्ट धन का लाभ हो जाता है। यदि सप्तमेश केन्द्र में हो तो चोर वहीं है, नगर से वाहर नहीं गया है ऐसा जानना चाहिये ॥५॥

१।३।६।५।४।११।१२ स्थानों में शुभ ग्रह वलवान् होकर वैठे हों, केन्द्र, त्रिकोण, अष्टम, लाभ, स्थानों को छोड कर शेष स्थानों मे पाप ग्रह वैठे हों तो नष्ट धन का लाभ होता है ॥६॥

शीर्षोदय लग्न हो, उसमें शुभ ग्रह बैठा हो, अथवा पूर्ण चन्द्रमा लग्न में बैठा हो तथा शुभ ग्रह से दृष्ट अथवा युक्त हो, अथवा लाभ स्थान में बलवान् शुभ ग्रह बैठा हो तो नष्ट वस्तु का शीघ्र लाभ होता है ॥७॥

यदि पूर्ण चन्द्रमा कोण मे स्थित हो तथा वृहस्पति अथवा शुक्र की दृष्टि हो अथवा लाभ में बलवान् शुभ ग्रह हो तो नष्ट वस्तु की शीघ्र प्राप्ति होती है ॥८॥

लग्नाच्चौरज्ञानम्.

मेषलग्ने द्विजश्चौरो राजन्यश्च वृषे भवेत् ।
लग्ने च मिथुने वैश्यः शूद्रः कर्कटके भवेत् ॥१॥
अन्त्यजस्तस्करः सिंहे कन्यायां च वराङ्गना ।
पुत्रो भ्राता सखा वापि तुलायां तस्करो भवेत् ॥२॥
वृश्चिके सेवकश्चौरश्चापे भ्राता स्त्रियोऽपिवा ।
मृगे वैश्यजनश्चौरः कुम्भे चौरश्च मूषकः ॥
मीने धरातलं स्थानम् ॥३॥

(अर्थ)

मेष लग्न हो तो ब्राह्मण चोर है, वृष लग्न हो तो क्षत्रिय चोर है, मिथुन लग्न हो तो वैश्य चोर है, कर्क लग्न हो तो शूद्र चोर है, सिंह लग्न हो तो अन्त्यज चोर है, कन्या लग्न हो तो स्त्री चोर है, तुला लग्न हो तो पुत्र, भाई अथवा मित्र चोर है, वृश्चिक लग्न हो तो सेवक चोर है, धन लग्न हो तो भाई अथवा स्त्री चोर हैं, मकर लग्न हो तो वैश्य चोर है, कुम्भ लग्न हो तो चूहा चोर है, मीन लग्न हो तो धरातल में वस्तु है ॥

चोरित वस्तु स्थानम्.

आदिमध्यावसानेषु द्रेष्काणेषु विलग्नतः ।
द्वारदेशे तथा मध्ये गृहान्ते च वदेद्धनम् ॥१॥
स्थिरोदये स्थिरांशेवा वर्गोत्तमगतेऽपिवा ।
स्थितं तत्रैव तद्द्रव्यं स्वकीयेनैव चोरितम् ॥२॥

(अर्थ)

लग्न का प्रथम द्रेष्काण हो तो खोई हुई वस्तु द्वारदेश में है, द्वितीय द्रेष्काण हो तो घर के मध्य में है, तृतीय द्रेष्काण हो तो घर के अन्त में है ऐसा जानना चाहिये ॥१॥

यदि स्थिर लग्न अथवा स्थिर नवांश अथवा वर्गोत्तम हो तो चोरित द्रव्य अपने ही घर में है तथा अपने आपसी आदमी ने चोरी है ऐसा जानना ॥२॥

नक्षत्रवशान्नष्टवस्तुलाभविचारः

विनष्टार्थस्य लाभोऽन्धे शीघ्रं मन्दे प्रयत्नत ।
स्याद्दूरे श्रवणं मध्ये श्रुत्याप्ती न सुलोचने ॥१॥
अन्धे पूर्वगतं वस्तु काणे चैव तु दक्षिणे ।
चिपिटे पश्चिमायां तु सुलोचने तथोत्तरे ॥२॥
मघादिर्य्यमान्तं च (उफा) समीपे वस्तु दृश्यते ।
हस्तादि वसु (ध) पर्यन्त मन्यहस्ते च दृश्यते ॥३॥
शततारार्यमान्तं तु (भ.) स्वगृहे वस्तु दृश्यते ।
अग्न्यादि (कृ.) सार्प (अश्ले) पर्यन्त मदृष्टं दूरगं तथा ॥४॥

(अर्थ)

अन्ध नक्षत्र (पृ० ४८) में खोई हुई वस्तु का शीघ्र लाभ होता है। मन्द लोचन नक्षत्र में प्रयत्न करने से लाभ होता है। मध्य लोचन में बहुत दिनों के उपरान्त समाचार सुनने में आता है। सुलोचन में न तो समाचार सुनने में आता है न वस्तु मिलती है ॥ १ ॥

अन्ध नक्षत्र में खोई हुई वस्तु पूर्वदिशा में होती है। काण नक्षत्र में दक्षिण दिशा में होती है। चिपिट नक्षत्र में पश्चिम दिशा में होती है। सुलोचन नक्षत्र में उत्तर दिशा में होती है ॥ २ ॥

मघा से उत्तराफल्गुनी पर्यन्त नक्षत्रों में खोई हुई वस्तु समीप में दिखलाई देती है। हस्त से धनिष्ठा पर्यन्त नक्षत्रों में खोई हुई वस्तु दूसरे के हाथ में दिखलाई देती है ॥ ३ ॥

शतभिषा से भरणी पर्यन्त नक्षत्रों में खोई हुई वस्तु अपने घर में दिखलाई देती है। कृत्तिका से अश्लेषा पर्यन्त नक्षत्रों में खोई हुई वस्तु देखने में नहीं आती है तथा दूर चली जाती है ॥४॥

दूरस्थजीवितमरणप्रश्नः

सौम्यैः षष्ठान्त्यरन्ध्रस्थै र्विबलैश्चाशुभेक्षितैः ।
पापयुक्तौ शशाङ्कार्कौ तदा दूरस्थितो मृतः ॥१॥
पृष्ठोदये पापयुते त्रिकोणे
केन्द्राष्टषष्ठोपगतैश्च पापैः ।
सौम्यैरदृष्टैः परदेशसंस्थो
मृतो गदार्तो नवमे च सूर्ये ॥२॥

(अर्थ)

यदि सौम्य ग्रह ६।१२।८ स्थानों निर्बल होकर बैठे हों तथा अशुभ ग्रहों की,उन पर दृष्टि हो, सूर्य तथा चन्द्रमा पाप युक्त हों तो दूर देशस्थ मनुष्य मर गया है ऐसा जानना चाहिये ॥ १ ॥

पृष्ठोदय लग्न हो, त्रिकोण में पाप ग्रह हों, केन्द्र, ८।६ स्थानों में भी पाप ग्रह हों, शुभ ग्रहों की उन पर दृष्टि न हो तो परदेश में स्थित मनुष्य मर गया है ऐसा जानना चाहिये। यदि नवम सूर्य हो तो रोग से पीडित जानना चाहिये ॥२॥

बद्धमोक्षप्रश्नः

बद्धो विमुच्यतेऽत्याशु सौम्यः श्रेयास्तनौ यदा ।
अस्तं गते तनौ शुक्रे बद्धमोक्षादि सम्भवः ।
बन्धमोक्षे त्रिधर्मेश संग्रहः शीघ्रमोक्षकृत् ॥

(अर्थ)

जब सौम्यग्रह लग्न में हो तो बद्ध मनुष्य शीघ्र छूट जाता है। यदि शुक्र अस्त गत हो अथवा लग्न में हो तो बद्धमोक्ष सम्भव है। तृतीयेश तथा धर्मेश यदि एक साथ बैठे हों तो बद्ध पुरुष शीघ्र छूट जाता है ॥

जयपराजय प्रश्नः

झषालिकुम्भकर्कटा रसातले यदा स्थिताः ।
रिपोः पराजयस्तदा चतुष्पदैः (मे. वृष. सिं.) पलायनम् ॥१॥
शीर्षोदये (५-६-७-८-११) शुभसुहृद्ग्रहयुक्तदृष्टे
लग्ने शुभैश्च वलिभिः शुभवर्गलग्ने ।
सौम्यैर्ग्रहैः सुतचतुष्टयधर्मसंस्थैः
प्रष्टु र्भवेद्धनजयेप्सितकार्यसिद्धिः ॥२॥
लग्ने क्रूरे जयः प्रष्टु: सप्तमे विद्विषो जय ॥३॥
संधिं कुर्यात्सुहृद्दृष्टि र्लग्नेशास्तपयोर्मिथः ।
आयेपि सवले सन्धि र्निवले विग्रहो भवेत् ॥४॥

(अर्थ)

जब चतुर्थ स्थान में मीन, वृश्चिक, कुम्भ, कर्क, राशियां हों तो शत्रु का पराजय होता है । यदि मेष, वृष, सिंह राशियां हों तो शत्रु का पलायन होता है ।। १ ।।

जब शीर्षोदय (५-६-७-८-११) लग्न हो, शुभ ग्रह अथवा मित्र ग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो शुभ ग्रह बलवान् हो, पञ्चम, केन्द्र तथा धर्म स्थानों में सौम्य ग्रह हों तो प्रश्न कर्ता को धन तथा जय का लाभ होता है तथा अभीष्ट कार्य की सिद्धि होती है ।। २ ।।

लग्न में क्रूर ग्रह हो तो प्रश्नकर्ता का जय होता है। सप्तम स्थान में क्रूर ग्रह हो तो शत्रु का जय होता है ।। ३ ।।

लग्नेश तथा सप्तमेश की परस्पर मित्र दृष्टि हो तो सन्धि हो जाती है। लाभ में बलवान् ग्रह हो तब भी सन्धि हो जाती है। यदि लाभ में बलहीन ग्रह हो तो युद्ध होता है ।। ४ ।।

मृगयाप्रश्नः

सवीर्यौ कुजज्ञौ नृपाखेटसिद्ध्यै नसिद्धिर्यदाहीनवीर्याविभौस्तः ।
जलाखेट माहुः सवीर्यै ग्रहर्क्षै
र्जलाख्यै (४।८।१२) र्नगाख्यै (१।५।९) र्नगाखेट माहुः ॥१॥

लग्नास्तनाथौ केन्द्रस्थौ निर्बलौ क्लेशदायिनी ।
मृगयोक्ता शुभफला वीर्याढ्यौ यदितौ पुनः ॥२॥
क्रूराक्रान्तानि यावन्ति मध्ये भानीन्दुलग्नयोः ।
तावन्तः प्राणिनो वध्या द्वित्रिघ्ना· स्वांशकादिषु ॥३॥
लुब्धनामर्क्षगो राशिर्यत्रस्यात्तद्दिनचन्द्रमाः ।
तन्मध्ये यदि सौम्याः स्यु स्तदा च हरिणादिकम् ॥४॥
राशिचन्द्रमसोर्मध्ये पापा दुष्टपशुस्तदा ।
मिश्रखेटे मिश्रपशु र्नग्रहश्चेत्पशुर्न हि ॥५॥
राहो· शनेस्तु महिषा भौमभास्करयोर्मृगाः ।
शुक्राभ्यां बुधेन्दुभ्यां सूकराद्य एव च ॥६॥
वराहो रविभौमाभ्यां पक्षिणो बुधशुक्रयोः ।
शृङ्गहीना युतः सौम्यैः सश्रृङ्गास्तु तथेतरैः ॥७॥

(अर्थ)

यदि मङ्गल तथा बुध बलवान् हों तो आखेट में (शिकार खेलने में) सिद्धि होती है। जब ये दोनों बलहीन हों तो सिद्धि नहीं होती है। यदि जलराशि (४।८।१२) में बलवान् ग्रह हों तो जल का आखेट (मछली मारना इत्यादि) सिद्ध होता है। यदि वनचर राशि (१।५।९) में बलवान् ग्रह हों तो जङ्गल में शिकार खेलना हो ॥१॥

यदि लग्नेश तथा सप्तमेश निर्बल होकर केन्द्र में बैठे हों तो शिकार खेलने में कष्ट होगा। यदि वे बलवान् हों तो शुभ फल होता है॥२॥

चन्द्रमा तथा लग्न के बीच जितने क्रूर ग्रह हों उतने ही प्राणियों का वध होगा। यदि अपने नवांश आदि में हों तो दोगुना करना चाहिये ॥३॥

शिकारी की नामराशि तथा उस दिन के चन्द्रमा के बीच में यदि सौम्यग्रह हों तो हरिण आदि का शिकार होगा ॥ ४ ॥

नामराशि तथा चन्द्रमा के बीच में यदि पाप ग्रह हों तो दुष्ट पशु का वध होता है। यदि मिश्र ग्रह हों तो मिश्र पशुओं का शिकार होता है। यदि ग्रह न हो तो कोई पशु नहीं मारा जाता है ॥ ५ ॥

राहु तथा शनि से महिष जानने चाहिये। मङ्गल तथा सूर्य से मृग जानने चाहियें। बुध शुक्र अथवा बुध चन्द्रमा से वराह आदि जानने चाहियें ॥६॥

सूर्य मङ्गल से वराह जानना चाहिये। बुध शुक्र से पक्षी जानने चाहियें। सौम्य ग्रह हों तो शृङ्गहीन पशु जानने चाहिये। पाप ग्रह हों तो सींग सहित पशु जानने चाहियें ॥७॥

भोजन प्रश्नः

लग्नाधिपो भोज्यदाता सुखेशो भोज्यमीरितम्।
बुभुक्षा मदपः कर्म पतिर्भोक्तेति चिन्तयेत् ॥१॥
लग्ने लाभे च सत्खेटैर्युते दृष्टे च भोजनम्।
जीवे लग्ने सिते वापि सुभोज्यं दुःस्थितावपि ॥२॥
मन्दे तमसि वा लग्ने सूर्येणालोकिते युते।
लभ्यते भोजनं नात्र शस्त्रभीतिस्तदा क्वचित् ॥३॥
रविदृष्टं युतं वापि लग्नं न यदि तत्रहि।
उपवासस्तदा वाच्यो नक्तं वा विरसाशनम् ॥४॥
चन्द्रे कर्मगते भोज्य मुक्तं शीतं सुखे कुजे।
तुर्ये खेटस्य वशतो भोज्यान्नेरसमादिशेत् ॥५॥
स्निग्धमन्नं सिते तुर्ये तैलसंस्कृत मर्कजे।
नीचोपगे कदन्नं विरसं चाप्यसंस्कृतम् ॥६॥
सूर्यादिभिर्लग्नगतैः सवीर्यैं राजादिगेहे भुजिमामनन्ति ॥७॥
राजा रविः शशी राज्ञी मङ्गलो वाहिनीश्वरः।
कुमारोज्ञो गुरुर्मन्त्री सितो नेतानुगः शनिः ॥८॥

सुखे सुखेशे सवले सुभोज्यं चरादिके स्यादमकृत्सकृद्द्विः ॥९॥
मूलत्रिकोणगे खेटे लग्ने पितृगृहेऽशनम् ।
मित्रालये मित्रभस्थे शत्रुगेहेऽरिगेहगे ॥१०॥
शुभेक्षितयुते लग्ने वलाढ्ये स्वगृहे भुजि· ।
ग्रहराशिस्वभावेन यत्नादन्यच्च चिन्तयेत् ॥११॥
तिलाक्षमर्के हिमगै। सुतन्दुला भौमे मसूराश्चणकाश्चभोज्यम् ।
वुधे समुद्गाः खलु राजभाषा गुरौ सगोधूमभुजिः सवीर्ये ॥१२॥
शुक्रेयवा वाजरिका युगन्धरा· शनौ कुलित्थादि समाषमन्नम् ।
भोज्यं तुषान्नं शिखि राहुवीर्याच्छुभेक्षणालोकनतः सहर्षम् १३
सूर्ये मूलं पुष्प मिन्दौ कुजे स्यात् पत्रं शाखा चापि शाकं सवीर्ये ।
शुक्रेज्यज्ञे व्यञ्जनं भूरिभेदं मन्देनेत्थं सामिषं राहुकेत्वोः ॥१४॥

(अर्थ)

लग्नेश भोज्य पदार्थ को देने वाला है, सुखेश भोज्य पदार्थ है, सप्तमेश भूख है, कर्मेश भोक्ता है, इस प्रकार से विचार भोजन के प्रश्न में करना चाहिये ॥१॥

लग्न तथा लाभ में यदि शुभ ग्रह हों अथवा शुभ ग्रहों को दृष्टि हो तो भोजन मिलता है । जब लग्न में वृहस्पति अथवा शुक्र हों चाहे उनकी स्थिति अच्छी न भी हो तो भी अच्छा भोजन मिलता है ॥२॥

यदि लग्न में शनैश्चर अथवा राहु हो तथा उसपर सूर्य की दृष्टि भी हो अथवा सूर्य से युक्त हो तो भोजन नहीं मिलता है, किन्तु कभी कभी शत्रु का भय होता है ॥ ३ ॥

यदि सूर्य से दृष्ट अथवा युक्त लग्न न हो तो उस दिन उपवास करना पड़ता है अथवा रात में रसहीन भोजन मिलता है ॥ ४ ॥

यदि चन्द्रमा दशम स्थान में हो अथवा मङ्गल चतुर्थ स्थान में हो तो शात भोजन मिलता है । चतुर्थ स्थान में जो ग्रह हो उसके वश से भोज्य अन्न का रस वतलाना चाहिये ॥५॥

यदि चतुर्थ स्थान में शुक्र हो तो स्निग्ध अन्न बतलाना चाहिये, यदि शनि हो तो तैलपक्व जानना चाहिये, यदि नीच ग्रह हो तो रस हीन विना पका हुआ कुत्सित भोजन जानना चाहिये ॥६॥

यदि सूर्य आदि ग्रह बलवान् होकर लग्न में बैठे हों तो राजा आदि के घर में भोजन मिलता है ॥७॥

सूर्य राजा है, चन्द्रमा रानी है, मगल सेनापति है, बुध कुमार है, वृहस्पति मन्त्री है, शुक्र नेता है, शनैश्चर सेवक है ॥८॥

यदि सुखेश सुख स्थान में हो तथा बलवान् हो तो अच्छा भोजन मिलता है, यदि सुखस्थान में चर राशि हो तो कई बार भोजन मिलता है। यदि स्थिर राशि हो तो एक बार भोजन मिलता है। यदि द्विस्वभाव राशि हो तो दो बार भोजन मिलता है ॥९॥

यदि लग्न में ग्रह अपने मूल त्रिकोण का हो तो पिता के घर में भोजन मिलता है, यदि मित्र के घर का ग्रह हो तो मित्र के घर में भोजन मिलता है, यदि शत्रु के घर का ग्रह हो तो शत्रु के घर में भोजन मिलता है ॥ १० ॥

यदि लग्न शुभ ग्रह से दृष्ट अथवा युक्त हो तथा बलवान् हो तो अपने घर में भोजन मिलता है। ग्रह तथा राशि के स्वभाव को यत्न पूर्वक विचार करके और बातों को भी बतलाना चाहिये ॥११॥

सूर्य से तिल का अन्न मिलता है, चन्द्रमा से चावल मिलते हैं, मंगल से मसूर तथा चने भोजन मिलते हैं, बुध से मूंग तथा उरद मिलते हैं, वृहस्पति बलवान् हो तो गेहूं का भोजन मिलता है ॥१२॥

शुक्र से बाजरा अथवा जौ मिलता है, शनि से कुल्थी तथा उरद मिलते हैं, राहु केतु बलवान् हों तो छिकल वाला अन्न मिलता है। यदि शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो हर्ष सहित भोजन मिलता है ॥१३॥

सूर्य से मूल (आलू आदि), चन्द्रमा से फूल (गोभी का फूल आदि)

मगल बलवान् हो तो पत्र शाखा तथा तर्कारी भी, शुक्र, बृहस्पति तथा बुध से अनेक प्रकार के व्यञ्जन (तरकारियां) खाने को मिलते हैं, शनि राहु तथा केतु से मास सहित भोजन मिलता है ॥१४॥

वृष्टि प्रश्नः

उदयास्तं गतः शुक्रो बुधश्च वृष्टिकारकः ।
जलराशि (कर्क. वृश्चि. मी.) स्थितेचन्द्रे पक्षान्ते संक्रमे तथा ॥१॥
बुध· शुक्रसमीपस्थः करोत्येकार्णवां महीम् ।
तयोरन्तर्गतो भानुः समुद्रमपि शोषयेत् ॥२॥
चलत्यङ्गारके वृष्टि स्त्रिधा वृष्टिः शनैश्चरे ।
वारिपूर्णां महीं कृत्वा पश्चात्संचरते गुरुः ॥३॥
भानोरग्रे महीपुत्रो जलशोषः प्रजायते ।
भानोः पश्चाद्धरासूनु वृंष्टिर्भवति भूयसी ॥४॥
समागमे बुधसितयो स्तथैव गुरुशुक्रयोः ।
तथैव गुरुबुधयो वृंष्टि स्यान्नात्र संशय· ॥५॥
एकराशिगतावेतौ चन्द्रमाधरणीसुतौ ।
यदि तत्र गतो जीवः करोत्येकार्णवां महीम् ॥६॥
सूर्यस्य पुरतो गच्छे यदा शुक्रो बुधोऽपिवा ।
वर्षाकाले न सन्देह स्तदा वृष्टिर्निरन्तरा ॥७॥
उदयास्तंगते खेटे वक्रीभूते च संक्रमे ।
जलनाडीगताः खेटा महावृष्टिप्रदायकाः ॥८॥
दशार्द्राद्याः स्त्रियस्तारा विशाखाद्या नपुंसकाः ।
तिस्रस्ततश्चमूलाद्याः पुरुषाश्च चतुर्दश ॥९॥
स्त्रीपुंसयोर्महावृष्टिः स्त्रीनपुंसकयोः क्वचित् ।
स्त्रीस्त्रियोः शीतलच्छाया योगः पुरुषयोर्न च ॥१०॥

(अर्थ)

जब शुक्र अथवा बुध का उदय अथवा अस्त हो तो पानी बरसता है ।

जब चन्द्रमा जल राशि (४।८।१२) में हो, पक्ष का अन्त हो अथवा संक्रान्ति हो तब भी वृष्टियोग होता है ॥१॥

जब शुक्र के समीप में बुध हो तो पृथ्वी समुद्र के समान पानी से भर जाती है। यदि इनके मध्य में सूर्य हो तो समुद्र भी सूख जाता है ॥२॥

जब मङ्गल एक राशि को छोड़ कर दूसरा राशि में जाता है तो वृष्टि योग है। शनैश्चर जब वक्री, उदयी अथवा अस्तंगत हो तो वर्षा होती है। बृहस्पति दूसरी राशि में जाने से पहिले पृथ्वी को पानी से भर जाता है ॥३॥

यदि मंगल सूर्य से आगे हो तो जल सूख जाता है। यदि मंगल सूर्य से पीछे हो तो बहुत पानी बरसता है ॥४॥

जब बुध शुक्र का, बृहस्पति शुक्र का, बुध बृहस्पति का समागम हो तो वर्षा होती है, इसमें सन्देह नहीं है ॥५॥

जब चन्द्रमा, मंगल तथा बृहस्पति एक राशि में हो तो पृथ्वी जल से भर कर समुद्र के समान हो जाती है ॥६॥

जब शुक्र अथवा बुध सूर्य से आगे चलें तब वर्षा काल में बराबर वर्षा होती है ॥७॥

जब ग्रह उदय हो अथवा अस्त हो अथवा वक्री हो, जब संक्रान्ति हो अथवा जब ग्रह जल नाड़ी (पुष्य. पूफा. शतभिषा) में हो तो महा वृष्टि होती है ॥८॥

आर्द्रा आदि दश नक्षत्र स्त्री नक्षत्र हैं। विशाखा आदि तीन नक्षत्र नपुंसक हैं। मूल आदि चौदह नक्षत्र पुरुष संज्ञक हैं ॥९॥

स्त्री पुरुष योग में महा वृष्टि होती है। स्त्री नपुंसक, स्त्री स्त्री, पुरुष पुरुष नक्षत्रों में वृष्टि नहीं होती है ॥१०॥

(सूर्य नक्षत्र तथा चन्द्र नक्षत्र से स्त्री पुरुष आदि का विचार होता है) ॥

श्री देवीदत्तज्योतिर्वित्संगृहीतानुवादिते सुगमज्योतिषे प्रश्नाध्यायः सप्तमः ॥

सुगमज्योतिषम्
संहिताध्यायोऽष्टमः

—.०:—

(दिग्दर्शनं संहितास्कन्धस्य)

कूर्म विभागः

प्राङ्मुखस्यतु कूर्मस्य नवाङ्गेषुधरामिमाम् ।
विभज्य नवधाखण्डमण्डलानि प्रदक्षिणम् ॥
अन्तर्वेदीच पाञ्जालस्तस्येदं नाभिमण्डलम् ।
प्राचिमागधलाटादि देशास्तन्मुखमण्डलम् ॥
त्रिकलेय (?) किराताख्या देशास्तद्बाहुमंडलम् ।
अवन्तिद्राविडाभिल्लदेशास्तत्पार्श्वमण्डलम् ॥
गौडकोङ्कणशाल्वेप्र पुण्ड्रास्तत्पादमण्डलम् ।
सिन्धुकाशीमहाराष्ट्र सौराष्ट्राः पुच्छमण्डलम् ॥
पुलिन्दभीष्मयवन गुर्जराः पादमण्डलम् ।
कुरुकाश्मीरमाद्रेय मत्स्यास्तत्पार्श्व मण्डलम् ॥
खसाङ्ग वङ्ग वाह्लीक काम्बोजा. पाणिमण्डलम् ॥
कृत्तिकादीनि धिष्ण्यानि त्रीणि त्रीणि क्रमान्न्यसेत् ॥
नाभेर्दिक्षु नवाङ्गेषु पापैर्दुष्टं शुभैः शुभम् ॥

(अर्थ)

भारतवर्ष का नक्शा इस प्रकार से बनाना चाहिये कि भारतवर्ष को एक कूर्म अर्थात् कछुए के आकार का माने । उस कछुए का मुख पूर्व दिशा को माने और उसके दहिनी ओर से नौ खण्ड समझे । उसके नाभिमण्डल में अन्तर्वेदी (गङ्गा यमुना के बीच का दोआब) तथा पाञ्चाल अर्थात्

पञ्चाब को माने। पूर्व दिशा में मागध (विहार), लाट आदि देश उस कूर्म के मुख समझने चाहिये। किरात आदि देशों को उसके बाहु समझे। अवन्ति, द्राविड, भिष्ट देशों को उसकी बगल समझे। गोड कोंकन, शाल्व, पुण्ड्र देशों को उसके पैर समझे। सिन्धु, काशी, महाराष्ट्र, सौराष्ट्र देशों को उसका पुच्छ समझे। पुलिन्द, भीष्म, यवन, गुर्जरदेशों को उसके पैर समझे। कुरु, काश्मीर, माद्रेय, मत्स्य देशों को उसकी बगल समझे। खस, अङ्ग, वङ्ग, वाह्लीक, काम्बोज देशों को उसके वाहु माने। कृत्तिका आदि तीन तीन नक्षत्रों को क्रम से नाभि आदि ९ स्थानो में रक्खे। पाप ग्रह वाले नक्षत्र जिन स्थानों में पड़ें उन स्थानों में दुष्ट फल जाने। जहां शुभ ग्रह पड़े हों वहां शुभ फल जाने ॥

अनावृष्टि सुवृष्टियोगाः

एकराशिगतावेतौ धरापुत्राङ्गिरःसुतौ।
तदामेघा न वर्षन्ति वर्षाकाले न संशयः ॥

भौमस्य पृष्ठतो याति भानुश्चेज्जलशोषकः ।
भवत्यत्र न सन्देहो विपरीतो जलप्रदः ॥

(अर्थ)

जब मङ्गल तथा बृहस्पति एक राशि में हों तो वर्षाकाल में वर्षा नहीं होती है ॥

यदि मङ्गल के पीछे सूर्य हो तो जल शोष होता है इसमें सन्देह नहीं है। इसके विपरीत हो अर्थात् सूर्य आगे हो मङ्गल पीछे हो तो वर्षा होती है ॥

दुर्भिक्षादियोगः

भानुर्भौमो भृगुश्चैव शनिक्षेत्रं समाश्रिताः ।
यदा निशापतिस्तत्र तदा दुर्भिक्षतो भयम् ॥
वृषे राहुर्यदा भौमः षष्ठे मासि महद्भयम् ।
भवत्यत्र, न सन्देह स्तदा दुर्भिक्षपीडनम् ॥
मिथुनर्क्षे सूर्यपुत्रो राहुर्वा यदि संस्थितः ।
दुर्भिक्षं जायते तत्र ॥
रविराहुमहीपुत्राः शशिशुक्रशनैश्चराः ।
एकराशिगताह्येते तदा पृथ्वी भयाकुला ॥
शनिराहू यदैकत्र भवेतां सहितौ यदा ।
सर्वधान्यमहर्घत्वं ॥
गुरुशुक्रावेकराशिं गतौ दुर्भिक्षदुःखदौ ।
युद्धदौ शनिमाहेयौ तथा दुर्भिक्षकारकौ ॥
शुक्रसौर्योर्द्वयोरस्तमेकराशौ यदा भवेत् ।
अन्नपीडा महायुद्धं देशे देशे च विग्रहाः ॥
यदा जीवयुतो मन्दो जीवाद्वा सप्तमे स्थितः ।
तदा प्रजा विनश्यन्ति भूपाश्चान्नपरिक्षयः ॥

अग्रे याति दिवानाथः पृष्ठे च भृगुनन्दनः ।
मध्ये सोमसुतो याति भवत्यन्नमहर्घता ॥
रोहिणीशकटं केतु र्भिन्द्यात्सौरोऽथवा कुजः ।
यदा तदा जगत्सर्वं संक्षयं यात्यसंशयम् ॥
अतिचारगते सौम्ये क्रूरे वक्रत्वमागते ।
हाहाभूतं जगत्सर्वं रुण्डमुण्डश्च जायते ॥
यदा प्रतीपगो खेटौ नृपं क्षोभयत स्तदा ।
प्रतीपगास्त्रयः खेटा युद्धवृष्टिभयप्रदाः ॥
अर्कसौरी भौमसौरी तमस्सौरीऽयमङ्गलौ ।
गुरुसौरी महायोगो महीनाशाय कल्पते ॥
सप्तग्रहा यदेकत्र गोलयोगस्तदा भवेत् ।
दुर्भिक्षं राष्ट्रपीडा च तस्मिन्योगे न संशयः ॥

(अर्थ)

जब शनि के घर में सूर्य, मङ्गल शुक्र पड़े हों तथा चन्द्रमा भी हो तो दुर्भिक्ष का भय होता है ॥

जब वृषराशि में राहु तथा मङ्गल हो तो छठे महीने में दुर्भिक्षभय होता है ॥

जब मिथुन राशि में शनि अथवा राहु हो तो दुर्भिक्ष होता है ॥

जब सूर्य, राहु, मङ्गल, अथवा चन्द्रमा शुक्र शनि, एक राशि में हों तो पृथ्वी भय से आकुल होती है ॥

जब शनि राहु एक साथ बैठे हों तो सब प्रकार का अन्न महंगा हो जाता है ॥

यदि बृहस्पति तथा शुक्र एक राशि में हों तो दुर्भिक्ष से दुःख होता है। यदि शनि मङ्गल एक राशि में हो तो युद्ध होता है तथा दुर्भिक्ष भी होता है ॥

जब शुक्र तथा शनि दोनों एक ही राशि में अस्त हो तो अन्न पीडा, महायुद्ध तथा हर एक देश में कलह होता है ॥

जब बृहस्पति से शनि युक्त हो अथवा बृहस्पति से सप्तम स्थान में हो तब राजा तथा प्रजा का नाश होता है तथा अन्नक्षय भी होता है ॥

जब सूर्य्य आगे हो शुक्र पीछे हो, बुध मध्य में हो तो अन्न महँगा होता है ॥

जब केतु शनि अथवा मगल रोहिणीशकट को भेद करे तो सारे जगत् का नाश होता है ॥

जब सौम्यग्रह का अतिचार हो, क्रूर ग्रह वक्री हो तो सारे जगत् में हाहाकार मचता है ॥

जब दो ग्रह वक्री हों तो राजा को दुःख मिलता है। जब तीन ग्रह वक्री हो तो युद्ध होता है अथवा अवर्षण होता है ॥

जब सूर्य शनिका, मगल शनिका, राहु शनिका, मंगल बृहस्पति का, बृहस्पति शनि का योग हो तो पृथ्वी का नाश होता है ॥

जब सात ग्रह एक राशि में हो तो गोल योग होता है। उसका फल दुर्भिक्ष तथा राज्य में पीडा है ॥

भूकम्पः

उपप्लवात्सप्तमगो महीजो महीसुतात्पञ्चमगो यदा बुधः।
बुधाद्विधुः स्याच्च चतुष्टयस्थितः सचेह भूकम्पनयोग उक्तः ॥
यामक्रमेण भूकम्पो द्विजातीना मनिष्टदः।
अनिष्टदः क्षितीशानां सन्ध्ययोरुभयोरपि ॥
षड्भिर्मासैश्च भूकम्पो द्वाभ्या दाह· फलप्रदः ॥

(अर्थ)

जब राहु से सप्तम स्थान में मंगल हो, मगल से पञ्चम स्थान में बुध हो, बुध से केन्द्र में चन्द्रमा हो तो भूकम्प योग होता है ॥

पहिले पहर में भूकम्प हो तो ब्राह्मणों का अनिष्ट होता है, दूसरे पहर में हो तो क्षत्रियों का, तीसरे पहर में हो तो वैश्यों का, चौथे पहर मे हो तो शूद्रों का, दोनो सन्ध्याओं में हो तो राजाओं का, अनिष्ट होता है ॥ प्राय. भूकम्प का फल छः महीनों में तथा दिग्दाह का फल दो महीने में होता है ॥

दिग्दाहः

सूर्याद्विधुः पञ्चम सप्तमः स्यात्क्षोणीसुतो याति तथारिगेहे ।
दिग्दाहयोगो मुनिनाप्रदिष्टः स जात उल्कापतनाधिकारी ॥
दाहोदिशां राजभयाय पीतो देशस्य नाशाय हुताशवर्णः ।
यश्चारुणः स्यादपसव्यवायुः सस्यस्य नाशं सकरोति दृष्टः ॥

(अर्थ)

यदि सूर्य से चन्द्रमा पञ्चम अथवा सप्तम स्थान में हो, मगल छठे स्थान में हो तो दिग्दाह तथा उल्कापात का योग होता है ॥

यदि पीले रंग का दिग्दाह हो तो राजाओं को भय होता है, यदि अग्नि के समान वर्ण वाला हो तो देश का नाश होता है, यदि कुछ लाल रंग का हो तथा वायु दहिना ओर चले तो धान्य का नाश होता है ॥

इन्द्रधनुः

सूर्यस्य विविधवर्णाः पवनेन विघट्टिताः साभ्रा ।
वियति धनुः संस्थाना ये दृश्यन्ते तदिन्द्रधनुः ॥
तत्रायिना नृपाणा मभिमुखमजयावहं भवति ॥
छिन्दित मनुलोमञ्च प्रशस्त मम्भः प्रयच्छति ॥
वृक्षजं व्याधिदं चापं भूमिजं सस्यनाशनम् ।
अवृष्टिदं जलोद्भूतं वल्मीके युद्धमीतिदम् ॥
अवृष्टौ वृष्टिदं चन्द्रयां दिशि वृष्टामवृष्टिदम् ।
सदैव वृष्टिदं पश्चाद्दिशोरितरयोस्तथा ॥

(अर्थ)

सूर्य के अनेक प्रकार के रंगों का बादल तथा हवा के साथ मिलने से आकाश में जो धनुषाकार रुप दिखलाई देता है उसे इन्द्र धनुष कहते हैं ॥

यदि यात्रा करने के समय राजा के सन्मुख इन्द्र धनुष दिखलाई दे तो हार होती है । यदि दो बार दिखलाई दे तथा सीधा हो तो बहुत वर्षा होती है ॥

यदि वृक्ष में पड़े तो व्याधि होती है । यदि भूमि में पड़े तो धान्य का नाश होता है । यदि जल में पड़े तो अवर्षण होता है । यदि वल्मीक (ढेहुर, बाबी) में पड़े तो युद्ध का भय होता है । यदि अवर्षण के समय पूर्व दिशा में पड़े तो वर्षा होती है । यदि वर्षा के समय पड़े तो अवर्षण होता है । पश्चिम अथवा विदिशा में पड़े तो वर्षा होती है ॥

उत्पाता

उत्पाता स्त्रिविधा लोके दिव्यभौमान्तरिक्षजाः ।
अन्यत्वं प्रकृतेर्यत्तदसावुत्पातसंज्ञकः ॥
ग्रहर्क्षजाः केतवश्च उत्पाता दिव्यसंज्ञकाः ॥
निर्घाताः परिवेषोल्कापुरन्दरधनुर्ध्वजाः ।
एवमाद्या महोत्पाता अन्तरिक्षाह्वयाः स्मृता ॥
उत्पद्यते क्षितौ यच्च स्थावरं वाथ जङ्गमम् ।
तदेकदेशिकं भौम उत्पातः परिकीर्तितः ॥
भौमाः स्यु स्तुच्छफलदा आन्तरिक्षास्तु मध्यमाः ।
सम्पूर्णफलदा दिव्या वर्षाद्र्धात्तदर्धतः ॥
रात्रौ धनु र्दिने उल्का ताराश्चैव दिने तथा ।
रात्रौतु धूमकेतुश्च भूकम्पश्च तथैवहि ।
एतानि दुष्टचिह्नानि देशक्षयकराणिच ॥
गन्धर्वनगरञ्चैव दिवा नक्षत्रदर्शनम् ॥

महोल्कापतनं काष्ठ तृणरक्तप्रवर्षणम् ।
गन्धर्वगेहे दिग्धूमं भूमिकम्पो दिवानिशि ॥
अनग्नौच स्फुलिङ्गाश्च ज्वलनञ्च विनेन्धनम् ।
निशीन्द्रचाप मण्डूक शिखरं श्वेतवायसः ॥
दृश्यन्ते विस्फुलिङ्गाश्च गोगजाश्वोष्ट्रगात्रतः ।
जन्तवो द्वित्रिशिरसो जायन्ते वा वियोनिषु ॥
प्रतिसूर्याश्चतस्त्रषु स्युर्दिक्षुयुगपद्रवेः ।
जम्बूक ग्रामसम्वासः केतूनाञ्च प्रदर्शनम् ॥
काकाना माकुलं रात्रौ कपोतानां दिवा यदि ।
अकाले पुष्पिता वृक्षा दृश्यन्ते फलितास्तथा ॥
एवमाद्या महोत्पाता बहवः स्थाननाशदाः ।
केचिन्मृत्युप्रदाः केचिच्छत्रुभ्यश्च भयावहाः ।
मध्याद्भयं यशोमृत्युः क्षयोऽकीर्तिः सुखासुखम् ॥

(अर्थ)

संसार में तीन प्रकार के उत्पात होते हैं। उनको दिव्य, भौम तथा आन्तरिक्ष कहते हैं। प्रकृति के विरुद्ध जो बात देखने में आवे उसको उत्पात अथवा उपसर्ग कहते हैं। ग्रह नक्षत्र तथा केतुओं के उत्पातों को दिव्य उत्पात कहते हैं। निर्घात, परिवेष, उल्का, इन्द्रपुर आदि उत्पातों को आन्तरिक्ष उत्पात कहते हैं। भूमि के स्थावर अथवा जंगम पदार्थों में जो उत्पात हो उसे एक देशिक भौम उत्पात कहते हैं। भौम उत्पातों का तुच्छ फल होता है। आन्तरिक्ष उत्पातों का मध्यम फल होता है। दिव्य उत्पातों का पूर्ण फल ६ महीनों में अथवा एक बरस में होता है।

यदि रात में इन्द्र धनुष दिखलाई दे, दिन में उलका तथा तारा दिखलाई दे, रात में धूम केतु दिखलाई दे तथा भूकम्प हो तो यह दुष्ट लक्षण है तथा देश का नाश करता है ॥

गन्धर्व नगर (आकाश में महल आदि का दिखलाई देना), दिन में तारा दिखलाई देना, बड़ी उल्का का गिरना, आसमान से लकड़ी, घास तथा रुधिर की वर्षा, दिशाओं में धुआं, रातदिन भूकम्प होना, विना अग्नि के चिनगारी उडना, विना इन्धन के अग्नि का जलना, रात में इन्द्रधनुष, सफेद काक, गॅय, हाथी, घोड़े, तथा ऊटों के शरीरों से चिनगारी निकलना, दो अथवा तीन सिर वाले जन्तु, अथवा किसी जाति में दूसरी जाति के जन्तु का उत्पन्न होना, सूर्य के चारों ओर अन्य सूर्यों का दिखलाई देना, मनुष्यों की वस्ती में गीदडों का रहना, पूंछ वाले तारों का दिखलाई देना, रात मे कौओं का तथा दिन मे कबूतरों का शब्द, विना समय वृक्षों में फल पुष्पों का निकलना, इत्यादि महोत्पात हैं। किसी का फल स्थाननाश है। किसी का फल मृत्यु है। किसी का फल शत्रु से भय है। किसी का फल उदासीन से भय है, किसी का फल पशुओं का नाश है, किसी का फल नाश है, किसी का फल अपयश है। किसी का फल सुख दुःख मिला हुआ है॥

उल्कादिहेतुः

उल्का हरिश्चन्द्रपुरं रजश्च निर्घातभूकम्पककुप्प्रदाहाः।
वातो विचण्डो ग्रहणं रवीन्द्वोर्नक्षत्र तारागणवैकृतानि॥

(अर्थ)

उल्का (आकाश से तारा आदि का गिरना), हरिश्चन्द्र पुर (अथवा गन्धर्व नगर अर्थात् आकाश में महल आदि का दिखलाई देना), आंधी चलकर धूल का उड़ना (जिससे आकाश न दिखलाई दे), निर्घात (भयङ्कर शब्द के साथ विजली का गिरना), भूकम्प (भूडोल), दिग्दाह (दिशाओं का लाल आदि रङ्ग), आंधी का चलना, सूर्य चन्द्र ग्रहण यह सब चीजें नक्षत्र तथा तारा गणों के विकार से होती हैं॥

उल्का

स्वर्गाच्च्युतानां रूपाणि यान्युल्कास्तानि वै भुवि।
धिष्ण्यो[1] ल्का[2] विद्यु[3] दशनि[4] ताराः[5] पञ्चविधाः स्मृताः॥

(१) चक्रा विशालज्ज्वलिता पतन्ती वनराजिषु ।
धिष्ण्यान्त्यपुच्छा पतति ज्वलिताङ्गारसन्निभा ॥
(२) ऊर्ध्वंवाप्यथवा तिर्यगधोवा गगनान्तरे ।
उल्का शिरोविशाला तु पतन्ती वर्धते तनुम् ॥
दीर्घपुच्छा भवेत्तस्या भेदाः स्युर्वहवस्तथा ॥
(३) जनयित्री च संत्रासं विद्युद्व्योम्नि त्विवस्फुटम् ।
(४) विदारयतिनिपतन्स्वनेनमहताशनिः ।
(५) हस्तद्वयप्रमाणा सा दृश्यते च समीपतः ।
ताराब्जतनुचच्छुक्ला हस्तदीर्घाम्बुजारुणा ॥

(फलम्)

राजराष्ट्रस्य नाशाय प्रासादप्रतिमासुच ।
गृहेषु स्वामिनां पीडा नृपाणां पर्वतेषुच ॥

(अर्थ)

स्वर्ग से जो वस्तु भूमि पर गिरती हैं उनके पांच नाम हैं। (१) धिष्ण्या (२) उल्का (३) विद्युद् (४) अशनि तथा (५) तारा ॥

(१) धिष्ण्या उसे कहते हैं जो गोल हो, बहुत जलती हुई हो, वन आदि में गिरे, उसके अन्त में पूंछ जैसी हो, आग के जले हुए अंगार के समान उसका वर्ण हो ।

(२) उल्का उसे कहते हैं जो आकाश में ऊपर को अथवा नीचे को अथवा तिरछी गिरती हुई अपने रूप को बढ़ाती जावे तथा उसका सिर बड़ा हो। उसकी पूंछ लम्बी होती है और उसके बहुत भेद होते हैं ॥

(३) बिजली चमकती है

(४) अशनि बड़े शब्द के साथ गिरता है ।

(५) तारा उसे कहते हैं जो समीप ही में दिखलाई दे, २ हाथ लम्बी, १ हाथ चौड़ी, कमल के समान सफेद तथा लाल हो ।

(फल)

यदि महलों में अथवा देवताओं के मन्दिर में गिरे तो राजा तथा प्रजा

का नाश होता है। यदि किसी के घर में पड़े तो घरके स्वामी को पीडा हो। यदि पर्वतों में गिरे तो राजाओं को पीडा हो॥

ग्रहणफलम्

यदैकमासे ग्रहणं जायते शशिसूर्ययोः।
शस्त्रकोपैः क्षयं यान्ति तदा भूपाः परस्परम्॥
ग्रस्तोदितौच ग्रस्तास्तौ धान्यभूपालनाशकौ।
सर्वग्रस्तौ चन्द्रसूर्यौ दुर्भिक्षमरणप्रदौ॥
ग्रहणान्ते महावृष्टिः सर्वदोषविनाशिनी॥

(अर्थ)

यदि एक ही महीने के भीतर सूर्य चन्द्रमा के दो ग्रहण पड जावें तो राजाओं में परस्पर युद्ध होता है॥

जब ग्रस्तोदित अथवा ग्रस्तास्त ग्रहण हो तो धान्य तथा राजाओं का नाश होता है। यदि सूर्य तथा चन्द्रमा का सर्व ग्रास हो तो दुर्भिक्ष तथा मरण होते हैं॥

यदि ग्रहण के उपरान्त महावृष्टि हो तो सब दोष शान्त हो जाते हैं॥

सूर्यमण्डले छिद्रम्

छिद्रेऽर्कमण्डले दृष्टे तदा राजविनाशनम्।
घटाकृतिः क्षुद्भयकृत्पुरहा तोरणाकृतिः॥

(अर्थ)

जब सूर्य मण्डल में छिद्र दिखलाई दें तो राजा को भय होता है, यदि घडे के समान चिह्न दिखलाई दे तो अन्ननाश का भय होता है, यदि दरवाजे के समान हो तो नगर का नाश होता है॥

केतुफलम्

धूम्राकारः सुपुच्छश्च केतुर्विश्वस्य पीडकः॥
यावतो दिवसान्केतु दृश्यते विविधात्मकः।
तावन्मासैः फलं वाच्यं मासैश्चैवतु वत्सराः॥

कृत्तिकासु समुद्भूतो धूमकेतुः प्रजान्तकृत् ॥
सम्वर्तकेतुः सन्ध्यायां त्रिशिरानेष्टदारुणः ॥

(अर्थ)

यदि पूंछ वाले तारे का वर्ण धुए के समान हो और लम्बी पूंछ हो तो संसार को पीड़ित करता है। जितने दिन पर्यन्त केतु दिखलाई दे उतनेही महीनों में उसका फल होता है अथवा जितने महीनों पर्यन्त दिखलाई दे उतने ही वर्ष पर्यन्त उसका फल होता है ॥

यदि कृत्तिका नक्षत्र में धूमकेतु दिखलाई दे तो प्रजा का नाश करता है। यदि सन्ध्या समय में तीन सिर वाला केतु दिखलाई दे तो बड़ा दुःख देता है ॥

परिवेषः

किरणा वायुनिहता उच्छ्रिता मण्डलीकृताः।
नानावर्णाकृतयस्ते परिवेषाः शशीनयोः ॥
रवि शशि परिवेषे पूर्वयामेच पीडा
रविशशि परिवेषे मध्ययामेच वृष्टिः।
रविशशि परिवेषे धान्यनाशस्तृतीये
रविशशि परिवेषे राज्यभङ्गश्चतुर्थे ॥
प्रावृडृतौच शरदि परिवेषो जलप्रदः ॥

(अर्थ)

सूर्य चन्द्रमा के चारों ओर अनेक रंग को किरणों का जो घेरा देखने में आता है उसे परिवेष कहते हैं। यदि दिन अथवा रात के पहले पहर में परिवेष हो तो दुःख मिलता है। यदि दूसरे पहर में हो तो वर्षा होती है। यदि तीसरे पहर में हो तो धान्य नाश होता है। यदि चौथे पहर में हो तो राज्य नाश होता है ॥

वर्षाकाल अथवा शरद् ऋतु में परिवेष हो तो वर्षा होती है ॥

शुभलक्षणानि

नभः प्रसन्नं विमलानि भानि प्रदक्षिणं वाति सदागतिश्च ।
दिशांच दाहः कनकावदातो हिताय लोकस्य सपार्थिवस्य ॥

(अन्वय)

जब आकाश स्वच्छ हो, नक्षत्र निर्मल हों, वायु दक्षिण की ओर चले, दिशाओं का वर्ण सुवर्ण के समान स्वच्छ हो तो राजा तथा प्रजा दोनों का भला होता है ॥

सन्ध्यादर्पणकार श्री देवदत्तज्योतिर्वित्संगृहीतानुवादिते सुगमज्योतिषे संहिताध्यायोऽष्टमः ॥

ग्रन्थपूर्तिश्च ॥

अङ्क मुन्यङ्क भू संवन्नभस्यस्य सिते दले ।
तृतीयायां भृगोर्वारे ग्रन्थोऽयं पूर्णतामियात् ॥

॥ शुभम् ॥